प्राथमिक

[प्रथम संस्करण से]

मनुष्य में जो सोचने-समझने की योग्यता है उसके फलस्वरूप उसे अपने विषय की चिन्ता ने अनादिकाल से सताया है। वर्तमान की चिन्ताओं के अतिरिक्त उसे इस बात की भी बड़ी जिज्ञासा रही है कि भविष्य में उसका क्या होने वाला है? कल की बात आज जान लेने के लिए वह इतना आतुर हुआ है कि उसने नाना प्रकार के आधारों से भविष्य का अनुमान करने का प्रयत्न किया है। मनुष्य के रूप, रंग, शरीर व अंग-प्रत्यंग के गठन आदि पर से तो उसके भविष्य का अनुमान करना स्वाभाविक ही है। किन्तु उसकी बाहरी परिस्थितियों, यहाँ तक कि तारों और नक्षत्रों की स्थिति पर से एक-एक प्राणी के भविष्य का अनुमान लगाना भी बहुत प्राचीनकाल से प्रचलित पाया जाता है। फलित ज्योतिष में लोगों का विश्वास सभी देशों में रहा है। इसी कारण इस विषय का साहित्य बहुत विपुल पाया जाता है। ज्योतिष शास्त्र के ज्ञान के आधार से अपनी जीविका अर्जन करने वाले लोगों की कभी किसी देश में कमी नहीं हुई।

भारतवर्ष का ज्योतिष शास्त्र भी बहुत प्राचीन है। संस्कृत और प्राकृत में इस विषय के अनेक ग्रन्थ पाये जाते हैं। ज्योतिष शास्त्र के मुख्य भेद हैं गणित और फलित। गणित ज्योतिष विज्ञानात्मक है जिसके द्वारा ग्रहों की गति और स्थिति का ज्ञान प्राप्त कर काल-गणना में उसका उपयोग किया जाता है। ग्रहों की स्थिति व गति पर से जो शुभ-अशुभ फल का निरूपण किया जाता है उसे फलित ज्योतिष कहते हैं। इसका आधार लोक-श्रद्धा के सिवाय और कुछ प्रतीत नहीं होता। तथापि उसकी लोकप्रियता में कोई सन्देह नहीं। यति, मुनि, साधु-सन्त व विद्वानों से बहुधा लोग आशा करते हैं कि वे उनके व उनके बाल-बच्चों के भावी जीवन व सुख-दुःख की बात बतला दें। किन्तु यह तो स्पष्ट ही है कि ये भविष्यवाणियाँ सदैव सत्य नहीं निकलतीं। यों 'हाँ' और 'ना' के बीच प्रत्येक पक्ष की पचास प्रतिशत सम्भावना अवश्यम्भावी है। इस प्रसंग में यूनान के इतिहास की एक बात याद आती है। उस देश में 'डेल्फी' नामक देवता के मन्दिर के

पुजारी का काम था कि वह लोगों को बतलावे कि वे अमुक कार्य में सफल होंगे या नहीं। एक वैज्ञानिक ने उसकी भविष्यवाणी की प्रामाणिकता में सन्देह प्रकट किया। भविष्यवक्ता ने उनका ध्यान मन्दिर की उस विपुल धनराशि की ओर आकर्षित किया जो वहाँ की सफल भविष्यवाणी के पुरस्कारों द्वारा संचित हुई थी। "यदि समुद्र-यात्रा को जाने वाले व्यापारियों को बतलाया गया शुभमुहूर्त सच न निकला होता, तो वे क्यों यह सब भेंट वहाँ लौटकर अर्पित करते!" भविष्यवक्ता के इस प्रश्न के उत्तर में वैज्ञानिक ने कहा—"यह एक पक्ष का इतिहास तो आपका ठीक है। किन्तु क्या आपके पास उन व्यापारियों का भी कोई लेखा-जोखा है, जो आपके बतलाये शुभमुहूर्त में यात्रा को निकले, किन्तु फिर लौटकर घर न आ सके?"

फलित ज्योतिष के मर्मस्थल पर यह वज्राघात सहस्रों वर्ष पूर्व हो चुका है। हिन्दू, बौद्ध व जैन-शास्त्रों में भी साधुओं को ज्योतिष-फल कहने का निषेध किया गया है, जो उसकी सन्देहात्मकता का ही परिचायक है। तथापि यह कला आज भी जीवित है और कुछ वर्गों में लोकप्रिय भी है।

फलित ज्योतिष का एक अंग है—'अष्टांगनिमित्त'। इसमें शरीर के तिल, मसा आदि व्यंजनों, हाथ-पैर आदि अंगों, ध्वनियों व स्वरों, भूमि के रंग रूप, वस्त्र-शस्त्रादि के छिद्रों, ग्रह नक्षत्रों के उदय-अस्त, शंख, चक्र, कलश आदि लक्षणों तथा स्वप्न में देखी गयी वस्तुओं व घटनाओं का विचार कर शुभाशुभ रूप भविष्य फल कहा जाता है। एक जैनश्रुति के अनुसार, इस निमित्तशास्त्र के महान् ज्ञाता भद्रबाहु थे। कोई इन्हें श्रुतकेवली भद्रबाहु ही मानता, जिन्होंने इसी ज्ञान के बल से उत्तर भारत में आने वाले द्वादशवर्षीय दुर्भिक्ष की बात जानकर अपने संघ सहित दक्षिण की ओर गमन किया था। कोई इन्हें प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य वराहमिहिर का समकालीन व उनका भ्राता ही कहते हैं। प्रस्तुत भद्रबाहु-संहिता का विषय निमित्तशास्त्र का प्रतिपादन करना है। यह ग्रन्थ पहले भी छप चुका है, तथा इसके कर्तृत्व के सम्बन्ध में बहुत कुछ विचार भी किया जा चुका है। पं. जुगलकिशोर जी मुख्तार के मतानुसार यह ग्रन्थ भद्रबाहु श्रुतकेवली की रचना न होकर कुछ 'इधर-उधर के प्रकरणों का बेढंगा संग्रह' है और उसका रचनाकाल वि. सं. 1657 के पश्चात् का है। किन्तु मुनि जिनविजय जी को इस ग्रन्थ की एक प्रति वि. सं. 1480 के आसपास की मिली थी, जिसके आधार से उन्होंने इस ग्रन्थ को वि. सं. की 11वीं-12वीं शताब्दी से भी प्राचीन अनुमान किया है। प्रस्तुत संस्करण के सम्पादक का मत है कि इस रचना का संकलन वि. की आठवीं, नौवीं शताब्दी में हुआ होगा।

पं. नेमिचन्द्र शास्त्री ने अपने इस प्रस्तुत संस्करण में पूर्व मुद्रित ग्रन्थ के अतिरिक्त 'जैन सिद्धान्त भवन आरा' की दो प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों का भी उपयोग किया है। उन्होंने मूल के संस्कृत पद्यों का पूरा अनुवाद भी किया है व

प्रत्येक अध्याय के अन्त में 'बृहत्संहिता' आदि कोई बीस-बाईस अन्य ग्रन्थों के आधार से विषय-विवेचना भी किया है। उन्होंने अपनी बृहत् प्रस्तावना में विषय एवं ग्रन्थ की रचना आदि विषयों पर भी महत्त्वपूर्ण प्रकाश डाला है। इस सफल प्रयास के लिए हम विद्वान् सम्पादक का अभिनन्दन करते हैं और इसके उत्तम रीति से प्रकाशन के लिए 'भारतीय ज्ञानपीठ' के संचालकों को बधाई देते हैं।

—ही. ला. जैन

—आ. ने. उपाध्ये

ग्रन्थमाला सम्पादक

(प्रथम संस्करण)

प्रस्तावना

[प्रथम संस्करण से]

अत्यन्त प्राचीन काल से ही आकाशमण्डल मानव के लिए कौतूहल का विषय बना हुआ है। सूर्य और चन्द्रमा से परिचित हो जाने के पश्चात् ताराओं के सम्बन्ध में मानव को जिज्ञासा उत्पन्न हुई और उसने ग्रह एवं उपग्रहों के वास्तविक स्वरूप को अवगत किया। जैन परम्परा बतलाती है कि आज से लाखों वर्ष पूर्व कर्मभूमि के प्रारम्भ में प्रथम कुलकर प्रतिश्रुति के समय में, जब मनुष्यों को सर्व-प्रथम सूर्य और चन्द्रमा दिखलाई पड़े तो वे इनसे सशंकित हुए और अपनी उत्कण्ठा शान्त करने के लिए उक्त प्रतिश्रुति नामक कुलकर मनु के पास गये। उक्त मनु ने ही सौर-जगत् सम्बन्धी सारी जानकारी बतलायी और ये ही सौर-जगत् की ज्ञातव्य बातें ज्योतिष शास्त्र के नाम से प्रसिद्ध हुईं। आगमिक परम्परा अनवच्छिन्न रूप से अनादि होने पर भी इस युग में ज्योतिषशास्त्र की नींव का इतिहास यहीं से आरम्भ होता है। मूलभूत सौर-जगत् के सिद्धान्तों के आधार पर गणित और फलित ज्योतिष का विकास प्रतिश्रुति मनु के सहस्रों वर्ष के बाद हुआ तथा ग्रह-नक्षत्रों की स्थिति के आधार पर भावी फलाफलों का निरूपण भी उसी समय से होने लगा। कतिपय भारतीय पुरातत्त्वविदों की यह मान्यता है कि गणित ज्योतिष की अपेक्षा फलित ज्योतिष का विकास पहले हुआ है; क्योंकि आदि मानव को अपने कार्यों की सफलता के लिए समय शुद्धि की आवश्यकता होती थी। इसका सबसे बड़ा प्रभाव यही है कि ऋक्, यजुष और साम ज्योतिष में नक्षत्र और तिथि-शुद्धि का ही निरूपण मिलता है। ग्रह-गणित की चर्चा सर्वप्रथम सूर्य सिद्धान्त और पञ्चसिद्धान्तिका में मिलती है। वेदांग ज्योतिष प्रमुख रूप से समय-शुद्धि का ही विधान करता है।

ज्योतिष के तीन भेद हैं—सिद्धान्त, संहिता और होरा। सिद्धान्त के भी तीन भेद किये गये हैं सिद्धान्त, तन्त्र और करण। जिन ग्रन्थों में सृष्ट्यादि से इष्ट दिन पर्यन्त अहर्गण बनाकर ग्रह-गणित की प्रक्रिया निरूपित की गयी है, वे तन्त्र ग्रन्थ और जिनमें कल्पित इष्ट वर्ष का युग मानकर उस युग के भीतर ही किसी अभीष्ट दिन का अहर्गण लाकर ग्रहानयन की प्रक्रिया निरूपित की जाय,

उन्हें करण ग्रन्थ कहते हैं।

संहिता ग्रन्थों में भूशोधन, दिक्शोधन, शल्योद्धार, मेलापक, आयाद्यानयन, गृहोपकरण, इष्टिकाद्वार, गेहारम्भ, गृहप्रवेश, जलाशयनिर्माण, मांगलिक कार्यों के मुहूर्त्त, उल्कापात, वृष्टि, ग्रहों के उदयास्त का फल, ग्रह चार का फल, शकुन-विचार, कृषि सम्बन्धी विभिन्न समस्याएं, निमित्त एवं ग्रहण फल आदि बातों का विचार किया जाता है।

होरा का दूसरा नाम जातक भी है। इसकी उत्पत्ति अहोरात्र शब्द से है। आदि शब्द 'अ' और अन्तिम शब्द 'त्र' का लोप कर देने से होरा शब्द बनता है। जन्मकालीन ग्रहों की स्थिति के अनुसार व्यक्ति के लिए फलाफल का निरूपण किया जाता है। इसमें जातक की उत्पत्ति के समय के नक्षत्र, तिथि, योग, करण आदि का फल विस्तार के साथ बताया गया है। ग्रह एवं राशियों के वर्ण, स्वभाव, गुण, आकार, प्रकार आदि बातों का प्रतिपादन बड़ी सफलतापूर्वक किया गया है। जन्मकुण्डली का फलादेश कहना तो इस शास्त्र का मुख्य उद्देश्य है तथा इस शास्त्र में यह भी बताया गया है कि आकाशस्थ राशि और ग्रहों के बिम्बों में स्वाभाविक शुभ और अशुभपना विद्यमान है, किन्तु उनमें परस्पर साहचर्यादि तात्कालिक सम्बन्ध से फल विशेष शुभाशुभ रूप में परिणत हो जाता है, जिसका प्रभाव पृथ्वी स्थित प्राणियों पर भी पूर्ण रूप से पड़ता है। इस शास्त्र में देह, द्रव्य, पराक्रम, सुख, सुत, शत्रु, कलत्र, मृत्यु, भाग्य, राज्यपद, लाभ और व्यय इन बारह भावों का वर्णन रहता है। जन्म-नक्षत्र और जन्म-लग्न पर से फलादेश का वर्णन होरा शास्त्र में पाया जाता है।

संहिता-ग्रन्थों का विकास

संहिता-ग्रन्थों का विकास जीवन के व्यावहारिक क्षेत्र में ज्योतिष विषयक तत्त्वों को स्थान प्रदान करने के लिए ही हुआ है। कृषि की उन्नति एवं प्रगति ही संहिता-ग्रन्थों का प्रधान प्रतिपाद्य विषय है। वेदों में भी फलित ज्योतिष के अनेक सिद्धान्त आये हैं। कृषि के सम्बन्ध में नाना प्रकार की जानकारी और विभिन्न प्रकार के निमित्तों का वर्णन अथर्ववेद में आया है। जय-पराजय विषयक निमित्त तथा विभिन्न प्रकार के शकुन भी इस ग्रन्थ में वर्णित हैं। ऋग्वेद के ऋतु, अयन, वर्ष, दिन, संवत्सर आदि भी संहिताओं के मूलभूत सिद्धान्तों में परिगणित हैं। संस्कृत साहित्य के उत्पत्तिकालीन साहित्य में भी संहिताओं के तत्त्व उपलब्ध होते हैं। यद्यपि यह सत्य है कि वराहमिहिर के पूर्ववर्ती संहिता-ग्रन्थों का अभाव है, पर इनके द्वारा उल्लिखित मय, शक्ति, जीवशर्मा, मणित्थ, विष्णुगुप्त, देवस्वामी, सिद्धसेन और सत्याचार्य जैसे अनेक ज्योतिर्विदों के ग्रन्थ वर्तमान थे, यह सहज में जाना जा सकता है। संहिता-ग्रन्थों में निमित्त, वास्तुशास्त्र, मुहूर्त्त-

शास्त्र, अरिष्ट एवं शकुन आदि का वर्णन रहता है। जीवनोपयोगी प्रायः सभी व्यावहारिक विषय संहिता के अन्तर्गत आ जाते हैं।

व्यापक रूप से संहिताशास्त्र के बीजसूत्र अथर्ववेद के अतिरिक्त आश्वलायन गृह्यसूत्र, पारस्कर गृह्यसूत्र, हिरण्यकेशीसूत्र, आपस्तम्ब गृह्यसूत्र, सांख्यायन गृह्यसूत्र, पाणिनीय व्याकरण, मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, महाभारत, कौटिल्य अर्थशास्त्र, स्वप्नवासवदत्त नाटक एवं हर्षचरित प्रभृति ग्रन्थों में विद्यमान हैं। आश्वलायन गृह्यसूत्र में —"**श्रावण्यां पौर्णमास्यां श्रावणकर्माणि**" "**सीमन्तोन्नयनं ... यदा पुष्यनक्षत्रेण चन्द्रमा युक्तः स्यात्।**" इन वाक्यों में मुहूर्त के साथ विभिन्न संस्कारों की समय-शुद्धि एवं विविध विधानों का विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ में 3,7-8 में जंगली कबूतरों का घर में घोंसला बनाना अशुभ कहा गया है। यह शकुन प्रक्रिया संहिता ग्रन्थों का प्राण है। पारस्कर गृह्यसूत्र में—"**त्रिषु त्रिषु उत्तरादिषु स्वातौ मृगशिरसि रोहिण्यां**"—इत्यादि सूत्र में उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, रेवती और अश्विनी नक्षत्र को विवाह नक्षत्र कहा है। इतना ही नहीं इस सूत्रग्रन्थ में आकाश का वर्ण एवं कई ताराओं की विभिन्न आकृतियाँ और उनके फल भी लिखे गये हैं। यह प्रकार संहिता विषय से अति सम्बद्ध है। 'सांख्यायन गृह्यसूत्र' (5-10) के अनुसार, मधुमक्खी का घर में छत्ता लगाना तथा कौओं का आधी रात में बोलना अशुभ कहा है। बौधायन सूत्र में—"**मीन मेषयोर्मेषवृषभयोर्वसन्तः**" इस प्रकार का उल्लेख मिलता है। सूर्य संक्रान्ति के आधार पर ऋतुओं की कल्पनाएँ हो चुकी थीं तथा कृषि पर इन ऋतुओं का कैसा प्रभाव पड़ता है, इसका भी विचार आरम्भ हो गया था।

निरुक्त में दिन, रात, शुक्लपक्ष, कृष्णपक्ष, उत्तरायण, दक्षिणायन आदि की व्युत्पत्ति मात्र शाब्दिक ही नहीं है, बल्कि परिभाषात्मक है। ये परिभाषाएँ ही आगे संहिता-ग्रन्थों में स्पष्ट हुई हैं। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी में संवत्सर, हायन, चैत्रादिमास, दिवस, विभागात्मक मुहूर्त शब्द, पुष्य, श्रवण, विशाखा आदि की व्युत्पत्तियाँ दी हैं। '**वाताय कपिला विद्युत्**' उदाहरण द्वारा निमित्तशास्त्र के प्रधान विषय 'विद्युत् निमित्त' पर प्रकाश डाला है तथा कपिला विद्युत् को वायु चलने का सूचक कहा है। पाणिनि ने '**विभाषा ग्रहः**' (3,1,143) में ग्रह शब्द का भी उल्लेख किया है। उत्तरकालीन पाणिनि-तन्त्र के विवेचकों ने उक्त सूत्र के ग्रह शब्द को नवग्रह का द्योतक अनुमान किया है। अष्टाध्यायी में परिधनी रेखा का भी जिक्र आया है, अतः इस ग्रन्थ में संहिता-शास्त्र के अनेक बीजसूत्र विद्यमान हैं।

मनुस्मृति में सिद्धान्तग्रन्थों के समान युग और कल्पमान का वर्णन मिलता है। तीसरे अध्याय के आठवें श्लोक में आया है कि कपिल भूरे वर्णवाली, अधिक

या कम अंगों वाली, अधिक रोम वाली या सर्वथा निर्लोम कन्या के साथ विवाह नहीं करना चाहिए। इस कथन से लक्षण और व्यंजन दोनों ही निमित्तों का स्पष्ट संकेत मिलता है। इसी अध्याय के 9-10 श्लोक भी लक्षणशास्त्र पर प्रकाश डालते हैं। **'लोष्टमर्दी तृणच्छेदी'** (4,71) में शकुनों की ओर संकेत किया गया है। अकालिक अनध्यायों का विवेचन करते हुए **'विद्युत्-स्तनितवर्षेषु महोल्कानां च सम्प्लवे'** (4,103), **"निर्घाते भूमिचलने ज्योतिषां चोपसर्जने"** (4,105), **"नीहारे बाणशब्दे"** (4,113) एवं **"पांसुवर्षे दिशां दाहे"** (4,115) का उल्लेख किया है। ये सभी श्लोक शकुनों से सम्बन्ध रखते हैं। अत: अनध्याय प्रकरण संहिता का विकसित रूप है। **"न चोत्पातनिमित्ताभ्यां न नक्षत्रांगविद्यया"** (6,50) में उत्पात, निमित्त, नक्षत्र और अंगविद्या का वर्णन आया है। इस प्रकार मनुस्मृति में संहिताशास्त्र के बीजसूत्र प्रचुर परिमाण में विद्यमान हैं।

याज्ञवल्क्य स्मृति में नवग्रहों का स्पष्ट उल्लेख वर्तमान है। क्रान्तिवृत्त के द्वादश भागों का भी निरूपण किया गया है, इस कथन से मेषादि द्वादश राशियों की सिद्धि होती है। श्राद्धकाल अध्याय में वृद्धियोग का भी कथन है, इससे संहिता-शास्त्र के 27 योगों का समर्थन होता है। याज्ञवल्क्य स्मृति के प्रायश्चित्त अध्याय में —**"ग्रहसंयोगजै: फलै:"** इत्यादि वाक्यों द्वारा ग्रहों के संयोगजन्य फलों का भी कथन किया गया है। किस नक्षत्र में किस कार्य को करना चाहिए, इसका वर्णन भी इस ग्रन्थ में विद्यमान है। आचाराध्याय का निम्न श्लोक, जिस पर से सातों वारों का अनुमान विद्वानों ने किया है, बहुत प्रसिद्ध है—

> सूर्य: सोमो महीपुत्र: सोमपुत्रो बृहस्पति:।
> शुक्र: शनैश्चरो राहु: केतुश्चैते ग्रहा: स्मृता:॥

महाभारत में संहिता-शास्त्र की अनेक बातों का वर्णन मिलता है। इसमें युग-पद्धति मनुस्मृति जैसी ही है। सत् युगादि के नाम, उनमें विधेय कृत्य कई जगह आये हैं। कल्पकाल का निरूपण शान्तिपर्व के 183वें अध्याय में विस्तार से किया गया है। पंचवर्षात्मक युग का कथन भी उपलब्ध है। संवत्सर, परिवत्सर इदावत्सर, अनुवत्सर एवं इद्वत्सर— इन पाँच युग सम्बन्धी पाँच वर्षों में क्रमश: पाँचों पाण्डवों की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है—

> अनुसंवत्सरं जाता अपि ते कुरुसत्तमा:।
> पाण्डुपुत्रा व्यराजन्त पञ्चसंवत्सरा इव॥

—आ० प०, अ० 124-24

पाण्डवों को वनवास जाने के उपरान्त कितना समय हुआ, इसके सम्बन्ध में भीष्म दुर्योधन से कहते हैं—

तेषां कालातिरेकेण ज्योतिषां च व्यतिक्रमात् ।
पञ्चमे पञ्चमे वर्षे द्वौ मासावुपजायतः ।।
एषामभ्यधिका मासाः पञ्च च द्वादश क्षपाः ।
त्रयोदशनां वर्षाणामिति मे वर्तते मतिः ।।

—वि० प० अ० 52/3-4

इन श्लोकों में पाँच वर्षों में दो अधिमास का जिक्र किया गया है। सिद्धान्त ज्योतिष के ग्रन्थों के प्रणयन के पूर्व संहिता-ग्रन्थों में अधिमास का निरूपण होने लगा था। गणितागत अधिमास अधिशेष और अधिशुद्धि का विचार होने के पूर्व पाँच वर्षों में दो अधिमासों की कल्पना संहिता के विषय के अन्तर्गत है।

महाभारत के अनुशासन पर्व के 64वें अध्याय में समस्त नक्षत्रों की सूची देकर बतलाया गया है कि किस नक्षत्र में दान देने से किस प्रकार का पुण्य होता है। महाभारत काल में प्रत्येक मुहूर्त का नामकरण भी व्यवहृत होता था तथा प्रत्येक मुहूर्त का सम्बन्ध भिन्न-भिन्न धार्मिक कार्यों से शुभाशुभ के रूप में माना जाता था। इस ग्रन्थ में 27 नक्षत्रों के देवताओं के स्वभावानुसार विशेष नक्षत्र के भावी शुभ एवं अशुभ का निर्णय किया गया है। शुभ नक्षत्रों में ही विवाह, युद्ध एवं यात्रा करने की प्रथा थी। युधिष्ठिर के जन्म-समय का वर्णन करते हुए कहा गया है—

ऐन्द्रे चन्द्रसमारोहे मुहूर्त्तेऽभिजिदष्टमे ।
दिवो मध्यगते सूर्ये तिथौ पूर्णेति पूजिते ।।

अर्थात् आश्विन शुक्ला पंचमी के दोपहर को अष्टम अभिजित् मुहूर्त में, सोमवार के दिन ज्येष्ठा नक्षत्र में जन्म हुआ। महाभारत में कुछ ग्रह अधिक अरिष्टकारक बतलाये गये हैं; विशेषतः शनि और मंगल को अधिक दुष्ट कहा है। मंगल लाल रंग का, समस्त प्राणियों को अशान्ति देने वाला और रक्तपात करने वाला समझा जाता था। केवल गुरु ही शुभ और समस्त प्राणियों को सुख-शान्ति देने वाला बताया गया है। ग्रहों का शुभ नक्षत्रों के साथ योग होना प्राणियों के लिए कल्याणदायक माना गया है। उद्योग पर्व के 14वें अध्याय के अन्त में ग्रह और नक्षत्रों के अशुभ योगों का विस्तार से वर्णन किया गया है। श्रीकृष्ण ने जब कर्ण से भेंट की, तब कर्ण ने इस प्रकार ग्रह-स्थिति का वर्णन किया---"शनैश्चर रोहिणी नक्षत्र में मंगल को पीड़ा दे रहा है। ज्येष्ठा नक्षत्र में मंगल वक्री होकर अनुराधा नामक नक्षत्र से योग कर रहा है। महापात संज्ञक ग्रह चित्रा नक्षत्र को पीड़ा दे रहा है। चन्द्रमा के चिह्न विपरीत दिखाई पड़ते हैं और राहु सूर्य को ग्रसित करना चाहता है।"

शल्यवध के समय प्रातःकाल का वर्णन इस प्रकार किया गया है--

"भृगुसूनुधरापुत्रौ शशिजेन समन्वितौ ॥" —श० प० अ० 11-18

अर्थात्—शुक्र, मंगल और बुध इनका योग शनि के साथ अत्यन्त अशुभ कारक है। वर्तमान संहिता-ग्रन्थों में भी बुध और शनि का योग अत्यन्त अशुभ माना जाता है। महाभारत में 13 दिन का पक्ष अशुभ कारक कहा गया है—

चतुर्दशीं पञ्चदशीं भूतपूर्वां तु षोडशीम्।
इमां तु नाभिजानेऽहममावस्यां त्रयोदशीम् ॥
चन्द्रसूर्यावुभौ ग्रस्तावेकमासीं त्रयोदशीम्।

अर्थात्—व्यासजी अनिष्टकारी ग्रहों की स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं कि 14, 15 एवं 16 दिनों के पक्ष होते थे; पर 13 दिनों का पक्ष इसी समय आया है तथा सबसे अधिक अनिष्टकारी तो एक ही मास में सूर्यग्रहण और चन्द्रग्रहण का होना है और यह ग्रहणयोग भी त्रयोदशी के दिन पड़ रहा है, अतः समस्त प्राणियों के लिए भयोत्पादक है। महाभारत से यह भी ज्ञात होता है कि उस समय व्यक्ति के सुख-दुख, जीवन-मरण आदि सभी ग्रह-नक्षत्रों की गति से सम्बद्ध माने जाते थे।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र के दशवें प्रकरण में युद्धविषयक शकुन, जय-पराजय द्योतक निमित्तों का वर्णन है। यात्रा सम्बन्धी शकुनों का सविस्तार विवेचन भी मिलता है।

हर्षचरित में बाण ने काव्यशैली का आश्रय लेकर हर्ष के प्रयाण के फलस्वरूप शत्रुओं में होने वाले दुर्निमित्तों की एक लम्बी सूची दी है। इस सूची से स्पष्ट है कि बाण के समय में संहिता-शास्त्र का पूर्णतया विकास हो गया था। बताया गया है—

1. यमराज के दूतों की दृष्टि की तरह काले हिरण इधर-उधर दौड़ने लगे।
2. आँगन में मधु-मक्खियों के छत्तों से उड़कर मधु-मक्खियाँ भर गयीं।
3. दिन में शृगाली मुँह उठाकर रोने लगी।
4. जंगली कबूतर घरों में आने लगे।
5. उपवन वृक्षों में असमय में पुष्प-फल दिखलाई पड़ने लगे।
6. सभास्थान के खम्भों पर बनी हुई शालभंजिकाओं के आँसू बहने लगे।
7. योद्धाओं को दर्पण में अपने ही सिर धड़ से अलग होते हुए दिखलाई पड़े।
8. राजमहिषियों की चूड़ामणि में पैरों के निशान प्रकट हो गये।
9. चेटियों के हाथ के चमर छूटकर गिर गये।
10. हाथियों के गण्डस्थल भौंरों से शून्य हो गये।
11. घोड़ों ने मानो यमराज की गन्ध से हरे धान का खाना छोड़ दिया।

12. झन-झन कंकण पहने हुए बालिकाओं के ताल देकर नचाने पर भी मन्दिर-मयूरों ने नाचना छोड़ दिया।
13. रात में कुत्ते मुंह उठाकर रोने लगे।
14. रास्तों में कोटवी—मुक्तकेशी नग्न स्त्रियाँ घूमती हुई दिखलाई पड़ीं।
15. महलों के फर्शों में घास निकल आयी।
16. योद्धाओं की स्त्रियों के मुख का जो प्रतिबिम्ब मधुपात्र में पड़ता था उसमें विधवाओं जैसी एक वेणी दिखाई पड़ने लगी।
17. भूमि काँपने लगी।
18. शूरों के शरीर पर रक्त की बूँदें दिखाई पड़ीं, जैसे वधदण्ड प्राप्त व्यक्ति का शरीर लाल चन्दन से सजाया जाता है।
19. दिशाओं में चारों ओर उल्कापात होने लगा।
20. भयंकर झंझावात ने प्रत्येक घर को झकझोर डाला।

बाण ने 16 महोत्पात, 3 दुर्निमित्त और 20 उपलिंगों का वर्णन किया है। यह वर्णन संहिता-शास्त्र का विकसित विषय है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि संहिता शास्त्र के विषयों का विकास अथर्ववेद से आरम्भ होकर सूत्रकाल में विशेष रूप से हुआ। ऐतिहासिक महाकाव्य-ग्रन्थों तथा अन्य संस्कृत साहित्य में भी इस विषय के अनेक उदाहरण उपलब्ध हैं। इस शास्त्र में सूर्यादि ग्रहों की चाल, उनका स्वभाव, विकार, प्रमाण, वर्ण, किरण, ज्योति, संस्थान, उदय, अस्त, मार्ग, वक्र, अतिवक्र, अनवक्र, नक्षत्र-विभाग और कूर्म का सब देशों में फल, अगस्त्य की चाल, सप्तर्षियों की चाल, नक्षत्रव्यूह, ग्रहशृंगाटक, ग्रहयुद्ध, ग्रहसमागम, परिवेष, परिघ, उल्का, दिग्दाह, भूकम्प, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष, वास्तुविद्या, अंगविद्या, वायसविद्या, अन्तरचक्र, मृगचक्र, अश्वचक्र, प्रासादलक्षण, प्रतिमालक्षण, प्रतिमाप्रतिष्ठा, घृतलक्षण, कम्बल-लक्षण, खड्ग-लक्षण, पट्टलक्षण, कुक्कुटलक्षण, कूर्मलक्षण, गोलक्षण, अजालक्षण, अश्वलक्षण, स्त्री-पुरुष लक्षण, यात्रा शकुन, रणयात्रा शकुन एवं साधारण, असाधारण सभी प्रकार के शुभाशुभों का विवेचन अन्तर्भूत होता था। स्वप्न और विभिन्न प्रकार के शकुनों को भी संहिता-शास्त्र में स्थान दिया गया था। फलित ज्योतिष का यह अंग केवल पंचांग ज्ञान तक ही सीमित नहीं था, किन्तु समस्त सांस्कृतिक विषयों की आलोचना और निरूपण काल भी इसमें शामिल हो गया था। संहिता-शास्त्र का सबसे पहला ग्रन्थ सन् 505 ई० के वराहमिहिर का बृहत् संहितानामक ग्रन्थ मिलता है। इसके पश्चात् नारद-संहिता, रावण-संहिता, वशिष्ठ-संहिता, वसन्तराज-शाकुन, अद्भुतसागर आदि ग्रन्थों की रचना हुई।

की पूर्णमासी को उस मास का प्रथम नक्षत्र कुल संज्ञक, दूसरा उपकुल संज्ञक और तीसरा कुलोपकुल संज्ञक होता है। इस वर्णन का प्रयोजन उस महीने के फलादेश से सम्बन्ध रखता है। इस ग्रन्थ में ऋतु, अयन, मास, पक्ष, नक्षत्र और तिथि सम्बन्धी चर्चाएँ भी उपलब्ध हैं।

समवायांग में नक्षत्रों की ताराएँ, उनके दिशाद्वार आदि का वर्णन है। कहा गया है—"कत्तिआइया सत्त णक्खत्ता पुव्वदारिआ। महाइया सत्तणक्खत्ता दाहिणदारिआ। अणुराहाइआ सत्त णक्खत्ता अवदारिया। धणिट्ठाइआ सत्तणक्खत्ता उत्तरदारिआ।"—सं० अं० सं० 7 सू० 5

अर्थात् कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा ये सात नक्षत्र पूर्वद्वार; मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति और विशाखा दक्षिणद्वार; अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, अभिजित् और श्रवण ये सात नक्षत्र पश्चिमद्वार एवं धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी ये सात नक्षत्र, उत्तरद्वार वाले हैं। समवायांग 1/6, 2/4, 3/2, 4/3, 5/9 और 6/7 में आयी हुई ज्योतिष चर्चा भी महत्त्वपूर्ण है।

ठाणांग में चन्द्रमा के साथ स्पर्शयोग करने वाले नक्षत्रों का कथन किया है। बताया गया है[1]—"कृत्तिका, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, चित्रा, विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा ये आठ नक्षत्र स्पर्श योग करने वाले हैं।" इस योग का फल तिथि के अनुसार बतलाया गया है। इसी प्रकार नक्षत्रों की अन्य संज्ञाएँ तथा उत्तर, पश्चिम, दक्षिण और पूर्व दिशा की ओर से चन्द्रमा के साथ योग करने वाले नक्षत्रों के नाम और उनके फल विस्तारपूर्वक बतलाये गये हैं। अष्टांग निमित्तज्ञान की चर्चाएँ भी आगम ग्रन्थों में मिलती हैं। गणित और फलित ज्योतिष की अनेक मौलिक बातों का संग्रह आगम ग्रन्थों में है।

फुटकर ज्योतिष चर्चा के अलावा सूर्यप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, ज्योतिषकरण्डक, अंगविज्जा, गणिविज्जा, मण्डलप्रवेश, गणितसारसंग्रह, गणितसूत्र, गणितशास्त्र, जोइसार, पंचांगनयन विधि, इष्टतिथि सारणी, लोकविजय यन्त्र, पंचांगतत्त्व केवलज्ञानहोरा, आयज्ञानतिलक, आयसद्भाव, रिष्टसमुच्चय, अर्घकाण्ड, ज्योतिषप्रकाश, जातकतिलक, केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणि, नक्षत्रचूड़ामणि, चन्द्रोन्मीलन और मानसागरी आदि सैकड़ों ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

विषय-विचार दृष्टि से जैनाचार्यों के ज्योतिष को प्रधानतः दो भागों में विभक्त किया है। एक गणित-सिद्धान्त और दूसरा फलित-सिद्धान्त। गणित

---

1. अट्ठ नक्खत्ताणं चंदेण सद्धिं पमद्दं जोगं जोएइ तं० कत्तिया, रोहिणी, पुणव्वसू, महा, चित्ता, विसाहा, अणुराहा जेट्ठा—ठा० 8, सू 100

सिद्धान्त द्वारा ग्रहों की गति, स्थिति, वक्री-मार्गी, मध्यफल, मन्दफल, सूक्ष्मफल, कुज्या, त्रिज्या, बाण, चाप, व्यास, परिधि फल एवं केन्द्रफल आदि का प्रतिपादन किया गया है। आकाशमण्डल में विकीर्णित तारिकाओं का ग्रहों के साथ कब कैसा सम्बन्ध होता है, इसका ज्ञान भी गणित प्रक्रिया से ही संभव है। जैनाचार्यों ने भौगोलिक ग्रन्थों में 'ज्योतिर्लोकाधिकार' नामक एक पृथक् अधिकार देकर ज्योतिषी देवों के रूप, रंग, आकृति, भ्रमणमार्ग आदि का विवेचन किया है। यों तो पाटीगणित, बीजगणित, रेखागणित, त्रिकोणमिति, गोलीय रेखागणित, चापीय एवं वक्रीय त्रिकोणमिति, प्रतिभागणित, शृंगोन्नति गणित, पंचांगनिर्माण गणित, जन्मपत्रनिर्माण गणित, ग्रहयुति, उदयास्त सम्बन्धी गणित का निरूपण इस विषय के अन्तर्गत किया गया है।

फलित सिद्धान्त में तिथि, नक्षत्र, योग, करण, वार, ग्रहस्वरूप, ग्रहयोग जातक के जन्मकालीन ग्रहों का फल, मुहूर्त, समयशुद्धि, दिक्शुद्धि, देशशुद्धि आदि विषयों का परिज्ञान करने के लिए फुटकर चर्चाओं के अतिरिक्त वर्षप्रबोध, ग्रहभाव प्रकाश, बेड़ाजातक, प्रश्नशतक, प्रश्न चतुर्विंशतिका, लग्नविचार, ज्योतिष रत्नाकर प्रभृति ग्रन्थों की रचना जैनाचार्यों ने की है। फलित विषय के विस्तार में अष्टांगनिमित्तज्ञान भी शामिल है और प्रधानतः यही निमित्त ज्ञान संहिता विषय के अन्तर्गत आता है। जैन दृष्टि में संहिता ग्रन्थों में अष्टांग निमित्त के साथ आयुर्वेद और क्रियाकाण्ड को भी स्थान दिया है। ऋषिपुत्र, माघनन्दी, अकलंक, भट्टबोसरि आदि के नाम संहिता-ग्रन्थों के प्रणेता के रूप से प्रसिद्ध हैं। प्रश्नशास्त्र और सामुद्रिक शास्त्र का समावेश भी संहिता शास्त्र में किया है।

अष्टांग निमित्त

जिन लक्षणों को देखकर भूत और भविष्यत् में घटित हुई और होने वाली घटनाओं का निरूपण किया जाता है, उन्हें निमित्त कहते हैं। न्यायशास्त्र में दो प्रकार के निमित्त माने गये हैं- -कारक और सूचक। कारक निमित्त वे कहलाते हैं, जो किसी वस्तु को सम्पन्न करने में सहायक होते हैं, जैसे घड़े के लिए कुम्हार निमित्त है और पट के लिए जुलाहा। जुलाहे और कुम्हार की सहायता के बिना घट और पट रूप कार्यों का बनना संभव नहीं। दूसरे प्रकार के निमित्त सूचक हैं, इनसे किसी वस्तु या कार्य की सूचना मिलती है, जैसे सिगनल के झुक जाने से रेलगाड़ी के आने की सूचना मिलती है। ज्योतिष शास्त्र में सूचक निमित्तों की विशेषताओं पर विचार किया गया है तथा संहिता ग्रन्थों का प्रधान प्रतिपाद्य विषय सूचक निमित्त ही हैं। संहिता शास्त्र मानता है कि प्रत्येक घटना के घटित होने के पहले प्रकृति में विकार उत्पन्न होता है; इन प्राकृतिक विकारों की पहचान से व्यक्ति भावी शुभ-अशुभ घटनाओं को सरलतापूर्वक जान सकता है।

ग्रह नक्षत्रादि की गतिविधि का भूत, भविष्यत् और वर्तमान कालीन क्रियाओं के साथ कार्यकारण भाव सम्बन्ध स्थापित किया गया है। इस अव्यभिचरित कार्य-कारण भाव से भूत, भविष्यत् की घटनाओं का अनुमान किया है और इस अनुमान ज्ञान को अव्यभिचारी माना है। न्यायशास्त्र भी मानता है कि सुपरीक्षित अव्यभिचारी कार्य-कारण भाव से ज्ञात घटनाएँ निर्दोष होती हैं। उत्पादक सामग्री के सदोष होने से ही अनुमान सदोष होता है। अनुमान की अव्यभिचारिता सुपरीक्षित निर्दोष उत्पादक सामग्री पर निर्भर है। अतः ग्रह या अन्य प्राकृतिक कारण किसी व्यक्ति का इष्ट अनिष्ट सम्पादन नहीं करते, बल्कि इष्ट या अनिष्ट रूप में घटित होने वाली भावी घटनाओं की सूचना देते हैं। संक्षेप में ग्रह कर्मफल के अभिव्यंजक हैं। ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय आदि आठ कर्म तथा मोहनीय के दर्शन और चरित्र मोह के भेदों के कारण कर्मों के प्रधान नौ भेद जैनागम में बताये गये हैं। प्रधान नौ ग्रह इन्हीं कर्मों के फलों की सूचना देते हैं। ग्रहों के आधार पर व्यक्ति के बन्ध, उदय और सत्त्व की कर्मप्रकृतियों का विवेचन भी किया जा सकता है। किसी भी जातक की जन्मकुण्डली की ग्रहस्थिति के साथ गोचर ग्रह की स्थिति का समन्वय कर उक्त बातें सहज में कही जा सकती हैं। अतः ज्योतिष शास्त्र में अव्यभिचारी सूचक निमित्तों का विवेचन किया गया है। इन्हीं सूचक निमित्तों के संहिताग्रन्थों में आठ भेद किये गये हैं—व्यंजन, अंग, स्वर, भौम, छिन्न, अन्तरिक्ष, लक्षण एवं स्वप्न।

व्यंजन— तिल, मस्सा, चट्टा आदि को देखकर शुभाशुभ का निरूपण करना व्यंजन निमित्तज्ञान है। साधारणतः पुरुष के शरीर में दाहिनी ओर तिल, मस्सा, चट्टा शुभ समझा जाता है और नारी के शरीर में इन्हीं व्यंजनों का बायीं ओर होना शुभ है। पुरुष की हथेली में तिल होने से उसके भाग्य की वृद्धि होती है। पद तल में होने से राजा होता है, पितृरेखा पर तिल के होने से पिता द्वारा कष्ट पाता है। कपाल के दक्षिण पार्श्व में तिल होने से धनवान् और सम्भ्रान्त होता है। वामपार्श्व या भौंह में तिल के होने से कार्यनाश और आशा भंग होती है। दाहिनी ओर की भौंह में तिल होने से प्रथम उम्र में विवाह होता है और गुणवती पत्नी प्राप्त होती है। नेत्र के कोने में तिल होने से व्यक्ति शान्त, विनीत और अध्यव-सायी होता है। गण्डस्थल या कपोल पर तिल होने से व्यक्ति मध्यम वित्त वाला होता है। परिश्रम करने पर ही जीवन में सफलता मिलती है। इस प्रकार के व्यक्ति प्रायः स्वनिर्मित ही होते हैं। गले में तिल का रहना दुःख सूचक है। कण्ठ में तिल के होने से विवाह द्वारा भाग्योदय होता है, ससुराल से हर प्रकार की सहायता प्राप्त होती है। वक्षस्थल के दक्षिण भाग में तिल होने से कन्याएँ अधिक उत्पन्न होती हैं और व्यक्ति प्रायः यशस्वी होता है। दक्षिण पंजर में तिल के होने से व्यक्ति कायर होता है। समय पड़ने पर मित्र और हितैषियों को धोखा

देता है। उदर में तिल होने से व्यक्ति दीर्घसूत्री और स्वार्थी होता है। नासिका के वामपार्श्व में तिल रहने से पुरुष धनहीन, मद्यपायी और मूर्ख होता है। बायीं ओर के कपोल पर तिल हो तो अटूट दाम्पत्य प्रेम होता है और सौभाग्य की वृद्धि होती है। कान में तिल होने से भाग्य और यश की वृद्धि होती है। नितम्ब में तिल होने से अधिक सन्तान प्राप्त होती है, किन्तु सभी जीवित नहीं रहतीं। दाहिनी जाँघ का तिल धनी होने का सूचक है। बायीं जाँघ का तिल दरिद्र और रोगी होने की सूचना देता है। दाहिने पैर में तिल होने से व्यक्ति ज्ञानी होता है, आधी अवस्था के पश्चात् संन्यासी का जीवन व्यतीत करता है। दाहिनी बाहु में तिल होने से दृढ़ शरीर, धैर्यशाली एवं बायीं बाहु में तिल होने से व्यक्ति कठोर प्रकृति, क्रोधी और विश्वासघातक होता है। इस प्रकार के तिल वाले व्यक्ति प्रायः डाकू या हत्यारे होते हैं।

यदि नारियों के बायें कान, बायें कपोल, बायें कण्ठ अथवा बायें हाथ में तिल हो तो वे प्रथम प्रसव में पुत्र प्रसव करती हैं। दाहिनी भौंह में तिल रहने से गुणवान् पति-लाभ करती हैं। बायीं छाती के स्तन के नीचे तिल रहने से बुद्धिमती, प्रेमवती और सुखप्रसविनी होती हैं। हृदय में तिल होने से नारी सौभाग्यवती होती है। दक्षिण स्तन में लोहितवर्ण का तिल हो तो चार कन्याएं और तीन पुत्र उत्पन्न होते हैं। बायें स्तन में तिल या लाल कोई चिह्न हो तो वह स्त्री एक पुत्र प्रसव कर विधवा हो जाती है। बगल में सुदीर्घ तिल होने से नारी पतिप्रिया और पौत्रवती होती है। नख में श्वेत बिन्दु हो, तो उसके स्वेच्छाचारिणी तथा कुलटा होने की संभावना है। जिस स्त्री की नाक की नोक पर तिल या मस्सा हो; दन्त और जिह्वा काली हो तो वह स्त्री विवाह के दशवें दिन विधवा होती है। दक्षिण घुटने पर तिल होने से मनोहर पति-लाभ होता है। दाहिनी बाहु में हो तो पति को सौभाग्यदायिनी तथा पीठ में तिल होने से सुलक्षणा और पतिपरायण होती है। बायीं भुजा में तिल या मस्सा होने से स्त्री मुखरा, कलहकारिणी और कटुभाषिणी होती है। बायें कंधे पर तिल रहने से चंचला, व्यभिचारिणी और असत्यभाषिणी होती है। नाभि के बायें भाग में तिल रहने से चंचला और नाभि के दाहिने भाग में तिल होने से सुलक्षणा होती है। मस्सों और चट्टों—लहसुनों का शुभाशुभ फल भी तिलों के समान ही समझना चाहिए। निमित्त शास्त्र में व्यंजनों का विचार विस्तारपूर्वक किया है।

अंगनिमित्तज्ञान—हाथ, पाँव, ललाट, मस्तक और वक्षःस्थल आदि शरीर के अंगों को देखकर शुभाशुभ फल का निरूपण करना अंगनिमित्त है। नासिका, नेत्र, दन्त, ललाट, मस्तक और वक्षःस्थल ये छः अवयव उन्नत होने से मनुष्य सुलक्षण युक्त होता है। करतल, पदतल, नयनप्रान्त, नख, तालु, अधर और जिह्वा ये सात अंग लाल हों तो शुभप्रद है। जिसकी कमर विशाल हो, वह बहुत पुत्रवान्

होता है। जिसकी भुजाएँ लम्बी होती हैं, वह व्यक्ति श्रेष्ठ होता है। जिसका हृदय विस्तीर्ण है, वह धन-धान्यशाली और जिसका मस्तक विशाल है वह मनुष्यों में पूजनीय होता है। जिस व्यक्ति का नयनप्रान्त लाल है, लक्ष्मी कभी उसका परित्याग नहीं कर सकती। जिसका शरीर तप्तकांचन के समान गौरवर्ण है, वह कभी भी निर्धन नहीं होता। जिसके दाँत बड़े होते हैं, वह कदाचित मूर्ख होता है तथा अधिक लोभ वाला व्यक्ति संसार में सुखी नहीं हो सकता। जिसकी हथेली चिकनी और मुलायम हो वह ऐश्वर्य भोग करता है। जिसके पैर का तलवा लाल होता है, वह सवारी का उपयोग सदा करता है। पैर के तलवों का चिकना और अरुणवर्ण का होना शुभ माना गया है।

जिस व्यक्ति के केश ताम्रवर्ण और लम्बे तथा घने हों वह पच्चीस वर्ष की अवस्था में पागल या उन्मत्त हो जाता है। इस प्रकार के व्यक्ति को चालीस वर्ष की अवस्था तक अनेक कष्ट भोगने पड़ते हैं। जिस व्यक्ति की जिह्वा इतनी लम्बी हो, जो नाक का अग्रभाग स्पर्श कर ले, तो वह योगी या मुमुक्षु होता है। जिसके दाँत विरल अर्थात् अलग-अलग हों और हँसने पर गर्तचिह्न दिखाई दे, उस व्यक्ति को अन्य किसी का धन प्राप्त होता है और यह व्यक्ति व्यभिचारी भी होता है। जिस व्यक्ति के चिबुक—ठोड़ी पर बाल न हों अर्थात् जिसे दाढ़ी नहीं हो तथा जिसकी छाती पर भी बाल न हों, ऐसा व्यक्ति धूर्त, कपटी और मायाचारी होता है। यह व्यक्ति अपने स्वार्थ-साधन में बड़ा प्रवीण होता है। हाँ, बुद्धि और लक्ष्मी दोनों ही उसके पास रहती हैं।

मस्तक पर विचार करते समय बताया गया है कि मस्तक के सम्बन्ध में चार बातें विचारणीय हैं—बनावट, नसजाल, विस्तार और आभा। बनावट से विचार, विद्या और धार्मिकता के भाव का पता चलता है। मस्तक की हड्डियाँ यदि दृढ़, स्निग्ध और सुडौल हैं तो उपर्युक्त गुणों की मात्रा और प्रकार में विशेषता रहती है। बेढंगी बनावट होने पर उत्तम गुणों का अभाव और दुर्गुणों की प्रधानता होती है।

नस-जाल—मस्तक के नसजाल से विद्या, विचार और प्रतिभा का परिज्ञान होता है। विचारशील व्यक्तियों के माथे पर सिकुड़न और ग्रन्थियाँ देखी जाती हैं। रेखाविहीन चिकना मस्तक प्रमाद, अज्ञान और लापरवाही का सूचक है।

विस्तार में मस्तक की लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई और गहराई सम्मिलित हैं। मस्तक नीचे की ओर चौड़ा हो और ऊपर की ओर छोटा हो तो व्यक्ति झक्की होता है। नीचे चपटे और चौड़े माथे में विचार, कार्यशक्ति और कल्पना की कमी तथा उदारता का अभाव रहता है। ऐसा व्यक्ति उत्साही होता है, परन्तु उसके कार्य बे-सिर-पैर के होते हैं। चौड़ा और ढालू मस्तक होने पर व्यक्ति चालाक, चतुर और पेट के प्रायः मलिन होते हैं। उन्नत और चौड़े ललाट वाले व्यक्ति

विद्वान् होते हैं। यदि सीधे और चौकोर मस्तक के ऊपरी भाग में कोण (Angles) बन रहे हों और गोलाई लिये हो तो व्यक्ति हठीला और दृढ़ होता है। यदि गोलाई न हो और सीधा हो तो विचार और कर्म में अकर्मण्य होता है। ऊँचा, सीधा और आभापूर्ण ललाट लेखकों और कवियों और अर्थशास्त्रियों का होता है। चौड़ा मस्तक होने से व्यक्ति जीवन में दुःखी नहीं होता।

आभा—मस्तक की आभा का वही महत्त्व है, जो किसी सुन्दर बने मकान में रँगाई और पुताई का होता है। आभा रहने से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास दृष्टिगोचर होता है। जिस व्यक्ति का मस्तक आभा-रहित होता है, वह दरिद्र, दुःखी और अनेक प्रकार के रोगों से पीड़ित रहता है।

ओठों पर विचार करते समय कहा गया है कि मोटे ओठों वाला व्यक्ति मूर्ख, दुराग्रही और दुराचारी होता है। आर्थिक दृष्टि से भी यह व्यक्ति कष्ट उठाता है। छोटे मुँह में अधिक पतले ओठ कंजूसी, दरिद्रता और चिन्ता के सूचक हैं। सरस, सुन्दर और आभायुक्त पतले ओठ होने पर व्यक्ति विद्वान्, धनी, सुखी और प्रिय होता है। गोलमुख में गर्दन गोल और दृष्टि निक्षेप चुभता हुआ होने पर व्यक्ति को अविचारी और स्वेच्छाचारी समझना चाहिए। ओठों में ढिलाव, लटकाव और मुड़ाव अनाचार और अविचार के द्योतक हैं। ढीले और लटके ओठ होने से व्यक्ति का शिथिलाचारी, निर्धन और चंचल प्रकृति का होना व्यक्त होता है। सरस ओठ होने से दयालुता, परोपकार वृत्ति, सहृदयता एवं स्निग्धता व्यक्त होती है। रूक्ष ओठ अजीर्ण, ज्वर, रोग एवं दारिद्र्य को प्रकट करते हैं।

दाँतों के सम्बन्ध में विचार करते हुए बताया गया है कि चमकीले दाँत वाला व्यक्ति कार्यशील और उत्साही होता है। छोटे होने पर भी पंक्तिबद्ध और स्वच्छ दाँत व्यक्ति के विचारवान और उत्साही होने की सूचना देते हैं। ऊपर के दाँतों में बीच के दो दाँत जो अपेक्षाकृत बड़े होते हैं—अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। जिस मुख में ये दाँत स्वभावतः खुले रहते हों, स्वच्छ और आभायुक्त हों एवं मुखाभा मनोज्ञ हो तो उस व्यक्ति में शील, सौजन्य और नम्रता का गुण अवश्य होता है। उक्त प्रकार के दाँत वाला व्यक्ति व्यापार में प्रभूत धनार्जन करता है।

गर्दन के पिछले भाग को पिछला मस्तक और अगले भाग को कण्ठ कहते हैं। पिछले मस्तक में सुन्दर भराव और गठाव हो तो व्यक्ति का स्वावलम्बन और स्वाभिमान प्रकट होता है। इस प्रकार का व्यक्ति अन्तिम जीवन में अधिक धनी बनता है और गार्हस्थिक सुख का आनन्द लेता है। यदि सिर का पिछला भाग चिकना और शिखा भाग के सम स्तर पर हो, बीच में गहराई न हो तो ऐसा व्यक्ति विषयी, गार्हस्थिक कार्यों में अनुरक्त एवं निर्धन होकर वृद्धावस्था में कष्ट प्राप्त करता है। गर्दन सीधी, गठी, दृढ़ और भरी होने से व्यक्ति विचारशील,

श्रेष्ठ राजकर्मचारी एवं श्रेष्ठ न्यायाधीश होता है। इस प्रकार के व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अधिक सफल होते हैं।

स्त्रियों के अंगों का शुभाशुभत्व बतलाते हुए कहा है कि जिस स्त्री की मध्यमांगुली दूसरी अँगुलियों से मिली हो, वह सदा उत्तम भोग भोगती है, उसका एक भी दिन दुःख से नहीं बीतता। जिसका अंगुष्ठ गोल और मांसल हो तथा अग्रभाग उन्नत हो, वह अतुल सुख और सौभाग्य का सम्भोग करती है। जिसकी अँगुलियाँ लम्बी होती हैं, वह प्रायः कुलटा और जिसकी अंगुलियां पतली होती हैं, वह प्रायः निर्धन होती हैं।

जिस स्त्री के पैर के नख स्निग्ध, समुन्नत, ताम्रवर्ण, गोलाकार और सुन्दर होते हैं तथा जिसके पैर के तलवे उन्नत होते हैं, वह राजमहिषी या राजमहिषी के तुल्य सुख भोगने वाली होती है। जिसके घुटने मांसल तथा गोल हैं, वह सौभाग्यशालिनी होती है। जिसके जानु या घुटने में मांस नहीं, वह दुश्चरित्रा और दरिद्रा होती है। जिसके हृदय में रोम नहीं, जिसका वक्ष स्थल नीचा नहीं, किन्तु समतल है, वह स्त्री ऐश्वर्यशालिनी और सौभाग्यवती होती है। जिस स्त्री के स्तन द्वय का मूल भाग मोटा है और उपरिभाग क्रमशः पतला होता है, वह बाल्यकाल में सुख भोगती है, पर अन्त में दुःखी होती है। जिस स्त्री के नीचे की पंक्ति में अधिक दाँत हों उसकी माता की मृत्यु असमय में ही हो जाती है। किसी भी स्त्री की नासिका के अग्रभाग का स्थूल होना, मध्य भाग का नीचा होना या उन्नत होना अशुभ कहा गया है। ऐसी स्त्री असमय में विधवा होती है।

जिस स्त्री की आँखें गाय की आँखों की तरह पिंगलवर्ण की हों, वह स्त्री गर्विता होती है। जिसकी आँखें कबूतर की तरह हैं, वह दुश्शीला होती है और जिसकी आँखें रक्तवर्ण की हैं, वह पतिघातिनी होती है। जिस स्त्री की बायीं आँख कानी हो, वह दुश्चरित्रा और जिसकी दाहिनी आँख कानी, वह बन्ध्या होती है। सुन्दर और सुडौल आँख वाली नारी सुखी रहती है।

जिस स्त्री का शरीर लम्बा हो तथा उसमें लोम और शिरा—नसें दिखलाई दें, वह रोगिणी होती है। जिसके भौंह या ललाट में तिल हो, वह पूर्ण सुखी जीवन व्यतीत करती है। श्याम वर्ण की नारी के पिंगल केश अत्यन्त अशुभ माने गये हैं। ऐसी नारी पति और सन्तान दोनों के लिए कष्टदायक होती है। चौड़े वक्षस्थल वाली नारी प्रायः विधवा होती है। जिसके पैर की तर्जनी, मध्यमा अथवा अनामिका भूमि का स्पर्श नहीं करती, वह सुखी और सौभाग्यशालिनी होती है।

जिस नारी की ठोड़ी मोटी, लम्बी या छोटी होती है, वह नारी निर्लज्ज, तुच्छ विचार वाली, भावुक और संकीर्ण हृदय की होती है। गहरी ठोड़ी वाली नारियों में अधिक कामुकता रहती है, घर में नारियाँ मिलनसार, यशस्विनी और परिवार में सभी की प्रिय होती हैं। गठी ठोड़ी वाली नारियाँ कार्यकुशल, सुखी

और सन्तान से युक्त होती हैं। इस प्रकार की नारियाँ जीवन में सुख का ही अनुभव करती हैं, इन्हें किसी भी प्रकार की कठिनाई प्राप्त नहीं होती। ठोड़ी की आकृति सीधी, टेढ़ी, उठी, नुकीली, चौकोर, लम्बी, छोटी, चपटी, गहरी, मठी, फूली और मोटी इस प्रकार बारह तरह की बतलायी गयी है। मस्तक, नाक और आँख आदि के सुन्दर होने पर भी ठोड़ी की भद्दी आकृति होने से नर या नारी दोनों को जीवन में कष्ट उठाने पड़ते हैं। भद्दी आकृतिवाला व्यक्ति शूरवीर होता है। नारी भयंकर आकृति की कोई भी हो तो वह भी पुरुष के कार्यों को बड़ी तत्परता से करती है।

अंगनिमित्त शास्त्र में शरीर के समस्त अंगों की बनावट, रूप-रंग तथा उनके स्पर्श का भी विवेचन किया गया है। बताया गया है कि जिस पुरुष या नारी के पैर भद्दे और मोटे होते हैं, उसे मजदूरी सदा करनी पड़ती है। इस प्रकार के पैर वाला व्यक्ति सदा शासित रहता है। जिसका ललाट विस्तृत हो, पैर पतले और सुन्दर हों, हाथ की हथेली लाल हो, चेहरा गोल हो, वक्षस्थल चौड़ा हो और नेत्र गोल हों, वह व्यक्ति स्त्री या पुरुष हो, शासक का काम करता है। आर्थिक अभाव उसे जीवन में कभी भी कष्ट नहीं दे सकता है।

स्वरनिमित्त—चेतन प्राणियों के और अचेतन वस्तुओं के शब्द सुनकर शुभाशुभ का निरूपण करना स्वरनिमित्त कहलाता है। पोदकी का 'चिलिचिलि' इस प्रकार का शब्द सुनाई पड़े तो लाभ की सूचना समझनी चाहिए। 'चिकुचिकु' इस प्रकार का शब्द सुनाई पड़े तो बुलाने के लिए सूचना समझनी चाहिए। पोदकी का 'कीतुकीतु' शब्द कामनासिद्धि का सूचक, 'चिरिचिरि' शब्द कष्टसूचक और 'चच' शब्द विनाश का सूचक होता है।

इस निमित्त में काक, उल्लू, बिल्ली, कुत्ता आदि के शब्दों का विशेष रूप से विचार किया जाता है। कौवे का कठोर शब्द कष्टदायक और मधुर शब्द शुभ देने वाला होता है। दीप्त दिशा में स्थित होकर कठोर शब्द करे तो कार्य का विनाश होता है। रात्रि में दीप्त दिशा में मुख कर शान्त शब्द करे तो कार्य-सिद्धि का सूचक, सूर्योदय के समय पूर्व दिशा में सुन्दर स्थान में बैठकर काक मधुर शब्द करे तो वैरी का नाश, चिन्तित कार्यसिद्धि एवं स्त्री-रत्नलाभ होता है। प्रभात-काल में काक अग्निकोण में सुन्दर देश में स्थित हो शब्द करता है, तो विजय, धनलाभ, स्त्री-रत्न की प्राप्ति; दक्षिण में शब्द करे तो अत्यन्त कष्ट; इसी दिशा में स्थित काक कठोर शब्द करे तो रोगी की मृत्यु; मधुर शब्द करे तो इष्ट जन समागम, धन-प्राप्ति, अनेक के सम्मान; प्रभातकाल में पश्चिम दिशा में शब्द करे तो निश्चय वर्षा, सुन्दर वस्तुओं की प्राप्ति, किसी उत्तम राजकर्मचारी का समागम; वायव्य कोण में काक बोले तो अन्न-वस्त्र की प्राप्ति, प्रियव्यक्ति का आगमन; उत्तर दिशा में शब्द करे तो अतिकष्ट, सर्पभय, दरिद्रता; ईशान दिशा

में काक बोले तो व्याधि, रोगी का मरण एवं आकाश में स्थित होकर काक मधुर शब्द करे तो अभीष्ट फल की प्राप्ति होती है। पूर्व दिशा में स्थित काक प्रथम प्रहर में सुन्दर शब्द बोले तो चिन्तित कार्य की सिद्धि, प्रचुर धन-लाभ; अग्नि कोण में स्थित होकर काक बोले तो स्त्री-लाभ, मित्रता की प्राप्ति एवं दक्षिण दिशा में बोले तो स्त्री-लाभ, सौख्य-प्राप्ति, नैऋत्य कोण में बोले तो मिष्टान्न प्राप्ति एवं पश्चिम दिशा में बोले तो जल की वर्षा, अतिथि आगमन एवं कार्य-सिद्धि की सूचना मिलती है।

दूसरे प्रहर में काक पूर्व दिशा में बोले तो पथिक-आगमन, चोरभय और आकुलता; अग्नि कोण में बोले तो निश्चय कलह, प्रिय आगमन का श्रवण, स्त्री प्राप्ति और सम्मान लाभ; नैऋत्य कोण में बोले तो प्राणभय, स्त्री-भोजन लाभ, सर्वरोग विनाश और जन-समागम; पश्चिम में बोले तो अभ्युदय का सूचक; वायव्य कोण में बोले तो चोरी का भय; उत्तर दिशा में बोले तो धन-लाभ और इष्ट-जन-समागम; ईशान दिशा में बोले तो त्रास एवं आकाश में बोले तो मिष्टान्न-लाभ, राजानुग्रह-लाभ और कार्य सिद्धि होती है।

उल्लू का दिन में बोलना अत्यन्त अशुभ माना जाता है। रात्रि में कठोर शब्द उल्लू करे तो भय-प्राप्ति, अनिष्ट सूचक, आधि-व्याधि सूचक तथा मधुर शब्द करे तो कार्य-सिद्धि, सम्मान-लाभ और एक वर्ष के भीतर धन-प्राप्ति की सूचना समझनी चाहिए।

मुर्गा, हाथी, मोर और शृगाल क्रूर शब्द करें तो अनेक प्रकार के भय, मधुर शब्द करने से इष्ट-लाभ तथा अति मधुर शब्द करने से धनादि का शीघ्र लाभ होता है। शृगाल का दिन में बोलना अशुभ माना गया है। दिन में शृगाल कर्कश ध्वनि करे तो आधि-व्याधि की सूचना समझनी चाहिए। कबूतर और तोते का रुदन शब्द सर्वदा अशुभ कारक माना गया है। बिल्ली का पश्चिम दिशा में स्थित होकर रुदन करना अत्यन्त अशुभ समझा जाता है। पूर्व दिशा में बिल्ली का बोलना साधारणतया शुभ समझा जाता है। वास्तविक फलादेश कर्कश, मधुर और मध्यम ध्वनि के अनुसार शुभाशुभ फल के रूप में समझना चाहिए। बिल्ली का तीन बार जोर से बोलना या रोना और चौथी बार धीरे से बोलकर या रोकर चुप हो जाना श्रोता के अत्यधिक अनिष्ट-सूचक है। गाय, बैल, भैंस, बकरी इनकी मधुर, कोमल, कर्कश एवं मध्यम ध्वनियों के अनुसार फलादेशों का निरूपण किया गया है। रोने की ध्वनि तथा हँसने की ध्वनि सभी पशु-पक्षियों की अशुभ मानी गयी है। मधुर और सम्य ध्वनि, जो कर्ण कटु न हो, शुभ होती है। फलों से युक्त हरे-भरे वृक्ष पर स्थित होकर पक्षियों का बोलना शुभ और सूखे वृक्ष या काठ के ढेर पर स्थित होकर बोलना अशुभ होता है।

भौम निमित्त भूमि के रंग, चिकनाहट, रूखेपन आदि के द्वारा शुभाशुभत्व

अवगत करना भौम निमित्त कहलाता है। इस निमित्त से गृह-निर्माण योग्य भूमि, देवालय-निर्माण योग्य भूमि, जलाशय-निर्माण योग्य भूमि आदि बातों की जानकारी प्राप्त की जाती है। भूमि के रूप, रस, गन्ध और स्पर्श द्वारा उसके शुभाशुभत्व को जाना जाता है।

भूमि के नीचे के जल का विचार करते समय बताया गया है कि जिस स्थान की मिट्टी पाण्डु और पीत वर्ण की हो तथा उसमें से शहद जैसी गन्ध निकलती हो तो वहाँ जल निकलता है अर्थात् सवा तीन पुरुष प्रमाण नीचे खोदने से जल का स्रोत मिल जाता है। नीलकमल के रंग की मिट्टी हो तो उसके नीचे खारा जल समझना चाहिए। कपोत वर्ण के समान मृत्तिका होने से भी खारे जल का स्रोत मिलता है। पीत वर्ण की मृत्तिका से दूध के समान गन्ध निकले तो निश्चयतः मीठे जल का स्रोत समझना चाहिए। परन्तु यहाँ इस बात का भी ध्यान रखना आवश्यक है कि मिट्टी चिकनी होनी चाहिए; रूक्ष वर्ण की मिट्टी होने से जल का अभाव या अल्प जल निकलता है। धूम्र वर्ण की मिट्टी रहने से भी उसके नीचे जल का स्रोत रहता है।

घर बनाने के लिए श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण की भूमि, जिसमें से घी, रक्त, अन्न और मद्य के समान गन्ध निकलती हो, शुभ होती है। मधुर, कषायली, आम्ल और कटु रसवाली भूमि घर बनाने के लिए शुभ होती है। दुर्गन्ध युक्त भूमि में घर बनाने से अनिष्ट होता है, शत्रुभय, धन विनाश एवं नाना प्रकार के संक्लेश होते हैं। मंजीठे के समान रक्त वर्ण की भूमि अशुभ है। मूँग के समान हरित वर्ण की भूमि में भी घर बनाना अशुभ होता है। जिस स्थान की मृत्तिका से पुष्प के समान गन्ध निकले या धूप के समान गन्ध आती हो और श्वेत या पीत वर्ण की मृत्तिका हो, उस स्थान पर घर बनवाना शुभ होता है। अग्नि के समान लालवर्ण की भूमि में घर बनवाना निषिद्ध है। यदि इस भूमि का स्पर्श घृत के समान चिकना हो और महुवे के समान गन्ध निकलती हो तो यह भूमि भी घर बनाने के लिए शुभ होती है। मटमैले वर्ण की भूमि से यदि मुर्दे जैसी गन्ध आये तो कभी भी इस भूमि में घर नहीं बनवाना चाहिए। वर्ण की दृष्टि से श्वेत और पीत वर्ण की भूमि तथा गन्ध की दृष्टि से मधु, घृत, दुग्ध और भात की गन्ध वाली भूमि तथा घृत, दही और शहद के समान स्पर्श वाली भूमि घर बनाने के लिए शुभ मानी जाती है। किस प्रकार की भूमि के नीचे कौन-कौन पदार्थ हैं यह भी भूमि के गणित से निकाला जाता है।

किसी भी मकान में कहाँ अस्थि है और कहाँ पर धन-धान्यादि हैं, इसकी जानकारी भी भूमि गणित के अनुसार की जाती है। ज्योतिष शास्त्र के विषयों में ऐसे कई प्रकार के गणित हैं जो भूमि के नीचे की वस्तुओं पर प्रकाश डालते हैं। बताया गया है कि जिस स्थान की मिट्टी हाथी के मद के समान गन्ध वाली हो, या

कमल के समान गन्ध वाली हो और जहाँ प्रायः कोयल आया-जाया करती हों और गोहद ने अपना निवास बनाया हो, इस प्रकार की भूमि में नीचे स्वर्णादि द्रव्य रहते हैं। दूध के समान गन्ध वाली भूमि के नीचे रजत, मधु और पृथ्वी के समान गन्ध वाली भूमि के नीचे रजत और ताम्र, कबूतर की बीट के समान गन्ध वाली भूमि के नीचे पत्थर और जल के समान गन्धवाली भूमि के नीचे अस्थियाँ निकलती हैं। जिस भूमि का वर्ण सदा एक तरह का नहीं रहे, निरन्तर बदलता रहे और मट्ठा के समान गन्ध निकले उस भूमि के नीचे सोना या रत्न अवश्य रहते हैं। कदली वृक्ष के क्षार के समान जहाँ से गन्ध निकलती हो तथा मधुर रस हो, उस भूमि के नीचे रजत—चाँदी या चाँदी के सिक्के निकलते हैं।

छिन्न निमित्त—वस्त्र, शस्त्र, आसन और छत्रादि को छिदा हुआ देखकर शुभाशुभ फल कहना छिन्न निमित्त ज्ञान के अन्तर्गत है। बताया गया है कि नये वस्त्र, आसन, शय्या, शस्त्र, जूता आदि के नौ भाग करके विचार करना चाहिए। वस्त्र के कोणों के चार भागों में देवता, पाशान्त—मूल भाग के दो भागों में मनुष्य और मध्य के तीन भागों में राक्षस बसते हैं। नया वस्त्र या उपर्युक्त नयी वस्तुओं में स्याही, गोबर, कीचड़ आदि लग जाय, उपर्युक्त वस्तुएँ जल जायें, फट जायें, कट जायें तो अशुभ फल समझना चाहिए। कुछ पुराना वस्त्र पहनने पर जल या कट जाय तो सामान्यतया अशुभ होता है। राक्षस के भागों में वस्त्र में छेद हो जाय तो वस्त्र के स्वामी को रोग या मृत्यु होती है, मनुष्य भागों में छेद हो जाने पर पुत्र-जन्म होता है तथा वैभवशाली पदार्थों की प्राप्ति होती है। देवताओं के भागों में छेद होने पर धन, ऐश्वर्य, वैभव, सम्मान एवं भोगों की प्राप्ति होती है। देवता, मनुष्य और राक्षस इन तीनों के भागों में छेद हो जाने पर अत्यन्त अनिष्ट होता है।

कंकपक्षी, मेढक, उल्लू, कपोत, काक, मांसभक्षी गृध्रादि, जम्बुक, गधा, ऊँट और सर्प के आकार का छेद देवता भाग में होने पर भी वस्त्र-भोक्ता को मृत्यु तुल्य कष्ट भोगना पड़ता है। इस प्रकार के छेद होने से धन का विनाश भी होता है। देवता भाग के अतिरिक्त अन्य भागों में छेद होने पर तो वस्त्र-भोक्ता को नाना प्रकार की आधि-व्याधियाँ होने की सूचना मिलती है। अपमान और तिरस्कार भी अनेक प्रकार के सहन करने पड़ते हैं। छत्र, ध्वज, स्वस्तिक, बिल्वफल—बेल, कलश, कमल और तोरणादि के आकार का छेद राक्षस भाग में होने से लक्ष्मी की प्राप्ति, पद-वृद्धि, सम्मान और अन्य सभी प्रकार के अभीष्ट फल प्राप्त होते हैं।

वस्त्र धारण करते समय उसका दाहिना भाग जल जाय या फट जाय तो वस्त्र-भोक्ता को एक महीने के भीतर अनेक प्रकार की बीमारियों का सामना करना पड़ता है। बायें कोने के जलने या कटने से बीस दिन में घर में कोई न कोई आत्मीय

व्यक्ति रोग से पीड़ित होता है तथा वस्त्र-भोक्ता को अत्यधिक मानसिक ताप उठाना पड़ता है। ठीक मध्य में वस्त्र के जलने या कटने से व्यक्ति को शारीरिक कष्ट, धननाश और पद-पद पर अपमानित होना पड़ता है। वस्त्र के मूल भाग में जलना या कटना साधारणतः शुभ माना गया है। अग्रभाग में वस्त्र का छिन्न-भिन्न होना साधारणतः ठीक समझना चाहिए। वस्त्र को धारण करने के दिन से लेकर दो दिनों तक छिन्न-भिन्न होने के शुभाशुभत्व का विचार करना आवश्यक माना गया है। धारण करने के तत्क्षण ही वस्त्र जल या कट जाय तो उसका फल तत्काल और अवश्य प्राप्त होता है। धारण करने के एकाध दिन बाद यदि वस्त्र जले, कटे या फटे तो उसका फल अत्यल्प होता है। गर्ग आदि आचार्यों का मत है कि वस्त्र के शुभाशुभत्व का विचार वस्त्र धारण करने के एक प्रहर तक ही करना ज्यादा अच्छा होता है। एक प्रहर के पश्चात् वस्त्र पुरातन हो जाता है, अतः उसके शुभाशुभत्व का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। वस्त्र में किसी पदार्थ का दाग लगना भी अशुभ माना गया है। गोदुग्ध या मधु के दाग को शुभ बताया है।

नये वस्त्रों में कुर्ता, टोपी, कमीज, कोट आदि ऊपर पहने जाने वाले वस्त्रों का विचार प्रमुख रूप से करना चाहिए तथा शुभाशुभ फल ऊपरी वस्त्रों के जलने-कटने का विशेष रूप से होता है। धोती, जांघिया, पाजामा, पैण्ट आदि के जलने-कटने का फल अत्यल्प होता है। सबसे अधिक निकृष्ट टोपी का जलना या फटना कहा गया है। जिस व्यक्ति की टोपी धारण करते ही फट जाय या जल जाय तो वह व्यक्ति मृत्यु तुल्य कष्ट उठाता है। टोपी के ऊपरी हिस्सा का जलना जितना अशुभ होता है, उतना नीचे के हिस्सा का जलना नहीं। रविवार, मंगल और शनिवार को नवीन वस्त्र धारण करते ही जल या कट जाय तो विशेष कष्ट होता है। सोमवार और शुक्रवार को नये वस्त्र के जलने या कटने से सामान्य कष्ट तथा गुरुवार और बुधवार को वस्त्र का जलना भी अशुभ है।

अन्तरिक्ष—ग्रह नक्षत्रों के उदयास्त द्वारा शुभाशुभ का निरूपण करना अन्तरिक्ष निमित्त है। शुक्र, बुध, मंगल, गुरु और शनि इन पाँच ग्रहों के उदयास्त द्वारा ही शुभाशुभ फल का निरूपण किया जाता है। यतः सूर्य और चन्द्रमा का उदयास्त प्रतिदिन होता है, अतएव शुभाशुभ फल के लिए इन ग्रहों के उदयास्त विचार की आवश्यकता नहीं पड़ती है। यद्यपि सूर्य और चन्द्रमा के उदयास्त के समय दिशाओं के रंग-रूप तथा इन दोनों ग्रहों के बिम्ब की आकृति आदि के विचार द्वारा शुभाशुभत्व का कथन किया गया है, तो भी गणित क्रिया में इनके उदयास्त को विशेष महत्ता नहीं दी गयी है। निमित्त ज्ञानी उक्त पाँचों ग्रहों के उदयास्त से ही फलादेश का कथन करते हैं। वास्तव में इन ग्रहों का उदयास्त विचार है भी महत्त्वपूर्ण।

शुक्र अश्विनी, मृगशिरा, रेवती, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण और

स्वाति नक्षत्र में उदय को प्राप्त हो तो सिन्धु, गुर्जर, आसाम, महाराष्ट्र और बंगाल में अशान्ति, महामारी एवं आपसी संघर्ष होते हैं। पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी और भरणी इन नक्षत्रों में शुक्र का उदय होने से गुजरात, पंजाब में दुर्भिक्ष तथा बिहार, बंगाल, असम आदि पूर्वी राज्यों में दुर्भिक्ष होता है। घी और धान्य का भाव समस्त देशों में कुछ महँगा होता है। कृत्तिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्रों में शुक्र का उदय हो तो दक्षिण भारत में सुभिक्ष, पूर्णतया वर्षा तथा उत्तर भारत में वर्षा की कमी रहती है। फसल भी उत्तर भारत में बहुत अच्छी नहीं होती। आश्लेषा, भरणी, विशाखा, पूर्वाभाद्रपद और उत्तरा भाद्रपद इन नक्षत्रों में शुक्र का उदय होना समस्त भारत के लिए अशुभ कहा गया है। चीन, अमेरिका, जापान और रूस में भी अशान्ति रहती है।

मेष राशि में शनि का उदय हो तो जलवृष्टि, सुख, शान्ति, धार्मिक विचार, उत्तम फसल और परस्पर सहानुभूति की उत्पत्ति होती है। वृष राशि में शनि का उदय होने से तृणकाष्ठ का अभाव, घोड़ों में रोग, साधारण वर्षा और सामान्यतः पशु-रोगों की वृद्धि होती है। मिथुन राशि में शनि का उदय हो तो प्रचुर परिमाण में वर्षा, उत्तम फसल और सभी पदार्थ सस्ते होते हैं। कर्क राशि में शनि का उदय होने से वर्षा का अभाव, रसों की उत्पत्ति में कमी, वनों का अभाव और खाद्य वस्तुओं के भाव महँगे होते हैं। सिंह राशि में शनि का उदय होना अशुभ-कारक होता है। कन्या में शनि का उदय होने से धान्यनाश, अल्पवर्षा, व्यापार में लाभ और अभिजात्य वर्ग के व्यक्तियों को कष्ट होता है। तुला और वृश्चिक राशि में शनि का उदय हो तो महावृष्टि, धन का विनाश, बाढ़ का भय और गेहूँ की फसल कम होती है। धनु राशि में शनि का उदय हो तो नाना प्रकार की बीमारियाँ देश में फैलती हैं। मकर में शनि का उदय हो तो प्रशासकों में संघर्ष, राजनीतिक उलट-फेर एवं लोहा महँगा होता है। कुम्भ राशि में शनि का उदय हो तो अच्छी वर्षा, अच्छी फसल और व्यापारियों को लाभ होता है। मीन राशि में शनि का उदय होना अल्प वर्षाकारक, नाना प्रकार के उपद्रवों का सूचक तथा फसल की कमी का सूचक है।

मेष राशि में गुरु का उदय होने से दुर्भिक्ष, मरण, संकट और आकस्मिक दुर्घटनाएँ उत्पन्न होती हैं। वृष में उदय होने से सुभिक्ष होता है। मिथुन में उदय होने से वेश्याओं को कष्ट; कलाकार और व्यापारियों को भी कष्ट होता है। कर्क में गुरु के उदय होने से यथेष्ट वर्षा; कन्या में उदय होने से साधारण वर्षा; तुला में गुरु के उदय होने से विलास के पदार्थ महँगे; वृश्चिक में उदय होने से दुर्भिक्ष; धनु-मकर में उदय होने से उत्तम वर्षा, व्याधियों का बाहुल्य; कुम्भ में उदय होने से अतिवृष्टि, अन्न का भाव महँगा और मीन में गुरु का उदय होने से अशान्ति

और संघर्ष होता है।

पौष, आषाढ़, श्रावण, वैशाख और माघ मास में बुध का उदय होना अशुभ एवं आश्विन, कार्तिक और ज्येष्ठ में बुध का उदय होने से शुभ होता है। पूर्व दिशा में बुध का उदय होना अशुभ और पश्चिम दिशा में शुभ माना जाता है। मंगल का शनि की राशि में उदय होना अशुभ माना जाता है और शुक्र, गुरु तथा अपनी राशियों में उदय होना शुभ कहा गया है। कन्या और मिथुन राशि में उदय होना साधारण है।

ग्रहों के अस्त का विचार करते हुए कहा गया है कि अश्विनी, मृगशिरा, हस्त, रेवती, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण और स्वाति नक्षत्र में शुक्र का अस्त होना इटली, रोम, जापान में भूकम्प का द्योतक; बर्मा, श्याम, चीन और अमेरिका के लिए सुख-शान्ति सूचक तथा रूस और भारत के लिए साधारण शान्तिप्रद होता है। इन नक्षत्रों में शुक्रास्त होने के उपरान्त एक महीने तक अन्न महँगा बिकता है, पश्चात् कुछ सस्ता होता है। घी, तेल, जूट, आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। कृतिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र में शुक्र अस्त हो तो भारत में विग्रह, मुसलिम राष्ट्रों में शान्ति, इंग्लैण्ड और अमेरिका में समता, चीन में सुभिक्ष, बर्मा में उत्तम फसल और भारत में साधारण फसल होती है। पूर्वभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी और भरणी नक्षत्रों में शुक्र का अस्त होना पंजाब, दिल्ली, राजस्थान, विन्ध्यप्रदेश के लिए सुभिक्षदायक और बंगाल, आसाम तथा बिहार के लिए साधारण सुभिक्षदायक होता है। शुक्र का मध्य रात्रि में अस्त होना तथा आश्लेषा विद्ध मघा नक्षत्र में उदय होना अत्यन्त अशुभकारक माना गया है।

मेष में शनि अस्त हो तो धान्य भाव तेज, वर्षा साधारण, जनता में असन्तोष और आपसी झगड़े होते हैं। वृष राशि में शनि अस्त हो तो पशुओं को कष्ट, देश के पशुधन का विनाश और मनुष्यों में संक्रामक रोग उत्पन्न होते हैं। मिथुन राशि में शनि अस्त हो तो जनता को कष्ट, आपसी द्वेष और अशान्ति होती है। कर्क राशि में शनि अस्त हो तो कपास, सूत, गुड़, चाँदी, घी अत्यन्त महँगे होते हैं। कन्या राशि में शनि के अस्त होने से अच्छी वर्षा; तुला राशि में शनि अस्त हो तो अच्छी वर्षा; वृश्चिक राशि में शनि अस्त हो तो उत्तम फसल; धनु राशि में शनि के अस्त होने से स्त्री-बच्चों को कष्ट, उत्तम वर्षा और उत्तम फसल; मकर राशि में शनि के अस्त होने से सुख, प्रचण्ड पवन, अच्छी फसल, राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन और पशु-धन की वृद्धि; कुम्भ राशि में शनि के अस्त होने से शीत-प्रकोप और पशुओं की हानि एवं मीन राशि में शनि के अस्त होने से अधर्म का प्रचार होता है। सन्ध्याकाल में भरणी नक्षत्र पर शनि का अस्त होना अत्यन्त अशुभ सूचक माना गया है।

मेष में गुरु अस्त हो तो थोड़ी वर्षा, बिहार, बंगाल और आसाम में सुभिक्ष, राजस्थान और पंजाब में दुष्काल; वृष में अस्त हो तो दुर्भिक्ष, दक्षिण भारत में अच्छी फसल और उत्तर भारत में खण्डवृष्टि; मिथुन में अस्त हो तो घृत, तैल, लवण आदि पदार्थ महँगे महामारी का प्रकोप; कर्क में अस्त हो तो सुभिक्ष, कुशल, कल्याण और समृद्धि; सिंह में अस्त हो तो युद्ध, संघर्ष, राजनीतिक उलट-फेर और धन का नाश; कन्या में अस्त हो तो क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य और उत्तम फसल; तुला में अस्त हो तो पीड़ा, द्विजों को विशेष कष्ट, धान्य महँगा; वृश्चिक में अस्त हो तो धनहानि और शस्त्रभय; धनु राशि में अस्त हो तो भय, आतंक, नाना प्रकार के रोग और साधारण फसल; मकर में अस्त हो तो उड़द, तिल, मूँग आदि धान्य महँगे, कुम्भ में अस्त हो तो प्रजा को कष्ट एवं मीन राशि में गुरु अस्त हो तो सुभिक्ष, अच्छी वर्षा, धान्य भाव सस्ता और अनेक प्रकार की समृद्धि होती है। गुरु का क्रूर ग्रहों के साथ अस्त या उदय होना अशुभ है। शुभ ग्रहों के साथ अस्त या उदय होने से शुभ-फल प्राप्त होता है।

बुध का क्रूर नक्षत्रों में अस्त होना तथा क्रूर ग्रहों के साथ अस्त होना अशुभ कहा गया है। मंगल का शनि क्षेत्र की राशियों में अस्त होना अशुभसूचक है। जब मंगल अपनी राशि के दीप्तांश में अस्त या उदय को प्राप्त करता है तो शुभ-फल प्राप्त होता है।

ग्रहों के अस्तोदय के समय समान मार्गी और वक्री का भी विचार करना चाहिए। इस निमित्तज्ञान में समस्त ग्रहों के चार प्रकरण गर्भित हैं। ग्रहों की विभिन्न जातियों के अनुसार शुभाशुभ फल का निरूपण भी इसी निमित्तज्ञान के अन्तर्गत किया गया है। शनि का क्रूर नक्षत्र पर वक्री होना और मृदुल नक्षत्र पर उदय हो जाना अशुभ है। कोई भी ग्रह अपनी स्वाभाविक गति से चलते समय यकायक वक्री हो जाय तो अशुभ फल होता है।

लक्षणनिमित्त—स्वस्तिक, कलश, शंख, चक्र आदि चिह्नों के द्वारा एवं हस्त, मस्तक और पदतल की रेखाओं द्वारा शुभाशुभ का निरूपण करना लक्षण-निमित्त है। करलक्षण में बताया गया है कि मनुष्य लाभ-हानि, सुख-दुःख, जीवन-मरण, जय-पराजय एवं स्वास्थ्य-अस्वास्थ्य रेखाओं के बल से प्राप्त करता है। पुरुषों के लक्षण दाहिने हाथ से और स्त्रियों के बायें हाथ की रेखाओं से अवगत करने चाहिए। यदि प्रदेशिनी और मध्यमा अंगुलियों का अन्तर सघन हो—वे एक-दूसरे से मिली हों और मिलने से उनके बीच में कोई अन्तर न रहे, तो बचपन में सुख होता है। यदि मध्यमा और अनामिका के बीच सघन अन्तर हो तो जवानी में सुख होता है। लम्बी अँगुलियाँ दीर्घजीवियों की, सीधी अँगुलियाँ सुन्दरों की, पतली बुद्धिमानों की और चपटी दूसरों की सेवा करने वालों की होती हैं। मोटी अँगुलियों वाले निर्धन और बाहर की ओर झुकी अँगुलियों वाले आत्मघाती होते

है। कनिष्ठा और अनामिका में सघन अन्तर हो तो बुढ़ापे में सुख प्राप्त होता है। सभी अँगुलियाँ जिसकी सघन होती हैं वह धन-धान्य युक्त, सुखी और कर्त्तव्यशील होता है। जिनकी अँगुलियों के पर्व लम्बे होते हैं, वे सौभाग्यवान् और दीर्घजीवी होते हैं।

स्पर्श करने में उष्ण, अरुणवर्ण, पसीनारहित, सघन (छिद्र रहित) अंगुलियों वाला, चिकना, चमकदार, मांसल, छोटा, लम्बी अंगुलियों वाला, चौड़ा एवं ताम्र नखवाला हाथ प्रशंसनीय माना गया है। इस प्रकार के हाथ वाला व्यक्ति जीवन में धनी, सुखी, ज्ञानी और नाना प्रकार के सम्मानों से युक्त होता है। जिनके हाथ की आकृति बन्दर के हाथ की आकृति के समान कोमल, लम्बी, पतली, नुकीली हथेली वाली होती है वे धनिक होते हैं। व्याघ्र के पंजे की आकृति के समान हाथ वाले मनुष्य पापी होते हैं। जिसके हाथ कुछ भी काम नहीं करते हुए भी कठोर प्रतीत हों और जिसके पाँव बहुत चलने-फिरने पर भी कोमल दीख पड़ें, वह मनुष्य सुखी होता है तथा जीवन में सर्वदा सुख का अनुभव करता है।

हाथ तीन प्रकार के बताये हैं—नुकीला, समकोण अर्थात् चौकोर और गोल-पतली चपटी अंगुलियों के अग्र की आकृति वाला। जो देखने में नुकीला—लम्बी-लम्बी नुकीली अँगुलियाँ, करतल भाग उन्नत, मांसलयुक्त, ताम्रवर्ण का हो, वह व्यक्ति के धनी, सुखी और ज्ञानी होने की सूचना देता है। नुकीला हाथ उत्तम मनुष्यों का होता है। यह सत्य है कि हस्तरेखा के विचार के पहले हाथ की आकृति का विचार अवश्य करना चाहिए। सबसे पहले हाथ की आकृति का विचार कर लेना आवश्यक है। समकोण हाथ की अँगुलियाँ साधारण लम्बी होती हैं। करतलस्थ रेखाएँ पीले रंग की चौड़ी दीख पड़ती हैं। अँगुलियों के अग्रभाग चौड़े-चौकोर होते हैं। अंगुलियाँ लम्बी करके एक-दूसरी से मिलाकर देखने से उनके बीच की सन्धि में प्रकाश दीख पड़ता है। अँगुलियों के नीचे के उच्चप्रदेश साधारण ऊँचे उठे हुए और देखने में स्पष्ट दीख पड़ते हैं। हाथ का स्पर्श करने से हाथ कठिन प्रतीत होता है। अँगुलियाँ मोटी होती हैं, हाथ का रंग पीला दिखलाई पड़ता है। उत्तम रेखाएं उठी हुई रहती हैं। इस प्रकार के लक्षणों से युक्त हाथ वाला व्यक्ति परिश्रमी, दृढ़ अध्यवसायी, कर्मठ, निष्कपट, लोकप्रिय, परोपकारी, तर्कणाप्रधान, और शोधकार्य में भाग लेने वाला होता है। यह हाथ मध्यम दर्जे का माना जाता है। इस प्रकार के हाथ वाला व्यक्ति बहुत बड़ा धनिक नहीं हो सकता है।

गोल, पतले और चपटे ढंग का हाथ निकृष्ट माना जाता है। इस प्रकार के हाथ में करतल का मध्य भाग गहरा, रेखाएं चौड़ी और फैली हुई अंगुलियाँ छोटी या टेढ़ी, अँगूठा छोटा होता है। जिस हाथ की अंगुलियाँ मोटी, हथेली का रंग काला और अल्प रेखाएँ हों, वह हाथ साधारण कोटि का होता है। इस

प्रकार के हाथ वाले व्यक्ति परिश्रमी, अल्प सन्तोषी, मन्दबुद्धि और विशेष भोजन करने वाले होते हैं। जिस हाथ में टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएँ रहती हैं, देखने में बदसूरत होता है और अँगुलियाँ भद्दी होती हैं, वह हाथ अशुभ माना जाता है। इस हाथ वाला व्यक्ति सर्वदा जीवन में कष्ट उठाता है'।

जिस व्यक्ति के हाथ का पिछला भाग मांसल, पुष्ट, कछुए की पीठ के समान उन्नत, नसों से रहित और रोम रहित होता है, वह व्यक्ति संसार में पर्याप्त यश, विद्या, धन और भोग को प्राप्त करता है। रूक्ष, सिकुड़ा, कड़ा पृष्ठ भाग अशुभ समझा जाता है। जिस पृष्ठ भाग की नसें दिखलाई दें, केश हों वह जीवन में कष्टों की सूचना देता है। हाथ के पृष्ठ भाग में छः बातें विचारणीय मानी गयी हैं—उन्नत होना, अवनत होना, नसों का दिखलाई पड़ना, नसों का नहीं दिखलाई पड़ना, विस्तीर्ण होना और संकुचित या संकीर्ण होना।

हथेली का विचार करते समय कहा गया है कि जिसकी हथेली स्निग्ध, उन्नत, मांसल हो, उभरी हुई नसों से युक्त न हो, वह शुभ मानी जाती है। इस प्रकार की हथेली वाला व्यक्ति जीवन में नाना प्रकार की उन्नतियों को प्राप्त करता है। जिनके हाथ का या पाँव का तलवा मृदु होता है, वे लोग स्थिर कार्य करने वाले होते हैं। कमल के गर्भ के समान सुन्दर वर्ण और अत्यन्त सुकोमल दोनों हाथों का होना उत्तम माना गया है। इस प्रकार के हाथ वाला मनुष्य कठोर से कठोर कार्य करने में समर्थ होता है। जिस मनुष्य के हाथ में प्राकृतिक रूप से विकृति मालूम पड़े तो वह व्यक्ति अपने पदों का अभ्युदय करता है। ऐसे लोगों को वाहन सौख्य भी मिलता है। जिसकी हथेली पीतवर्ण की हो, वह आगमाभ्यासी, श्वेतवर्ण की हथेली वाला दरिद्री तथा काले और नीले वर्ण की हथेली वाला व्यक्ति दुराचारी होता है। जिस व्यक्ति की हथेली सिकुड़ी, पतली और सल पड़ी हुई हो तो वह व्यक्ति मानसिक दुर्बलता वाला, डरपोक, बुद्धिहीन, अन्यायाचरण करने वाला और चंचल स्वभाव वाला होता है। बड़ा और लम्बा करतल भाग महत्त्वाकांक्षी, असफल और नीरस व्यक्ति का होता है। दृढ़ करतल भाग हो तो चंचल तथा योग्य प्रकृति वाला होता है। हथेली का गहरा होना असफलताओं का सूचक है।

जिसके नखों का वर्ण तुष—भूसे के समान हो; वे पुरुषार्थहीन, विवर्णनख वाले परमुखापेक्षी, चपटे और फटे नखवाले धनहीन; नीले रंग के नख वाले पाप कार्य में प्रवृत्त, दुराचारी; जिसके नख शिथिल हों वे दरिद्री होते हैं। छोटी अँगुलियों वाले मनुष्य चालाक, साहसी, संकुचित स्वभाव के और मनमाने कार्य करने वाले होते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति कवि, लेखक और प्रशासक भी होते हैं। लम्बी अँगुलियों वाले मनुष्य दीर्घसूत्री, प्रमादी और अस्थिर विचार के होते हैं। लम्बी अँगुलियाँ यदि सुडौल हों तो व्यक्ति महत्त्वाकांक्षी, परिश्रमी, यशस्वी

और धनी होता है। लट्ठ के समान पुष्ट अँगुलियों वाले व्यक्ति ऐश-आराम भोगने वाले, दृढ़ परिश्रमी, मिलनसार और सुख प्राप्त करने की चेष्टा करने वाले होते हैं। लचीली अँगुलियों वाले समझदार, अधिक खर्च करने वाले, ऋण-ग्रस्त और सम्मान प्राप्त करने वाले होते हैं।

जिसका अँगूठा हथेली की ओर झुका हुआ हो, अन्य अँगुलियाँ पशु के पंजे के समान हों, हथेली संकुचित और चपटी हो ऐसा मनुष्य अधिक तृष्णा वाला होता है। जिसका अँगूठा पीछे की ओर झुका हुआ हो, वह व्यक्ति कार्यकुशल होता है। अँगूठे को इच्छाशक्ति, निग्रहशक्ति, कीर्ति, सुख और समृद्धि का द्योतक माना गया है। अँगूठे के निमित्त द्वारा जीवन के भावी शुभाशुभ का विचार किया जाता है।

हस्तरेखाओं का विचार करते हुए कहा गया है कि आयु या भोगरेखा, मातृरेखा, पितृरेखा, ऊर्ध्वरेखा, मणिबन्धरेखा, शुक्रबन्धिनीरेखा आदि रेखाएँ प्रधान हैं। जो रेखा कनिष्ठा अँगुली से आरम्भ कर तर्जनी के मूलाभिमुख गमन करती है, उसका नाम आयुरेखा है। कुछ आचार्य इसे भोगरेखा भी कहते हैं। आयुरेखा यदि छिन्न-भिन्न न हो, तो वह व्यक्ति 120 वर्ष तक जीवित रहता है। यदि यह रेखा कनिष्ठा अँगुली के मूल से अनामिका के मूल तक विस्तृत हो तो 50-60 वर्ष की आयु होती है। इस आयुरेखा को जितनी क्षुद्र रेखाएँ छिन्न-भिन्न करती हैं, उतनी ही आयु कम हो जाती है। इस रेखा के छोटी और मोटी होने पर भी व्यक्ति अल्पायु होता है। इस रेखा के शृंखलाकार होने से व्यक्ति लम्पट और उत्साह-हीन होता है। यह रेखा जब छोटी-छोटी रेखाओं से कटी हुई हो, तो व्यक्ति प्रेम में असफल रहता है। इस रेखा के मूल में बुध स्थान में शाखा न रहने से सन्तान नहीं होती। शनि स्थान के निम्न देश में मातृरेखा के साथ इस रेखा के मिल जाने पर हठात् मृत्यु होती है। यदि यह रेखा शृंखलाकार होकर शनि के स्थान में जाय तो व्यक्ति स्त्री-प्रेमी होता है।

आयुरेखा की बगल में जो दूसरी रेखा तर्जनी के निम्न देश में जाती है, उसका नाम मातृरेखा है। यदि रेखा शनि स्थान या शनि स्थान के नीचे तक लम्बी हो तो अकालमृत्यु होती है। जिस व्यक्ति की मातृ और पितृ रेखा मिलती नहीं, वह विशेष विचार नहीं करता और कार्य में शीघ्र ही प्रवृत्त हो जाता है। इस प्रकार की रेखा वाला व्यक्ति आत्माभिमानी, अभिनेता और व्याख्यान आदि में पटु होता है। दो मातृरेखा रहने से भाग्यशाली, ऐश्वर्यशाली और धनिक होता है तथा इस प्रकार के व्यक्ति को पैतृक सम्पत्ति भी प्राप्त होती है। यदि यह रेखा टूट जाय तो मस्तक में चोट लगती है तथा व्यक्ति अंगहीन होता है। यह रेखा लम्बी हो और हाथ में अन्य बहुत-सी रेखाएँ हों तो वह व्यक्ति विपत्ति काल में आत्मदमन करने वाला होता है। इस रेखा के मूल में कुछ अन्तर पर यदि

पितृरेखा हो तो वह मनुष्य परमुखापेक्षी और डरपोक होता है। मातृरेखा हाथ में सरल भाव से न जाकर बुध के स्थानाभिमुखी हो तो वाणिज्य व्यवसाय में लाभ होता है। यदि यह रेखा कनिष्ठा और अनामिका के बीच की ओर आये तो शिल्प द्वारा उन्नति लाभ होता है। यह रेखा रवि के स्थान में जाय, तो शिल्प-विद्यानुरागी और यशःप्रिय व्यक्ति होता है। यह रेखा आयुरेखा को छेदकर शनि स्थान में जाय तो मस्तक में चोट लगने से मृत्यु होती है। आयु रेखा के समीप इसके होने से श्वास रोग होता है। इस रेखा में सादे बिन्दु होने से व्यक्ति वैज्ञानिक आविष्कर्ता होता है। मातृरेखा के ऊपर यवचिह्न होने से व्यक्ति वायुरोग ग्रस्त होता है। मातृ और पितृ दोनों रेखाओं के अत्यन्त छोटे होने से शीघ्र मृत्यु होती है।

जो रेखा करतल मूल के मध्यस्थल से उठकर साधारणतः मातृरेखा का ऊर्ध्व-देश स्पर्श करती है, अथवा उसके निकट पहुँचती है, उसका नाम पितृरेखा है। कुछ लोग इसे आयुरेखा भी कहते हैं। यह रेखा चौड़ी और विवर्ण हो, तो मनुष्य रुग्ण, नीच स्वभाव, दुर्बल और ईर्ष्यान्वित होता है। दोनों हाथ में पितृरेखा के छोटी होने से व्यक्ति अल्पायु होता है। पितृरेखा के शृंखलाकृति होने से व्यक्ति रुग्ण और दुर्बल होता है। दो पितृरेखा होने से व्यक्ति दीर्घायु, विलासी, सुखी और किसी स्त्री के धन का उत्तराधिकारी होता है। यह रेखा शाखा विशिष्ट हो तो नसें कमजोर होती हैं। पितृरेखा से कोई शाखा चन्द्र के स्थान में जाने से मूर्खतावश अपव्यय कर व्यक्ति कष्ट में पड़ता है। यह रेखा टेढ़ी होकर चन्द्र स्थान में जाये, तो दीर्घजीवी और इस रेखा की कोई शाखा बुध के क्षेत्र में प्रविष्ट हो तो व्यवसाय में उन्नति एवं शास्त्रानुशीलन में सुख्यातिलाभ होता है। पितृरेखा में दो रेखाएं निकलकर एक चन्द्र और दूसरी शुक्र के स्थान में जायें, तो वह मनुष्य स्वदेश का त्याग कर विदेश जाता है। चन्द्रस्थान से कोई रेखा आकर पितृरेखा को काटे, तो वह वातरोगी होता है। जिस व्यक्ति के दोनों हाथों में मातृ, पितृ और आयु रेखाएँ मिल गई हों, वह व्यक्ति अकस्मात् दुरवस्था को प्राप्त करता है और उसकी मृत्यु भी किसी दुर्घटना से होती है। पितृरेखा वृद्धांगुलि के निकट जाये तो व्यक्ति को सन्तान नहीं होती। पितृरेखा में छोटी-छोटी रेखाएं आकर चतुष्कोण उत्पन्न करें तो स्वजनों से विरोध होता है तथा जीवन में अनेक स्थानों पर असफलताएं मिलती हैं।

जो सीधी रेखा पितृरेखा के मूल के समीप आरम्भ होकर मध्यमांगुलि की ओर गमन करती है, उसे ऊर्ध्वरेखा कहते हैं। जिसकी ऊर्ध्वरेखा पितृरेखा से उठे, वह अपनी चेष्टा से सुख और सौभाग्य लाभ करता है। ऊर्ध्वरेखा हस्ततल के बीच से उठकर बुधस्थान तक जाय तो वाणिज्य व्यवसाय में, वक्तृता में या विज्ञान-शास्त्र में उन्नति होती है। यह रेखा मणिबन्ध का भेदन करे तो दुःख और शोक

उपस्थित होता है। इस रेखा के हाथ के बीच से निकलकर रवि के स्थान में जाने से साहित्य और शिल्प विद्या में उन्नति होती है। यह रेखा मध्यमा अंगुली से जितनी ऊपर उठेगी, उतना ही शुभ फल होगा। ऊर्ध्वरेखा जिस स्थान में टेढ़ी होकर जायगी, उस व्यक्ति को उसी उम्र में कष्ट होगा। इस रेखा के भग्न या छिन्न-भिन्न होने से नाना प्रकार की घटनाएँ घटित होती हैं। इस रेखा के सरल और सुन्दर होने से व्यक्ति सुखी और दीर्घजीवी जीवन व्यतीत करता है। शुक्र स्थान से कोई एक छोटी रेखा निकलकर पितृरेखा और ऊर्ध्वरेखा को काटने से स्त्री वियोग होता है।

जिसके हाथ में ऊर्ध्व रेखा न रहे, वह व्यक्ति दुर्भाग्यशाली, उद्यम रहित और शिथिलाचारी होता है। इस रेखा के अस्पष्ट होने से उद्यम व्यर्थ होता है। इस रेखा के स्पष्ट और सरल भाव से शनि के स्थान में जाने से व्यक्ति दीर्घजीवी होता है। स्त्रियों के करतल में और पादतल में ऊर्ध्वरेखा होने से वे चिर-सधवा सौभाग्यवती और पुत्र-पौत्रवती होती हैं। जिस व्यक्ति के हाथ में यह रेखा होती है। वह ऐश्वर्यशाली और सुखी होता है। जिसकी तर्जनी से लेकर मूल तक ऊर्ध्व-रेखा स्पष्ट हो, वह राजदूत होता है। मध्यमा अँगुली के मूल तक जिसकी ऊर्ध्व रेखा दिखाई दे, वह सुखी, विभवशाली और पुत्र-पौत्रादि समन्वित होता है।

जिस व्यक्ति के मणिबन्ध में तीन सुस्पष्ट सरल रेखाएँ हों वह दीर्घजीवी, सुस्थ शरीरी और सौभाग्यशाली होता है। रेखात्रय जितनी ही साफ और स्वच्छ होंगी, स्वास्थ्य उतना ही उत्तम होगा। मणिबन्ध रेखात्रय के बीच में कुश चिह्न रहने से व्यक्ति कठिन परिश्रमी और सौभाग्यशाली होता है। मणिबन्ध में यदि एक तारिका चिह्न हो तो उत्तराधिकारी के रूप में धन लाभ होता है, किन्तु यदि चिह्न अस्पष्ट हो तो व्यक्ति परदाराभिलाषी होता है। मणिबन्ध से चन्द्रस्थान के ऊपर की ओर जाने वाली रेखा हो तो समुद्र-यात्रा का योग अधिक होता है। मणिबन्ध से कोई रेखा गुरुस्थान की ओर जाय तो धन-लाभ होता है। इस रेखा के सरल होने से आयुवृद्धि होती है। पर यह रेखा इस बात की भी सूचना देती है कि व्यक्ति की मृत्यु जल में डूबने से न हो जाय। करलक्षण में मणिबन्ध रेखा के सम्बन्ध में बताया गया है कि जिसके मणिबन्ध-कलाई पर तीन रेखाएँ हों, उसे धान्य, सुवर्ण और रत्नों की प्राप्ति होती है। उसे नाना प्रकार के आभूषणों का उपभोग करने का अवसर प्राप्त होता है। जिस व्यक्ति की मणिबन्ध रेखाएँ मधु के समान पिंगल लालवर्ण की हों, तो वह पुरुष सुखी होता है। जिनका मणिबन्ध गठा हुआ और दृढ़ हो वे राजा होते हैं, ढीला होने से हाथ काटा जाता है। जिसके मणिबन्ध में जवमाला की तीन धाराएँ हों वह व्यक्ति एम० एल० ए० या मिनिस्टर होता है। प्रशासन के कार्यों में उसे पर्याप्त सफलता प्राप्त होती है। जिसके मणि-बन्ध में यवमाला की दो धाराएँ प्राप्त होती हैं, वह व्यक्ति अत्यन्त धर्मात्मा, चतुर

कार्यपटु और सुखी होता है। जज या मजिस्ट्रेट का पद उसे मिलता है। जिसके मणिबन्ध में यवमाला की एक ही धारा दिखाई पड़े वह पुरुष धनी होता है। सभी लोग उसकी प्रशंसा करते हैं। जिस व्यक्ति के हाथ की तीनों मणिबन्ध रेखाएँ स्पष्ट और सरल हों, वह व्यक्ति जगन्मान्य, पूज्य और प्रतिष्ठित होता है।

तर्जनी और मध्यमांगुली के बीच से निकलकर अनामिका और कनिष्ठा के मध्यस्थल तक जाने वाली रेखा शुक्रबन्धिनी कहलाती है। इस रेखा के भग्न या बहुशाखा विशिष्ट होने पर मूर्च्छा रोग होता है। इस रेखा के स्थान-स्थान में भग्न होने से मनुष्य लम्पट होता है। शुक्रबन्धिनी रेखा के होने से मनुष्य कभी विषाद में मग्न रहता है और कभी आनन्द में। इस रेखा के बृहस्पति स्थान से अर्द्ध-चन्द्राकार हो सीधी तरह से बुध के स्थान तक जाने से व्यक्ति ऐन्द्रजालिक होता है और साहित्यिक भी होता है।

रेखाओं के रक्तवर्ण होने से मनुष्य आमोदप्रिय, उग्रस्वभाव; रक्तवर्ण में कुछ कालिमा हो अर्थात् रक्तवर्ण श्यामाभ हो तो प्रतिहिंसापरायण, शठ, क्रोधी होता है। जिसकी रेखा पीली होती है, वह उच्चाभिलाषी, प्रतिहिंसापरायण तथा कर्मठ होता है। पाण्डुवर्ण की रेखाएँ होने से स्त्री स्वभाव का व्यक्ति होता है।

ग्रहों के स्थानों का वर्णन करते हुए बतलाया गया है कि तर्जनी मूल में गुरु का स्थान, मध्यमा अँगुली के मूल में शनि का स्थान, अनामिका के मूल देश में रवि स्थान, कनिष्ठा के मूल में बुध स्थान तथा अँगूठे के मूल देश में शुक्र स्थान है। मंगल के दो स्थान हैं---एक तर्जनी और अँगूठे के बीच में पितृरेखा के समाप्ति स्थान के नीचे और दूसरा बुध स्थान के नीचे और चन्द्रस्थान के ऊपर ऊर्ध्व रेखा और मातृ रेखा के नीचे वाले स्थान में। मंगल स्थान के नीचे से मणिबन्ध के ऊपर तक करतल के पार्श्व भाग के स्थान को चन्द्रस्थान कहते हैं।

सूर्य के स्थान के ऊँचा होने से व्यक्ति चंचल होता है, संगीत तथा अन्यान्य कलाविशारद और नये विषयों का आविष्कारक होता है। रवि और बुध का स्थान उच्च होने से व्यक्ति विज्ञ, शास्त्र विशारद और सुवक्ता होता है। अत्युच्च होने से वह अपव्ययी, विलासी, अर्थलोभी और तार्किक होता है। रवि का स्थान ऊँचा होने से व्यक्ति मध्यमाकृति, लम्बे केश, बड़े-बड़े नेत्र, किञ्चित् लम्बा मुख-मण्डल, सुन्दर शरीर और अँगुलियाँ लम्बी होती हैं। रवि के स्थान में कोई रेखा न होने पर व्यक्ति को नाना दुर्घटनाओं का सामना करना पड़ता है। जिसके हाथ का उच्च सूर्य क्षेत्र बुध क्षेत्र की ओर झुक रहा हो, तो उसका स्वभाव नम्र होता है। व्यापार में उन्नति करने वाला, अर्थशास्त्र का अपूर्व विद्वान् एवं कलाप्रिय होता है। जिसके हाथ का उच्च सूर्यक्षेत्र शनिक्षेत्र की ओर झुका हुआ हो, वह धनाढ्य और अनेक प्रकार के भोग-विलासों में रत रहता है। सूर्यक्षेत्र यदि गुरुक्षेत्र की ओर झुका हुआ हो तो व्यक्ति दयालु, गुणी, न्यायप्रिय, सत्यवादी,

परोपकारी, गुरुजनों का भक्त, सुन्दर आकृति वाला, बुद्धिमान्, मधुरभाषी, कला-कौशल में अभिरुचि रखने वाला, धार्मिक और सन्तान वाला होता है। मंगल क्षेत्र की ओर झुके रहने से व्यक्ति सदाचारी, ज्ञानी, साहित्यकार, शिल्पकला विशारद, वैज्ञानिक और कुशल डॉक्टर होता है।

चन्द्रस्थान उच्च होने से मनुष्य संगीतप्रिय, कल्पनाकुशल, विषण्ण और चिन्ता-युक्त होता है। इस प्रकार का व्यक्ति प्रायः संसार से विरक्त होता है और संन्यासी का जीवन व्यतीत करता है।

पितृरेखा के सन्निकटस्थ मंगल का स्थान उच्च हो तो वह व्यक्ति असीम साहसी, विवादप्रिय और विशिष्ट बुद्धिमान् होता है। हस्त पार्श्वस्थ मंगल स्थान उच्च होने से वह व्यक्ति अन्याय कार्य में प्रवृत्त नहीं होता तथा धीर, नम्र, धार्मिक साहसी और दृढ़प्रतिज्ञ होता है। दोनों स्थान समान उच्च होने से वह व्यक्ति उग्र स्वभाव सम्पन्न, कामातुर, निष्ठुर और अत्याचारी होता है। मंगलस्थान के नीचे होने से व्यक्ति भीरु, मन्दबुद्धि और पुरुषार्थहीन होता है। मंगल का स्थान कठिन होने से स्थावर सम्पत्ति की वृद्धि होती है। मंगल उच्च का सर्वांग सुन्दर रूप में हो तो व्यक्ति मिल या अन्य बड़े-बड़े उद्योग धन्धों को करता है। मंगल मनुष्य की कार्य-क्षमता की सूचना देता है।

बुध का स्थान उच्च होने से शास्त्रज्ञान में परायण, भाषण में पटु, साहसी, परिश्रमी, पर्यटनशील और कम अवस्था में ही विवाह करने वाला होता है। बुध जिसका उच्च का हो और साथ ही चन्द्रमा भी उच्च का हो तो व्यक्ति लेखक, कवि या साहित्यकार बनता है। सफल नेता भी इस प्रकार की रेखा वाला व्यक्ति होता है। कन्या सन्तान इस प्रकार के व्यक्ति को अधिक उत्पन्न होती हैं। कुछ आचार्यों का अभिमत है कि जिसके हाथ में बुध उच्च का हो, वह व्यक्ति डॉक्टर या अन्य प्रकार का वैज्ञानिक होता है। ऐसे व्यक्तियों को नयी-नयी वस्तुओं के गुण-दोष आविष्कार में अधिक सफलता मिलती है। बुध का पर्वत नीचे की ओर झुका हो और मंगल का पर्वत उन्नत हो तो व्यक्ति नेता होता है।

गुरु का स्थान अत्युच्च होने से व्यक्ति अधार्मिक और अहंकारी होता है। इस व्यक्ति में शासन करने की अपूर्व क्षमता होती है। न्याय और व्याकरण शास्त्र का ज्ञाता उच्च स्थानीय व्यक्ति होता है। गुरु के पर्वत के निम्न होने से व्यक्ति दुराचारी, दुःखी और लम्पट होता है।

शुक्र का स्थान अत्युच्च होने से व्यक्ति लम्पट, लज्जाहीन और व्यभिचारी होता है। उच्च होने से सौन्दर्यप्रिय, नृत्यगीतानुरक्त, कलाविज्ञ, धनी और शिल्प-विद्या में पटु होता है। शुक्र के स्थान के निम्न होने से व्यक्ति स्वार्थी, आलसी और रिपुदमनकारी होता है। एक मोटी रेखा शुक्र के स्थान से निकलकर पितृरेखा के ऊपर होती हुई मंगल स्थान में जाये तो व्यक्ति को दमा और खाँसी का रोग होता

है। शुक्रस्थान से शनिस्थान तक यदि रेखा जाय तथा यह रेखा शृंखलायुक्त हो तो व्यक्ति का विवाह बड़ी कठिनाई से होगा। शुक्र और गुरु दोनों के स्थानों के उन्नत होने से संसार में प्रसिद्धि प्राप्त करता है।

शनि के स्थान के उच्च होने से व्यक्ति अल्पभाषी, कलाप्रिय, एकान्तप्रिय, विचारक, दार्शनिक और भाग्यशाली होता है। शनि स्थान के नीचे होने से व्यक्ति भावुक, कमजोर और दुर्भाग्यशाली होता है। शनि और बुध दोनों स्थानों के उच्च होने से व्यक्ति क्रोधी, चोर और अधार्मिक होता है।

इस निमित्त में योगों का विचार करते हुए बताया गया है कि जिस पुरुष की नाभि गहरी हो, नासिका का अग्र भाग सीधा हो, वक्षःस्थल रक्त वर्ण और पैर के तलवे कोमल तथा रक्तवर्ण के हों, वह सम्राट् के तुल्य प्रभावशाली होता है। ऐसा व्यक्ति अनेक प्रकार के सुख भोगता है तथा मन्त्री, नेता या किसी संस्था का निर्देशक होता है। जिसकी हथेली के मध्य कड़ा, अश्व, मृदंग, वृक्ष, स्तम्भ या दण्ड का चिह्न हो तो वह व्यक्ति समृद्धिशाली, धनी, सुखी और अद्भुत प्रभावशाली होता है। जिसका ललाट चौड़ा और विशाल, नेत्र कमलदल के समान, मस्तक गोल, और भुजाएँ जानुपर्यन्त हों, वह व्यक्ति नेता, राजमान्य, पूज्य, शक्तिशाली और सुखी होता है। जिसके हाथ में फूल की माला, घोड़ा, कमलपुष्प, धनुष, चक्र, ध्वजा, रथ और आसन का चिह्न हो वह जीवन में सदा आनन्द भोगता है, उसके घर में लक्ष्मी का निवास सदा रहता है।

जिसके हाथ की सूर्य रेखा, मस्तक रेखा से मिली हो और मस्तक रेखा से स्पष्ट, सीधी होकर ऊपर गुरु की ओर झुकने से वहाँ चतुष्कोण बन जाय वह प्रधान मन्त्री या मुख्य नेता होता है। जिसके हाथ के सूर्य गुरु पर्वत उच्च हों और शनि एवं बुध रेखा पुष्ट, स्पष्ट और सीधी हो वह राज्यपाल या गवर्नर होता है। जिसके हाथ के शनि पर्वत पर त्रिशूल चिह्न हो, चन्द्ररेखा का भाग्यरेखा से शुद्ध सम्बन्ध हो या भाग्यरेखा हथेली के मध्य से प्रारम्भ होकर उसकी एक शाखा गुरु-पर्वत पर और दूसरी सूर्य पर्वत पर जाय वह उच्च राज्याधिकारी और गुण ग्राही होता है। जिसके हाथ के गुरु और मंगल पर्वत उच्च हों तथा मस्तक रेखा में सर्प का चिह्न हो या बुधांगुली नुकीली और लम्बी हो एवं नख चमकदार हों, वह राजदूत बनता है। जिसके बायें हाथ की तर्जनी और कनिष्ठिका की अपेक्षा दाहिने हाथ की वे ही अंगुलियाँ मोटी और बड़ी हों, मंगल पर्वत अधिक ऊँचा उठा हो और सूर्य रेखा प्रबल हो वह जिलाधीश या कमिश्नर होता है। जिसके हाथ के गुरु, शनि, सूर्य और बुध पर्वत उच्च हों, अँगुलियाँ लम्बी होकर उनके ऊपरी भाग मोटे हों, सूर्यरेखा प्रबल हो और मध्यमांगुली का दूसरा पर्व लम्बा हो, वह शिक्षा विभाग का उच्च पदाधिकारी होता है।

जिसके हाथ की हृदय रेखा और मस्तक रेखा के बीच एक चौड़ा चतुष्कोण

हो, मस्तक रेखा सीधी और स्वच्छ हो, बुधांगुली का प्रथम पर्व लम्बा हो, गुरु की अंगुली सीधी हो तथा सूर्य पर्वत उठा हो वह दयालु न्यायाधीश होता है। जिसकी अंगुलियाँ लम्बी और आस-पास सटी हों, अंगूठा लम्बा और सीधा हो, मस्तक रेखा सीधी और सर्पाकृति की हो तथा हथेली चपटी हो तो व्यक्ति बैरिस्टर या वकील होता है।

जिसके हाथ का गुरुपर्वत और तर्जनी लम्बी हो, चन्द्रपर्वत उच्च हो तथा बुधांगुली नुकीली हो, साथ ही मस्तकरेखा लम्बी और नीचे झुकी हो तो वह व्यक्ति दर्शनशास्त्र का विद्वान् होता है। जिसके शनि और गुरुक्षेत्र उच्च हों, शनिपर्वत पर त्रिकोण चिह्न हो और सूर्यरेखा शुद्ध हो वह व्यक्ति योगी या साधु होकर पूर्ण गौरव पाता है। जिसका अंगूठा मोटा और टेढ़ा हो, उसकी इच्छा-शक्ति प्रबल होती है। जिसके हाथ में बड़ा चतुष्कोण या पुष्करणी रेखा हो, वह सब मनुष्यों में श्रेष्ठ और सब का स्वामी होता है। हथेली के मध्य में कलश, स्वस्तिक, मृग, गज, मत्स्य आदि के चिह्न शुभ माने जाते हैं।

अँगूठे के मूल में जितनी स्थूल रेखाएँ हों उतने भाई और जितनी सूक्ष्म रेखाएँ हों उतनी बहिन होती हैं। अँगूठे के अधोभाग में जिसके जितनी रेखाएँ हों, उसके उतने ही पुत्र होते हैं। जितनी रेखाएँ सूक्ष्म होती हैं उतनी ही कन्याएँ होती हैं। जितनी रेखाएँ छिन्न-भिन्न होती हैं, उतनी सन्तानें मृत और जितनी रेखाएँ अखण्ड और सम्पूर्ण होती हैं उतने बालक जीवित रहते हैं।

स्वप्न निमित्त—स्वप्न द्वारा शुभाशुभ का वर्णन करना इस निमित्तज्ञान का विषय है। दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, प्रार्थित, कल्पित, भाविक और दोषज इन सात प्रकार के स्वप्नों में से भाविक स्वप्न का फल यथार्थ निकलता है। स्वप्न भी कर्म-फल का सूचक है, आगामी शुभाशुभ कर्मफल की सूचना देता है। सूचक निमित्तों में स्वप्न का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्वप्नों का फलादेश इस ग्रन्थ के 26 वें अध्याय में तथा परिशिष्ट रूप में अंकित 30 वें अध्याय में विस्तार के साथ लिखा गया है। अतः यहाँ स्वप्नों का फलादेश नहीं लिखा जा रहा है।

निमित्तज्ञान का अंगभूत प्रश्नशास्त्र—प्रश्नशास्त्र निमित्तज्ञान का एक प्रधान अंग रहा है। इसमें धातु, मूल, जीव, नष्ट, मुष्टि, लाभ, हानि, रोग, मृत्यु, भोजन, शयन, जन्म, कर्म, शल्यानयन, सेना गमन, नदियों की बाढ़, अवृष्टि, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, फसल, जय-पराजय, लाभालाभ, विद्यासिद्धि, विवाह, सन्तान लाभ, यशःप्राप्ति एवं जीवन के विभिन्न आवश्यक प्रश्नों का उत्तर दिया गया है। जैनाचार्यों ने अष्टांगनिमित्त पर अनेक ग्रन्थ लिखे हैं। प्रस्तुत प्रश्नशास्त्र निमित्तज्ञान का वह अंग है जिसमें बिना किसी गणित क्रिया के त्रिकाल की बातें बतलायी जाती हैं। ज्ञानदीपिका के प्रारम्भ में कहा है—

भूतं भव्यं वर्तमानं शुभाशुभनिरीक्षणम्।
पंचप्रकारमार्गं च चतुष्केन्द्रबलाबलम्॥
आरूढछत्रवर्गं चाभ्युदयादि - बलाबलम्।
क्षेत्रं दृष्टिं नरं नारीं युग्मरूपं च वर्णकम्॥
मृगादि नररूपाणि किरणान्योजनानि च।
आयूरसोदयाद्यञ्च परीक्ष्य कथयेद् बुधः॥

अर्थ—भूत, भविष्य, वर्तमान, शुभाशुभ दृष्टि, पाँच मार्ग, चार केन्द्र, बलाबल, आरूढ, छत्र, वर्ण, उदयबल, अस्तबल, क्षेत्रदृष्टि, नर, नारी, नपुंसक, वर्ण, मृग तथा मनुष्यादिक के रूप, किरण, योजन, आयु, रस एवं उदय आदि की परीक्षा करके फल का निरूपण करना चाहिए।

प्रश्ननिमित्त का विचार तीन प्रकार से किया गया है—प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त, प्रश्नलग्न-सिद्धान्त और स्वरविज्ञान-सिद्धान्त। प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त का आधार मनोविज्ञान है; यतः बाह्य और आभ्यन्तरिक दोनों प्रकार की विभिन्न परिस्थितियों के अधीन मानव-मन की भीतरी तह में जैसी भावनाएँ छिपी रहती हैं, वैसे ही प्रश्नाक्षर निकलते हैं। अतः प्रश्नाक्षरों के निमित्त को लेकर फलादेश का विचार किया गया है।

प्रश्न करने वाला आते ही जिस वाक्य का उच्चारण करे, उसके अक्षरों का विश्लेषण कर प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ और पंचम वर्ग के अक्षरों में विभक्त-कर लेना चाहिए। पश्चात् संयुक्त, असंयुक्त, अभिहित, अनभिहित, अभिघातित, आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध प्रश्नाक्षरों के अनुसार उनका फलादेश समझना चाहिए। प्रश्न प्रणाली के वर्गों का विवेचन करते हुए कहा है कि अ क च ट त प य श अथवा आ ए क च ट त प य श इन अक्षरों का प्रथम वर्ग; आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष इन अक्षरों का द्वितीय वर्ग; इ ओ ग ज ड द ब ल स इन अक्षरों का तृतीय वर्ग; ई औ घ झ ढ ध भ व ह इन अक्षरों का चतुर्थ वर्ग और उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः इन अक्षरों का पंचम वर्ग बताया गया।

प्रथम और तृतीय वर्ग के संयुक्त अक्षर प्रश्नवाक्य में हों तो वह प्रश्नवाक्य संयुक्त कहलाता है। प्रश्नवर्णों में अ इ ए ओ ये स्वर हों तथा क च ट त प य श ग ज ड द ब ल स ये व्यंजन हों तो प्रश्न संयुक्त संज्ञक होता है। संयुक्त प्रश्न होने पर पृच्छक का कार्य सिद्ध होता है। यदि पृच्छक लाभ, अर्थ, स्वास्थ्य, सुख और शान्ति के सम्बन्ध में प्रश्न पूछने आया है तो संयुक्त प्रश्न होने पर उसके सभी कार्य सिद्ध होते हैं। यदि प्रश्न वर्णों में कई वर्गों के अक्षर हैं अथवा प्रथम, तृतीय वर्ग के अक्षरों की बहुलता होने पर भी संयुक्त ही प्रश्न माना जाता है। जैसे पृच्छक के मुख से प्रथम वाक्य कार्य निकला, इस प्रश्नवाक्य का विश्लेषणकिया तो क+आ+र्+य+अ यह स्वरूप हुआ। इस विश्लेषण में क्+य्+अ ये अक्षर

प्रथम वर्ग के हैं तथा आ और र् द्वितीय वर्ग के हैं। यहाँ प्रथम वर्ग के तीन वर्ण और द्वितीय वर्ग के दो वर्ण हैं, अतः प्रथम और द्वितीय वर्ग का संयोग होने से यह प्रश्न संयुक्त नहीं कहलायेगा।

यदि प्रश्नवाक्य में संयुक्त वर्णों की अधिकता हो - प्रथम और तृतीय वर्ग के वर्ण अधिक हों अथवा प्रश्न वाक्य का आरम्भ कि चि टि ति पि यि शि को चो टो तो यो शो ग ज ड द ब ल स गे जे डे दे से अथवा क्+ग्, क्+ज्, क्+ड्, क्+द्, क्+ब्, क्+ल्, क्+स्, च्+ज्, च्+ड्, च्+द्, च्+ब्, च्+ल्, च्+स्, ट्+ग्, ट्+ज्, ट्+ड्, ट्+द्, ट्+ब्, ट्+ल्, ट्+स्, त्+ग्, त्+ज्, त्+ड्, त्+द्, त्+ब्, त्+ल्, त्+स्, द्+ग्, द्+ज्, द्+ड्, द्+ब्, द्+ल्, द्+स्, य्+ग्, य्+ज्, य्+ड्, य्+द्, य्+ब्, य्+ल्, य्+स्, श्+ग्, श्+ज्, श्+ड्, श्+द्, श्+ब्, श्+ल्, श्+स्, ग्+क्, ग्+च्, ग्+ट्, ग्+त्, ग्+प्, ग्+य्, ग्+श्, ज्+क्, ज्+च्, ज्+ट्, ज्+प्, ज्+य्, ज्+श्, ड्+क्, ड्+च्, ड्+ट्, ड्+त्, ड्+प्, ड्+य्, ड्+श्, द्+क्, द्+च्, द्+ट्, द्+प्, द्+य्, द्+श्, ब्+क्, ब्+च्, ब्+ट्, ब्+त्, ब्+प्, ब्+य्, ब्+श्, ल्+क्, ल्+च्, ल्+ट्, ल्+त्, ल्+प्, ल्+य्, ल्+श्, स्+क्, स्+च्, स्+ट्, स्+त्, स्+प्, स्+य्, स्+श् से होता हो तो संयुक्त प्रश्न का फल शुभ होता है।

प्रथम और द्वितीय वर्ग, द्वितीय और चतुर्थ वर्ग, तृतीय और चतुर्थ वर्ग एवं पंचम वर्ग के वर्णों के मिलने से असंयुक्त प्रश्न कहलाता है। प्रथम और द्वितीय वर्गाक्षरों के संयोग से—क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ, य र इत्यादि, तृतीय और चतुर्थ वर्गाक्षरों के संयोग से—ख ग, छ ज, ठ ड, थ द, फ ब, और र व इत्यादि; तृतीय और चतुर्थ वर्गाक्षरों के संयोग से—गघ, जझ, डढ, दध बभ, इत्यादि एवं चतुर्थ और पंचम वर्गाक्षरों के संयोग से—घङ, झञ, ढण, धन, भम इत्यादि विकल्प बनते हैं। असंयुक्त प्रश्न होने से फल की प्राप्ति बहुत दिनों के बाद होती है। यदि प्रथम और द्वितीय वर्गों के अक्षरों के मिलने से असंयुक्त प्रश्न हो तो धन लाभ, कार्य सफलता और राजसम्मान अथवा जिस सम्बन्ध में प्रश्न पूछा गया हो, उस फल की प्राप्ति तीन महीनों के पश्चात् होती है। द्वितीय, चतुर्थ वर्गाक्षरों के संयोग से असंयुक्त प्रश्न हो, तो मित्र प्राप्ति, उत्सव वृद्धि, कार्य साफल्य की प्राप्ति छः महीने में होती है। तृतीय और चतुर्थ वर्गाक्षरों के संयोग से असंयुक्त प्रश्न हो, तो अल्प लाभ, पुत्र प्राप्ति, मांगल्यवृद्धि और प्रियजनों से झगड़ा एक महीने के अन्दर होता है। चतुर्थ और पंचम वर्गाक्षरों के संयोग से असंयुक्त प्रश्न हो, तो घर में विवाह आदि मांगलिक उत्सवों की वृद्धि, स्वजन प्रेम, यशः प्राप्ति, महान् कार्यों में लाभ और वैभव की वृद्धि इत्यादि फलों की प्राप्ति शीघ्र होती है।

यदि पृच्छक रास्ते में हो, शयनागार में हो, पालकीपर सवार हो, मोटर, साइकिल, घोड़े, हाथी आदि किसी भी सवारी पर सवार हो तथा हाथ में कुछ भी चीज न लिये हो, तो असंयुक्त प्रश्न होता है। यदि पृच्छक पश्चिम दिशा की ओर मुँह कर प्रश्न करे तथा प्रश्न करते समय कुर्सी, टेबुल, बेंच अथवा अन्य लकड़ी की वस्तुओं को छूता हुआ या नोंचता हुआ प्रश्न करे तो उस प्रश्न को भी असंयुक्त समझना चाहिए। असंयुक्त प्रश्न का फल प्रायः अनिष्टकार ही होता है।

यदि प्रश्न वाक्य का आद्याक्षर गा, जा, डा, दा, बा, ला, सा, गै, जै, बै, डै, लै, सै, धि, झि, पि, धि, भि, बि, हि, को, झो, डो, बो, हो में से कोई हो तो असंयुक्त प्रश्न होता है। इस प्रकार के असंयुक्त प्रश्न का फल अशुभ होता है।

प्रश्नकर्ता के प्रश्नाक्षरों में कख, खग, गघ, घङ, चछ, जझ, झञ, टठ, डढ, ढण, तथ, थद, दध, धन, पफ, फब, बभ, भम, यर, रल, लव, वश, शष, और सह इन वर्णों के क्रमशः विपर्यय होने पर परस्पर में पूर्व और उत्तरवर्ती हो जाने पर अर्थात् खक, गख, घग, ङघ, छच, झज, ञझ, ठट, ढड, णढ, थत, दथ, धद, नध, फप, बफ, भब, मभ, रय, लर, वल, षश, सष, और हस होने पर अभिहित प्रश्न होता है। इस प्रकार के प्रश्नाक्षरों के होने से कार्य सिद्धि नहीं होती। प्रश्न वाक्य के विश्लेषण करने पर पंचम वर्ग के वर्णों की संख्या अधिक हो तो भी अभिहित प्रश्न होता है। प्रश्न वाक्य का आरम्भ उपर्युक्त अक्षरों के संयोग से निष्पन्न वर्गों से हो तो अभिहित प्रश्न होता है। इस प्रकार के प्रश्न का फल भी अशुभ है।

अकार स्वर सहित और अन्य स्वरों से रहित अ क च त प य श ङ ञ ण न म ये प्रश्नाक्षर या प्रश्नवाक्य के आद्याक्षर हों तो अनभिहित प्रश्न होता है। अनभिहित प्रश्नाक्षर स्ववर्गाक्षरों में हों, तो व्याधि-पीड़ा और अन्य वर्गाक्षरों में हों तो शोक, सन्ताप, दुःख भय और पीड़ा फल होता है। जैसे किसी व्यक्ति का प्रश्न वाक्य 'चमेली' है। इस वाक्य में आद्याक्षर में अ स्वर और च व्यंजन का संयोग है, द्वितीय वर्ण 'मे' में ए स्वर और म व्यंजन का संयोग है तथा तृतीय वर्ण ली में ई स्वर और ल् व्यंजन का संयोग है। अतः च्+अ+म्+ए+ल्+ई इस विश्लेषण में अ+च्+म् ये तीन वर्ण अनभिहित, ई अभिधूमित, ए आलिंगित और ल अभिहत संज्ञक है। "परस्परं शोधयित्वा योऽधिकः स एव प्रश्नः" इस नियम के अनुसार यह प्रश्न अनभिहत हुआ; क्योंकि सबसे अधिक वर्ण अनभिहत प्रश्न के हैं। अथवा सुविधा के लिए प्रथम वर्ण जिस प्रश्न का जिस संज्ञक हो उस प्रश्न को उसी संज्ञक मान लेना चाहिए, किन्तु वास्तविक फल जानने के लिए प्रश्न वाक्य में सबसे अधिक प्रश्नाक्षर जिस संज्ञक प्रश्न के हों, उसे उसी संज्ञक प्रश्न समझना चाहिए।

प्रश्नश्रेणी के सभी वर्ण चतुर्थ वर्ग और प्रथम वर्ग के हों अथवा पञ्चम वर्ग और द्वितीय वर्ग के हों तो अभिघातित प्रश्न होता है। इस प्रश्न का फल अत्यन्त

अनिष्ट कर बताया गया है। यदि पृच्छक कमर, हाथ, पैर और छाती खुजलाता हुआ प्रश्न करे तो भी अभिघातित प्रश्न होता है।

प्रश्न वाक्य के प्रारम्भ में या समस्त प्रश्नवाक्य में अधिकांश स्वर अ इ ए ओ ये चार हों तो आलिंगित प्रश्न; आ ई ऐ औ ये चार हों तो अभिधूमित प्रश्न और उ ऊ अं अः ये चार हों तो दग्ध प्रश्न होता है। आलिंगित प्रश्न होने पर कार्यसिद्धि, अभिधूमित होने पर धनलाभ, कार्यसिद्धि, मित्रागमन एवं यशलाभ और दग्ध प्रश्न होने पर दुःख, शोक, चिन्ता, पीड़ा एवं धनहानि होती है। जब पृच्छक दाहिने हाथ से दाहिने अंग को खुजलाते हुए प्रश्न करे तो आलिंगित; दाहिने या बायें हाथ से समस्त शरीर को खुजलाते हुए प्रश्न करे तो अभिधूमित प्रश्न एवं रोते हुए नीचे की ओर दृष्टि किये हुए प्रश्न करे तो दग्ध प्रश्न होता है। प्रश्नाक्षरों के साथ-साथ उपर्युक्त चर्या-चेष्टा का भी विचार करना अत्यावश्यक है। यदि प्रश्नाक्षर आलिंगित हो और पृच्छक की चेष्टा दग्ध प्रश्न की हो ऐसी अवस्था में फल मिश्रित कहना चाहिए। प्रश्नवाक्य या प्रश्नवाक्य के आद्यवर्ण का स्वर आलिंगित हो और चर्या-चेष्टा अभिधूमित या दग्ध प्रश्न की हो तो मिश्रित फल समझना चाहिए।

उपर्युक्त आठ नियमों द्वारा प्रश्नों का विचार करते समय उत्तरोत्तर, उत्तराधर, अधरोत्तर, अधराधर, वर्गोत्तर, वर्णाधर, अक्षरोत्तर, स्वरोत्तर, गुणोत्तर और आदेशोत्तर इन भेदों का विचार करना चाहिए। अ और क वर्ग उत्तरोत्तर, च वर्ग और ट वर्ग उत्तराधर, त वर्ग और प वर्ग अधरोत्तर एवं य वर्ग और श वर्ग अधराधर होते हैं। प्रथम और तृतीय वर्ग वाले अक्षर वर्गोत्तर, द्वितीय और चतुर्थ वर्ग वाले अक्षर अधरोत्तर एवं पञ्चम वर्ग वाले अक्षर दोनों—प्रथम और तृतीय मिला देने से क्रमशः वर्गोत्तर और वर्णाधर होते हैं। क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स ये उन्नीस वर्ण उत्तर संज्ञक, ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ये वर्ण अधर संज्ञक, अ इ उ ए ओ अं ये वर्ण स्वरोत्तर संज्ञक, अ च त य ङ ज द ल ये आठ वर्ण गुणोत्तर संज्ञक और क ट प श ग ड ब स ह ये आठ वर्ण गुणाधर संज्ञक हैं।

प्रश्नकर्ता के प्रथम, तृतीय और पंचम स्थान के वाक्याक्षर उत्तर एवं द्वितीय और चतुर्थ स्थान के वाक्याक्षर अधर कहे सकते हैं। यदि प्रश्न में दीर्घाक्षर प्रथम, तृतीय और पंचम स्थान में हों तो लाभ करने वाले होते हैं। शेष स्थान में रहने वाले ह्रस्व और प्लुताक्षर दर्शन करने वाले होते हैं। साधक इन प्रश्नाक्षरों पर से जीवन, मरण, लाभ, अलाभ, जय, पराजय आदि को अवगत करता है।

प्रश्नशास्त्र में प्रश्न दो प्रकार के बताये जाते हैं—मानसिक और वाचिक। वाचिक प्रश्न में प्रश्नकर्ता जिस बात को पूछना चाहता है, उसे ज्योतिषी के सामने प्रकट कर उसका फल ज्ञात करता है। परन्तु

मानसिक प्रश्न में पृच्छक अपने मन की बात नहीं बतलाता है, केवल प्रतीकों—फल, पुष्प, नदी पहाड़, देव आदि के नाम द्वारा ही पृच्छक के मन की बात ज्ञात करनी पड़ती है।

साधारणतः तीन प्रकार के पदार्थ होते हैं—जीव, धातु और मूल। मानसिक प्रश्न भी उक्त तीन ही प्रकार के हो सकते हैं। प्रश्नशास्त्र के चिन्तकों ने इनका नाम जीवयोनि, धातुयोनि और मूलयोनि रखा है। अ आ इ ए ओ अः ये छः स्वर तथा क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ य श ह ये पन्द्रह व्यंजन इस प्रकार कुल 21 वर्ण जीव संज्ञक, उ ऊ अं ये तीन स्वर तथा त थ द ध प फ ब भ व स ये दस व्यंजन इस प्रकार कुल 13 वर्ण धातु संज्ञक और ई ऐ औ ये तीन स्वर तथा ङ ञ ण न म ल र ष ये आठ व्यंजन इस प्रकार कुल 11 वर्ण मूलसंज्ञक हैं।

जीवयोनि में अ ए क च ट त प य श ये अक्षर द्विपद संज्ञक, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये अक्षर चतुष्पद संज्ञक, इ ओ ग ज ड द ब ल स ये अक्षर अपद संज्ञक और ई औ घ झ ढ ध फ व ह ये अक्षर पादसंकुल संज्ञक होते हैं। द्विपद योनि के देव, मनुष्य, पक्षी और राक्षस ये चार भेद हैं। अ क ख ग घ ङ प्रश्नवर्णों के होने पर देवयोनि; च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण प्रश्नवर्णों के होने पर मनुष्य योनि; त थ द ध न प फ ब भ म के होने पर पशु योनि या पक्षियोनि और य र ल व श ष स ह प्रश्नवर्णों के होने पर राक्षस योनि होती है। देवयोनि के चार भेद होते हैं—कल्पवासी, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी। देवयोनि के वर्णों में आकार की मात्रा होने पर कल्पवासी, इकार मात्रा होने पर भवनवासी, एकार मात्रा होने पर व्यन्तर और ओकार मात्रा होने पर ज्योतिष्क देवयोनि होती है।

मनुष्ययोनि के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज ये पाँच भेद हैं। अ ए क च ट त प य श ये वर्ण ब्राह्मणयोनि संज्ञक, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये वर्ण क्षत्रिय योनि संज्ञक; इ ओ ग ज ड द ब ल स ये वर्ण वैश्ययोनि संज्ञक; ई औ घ झ ढ ध भ व ह ये वर्ण शूद्रयोनि संज्ञक एवं उ ऊ ङ ञ ण न म अं अः ये वर्ण अन्त्यजयोनि संज्ञक होते हैं। इन पाँचों योनियों के वर्णों में यदि अ इ ए ओ ये मात्राएँ हों तो पुरुष और आ ई ऐ मात्राएँ हों तो स्त्री एवं उ ऊ अं अः ये मात्राएँ हों तो नपुंसक संज्ञक होते हैं। पुरुष, स्त्री और नपुंसक में भी आलिंगित होने पर गौर वर्ण, अभिधूमित होने पर श्याम और दग्ध होने पर कृष्ण वर्ण होता है। आलिंगित प्रश्न होने पर बाल्यावस्था, अभिधूमित होने पर युवावस्था और दग्ध प्रश्न होने पर वृद्धावस्था होती है। आलिंगित प्रश्न होने पर सम—न कद अधिक बड़ा और न अधिक छोटा, अभिधूमित होने पर लम्बा और दग्धप्रश्न होने पर कुब्जा या बौना होता है।

त थ द ध न प्रश्नाक्षरों के होने पर जलचर पक्षी और प फ ब भ म प्रश्नाक्षरों के होने पर थलचर पक्षियों की चिन्ता समझनी चाहिए। राक्षस योनि के

दो भेद हैं—कर्मज और योनिज। भूत, प्रेतादि राक्षस कर्मज कहलाते हैं और असुरादि को योनिज कहते हैं। त थ द ध न प्रश्नाक्षरों के होने पर कर्मज और श ष स ह प्रश्नाक्षरों के होने पर योनिज राक्षसों की चिन्ता समझनी चाहिए।

चतुष्पद योनि के खुरी, नखी, दन्ती और शृंगी ये चार भेद हैं। यदि प्रश्नाक्षरों में आ और ऐ स्वर हों तो खुरी; छ और ढ प्रश्नाक्षरों में हों तो नखी, थ और फ प्रश्नाक्षरों में हों तो दन्ती एवं र और ष प्रश्नाक्षरों में हों तो शृंगीयोनि होती है। खुरी योनि के ग्रामचर और अरण्यचर ये दो भेद हैं। आ ऐ प्रश्नाक्षरों में हों तो ग्रामचर—घोड़ा, गधा, ऊँट आदि मवेशी की चिन्ता और ख प्रश्नाक्षरों में हों तो वनचारी पशु—हिरण, खरगोश आदि पशुओं की चिन्ता समझनी चाहिए।

अपदयोनि के जलचर और थलचर ये दो भेद हैं— प्रश्नवाक्यों में इ ओ ग ज ड अक्षर हों तो जलचर-मछली, शंख, मकर आदि की चिन्ता और द ब ल स ये अक्षर हों तो साँप, मेढक आदि थलचर अपदों की चिन्ता समझनी चाहिए।

पादसंकुल योनि के दो भेद हैं—अण्डज और स्वेदज। इ ओ घ झ ढ ये प्रश्नाक्षर अण्डज संज्ञक भ्रमर, पतंग इत्यादि एवं ध भ व ह ये प्रश्नाक्षर स्वेदज संज्ञक—जूं, खटमल आदि हैं।

धातु योनि के भी दो भेद हैं—धाम्य और अधाम्य। त द प व अं स इन प्रश्नाक्षरों के होने पर अधाम्य धातु योनि होती है। धाम्ययोनि के आठ भेद हैं—सुवर्ण, चाँदी, ताँबा, राँगा, काँसा, लोहा, सीसा, पित्तल। धाम्ययोनि के प्रकारान्तर से दो भेद हैं—घटित और अघटित। उत्तराक्षर प्रश्नवर्णों में रहने पर घटित और अधराक्षर रहने पर अघटित धातुयोनि होती है। घटित धातुयोनि के तीन भेद हैं—जीवाभरण-आभूषण, गृहाभरण-बर्तन और नाणक—सिक्के, नोट आदि। अ ए क च ट त प य श प्रश्नाक्षर हों तो द्विपदाभरण—दो पैर वाले जीवों के आभूषण होते हैं। इसके तीन भेद हैं—देवताभूषण, पक्षि आभूषण और मनुष्याभूषण। मनुष्याभरण के शिरयाभरण, कर्णाभरण, नासिकाभरण, ग्रीवाभरण, हस्ताभरण, जंघाभरण और पादाभरण ये आठ भेद हैं। इन आभूषणों में मुकुट, मौर, सीसफूल आदि शिरयाभरण; कानों में पहने जाने वाले कुण्डल, एरिंग आदि कर्णाभरण; नाक में पहनी जाने वाली लौंग, बाली, नथ आदि नासिकाभरण; कण्ठ में पहनी जाने वाली हँसुली, हार, कण्ठी आदि ग्रीवाभरण; हाथों में पहने जाने वाले कंकण, अंगूठी, मुंदरी, छल्ला, छाप आदि हस्ताभरण; जाँघों में बाँधे जाने वाले घुंघरू, क्षुद्रघण्टिका आदि जंघाभरण और पैरों में पहने जाने वाले बिछुए, छल्ला, पाजेब आदि पादाभरण होते हैं। क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स प्रश्नाक्षरों के होने पर मनुष्याभरण की चिन्ता एवं ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह प्रश्नाक्षरों के होने पर स्त्रियों के

आभूषणों की चिन्ता समझनी चाहिए।

उत्तराक्षर वर्णों के प्रश्नाक्षर होने पर दक्षिण अंग का आभूषण और अधराक्षर प्रश्नवर्णों के होने पर वाम अंग का आभूषण समझना चाहिए। अ क ख ग घ ङ प्रश्नाक्षरों के होने पर या प्रश्नवर्णों में उक्त प्रश्नाक्षरों की बहुलता होने पर देवों के उपकरण छत्र, चमर आदि आभूषण और त थ द ध न प फ ब भ म इन प्रश्नवर्णों के होने पर पक्षियों के आभूषणों की चिन्ता समझनी चाहिए।

यदि प्रश्नवाक्य का आद्यवर्ण क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब भ य ल श स इन अक्षरों में से कोई हो तो हीरा, माणिक्य, मरकत, पद्मराग और मूंगा की चिन्ता; ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र ब ष ह इन अक्षरों में से कोई हो तो हरिताल, शिला, पत्थर, आदि की चिन्ता एवं उ ऊ अं अः स्वरों से युक्त व्यंजन प्रश्न के आदि में हो तो शर्करा, लवण, बालू आदि की चिन्ता समझनी चाहिए। यदि प्रश्नवाक्य के आदि में अ इ ए ओ इन चार मात्राओं में से कोई हो तो हीरा, मोती, माणिक्य आदि जवाहरात की चिन्ता; आ ई ऐ औ इन मात्राओं में से कोई हो तो शिला, पत्थर, सीमेण्ट, चूना, संगमरमर आदि की चिन्ता एवं उ ऊ अं अः इन मात्राओं में से कोई मात्रा हो तो चीनी, बालू आदि की चिन्ता कहनी चाहिए। मुष्टिका प्रश्न में मुट्ठी के अन्दर भी इन्हीं प्रश्नविचारों के अनुसार योनि का निर्णय कर वस्तु बतलानी चाहिए।

मूलयोनि के चार भेद हैं—वृक्ष, गुल्म, लता और वल्ली। यदि प्रश्नवाक्य के आद्यवर्ण की मात्रा आ हो तो वृक्ष, ई हो तो गुल्म, ऐ हो तो लता और औ हो तो वल्ली समझनी चाहिए। पुनः मूलयोनि के चार भेद हैं—वल्कल, पत्ते, पुष्प और फल। प्रश्न वाक्य के आदि में क च ट त वर्णों के होने पर फल की चिन्ता करनी चाहिए।

जीव योनि से मानसिक चिन्ता और मुष्टिगत प्रश्नों के उत्तरों के साथ चोर की जाति, अवस्था, आकृति, रूप, कद, स्त्री, पुरुष एवं बालक आदि का पता लगाया जा सकता है। धातु योनि से चोरी गयी वस्तु का स्वरूप और नाम बताया जा सकता है। धातु योनि के विश्लेषण से कहा जा सकता है कि अमुक प्रकार की वस्तु चोरी गयी है या नष्ट हुई है। इन योनियों के विचार द्वारा किसी भी व्यक्ति की मनःस्थिति का सहज में पता लगाया जा सकता है। प्रश्नशास्त्र का विवेचन करने वाले व्यक्ति को उपर्युक्त सभी प्रश्न संज्ञाओं का परिज्ञान रहना चाहिए।

लाभालाभ सम्बन्धी प्रश्नों का विचार करते हुए कहा है कि प्रश्नाक्षरों में आलिंगित अ इ ए ओ मात्राओं के होने पर शीघ्र अधिक लाभ, अभिधूमित आ ई ऐ औ मात्राओं के होने पर अल्प लाभ एवं दग्ध उ ऊ अं अः मात्राओं के होने पर अलाभ एवं हानि होती है। उ ऊ अं अः इन चार मात्राओं से संयुक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स ये प्रश्नाक्षर हों तो बहुत लाभ होता

है। आ ई ऐ औ मात्राओं से संयुक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स इन प्रश्नाक्षरों के होने पर अल्प लाभ होता है। अ आ इ ए ओ मात्राओं से संयुक्त उपर्युक्त प्रश्नाक्षरों के होने पर जीव लाभ और रुपया, पैसा, सोना, चाँदी, मोती, माणिक्य आदि का लाभ होता है। ई ऐ औ ङ ञ ण न म ल र ष प्रश्नाक्षर हों तो लकड़ी, वृक्ष, कुर्सी, टेबुल, पलंग आदि वस्तुओं का लाभ होता है।

शुभाशुभ प्रकरण में प्रधानतया रोगी के स्वास्थ्य लाभ एवं उसकी आयु का विचार किया जाता है। प्रश्नवाक्य में आद्य वर्ण आलिंगित मात्रा से युक्त हों तो रोगी का रोग यत्नसाध्य; अभिधूमित मात्रा से युक्त हो तो कष्टसाध्य और दग्ध मात्रा से संयुक्त संयुक्ताक्षर हो तो मृत्यु फल समझना चाहिए। पृच्छक के प्रश्नाक्षरों में आद्य वर्ण आ ई ऐ औ मात्राओं से युक्त संयुक्ताक्षर हो तो पृच्छक जिसके सम्बन्ध में पूछता है उसकी दीर्घायु होती है। आ ई ऐ औ इन मात्राओं से युक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स वर्णों में से कोई भी वर्ण प्रश्न वाक्य का आद्याक्षर हो तो लम्बी बीमारी भोगने के बाद रोगी स्वास्थ्य लाभ करता है।

पृच्छक से किसी फल का नाम पूछना तथा कोई एक अंक संख्या पूछने के पश्चात् अंक संख्या को द्विगुणा कर फल और नाम के अक्षरों की संख्या जोड़ देनी चाहिए। जोड़ने के पश्चात् जो योग आये, उसमें 13 जोड़कर 9 का भाग देना चाहिए। 1 शेष में धनवृद्धि, 2 में धनक्षय, 3 में आरोग्य, 4 में व्याधि, 5 में स्त्री लाभ, 6 में बन्धु नाश, 7 में कार्यसिद्धि, 8 में मरण और 0 शेष में राज्य प्राप्ति होती है।

कार्य सिद्धि-असिद्धि का प्रश्न होने पर पृच्छक का मुख जिस दिशा में हो उस दिशा की अंक संख्या (पूर्व 1, पश्चिम 2, उत्तर 3, दक्षिण 4), प्रहर संख्या (जिस प्रहर में प्रश्न किया गया है, उसकी संख्या प्रातःकाल सूर्योदय से तीन घंटे तक प्रथम प्रहर, आगे तीन-तीन घण्टे पर एक-एक प्रहर की गणना करनी चाहिए), वार संख्या (रविवार 1, सोम 2, मंगल 3, बुध 4, बृहस्पति 5, शुक्र 6, शनि 7) और नक्षत्र संख्या (अश्विनी 1, भरणी 2, कृत्तिका 3 इत्यादि गणना) को जोड़ कर योगफल में आठ का भाग देना चाहिए। एक अथवा पाँच शेष रहे तो शीघ्र कार्यसिद्धि, छः अथवा चार शेष में तीन दिन में कार्य सिद्धि, तीन अथवा सात शेष में विलम्ब से कार्यसिद्धि एवं अवशिष्ट शेष में कार्य असिद्धि होती है।

हँसते हुए प्रश्न करने से कार्य सिद्ध होता है और उदासीन रूप से प्रश्न करने पर कार्य असिद्ध रहता है।

पृच्छक से एक से लेकर एक सौ आठ अंक के बीच की एक अंक संख्या पूछनी चाहिए। इस अंक संख्या में 12 का भाग देने पर 1।7।9।3 शेष में विलम्ब से कार्य सिद्धि; 8।4।11।0।5 शेष में कार्य नाश एवं 2।6।1।1।0 शेष में शीघ्र कार्य

सिद्धि होती है।

पृच्छक से किसी फूल का नाम पूछकर उसकी स्वर संख्या को व्यंजन संख्या से गुणा कर दें; गुणनफल में पृच्छक के नाम के अक्षरों की संख्या जोड़कर योगफल में 9 का भाग दें। एक शेष में शीघ्र कार्यसिद्धि; 2।5।0 में विलम्ब से कार्यसिद्धि और 4।6।8 शेष में कार्य नाश तथा अवशिष्ट शेष में कार्य मन्द गति से होता है। पृच्छक के नाम के अक्षरों को दो से गुणा कर गुणनफल में 7 जोड़ दे। उस योग में 3 का भाग देने पर सम शेष में कार्य नाश और विषम शेष में कार्यसिद्धि फल कहना चाहिए।

पृच्छक के तिथि, वार, नक्षत्र संख्या में गर्भिणी के नाम अक्षरों को जोड़कर सात का भाग देने में एकाधिक शेष में रविवार आदि होते हैं। रवि, भौम और गुरुवार में पुत्र तथा सोम, बुध और शुक्रवार में कन्या उत्पन्न होती है। शनिवार उपद्रव कारक है।

इस प्रकार अष्टांग निमित्त का विचार हमारे देश में प्राचीन काल से होता आ रहा है। इस निमित्त ज्ञान द्वारा वर्षण-अवर्षण, सुभिक्ष-दुर्भिक्ष, सुख-दुःख, लाभ, अलाभ, जय, पराजय आदि बातों का पहले से ही पता लगाकर व्यक्ति अपने लौकिक और पारलौकिक जीवन में सफलता प्राप्त कर लेता है।

अष्टांग निमित्त और ग्रीस तथा रोम के सिद्धान्त

जैनाचार्यों ने अष्टांग निमित्त का विकास स्वतन्त्र रूप से किया है। इनकी विचारधारा पर ग्रीस या रोम का प्रभाव नहीं है। ज्योतिषकरण्डक (ई० पू० 300-350) में लग्न का जो निरूपण किया गया है, उससे इस बात पर प्रकाश पड़ता है कि जैनाचार्यों के ग्रीक सम्पर्क के पहले ही अष्टांग निमित्त का प्रतिपादन हुआ था। बताया गया है—

लग्गं च दक्खिणायविसुवेसु वि अस्स उत्तरं अयणे।
लग्गं साई विसुवेसु पंचसु वि दक्खिणे अयणे॥

इस पद्य में अस्स यानी अश्विनी और साई अर्थात् स्वाति ये विषुव के लग्न बताये गये हैं। ज्योतिषकरण्डक में विशेष अवस्था के नक्षत्रों को भी लग्न कहा है। यवनों के आगमन के पूर्व भारत में यही जैन लग्न प्रणाली प्रचलित थी। प्राचीन भारत में विशिष्ट अवस्था की राशि के समान विशिष्ट अवस्था के नक्षत्रों को भी लग्न कहा जाता था। ज्योतिषकरण्डक में व्यतीपात आनयन की जिस प्रक्रिया का वर्णन है वह इस बात की साक्षी है कि ग्रीक सम्पर्क से पूर्व ज्योतिष का प्रचार राशि ग्रह, लग्न आदि के रूप में भारत में वर्तमान था। कहा गया है—

अयणाणं संबंधे रविसोमाणं तु वे हि य जुगम्मि ।
जं हवइ भागलद्धं वइहया तत्तिया होन्ति ॥
बावत्तपरीयमाणे फलरासी इच्छितेउ जुगभेए ।
इच्छियवइवायंपि य इदं आऊण आणे हि ॥[1]

इन गाथाओं की व्याख्या करते हुए मलयगिरि ने लिखा है—"इह सूर्यचन्द्रमसौ स्वकीयेऽयने वर्तमानौ यत्र परस्परं व्यतिपततः स कालो व्यतिपातः, तत्र रविसमयोः युगे युगमध्ये यानि अयनानि तेषां परस्परं सम्बन्धे एकत्र मेलने कृते द्वाभ्यां भागो ह्रियते । हृते च भागे यद् भवति भागलब्धं तावन्तः तावत्प्रमाणाः युगे व्यतिपाता भवन्ति ।"

डब्ल्यू० डब्ल्यू० हण्टर ने लिखा है—"आठवीं शती में अरब विद्वानों ने भारत से ज्योतिषविद्या सीखी और भारतीय ज्योतिष सिद्धान्तों का 'सिद हिंद' के नाम से अरबी में अनुवाद किया।"[2] अरबी भाषा में लिखी गयी "आइन-उल-अंबा फितल कालुली अत्‌बा" नामक पुस्तक में लिखा है कि "भारतीय विद्वानों ने अरब के अन्तर्गत बगदाद की राजसभा में आकर ज्योतिष, चिकित्सा आदि शास्त्रों की शिक्षा दी थी। कंके नाम के एक विद्वान् शक संवत् 694 में बादशाह अलमसूर के दरबार में ज्योतिष और चिकित्सा के ज्ञानदान के निमित्त गये थे।"[3]

मैक्समूलर ने लिखा है कि "भारतीयों को आकाश का रहस्य जानने की भावना विदेशीय प्रभाववश उद्भूत नहीं हुई, बल्कि स्वतन्त्र रूप से उत्पन्न हुई है।"[4] अतएव स्पष्ट है कि अष्टांग निमित्त ज्ञान में फलित ज्योतिष की प्रायः सभी बातें परिगणित हैं। अष्टांग निमित्त ने फलित सिद्धान्तों को विकसित और पल्लवित किया है। भारत में इसका प्रचार ई० सन् से पूर्व की शताब्दियों में ही हो चुका था। फ्रान्सीसी पर्यटक फ्रान्कोइस बर्नियर भी इस बात का समर्थन करता है कि भारत में इस विद्या का विकास स्वतन्त्र रूप से हुआ है।

यह सत्य है कि अष्टांगनिमित्त विद्या भारत में जन्मी, विकसित हुई और समृद्धिशाली हुई; पर ज्ञान की धारा सभी देशों में प्रवाहित होती है। अतः ईस्वी सन् की आरम्भिक शताब्दियों में ग्रीस और रोम में भी निमित्त का विचार किया जाता था। यहाँ ग्रीस और रोम का निमित्त विचार तुलना के लिए उद्धृत किया जायेगा।

ग्रीस-इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण हैं, जिनमें बताया गया है कि भूकम्प और ग्रहण पेलोपोनेसियन लड़ाई के पहले हुए थे। इसके सिवा एक्सरसेस ग्रीस से

---

1. देखें—ज्योतिषकरण्डक पृ० 200-205। 2. हण्टर इण्डियन-गैजेटियर-इण्डिया पृ० 217। 3. ज्योतिष रत्नाकर, प्रथम भाग, भूमिका; 4. Vol. XIII Lecture in objections p. 130

होकर अपनी सेना ले जा रहा था, तब उसे हार का अनागत कथन पहले से ही ज्ञात हो गया था। ग्रीक लोगों में विचित्र बातों को यथा—घोड़ी से खरगोश का जन्म होना, स्त्री को साँप के बच्चे का जन्म देना, मुरझाये फूलों का सम्मुख आना, विभिन्न प्रकार के पक्षियों के शब्दों का सुनना तथा उनका दिशा-परिवर्तन कर दायें या बायें आना प्रभृति बातें युद्ध में पराजय की सूचक मानी जाती थीं। इस साहित्य में शकुन और अपशकुन के सम्बन्ध में सुन्दर कल्पनाएँ हैं। फलित ज्योतिष के अंग, राशि और ग्रहों के बारे में ग्रीकों ने आज से कम-से-कम दो हजार वर्ष पहले पर्याप्त विचार किया था। भारतवर्ष में जब अष्टांग निमित्त का विचार आरम्भ हुआ, ग्रीस में भी स्वप्न, प्रश्न, दिक्शुद्धि, कालशुद्धि और देश-शुद्धि पर विचार किया जाता था। इनके साहित्य में सन्ध्या, उषा तथा आकाश-मण्डल के विभिन्न परिवर्तन से घटित होने वाली घटनाओं का जिक्र किया गया है।

ग्रीकों का प्रभाव रोमन सभ्यता पर भी पूरा पड़ा। इन्होंने भी अपने शकुन शास्त्र में ग्रीकों की तरह प्रकृति परिवर्तन, विशिष्ट-विशिष्ट ताराओं का उदय, ताराओं का टूटना, चन्द्रमा का परिवर्तित अस्वाभाविक रूप का दिखलाई पड़ना, ताराओं का लालवर्ण का होकर सूर्य के चारों ओर एकत्र हो जाना, आग की बड़ी-बड़ी चिनगारियों का आकाश में फैल जाना, इत्यादि विचित्र बातों को देश के लिए हानिकारक बतलाया है। रोम के लोगों ने जितना ग्रीस से सीखा, उससे कहीं अधिक भारतवर्ष से।

वराहमिहिर की पंचसिद्धान्तिका में रोम और पौलस्त्य नाम के सिद्धान्त आये हैं, जिनसे पता चलता है कि भारतवर्ष में भी रोम सिद्धान्त का प्रचार था। रोम के कई छात्र भारतवर्ष में आये और वर्षों यहाँ के आचार्यों के पास रहकर निमित्त और ज्योतिष का अध्ययन करते रहे। वराहमिहिर के समय में भारत में अष्टांगनिमित्त का अधिक प्रचार था। ज्योतिष का उद्देश्य जीवन के समस्त आवश्यक विषयों का विवेचन करना था। अतः अध्ययनार्थ आये हुए विदेशी विद्वान् छात्र अष्टांगनिमित्त और संहिताशास्त्र का अध्ययन करते थे। उस युग में संहिता में आयुर्वेद का भी अन्तर्भाव होता था, राजनीति के युद्ध सम्बन्धी दाव-पेंच भी इसी शास्त्र के अन्तर्गत थे। अतः रोम में निमित्तों का प्रचार विशेष रूप से हुआ। गणित प्रक्रिया के बिना केवल प्रकृति परिवर्तन या आकाश की स्थिति के अवलोकन से ही फल निरूपण रोम में हुआ है। शकुन और अपशकुन का विषय भी इसी के अन्तर्गत आता है। रोम के इतिहास में ऐसी अनेक घटनाओं का निरूपण है जिनसे सिद्ध होता है कि वहाँ शकुन और अपशकुन का फल व्यक्ति को भोगना पड़ा था।

इस प्रकार ग्रीस, रोम आदि देशों में भारत के समान ही निमित्तों का विचार

होता था। इन दोनों देशों के ज्योतिष सिद्धान्त निमित्तों पर आश्रित थे। सुभिक्ष-दुर्भिक्ष, जय-पराजय एवं यात्रा के शकुनों के सम्बन्ध में वैसा ही लिखा मिलता है, जैसा हमारे यहाँ है। प्राकृतिक और शारीरिक दोनों प्रकार के अरिष्टों का विवेचन ग्रीस और रोम सिद्धान्तों में मिलता है। पंचसिद्धान्तिका में जो रोमक सिद्धान्त उपलब्ध है, उससे ग्रहगणित की मान्यताओं पर भी प्रकाश पड़ता है।

भद्रबाहु संहिता का वर्ण्य विषय

अष्टांग निमित्तों का इस एक ही ग्रन्थ में वर्णन किया गया है। यह ग्रन्थ द्वादशांग वाणी के वेत्ता श्रुतकेवली भद्रबाहु के नाम पर रचित है। इस ग्रन्थ के प्रारम्भ में बतलाया गया है कि प्राचीन काल में मगध देश में नाना प्रकार के वैभव से युक्त राजगृह नाम का सुन्दर नगर था। इस नगर में राजगुणों से परिपूर्ण नानागुणसम्पन्न सेनजित (प्रसेनजित संभवतः बिम्बसार का पिता) नाम का राजा राज्य करता था। इस नगर के बाहरी भाग में नाना प्रकार के वृक्षों से युक्त पाण्डुगिरि नाम का पर्वत था। इस पर्वत के वृक्ष फल-फूलों से युक्त समृद्धिशाली थे तथा इन पर पक्षिगण सर्वदा मनोरम कलरव किया करते थे। एक समय श्रीभद्रबाहु आचार्य इसी पाण्डुगिरि पर एक वृक्ष के नीचे अनेक शिष्य-प्रशिष्यों से युक्त स्थित थे, राजा सेनजित ने नम्रीभूत होकर आचार्य से प्रश्न किया—

> **पार्थिवानां हितार्थाय भिक्षूणां हितकाम्यया।**
> **श्रावकाणां हितार्थाय दिव्य ज्ञानं ब्रवीहि नः॥**
> **शुभाशुभं समुद्भूतं श्रुत्वा राजा निमित्ततः।**
> **विजिगीषुः स्थिरमतिः सुखं याति महीं सदा॥**
> **राजभिः पूजिताः सर्वे भिक्षवो धर्मचारिणः।**
> **विहरन्ति निरुद्विग्नास्तेन राजाभियोजिताः॥**
> **सुखग्राह्यं लघुग्रंथं स्पष्टं शिष्यहितावहम्।**
> **सर्वज्ञभाषितं तथ्यं निमित्तं तु ब्रवीहि नः॥**

इस ग्रन्थ में उल्का, परिवेष, विद्युत्, अभ्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, गर्भलक्षण, यात्रा, उत्पात, ग्रहचार, ग्रहयुद्ध, स्वप्न, मुहूर्त, तिथि, करण, शकुन, पाक, ज्योतिष, वास्तु, इन्द्रसम्पदा, लक्षण, व्यंजन, चिह्न, लग्न, विद्या, औषध प्रभृति सभी निमित्तों के बलाबल, विरोध और पराजय आदि विषयों के निरूपण करने की प्रतिज्ञा की है। परन्तु प्रस्तुत ग्रन्थ में जितने अध्याय प्राप्त हैं, उनमें मुहूर्त तक ही वर्णन मिलता है। अवशेष विषयों का प्रतिपादन 27वें अध्याय से आगे आने वाले अध्यायों में हुआ होगा।

श्रद्धेय पं० जुगलकिशोर जी मुख्तार द्वारा लिखित ग्रंथपरीक्षा द्वितीय भाग

से ज्ञात होता है कि इस ग्रंथ में पाँच खण्ड और बारह हजार श्लोक हैं। बताया गया है—

> प्रथमो व्यवहाराख्यो ज्योतिराख्यो द्वितीयकः ।
> तृतीयोऽपि निमित्ताख्यश्चतुर्थोऽपि शरीरजः ॥1॥
> पंचमोऽपि स्वराख्यश्च पंचखण्डैरियं मता ।
> द्वादशसहस्रं प्रमिता संहितेयं जिनोदिता ॥2॥

व्यवहार, ज्योतिष, निमित्त, शरीर एवं स्वर ये पाँच खण्ड भद्रबाहु संहिता में हैं। इस ग्रंथ में एक विलक्षण बात यह है कि पाँच खण्डों के होने पर दूसरे खण्ड को मध्यम और तीसरे खण्ड को उत्तर खण्ड कहा गया है।

इस संस्मरण में हम केवल 27 अध्याय ही दे रहे हैं। 30वाँ अध्याय परिशिष्ट रूप से दिया जा रहा है। अतः 27 अध्यायों के वर्ण्य विषय पर विचार करना आवश्यक है।

प्रथम अध्याय में ग्रन्थ के वर्ण्य विषयों की तालिका प्रस्तुत की गयी है। आरम्भ में बताया गया है कि यह देश कृषिप्रधान है, अतः कृषि की जानकारी—किस वर्ष किस प्रकार की फसल होगी प्राप्त करना श्रावक और मुनि दोनों के लिए आवश्यक था। यद्यपि मुनि का कार्य ज्ञान-ध्यान में रत रहना है, पर आहार आदि-क्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए उन्हें श्रावकों के अधीन रहना पड़ता था, अतः सुभिक्ष-दुर्भिक्ष की जानकारी प्राप्त करना उनके लिए आवश्यक है। निमित्तशास्त्र का ज्ञान ऐहिक जीवन के व्यवहार को चलाने के लिए आवश्यक है। अतः इस अध्याय में निमित्तों के वर्णन करने की प्रतिज्ञा की गयी है और वर्ण्य विषयों की तालिका दी गयी है।

द्वितीय अध्याय में उल्का-निमित्त का वर्णन किया गया है। बताया गया है कि प्रकृति का अन्यथाभाव विकार कहा जाता है; इस विकार को देखकर शुभाशुभ के सम्बन्ध में जान लेना चाहिए। रात को जो तारे टूटकर गिरते हुए जान पड़ते हैं, वे उल्काएँ हैं। इस ग्रन्थ में उल्का के धिष्ण्या, उल्का, अशनि, विद्युत् और तारा ये पाँच भेद हैं। उल्का फल 15 दिनों में, धिष्ण्या और अशनि का 45 दिनों में एवं तारा और विद्युत् का छः दिनों में प्राप्त होता है। तारा का जितना प्रमाण है उससे लम्बाई में दूना धिष्ण्या का है। विद्युत् नाम वाली उल्का बड़ी कुटिल—टेढ़ी-मेढ़ी और शीघ्रगामिनी होती है। अशनि नाम की उल्का चक्राकार होती है, पौरुषी नाम की उल्का स्वभावतः लम्बी होती है तथा गिरते समय बढ़ती जाती है। ध्वज, मत्स्य, हाथी, पर्वत, कमल, चन्द्रमा, अश्व, तप्तरज और हंस के समान दिखाई पड़ने वाली उल्का शुभ मानी जाती है। श्रीवत्स, वज्र, शंख और स्वस्तिकरूप प्रकाशित होने वाली उल्का कल्याणकारी और सुभिक्षदायक है। जिन उल्काओं के सिर का भाग मकर के समान और पूँछ गाय के समान हो, वे उल्काएँ

अनिष्टसूचक तथा संसार के लिए भयप्रद होती है। इस अध्याय में संक्षेप में उल्काओं की बनावट, रूप-रंग आदि के आधार पर फलादेश का वर्णन किया गया है।

तृतीय अध्याय में 69 श्लोक हैं। इसमें विस्तारपूर्वक उल्कापात का फलादेश बताया गया है। 7 से 11 श्लोकों में उल्काओं के आकार-प्रकार का विवेचन है। 16वें श्लोक से 18वें श्लोक तक वर्ण के अनुसार उल्का का फलादेश वर्णित है। बताया गया है कि अग्नि की प्रभावाली उल्का अग्निभय, मंजिष्ठ के समान रंग वाली उल्का व्याधि और कृष्णवर्ण की उल्का दुर्भिक्ष की सूचना देती है। 19वें श्लोक से 29वें तक दिशा के अनुसार उल्का का फलादेश बतलाया गया है। अवशेष श्लोकों में विभिन्न दृष्टिकोणों से उल्का का फलादेश वर्णित है। सुभिक्ष-दुर्भिक्ष, जय-पराजय, हानि-लाभ, जीवन-मरण, सुख-दुःख आदि बातों की जानकारी उल्का निमित्त से की जा सकती है। पाप रूप उल्काएँ और पुण्यरूप उल्काएँ अपने-अपने स्वभाव-गुणानुसार इष्टानिष्ट की सूचना देती हैं। उल्काओं की विशेष पहचान भी इस अध्याय में बतलायी गयी है।

चौथे अध्याय में परिवेष का वर्णन किया गया है। परिवेष दो प्रकार के होते हैं—प्रशस्त और अप्रशस्त। इस अध्याय में 39 श्लोक हैं। आरम्भिक श्लोकों में परिवेष होने के कारण, परिवेष का स्वरूप और आकृति का वर्णन है। वर्षा ऋतु में सूर्य या चन्द्रमा के चारों ओर एक गोलाकार अथवा अन्य किसी आकार में एक मण्डल-सा बनता है, यही परिवेष कहलाता है। चाँदी या कबूतर के रंग के समान आभा वाला चन्द्रमा का परिवेष हो तो जल-वृष्टि, इन्द्रधनुष के समान वर्णवाला परिवेष हो तो संग्राम या विग्रह की सूचना, काले और नीले वर्ण का चक्र परिवेष हो तो वर्षा की सूचना, पीत वर्ण का परिवेष हो तो व्याधि की सूचना एवं भस्म के समान आकृति और रंग का चन्द्र परिवेष हो तो किसी महाभय की सूचना समझनी चाहिए। उदयकालीन चन्द्रमा के चारों ओर सुन्दर परिवेष हो तो वर्षा तथा उदयकाल में चन्द्रमा के चारों ओर रूक्ष और श्वेत वर्ण का परिवेष हो तो चोरों के उपद्रव की सूचना देता है। सूर्य का परिवेष साधारणतः अशुभ होता है और आधि-व्याधि को सूचित करता है। जो परिवेष नीलकंठ, मोर, रजत, दुग्ध और जल की आभा वाला हो, स्वकालसम्भूत हो, जिसका वृत्त खण्डित न हो और स्निग्ध हो, वह सुभिक्ष और मंगल करने वाला होता है। जो परिवेष समस्त आकाश में गमन करे, अनेक प्रकार की आभा वाला हो, रुधिर के समान लाल हो, रूखा और खण्डित हो तथा धनुष और शृंगाटक के समान हो तो वह पापकारी, भयप्रद और रोगसूचक होता है। चन्द्रमा के परिवेष से प्रायः वर्षा, आतप का विचार किया जाता है और सूर्य के परिवेष से महत्त्वपूर्ण घटित

होने वाली घटनाएँ सूचित होती हैं।

पाँचवें अध्याय में विद्युत् का वर्णन किया है। इस अध्याय में 25 श्लोक हैं। आरम्भ में सौदामिनी और बिजली के स्वरूपों का कथन किया गया है। बिजली-निमित्तों का प्रधान उद्देश्य वर्षा के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करना है। यह निमित्त फसल के भविष्य को अवगत करने के लिए भी उपयोगी है। बताया गया है कि जब आकाश में घने बादल छाये हों, उस समय पूर्व दिशा में बिजली कड़के और इसका रंग श्वेत या पीत हो तो निश्चयत: वर्षा होती है और यह फल दूसरे ही दिन प्राप्त होता है। ऋतु, दिशा, मास और दिन या रात में बिजली के चमकने का फलादेश इस अध्याय में बताया गया है। विद्युत् के रूप, और मार्ग का विवेचन भी इस अध्याय में है तथा इसी विवेचन के आधार पर फलादेश का वर्णन किया गया है।

छठे अध्याय में अभ्रलक्षण का निरूपण है। इसमें 31 श्लोक हैं, आरम्भ में मेघों के स्वरूप का कथन है। इस अध्याय का प्रधान उद्देश्य भी वर्षा के सम्बन्ध में जानकारी उपस्थित करना है। आकाश में विभिन्न आकृति और विभिन्न वर्णों के मेघ छाये रहते हैं। तिथि, मास, ऋतु के अनुसार विभिन्न आकृति के मेघों का फलादेश बतलाया गया है। वर्षा की सूचना के अलावा मेघ अपनी आकृति और वर्ण के अनुसार राजा के जय, पराजय, युद्ध, सन्धि, विग्रह आदि की भी सूचना देते हैं। इस अध्याय में मेघों की चाल-ढाल का वर्णन है, इससे भविष्यत्काल की अनेक बातों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। मेघों की गर्जन-तर्जन ध्वनि के परिज्ञान से अनेक प्रकार की बातों की जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

सातवाँ अध्याय सन्ध्या लक्षण है। इसमें 26 श्लोक हैं। इस अध्याय में प्रात: और सायं सन्ध्या का लक्षण विशेष रूप से बतलाया गया है तथा उन सन्ध्याओं के रूप, आकृति और समय के अनुसार फलादेश बतलाया गया है। प्रतिदिन सूर्य के अर्धास्त हो जाने के समय से जब तक आकाश में नक्षत्र भली-भाँति दिखलाई न दें तब तक सन्ध्याकाल रहता है; इसी प्रकार अर्धोदित सूर्य से पहले तारा दर्शन तक उदय सन्ध्याकाल माना जाता है। सूर्योदय के समय की सन्ध्या यदि श्वेत वर्ण की हो और वह उत्तर दिशा में स्थित हो तो ब्राह्मणों को भय देने वाली होती है। सूर्योदय के समय लालवर्ण की सन्ध्या क्षत्रियों को, पीत वर्ण की सन्ध्या वैश्यों को और कृष्ण वर्ण की सन्ध्या शूद्रों को भय देती है। सन्ध्या का फल दिशाओं के अनुसार भी कहा गया है। अस्तकाल की सन्ध्या की अपेक्षा उदयकाल की सन्ध्या अधिक महत्त्व रखती है। उदयकाल नाना प्रकार की भावी घटनाओं की सूचना देता है। प्रस्तुत अध्याय में उदयकालीन सन्ध्या का विस्तृत फलादेश बतलाया गया है। सन्ध्या के स्पर्श और रंग को पहचानने के लिए कुछ

दिन अभ्यास आवश्यक है।

आठवें अध्याय में मेघों का लक्षण बतलाया गया है। इसमें 27 श्लोक हैं। इस अध्याय में मेघों की आकृति, उनका काल, वर्ण, दिशा एवं गर्जन-ध्वनि के अनुसार फलादेश का वर्णन है। बताया गया है कि शरदऋतु के मेघों से अनेक प्रकार के शुभाशुभ फल की सूचना, ग्रीष्मऋतु के मेघों से वर्षा की सूचना एवं वर्षा ऋतु के मेघों से केवल वर्षा की सूचना मिलती है। मेघों की गर्जना को मेघों की भाषा कहा गया है। मेघों की भाषा से वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन की अनेक महत्त्वपूर्ण बातें ज्ञात की जा सकती हैं। पशु, पक्षी और मनुष्यों की बोली के समान मेघों की भाषा—गर्जना भी अनेक प्रकार की होती है। जब मेघ सिंह के समान गर्जना करें तो राष्ट्र में विप्लव, मृग के समान गर्जना करें तो शस्त्रवृद्धि एवं हाथी के समान गर्जना करें तो राष्ट्र के सम्मान की वृद्धि होती है। जनता में भय का संचार, राष्ट्र की आर्थिक क्षति एवं राष्ट्र में नाना प्रकार की व्याधियाँ उस समय उत्पन्न होती हैं, जब मेघ बिल्ली के समान गर्जना करते हों। खरगोश, सियार और बिल्ली के समान मेघों की गर्जना अशुभ मानी गयी है। नारियों के समान कोमल और मधुर गर्जना कला की उन्नति एवं देश की समृद्धि में विशेष सहायक होती है। रोते हुए मनुष्य की ध्वनि के समान जब मेघ गर्जना करें तो निश्चयतः महामारी की सूचना समझनी चाहिए। मधुर और कोमल गर्जना शुभ-फलदायक मानी जाती है।

नौवें अध्याय में वायु का वर्णन है। इस अध्याय में 65 श्लोक हैं। इस अध्याय के आरम्भ में वायु की विशेषता, उपयोगिता एवं स्वरूप का कथन किया गया है। वायु के परिज्ञान द्वारा भावी शुभाशुभ फल का विचार किया गया है। इसके लिए तीन तिथियाँ विशेष महत्त्व की मानी गयी हैं। ज्येष्ठ पूर्णिमा, आषाढ़ी प्रतिपदा और अषाढ़ी पूर्णिमा। इन तीन तिथियों में वायु के परीक्षण द्वारा वर्षा, कृषि, वाणिज्य, रोग आदि की जानकारी प्राप्त की जाती है। आषाढ़ी प्रतिपदा के दिन सूर्यास्त के समय में पूर्व दिशा में वायु चले तो आश्विन महीने में अच्छी वर्षा होती है तथा इस प्रकार की वायु से श्रावण मास में भी अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। रात्रि के समय जब आकाश में मेघ छाये हों और धीमी वर्षा हो रही हो, उस समय पूर्व दिशा में वायु चले तो भाद्रपद मास में अच्छी वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। श्रावण मास में पश्चिमीय हवा, भाद्रपद मास में पूर्वीय और आश्विन में ईशान कोण की हवा चले तो अच्छी वर्षा का योग समझना चाहिए तथा फसल भी उत्तम होती है। ज्येष्ठ पूर्णिमा को निरभ्र आकाश रहे और दक्षिण वायु चले तो उस वर्ष अच्छी वर्षा नहीं होती। ज्येष्ठ पूर्णिमा को प्रातःकाल सूर्योदय के समय में पूर्वीय वायु के चलने से फसल खराब होती है, पश्चिमीय के चलने से अच्छी, दक्षिणीय से दुष्काल और उत्तरीय वायु से

सामान्य फसल की सूचना समझनी चाहिए।

दसवें अध्याय में प्रवर्षण का वर्णन है इस अध्याय में 55 श्लोक हैं। इस अध्याय में विभिन्न निमित्तों द्वारा वर्षा का परिमाण निश्चित किया गया है। वर्षा ऋतु में प्रथम दिन वर्षा जिस दिन होती है, उसी के फलादेशानुसार समस्त वर्ष की वर्षा का परिमाण ज्ञात किया जा सकता है। अश्विनी, भरणी आदि 27 नक्षत्रों में प्रथम वर्षा होने से समस्त वर्ष में कुल कितनी वर्षा होगी, इसकी जानकारी भी इस अध्याय में बतलायी गयी है। प्रथम वर्षा अश्विनी नक्षत्र में हो तो 49 आढ़क जल, भरणी में हो तो 19 आढ़क जल, कृत्तिका में हो तो 51 आढ़क, रोहिणी में हो तो 91 आढ़क, मृगशिर नक्षत्र में हो तो 91 आढ़क, आर्द्रा में हो तो 32 आढ़क, पुनर्वसु में हो तो 91 आढ़क, पुष्य में हो तो 42 आढ़क, आश्लेषा में हो तो 64 आढ़क, मघा में हो तो 16 द्रोण, पूर्वा फाल्गुनी में हो तो 16 द्रोण, उत्तरा फाल्गुनी में हो तो 67 आढ़क, हस्त में हो तो 25 आढ़क, चित्रा में हो तो 22 आढ़क, स्वाति में हो हो 32 आढ़क, विशाखा में हो तो 16 द्रोण, अनुराधा में हो तो 16 द्रोण, ज्येष्ठा में हो तो 18 आढ़क और मूल में हो तो 16 द्रोण जल की वर्षा होती है। इस अध्याय में पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती नक्षत्र में वर्षा होने का फलादेश पहले कहा गया है। अतः ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ पूर्वाषाढा से नक्षत्र की गणना की गयी है।

ग्यारहवें अध्याय में गन्धर्व नगर का वर्णन किया गया है। इस अध्याय में 31 श्लोक हैं। इस अध्याय में बताया गया है कि सूर्योदयकाल में पूर्व दिशा में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नागरिकों का वध होता है। सूर्य के अस्तकाल में गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो आक्रमणकारियों के लिए घोर भय की सूचना समझनी चाहिए। रक्त वर्ण का गन्धर्वनगर पूर्व दिशा में दिखलाई पड़े तो शस्त्रोत्पात, पीतवर्ण का दिखलाई पड़े तो मृत्यु तुल्य कष्ट, कृष्णवर्ण का दिखलाई पड़े तो मारकाट, श्वेतवर्ण का दिखलाई पड़े तो विजय, कपिलवर्ण का दिखलाई पड़े तो क्षोभ, मंजिष्ठ वर्ण का दिखलाई पड़े तो सेना में क्षोभ एवं इन्द्रधनुष के वर्ण के समान वर्ण वाला दिखलाई पड़े तो अग्निभय होता है। गन्धर्वनगर अपनी आकृति, वर्ण, रचनासन्निवेश एवं दिशाओं के अनुसार व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के शुभाशुभ भविष्य की सूचना देते हैं। शुभ्रवर्ण और सौम्य आकृति के गन्धर्वनगर प्रायः शुभ होते हैं। विकृत आकृति वाले, कृष्ण और नील वर्ण के गन्धर्वनगर व्यक्ति, राष्ट्र और समाज के लिए अशुभसूचक हैं। शान्ति, अशान्ति, आन्तरिक उपद्रव एवं राष्ट्रों के सन्धि-विग्रह के सम्बन्ध में भी गन्धर्व नगरों से सूचना मिलती है।

बारहवें अध्याय में 38 श्लोकों में गर्भधारण का वर्णन किया गया है। मेघ गर्भ की परीक्षा द्वारा वर्षा का निश्चय किया जाता है। पूर्व दिशा के मेघ जब

पश्चिम दिशा की ओर दौड़ते हैं और पश्चिम दिशा के मेघ पूर्व दिशा में जाते हैं, इसी प्रकार चारों दिशाओं में मेघ पवन के कारण अदला-बदली करते रहते हैं, तो मेघ का गर्भ काल जानना चाहिए। जब उत्तर ईशानकोण और पूर्व दिशा की वायु द्वारा आकाश विमल, स्वच्छ और आनन्दयुक्त होता है तथा चन्द्रमा और सूर्य स्निग्ध, श्वेत और बहु घेरेदार होता है, उस समय भी मेघों के गर्भधारण का समय रहता है। मेघों के गर्भधारण का समय मार्गशीर्ष अगहन, पौष, माघ और फाल्गुन है। इन्हीं महीनों में मेघ गर्भधारण करते हैं। जो व्यक्ति मेघों के गर्भधारण को पहचान लेता है, वह सरलतापूर्वक वर्षा का समय जान सकता है। यह गणित का सिद्धान्त है कि गर्भधारण के 195 दिन के उपरान्त वर्षा होती है। अगहन के महीने में जिस तिथि को मेघ गर्भ धारण करते हैं, उस तिथि से ठीक 195वें दिन में अवश्य वर्षा होती है। इस अध्याय में गर्भधारण की तिथि का परिज्ञान कराया गया है। जिस समय मेघ गर्भधारण करते हैं; उस समय दिशाएँ शान्त हो जाती हैं, पक्षियों का कलरव सुनाई पड़ने लगता है। अगहन के महीने में जिस तिथि को मेघ सन्ध्या की अरुणिमा से अनुरक्त और मण्डलाकार होते हैं। उसी तिथि को उनको गर्भधारण क्रिया समझनी चाहिए। इस अध्याय में गर्भ धारण की परिस्थिति और उस परिस्थिति के अनुसार घटित होने वाले फलादेश का निरूपण किया गया है।

तेरहवें अध्याय में यात्रा के शकुनों का वर्णन है। इस अध्याय में 186 श्लोक हैं। इसमें प्रधान रूप से राजा की विजय यात्रा का वर्णन है, पर यह विजय यात्रा सर्वसाधारण की यात्रा के रूप में भी वर्णित है। यात्रा के शकुनों का विचार सर्व साधारण को भी करना चाहिए। सर्वप्रथम यात्रा के लिए शुभमुहूर्त का विचार करना चाहिए। ग्रह, नक्षत्र, करण, तिथि, मुहूर्त, स्वर, लक्षण, व्यंजन, उत्पात, साधुमंगल आदि निमित्तों का विचार यात्रा काल में अवश्य करना चाहिए। यात्रा में तीन प्रकार के निमित्तों—आकाश से पतित, भूमि पर दिखाई देने वाले और शरीर से उत्पन्न चेष्टाओं का विचार करना होता है। सर्वप्रथम पुरोहित तथा हवन क्रिया द्वारा शकुनों का विचार करना चाहिए। कौआ, मूषक और शूकर आदि पीछे की ओर आते हुए दिखाई पड़ें अथवा बायीं ओर चिड़िया उड़ती हुई दिखलाई पड़े तो यात्रा में कष्ट की सूचना समझनी चाहिए। ब्राह्मण, घोड़ा, हाथी, फल, अन्न, दही, आम, सरसों, कमल, वस्त्र, वेश्या, बाजा, मोर, पपैया, नौला, बँधा हुआ पशु, ऊख, जलपूर्ण कलश, बैल, कन्या, रत्न, मछली, मन्दिर एवं पुत्रवती नारी का दर्शन यात्रारम्भ में हो तो यात्रा सफल होती है। सीसा, काजल, धुला वस्त्र, धोने के लिए वस्त्र ले जाते हुए धोबी, घृत, मछली, सिंहासन, मुर्गा, ध्वजा, शहद, मेवा, धनुष, गोरोचन, भरद्वाज पक्षी, पालकी, वेदध्वनि, मांगलिक गायन ये पदार्थ सम्मुख आयें तथा बिना जल—खाली घड़ा लिये कोई व्यक्ति

पीछे की ओर जाता दिखाई पड़े तो यह शकुन अत्युत्तम है। बांझ स्त्री, चमड़ा, धान का भूसा, पुआल, सूखी लकड़ी, अंगार, हिजड़ा, विष्ठा के लिए पुरुष या स्त्री, तेल, पागल व्यक्ति, जटा वाला संन्यासी व्यक्ति, तृण, संन्यासी, तेल मालिश किये बिना स्नान के व्यक्ति, नाक या कान कटा व्यक्ति, रुधिर, रजस्वला स्त्री, गिरगिट, बिल्ली का लड़ना या रास्ता काटकर निकल जाना, कीचड़, कोयला, राख, दुर्भग व्यक्ति आदि शकुन यात्रा के आरम्भ में अशुभ समझे जाते हैं। इन शकुनों से यात्रा में नाना प्रकार के कष्ट होते हैं और कार्य भी सफल नहीं होता है। यात्रा के समय में दधि, मछली और जलपूर्ण कलश आना अत्यन्त शुभ माना गया है। इस अध्याय में यात्रा के विभिन्न शकुनों का विस्तारपूर्वक विचार किया गया है। यात्रा करने के पूर्व शुभ शकुन और मुहूर्त का विचार अवश्य करना चाहिए। शुभ समय का प्रभाव यात्रा पर अवश्य पड़ता है। अतः दिशाशूल का ध्यान कर शुभ समय में यात्रा करनी चाहिए।

चौदहवें अध्याय में उत्पातों का वर्णन किया गया है। इस अध्याय में 182 श्लोक हैं। आरम्भ में बताया गया है कि प्रत्येक जनपद को शुभाशुभ की सूचना उत्पातों से मिलती है। प्रकृति के विपर्यय कार्य होने को उत्पात कहते हैं। यदि शीत ऋतु में गर्मी पड़े और ग्रीष्म ऋतु में कड़ाके की सर्दी पड़े तो उक्त घटना के नौ या दस महीने के उपरान्त महान् भय होता है। पशु, पक्षी और मनुष्यों का स्वभाव विपरीत आचरण दिखलाई पड़े अर्थात् पशुओं के पक्षी या मानव सन्तान हो और स्त्रियों के पशु-पक्षी सन्तान हो तो भय और विपत्ति की सूचना समझनी चाहिए। देव प्रतिमाओं द्वारा जिन उत्पातों की सूचना मिलती है वे दिव्य उत्पात, नक्षत्र, उल्का, निर्घात, पवन, विद्युत्पात, इन्द्रधनुष आदि के द्वारा जो उत्पात दिखलायी पड़ते हैं वे अन्तरिक्ष; पार्थिव विकारों द्वारा जो विशेषताएँ दिखलाई पड़ती हैं वे भौमोत्पात कहलाते हैं। तीर्थंकर प्रतिमा से पसीना निकलना, प्रतिमा का हँसना, रोना, अपने स्थान से हटकर दूसरी जगह पहुँच जाना, छत्रभंग होना, छत्र का स्वयमेव हिलना, चलना, काँपना आदि उत्पातों को अत्यधिक अशुभ समझना चाहिए। ये उत्पात व्यक्ति, समाज और राष्ट्र इन तीनों के लिए अशुभ हैं। इन उत्पातों से राष्ट्र में अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। घरेलू संघर्ष भी इन उत्पातों के कारण होते हैं। इस अध्याय में दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम तीनों प्रकार के उत्पातों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

पन्द्रहवें अध्याय में शुक्राचार्य का वर्णन है। इसमें 230 श्लोक हैं। इसमें शुक्र के गमन, उदय, अस्त, वक्री, मार्गी आदि के द्वारा भूत-भविष्यत् का फल, वृष्टि, अवृष्टि, भय, अग्निप्रकोप, जय, पराजय, रोग, धन, सम्पत्ति आदि फलों का विवेचन किया गया है। शुक्र के छहों मण्डलों में भ्रमण करने के फल का कथन किया है। शुक्र का नागवीथि, गजवीथि, ऐरावतवीथि, वृषवीथि, गोवीथि,

जरद्गववीथि, अजवीथि, मृगवीथि और वैश्वानरवीथि में भ्रमण करने का फलादेश बताया गया है। दक्षिण, उत्तर, पश्चिम और पूर्व दिशा की ओर से शुक्र के उदय होने का तथा अस्त होने का फलादेश कहा गया है। अश्विनी, भरणी आदि नक्षत्रों में शुक्र के अस्तोदय का फल भी विस्तारपूर्वक बताया गया है। शुक्र की आरूढ़, दीप्त, अस्तंगत आदि अवस्थाओं का विवेचन भी किया गया है। शुक्र के प्रतिलोम, अनुलोम, उदयास्त, प्रवास आदि का प्रतिपादन भी किया गया है। इस अध्याय में गणित क्रिया के बिना केवल शुक्र के उदयास्त को देखने से ही राष्ट्र का शुभाशुभ ज्ञान किया जा सकता है।

सोलहवें अध्याय में शनिचार का कथन है। इसमें ३२ श्लोक हैं। शनि के उदय, अस्त, आरूढ़, छन्न, दीप्त आदि अवस्थाओं का कथन किया गया है। कहा गया है कि श्रवण, स्वाति, हस्त, आर्द्रा, भरणी और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में शनि स्थित हो, तो पृथ्वी पर जल की वर्षा होती है, सुभिक्ष, समर्घता—वस्तुओं के भावों में समता और और प्रजा का विकास होता है। अश्विनी नक्षत्र में शनि के विचरण करने से अश्व, अश्वारोही, कवि, वैद्य और मन्त्रियों को हानि उठानी पड़ती है। शनि और चन्द्रमा के परस्पर वेध, परिवेष आदि का वर्णन भी इस अध्याय में है। शनि के वक्री और मार्गी होने का फलादेश भी इस अध्याय में कहा गया है।

सत्रहवें अध्याय में गुरु के वर्ण, गति, आकार, मार्गी, अस्त, उदय, वक्र आदि का फलादेश वर्णित है। इस अध्याय में ४६ श्लोक हैं। बृहस्पति का, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा और पूर्वाफाल्गुनी इन नौ नक्षत्रों में उत्तर मार्ग, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़ा इन नौ नक्षत्रों में मध्यम मार्ग एवं उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी इन नौ नक्षत्रों में दक्षिण मार्ग होता है। इन मार्गों का फलादेश इस अध्याय में विस्तारपूर्वक निरूपित है। संवत्सर, परिवत्सर, इरावत्सर, अनुवत्सर और इद्वत्सर इन पाँचों संवत्सरों के नक्षत्रों का वर्णन फलादेश के साथ किया गया है। गुरु की विभिन्न दशाओं का फलादेश भी बतलाया गया है।

अठारहवें अध्याय में बुध के अस्त, उदय, वर्ण, ग्रहयोग आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। इस अध्याय में 37 श्लोक हैं। बुध की सौम्या, विमिश्रा, संक्षिप्ता, तीव्रा, घोरा, दुर्गा और पापा इन सात प्रकार की गतियों का वर्णन किया गया है। बुध की सौम्या, विमिश्रा और संक्षिप्ता गतियाँ हितकारी हैं। शेष सभी गतियाँ पाप गतियाँ हैं। यदि बुध समान रूप से गमन करता हुआ शकटवाहक के द्वारा स्वाभाविक गति से नक्षत्र का लाभ करे तो यह बुध का नियतचार कहलाता है, इसके विपरीत गमन करने से भय होता है। बुध की

वृद्धि होती है।

बाईसवें अध्याय में 21 श्लोक हैं। इस अध्याय में सूर्य की विशेष अवस्थाओं का फलादेश वर्णित है। सूर्य के प्रवास, उदय और चार का फलादेश बतलाया गया है। लाल वर्ण का सूर्य अस्त्र प्रकोप करनेवाला, पीत और लोहित वर्ण का सूर्य व्याधि-मृत्यु देनेवाला और धूम्र वर्ण का सूर्य भुखमरी तथा अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न करनेवाला होता है। सूर्य की उदयकालीन आकृति के अनुसार भारत के विभिन्न प्रदेशों के सुभिक्ष और दुर्भिक्ष का वर्णन किया गया है। स्वर्ण के समान सूर्य का रंग सुखदायी होता है तथा इस प्रकार के सूर्य के दर्शन करने से व्यक्ति को सुख और आनन्द प्राप्त होता है।

तेईसवें अध्याय में 58 श्लोक हैं। इसमें चन्द्रमा के वर्ण, संस्थान, प्रमाण आदि का प्रतिपादन किया गया है। स्निग्ध, श्वेतवर्ण, विशालाकार और पवित्र चन्द्रमा शुभ समझा जाता है। चन्द्रमा का शृंग- -किनारा कुछ उत्तर की ओर उठा हुआ रहे तो दस्युओं का घात होता है। उत्तर शृंग वाला चन्द्रमा अश्मक, कलिंग, मालव, दक्षिण द्वीप आदि के लिए अशुभ तथा दक्षिण शृंगोन्नति वाला चन्द्र यवन देश, हिमाचल, पांचाल आदि देशों के लिए अशुभ होता है। चन्द्रमा की विभिन्न आकृति का फलादेश भी इस अध्याय में बतलाया गया है। चन्द्रमा की गति, मार्ग, आकृति, वर्ण, मण्डल, वीथि, चार, नक्षत्र आदि के अनुसार चन्द्रमा का विशेष फलादेश भी इस अध्याय में वर्णित है।

चौबीसवें अध्याय में 43 श्लोक हैं। इसमें ग्रहयुद्ध का वर्णन है। ग्रहयुद्ध के चार भेद हैं— भेद, उल्लेख, अंशुमर्दन और अपसव्य। ग्रहभेद में वर्षा का नाश, सुहृद और कुलीनों में भेद होता है। उल्लेख युद्ध में शस्त्रभय, मन्त्रि विरोध और दुर्भिक्ष होता है। अंशुमर्दन युद्ध में राष्ट्रों में संघर्ष, अन्नाभाव एवं अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। अपसव्य युद्ध में पूर्वोध राष्ट्रों में आन्तरिक संघर्ष होता है तथा राष्ट्रों में वैमनस्य भी बढ़ता है। इस अध्याय में ग्रहों के नक्षत्रों का कथन तथा ग्रहों के वर्णों के अनुसार उनके फलादेशों का निरूपण किया गया है। ग्रहों का आपस में टकराना धन-जन के लिए अशुभ सूचक होता है।

पच्चीसवें अध्याय में 50 श्लोक हैं। इसमें ग्रह, नक्षत्रों के दर्शन द्वारा शुभाशुभ फल का कथन किया गया है। इस अध्याय में ग्रहों के पदार्थों का निरूपण किया गया है। ग्रहों के वर्ण और आकृति के अनुसार पदार्थों के तेज, मन्द और समत्व का परिज्ञान किया गया है। यह अध्याय व्यापारियों के लिए अधिक उपयोगी है।

छब्बीसवें अध्याय में स्वप्न का फलादेश बतलाया गया है। इस अध्याय में 86 श्लोक हैं। स्वप्न निमित्त का वर्णन विस्तार के साथ किया गया है। धनागम, विवाह, मंगल, कार्यसिद्धि, जय, पराजय, हानि, लाभ आदि विभिन्न फलादेशों

चारों दिशाओं की वीथियों का भी वर्णन किया गया है। विभिन्न ग्रहों के साथ बुध का फलादेश बताया गया है।

उन्नीसवें अध्याय में 39 श्लोक हैं। इसमें मंगल के चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति, काष्ठ, गति, फल, वक्र और अनुवक्र का विवेचन किया गया है। मंगल का चार बीस महीने, वक्र आठ महीने और प्रवास चार महीने का होता है। वक्र, कठोर, श्याम, ज्वलित, धूमवान, विवर्ण, क्रुद्ध और बायीं ओर गमन करने वाला मंगल सदा अशुभ होता है। मंगल के पाँच प्रकार के वक्र बताये गये हैं—उष्ण, शोष-मुख, व्याल, लोहित और लोहमुद्गर। ये पाँच प्रधान वक्र हैं। मंगल का उदय सातवें, आठवें या नवें नक्षत्र पर हुआ हो और वह लौटकर गमन करने लगे तो उसे उष्ण वक्र कहते हैं। इस उष्ण वक्र में मंगल के रहने से वर्षा अच्छी होती है किन्तु; कीट और अग्नि की वृद्धि होती है। जनता को साधारणतया कष्ट होता है। जब मंगल दसवें, ग्यारहवें और बारहवें नक्षत्र से लौटता है तो शोषमुख वक्र कहलाता है। इस वक्र में आकाश से जल की वर्षा होती है। जब मंगल राशि परिवर्तन करता है, उस समय वर्षा होती है। यदि मंगल चौदहवें अथवा तेरहवें नक्षत्र से लौट आये तो यह उसका व्याल वक्र होता है। इसका फलादेश अच्छा नहीं होता। जब मंगल पन्द्रहवें या सोलहवें नक्षत्र से लौटता है तब लोहित वक्र कहलाता है। इसका फलादेश जल का अभाव होता है। जब मंगल सत्रहवें या अठारहवें नक्षत्र से लौटता है, तब लोहमुद्गर कहलाता है। इस वक्र का फला-देश भी राष्ट्र और समाज को अहितकर होता है। इसी प्रकार मंगल के नक्षत्र-भोग का भी वर्णन किया गया है।

बीसवें अध्याय में 63 श्लोक हैं। इस अध्याय में राहु के गमन, रंग आदि का वर्णन किया गया है। इस अध्याय में राहु की दिशा, वर्णन, गमन और नक्षत्रों के संयोग आदि का फलादेश वर्णित है। चन्द्रग्रहण तथा ग्रहण की दिशा, नक्षत्र आदि का फल भी बतलाया गया है। नक्षत्रों के अनुसार ग्रहणों का फलादेश भी इस अध्याय में आया है।

इक्कीसवें अध्याय में 58 श्लोक हैं। इसमें केतु के नाना भेद, प्रभेद, उनके स्वरूप, फल आदि का विस्तार सहित वर्णन किया गया है। बताया गया है कि 120 वर्ष में पाप के उदय से विषम केतु उत्पन्न होता है। इस केतु का फल संसार को उथल-पुथल करनेवाला होता है। जब विषम केतु का उदय होता है, तब विश्व में युद्ध, रक्तपात, महामारी आदि उपद्रव अवश्य होते हैं। केतु के विभिन्न स्वरूपों का वर्णन भी इस अध्याय में फल सहित किया है। अश्विनी आदि नक्षत्रों में उत्पन्न होने पर केतु का फल विभिन्न प्रकार का होता है। क्रूर नक्षत्रों में उत्पन्न होने पर केतु भय और पीड़ा का सूचक होता है और सौम्य नक्षत्रों में केतु के उदय होने से राष्ट्र में शान्ति और सुख रहता है। देश में धन-धान्य की

की सूचना देनेवाले स्वप्नों का वर्णन किया गया है। इस अध्याय में दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, प्रार्थित; कल्पित, भाविक और दोषज इन सात प्रकार के स्वप्नों में से केवल भाविक स्वप्नों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

सत्ताईसवें अध्याय में कुल 13 श्लोक हैं। इस अध्याय में वस्त्र, आसन, पादुका आदि के छिन्न होने का फलादेश कहा गया है। यह छिन्न निमित्त का विषय है। नवीन वस्त्र धारण करने में नक्षत्रों का फलादेश भी बताया गया है। शुभ मुहूर्त में नवीन वस्त्र धारण करने से उपभोक्ता का कल्याण होता है। मुहूर्त का उपयोग तो सभी कार्यों में करना चाहिए।

परिशिष्ट में दिये गये 30वें अध्याय में अरिष्टों का वर्णन किया गया है। मृत्यु के पूर्व प्रकट होने वाले अरिष्टों का कथन विस्तारपूर्वक किया गया है। पिण्डस्थ, पदस्थ और रूपस्थ तीनों प्रकार के अरिष्टों का कथन इस अध्याय में किया गया है। शरीर में जितने प्रकार के विकार उत्पन्न होते हैं उन्हें पिण्डस्थ अरिष्ट कहा गया है। यदि कोई अशुभ लक्षण के रूप में चन्द्रमा, सूर्य, दीपक या अन्य किसी वस्तु को देखता है तो ये सब अरिष्ट मुनियों के द्वारा पदस्थ—बाह्य वस्तुओं से सम्बन्धित कहलाते हैं। आकाशीय दिव्य पदार्थों का शुभाशुभ रूप में दर्शन करना, कुत्ते, बिल्ली, कौआ आदि प्राणियों की दृष्टानिष्ट सूचक आवाज का सुनना या उनकी अन्य किसी प्रकार की चेष्टाओं को देखना पदस्थ अरिष्ट कहा गया है। पदस्थ अरिष्ट में मृत्यु की सूचना दो-तीन वर्ष पूर्व भी मिल जाती है। जहाँ रूप दिखलाया जाय वहाँ रूपस्थ अरिष्ट कहा जाता है। यह रूपस्थ अरिष्ट छाया पुरुष; स्वप्नदर्शन, प्रत्यक्ष, अनुमानजन्य और प्रश्न के द्वारा अवगत किया जाता है। छायादर्शन द्वारा आयु का ज्ञान करना चाहिए। उक्त तीनों प्रकार के अरिष्ट व्यक्ति की आयु की सूचना देते हैं।

भद्रबाहुसंहिता की बृहत्संहिता से तुलना तथा ज्योतिष शास्त्र में उसका स्थान

भद्रबाहु संहिता के कई अध्याय विषय की दृष्टि से बृहत्संहिता से मिलते हैं। भद्रबाहु संहिता के दूसरे और तीसरे अध्याय बृहत्संहिता के 33वें अध्याय से मिलते हैं। दूसरे अध्याय में उल्काओं का स्वरूप और तीसरे अध्याय में उल्काओं का फल वर्णित है। उल्का की परिभाषा का वर्णन करते हुए कहा है—

> **भौतिकानां शरीराणां स्वर्गात् प्रच्यवतामिह।**
> **संभवश्चान्तरिक्षे तु तज्ज्ञैरुल्केति संज्ञिता ॥**
> **तत्र तारा तथा धिष्ण्यं विद्युच्चाशनिभिः सह।**
> **उल्काविकारा बोद्धव्या ते पतन्ति निमित्ततः ॥**

—अ० 2, श्लो० 5-6

इसी आशय को वराहमिहिर ने निम्न श्लोकों में प्रकट किया है—

दिवि भुक्तशुभफलानां पततां रूपाणि यानि तान्युल्काः ।
धिष्ण्योल्काशनिविद्युत्ताराः इति पंचधा भिन्नाः ॥

–अ० 30, श्लो० 1

भद्रबाहुसंहिता के दूसरे अध्याय के 8, 9वाँ श्लोक वाराहीसंहिता के 33वें अध्याय के 3, 4 और 8वें श्लोक के समान हैं । भाव साम्य के साथ अक्षर साम्य भी प्राय: मिलता है । भद्रबाहुसंहिता के तीसरे अध्याय का 5, 9, 16, 18, 19वाँ श्लोक वाराही संहिता के 33वें अध्याय के 9, 10, 12, 15, 16, 18 और 19वें श्लोक से प्राय: मिलते हैं । भाव की दृष्टि से दोनों ग्रन्थों में आश्चर्यजनक समता है ।

अन्तर इतना है कि वाराही संहिता में जहाँ विषय वर्णन में संक्षेप किया है, वहाँ भद्रबाहुसंहिता में विषय का विस्तार है । प्रत्येक विषय को विस्तार के साथ समझाने की चेष्टा की है । फलादेशों में भी कहीं-कहीं अन्तर है, एक बात या परिस्थिति का फलादेश वाराही संहिता से भद्रबाहुसंहिता में पृथक् है । कहीं-कहीं तो यह पृथकता इतनी बढ़ गयी है कि फल विपरीत दिशा ही दिखलाता है ।

परिवेष का वर्णन भद्रबाहुसंहिता के चौथे अध्याय में और वाराही संहिता के 34वें अध्याय में है । भद्रबाहुसंहिता के इस अध्याय के तीसरे और सोलहवें श्लोक में खण्डित परिवेषों को अनिष्टकारी कहा गया है । चाँदी और तेल के समान वर्ण वाले परिवेष सुभिक्ष करनेवाले कहे गये हैं । यह कथन वाराही संहिता के 34वें अध्याय के 4 और 5वें श्लोक से मिलता-जुलता है । परिवेश प्रकरण के 8, 14, 20, 28, 29, 37, 38वाँ श्लोक वाराही संहिता के 34वें अध्याय के 6, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 15, एवं 37वें श्लोक से मिलते हैं । भाव में पर्याप्त साम्य है । दोनों ग्रन्थों का फलादेश तुल्य है । परिवेष के नक्षत्र तिथियों एवं वर्णों का फलकथन भद्रबाहुसंहिता में नहीं है, किन्तु वाराही संहिता में ये विषय कुछ विस्तृत और व्यवस्थित रूप में वर्णित हैं । प्रकरणों में केवल विस्तार ही नहीं है, विषय का गाम्भीर्य भी है । भद्रबाहुसंहिता के परिवेश अध्याय में विस्तार के साथ पुनरुक्ति भी विद्यमान है ।

भद्रबाहुसंहिता का 12वाँ अध्याय मेघ-गर्भलक्षणाध्याय है । इसके चौथे और सातवें श्लोक में बताया है कि सात-सात महीने और सात-सात दिन में गर्भ पूर्ण परिपक्व अवस्था को प्राप्त होता है । वाराही संहिता में (अ० 22 श्लो० 7) में 195 दिन कहा गया है । अत: स्थूल रूप से दोनों कथनों में अन्तर मालूम पड़ता है, पर वास्तविक में दोनों कथन एक हैं । भद्रबाहुसंहिता में नाक्षत्र मास ग्रहीत है, जो 27 दिन का होता है, अत: यहाँ 196 दिन आते हैं । वाराहमिहिर

बस 195 दिन तथा वर्तमान 196वाँ दिन ही माना है, जो भद्रबाहुसंहिता के नाक्षत्र मास के तुल्य है। गर्भ का धारण और वर्षण प्रभाव सामान्यतया एक है, परन्तु भद्रबाहु संहिता के कथन में विशेषता है। भद्रबाहुसंहिता में गर्भधारण का वर्णन महीनों के अनुसार किया है। वाराहीसंहिता में यह कथन नहीं है।

उत्पात प्रकरण दोनों ही संहिताओं में है। भद्रबाहुसंहिता के चौदहवें अध्याय में और वाराही संहिता के छियालीसवें अध्याय में यह प्रकरण है। भद्रबाहु संहिता में उत्पातों के दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम ये तीन भेद किये हैं तथा इनका वर्णन बिना किसी क्रम के मनमाने ढंग से किया है। इस ग्रन्थ के वर्णन में किसी भी प्रकार का क्रम नहीं है। दिव्य उत्पातों के साथ भौम उत्पातों का वर्णन भी किया गया है। पर वाराही संहिता में अशुभ, अनिष्टकारी, भयकारी, राज-भयोत्पादक, नगरभयोत्पादक, सुभिक्षदायक आदि का वर्णन सुव्यवस्थित ढंग से किया है। लिंगवैकृत, अग्निवैकृत, वृक्षवैकृत, सस्यवैकृत, जलवैकृत, प्रसववैकृत, चतुष्पादवैकृत, वायव्यवैकृत, मृगपक्षी विकार एवं शक्रध्वजेन्द्रकीलवैकृत इत्यादि विभागों का वर्णन किया है। वाराहमिहिर का यह उत्पात प्रकरण भद्रबाहुसंहिता के उत्पात प्रकरण की अपेक्षा अधिक विस्तृत और व्यवस्थित है। वैसे वाराह-मिहिर ने केवल 99 श्लोकों में उत्पात का वर्णन किया है, जबकि भद्रबाहुसंहिता में 182 श्लोकों में उत्पातों का कथन किया गया है। उत्पात का लक्षण प्रायः दोनों का समान है। 'प्रकृतेर्यो विपर्यासः स उत्पातः प्रकीर्तितः' (भ० सं० 14, 2) तथा वाराह ने 'प्रकृतेरन्यत्वमुत्पातः' (वा० सं० 46, 1)। इन दोनों लक्षणों का तात्पर्य एक ही है। राजमन्त्री, राष्ट्रसम्बन्धी फलादेश प्रायः दोनों ग्रन्थों में समान है।

शुक्रचार दोनों ही ग्रन्थों में है। भद्रबाहुसंहिता के पन्द्रहवें अध्याय में और वाराही संहिता के नौवें अध्याय में यह प्रकरण आया है। उल्का, सन्ध्या, वात, गन्धर्वनगर आदि तो आकस्मिक घटनाएँ हैं, अतः दैनन्दिन शुभाशुभ को अवगत करने के लिए ग्रहचार का निरूपण करना अत्यावश्यक है। यही कारण है कि संहिताकारों ने ग्रहों के वर्णनों को भी अपने ग्रन्थों में स्थान दिया है। राष्ट्रविप्लव, राजभय, नगरभय, संग्राम, महामारी, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, सुभिक्ष, दुर्भिक्ष आदि का विवेचन ग्रहों की गति के अनुसार करना ही अधिक युक्तिसंगत है। अतएव संहिताकारों ने ग्रहों के चार को स्थान दिया है। शुक्रचार को अन्य ग्रहों की अपेक्षा अधिक उपयोगी और बलवान कहा गया है।

शुक्र के गमन-मार्ग को, जो कि 27 नक्षत्रात्मक है, वीथियों में विभक्त किया गया है। नाग, गज, ऐरावण, वृषभ, गो, जरद्गव, अज, मृग और वैश्वानर ये वीथियाँ भद्रबाहुसंहिता में आयी हैं (15 अ० 44-48 श्लो०) और नाग, गज, ऐरावत, वृषभ, गो, जरद्गव, मृग और दहन ये वीथियाँ वाराही संहिता

(9 अ० 1 श्लो०) में आयी है। इन वीथियों में भद्रबाहु संहिता में अज नाम की वीथि एक नयी है तथा ऐरावत के स्थान पर ऐरावण और दहन के स्थान पर वैश्वानर वीथियाँ आयी हैं। इस निरूपण में केवल शब्दों का अन्तर है, भाव में कोई अन्तर नहीं है। भद्रबाहुसंहिता में भरणी से लेकर चार-चार नक्षत्रों का एक-एक मण्डल बताया गया है। कहा है—

भरण्यादीनि चत्वारि चतुर्नक्षत्रकाणि हि।
षडेव मण्डलानि स्युस्तेषां नामानि लक्षयेत्॥
चतुष्कं च चतुष्कञ्च पंचकं त्रिकमेव च।
पंचकं षट्कं विज्ञेयो भरण्यादौ तु भार्गवः॥

—भ० सं०, 15 अ० 7,9 श्लो०

वाराही संहिता के 9वें अध्याय के 10, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20वें श्लोक में उपर्युक्त बात का कथन है। भद्रबाहुसंहिता के अगले श्लोकों में फलादेश का भी वर्णन किया गया है, जबकि वाराही संहिता में मण्डल के नक्षत्र और फलादेश साथ-साथ वर्णित हैं। शुक्र के नक्षत्र-भेदन का फल दोनों ग्रन्थों में रूपान्तर है। भद्रबाहुसंहिता में कहा गया है कि शुक्र यदि रोहिणी नक्षत्र में आरोहण करे तो भय होता है। पाण्ड्य, केरल, चोल, कर्नाटक, चेदि, चेर और विदर्भ आदि देशों में पीड़ा और उपद्रव होता है। वाराही संहिता में भी मृगशिर नक्षत्र का भेदन या आरोहण अशुभ माना गया है। वाराही संहिता के शुक्रचार में केवल 45 श्लोक हैं, जबकि भद्रबाहुसंहिता में 231 श्लोक हैं। इसमें विस्तारपूर्वक शुक्र के गमन, उदय एवं अस्त आदि का वर्णन किया गया है। वाराही संहिता की अपेक्षा इसमें कई नयी बातें हैं।

भद्रबाहुसंहिता और वाराही संहिता में शनैश्चर चार नामक अध्याय आया है। यह भद्रबाहुसंहिता का 16वाँ अध्याय और वाराही संहिता का दसवाँ अध्याय है। वाराही संहिता का यह वर्णन भद्रबाहुसंहिता के वर्णन की अपेक्षा अधिक विस्तृत और ज्ञानवर्धक है। वाराही संहिता में प्रत्येक नक्षत्र के भोगानुसार फलादेश कहा गया है, इस प्रकार के वर्णन का भद्रबाहु संहिता में अभाव है। भद्रबाहुसंहिता में कहा गया है कि कृत्तिका में शनि और विशाखा में गुरु हो तो चारों ओर दारुणता व्याप्त हो जाती है तथा वर्षा खूब होती है। शनि के रंग का फलादेश लगभग समान है। भद्रबाहु संहिता में बताया गया है—

श्वेते सुभिक्षं जानीयात् पाण्डु-लोहितके भयम्।
पीतो जनयते व्याधिं शस्त्रकोपं च दारुणम्॥
कृष्णे शुष्यन्ति सरितो वासवश्च न वर्षति।
स्नेहवानत्र गृह्णाति रूक्षः शोषयते प्रजाः॥

—भ० सं०, अ० 16, श्लो० 26-27

वाराही संहिता में शनि के वर्ण का फलादेश निम्न प्रकार बताया है—

अण्डजहा रविजो यदि चित्रः क्षुद्भयकृद्यदि पीतमयूखः।
शस्त्रभयाय च रक्तवर्णो भस्मनिभो बहुवैरकरश्च।।
वैदूर्यकान्तिरमलः शुभदः प्रजानां बाणातसीकुसुमवर्णनिभश्च शस्तः।
यंचापि वर्णमुपगच्छति तत्सवर्णान् सूर्यात्मजः क्षपयतीति मुनिप्रवादः।।

—वा० सं०, अ० 10, श्लो० 20-21

भ० सं० में कहा है कि श्वेत शनि का रंग हो तो सुभिक्ष, पाण्डु और लोहित रंग का होने पर भय एवं पीतवर्ण होने पर व्याधि और भयंकर शस्त्रकोप होता है। शनि के कृष्ण वर्ण होने पर नदियाँ सूख जाती हैं और वर्षा नहीं होती है। स्निग्ध होने पर प्रजा में सहयोग और रूक्ष होने पर प्रजा का शोषण होता है।

वाराही—संहिता में यदि शनि अनेक रंग वाला दिखाई दे तो अंडज प्राणियों का नाश होता है। पीतवर्ण होने से क्षुधा और भय होता है। रक्तवर्ण होने से शस्त्रभय और भस्म के समान रंग होने से अत्यन्त अशुभ होता है। यदि शनि वैदूर्यमणि के समान कान्तिमान् और निर्मल हो तो प्रजा का अत्यन्त अशुभ होता है। तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर दोनों ग्रन्थों के शनिवर्ण फल में पर्याप्त अन्तर है।

भद्रबाहुसंहिता में (18, 20, 21, श्लो० में) चन्द्र और शनि के योग का फलादेश बतलाया गया है, जो वाराही संहिता में नहीं है। संयोग फल भ० सं० का महत्त्वपूर्ण है और यह एक नवीन प्रकरण है।

बृहस्पति चार का कथन भ० सं० के 17वें अध्याय और वा० सं० के 8वें अध्याय में आया है। निस्सन्देह भद्रबाहुसंहिता का यह प्रकरण फलादेश की दृष्टि से वाराही संहिता की अपेक्षा महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि विस्तार की दृष्टि से वाराही संहिता का प्रकरण भ० सं० की अपेक्षा बड़ा है। एक से निमित्तों का भी फलादेश समान नहीं है। उदाहरण के लिए कतिपय बार्हस्पति-संवत्सरों का फलादेश दोनों ग्रन्थों से उद्धृत किया जाता है—

माघमल्पोदकं विद्यात् फाल्गुने दुर्भगाः स्त्रियः।
चैत्रे चित्रं विजानीयात् सस्यं तोयं सरीसृपाः।।
विशाखा नृपभेदश्च पूर्णतोयं विनिर्दिशेत्।
ज्येष्ठा-मूले जलं पश्चाद् मित्र-भेदश्च जायते।।
आषाढे तोयसंकीर्णं सरीसृपसमाकुलम्।
श्रावणे दंष्ट्रिणश्चौरा व्यालाश्च प्रबलाः स्मृताः।।

—भ० सं०, 17 अ० 29-31

अर्थ—माघ नाम का वर्ष हो तो अल्प वर्षा होती है, फाल्गुन नाम का वर्ष

हो तो स्त्रियों का कुभाग्य बढ़ता है। चैत्र नाम के वर्ष में धान्य और जल-वृष्टि विचित्र रूप में होती है तथा सरीसृपों की वृद्धि होती है। वैशाख नामक संवत्सर में राजाओं में मतभेद होता है और जल की अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ नामक वर्ष में अच्छी वर्षा होती है और मित्रों में मतभेद बढ़ता है। आषाढ़ नामक वर्ष में जल की कमी होती है, पर कहीं-कहीं अच्छी वर्षा भी होती है। श्रावण नामक वर्ष में दाँत वाले जन्तु प्रबल होते हैं। भाद्र नामक संवत्सर में शस्त्रकोप, अग्नि-भय, मूर्च्छा आदि फल होते हैं और आश्विन नामक संवत्सर में सरीसृपों का अधिक भय रहता है।

वाराही संहिता में यही प्रकरण निम्न प्रकार मिलता है—

शुभकृज्जगतः पौषो निवृत्तवैराः परस्परं क्षितिपाः।
द्वित्रिगुणो धान्यार्घः पौष्टिककर्मप्रसिद्धिश्च॥
पितृपूजापरिवृद्धिर्माघे हार्दं च सर्वभूतानाम्।
आरोग्यवृष्टिधान्यार्घसम्पदो मित्रलाभश्च॥
फाल्गुने वर्षे विद्यात् क्वचित् क्वचित् क्षेमवृद्धिसस्यानि।
दौर्भाग्यं प्रमदानां प्रबलाश्चौरा नृपाश्चोग्राः॥
चैत्रे मन्दा वृष्टिः प्रियमन्नक्षेममवनिपा मृदवः।
वृद्धिस्तु कोशधान्यस्य भवति पीडा च रूपवताम्॥
वैशाखे धर्मपरा विगतभयाः प्रमुदिताः प्रजाः सनृपाः।
यज्ञक्रियाप्रवृत्तिनिष्पत्तिः सर्वसस्यानाम्॥

—वा० सं० 8 अ० 5-9 श्लो०

अर्थ—पौष नामक वर्ष में जगत् का शुभ होता है, राजा आपस में वैरभाव का त्याग कर देते हैं। अनाज की कीमत दूनी या तिगुनी हो जाती है और पौष्टिक कार्य की वृद्धि होती है। माघ नाम के वर्ष में पितृ लोगों की पूजा बढ़ती है, सर्व प्राणियों का हार्द होता है; आरोग्य, सुवृष्टि और धान्य का मोल सम रहता है, मित्रलाभ होता है। फल्गुन नाम वाले वर्ष में कहीं-कहीं क्षेम और अन्न की वृद्धि होती है, स्त्रियों का कुभाग्य, चोरों की प्रबलता और राजाओं में उग्रता होती है। चैत्र नाम के वर्ष में साधारण वृष्टि होती है, राजाओं में सन्धि, कोष और धान्य की वृद्धि और रूपवान् व्यक्तियों को पीड़ा होती है। वैशाख नामक वर्ष में राजा-प्रजा दोनों ही धर्म में तत्पर रहते हैं, भय शून्य और हर्षित होते है, यज्ञ करते हैं और समस्त धान्य भलीभाँति उत्पन्न होते हैं। (ज्येष्ठ नामक वर्ष में राजा लोग धर्मज्ञ और मेल-मिलाप से रहते हैं। आषाढ़ नामक वर्ष में समस्त धान्य पैदा होते हैं, कहीं-कहीं अनावृष्टि भी रहती है। श्रावण नामक वर्ष में अच्छी फसल पैदा होती है। भाद्रपद नामक वर्ष में लता जातीय समस्त पूर्व धान्य अच्छी तरह पैदा होते हैं

और आश्विन नामक वर्ष में अत्यन्त वर्षा होती है।)

तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर दोनों वर्णनों में बहुत अन्तर है। विषय एक होने पर भी फल-कथन करने की शैली भिन्न है। इसी अध्याय में गुरु की विभिन्न गतियों का फलादेश भी कहा गया है।

बुधचार भ० सं० के 18वें अध्याय और वा० सं० के 7वें अध्याय में आया है। भ० सं० के 18वें अध्याय के द्वितीय श्लोक में बुध की सौम्या, विमिश्रा, संक्षिप्ता, तीव्रा, घोरा, दुर्गा और पापा ये सात प्रकार की गतियाँ बतलायी गयी हैं। वा० सं० के 7वें श्लोक में बुध की प्रकृता, विमिश्रा, संक्षिप्ता, तीक्ष्णा, योगान्ता, घोरा और पापा इन गतियों का उल्लेख किया है। तुलना करने से ज्ञात होता है कि भ० सं० में जिसे सौम्या कहा है, उसी को वा० सं० में प्रकृता; जिसे भ० सं० में तीव्रा कहा है, उसे वा० सं० में तीक्ष्णा; भ० सं० में जिसे दुर्गा कहा है, उसे वा० सं० में योगान्ता कहा है। इन गतियों के फलादेशों में भी अन्तर है। वाराहमिहिर ने सभी प्रकार की गतियों की दिन संख्या भी बतलायी है, जब कि भ० सं० इस विषय पर मौन है। अस्त, उदय और वक्री आदि का कथन भ० सं० में कुछ अधिक है, जब कि वा० सं० में नाम मात्र को है।

अंगारकचार, राहुचार, केतुचार, सूर्यचार और चन्द्रचार विषयक वर्णनों की दोनों ग्रन्थों में बहुत कुछ समता है। कतिपय श्लोकों के भाव ज्यों-के-त्यों मिलते हैं।

भद्रबाहुसंहिता का अंगारकचार विस्तृत है, वाराहीसंहिता का संक्षिप्त। वर्णन प्रक्रिया में भी दोनों में अन्तर है। भद्रबाहुसंहिता (अ० 19; श्लोक 11) में मंगल के वक्री का कथन करते हुए कहा है कि मंगल के उष्ण, शोषमुख, व्याल, लोहित और लोहमुद्गर ये पाँच प्रधान वक्र हैं। ये वक्र मंगल के उदय नक्षत्रों की अपेक्षा से बताये गये हैं। वाराही संहिता में (अ० 6 श्लो० 1-5) उष्ण, अश्रुमुख, व्याल, रुधिरानन और असिमुसल इन वक्रों का उल्लेख किया है। इन वक्रों में पहले और तीसरे वक्र के नाम दोनों में एक हैं, शेष नाम भिन्न हैं। दूसरी बात यह है कि भ० सं० में सभी वक्र उदय नक्षत्र के अनुसार वर्णित हैं, किन्तु वाराही संहिता में व्याल, रुधिरानन और असिमुसल को अस्त नक्षत्रों के अनुसार बताया गया है। भ० सं० (19; 25-34) में कहा गया है कि कृत्तिकादि सात नक्षत्रों में मंगल गमन करे तो कष्ट; माघादि सात नक्षत्रों में विचरण करे तो भय, अनुराधादि सात नक्षत्रों में विचरण करे तो अनीति; धनिष्ठादि सात नक्षत्रों में विचरण करे तो निन्दित फल होता है। वा० सं० (6; 11-12) में बताया गया है कि रोहिणी, श्रवण, मूल, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद या ज्येष्ठा नक्षत्र में मंगल का विचरण हो तो मेघों का नाश एवं श्रवण, मघा, पुनर्वसु, मूल, हस्त, पूर्वाभाद्रपद, अश्विनी, विशाखा और रोहिणी नक्षत्र में विचरण करता है

तो शुभ होता है। इस प्रकार वाराही संहिता में समस्त नक्षत्रों पर मंगल के विचरण का फल नहीं, जबकि भद्रबाहु संहिता में है। भ० सं० (19;1) में प्रतिज्ञानुसार मंगल के चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति, काष्ठा, गति, फल, वक्र और अनुवक्र का फलादेश बताया गया है।

राहुचार का निरूपण भद्रबाहु संहिता के 20वें अध्याय में और वाराही संहिता के पाँचवें अध्याय में आया है। वाराही संहिता में यह प्रकरण खूब विस्तार के साथ दिया गया है, पर भद्रबाहु संहिता में संक्षिप्त रूप से आया है। भद्रबाहु संहिता (20; 2, 57) में राहु का श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के लिए शुभाशुभ निमित्तक माना गया है, पर वाराही संहिता (5; 53-57) में हरे रंग का राहु रोगसूचक; कपिल वर्ण का राहु म्लेच्छों का नाश एवं दुर्भिक्षसूचक; अरुण वर्ण का राहु दुर्भिक्षसूचक; कपोत, अरुण, कपिल वर्ण का राहु भयसूचक, पीत वर्ण का वैश्यों का नाशसूचक, दूर्वादल या हल्दी के समान वर्ण वाला राहु मरीसूचक एवं धूलि या लाल वर्ण का राहु क्षत्रियनाशक होता है। इस विवेचन से स्पष्ट है कि राहु के वर्ण का फल वाराही संहिता में अधिक व्यापक वर्णित है। वाराही संहिता के आरम्भिक 26-27 श्लोकों में जहाँ ग्रहण का ही कथन है, वहाँ भद्रबाहुसंहिता में आरम्भ से ही राहुनिमित्तों पर विचार किया गया है। वाराही संहिता (5; 42-52) में ग्रहण के ग्रास के सव्य, अपसव्य, लेह, ग्रसन, निरोध, अवमर्द, आरोह, आघ्रात, मध्यतम और तमोन्त्य ये दस भेद बताये हैं तथा इनका लक्षण और फलादेश भी कहा गया है। भद्रबाहु संहिता में ग्रहण का फल साधारण रूप से कहा गया है, विशेष रूप से तो राहु और चन्द्रमा की आकृति, रूप-रंग, चक्र-भंग आदि निमित्तों का ही वर्णन किया है। निमित्तों की दृष्टि से यह अध्याय वाराही संहिता के पाँचवें अध्याय की अपेक्षा अधिक उपयोगी है।

भद्रबाहु संहिता के 21वें अध्याय में और वाराही संहिता के 11वें अध्याय में केतुचार का वर्णन आया है। वाराही संहिता में केतुओं का वर्णन दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम इन तीन स्थूल भेदों के अनुसार किया गया है। केतुओं की विभिन्न संख्यायें इसमें आयी हैं। भद्रबाहुसंहिता में इस प्रकार का विस्तृत वर्णन नहीं आया है। भ० सं० (21; 6-7-18) में केतु की आकृति और वर्ण के अनुसार फलादेश बताया गया है। केतु का गमन कृत्तिका से लेकर भरणी तक दक्षिण, पश्चिम और उत्तर इन तीन दिशाओं में जानना चाहिए। नौ-नौ नक्षत्र तक केतु एक दिशा में गमन करता है। वाराही संहिता (11; 53-59) में बताया है कि केतु अश्विनी नक्षत्र का स्पर्श करे तो अश्मक देश का विनाश, भरणी में किरातपति, कृत्तिका में कलिंगराज, रोहिणी में शूरसेन, मृगशिरा में उशीनरराज, आर्द्रा में मत्स्यराज, पुनर्वसु में अश्मकनाथ, पुष्य में मगधाधिपति, आश्लेषा में असिकेश्वर,

मघा नक्षत्र में अंगराज, पूर्वाफाल्गुनी में पाण्ड्यनरपति, उत्तराफाल्गुनी में उज्जयिनी स्वामी, हस्त में दण्डाधिपति, चित्रा में कुरुक्षेत्रराज, स्वाति में काश्मीर, विशाखा में इक्ष्वाकु, अनुराधा में पुण्ड्रदेश, ज्येष्ठा में चक्रवर्ती का विनाश, मूल में मद्रराज, एवं पूर्वाषाढ़ा में काशीपति का विनाश होता है। इस प्रकार प्रत्येक नक्षत्र का फलादेश पृथक्-पृथक् रूप से बताया गया है। केतुओं में श्वेतकेतु और धूमकेतु का फल प्रायः दोनों ग्रन्थों में समान है।

भद्रबाहु संहिता के 22वें अध्याय में सूर्यचार का कथन है तथा यह प्रकरण वाराही संहिता के तीसरे अध्याय में आया है। भद्रबाहुसंहिता (22; 2) में बताया गया है कि अच्छी किरणों वाला, रजत के समान कान्तिवाला, स्फटिक के समान निर्मल, महान् कान्ति वाला सूर्य राजकल्याण और सुभिक्ष प्रदान करता है। वाराही संहिता (3; 40) में आया है कि निर्मल, गोलमण्डलाकार, दीर्घ निर्मल किरण वाला, विकाररहित शरीर वाला, चिह्न रहित मण्डलवाला जगत् का कल्याण करता है। दोनों की तुलना करने से दोनों में बहुत साम्य प्रतीत होता है। सूर्य के वर्ण का कथन करते समय कहा गया है कि अमुक वर्ण का सूर्य इष्ट या अनिष्ट करता है। इस प्रकरण में भद्रबाहुसंहिता (22; 3-4, 16-17) और वाराहीसंहिता (3; 25, 29, 30) में बहुत कुछ साम्य है। अन्तर इतना ही है कि वाराहीसंहिता में इस प्रकरण का विस्तार किया गया है, पर भद्रबाहु संहिता में संक्षेप रूप से ही कथन किया गया है।

चन्द्रचार का कथन भद्रबाहुसंहिता के 23वें अध्याय में और वाराहीसंहिता के चौथे अध्याय में आया है। भ० सं० (23; 3, 4) में चन्द्र शृंगोन्नति का जैसा विवेचन किया गया है, लगभग वैसा ही विवेचन वाराही संहिता (4; 16) में भी मिलता है। भद्रबाहुसंहिता (23; 15-16) में ह्रस्व, रूक्ष और काला चन्द्रमा भयोत्पादक तथा स्निग्ध, शुक्ल और सुन्दर चन्द्र सुखोत्पादक तथा समृद्धिकारक माना गया है। श्वेत, पीत, रक्त और कृष्ण वर्ण का चन्द्रमा क्रमशः ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिए सुखद माना गया है। सुन्दर चन्द्र सभी के लिए सुखदायक होता है। वाराही संहिता (4; 29-30) में बताया गया है कि भस्म-तुल्य रूखा, अरुण वर्ण, किरणहीन, श्यामवर्ण चन्द्रमा भयकारक एवं संग्राम-सूचक होता है। हिमकण, कुन्दपुष्प, स्फटिकमणि के समान चन्द्रमा जगत् का कल्याण करने वाला होता है। उपर्युक्त दोनों वर्णन तुल्य हैं। भद्रबाहुसंहिता में चन्द्र शृंगोन्नति का उतना विस्तार नहीं है, जितना विस्तार वाराही संहिता में है। तिथियों के अनुसार विकृत वर्ण के चन्द्रमा का जितना विस्तृत फलादेश भद्रबाहु संहिता (23; 9-14) में आया है, उतना वाराही संहिता में नहीं। इसी प्रकार चन्द्रमा में अन्य ग्रहों के प्रवेश का कथन भद्रबाहु संहिता (23; 17-19) में अपने ढंग का है। चन्द्रमा की वीथियों का कथन भ० सं० (22; 25-30) में है, यह

कथन वाराह के कथन से भिन्न है।

गृहयुद्ध की चर्चा भ० सं० के 24वें अध्याय में और वाराही संहिता के 17वें अध्याय में आयी है। इस विषय का निरूपण जितना विस्तार के साथ वाराही संहिता में आया है, उतना भद्रबाहु संहिता में नहीं। यद्यपि भद्रबाहु संहिता के इस प्रकरण में 43 श्लोक हैं और वाराही संहिता में 27 श्लोक; पर विषय का प्रतिपादन जितना जमकर वाराही संहिता में हुआ है, उतना भद्रबाहु संहिता में नहीं।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि भद्रबाहु संहिता विषय एवं भाषाशैली की दृष्टि उतनी व्यवस्थित नहीं है, जितनी वाराही संहिता। भद्रबाहु संहिता के दो-चार स्थल विस्तृत अवश्य हैं, पर एकाध स्थल ऐसे भी हैं, जो स्पष्ट नहीं हुए हैं, जहाँ कुछ और कहने की आवश्यकता रह गयी है। एक बात यह भी है कि भद्रबाहु संहिता में कथन की पुनरुक्ति भी पायी जाती है। छन्दोभंग, व्याकरणदोष, शिथिलता एवं विषय विवेचन में अक्रमता आदि दोष प्रचुर मात्रा में वर्तमान हैं। फिर भी इतना सत्य है कि निमित्तों का यह संकलन किन्हीं दृष्टियों से वाराही संहिता की अपेक्षा उत्कृष्ट है। स्वप्न निमित्त एवं यात्रा निमित्तों का वर्णन वाराही संहिता की अपेक्षा अच्छा है। इन निमित्तों में विषय सामग्री भी प्रचुर परिणाम में दी गयी है।

भद्रबाहु संहिता का ज्योतिष शास्त्र में महत्त्वपूर्ण स्थान माना जायगा। 'वसन्तराज शाकुन' और 'अद्भुत सागर' जैसे संकलित ग्रन्थ विषय विवेचन की दृष्टि से आज महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं। इन ग्रन्थों में निमित्तों का सांगोपांग विवेचन विद्यमान है। प्रस्तुत भद्रबाहु संहिता भी जितने अधिक विषयों का एक साथ परिचय प्रस्तुतत करती है, उतने अधिक विषयों से परिचित कराने वाले ग्रन्थ ज्योतिष शास्त्र में भरे पड़े हैं। फिर भी वाराही संहिता के अतिरिक्त ऐसा एक भी ग्रन्थ नहीं है, जिसे हम भद्रबाहुसंहिता की तुलना के लिए ले सकें। जैन-ज्योतिष के ग्रन्थ तो अभी बहुत ही कम उपलब्ध हैं और जो उपलब्ध भी हैं उनका भी प्रकाशन अभी शेष है। अतः जैन-ज्योतिष-साहित्य में इस ग्रन्थ की समता करने वाला कोई ग्रन्थ नहीं है। प्रश्नांग पर जैनाचार्यों ने बहुत कुछ लिखा है, पर अष्टांग निमित्त के सम्बन्ध में इस एक ही ग्रन्थ में बहुत लिखा गया है।

अष्टांग निमित्त का सांगोपांग वर्णन इसी अकेले ग्रन्थ में है। अभी इस ग्रन्थ का जितना भाग प्रकाशित किया जा रहा है, उतने में सभी निमित्त नहीं आते हैं। लक्षण और व्यंजन बिल्कुल छूटे हुए हैं। परन्तु इस ग्रन्थ के आद्योपान्त अवलोकन से ऐसा लगता है कि इसके अन्तर्गत ये दो निमित्त भी अवश्य रहे होंगे तथा वास्तु—प्रासाद, मूर्ति आदि के सम्बन्ध में भी प्रकाश डाला गया होगा। संक्षेप में हम इतना ही कह सकते हैं कि जैनेतर ज्योतिष में वाराही संहिता का जो स्थान

है, वही स्थान जैन-ज्योतिष में भद्रबाहुसंहिता का है। निमित्त ज्ञान के विषय को इतने विस्तार के साथ उपस्थित करना इसी ग्रन्थ का कार्य है।

भद्रबाहु संहिता के रचयिता और उनका समय

इस ग्रन्थ का रचयिता कौन है और इसकी रचना कब हुई है, यह अत्यन्त विचारणीय है। यह ग्रन्थ भद्रबाहु के नाम पर लिखा गया है, क्या सचमुच में द्वादशांगवाणी के ज्ञाता श्रुतकेवली भद्रबाहु इसके रचयिता हैं या उनके नाम पर यह रचना किसी दूसरे के द्वारा लिखी गयी है। परम्परा से यह बात प्रसिद्ध चली आ रही है कि भगवान वीतरागी, सर्वज्ञ भाषित निमित्तानुसार श्रुतकेवली भद्रबाहु ने किसी निमित्त शास्त्र की रचना की थी; किन्तु आज वह निमित्त शास्त्र उपलब्ध नहीं है। श्रुतकेवली भद्रबाहु वी० नि० सं० 155 में स्वर्गस्थ हुए, इनके ही शिष्य सम्राट् गुप्त थे। मगध में बारह वर्ष के पड़ने वाले दुष्काल को अपने निमित्त ज्ञान से जानकर ये संघ को दक्षिण भारत की ओर ले गये थे और वहीं इन्होंने समाधि ग्रहण की थी। अतः दिगम्बर जैन साधुओं की स्थिति बहुत समय तक दक्षिण भारत में रही। कुछ साधु उत्तर भारत में ही रह गये, समय दोष के कारण जब उनकी चर्या में बाधा आने लगी तो उन्होंने वस्त्र धारण कर लिये तथा अपने अनुकूल नियमों का भी निर्माण किया। दुष्काल के समाप्त होने पर जब मुनिसंघ दक्षिण से वापस लौटा, तो उसने यहाँ रहने वाले मुनियों की चर्या की भर्त्सना की तथा उन लोगों ने अपने आचरण के अनुकूल जिन ग्रन्थों की रचना की थी उन्हें अमान्य घोषित किया। इसी समय से श्वेताम्बर सम्प्रदाय का विकास हुआ। वे शिथिलाचारी मुनि ही वस्त्र धारण करने के कारण श्वेताम्बर सम्प्रदाय के प्रवर्तक हुए। भगवान् महावीर के समय में जैन सम्प्रदाय एक था; किन्तु भद्रबाहु के अनन्तर यह सम्प्रदाय दो टुकड़ों में विभक्त हो गया। उक्त भद्रबाहु श्रुतकेवली को ही निमित्तशास्त्र का ज्ञाता माना जाता है, क्या वही श्रुतकेवली इस ग्रन्थ के रचयिता हैं? इस ग्रन्थ को देखने से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि भद्रबाहु स्वामी इसके रचयिता नहीं हैं।

यद्यपि इस ग्रन्थ के आरम्भ में कहा गया है कि पाण्डुगिरि पर स्थित महात्मा, ज्ञान-विज्ञान के समुद्र, तपस्वी, कल्याणमूर्ति, रोगरहित, द्वादशांग श्रुत के वेत्ता, निर्ग्रन्थ, महाकान्ति से विभूषित, शिष्य-प्रशिष्यों से युक्त और तत्त्ववेदियों में निपुण आचार्य भद्रबाहु को सिर से नमस्कार कर उनसे निमित्तशास्त्र के उपदेश देने की प्रार्थना की।

तत्रासीनं महात्मानं ज्ञानविज्ञानसागरम्।
तपोयुक्तं च श्रेयांसं भद्रबाहुं निराश्रयम्॥
द्वादशांगस्य वेत्तारं नैर्ग्रन्थं च महाद्युतिम्।
वृतं शिष्यैः प्रशिष्यैश्च निपुणं तत्त्ववेदिनाम्॥
प्रणम्य शिरसाऽऽच ऊचुः शिष्यास्तदा गिरम्।
सर्वेषु प्रीतमनसो दिव्यज्ञानं बभुत्सवः॥
(भ० सं० अ० 1 श्लोक 5-7)

द्वितीय अध्याय के आरम्भ में बताया गया है कि शिष्यों के प्रश्न के पश्चात् भगवान् भद्रबाहु कहने लगे—

ततः प्रोवाच भगवान् दिग्वासाः श्रमणोत्तमः।
यथावस्थास्तु विन्यासं द्वादशांगविशारदः॥
भवद्भिर्यदहं पृष्टो निमित्तं जिनभाषितम्।
समासव्यासतः सर्वं तन्निबोध यथाविधि॥

इस कथन से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इसकी रचना श्रुतकेवली भद्रबाहु ने की होगी। परन्तु ग्रन्थ के आगे के हिस्से को देखने से निराशा होती है। इस ग्रन्थ के अनेक स्थानों पर 'भद्रबाहुवचो यथा' (अ० 3 श्लो० 64; अ० 6 श्लो० 17; अ० 7 श्लो० 19; अ० 9 श्लो० 26; अ० 10 श्लो० 16, 45, 53; अ० 11 श्लो० 26, 30; अ० 12 श्लो० 37; अ० 13 श्लो० 74, 100, 178; अ० 14 श्लो० 54, 136; अ० 15 श्लो० 37, 73, 128) लिखा मिलता है। इससे सहज में अनुमान किया जा सकता है कि यह रचना भद्रबाहु के वचनों के आधार पर किसी अन्य विद्वान् ने लिखी है। इस ग्रन्थ के पुष्पिका वाक्यों में 'भद्रबाहुके निमित्ते', 'भद्रबाहुसंहितायां', 'भद्रबाहु निमित्तशास्त्रे' लिखा मिलता है। ग्रन्थ की उत्थानिका में जो श्लोक आये हैं, उनसे निम्न प्रकाश पड़ता है—

1. इस ग्रन्थ की रचना मगध देश के राजगृह नामक नगर के निकटवर्ती पाण्डुगिरि पर राजा सेनजित् के राज्यकाल में हुई होगी।

2. यह ग्रन्थ सर्वज्ञ कथित वचनों के आधार पर भद्रबाहु स्वामी ने अपने दिव्य ज्ञान के बल से लिखा।

3. राजा, भिक्षु, श्रावक एवं जन-साधारण के लिए इस ग्रन्थ की रचना की गयी।

4. इस ग्रन्थ के रचयिता भद्रबाहु स्वामी दिगम्बर आम्नाय के अनुयायी थे।

जिस प्रकार मनुस्मृति की रचना स्वयं मनु ने नहीं की है, बल्कि मनु के वचनों के आधार पर की गयी है; फिर भी वह मनु के नाम से प्रसिद्ध है तथा मनु के ही विचारों का प्रतिनिधित्व करती है। उस रचना में भी मनु के वचनों का

कथन मिलता है। इसी प्रकार भद्रबाहुसंहिता स्वयं भद्रबाहु की न होकर, भद्रबाहु के वचनों का प्रतिनिधित्व करती है।

ग्रन्थ की उत्थानिका में आये हुए सिद्धान्तों पर विचार करने से ज्ञात होता है कि उत्थानिका के कथन में ऐतिहासिक दृष्टि से विरोध आता है। भद्रबाहु स्वामी चन्द्रगुप्त मौर्य के समय में हुए, जब कि मगध की राजधानी पाटलिपुत्र में थी। सेनजित् या प्रसेनजित् महाराज श्रेणिक या बिम्बसार के पिता थे। इनके समय में और चन्द्रगुप्त के समय में लगभग 140 वर्षों का अन्तराल है, अत: श्रुतकेवली भद्रबाहु तो इस ग्रन्थ के रचयिता नहीं हो सकते हैं। हाँ, उनके वचनों के अनुसार किसी अन्य विद्वान् ने इस ग्रन्थ की रचना की होगी।

'जैन साहित्य का संक्षिप्त इतिहास' में देसाई ने इस ग्रन्थ का रचयिता वराहमिहिर के भाई भद्रबाहु को माना है। जिस प्रकार वराहमिहिर ने बृहत्संहिता या वाराही संहिता की रचना की, उसी प्रकार भद्रबाहु ने भद्रबाहुसंहिता की रचना की होगी। वराहमिहिर और भद्रबाहु का सम्बन्ध राजशेखरकृत प्रबन्धकोष (चतुर्विंशतिप्रबन्ध) से भी सिद्ध होता है। यह अनुमान स्वाभाविक रूप से संभव है कि प्रसिद्ध ज्योतिषी वराहमिहिर के भाई भद्रबाहु भी ज्योतिर्ज्ञानी रहे होंगे। कहा जाता है कि वराहमिहिर के पिता भी अच्छे ज्योतिषी थे। बृहज्जातक में स्वयं वराहमिहिर ने बताया है कि कालपी नगर में सूर्य से वर प्राप्त कर अपने पिता आदित्यदास से ज्योतिषशास्त्र की शिक्षा प्राप्त की। इससे सिद्ध है कि इनके वंश में ज्योतिषशास्त्र के पठन-पाठन का प्रचार था और यह इनकी विद्या वंशगत थी। अत: इनके भाई भद्रबाहु द्वारा रचित कोई ज्योतिष ग्रन्थ हो सकता है। पर यह सत्य है कि यह भद्रबाहु श्रुतकेवली भद्रबाहु से भिन्न हैं। इनका समय भी श्रुतकेवली भद्रबाहु से सैकड़ों वर्ष बाद का है।

श्री पं० जुगलकिशोर मुख्तार ने ग्रन्थपरीक्षा द्वितीय भाग में इस ग्रन्थ के अनेक उद्धरण देकर तथा उन उद्धरणों की पारस्परिक असम्बद्धता दिखलाकर यह सिद्ध किया है कि यह ग्रन्थ भद्रबाहु श्रुतकेवली का बनाया हुआ न होकर इधर-उधर के प्रकरणों का बेढंगा संग्रह है। उन्होंने अपने वक्तव्य का निष्कर्ष निकालते हुए लिखा है—"यह खण्डत्रयात्मक ग्रन्थ (भद्रबाहुसंहिता) भद्रबाहु श्रुतकेवली का बनाया हुआ नहीं है, न उनके किसी शिष्य-प्रशिष्य का बनाया हुआ है और न विक्रम सं० 1657 के पहले का बनाया हुआ है, बल्कि उक्त संवत् के पीछे का बनाया हुआ है।" मुख्तार साहब का अनुमान है कि ग्वालियर के भट्टारक धर्मभूषणजी की कृपा का यह एकमात्र फल है। उनका अभिमत है, "वही उस समय इस ग्रन्थ के सर्व सत्त्वाधिकारी थे। उन्होंने वामदेव सरीखे अपने किसी कृपापात्र या आत्मीयजन के द्वारा इसे तैयार कराया है अथवा उसकी सहायता से स्वयं तैयार किया है। तैयार हो जाने पर जब इसके दो-चार अध्याय किसी को पढ़ने

के लिए दिये गये और वे किसी कारण से वापस न मिल सके तब वामदेवजी को दुबारा उनके लिए परिश्रम करना पड़ा। जिसके लिए प्रशस्ति का यह वाक्य 'पवि वामदेवजी फेर शुद्ध करि लिखी तैयार करी' खासतौर से ध्यान देने योग्य है और इस बात को सूचित करता है कि उक्त अध्यायों को पहले भी वामदेव जी ने ही तैयार किया था। मालूम होता है कि लेखक ज्ञानभूषणजी धर्मभूषण भट्टारक के परिचित व्यक्तियों में से थे और आश्चर्य नहीं कि वे उनके शिष्यों में भी थे। उनके द्वारा खास तौर से यह प्रति लिखवायी गयी है।"

श्रद्धेय मुख्तार साहब के उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट है कि उनकी दृष्टि में यह ग्रन्थ 17वीं शताब्दी का है तथा इसके लेखक ग्वालियर के भट्टारक धर्मभूषण या उनके कोई शिष्य हैं। मुख्तार साहब ने अपने कथन की पुष्टि के लिए इस ग्रन्थ के जितने भी उद्धरण लिये हैं, वे सभी उद्धरण इस ग्रन्थ के प्रस्तुत 27 अध्यायों के बाहर के हैं। 30वाँ अध्याय जो परिशिष्ट में दिया गया है, इससे उस अध्याय की रचना-तिथि पर प्रकाश पड़ता है। इस अध्याय के आरम्भ में 10वें श्लोक में बताया गया है

पूर्वाचार्यैर्यथा प्रोक्तं दुर्गाद्येलादिभिर्यथा।
गृहीत्वा तदभिप्रायं तथारिष्टं वदाम्यहम्॥

इस श्लोक में दुर्गाचार्य और एलाचार्य के कथन के अनुसार अरिष्टों के वर्णन की बात कही गयी है। दुर्गाचार्य का 'रिष्टसमुच्चय' नामक एक ग्रन्थ उपलब्ध है। इस ग्रन्थ की रचना लक्ष्मीनिवास राजा के राज्य में कुम्भनगर नामक पहाड़ी नगर के शान्तिनाथ चैत्यालय में की गई है। इसका रचनाकाल 21 जुलाई शुक्रवार ईस्वी सन् 1032 में माना गया है। इस ग्रन्थ में 261 गाथाएँ हैं, जिनका भाव इस तीसवें अध्याय में ज्यों-का-त्यों दिया गया है। अन्तर इतना ही है कि रिष्टसमुच्चय का कथन व्यवस्थित, क्रमबद्ध और प्रभावक है, किन्तु इस अध्याय की निरूपण शैली शिथिल, अक्रमिक और अव्यवस्थित है। विषय दोनों का समान है। इस अध्याय के अन्त में कतिपय श्लोक वाराही संहिता के वस्त्रच्छेद नामक 71वें अध्याय से ज्यों-के-त्यों उद्धृत हैं। केवल श्लोकों के क्रम में व्यतिक्रम कर दिया गया है। अतः यह सत्य है कि भद्रबाहुसंहिता के सभी प्रकरण एक साथ नहीं लिखे गये।

समग्र भद्रबाहुसंहिता में तीन खण्ड हैं। प्रथम खण्ड में दस अध्याय हैं, जिनके नाम हैं चतुर्वर्ण नित्यक्रिया, क्षत्रिय नित्यकर्म, क्षत्रियधर्म, कृतिसंग्रह, सीमा-निर्णय, दण्डपारुष्य, स्तेयकर्म, स्त्रीसंग्रहण, दायभाग और प्रायश्चित्त। इन दसों अध्याय के विषय मनुस्मृति आदि ग्रन्थों के आधार में लिखे गये हैं। कतिपय पद्य तो ज्यों-के-त्यों मिल जाते हैं और कतिपय कुछ परिवर्तन करके ले लिये गये

हैं। यह समस्त खण्ड नकल किया गया-सा मालूम होता है।

दूसरे खण्ड को ज्योतिष और तीसरे को निमित्त कहा गया है। परन्तु इन दोनों अध्यायों के विषय आपस में इतने अधिक सम्बद्ध हैं कि उनका यह भेद उचित प्रतीत नहीं होता है। दूसरे खण्ड के 25 अध्याय, जिनमें उल्का, विद्युत्, गन्धर्वनगर आदि निमित्तों का वर्णन किया गया है, निश्चयतः प्राचीन हैं। छब्बीसवें अध्याय में स्वप्नों का निरूपण किया गया है। इस अध्याय के आरम्भ में मंगलाचरण भी किया गया है।

नमस्कृत्य महावीरं सुरासुरजनैर्नतम्।
स्वप्नाध्यायं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभसमीरितम्॥

देव और दानवों के द्वारा नमस्कार किये गये भगवान् महावीर को नमस्कार कर शुभाशुभ से युक्त स्वप्नाध्याय का वर्णन करता हूँ।

इससे ज्ञात होता है कि यह अध्याय पूर्व के 24 अध्यायों की रचना के बाद लिखा गया है और इसका रचनाकाल पूर्व अध्याय के रचनाकाल के बाद का होगा।

मुख्तार साहब ने तृतीय खण्ड के श्लोकों की समता मुहूर्त चिन्तामणि, पाराशरी, नीलकण्ठी आदि ग्रन्थों से दिखलायी है और सिद्ध किया है कि इस खण्ड का विषय नया नहीं है, संग्रहकर्ता ने उक्त ग्रन्थों से श्लोक लेकर तथा उन श्लोकों में जहाँ-तहाँ शुद्ध या अशुद्ध रूप में परिवर्तन करके अव्यवस्थित रूप में संकलन किया है। अतः मुख्तार साहब ने इस ग्रन्थ का रचना काल 17वीं शताब्दी माना है।

इस ग्रन्थ के रचना-काल के सम्बन्ध में मुनि जिनविजयजी ने सिन्धी जैन ग्रन्थ माला से प्रकाशित भद्रबाहुसंहिता के किञ्चित् प्रास्ताविक में लिखा है - "ते विषे म्हारो अभिप्राय जरा जुदो छे हुं एने पंदरमी सदीनी पछीनो रचना नथी समजतो ओछामाँ ओछी 12मी सदी जेटली जूनी तो ए कृति छेज, एवो म्हारो साधार अभिमत थाय छे, म्हारा अनुमाननो आधार ए प्रमाणे छे— पाटणना वाडी पार्श्वनाथ भण्डार मांथी जे प्रति म्हने मली छे ते जिनभद्र सूरिना समयमां - एटले के वि० सं० 1475-85 ना अरसामां लखाएली छे, एम हुं मानुं छुं कारण के ए प्रतिमा आकार-प्रकार, लखाण, पत्रांक आदि बधा संकेतो जिनभद्रसूरिए लखावेला सेंकडो ग्रन्थ तो तद्दन मलता अनेतेज स्वरूपता छे, जेम म्हें 'विज्ञप्ति त्रिवेणि, नी म्हारी प्रस्तावनामां जणाव्युं छे तेम जिनभद्र सूरिए खंभात, पाटण, जैसलमेर आदि स्थानोमां म्होटा ग्रन्थ-भण्डारो स्थापन कर्या हतां अने तेनां, तेमणे नष्ट थतां जुनां एवां सेंकडो ताडपत्रीय पुस्तकोनी प्रतिलिपिओ कागल उपर उतरावी-उतरावी ने नूतन पुस्तकोनो संग्रह कर्यो हतो, ए भंडारमांथी मलेली

भद्रबाहु संहितानी उक्त प्रति पण एज रीते कोई प्राचीन ताडपत्रनी प्रतिलिपि रूपे उतारेली छे, कारण के, ए प्रतिमां ठेकठेकाणे एवी केटलीय पंक्तिओ दृष्टिगोचर थाय छे, जेमां लहियाए पोताने मलली आदर्श प्रतिमां उपलब्ध थता खंडित के त्रुटित शब्दो अने वाक्यो माटे, पाछलथी कोई तेनी पूर्ति करी शके ते सारू ''' आ जातनी अक्षरविहीन मात्र शिरोरेखाओ दोरी मुकेली छे, एनो अर्थ ए छे के ए प्रतिना लहियाने जे ताडपत्रीय प्रति मलीहती ते विशेष जीर्ण थएली होवी जोईए अने तेमां ते ते स्थलना लखाणना अक्षरो, ताडपत्रोनो किनारो खरी पडवाथी नता रहेला के भूंसाई गएला होवा जोईए-ए उपरथी एवुं अनुमान सहेजे करी शकाय के ते जूनी ताडपत्रीय प्रति पण ठीक-ठीक अवस्थाए पहोंची गएली होवी जोईए, आ रीते जिनभद्र सूरिना समयमां जो ए प्रति 300-400 वर्षों जेटली जूनी होय --अने ते होवानो विशेष संभव छेज—तो सहेजे ते मूल प्रति विक्रमना 11मा 12मा सैका जेटली जूनी होई शके। पाटण अने जेसलमेरना जूना भंडारोमां आवी जातनी जीर्ण-शीर्ण थएली ताडपत्रीय प्रतियो तेमज तेमना उपरथी उतारवामां आवेली कागलनी सेंकडो प्रतियो म्हारा जोवामां आवीछे।''

इस लम्बे कथन से आप ने यह निष्कर्ष निकाला है कि भद्रबाहुसंहिता का रचनाकाल 11-12 शताब्दी से अर्वाचीन नहीं है। यह ग्रन्थ इससे प्राचीन ही होगा। मुनिजी का अनुमान है कि इस ग्रन्थ का प्रचार जैन साधुओं और गृहस्थों में अधिक रहा है, इसी कारण इसके पाठान्तर अधिक मिलते हैं। इसके रचयिता कोई प्राचीन जैनाचार्य हैं, जो भद्रबाहु से भिन्न हैं। मूल ग्रन्थ प्राकृत भाषा में लिखा गया था, पर किसी कारण वश आज यह ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। यत्र-तत्र प्राप्त मौखिक या लिपिबद्ध रूप में प्राचीन गाथाओं को लेकर उनका संस्कृत रूपान्तर कर दिया है। जिन विषयों के प्राचीन उद्धरण नहीं मिल सके, उन्हें वाराही संहिता, मुहूर्त चिन्तामणि आदि ग्रन्थों से लेकर किसी भट्टारक या यति ने संकलित कर दिया।

श्री मुख्तार साहब, मुनिश्री जिनविजय जी तथा प्रो० अमृतलाल सावचंद गोपाणी आदि महानुभावों के कथनों पर विचार करने तथा उपलब्ध ग्रंथ के अवलोकन से हमारा अपना मत यह है कि इस ग्रन्थ का विषय, रचना शैली और वर्णनक्रम वाराही संहिता से प्राचीन है। उसका प्रकरण में वाराहीसंहिता की अपेक्षा नवीनता है और यह नवीनता ही प्राचीनता का संकेत करती है। अतः इसका संकलन, कम से कम आरम्भ के 25 अध्यायों का, किसी व्यक्ति ने प्राचीन गाथाओं के आधार पर किया होगा। बहुत संभव है कि भद्रबाहु स्वामी की कोई रचना इस प्रकार की रही होगी, जिसका प्रतिपाद्य विषय निमित्तशास्त्र है। अतएव मनुस्मृति के समान भद्रबाहु संहिता का संकलन भी किसी भाषा तथा विषय की दृष्टि से अव्युत्पन्न व्यक्ति ने किया है। निमित्तशास्त्र के महाविद्वान् भद्रबाहु

की मूल कृति आज उपलब्ध नहीं है, पर उनके वचनों का कुछ सार अवश्य विद्यमान है। इस रचना का संकलन 8-9वीं शती में अवश्य हुआ होगा।

हाँ, यह सत्य है कि इस ग्रन्थ में प्रक्षिप्त अंश अधिक बढ़ते गये हैं। इनका प्रथम खण्ड भी पीछे से जोड़ा गया है तथा इसमें उत्तरोत्तर परिवर्द्धन और संवर्द्धन किया जाता रहा है। द्वितीय खण्ड का स्वप्नाध्याय भी अर्वाचीन है तथा इसमें 28, 29 और 30 वें अध्याय तो और भी अर्वाचीन हैं। अतएव यह स्वीकार करने में किसी भी प्रकार का संकोच नहीं है कि इस ग्रन्थ का प्रणयन एक समय पर नहीं हुआ है. विभिन्न समय पर विभिन्न विद्वानों ने इस ग्रन्थ के कलेवर को बढ़ाने की चेष्टा की है। "भद्रबाहुवचो यथा" का प्रयोग प्रमुख रूप से 15वें अध्याय तक ही मिलता है। इसके आगे इस वाक्य का प्रयोग बहुत कम हुआ है, इससे भी पता चलता है कि संभवतः 15 अध्याय प्राचीन भद्रबाहु संहिता के आधार पर लिखे गये होंगे। और संहिता ग्रन्थों की परम्परा में रखने के लिए या इसे वाराही संहिता के समान उपयोगी और ग्राह्य बनाने के लिए, आगे वाले अध्यायों का कलेवर बढ़ाया जाता रहा है। श्री मुख्तार साहब ने जो अनुमान लगाया है कि ग्वालियर के भट्टारक धर्मभूषण जी की कृपा का यह फल है तथा वामदेव ने या उनके अन्य किसी शिष्य ने यह ग्रन्थ बनाया है, वह पूर्णतया सही तो नहीं है। इस अनुमान में इतना अंश तथ्य है कि कुछ अध्याय उन लोगों की कृपा से जोड़े गये होंगे या परिवर्द्धित हुए होंगे। इस ग्रन्थ के 15 अध्याय तो निश्चयतः प्राचीन हैं और ये भद्रबाहु के वचनों के आधार पर ही लिखे गये हैं। शैली और क्रम 25 अध्यायों तक एक-सा है, अतः 25 अध्यायों को प्राचीन माना जा सकता है।

भद्रबाहुसंहिता का प्रचार जैन सम्प्रदाय में इतना अधिक था, जिससे यह श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही सम्प्रदायों में समान रूप से समादृत थी। इसकी प्रतियाँ पूना, पाटण, बम्बई, हेमचन्द्राचार्य जैन ज्ञान मन्दिर पाटण, जैन सिद्धान्त भवन आरा आदि विभिन्न स्थानों पर पायी जाती हैं। पूना की प्रति में 26वें अध्याय के अन्त में वि० सं० 1504 लिखा हुआ है और समस्त उपलब्ध प्रतियों में यही प्रति प्राचीन है। अतः इस सत्य से कोई इनकार नहीं कर सकता है कि इसकी रचना वि० सं० 1504 से पहले हो चुकी थी। श्री मुख्तार साहब का अनुमान इस लिपिकाल से खंडित हो जाता है और इन 26 अध्यायों की रचना ईस्वी सन् की पन्द्रहवीं शती के पहले हो चुकी थी। इस ग्रन्थ के अत्यधिक प्रचार का एक सबल प्रमाण यह भी है कि इसके पाठान्तर इतने अधिक मिलते हैं, जिससे इसके निश्चित स्वरूप के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। जैन सिद्धान्त भवन आरा की दोनों प्रतियों में भी पर्याप्त पाठ-भेद मिलता है। अतः इस ग्रन्थ को सर्वथा भ्रष्ट या कल्पित मानना अनुचित होगा। इसका प्रचार इतना अधिक रहा है, जिससे रामायण और महाभारत के समान इसमें प्रक्षिप्त अंशों की भी

बहुलता है। इन्हीं प्रक्षिप्त अंशों ने इस ग्रन्थ की मौलिकता को तिरोहित कर दिया है। अतः यह भद्रबाहु के वचनों के अनुसार उनके किसी शिष्य या प्रशिष्य अथवा परम्परा के किसी अन्य दिगम्बर विद्वान् द्वारा लिखा गया ग्रन्थ है। इसके आरम्भ के 25 अध्याय और विशेषतः 15 अध्याय पर्याप्त प्राचीन हैं। यह भी सम्भव है कि इनकी रचना वराह-मिहिर के पहले भी हुई हो।

भाषा की दृष्टि से यह ग्रन्थ अत्यन्त सरल है। व्याकरण सम्मत भाषा के प्रयोगों की अवहेलना की गई है। छन्दोभंग तो लगभग 300 श्लोकों में है। प्रत्येक अध्याय में कुछ पद्य ऐसे अवश्य हैं जिनमें छन्दोभंग दोष है। व्याकरण दोष लगभग 125 पद्यों में विद्यमान है। इन दोषों का प्रधान कारण यह है कि ज्योतिष और वैद्यक विषय के ग्रन्थों में प्रायः भाषा सम्बन्धी शिथिलता रह जाती है। वाराही संहिता जैसे श्रेष्ठ ग्रन्थ में व्याकरण और छन्द दोष हैं, पर भद्रबाहु संहिता की अपेक्षा कम।

सम्पादन और अनुवाद

इस ग्रन्थ का सम्पादन 'सिन्धी जैन ग्रन्थ माला' में मुद्रित प्रति तथा जैन सिद्धान्त भवन आरा की दो हस्तलिखित प्रतियों के आधार पर हुआ है। एक प्रति पूज्य आचार्य महावीरकीर्त्ति जी से भी प्राप्त हुई थी। मुद्रित प्रति में और जैन सिद्धान्त भवन की प्रतियों में बहुत अन्तर था। कई श्लोक भवन की प्रतियों में मुद्रित प्रति की अपेक्षा अधिक निकले। भवन की दोनों प्रतियाँ भी आपस में भिन्न थीं तथा आचार्य महावीरकीर्त्ति जी की हस्तलिखित प्रति भवन की प्रतियों की अपेक्षा कुछ भिन्न तथा मुद्रित प्रति में उल्लिखित बम्बई की प्रति से बहुत कुछ अंशों में समान थी। प्रस्तुत संस्करण में भवन की ख/174 प्रति का पाठ ही रखा गया है। अवशेष प्रतियों के पाठान्तरों को पाद टिप्पणी में रखा गया है। प्रस्तुत प्रति में मुद्रित प्रति की अपेक्षा अनेक विशेषताएँ हैं। कुछ पाठान्तर तो इतने अच्छे हैं, जिससे प्रकरणगत अर्थ स्पष्ट होता है और विषय का विवेचन भी स्पष्ट हो जाता है। हमने मु० के द्वारा मुद्रित प्रति के पाठ को सूचित किया है। मु० A से हमारा संकेत यह है कि आचार्य महावीरकीर्त्ति जी की प्रति में वह पाठ मिलता है। आचार्य महावीरकीर्त्ति की प्रति उनके हाथ से स्वयं कहीं से प्रतिलिपि की गयी थी और उसमें अनेक स्थलों पर बगल में पाठान्तर भी दिये गये थे। यह प्रति हमें 15 अध्याय तक मिली तथा इसके आगे एक दूसरे रजिस्टर में 30वाँ अध्याय और एक पृथक् रजिस्टर में कुछ फुटकर शकुन और निमित्त सम्बन्धी श्लोक लिखे थे। फुटकर श्लोकों में अध्याय का संकेत नहीं किया गया था, अतः हमने उन श्लोकों को इस ग्रन्थ में स्थान नहीं दिया। 30वें अध्याय को परिशिष्ट के रूप में दिया गया है। उपयोगी विषय होने के कारण इस अध्याय को भी अनुवाद सहित दिया

जा रहा है।

जिस प्रति का पाठ इस ग्रन्थ में रखा गया है, उसके मात्र 27 अध्याय ही हमें उपलब्ध हुए हैं। भवन की दूसरी प्रति में 26 अध्याय हैं। दोनों ही प्रतियों के देखने से ऐसा लगता है कि इनकी प्रतिलिपि विभिन्न प्रतियों से की गयी है। ग्रन्थ समाप्ति सूचक कोई चिह्न या पुष्पिका नहीं दी गयी है, अतः प्रतिलिपि-काल की जानकारी नहीं हो सकी।

अनुवाद के पश्चात् प्रत्येक अध्याय के अन्त में विवेचन लिखा गया है। विवेचन में वाराही संहिता, अद्भुतसागर, वसन्तराज शाकुन, मुहूर्त्तगणपति, वर्षप्रबोध, बृहत्पाराशरी, रिष्टसमुच्चय, केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणि, नरपतिजयचर्या, भविष्यज्ञान ज्योतिष, एवरीडे एस्ट्रोलाजी, केवलज्ञानहोरा, आयज्ञानतिलक, ज्योतिषसिद्धान्तसार संग्रह, जातक कोडपत्र, चन्द्रोन्मीलनप्रश्न, ज्ञानप्रदीपिका, दैवज्ञकामधेनु, ऋषिपुत्रनिमित्तशास्त्र, बृहद्ज्योतिषार्णव, भुवनदीपक एवं विद्यामाधवीय का आधार लिया गया है। विवेचन में उद्धरण कहीं से भी उद्धृत नहीं किये हैं। अध्ययन के बल से विषय को पचाकर तत्-तत् प्रकरण में विषय से सम्बद्ध विवेचन लिखा गया है। विषय के स्पष्टीकरण की दृष्टि से ही यह विवेचन उपयोगी नहीं होगा, बल्कि विषय का सांगोपांग अध्ययन करने के लिए उपयोगी होगा। प्रत्येक प्रकरण पर उपलब्ध ज्योतिष ग्रन्थों के आधार पर निचोड़ रूप में विवेचन लिखा गया है। यद्यपि इस विवेचन को ग्रन्थ बढ़ जाने के भय से संक्षिप्त करने की पूरी चेष्टा की गयी है; फिर भी सैकड़ों ग्रन्थों का सार एक ही जगह प्रत्येक प्रकरण के अन्त में मिल जायगा। अन्य ज्योतिर्वेत्ताओं का उस प्रकरण के सम्बन्ध में जो नया विचार मिला है उसे भी विवेचन में रख दिया गया है। पाठक एक ही ग्रन्थ में उपलब्ध समस्त संहिताशास्त्र का सार मात्र प्राप्त कर सकेगा, ऐसा हमारा पूर्ण विश्वास है।

अनुवाद तथा विवेचन में समस्त पारिभाषिक शब्दों को स्पष्ट कर दिया गया है। पारिभाषिक शब्दों पर विवेचन भी लिखा गया है। अतः पृथक् पारिभाषिक शब्दसूची नहीं दी जा रही है। यतः शब्दसूची पुनरावृत्ति ही होगी।

अनुवाद में शब्दार्थ की अपेक्षा भाव को स्पष्ट करने की अधिक चेष्टा की गयी है। सम्बद्ध श्लोकों का अर्थ एक साथ लिखा गया है। इस ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद अभी तक नहीं हुआ तथा विषय की दृष्टि से इसका अनुवाद करना आवश्यक था। ज्योतिष विषयक निमित्तों की जानकारी के लिए इसका हिन्दी अनुवाद अधिक उपयोगी होगा। संहिताशास्त्र के समग्र विषयों की जानकारी इस एक ग्रन्थ से हो सकती है।

आत्म-निवेदन

भद्रबाहु संहिता का अनुवाद करने की बलवती इच्छा केवलज्ञान प्रश्नचूडामणि के अनुवाद के अनन्तर ही उत्पन्न हुई। सन् 1956 में इस कार्य को हाथ में लिया। जैन सिद्धान्त भवन, आरा की दोनों हस्तलिखित प्रतियों का मिलान मुद्रित प्रति से करने के पश्चात् यह निश्चय किया कि ख / 174 प्रति का पाठ अधिक उपयोगी है, अतः इसे ही मूल पाठ मानकर अनुवाद कार्य किया जाय। इधर-उधर के अनेक व्यासंगों के कारण कार्य मन्थर गति से चलता रहा। हाँ, सदा की प्रवृत्ति के अनुसार ग्रन्थ का कार्य समाप्त करके भारतीय ज्ञानपीठ के मन्त्री श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय की सेवा में इसे अवलोकनार्थ भेज दिया। उन्होंने अपनी कार्य प्रणाली के अनुसार ग्रन्थमाला के सम्पादक डॉ० हीरालाल जी जैन, निर्देशक प्राकृतिक जैन विद्यापीठ, मुजफ्फरपुर तथा डॉ० ए० एन० उपाध्ये कोल्हापुर के यहाँ इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि को भेज दिया। कुछ समय के पश्चात् डॉ० हीरालाल जी साहब का एक सूचना पत्र मिला और उनकी सूचनाओं के अनुसार संशोधन, परिवर्तन कर पुनः ग्रन्थ को ज्ञानपीठ भेज दिया।

मैं ग्रन्थमाला के सम्पादक उपर्युक्त डॉ० द्वय का अत्यन्त आभारी हूँ, जिन्होंने इस ग्रन्थ के प्रकाशन का अवसर तथा अपने बहुमूल्य सुझाव दिये। श्री अयोध्या प्रसाद जी गोयलीय, मन्त्री भारतीय ज्ञानपीठ, काशी का भी कृतज्ञ हूँ, जिनकी उत्साहवर्धक प्रेरणाएँ सर्वदा साहित्य-सेवा के लिए मिलती रहती हैं। परामर्श रूप में सहायता देने वाले विद्वानों में आचार्य श्री रामगोहनदास जी एम० ए० संस्कृत और प्राकृत विभागाध्यक्ष हरप्रसाद जैन कालेज, आरा; पं० लक्ष्मणजी त्रिपाठी व्याकरणाचार्य, राजकीय संस्कृत विद्यालय आरा, श्री प्रेमचन्द्र जैन साहित्याचार्य बी० ए० ह० दा० जैन स्कूल, आरा एवं श्री अमरचन्द तिवारी, आगरा प्रभृति विद्वानों का आभारी हूँ। प्रूफ-संशोधन श्री पं० महादेवी चतुर्वेदी व्याकरणाचार्य ने किया है। मैं आपका भी अत्यन्त आभारी हूँ।

श्री जैन सिद्धान्त भवन आरा के विशाल ग्रन्थागार से विवेचन लिखने के लिए सैकड़ों ग्रन्थों का उपयोग किया, अतः भवन का आभार स्वीकार करना परमावश्यक है।

प्रूफ में कई गल्तियाँ छूट गयी हैं, विज्ञ पाठक संशोधन कर लाभ उठायेंगे। इसमें प्रूफ संशोधन का दोष नहीं है; दोष मेरा है, यतः मेरी लिपि कुछ अस्पष्ट और अवाच्य होती है, जिससे प्रूफ सम्बन्धी त्रुटियाँ रह जाना आवश्यक है। सम्पादन, अनुवाद और विवेचन में प्रमाद एवं अज्ञानतावश अनेक त्रुटियाँ रह गयी होंगी, कृपालु पाठक उनके लिए क्षमा करेंगे। यह भद्रबाहु संहिता का प्रथम भाग ही है। अवशेष मिल जाने पर इसका द्वितीय भाग सानुवाद और सविवेचन प्रकाशि

किया जायगा। क्योंकि ज्योतिष और निमित्त शास्त्र की दृष्टि से यह ग्रन्थ उपयोगी है। जिन कृपालु पाठकों के पास या उनकी जानकारी में इसके अवशेष अध्याय हों, वे सूचित करने का कष्ट करेंगे।

हरप्रसाद दास जैन कालेज, आरा
संस्कृत एवं प्राकृत विभाग
11-10-1958

नेमिचन्द्र शास्त्री

विषयानुक्रम

पहला अध्याय

मंगलाचरण 1

रचना का उद्देश्य 1

प्रतिपाद्य विषयों की तालिका 3

विवेचन 4

दूसरा अध्याय

विकार का स्वरूप 16

उत्पात का स्वरूप 16

उल्काओं की उत्पत्ति, रूप, प्रमाण, फल और आकृति के वर्णन का निश्चय 16

उल्का का स्वरूप 17

उल्का के विकार 17

शुभ और अशुभ उल्काएँ 17

विवेचन 18

तीसरा अध्याय

उल्काओं द्वारा नक्षत्र-ताडन का फल 21

नील वर्ण, बिखरी हुई, सिंह-व्याघ्र आदि विभिन्न आकार की उल्काएँ 21

अग्रभाग आदि के अनुसार उल्काओं के गिरने का फल 22

स्नेहयुक्त एवं विचित्र वर्ण की उल्काओं का फल 23

विविध वर्ण और आकृति वाली उल्काओं का फल 23

विद्युत् संज्ञक उल्का और उसका फल 26

उल्का के गिरने का स्थानानुसार फल 27

राजभयसूचक उल्काएँ 27

स्थायी नागरिकों की भयसूचक उल्काएँ 27

अस्तकालीन उल्काओं का फल 28

प्रतिलोम मार्ग से जानेवाली उल्काओं का फल 28

विभिन्न मार्गों से गिरने वाली उल्काओं का सेना के लिए फल 29

जन्मनक्षत्र में बाणसदृश गिरने वाली उल्काओं का फल 30
अन्य शुभ-अशुभ उल्काएँ 31
विवेचन 32

चौथा अध्याय
परिवेष और उनके भेद 44
चन्द्र-परिवेष, विविध रूप एवं फल 45
सूर्य-परिवेष का फल 46
नक्षत्रों के अनुसार परिवेषों का फल 48
वर्षा और कृषि सम्बन्धी परिवेषों का फलादेश 48
परिवेषों का राष्ट्र सम्बन्धी फलादेश 50
विवेचन 51

पाँचवाँ अध्याय
विद्युत्-स्वरूप और प्रकार 63
विद्युत्-वर्णों का निरूपण एवं फलादेश 64
विद्युत्-मार्गों का कथन 65
विद्युत् के रूप-रंग, आकार तथा शब्द द्वारा वर्षा का निर्देश 65
विवेचन 68

छठा अध्याय
बादलों के प्रकार और वर्षा-फल 73
शुभ चिह्नों वाले बादल 74
संग्राम-सूचक बादल 76
राजा, युवराज, मंत्री के मरणसूचक बादल 76
सेना के युद्धस्थल से पराङ्मुख होने की सूचना देने वाले बादल 77
गर्जना सहित और गर्जना रहित बादलों का फल 77
मलिन तथा वर्ण रहित बादलों का दीप्ति दिशा में फल 77
नक्षत्र, ग्रह आदि के निमित्त से बादलों का फल 77
शीघ्रगामी बादलों का फल 78
विरागी, प्रतिलोम, अनुलोम गतिवाले बादलों का फल 78
नागरिक एवं शासन के अनुकूल, प्रतिकूल द्युति वाले बादल 78
विवेचन 79

सातवाँ अध्याय
सन्ध्याओं के लक्षण और निमित्तशास्त्र के तत्त्वों के अनुसार उनका फल 85
सन्ध्या की परिभाषा 86

स्निग्ध वर्ण की सन्ध्या का फल 87
तत्काल वर्षा-सूचक सन्ध्या 87
सन्ध्या में सूर्य-परिवेष का फल 87
सन्ध्या में सूर्य के मण्डलों का फल 87
सरोवर, तालाब, प्रतिमा, कूप, कुम्भ आदि सदृश स्निग्ध सन्ध्या का फल 88
राजभय-उत्पादक सन्ध्या 88
सन्ध्याकाल में बादलों की आकृति का फल 88
सन्ध्या-काल में विद्युत्-दर्शन का फल 89
विवेचन 89

आठवाँ अध्याय
मेघों के भेद 94
वर्षा के कारक मेघ 94
अच्छी वर्षा के सूचक मेघ 95
युद्ध और सन्धि के सूचक मेघ 96
युद्ध की सफलता और असफलता की सूचना देनेवाले मेघ 96
विभिन्न आकृतिवाले मेघों का फलादेश 97
तिथि-नक्षत्र, मुहूर्त आदि के अनुसार मेघ-फल 97
कुवर्ण, कटुकरस और दुर्गन्ध वाले मेघों का फल 98
अन्य प्रकार से शुभ-अशुभ सूचक मेघ 98
विवेचन 99

नौवाँ अध्याय
वायु के भेद 104
वायु द्वारा वर्षण, भय, क्षेम आदि 104
बलवती वायु 105
दिशा के अनुसार वायु का कथन 105
आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन विभिन्न दिशाओं की वायु के फलादेश 106
दिशाओं एवं विदिशाओं की वायु का संक्षिप्त फल 110
परस्पर घात कर बहने वाली वायुओं का फल 110
सव्य-अपसव्य वायुओं का फल 112
प्रदक्षिणा करती हुई बहने वाली वायु का फल 112
मध्याह्न और अर्धरात्रि के वायु प्रवाह का फल 112
राजा के प्रयाण के समय प्रतिलोम और अनुलोम वायुओं का फल 112
अशुभ वायु का फल 113

ऊर्ध्वगामी एवं क्रूर वायु का फल 113
शीघ्रगामी वायु का फल 113
दुर्गन्धित प्रतिलोम वायु का फल 113
सैन्य-वध एवं सैन्य-पराजय सूचक वायु 114
दिशा एवं विदिशा के अनुसार वायुफल 115
विवेचन 116

दसवाँ अध्याय

मूल नक्षत्र को बिताकर होने वाली वर्षा 122
पूर्वाषाढा एवं उत्तराषाढा नक्षत्र की प्रथम वर्षा 122
नक्षत्र-क्रम से प्रथम वर्षा का फल 122
श्रावण मास की प्रथम वर्षा का फल 129
विवेचन 130

ग्यारहवाँ अध्याय

गन्धर्वनगर के फलादेश कथन की प्रतिज्ञा 141
सूर्योदय कालीन गन्धर्वनगर का फल 142
वर्णों के अनुसार पूर्व दिशा के गन्धर्वनगर का फल 142
सभी दिशाओं के गन्धर्वनगर का फल 143
कपिलवर्ण के गन्धर्वनगर का फल 143
राज-विजयसूचक गन्धर्वनगर 143
विविध भयसूचक गन्धर्वनगर 143
पर-शासन के आक्रमण की सूचना देने वाले गन्धर्वनगर 144
दक्षिण की ओर गमन करने वाले गन्धर्वनगर का फल 144
प्रज्वलित गन्धर्वनगर की सूचना 144
राष्ट्र-विप्लव के सूचक गन्धर्वनगर 144
राजवृद्धि के सूचक गन्धर्वनगर 144
वर्षासूचक गन्धर्वनगर 145
अनेक वर्ण एवं आकार के गन्धर्वनगर 145
विवेचन 146

बारहवाँ अध्याय

मेघगर्भ कथन की प्रतिज्ञा 162
मेघों के गर्भधारण करने का समय 163
रात्रि और दिन के गर्भ का फल 163
पूर्व सन्ध्या और पश्चिम सन्ध्या के गर्भ का फल 163

मेघों के गर्भधारण के चिह्नों का कथन 163
मेघगर्भ के भेद और उनके द्वारा सूचना 164
मेघ के मास-गर्भ का फल 165
सौम्यगर्भ के मास और उनका फल 166
नक्षत्रों के अनुसार गर्भ का फल 167
विविध वर्ण एवं आकार के मेघगर्भ 167
विवेचन 169

तेरहवाँ अध्याय

राजयात्रा के वर्णन की प्रतिज्ञा 175
सफल एवं असफल यात्रिक के लक्षण 175
यात्रा करने की विधि 175
यात्रा में विचारणीय निमित्त 175
चतुरंग सेना में यात्राकालीन निमित्त 176
शनिश्चर की यात्रा का फल 176
सेनापति के वधसूचक यात्रा-शकुन 176
नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित रूप विष्कम्भ और उसके बिम्ब 177
नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित के लक्षण 177
योग्य नैमित्तिक आदि के होने से राजकार्य में सिद्धि 179
प्रयाण-काल में निमित्तों द्वारा शुभ-अशुभ योग का परिज्ञान 182
प्रयाणकालीन शुभ एवं अशुभ निमित्त 184
निन्दित यात्रा-सूचक निमित्त 186
सूर्य-नक्षत्रों एवं चन्द्र-नक्षत्रों के अनुसार यात्रा-फल 191
प्रयाण-काल में वायु-परिमाण का विचार 191
प्रयाण-काल में अनेक वस्तुओं के दर्शन के आधार पर शुभ-अशुभ विचार 193
द्विपदादि की विकृत ध्वनि का फल 193
प्रयाण के समय सेना में कलह या मतभेद से अशुभ फल 193
प्रयाण के समय मनुष्य, पशु-पक्षियों की आवाज पर विचार 195
युद्ध के उपकरण तथा सन्ध्याकालीन बादलों के विवर्ण होने का फल 196
मांसप्रिय पक्षियों के अवलोकन का फलादेश 196
विजातियों के मैथुन में विपरीत क्रिया का फलादेश 197
गमनकाल में घोड़ों के रंग, आकृति, स्वर एवं अन्य क्रियाओं में विकृति का विचार 198
गमनकाल में हाथी-घोड़ों के विभिन्न प्रकार के दर्शनों का फलादेश 201
विशेष स्थान के अनुसार फलादेश 203

प्रयाण के समय अन्य विचारणीय बातें	204
राज्य, धर्मान्तर, कार्यसिद्धि के निमित्तों का निरूपण	205
विवेचन	206

चौदहवाँ अध्याय

उत्पातों के निरूपण की प्रतिज्ञा	222
उत्पात का लक्षण और भेद	222
ऋतुओं के उत्पातों का फलादेश	223
पशु-पक्षियों के विपरीत आचरण का फल	223
विकृत सन्तानोत्पत्ति का फल	224
मद्य, रुधिर आदि बरसने का फल	224
सरीसृप, मेंढक आदि बरसने का फल	225
बिना ईंधन अग्नि के प्रज्वलित होने का फल	225
वृक्षों से रस चूने, गिरने, वस्त्रवेष्टित होने तथा अन्य प्रकार की विकृतियों का विचार	225
देवों के हँसने, रोने, नृत्य करने आदि का फल	229
नदियों के हँसने-रोने आदि प्रवृत्ति का विचार	229
अस्त्र-शस्त्रों के शब्दों का फल	230
बिना बजाये वादित्रों का फल	230
आकाश में अकारण घोर शब्द सुनने का फल	231
भूमि के अकारण निर्घातित होने तथा वृक्षों के अकारण हरे हो जाने का फल	231
चींटियों की क्रिया अनुसार फल-विचार	231
राजा के छत्र, चँवर, मुकुट आदि उपकरण तथा हाथी, घोड़ा आदि वाहनों के भंग होने का फल	232
असमय में पीपल के वृक्ष के पुष्पित होने का फल	232
इन्द्रधनुष के भंग आदि होने का फल	233
चन्द्रोत्पातों का फलादेश	233
शिव, बुद्ध आदि प्रतिमाओं एवं उपकरणों के उत्पातों का फल	234
सन्ध्याकाल में स्वप्न-दर्शन का फल	236
सूर्य के वर्ण के अनुसार फलादेश	237
चन्द्रोत्पात का विचार	238
ग्रहों के परस्पर भेदन का विचार	238
ग्रह-युद्ध और ग्रहोत्पात का कथन	238
देवों की हँसने, नर्तन आदि क्रियाओं का विचार	240

पृथ्वी के धंसने का फलादेश 241
धूलि, राख, अग्नि आदि बरसने का फलादेश 241
विभिन्न ग्रहों के प्रताड़ित मार्ग में विभिन्न ग्रहों के गमन का फल 242
निर्जीव पदार्थों के विकृत होने का फलादेश 243
पूजा आदि के स्वयमेव बन्द हो जाने आदि का विचार 243
वृक्षों की छाया आदि विकृतियों का विचार 244
चन्द्रशृंग एवं चन्द्रोल्कापातों का फलादेश 244
शिवलिंगों के विवाद आदि का फलादेश 245
मंगलकलश के अकारण विध्वंश का फल 246
नवीन वस्त्रों के अकारण जलने का फल 246
पक्षियों एवं सवारियों की विकृति का फल 246
घोड़ों के उत्पातों का फल 247
नक्षत्रों के उत्पात का फलादेश 250
उत्पात-शान्ति विचार 252
विवेचन 252

पन्द्रहवाँ अध्याय
ग्रहाचार के निरूपण की प्रतिज्ञा 263
शुक्र ग्रह का महत्त्व 264
शुक्र के उदय और अस्त का सामान्य कथन 264
शुक्र की किरणों के घातित होने का फलादेश 264
शुक्र के मण्डलों और नक्षत्रों के नाम और लक्षण एवं उनमें शुक्र के गमन का फल 265
शुक्र की नाग आदि वीथियों के नक्षत्र 270
शुक्र के वीथि-गमन का फल 271
कृत्तिका आदि नक्षत्रों के उत्तर एवं दक्षिण की ओर से शुक्र के गमन का फलादेश 271
वीथि-मार्ग 274
वार और नक्षत्रों के सहयोग से शुक्र-गमन का फल 274
सूर्य में शुक्र के विचरण का फल 275
तृतीयादि मण्डलों में शुक्र के विचरण का फल 275
कृत्तिकादि नक्षत्र तथा दक्षिण आदि दिशाओं में शुक्र के गमन का फलादेश 276
मघा आदि नक्षत्रों में मध्यम गति के शुक्र का फलादेश 276
वर्षासूचक शुक्र का गमन 277
प्रातःकाल पूर्व में शुक्र और अनुगामी बृहस्पति का फल 277

विभिन्न आकार के शुक्र का कृत्तिका आदि नक्षत्रों में गमन करने का फल 278
शुक्र के घात का फल 279
नक्षत्रों के आरोहण और भेदन करनेवाले शुक्र का फल 279
शुक्र के अस्तदिनों की संख्या 288
शुक्र के मार्गों का फलादेश 288
गज, ऐरावण आदि वीथिकाओं का फलादेश 289
शुक्र के विभिन्न वर्णों का फल 290
शुक्र के प्रवास और वक्र होने का फल 291
शुक्र के अतिचार 295
विवेचन 299

सोलहवाँ अध्याय

शनि-चार के वर्णन की प्रतिज्ञा 306
दक्षिण मार्ग में शनि के अस्त होने का काल-प्रमाण 306
शनि के दो, तीन, चार नक्षत्र-प्रमाण गमन करने का फल 307
उत्तरमार्ग में वर्ण के अनुसार शनि का फल 307
मध्यमार्ग में शनि के उदयास्त का फल 307
शनि के दक्षिणमार्ग में गमन का फल 307
शनि की नक्षत्र-प्रदक्षिणा के आधार पर जन्म-फल 308
शनि के अपसव्य मार्ग में गमन करने का फल 308
शनि पर चन्द्रपरिवेष का फल 308
चन्द्र और शनि के एक साथ होने का फल 309
शनि के वेध का फल 309
शनि के कृत्तिका पर होने का फल 309
शनि के विविध वर्णों का फल 309
शनि के युद्ध का फल 310
शनि के अस्तोदय का फल 310
विवेचन 310

सत्रहवाँ अध्याय

बृहस्पति (गुरु) के वर्ण, गति, आकार, मार्गी, उदयास्त के फलादेश वर्णन की प्रतिज्ञा 317
बृहस्पति के अशुभ मण्डल 317
बृहस्पति द्वारा कृत्तिका आदि के घात का फल 319
बृहस्पति द्वारा बायीं और दायीं ओर नक्षत्रों के अभिघातित होने का फल 323
बृहस्पति द्वारा चन्द्रमा की प्रदक्षिणा का फल 324

चन्द्रमा द्वारा बृहस्पति के आच्छादन का फल 324
विवेचन 325

अठारहवाँ अध्याय

बुध के प्रवास—अस्त, उदय, वर्ण और ग्रहयोग के वर्णन की प्रतिज्ञा 331
बुध की सात प्रकार की गतियाँ और उनका स्वभाव 331
बुध का नियतचार 332
वर्णानुसार बुध का फल 332
बुध की वीथियाँ और फलादेश 333
बुध की कान्ति का फल 333
अन्य ग्रह द्वारा बुध की दक्षिण-वीथि का भेदन 333
बुध की उत्तर-वीथि का भेदन 334
कृत्तिका, विशाखा आदि नक्षत्रों में बुध के गमन का फल 335
विवेचन 336

उन्नीसवाँ अध्याय

मंगल के चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति आदि के कथन की प्रतिज्ञा 339
मंगल के चार और प्रवास की काल-गणना 340
मंगल के शुभ और अशुभ का विचार 340
प्रजापति मंगल 340
ताम्रवर्ण के मंगल का फल 340
रोहिणी नक्षत्र पर मंगल की चेष्टा का फल 340
दक्षिण मंगल के सभी द्वारों का अवलोकन 341
मंगल के पाँच प्रमुख वक्र और उनका फल 341
वक्रगति से मंगल के गमन और नक्षत्रघात का फल 341
अपगति के गमन का फल 342
मंगल के वर्ण, कान्ति और स्पर्श का फल 345
विवेचन 345

बीसवाँ अध्याय

राहु-चार के कथन की प्रतिज्ञा 349
राहु की प्रकृति, विकृति आदि के अनुसार शुभाशुभ निमित्त 349
चन्द्रग्रहण का वर्णन 349
राशि तथा समय के अनुसार ग्रहण-फल 351
चन्द्रग्रहण का विभिन्न दृष्टियों से फल 351
चन्द्रग्रहण सम्बन्धी अन्य शकुन 356

विवेचन 358

इक्कीसवाँ अध्याय

केतु-वर्णन की प्रतिज्ञा 364
केतुओं के चिह्न 365
केतु का वर्ण के अनुसार फलादेश 365
विकृत केतु का फल 366
केतु की शिखा के अनुसार फलादेश 366
गुल्म, विक्रान्त, कबन्ध, मण्डली, मयूर, धूमकेतु 366
धूमकेतु का विशेष फल 367
केतूदय का फल 369
विपथ केतु का फल 370
स्वाति नक्षत्र में उदित केतु का फल 370
भय उत्पन्न करने वाले केतुओं के नाम 371
उत्पात नहीं करनेवाले केतु 372
केतु-शान्ति के पूजा-विधान की आवश्यकता 372
विवेचन 373

बाईसवाँ अध्याय

सूर्य-चार के कथन की प्रतिज्ञा 380
उदय-काल में सूर्य की कान्ति के अनुरूप फल 381
दिशाओं के अनुसार सूर्योदय काल की आकृति का फलादेश 381
शृंगी वर्ण के सूर्य का फलादेश 383
अस्तकालीन सूर्य का फल 383
चन्द्र और सूर्य के पर्वकाल का फल 383
विवेचन 384

तेईसवाँ अध्याय

चन्द्र-विचार और उसके शुभाशुभ निरूपण की प्रतिज्ञा 387
चन्द्रमा की शृंगोन्नति का विचार 387
चन्द्रमा की आभा और वर्ण विचार 387
चतुर्थी, पंचमी आदि तिथियों में चन्द्रमा की विकृति का फल 388
प्रतिपदा आदि तिथियों में चन्द्रमा में अन्य ग्रहों के प्रविष्ट होने का फल 389
चन्द्र-विध्वंस का फल 389
विभिन्न वीथियों और नक्षत्रों में विवर्ण चन्द्र के गमन करने का फल 391
वैश्वानर आदि मार्गों में चन्द्रमा के विभिन्न प्रकार का फल 392

चन्द्र द्वारा शनि, रवि आदि ग्रहों के घात का फल 393
क्षीण चन्द्रमा का फल 395
विवेचन 395

चौबीसवाँ अध्याय
ग्रहयुद्ध के वर्णन की प्रतिज्ञा 399
यायी संज्ञक ग्रह 399
जय-पराजय सूचक ग्रह 400
चन्द्रघात और राहुघात 400
शुक्रघात 401
ग्रहयुद्ध के समय होने वाले ग्रहवर्णों के अनुसार फलादेश 401
रोहिणी नक्षत्र के घातित होने का फल 403
ग्रहों की वात-पित्तादि प्रकृतियों का विचार 404
विवेचन 405

पच्चीसवाँ अध्याय
नक्षत्र और ग्रहों के निमित्तज्ञान की आवश्यकता 408
ग्रहों की आकृति, वर्ण और चिह्नों द्वारा तेजी-मन्दी का विचार 408
ग्रहों के प्रतिपुद्गल 409
नक्षत्रों के सम्बन्ध के अनुसार विभिन्न ग्रहों द्वारा तेजी-मन्दी एवं
हीनाधिकता का विचार 415
विवेचन 416

छब्बीसवाँ अध्याय
मंगलाचरण 430
स्वप्नदर्शन के कारण वात, पित्त और कफ प्रकृतिवालों द्वारा दृष्ट
स्वप्नों का फल 431
राज्यप्राप्तिसूचक स्वप्न 431
जयसूचक स्वप्न 433
विपत्तिमोचन-सूचक स्वप्न 433
धन-धान्यवृद्धि-सूचक स्वप्न 434
शस्त्रघात, पीड़ा तथा कष्टसूचक स्वप्न 435
स्त्रीप्राप्ति सूचक स्वप्न 435
मृत्युसूचक स्वप्न 436
कल्याण-अकल्याण सूचक स्वप्न 438
धन-प्राप्ति एवं धनवृद्धि सूचक स्वप्न 439

भद्रबाहुसंहिता

प्रथमोऽध्याय:

नमस्कृत्य जिनं वीरं सुरासुरनतक्रमम् ।
यस्य ज्ञानाम्बुधे: प्राप्य किञ्चिद् वक्ष्ये निमित्तकम्[1] ॥ 1 ॥

जिनके चरणों में सुर और असुर नम्रित हुए हैं, ऐसे श्री महावीर स्वामी को नमस्कार कर, उनके ज्ञानरूपी समुद्र के आश्रय से मैं निमित्तों का किञ्चित् वर्णन करता हूँ ॥ 1 ॥

मागधेषु पुरं ख्यातं नाम्ना राजगृहं शुभम् ।
नानाजनसमाकीर्णं[2] नानागुणविभूषितम् ॥ 2 ॥

मगध देश के नगरों में प्रसिद्ध राजगृह नाम का श्रेष्ठ नगर है, जो नाना प्रकार के मनुष्यों से व्याप्त और अनेक गुणों से युक्त है ॥ 2 ॥

तत्रास्ति सेनजिद् राजा युक्तो राजगुणै: शुभै: ।
तस्मिन् शैले सुविख्यातो नाम्ना पाण्डुगिरि: शुभ:[3] ॥ 3 ॥

राजगृह नगरी में राजाओं के उपयुक्त शुभ गुणों से सम्पन्न सेनजित् नाम का राजा है। तथा उस नगरी में (पाँच) पर्वतों में विख्यात पाण्डुगिरि नाम का श्रेष्ठ पर्वत है ॥ 3 ॥

नानावृक्षसमाकीर्णो नानाविहगसेवित: ।
चतुष्पदै: सरोभिश्च साधुभिश्चोपसेवित:[4] ॥ 4 ॥

यह पर्वत अनेक प्रकार के वृक्षों से व्याप्त है। अनेक पक्षियों का क्रीडास्थल है।

---

1. यह श्लोक मुद्रित प्रति में नहीं है। 2. समाकीर्णं मु०। 3. शुभम् मु०। 4. शोभित: आ०।

नाना प्रकार के पशुओं की विहारभूमि है, तालाबों से युक्त है और साधुओं से उपसेवित है ॥ 4 ॥

> तत्रासीनं महात्मानं[1] ज्ञानविज्ञानसागरम्[2] ।
> तपोयुक्तं च श्रेयांसं भद्रबाहुं निराश्रयम् ॥ 5 ॥
> द्वादशांगस्य वेत्तारं निर्ग्रन्थं च महाद्युतिम् ।
> वृतं शिष्यैः प्रशिष्यैश्च निपुणं तत्त्ववेदिनाम्[3] ॥ 6 ॥
> प्रणम्य [4]शिरसाऽऽचार्यमूचुः शिष्यास्तदा गिरम्[5] ।
> सर्वेषु प्रीतमनसो दिव्यं ज्ञानं बुभुत्सवः ॥ 7 ॥

उस पाण्डुगिरि (पर्वत) पर स्थित महात्मा, ज्ञान-विज्ञान के समुद्र, तपस्वी, कल्याणमूर्ति, अपराधीन, द्वादशांग श्रुत के वेत्ता, निर्ग्रन्थ, महाकान्ति से विभूषित, शिष्य-प्रशिष्यों से युक्त और तत्त्ववेदियों में निपुण आचार्य भद्रबाहु को सिर से नमस्कार कर सब जीवों पर प्रीति करने वाले और दिव्य ज्ञान के इच्छुक शिष्यों ने उनसे प्रार्थना की ॥ 5-7 ॥

> पार्थिवानां हितार्थाय शिष्याणां[6] हितकाम्यया ।
> श्रावकाणां हितार्थाय दिव्यं ज्ञानं ब्रवीहि नः ॥8॥

राजाओं, भिक्षुओं और श्रावकों के हित के लिए आप हमें दिव्यज्ञान—निमित्त ज्ञान का उपदेश दीजिए ॥ 8 ॥

> शुभाऽशुभं समुद्भूतं श्रुत्वा राजा निमित्ततः ।
> विजिगीषुः स्थिरमतिः सुखं पाति महीं सदा ॥9॥

यतः शत्रुओं को जीतने का इच्छुक राजा निमित्त के बल से अपने शुभाशुभ को सुनकर स्थिरमति हो सुखपूर्वक सदा पृथ्वी का पालन करता है ॥ 9 ॥

> राजभिः पूजिताः सर्वे भिक्षवो धर्मचारिणः ।
> विहरन्ति निरुद्विग्नास्तेन राजभियोजिताः[7] ॥10॥

धर्मपालक सभी भिक्षु राजाओं द्वारा पूजित होते हुए और उनकी सेवादि को प्राप्त करते हुए निराकुलतापूर्वक लोक में विचरण करते हैं । ॥ 10 ॥

> पापमुत्पातिकं दृष्ट्वा ययुर्देशांश्च भिक्षवः ।
> स्फीतान् जनपदांश्चैव संश्रयेयुः प्रचोदिताः[8] ॥11॥

1. महाक्षान्तं भा० । 2. निरामयम् मु० । 3. वादिनम् मु० A. । 4. आचार्यम् मु० । 5. [illegible] मु० । 6. भिक्षूणाम् मु० । 7. [illegible] भ० । 8. अचोदिता मु० ।

भिक्षु आश्रित देश को भविष्यत्काल में पापयुक्त अथवा उपद्रवयुक्त अवगत कर वहाँ से देशान्तर को चले जाते हैं तथा स्वतन्त्रतापूर्वक धन-धान्यादि सम्पन्न देशों में निवास करते हैं ॥ 11 ॥

श्रावकाः स्थिरसंकल्पा दिव्यज्ञानेन हेतुना ।
नाश्रयेयुः[1] परं तीर्थं यथा[2] सर्वज्ञभाषितम् ॥12॥

श्रावक इस दिव्य निमित्त ज्ञान को पाकर दृढ़संकल्पी होते हैं और सर्वज्ञकथित तीर्थ-धर्म को छोड़कर अन्य तीर्थ का आश्रय नहीं लेते ॥ 12 ॥

सर्वेषामेव सत्त्वानां[3] दिव्यज्ञानं[4] सुखावहम् ।
भिक्षुकाणां विशेषेण परपिण्डोपजीविनाम् ॥13॥

यह दिव्यज्ञान—अष्टांगनिमित्त ज्ञान सब जीवों को सुख देने वाला है और परपिण्डोपजीवी साधुओं को विशेष रूप से सुख देने वाला है ॥ 13 ॥

विस्तीर्णं द्वादशांगं तु [5]भिक्षवश्चाल्पमेधसः ।
भवितारो हि बहवस्तेषां चैवेदमुच्यताम् ॥14॥

द्वादशांग श्रुत तो बहुत विस्तृत है और आगामी काल में भिक्षु अल्पबुद्धि के धारक होंगे, अतः उनके लिए निमित्त शास्त्र का उपदेश कीजिए ॥ 14 ॥

सुखग्राह्यं[6] लघुग्रन्थं स्पष्टं शिष्यहितावहम् ।
सर्वज्ञभाषितं तथ्यं निमित्तं तु ब्रवीहि नः ॥15॥

जो सरलता से ग्रहण किया जा सके, संक्षिप्त हो, स्पष्ट हो, शिष्यों का हित करने वाला हो, सर्वज्ञ द्वारा भाषित हो और यथार्थ हो, उस निमित्त शास्त्र का हम लोगों के लिए उपदेश कीजिए ॥ 15 ॥

उल्काः समासतो व्यासात् परिवेषांस्तथैव च ।
विद्युतोऽभ्राणि सन्ध्याश्च मेघान् वातान् प्रवणर्षम् ॥16॥

गन्धर्वनगरं गर्भान् यात्रोत्पा[7]तांस्तथैव च ।
ग्रहचारं पृथक्त्वेन ग्रहयुद्धं च कृत्स्नतः ॥17॥

वातिकं चाथ स्वप्नांश्च[8] मुहूर्तांश्च तिथींस्तथा ।
करणानि निमित्त[9] च शकुनं[10] पाकमेव च ॥18॥

---

1. माश्रयेयुः मु० A. । 2. यदा आ० । 3. सत्त्वानाम् मु० । 4. दिव्यं ज्ञानं मु० । 5. भिक्षवः स्वल्पमेधसः मु० । A. । 6. ग्राह्यं ब० । 7. यात्रोत्पातकम् मु० A. । 8. स्वप्नश्च मु० A. । 9. निमित्तानि मु० A. । 10. शाकुनं पाकमेव न मु० A. ।

ज्योतिषं केवलं कालं वास्तुदिव्येन्द्र[1]सम्पदा।
लक्षणं व्यञ्जनं चिह्नं तथा[2] दिव्यौषधानि[3] च ॥19॥

बलाऽबलं च सर्वेषां विरोधं च पराजयम्।
तत्सर्वमानुपूर्वेण प्रब्रवीहि महामते[4]! ॥20॥

सर्वानेतान् यथोद्दिष्टान् भगवन् वक्तुमर्हसि।
प्रश्नान् शुश्रूषवः सर्वे वयमन्ये च साधवः ॥21॥

हे महामते ! संक्षेप और विस्तार से उल्का, परिवेष, विद्युत्, अभ्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, गर्भ, यात्रा, उत्पात, पृथक्-पृथक् ग्रहचार, ग्रहयुद्ध, वातिक—तेजी-मन्दी, स्वप्न, मुहूर्त, तिथि, करण, निमित्त, शकुन, पाक, ज्योतिष, वास्तु, दिव्येन्द्रसंपदा, लक्षण, व्यञ्जन, चिह्न, दिव्यौषध, बलाबल, विरोध और जय-पराजय इन समस्त विषयों का क्रमशः वर्णन कीजिए। हे भगवन् ! जिस क्रम से इनका निर्देश किया है, उसी क्रम से इनका उत्तर दीजिए। हम सभी तथा अन्य साधुजन इन प्रश्नों का उत्तर सुनने के लिए उत्कण्ठित हैं ॥ 16-21 ॥

इति श्रीमहामुनिनैर्ग्रन्थ[5]भद्रबाहुसंहितायां ग्रन्थांगसंचयो[6] नाम प्रथमोऽध्यायः।

विवेचन—इस ग्रन्थ में श्रावक और मुनि दोनों के लिए उपयोगी निमित्त का विवेचन आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने किया है। इसके प्रथम अध्याय में ग्रन्थ में विवेच्य विषय का निर्देश किया गया है। इस ग्रन्थ में उन निमित्तों का निरूपण किया है, जिनके अवलोकन मात्र से कोई भी व्यक्ति अपने शुभाशुभ को अवगत कर सकता है। अष्टांग निमित्त ज्ञान को आचार्यों ने विज्ञान के अन्तर्गत रखा है; यतः "मोक्षे धीर्ज्ञानमन्यत्र विज्ञानं शिल्पशास्त्रयोः" अर्थात्—निर्वाण-प्राप्ति सम्बन्धी ज्ञान को ज्ञान और शिल्प तथा अन्य शास्त्र संबंधी जानकारी को विज्ञान कहते हैं। यह उभय लोक की सिद्धि में प्रयोजक है, इसलिए गृहस्थों के समान मुनियों के लिए भी उपयोगी माना गया है। किसी एक निमित्त से यथार्थ का निर्णय नहीं हो सकता। निर्णय करना निमित्तों के स्वभाव, परिमाण, गुण एवं प्रकारों पर भी बहुत अंशों में निर्भर है। यहाँ प्रथम अध्याय में निरूपित वर्ण्य

1. वस्तु दिव्येन्द्रगणाश्च मु० A., वासुदेवेन्द्र भा०। 2. लग्नं मु०। 3. दिव्यौषधानि च मु०। 4. निबोधय भा०। 5. भद्रबाहुके निमित्ते। 6. ग्रन्थाङ्गचयो भा०।

विषयों का संक्षिप्त परिभाषात्मक परिचय दे देना भी अप्रासंगिक न होगा।

उल्का—"ओषति, उष षकारस्य लत्वं क ततः टाप्"—अर्थात् उष् धातु के षकार का 'ल' हो जाने से क प्रत्यय कर देने पर स्त्रीलिंग में उल्का शब्द बनता है। इसका शाब्दिक अर्थ है तेजःपुञ्ज, ज्वाला या लपट। तात्पर्यार्थ लिया जाता है, आकाश से पतित अग्नि। कुछ मनीषी आकाश से पतित होने वाले उल्काकाण्डों को टूटा तारा के नाम से कहते हैं। ज्योतिष शास्त्र में बताया गया है कि उल्का एक उपग्रह है। इसके आनयन का प्रकार यह है कि सूर्याक्रान्त नक्षत्र से पंचम विद्युन्मुख, अष्टम शून्य, चतुर्दश सन्निपात, अष्टादश केतु, एकविंश उल्का, द्वाविंशति कल्प, त्रयोविंशति वज्र और चतुर्विंशति निघात संज्ञक होता है। विद्युन्मुख, शून्य, सन्निपात, केतु, उल्का, कल्प, वज्र, और निघात ये आठ उपग्रह माने जाते हैं। इनका आनयन पूर्ववत् सूर्य नक्षत्र से किया जाता है।

मान लें कि सूर्य कृत्तिका नक्षत्र पर है। यहाँ कृत्तिका से गणना की तो पंचम पुनर्वसु नक्षत्र विद्युन्मुख-संज्ञक, अष्टम मघा शून्यसंज्ञक, चतुर्दश विशाखा नक्षत्र सन्निपात-संज्ञक, अष्टादश पूर्वाषाढ़ केतु-संज्ञक, एकविंशति धनिष्ठा उल्का संज्ञक, द्वाविंशति शतभिषा कल्प-संज्ञक, त्रयोविंशति पूर्वाभाद्रपद वज्र-संज्ञक और चतुर्विंशति उत्तराभाद्रपद निघातसंज्ञक माना जायगा। इन उपग्रहों का फलादेश नामानुसार है तथा विशेष आगे बतलाया जायगा।

निमित्तज्ञान में उपग्रह सम्बन्धी उल्का का विचार नहीं होता है। इसमें आकाश से पतित होनेवाले तारों का विचार किया जाता है। आधुनिक वैज्ञानिकों ने उल्का के रहस्य को पूर्णतया अवगत करने की चेष्टा की है। कुछ लोग इसे Shooting stars टूटनेवाला नक्षत्र, कुछ Fire-bells अग्नि-गोलक और कुछ इसे Asteroids उपनक्षत्र मानते हैं। प्राचीन ज्योतिषियों का मत है कि वायुमण्डल के ऊर्ध्व भाग में नक्षत्र जैसे कितने ही दीप्तिमान पदार्थ समय-समय पर दीख पड़ते हैं और गगनमार्ग में द्रुतवेग से चलते हैं तथा अन्धकार में लुप्त हो जाते हैं। कभी-कभी कतिपय बृहदाकार दीप्तिमान पदार्थ दृष्टिगोचर होते हैं; पर वायु की गति से विपर्यय हो जाने के कारण उनके कई खण्ड हो जाते हैं और गम्भीर गर्जन के साथ भूमितल पर पतित हो जाते हैं। उल्काएँ पृथ्वी पर नाना प्रकार के आकार में गिरती हुई दिखलाई पड़ती हैं। कभी-कभी निरभ्र आकाश में गम्भीर गर्जन के साथ उल्कापात होता है। कभी निर्मल आकाश में झटिति मेघों के एकत्रित होते ही अन्धकार में भीषण शब्द के साथ उल्कापात होते देखा जाता है। योरोपीय विद्वानों की उल्कापात के सम्बन्ध में निम्न सम्मति है

(1) तरल पदार्थ से जैसे धूम उठता है, वैसे ही उल्का सम्बन्धी द्रव्य भी अतिशय सूक्ष्म आकार में पृथ्वी से वायुमण्डल के उच्चस्थ मेघ पर जा जुटता है

और रासायनिक क्रिया से मिलकर अपने गुरुत्व के अनुसार नीचे गिरता है।

(2) उल्का के समस्त प्रस्तर पहले आग्नेय गिरि से निकल अपनी गति के अनुसार आकाश मण्डल पर बहुत दूर पर्यन्त चढ़ते हैं और अवशेष में पुनः प्रबल वेग से पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं।

(3) किसी-किसी समय चन्द्रमण्डल के आग्नेय गिरि से इतने वेग से धातु निकलता है कि पृथ्वी के निकट आ लगता है और पृथ्वी की शक्ति से खिंचकर नीचे गिर पड़ता है।

(4) समस्त उल्काएँ उपग्रह हैं। ये सूर्य के चारों ओर अपने-अपने कक्ष में घूमती हैं। इनमें सूर्य जैसा आलोक रहता है। पवन से अभिभूत होकर उल्काएँ पृथ्वी पर पतित होती हैं। उल्काएँ अनेक आकार-प्रकार की होती हैं।

आचार्य ने यहाँ पर देदीप्यमान नक्षत्र-पुञ्जों को उल्का संज्ञा दी है, ये नक्षत्र-पुञ्ज निमित्तसूचक हैं। इनके पतन के आकार-प्रकार, दीप्ति, दिशा आदि से शुभाशुभ का विचार किया जाता है। द्वितीय अध्याय में इसके फलादेश का निरूपण किया जायगा।

परिवेष—"परितो विष्यते व्याप्यतेऽनेन" अर्थात् चारों ओर से व्याप्त होकर मण्डलाकार हो जाना परिवेष है। यह शब्द विष् धातु से घञ् प्रत्यय कर देने पर निष्पन्न होता है। इस शब्द का तात्पर्यार्थ यह है कि सूर्य या चन्द्र की किरणें जब वायु द्वारा मण्डलीभूत हो जाती हैं तब आकाश में नानावर्ण आकृति विशिष्ट मण्डल बन जाता है, इसी को परिवेष कहते हैं। यह परिवेष रक्त, नील, पीत, कृष्ण, हरित आदि विभिन्न रंगों का होता है और इसका फलादेश भी इन्हीं रंगों के अनुसार होता है।

विद्युत्—"विशेषेण द्योतते इति विद्युत्"। द्युत् धातु से क्विप् प्रत्यय करने पर विद्युत् शब्द बनता है। इसका अर्थ है बिजली, तडित्, शम्पा, सौदामिनी आदि। विद्युत् के वर्ण की अपेक्षा से चार भेद माने गये हैं कपिला, अतिलोहिता, सिता और पीता। कपिल वर्ण की विद्युत् होने से वायु, लोहित वर्ण की होने से आतप, पीत वर्ण की होने से वर्षण और सित वर्ण की होने से दुर्भिक्ष होता है। विद्युदुत्पत्ति का एक मात्र कारण मेघ है। समुद्र और स्थल भाग की ऊपरवाली वायु तडित् उत्पन्न करने में असमर्थ है, किन्तु जल के वाष्पीभूत होते ही उसमें विद्युत् उत्पन्न हो जाती है। आचार्य ने इस ग्रन्थ में में विद्युत् द्वारा विशेष फलादेश का निरूपण किया है।

अभ्र—आकाश के रूप-रंग, आकृति आदि के द्वारा फलाफल का निरूपण करना अभ्र के अन्तर्गत है। अभ्र शब्द का अर्थ गगन है। दिग्दाह-दिशाओं की

आकृति भी अभ्र के अन्तर्गत आ जाती है।

सन्ध्या—दिवा और रात्रि का जो सन्धिकाल है उसी को सन्ध्या कहते हैं। अर्द्ध अस्तमित और अर्द्ध उदित सूर्य जिस समय होता है, वही प्रकृत सन्ध्याकाल है। यह काल प्रकृत सन्ध्या होने पर भी दिवा और रात्रि एक-एक दण्ड सन्ध्याकाल माना गया है। प्रातः और सायं को छोड़कर और भी एक सन्ध्या है, जिसे मध्याह्न कहते हैं। जिस समय सूर्य आकाश मण्डल के मध्य में पहुँचता है, उस समय मध्याह्न सन्ध्या होती है। यह सन्ध्याकाल सप्तम मुहूर्त के बाद अष्टम मुहूर्त में होता है। प्रत्येक सन्ध्या का काल २४ मिनट या १ घटी प्रमाण है। संध्या के रूप-रंग, आकृति आदि के अनुसार शुभाशुभ फल का निरूपण इस ग्रंथ में किया जायगा।

मेघ—मिह् धातु से अच् प्रत्यय कर देने से मेघ शब्द बनता है। इसका अर्थ है बादल। आकाश में हमें कृष्ण, श्वेत आदि वर्ण की वाष्पीय जलराशि की रेखा वाष्पाकार में चलती हुई दिखलाई पड़ती है, इसी को मेघ (Cloud) कहते हैं। पर्वत के ऊपर कुहासे की तरह गहरा अन्धकार दिखाई देता है, वह मेघ का रूपान्तर मात्र है। वह आकाश में संचित घनीभूत जल-वाष्प से बहुत कुछ तरल होता है। यही तरल कुहरे की जैसी वाष्पराशि पीछे घनीभूत होकर स्थानीय शीतलता के कारण अपने गर्भस्थ उत्ताप को नष्ट कर शिशिर बिन्दु की तरह वर्षा करती है। मेघ और कुहासे की उत्पत्ति एक ही है, अन्तर इतना ही है कि मेघ आकाश में चलता है और कुहासा पृथ्वी पर। मेघ अनेक वर्ण और अनेक आकार के होते हैं। फलादेश इनके आकार और वर्ण के अनुसार वर्णित किया जाता है। मेघों के अनेक भेद हैं, इनमें चार प्रधान हैं आवर्त, संवर्त्त, पुष्कर और द्रोण। आवर्त मेघ निर्जल, संवर्त्त मेघ बहुजल विशिष्ट, पुष्कर दुष्कर-जल और द्रोण शस्यपूरक होते हैं।

वात—वायु के गमन, दिशा और चक्र द्वारा शुभाशुभ फल वात अध्याय में निरूपित किया गया है। वायु का संचार अनेक प्रकार के निमित्तों को प्रकट करने वाला है।

प्रवर्षण—वर्षा-विचार प्रकरण को प्रवर्षण में रखा गया है। ज्येष्ठ पूर्णिमा के बाद यदि पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में वृष्टि हो तो जल के परिमाण और शुभाशुभ सम्बन्ध में विद्वानों का मत है कि एक हाथ गहरा, एक हाथ लम्बा और एक हाथ चौड़ा गड्ढा खोदकर रखे। यदि यह गड्ढा वर्षा के जल से भर जावे तो एक आढ़क जल होता है। किसी-किसी का मत है कि जहाँ तक दृष्टि जाय, वहीं तक जल दिखलाई दे तो अतिवृष्टि समझनी चाहिए। वर्षा का विचार ज्येष्ठ की

पूर्णिमा के अनन्तर आषाढ़ की प्रतिपदा और द्वितीया तिथि की वर्षा से ही किया जाता है।

गन्धर्वनगर—गगन-मण्डल में उदित अनिष्टसूचक पुरविशेष को गन्धर्वनगर कहा जाता है। पुद्गल के आकार विशेष नगर के रूप में आकाश में निर्मित हो जाते हैं। इन्हीं नगरों द्वारा फलादेश का निरूपण करना गन्धर्वनगर सम्बन्धी निमित्त कहलाता है।

गर्भ—बताया जाता है कि ज्येष्ठ महीने की शुक्ला अष्टमी से चार दिन तक मेघ वायु से गर्भ धारण करता है। उन दिनों यदि मन्द वायु चले तथा आकाश में सरस मेघ दीख पड़ें तो शुभ जानना चाहिए और उन दिनों में यदि स्वाति आदि चार नक्षत्रों में क्रमानुसार वृष्टि हो तो श्रावण आदि महीनों में वैसा ही वृष्टियोग समझना चाहिए। किसी-किसी का मत है कि कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष के उपरान्त गर्भदिवस आता है। गर्गादि के मत से अगहन के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के उपरान्त जिस दिन चन्द्रमा और पूर्वाषाढ़ा का संयोग होता है, उसी दिन गर्भलक्षण समझना चाहिए। चन्द्रमा के जिस नक्षत्र को प्राप्त होने पर मेघ के गर्भ रहता है, चन्द्रविचार से 195 दिनों में उस गर्भ का प्रसवकाल आता है। शुक्लपक्ष का गर्भ कृष्णपक्ष में, कृष्णपक्ष का शुक्लपक्ष में, दिवसजात गर्भ रात में, रात का गर्भ दिन में एवं सन्ध्या का गर्भ प्रातः और प्रातः का गर्भ संध्या को प्रसव वर्षा करता है। मृगशिरा और पौष शुक्लपक्ष का गर्भ मन्द फल देनेवाला होता है। पौष कृष्णपक्ष के गर्भ का प्रसवकाल श्रावण शुक्लपक्ष, माघ शुक्लपक्ष के मेघ का श्रावण कृष्णपक्ष, माघ कृष्णपक्ष के मेघ का श्रावण शुक्लपक्ष, फाल्गुन शुक्लपक्ष के मेघ का भाद्रपद कृष्णपक्ष, फाल्गुन कृष्णपक्ष के मेघ का आश्विन शुक्लपक्ष, चैत्र शुक्लपक्ष के मेघ का आश्विन कृष्णपक्ष एवं चैत्र कृष्णपक्ष के मेघ का कार्तिक शुक्लपक्ष वर्षाकाल है। पूर्व का मेघ पश्चिम और पश्चिम का मेघ पूर्व में बरसाता है। गर्भ से वृष्टि का परिज्ञान तथा खेती का विचार किया जाता है। मेघ गर्भ के समय वायु के योग का विचार कर लेना भी आवश्यक है।

यात्रा—इस प्रकरण में मुख्य रूप से राजा की यात्रा का निरूपण किया है। यात्रा के समय में होने वाले शकुन-अपशकुनों द्वारा शुभाशुभ फल निरूपित है। यात्रा के लिए शुभ तिथि, शुभ नक्षत्र, शुभ वार, शुभ योग और शुभ करण का होना परमावश्यक है। शुभ समय में यात्रा करने से शीघ्र और अनायास ही कार्यसिद्धि होती है।

उत्पात—स्वभाव के विपरीत घटित होना ही उत्पात है। उत्पात तीन प्रकार के होते हैं दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। नक्षत्रों का विकार, उल्का,

निर्घात, पवन और घेरा दिव्य उत्पात हैं, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष आदि अन्तरिक्ष उत्पात हैं और चर एवं स्थिर आदि पदार्थों से उत्पन्न हुए उत्पात भौम कहे जाते हैं।

ग्रहचार—सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु इन ग्रहों के गमन द्वारा शुभाशुभ फल अवगत करना ग्रहचार कहलाता है। समस्त नक्षत्रों और राशियों में ग्रहों की उदय, अस्त, वक्री, मार्गी इत्यादि अवस्थाओं द्वारा फल का निरूपण करना ग्रहचार है।

ग्रहयुद्ध—मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि इन ग्रहों में से किन्हीं दो ग्रहों की अधोपरि स्थिति होने से किरणें परस्पर में स्पर्श करें तो उसे ग्रहयुद्ध कहते हैं। बृहत्संहिता के अनुसार अधोपरि अपनी-अपनी कक्षा में अवस्थित ग्रहों में अतिदूरत्वनिबन्धन देखने के विषयों में जो समता होती है, उसे ही ग्रहयुद्ध कहते हैं। ग्रहयुति और ग्रहयुद्ध में पर्याप्त अन्तर है। ग्रहयुति में मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि इन पाँच ग्रहों में से कोई भी ग्रह जब सूर्य या चन्द्र के साथ समसूत्र में स्थित होते हैं, तो ग्रहयुति कहलाती है और जब मंगलादि पाँचों ग्रह आपस में ही समसूत्र में स्थित होते हैं तो ग्रहयुद्ध कहा जाता है। स्थिति के अनुसार ग्रहयुद्ध के चार भेद हैं—उल्लेख, भेद, अंशुविमर्द और अपसव्य। छायामात्र से ग्रहों के स्पर्श हो जाने को उल्लेख; दोनों ग्रहों का परिमाण यदि योगफल के आधे से ग्रह-द्वय का अन्तर अधिक हो तो उस युद्ध को भेद; दो ग्रहों की किरणों का संघट्ट होना अंशविमर्द एवं दोनों ग्रहों का अन्तर साठ कला से न्यून हो तो उसे अपसव्य कहते हैं।

वार्तिक या अर्घकाण्ड—ग्रहों के स्वरूप, गमन, अवस्था एवं विभिन्न प्रकार के बाह्य निमित्तों द्वारा वस्तुओं की तेजी-मन्दी अवगत करना अर्घकाण्ड है।

स्वप्न—चिन्ताधारा दिन और रात दोनों में समान रूप से चलती है। जाग्रतावस्था की चिन्ताधारा पर हमारा नियन्त्रण रहता है, पर सुषुप्तावस्था की चिन्ताधारा पर हमारा नियन्त्रण नहीं रहता है, इसीलिए स्वप्न भी नाना अलंकार-मयी प्रतिरूपों में दिखलाई पड़ते हैं। स्वप्न में दर्शन और प्रत्यभिज्ञानुभूति के अतिरिक्त शेषानुभूतियों का अभाव होने पर भी सुख, दुःख, क्रोध, आनन्द, भय, ईर्ष्या आदि सभी प्रकार के मनोभाव पाये जाते हैं। इन भावों के पाये जाने का प्रधान कारण हमारी अज्ञात इच्छा है। स्वप्न द्वारा भविष्य में घटित होने वाली शुभाशुभ घटनाओं की सूचना अलंकृत भाषा में मिलती है, अतः उस अलंकृत भाषा का विश्लेषण करना ही स्वप्न-विज्ञान का कार्य है। अरस्तू (Aristotle) ने स्वप्न के कारणों का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि जागृत अवस्था में जिन प्रवृत्तियों की ओर व्यक्ति का ध्यान नहीं जाता, वे ही प्रवृत्तियाँ अर्द्धनिद्रित

अवस्था में उत्तेजित होकर मानसिक जगत् में जागरूक हो जाती हैं। अतः स्वप्न में भावी घटनाओं की सूचना के साथ हमारी छिपी हुई प्रवृत्तियों का ही दर्शन होता है। एक दूसरे पश्चिमीय दार्शनिक ने मनोवैज्ञानिक कारणों की खोज करते हुए बतलाया है कि स्वप्न में मानसिक जगत् के साथ बाह्य जगत् का सम्बन्ध रहता है, इसलिए हमें भविष्य में घटने वाली घटनाओं की सूचना स्वप्न की प्रवृत्तियों से मिलती है। डाक्टर सी. जे. ह्विटबे (Dr. C. J. Whitbey) ने मनोवैज्ञानिक ढंग से स्वप्न के कारणों की खोज करते हुए लिखा है कि गर्मी के कारण हृदय की जो क्रियाएँ जागृत अवस्था में सुषुप्त रहती हैं, वे ही स्वप्नावस्था में उत्तेजित होकर सामने आ जाती हैं। जागृत अवस्था में कार्य-संलग्नता के कारण जिन विचारों की ओर हमारा ध्यान नहीं जाता है, निद्रित अवस्था में वे ही विचार स्वप्नरूप में सामने आते हैं। ग्रिगोरियन सिद्धान्त में माना गया है कि शरीर आत्मा की कब्र है। निद्रित अवस्था में आत्मा स्वतन्त्र रूप से अनन्त जीवन की ओर प्रवृत्त होता है और अनन्त जीवन की घटनाओं को ला उपस्थित करता है। अतः स्वप्न का सम्बन्ध भविष्यकाल के साथ भी है। बेबीलोनियन (Babylonian) कहते हैं कि स्वप्न में देव और देवियाँ आती हैं तथा स्वप्न में हमें उनके द्वारा भावी जीवन की सूचनाएँ मिलती हैं, अतः स्वप्न की बातों द्वारा भविष्यत् कालीन घटनाएँ सूचित की जाती हैं। गिलजेम्स (Giljames) नामक महाकाव्य में लिखा है कि वीरों को रात में स्वप्न द्वारा उनके भविष्य की सूचना दी जाती थी। स्वप्न का सम्बन्ध देवी-देवताओं से है, मनुष्यों से नहीं। देवी-देवता स्वभावतः व्यक्ति से प्रसन्न होकर उसके शुभाशुभ की सूचना देते हैं।

उपर्युक्त विचारधाराओं का समन्वय करने से यह स्पष्ट है कि स्वप्न केवल अवदमित इच्छाओं का प्रकाशन नहीं, बल्कि भावी शुभाशुभ का सूचक है। फ्रायड ने स्वप्न का सम्बन्ध भविष्यत् में घटने वाली घटनाओं से कुछ भी नहीं स्थापित किया है, पर वास्तविकता इससे दूर है। स्वप्न भविष्य का सूचक है। क्योंकि सुषुप्तावस्था में भी आत्मा तो जागृत ही रहती है, केवल इन्द्रियाँ और मन की शक्तियाँ विश्राम करने के लिए सुषुप्त-सी हो जाती हैं। अतः ज्ञान की मात्रा की उज्ज्वलता से निद्रित अवस्था में जो कुछ देखते हैं, उसका सम्बन्ध हमारे भूत, वर्तमान और भावी जीवन से है। इसी कारण आचार्यों ने स्वप्न को भूत, भविष्य और वर्तमान का सूचक बताया है।

मुहूर्त—मांगलिक कार्यों के लिए शुभ समय का विचार करना मुहूर्त है। यतः समय का प्रभाव प्रत्येक जड़ एवं चेतन सभी प्रकार के पदार्थों पर पड़ता है। अतः गर्भाधानादि षोडश संस्कार एवं प्रतिष्ठा, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, यात्रा प्रभृति शुभ कार्यों के लिए मुहूर्त का आश्रय लेना परम आवश्यक है।

तिथि—चन्द्र और सूर्य के अन्तरांशों पर से तिथि का मान निकाला जाता है। प्रतिदिन 12 अंशों का अन्तर सूर्य और चन्द्रमा के भ्रमण में होता है, यही अन्तरांश का मध्यम मान है। अमावास्या के बाद प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक की तिथियाँ शुक्लपक्ष की और पूर्णिमा के बाद प्रतिपदा से लेकर अमावास्या तक की तिथियाँ कृष्णपक्ष की होती हैं। ज्योतिष शास्त्र में तिथियों की गणना शुक्ल-पक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होती है।

तिथियों की संज्ञाएँ—1।6।11 नन्दा, 2।7।12 भद्रा, 3।8।13 जया, 4।9।14 रिक्ता और 5।10।15 पूर्णा संज्ञक हैं।

पक्षरन्ध्र—4।6।8।9।12।14 तिथियाँ पक्षरन्ध्र हैं। ये विशिष्ट कार्यों में त्याज्य हैं।

मासशून्य तिथियाँ—चैत्र में दोनों पक्षों की अष्टमी और नवमी; वैशाख के दोनों पक्षों की द्वादशी, ज्येष्ठ में कृष्णपक्ष की चतुर्दशी और शुक्लपक्ष की त्रयोदशी; आषाढ़ में कृष्णपक्ष की षष्ठी और शुक्लपक्ष की सप्तमी; श्रावण में दोनों पक्षों की द्वितीया और तृतीया; भाद्रपद में दोनों पक्षों की प्रतिपदा और द्वितीया; आश्विन में दोनों पक्षों की दशमी और एकादशी; कार्तिक में कृष्णपक्ष की पञ्चमी और शुक्लपक्ष की चतुर्दशी; मार्गशीर्ष में दोनों पक्षों की सप्तमी और अष्टमी; पौष में दोनों पक्षों की चतुर्थी और पंचमी; माघ में कृष्णपक्ष की पंचमी और शुक्लपक्ष की षष्ठी एवं फाल्गुन में कृष्णपक्ष की चतुर्थी और शुक्लपक्ष की तृतीया मासशून्य संज्ञक हैं।

सिद्धा तिथियाँ—मंगलवार को 3।8।13, बुधवार को 2।7।12, गुरुवार को 5।10।15, शुक्रवार को 1।6।11 एवं शनिवार को 4।8।14 तिथियाँ सिद्धि देने वाली सिद्धा संज्ञक हैं।

दग्ध, विष और हुताशन संज्ञक तिथियाँ—रविवार को द्वादशी, सोमवार को एकादशी, मंगलवार को पंचमी, बुधवार को तृतीया, गुरुवार को षष्ठी, शुक्र को अष्टमी, शनिवार को नवमी दग्धा संज्ञक; रविवार को चतुर्थी, सोमवार को षष्ठी, मंगलवार को सप्तमी, बुधवार को द्वितीया, गुरुवार को अष्टमी, शुक्रवार को नवमी और शनिवार को सप्तमी विषसंज्ञक एवं रविवार को द्वादशी, सोमवार को षष्ठी, मंगलवार को सप्तमी; बुधवार को अष्टमी, बृहस्पतिवार को नवमी, शुक्रवार को दशमी और शनिवार को एकादशी हुताशनसंज्ञक हैं। ये तिथियाँ नाम के अनुसार फल देती हैं।

करण—तिथि के आधे भाग को करण कहते हैं अर्थात् एक तिथि में दो करण होते हैं। करण 11 होते हैं—(1) बव (2) बालव (3) कौलव (4) तैतिल (5) गर (6) वणिज (7) विष्टि (8) शकुनि (9) चतुष्पाद (10) नाग और

(11) किंस्तुघ्न। इन करणों में पहले के 7 करण चरसंज्ञक और अन्तिम 4 करण स्थिर संज्ञक हैं।

करणों के स्वामी—बव का इन्द्र, बालव का ब्रह्मा, कौलव का सूर्य, तैतिल का सूर्य, गर की पृथ्वी, वणिज की लक्ष्मी, विष्टि का यम, शकुनि का कलि, चतुष्पाद का रुद्र, नाग का सर्प एवं किंस्तुघ्न का वायु है। विष्टि करण का नाम भद्रा है, प्रत्येक पञ्चांग में भद्रा के आरम्भ और अन्त का समय दिया रहता है।

निमित्त—जिन लक्षणों को देखकर भूत और भविष्य में घटित हुई और होने वाली घटनाओं का निरूपण किया जाता है, उन्हें निमित्त कहते हैं। निमित्त के आठ भेद हैं—(1) व्यंजन—तिल, मस्सा, चट्टा आदि को देखकर शुभाशुभ का निरूपण करना व्यंजन निमित्तज्ञान है। (2) मस्तक, हाथ, पाँव आदि अंगों को देखकर शुभाशुभ कहना अंग निमित्तज्ञान है। (3) चेतन और अचेतन के शब्द सुनकर शुभाशुभ का वर्णन करना स्वर निमित्तज्ञान है। (4) पृथ्वी की चिकनाई और रूखेपन को देखकर फलादेश निरूपण करना भौम निमित्तज्ञान है। (5) वस्त्र, शस्त्र, आसन, छत्रादि को छिदा हुआ देखकर शुभाशुभ फल कहना छिन्न निमित्तज्ञान है। (6) ग्रह, नक्षत्रों के उदयास्त द्वारा फल निरूपण करना अन्तरिक्ष निमित्तज्ञान है। (7) स्वस्तिक, कलश, शंख, चक्र आदि चिह्नों द्वारा एवं हस्तरेखा की परीक्षा कर फलादेश बतलाना लक्षण निमित्तज्ञान है। (8) स्वप्न द्वारा शुभाशुभ फल कहना स्वप्न निमित्तज्ञान है। ऋषिपुत्र निमित्तशास्त्र में निमित्तों के तीन ही भेद किये गये हैं—

जो दिट्ठ भुविरसण्ण जे दिट्ठा कुहमेण कत्ताणं।
सद्दसंकुलेन दिट्ठा वउसट्ठिय एण पण्णिया॥

अर्थात् पृथ्वी पर दिखलाई देने वाले निमित्त, आकाश में दिखलाई देने वाले निमित्त और शब्दश्रवण द्वारा सूचित होने वाले निमित्त, इस प्रकार निमित्त के तीन भेद हैं।

शकुन—जिससे शुभाशुभ का ज्ञान किया जाय, वह शकुन है। वसन्तराज शाकुन में बताया गया है कि जिन चिह्नों के देखने से शुभाशुभ जाना जाय, उन्हें शकुन कहते हैं। जिस निमित्त द्वारा शुभ विषय जाना जाय उसे शुभ शकुन और जिसके द्वारा अशुभ जाना जाय उसे अशुभ शकुन कहते हैं। दधि, घृत, दूर्वा, आतप, तण्डुल, पूर्णकुम्भ, सिद्धान्न, श्वेत सर्षप, चन्दन, शंख, मृत्तिका, गोरोचन, देवमूर्ति, वीणा, फल, पुष्प, अलंकार, अस्त्र, ताम्बूल, यान, आसन, ध्वज, छत्र, व्यजन, वस्त्र, रत्न, सुवर्ण, पद्म, भृंगार, प्रज्वलित वह्नि, हस्ती, छाग, कुश, चमर, ताम्र, मृग, औषध, पल्लव इन वस्तुओं की गणना शुभ शकुनों में की गई है। यात्रा के समय इनका दर्शन और स्पर्शन शुभ माना गया है। यात्राकाल

में संगीत सुनना, वाद्य सुनना भी शुभ माना गया है। गमनकाल में यदि कोई खाली घड़ा लेकर पथिक के साथ जाय और घड़ा भर कर लौट आवे तो पथिक भी कृतकार्य होकर निर्विघ्न लौटता है। यात्रा-काल में चुल्लू भर जल से कुल्ली करने पर यदि अकस्मात् कुछ जल गले के भीतर चला जाय तो अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है।

अंगार, भस्म, काष्ठ, रज्जु, कर्दम-कीचड़, कपास, तुष, अस्थि, विष्ठा, मलिन व्यक्ति, लौह, कृष्णधान्य, प्रस्तर, केश, सर्प, तैल, गुड़, चमड़ा, खाली घड़ा, लवण, तिनका, तक्र, शृंखला आदि का दर्शन और स्पर्शन यात्रा काल में अशुभ माना जाता है। यदि यात्रा करते समय गाड़ी पर चढ़ते हुए पैर फिसल जाय अथवा गाड़ी छूट जाय तो यात्रा में विघ्न होता है। मार्जारयुद्ध, मार्जारशब्द, कुटुम्ब का परस्पर विवाद दिखलायी पड़े तो यात्राकाल में अनिष्ट होता है। अतः यात्रा करना वर्जित है। नये घर में प्रवेश करते समय शव-दर्शन होने से मृत्यु अथवा बड़ा रोग होता है।

जाते अथवा आते समय यदि अत्यन्त सुन्दर शुक्लवस्त्र और शुक्ल माला-धारी पुरुष या स्त्री के दर्शन हों तो कार्य सिद्ध होता है। राजा, प्रसन्न व्यक्ति, कुमारी कन्या, गजारूढ़ या अश्वारूढ़ व्यक्ति दिखलाई पड़े तो यात्रा में शुभ होता है। श्वेत वस्त्रधारिणी; श्वेतचन्दनलिप्ता और सिर पर श्वेत माला धारण किये हुए गौरांग नारी मिल जाय तो सभी कार्य सिद्ध होते हैं।

यात्राकाल में अपमानित, अंगहीन, नग्न, तैललिप्त, रजस्वला, गर्भवती, रोदनकारिणी, मलिनवेशधारिणी, उन्मत्त, मुक्तकेशी नारी दिखलाई पड़े तो महान् अनिष्ट होता है। जाते समय पीछे से या सामने खड़ा हो दूसरा व्यक्ति कहे—'जाओ, मंगल होगा' तो पथिक को सब प्रकार से विजय मिलती है। यात्रा-काल में शब्दहीन शृगाल दिखलाई पड़े तो अनिष्ट होता है। यदि शृगाल पहले 'हुआ-हुआ' शब्द करके पीछे 'टटा' ऐसा शब्द करे तो शुभ और अन्य प्रकार का शब्द करने से अशुभ होता है। रात्रि में जिस घर के पश्चिम ओर शृगाल शब्द करे, उसके मालिक का उच्चाटन, पूर्व की ओर शब्द होने से भय, उत्तर और दक्षिण की ओर शब्द करने से शुभ होता है।

यदि भ्रमर बाईं ओर गुन-गुन शब्द कर किसी स्थान में ठहर जाएं अथवा भ्रमण करते रहें तो यात्रा में लाभ, हर्ष होता है। यात्राकाल में पैर में काँटा लगने से विघ्न होता है।

अंग का दक्षिण भाग फड़कने से शुभ तथा पृष्ठ और हृदय के वामभाग का स्फुरण होने से अशुभ होता है। मस्तक स्पन्दन होने से स्थानवृद्धि तथा भ्रू और नासा स्पन्दन से प्रियसंगम होता है। चक्षुःस्पन्दन से भृत्यलाभ, चक्षु के उपान्त

देश का स्पन्दन होने से अर्थलाभ और मध्य देश के फड़कने से उद्वेग और मृत्यु होती है। अपांग देश के फड़कने से स्त्रीलाभ, कर्ण के फड़कने से प्रियसंवाद, नासिका के फड़कने से प्रणय, अधर ओष्ठ के फड़कने से अभीष्ट विषयलाभ, कण्ठ देश के फड़कने से सुख, बाहु के फड़कने से मित्रस्नेह, स्कन्धप्रदेश के फड़कने से सुख, हाथ के फड़कने से धनलाभ, पीठ के फड़कने से पराजय, और वक्षस्थल के फड़कने से जयलाभ होता है। स्त्रियों की कुक्षि और स्तन फड़कने से सन्तान-लाभ, नाभि फड़कने से कष्ट और स्थान-च्युति फल होता है। स्त्री का वामांग और पुरुष का दक्षिणांग ही फल निरूपण के लिए ग्रहण किया जाता है।

पाक—सूर्यादि ग्रहों का फल कितने समय में मिलता है, इसका निरूपण करना ही इस अध्याय का विषय है।

ज्योतिष—सूर्यादि ग्रहों के गमन, संचार आदि के द्वारा फल का निरूपण किया जाता है। इसमें प्रधानतः ग्रह, नक्षत्र, धूमकेतु आदि ज्योति पदार्थों का स्वरूप, संचार, परिभ्रमणकाल, ग्रहण और स्थिति प्रभृति समस्त घटनाओं का निरूपण एवं ग्रह, नक्षत्रों की गति, स्थिति और संचारानुसार शुभाशुभ फलों का कथन किया जाता है। कतिपय मनीषियों का अभिमत है कि नभोमंडल में स्थित ज्योतिःसम्बन्धी विविध विषयक विद्या को ज्योतिविद्या कहते हैं, जिस शास्त्र में इस विद्या का सांगोपांग वर्णन रहता है, वह ज्योतिषशास्त्र कहलाता है।

वास्तु—वास स्थान को वास्तु कहा जाता है। वास करने के पहले वास्तु का शुभाशुभ स्थिर करके वास करना होता है। लक्षणादि द्वारा इस बात का निर्णय करना होता है कि कौन वास्तु शुभकारक है और कौन अशुभकारक। इस प्रकरण में गृहों की लम्बाई, चौड़ाई तथा प्रकार आदि का निरूपण किया जाता है।

दिव्येन्द्र संपदा—आकाश की दिव्य विभूति द्वारा फलादेश का वर्णन करना ही इस अध्याय के अन्तर्गत है।

लक्षण—इस विषय में दीपक, दन्त, काष्ठ, श्वान, गो, कुक्कुट, कूर्म, छाग, अश्व, गज, पुरुष, स्त्री, चमर, छत्र, प्रतिमा, शय्यासन, प्रासाद प्रभृति के स्वरूप गुण आदि का विवेचन किया जाता है। स्त्री और पुरुष के लक्षणों के अन्तर्गत सामुद्रिक शास्त्र भी आ जाता है। अंगोपांगों की बनावट एवं आकृति द्वारा भी शुभाशुभ लक्षणों का निरूपण इस अध्याय में किया जाता है।

चिह्न—विभिन्न प्रकार के शरीर-बाह्य एवं शरीरान्तर्गत चिह्नों द्वारा शुभाशुभ फल का निर्णय करना चिह्न के अन्तर्गत आता है। इसमें तिल, मस्सा आदि चिह्नों का विचार विशेष रूप से होता है।

लग्न—जिस समय में क्रान्तिवृत्त का जो प्रदेश स्थान क्षितिज वृत्त में लगता है, वही लग्न कहलाता है। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि दिन का

उतना अंश जितने में किसी एक राशि का उदय होता है, लग्न कहलाता है। अहोरात्र में बारह राशियों का उदय होता है, इसलिए एक दिन-रात में बारह लग्न मानी जाती हैं। लग्न निकालने की क्रिया गणित द्वारा की जाती है। मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन ये लग्न राशियाँ हैं।

मेष—पुरुषजाति, चर संज्ञक, अग्नितत्त्व, रक्तपीतवर्ण, पित्तप्रकृति, पूर्व-दिशा की स्वामिनी और पृष्ठोदयी है।

वृष—स्त्रीराशि, स्थिरसंज्ञक, भूमितत्त्व, शीतल स्वभाव, वातप्रकृति, श्वेत-वर्ण, विषमोदयी और दक्षिण की स्वामिनी है।

मिथुन—पश्चिम की स्वामिनी, वायुतत्त्व, हरितवर्ण, पुरुषराशि, द्विस्वभाव, उष्ण और दिनबली है।

कर्क—चर, स्त्रीजाति, सौम्य, कफ प्रकृति, जलचारी, समोदयी, रात्रिबली और उत्तर दिशा की स्वामिनी है।

सिंह—पुरुषजाति, स्थिरसंज्ञक, अग्नितत्त्व, दिनबली, पित्तप्रकृति, पुष्ट-शरीर, भ्रमणप्रिय और पूर्व की स्वामिनी है।

कन्या—पिंगलवर्ण, स्त्री जाति, द्विस्वभाव, दक्षिण की स्वामिनी, रात्रिबली, वायु-पित्त प्रकृति और पृथ्वीतत्त्व है।

तुला—पुरुष, चर, वायुतत्त्व, पश्चिम की स्वामिनी, श्यामवर्ण, शीर्षोदयी, दिनबली और क्रूरस्वभाव है।

वृश्चिक—स्थिर, शुभ्रवर्ण, स्त्रीजाति, जलतत्त्व, उत्तर दिशा की स्वामिनी, कफप्रकृति, रात्रिबली और हठी है।

धनु—पुरुष, कांचनवर्ण, द्विस्वभाव, क्रूर, पित्तप्रकृति, दिनबली, अग्नितत्त्व और पूर्व की स्वामिनी है।

मकर—चर, स्त्री, पृथ्वीतत्त्व, वातप्रकृति, पिंगलवर्ण, रात्रिबली, उच्चाभि-लाषी और दक्षिण की स्वामिनी है।

कुम्भ—पुरुष, स्थिर, वायुतत्त्व, विचित्रवर्ण, शीर्षोदय, अर्द्धजल, त्रिदोष प्रकृति और दिनबली है।

मीन—द्विस्वभाव, स्त्रीजाति, कफप्रकृति, जलतत्त्व, रात्रिबली, पिंगलवर्ण और उत्तर की स्वामिनी है।

इन लग्नों का जैसा स्वरूप बतलाया गया है, उन लग्नों में उत्पन्न हुए व्यक्तियों का वैसा ही स्वभाव होता है।

द्वितीयोऽध्यायः

ततः प्रोवाच भगवान् दिग्वासाः श्रमणोत्तमः ।
यथावस्थासु[1] विन्यासं द्वादशांगविशारदः ॥1॥

शिष्यों के उक्त प्रश्नों के किये जाने पर द्वादशांग के पारगामी दिगम्बर श्रमणोत्तम भगवान् भद्रबाहु आगम में जिस प्रकार से उक्त प्रश्नों का वर्णन निहित है उसी प्रकार से अथवा प्रश्नक्रम से उत्तर देने के लिए उद्यत हुए ॥ 1 ॥

भवद्भिर्यदहं पृष्टो निमित्तं जिनभाषितम् ।
समासव्यासतः सर्वं तन्निबोध यथाविधि ॥2॥

आप सबने मुझसे यह पूछा कि "शुभाशुभ जानने के लिए जिनेन्द्र भगवान् ने जिन निमित्तों का वर्णन किया है, उन्हें बतलाओ।" अतः मैं संक्षेप और विस्तार से उन सबका यथाविधि वर्णन करता हूँ, अवगत करो ॥ 2 ॥

प्रकृतेर्योऽन्यथाभावो विकारः सर्व उच्यते ।
एवं विकारे[2] विज्ञेयं भयं तत्प्रकृतेः[3] सदा ॥3॥

प्रकृति का अन्यथाभाव विकार कहा जाता है। जब कभी तुमको प्रकृति का विकार दिखलाई पड़े तो उस पर से ज्ञात करना कि यहाँ पर भय होने वाला है ॥ 3 ॥

यः[4] प्रकृतेर्विपर्यासः प्रायः संक्षेपत उत्पातः ।
क्षिति-गगन-दिव्यजातो यथोत्तरं गुरुतरं भवति ॥4॥

प्रकृति के विपरीत घटना घटित होना उत्पात है। ये उत्पात तीन प्रकार के होते हैं - भौमिक, अन्तरिक्ष और दिव्य। क्रमशः उत्तरोत्तर ये दुःखदायक तथा कठिन होते हैं ॥ 4 ॥

उल्कानां प्रभवं रूपं प्रमाणं फलमाकृतिः ।
यथावत्[5] संप्रवक्ष्यामि तन्निबोधय[6] तत्त्वतः ॥5॥

उल्काओं की उत्पत्ति, रूप, प्रमाण, फल और आकृति का यथार्थ वर्णन करता हूँ। आप लोग यथार्थ रूप से इसे अवगत करें ॥ 5 ॥

1. शास्त्रविन्यास मु० । 2. विकारो विज्ञेयः मु० A. । 3. स प्रकृतेरन्यथाभवः मु० A. । 4. यह श्लोक मुद्रित प्रति में नहीं है । 5. यथावस्थं मु० । 6. तन्निबोधत मु० ।

भौतिकानां शरीराणां स्वर्गात् प्रच्यवतामिह ।
सम्भवश्चान्तरिक्षे तु तज्ज्ञैरुल्केति संज्ञिता ॥6॥

भौतिक—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इन पाँच भूतों से निष्पन्न शरीरों को धारण किये हुए देव जब स्वर्ग से इस लोक में आते हैं, तब उनके शरीर आकाश में विचित्र ज्योति-रूप को धारण करते हैं; इसी ज्योति का नाम विद्वानों ने उल्का कहा है ॥ 6 ॥

तत्र तारा तथा धिष्ण्यं विद्युच्चाशनिभिः सह ।
उल्का विकारा बोद्धव्या [1]निपतन्ति निमित्ततः ॥7॥

तारा, धिष्ण्य, विद्युत् और अशनि ये सब उल्का के विकार हैं और ये निमित्त पाकर गिरते हैं ॥ 7 ॥

ताराणां[2] च प्रमाणं च[3] धिष्ण्यं तद्द्विगुणं भवेत् ।
विद्युद्विशालकुटिला रूपतः क्षिप्रकारिणी[4] ॥8॥

तारा का जो प्रमाण है उससे लम्बाई में दूना धिष्ण्य होता है। विद्युत् नाम वाली उल्का बड़ी, कुटिल—टेढ़ी-मेढ़ी और शीघ्रगामिनी होती है ॥ 8 ॥

अशनिश्चक्रसंस्थाना दीर्घा भवति रूपतः ।
पौरुषी तु भवेदुल्का प्रपतन्ती विवर्द्धते ॥9॥

अशनि नाम की उल्का चक्राकार होती है। पौरुषी नाम की उल्का स्वभाव से लम्बी होती है तथा गिरते समय बढ़ती जाती है ॥ 9 ॥

चतुर्भागफला तारा धिष्ण्यमर्धफलं भवेत् ।
पूजिताः[5] पद्मसंस्थाना मांगल्या ताश्च पूजिताः ॥10॥

तारा नाम की उल्का का फल चतुर्थांश होता है, धिष्ण्य संज्ञक उल्का का फल आधा होता है और जो उल्का कमलाकार होती है वह पूजने योग्य तथा मंगलकारी होती है ॥ 10 ॥

पापाः [6]घोरफलं दद्युः शिवाश्चापि शिवं फलम् ।
व्यामिश्राश्चापि व्यामिश्रं येषां तैः प्रतिपुद्गलैः ॥11॥

---

1. ते पतन्ति मु० । 2. तारातारा मु० । 3. तु मु० । 4. क्षिप्रचारिणि मु० । 5. रक्ता पीतास्तु मध्यास्तु श्वेताः स्निग्धास्तु पूजिताः मु० । 6. पापफलं मु० ।

पापरूप उल्काएँ घोर अशुभ फल देती हैं तथा शुभ रूप उल्काएँ शुभ फल देती हैं। शुभ और अशुभ मिश्रित उल्काएँ मिश्रित उभय रूप फल प्रदान करती हैं। इन पुद्गलों का ऐसा ही स्वभाव है ॥ 11 ॥

इत्येतावत् समासेन प्रोक्तमुल्कासुलक्षणम् ।
पृथक्त्वेन प्रवक्ष्यामि लक्षणं व्यासत: पुन: ॥ 12॥

यहाँ तक उल्काओं के संक्षेप में लक्षण कहे, अब पृथक्-पृथक् पुन: विस्तार से वर्णन करता हूँ ॥ 12 ॥

इति श्रीभद्रबाहुसंहितायामुल्कालक्षणो द्वितीयोऽध्याय: ।

विवेचन - प्रकृति का विपरीत परिणमन होने ही अनिष्ट घटनाओं के घटने की संभावना समझ लेनी चाहिए। जब तक प्रकृति अपने स्वभावरूप में परिणमन करती है, तब तक अनिष्ट होने की आशंका नहीं। संहिता ग्रंथों में प्रकृति को इष्टानिष्ट सूचक निमित्त माना गया है। दिशाएँ, आकाश, आतप, वर्षा, चाँदनी, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, उषा, सन्ध्या आदि सभी निमित्तसूचक हैं। ज्योतिष शास्त्र में इन सभी निमित्तों द्वारा भावी इष्टानिष्टों की विवेचना की गई है। इस द्वितीय अध्याय में उल्काओं के स्वरूप का विवेचन किया गया है और इनका फलादेश तृतीय अध्याय में वर्णित है। यद्यपि प्रथम अध्याय के विवेचन में उल्काओं के स्वरूप का संक्षिप्त और सामान्य परिचय दिया गया है, तो भी यहाँ संक्षिप्त विवेचन करना अभीष्ट है।

रात को प्राय: जो तारे टूटकर गिरते हुए जान पड़ते हैं, वे ही उल्काएँ हैं। अधिकांश उल्काएँ हमारे वायुमण्डल में ही भस्म हो जाती हैं और उनका कोई अंश पृथ्वी तक नहीं आ पाता, परन्तु कुछ उल्काएँ बड़ी होती हैं। जब वे भूमि पर गिरती हैं, तो उनमें प्रचण्ड ज्वाला सी निकलती है और सारी भूमि उस ज्वाला से प्रकाशित हो जाती है। वायु को चीरते हुए भयानक वेग से उनके चलने का शब्द कोसों तक सुनाई पड़ता है और पृथ्वी पर गिरने की धमक भूकम्प-सी जान पड़ती है। कहा जाता है कि आरम्भ में उल्कापिण्ड एक सामान्य ठण्डे प्रस्तर-पिण्ड के रूप में रहता है। यदि यह वायुमण्डल में प्रविष्ट हो जाता है तो घर्षण के कारण इसमें भयंकर ताप और प्रकाश उत्पन्न होता है, जिससे वह जल उठता है और भीषण गति से दौड़ता हुआ अन्त में राख हो जाता है और जब यह वायुमण्डल में राख नहीं होता, तब पृथ्वी पर गिरकर भयानक दृश्य उत्पन्न कर देता है।

उल्काओं के गगन का मार्ग नक्षत्र कक्षा के आधार पर निश्चित किया जाय

तो प्रतीत होगा कि बहुतेरी उल्काएँ एक ही बिन्दु से चलती हैं, पर आरम्भ में अदृश्य रहने के कारण वे हमें एक बिन्दु से आती हुई नहीं जान पड़तीं। केवल उल्का-झड़ियों के समान ही उनके एक बिन्दु से चलने का आभास हमें मिलता है। उस बिन्दु को जहाँ से उल्काएँ चलती हुई मालूम पड़ती हैं, संपात मूल कहते हैं। आधुनिक ज्योतिष उल्काओं को केतुओं के रोड़े, टुकड़े या अंश मानता है। अनुमान किया जाता है कि केतुओं के मार्ग में असंख्य रोड़े और ढोंके बिखर जाते हैं। सूर्य गमन करते-करते जब इन रोड़ों के निकट से जाता है तो ये रोड़े टकरा जाते हैं और उल्का के रूप में भूमि में पतित हो जाते हैं। उल्काओं की ऊँचाई पृथ्वी से 50-70 मील के लगभग होती है। ज्योतिषशास्त्र में इन उल्काओं का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके पतन द्वारा शुभाशुभ का परिज्ञान किया जाता है।

उल्का के ज्योतिष में पाँच भेद हैं---धिष्ण्या, उल्का, अशनि, विद्युत् और तारा। उल्का का 15 दिनों में, धिष्ण्या और अशनि का 45 दिनों में एवं तारा और विद्युत् का छः दिनों में फल प्राप्त होता है। अशनि का आकार चक्र के समान है, यह बड़े शब्द के साथ पृथ्वी फाड़ती हुई मनुष्य, गज, अश्व, मृग, पत्थर, गृह, वृक्ष और पशुओं के ऊपर गिरती है। तड़-तड़ शब्द करती हुई विद्युत् अचानक प्राणियों को त्रास उत्पन्न करती हुई कुटिल और विशाल रूप में जीवों और ईंधन के ढेर पर गिरती है। । पतली छोटी पूँछवाली धिष्ण्या जलते हुए अंगारे के समान चालीस हाथ तक दिखलाई देती है। इसकी लम्बाई दो हाथ की होती है। तारा ताँबा, कमल, ताररूप और शुक्ल होती है, इसकी चौड़ाई एक हाथ और खिंचती हुई-सी आकाश में तिरछी या आधी उठी हुई गमन करती है। प्रतनुपुच्छा विशाला उल्का गिरते-गिरते बढ़ती है, परन्तु इसकी पूँछ छोटी होती जाती है, इसकी दीर्घता पुरुष के समान होती है, इसके अनेक भेद हैं। कभी यह प्रेत, शस्त्र, खर, करभ, नाका, बन्दर, तीक्ष्ण दतवाले जीव और मृग के समान आकारवाली हो जाती है। कभी गोह, साँप और धूमरूप वाली हो जाती है। कभी यह दो सिरवाली दिखलाई पड़ती है। यह उल्का पाप-मय मानी गई है।

कभी ध्वज, मत्स्य, हाथी, पर्वत, कमल, चन्द्रमा, अश्व, तप्तरज और हंस के समान दिखलायी पड़ती है, यह उल्का शुभकारक पुण्यमयी है। श्रीवत्स, वज्र, शंख और स्वस्तिक रूप में प्रकाशित होनेवाली उल्का कल्याणकारी और सुभिक्षदायक है। अनेक वर्णवाली उल्काएँ आकाश में निरन्तर भ्रमण करती रहती हैं।

जिन उल्काओं के सिर का भाग मकर के समान और पूँछ गाय के समान

हो, वे उल्काएँ अनिष्ट सूचक तथा मनुष्य जाति के लिए भयप्रद होती हैं। चमक या प्रकाशवाली छोटी-छोटी उल्काएँ—जिनका स्वरूप धिष्ण्या के समान है, किसी महत्त्वपूर्ण घटना की सूचना देती है। तार के समान लम्बी उल्काएँ, जिनका गगन सम्पात बिन्दु से भूमण्डल तक एक-सा ही रहा है, बीच में किसी भी प्रकार का विराम नहीं है, वे व्यक्ति के जीवन की गुप्त और महत्त्वपूर्ण बातों को प्रकट करती हैं। तार या लड़ी रूप में रहना उसका व्यक्ति और समाज के जीवन की शृंखला की सूचक है। सूची रूप में पड़ने वाली उल्का देश और राष्ट्र के उत्थान की सूचिका है।

इधर-उधर उठी हुई और विशृंखलित उल्काएँ आन्तरिक उपद्रव की सूचिका है। जब देश में महान् अशान्ति उत्पन्न होती है, उस समय इस प्रकार की छिट-फुट गिरती पड़ती उल्काएँ दिखलायी पड़ती हैं। उल्काओं का पतन प्रायः प्रतिदिन होता है। पर उनसे इष्टानिष्ट की सूचना अवसर विशेषों पर ही मिलती है।

उल्काओं का फलादेश उनकी बनावट और रूप-रंग पर निर्भर करता है। यदि उल्का फीकी, केवल तारे की तरह जान पड़ती है तो उसे छोटी उल्का या टूटता तारा कहते हैं। यदि उल्का इतनी बड़ी हुई कि उसका अंश पृथ्वी तक पहुँच जाय तो उसे उल्का प्रस्तर कहते हैं और यदि उल्का बड़ी होने पर भी आकाश ही में फटकर चूर-चूर हो जाए तो उसे साधारणतः अग्निपिण्ड कहते हैं। छोटी उल्काएँ महत्त्वपूर्ण नहीं होती हैं, इनके द्वारा किसी खास घटना की सूचना नहीं मिलती है। ये केवल दर्शक व्यक्ति के जीवन के लिए ही उपयोगी सूचना देती है। बड़ी-बड़ी उल्काओं का सम्बन्ध राष्ट्र से है, ये राष्ट्र और देश के लिए उपयोगी सूचनाएँ देती हैं। यद्यपि आधुनिक विज्ञान उल्का-पतन को मात्र प्रकृतिलीला मानता है, किन्तु प्राचीन ज्योतिषियों ने इनका सम्बन्ध वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन के उत्थान-पतन के साथ जोड़ा है।

तृतीयोऽध्यायः

नक्षत्रं यस्य यत्पुंसः पूर्णमुल्का प्रताडयेत् ।
भयं तस्य भवेद् घोरं यतस्तत् कम्पते हतम् ॥1॥

जिस पुरुष के जन्म-नक्षत्र को अथवा नाम-नक्षत्र को उल्का पूर्णता से ताड़ित करे उस पुरुष को घोर भय होता है । यदि जन्म-नक्षत्र को कम्पायमान करे तो उसका घात होता है ॥ 1 ॥

अनेकवर्णं नक्षत्रमुल्का हन्युर्यदा समाः ।
तस्य देशस्य तावन्ति भयान्युग्राणि निर्दिशेत् ॥2॥

जिस वर्ष जिस देश के नक्षत्र को अनेक वर्ण की उल्का आघात करे तो उस देश या ग्राम को उग्र भय होता है ॥ 2 ॥

येषां वर्णेन संयुक्ता सूर्यादुल्का प्रवर्तते ।
तेभ्यःसंजायते तेषां भयं येषां दिशं पतेत् ॥3॥

सूर्य से मिलती हुई उल्का जिस वर्ण से युक्त होकर जिस दिशा में गिरे, उस दिशा में उस वर्ण वाले को वह घोर भय करने वाली होती है ॥ 3 ॥

नीला पतन्ति या उल्काः सस्यं सर्वं विनाशयेत् ।
त्रिवर्णा त्रीणि घोराणि भयान्युल्का निवेदयेत् ॥4॥

यदि नीलवर्ण की उल्का गिरे तो वह सर्व प्रकार के धान्यों को नाश करती है अर्थात् उनके नाश की सूचना देती है और यदि तीन वर्ण की उल्का गिरे तो तीन प्रकार के घोर भयों को प्रकट करती है ॥ 4 ॥

विकीर्यमाणा कपिला विशेषं वामसंस्थिता[1] ।
खण्डा भ्रमन्त्यो[2] विकृताः[3] सर्वा उल्काः भयावहाः ॥5॥

बिखरी हुई कपिल वर्ण की विशेषकर वामभाग में गमन करने वाली, घूमती हुई, खण्डरूप एवं विकृत उल्काएँ दिखाई दें तो वे सब भय होने की सूचना करती हैं ॥ 5 ॥

उल्काऽशनिश्च धिष्ण्यं च प्रपतन्ति यतो मुखाः ।
तस्यां दिशि विजानीयात् ततो भयमुपस्थितम् ॥6॥

उल्का, अशनि और धिष्ण्या जिस दिशा में मुख से गिरे तो उस दिशा में भय की उपस्थिति अवगत करनी चाहिए ॥ 6 ॥

---

1. वामकर्णस्थिता मु० B. C. । 2. भ्रमन्त्या मु० C । 3. विकाराः मु० C ।

सिंह-व्याघ्र-वराहोष्ट्र-श्वानद्वीपि[1]-खरोपमाः ।
शूलपट्टिशसंस्थाना धनुर्बाण-गदा[2] यथा: ॥7॥

पाशवज्रासिसदृशाः परश्वर्धेन्दुसंन्निभाः।
गो[3]धा-सर्प-शृगालानां सदृशाः शल्यकस्य च ॥8॥

मेषाजमहिषाकाराः काकाऽऽकृतिवृकोपमाः ।
शश[4]मार्जार-सदृशाः पक्ष्यकोदग्रसन्निभाः ॥9॥

ऋक्ष-वानरसंस्थानाः कबन्धसदृशाश्च याः ।
अला[5]तचक्रसदृशा [6]वक्राक्षप्रतिमाश्च[7] याः[8] ॥10॥

शक्तिलाङ्गूलसंस्थाना[9] यस्याश्चोभयतः शिरः ।
स्वास्तन्यमाना नागाभाः प्रपतन्ति[10] स्वभावतः ॥11॥

सिंह, व्याघ्र, चीता, शूकर, ऊँट, कुत्ता, तेंदुआ, गदहा, त्रिशूल, पट्टिश—एक प्रकार का आयुध, धनुष, बाण, गदा, फरसा, वज्र, तलवार, फरसा-अर्द्धचन्द्राकार कुल्हाड़ी, गोह, सर्प, शृगाल, भाला, मेढ़ा, बकरा, भैंसा, कौआ, भेड़िया, खरगोश, बिल्ली, अत्यन्त ऊँचे उड़नेवाले पक्षी—गृद्ध आदि, रीछ, बन्दर, सिर कटे हुए धड़, कुम्हार का चाक, टेढ़ी आँखवाला, शक्तिआयुध विशेष, हल इन सबके आकार वाली और दो सिरवाली तथा हाथी के आकारवाली उल्काएँ स्वभाव से गिरती हैं ॥7-11॥

उल्काऽशनिश्च विद्युच्च सम्पूर्णं कुरुते फलम् ।
पतन्ती जनपदान् त्रीणि उल्का तीव्र[11] प्रबाधते ॥12॥

उल्का, अशनि और विद्युत् ये तीनों पूर्ण फल देती हैं और इन तीनों के गिरने से देशवासियों को पूर्ण बाधा होती है ॥12॥

यथावदनुपूर्वेण तत् प्रवक्ष्यामि तत्त्वतः ।
अग्रतो देशमार्गेण मध्येनानन्तरं ततः ॥13॥

पुच्छेन पृष्ठतो देशं पतन्त्युल्का विनाशयेत् ।
मध्यमा न प्रशस्यन्ते नभस्युल्काः पतन्ति याः ॥14॥

1. द्वीपिव्याल मु० । 2. गदा निभः मु० । 3. शशमार्जारसदृशाः पक्षकोदग्रसन्निभाः, मु० । 4. गोधासर्पशृगालसंस्थाना मु० । 5. अलात मु० A । 6. कबन्धवक्र मु० C D । 7. सदृशाः मु० C । 8. या मु० C । 9. संस्थाना आ० । 10. प्रपतन्ति मु० । 11. प्रबोधते मु० A B ।

पूर्व परम्परा के अनुसार फलादेश का निरूपण करता हूँ। यदि उल्का अग्रभाग से गिरे तो देश के मार्ग का नाश करती है। यदि मध्यभाग से गिरे तो देश के मध्यभाग के और पूँछ भाग से गिरे तो देश के पृष्ठ भाग के विनाश की सूचना देती है। मध्यम-समान साधारण अवस्थावाली उल्का का पतन भी प्रशस्त नहीं होता है ॥13-14॥

[1]स्नेहवत्योऽन्यगामिन्यो प्रशस्ताः स्युः प्रदक्षिणाः।
उल्का यदि पतेच्चित्रा [2]पक्षिणाम[3]हिताय सा ॥15॥

मध्यम उल्का स्नेहयुक्त होती हुई दक्षिण मार्ग से गमन करे तो वह प्रशस्त है और चित्र-विचित्र रंग की मध्यम उल्काएँ वाम मार्ग से गमन करें तो पक्षियों के लिए अहित कारक होती हैं ॥15॥

श्याम-लोहितवर्णा च सद्यः कुर्याद् महद् भयम्।
उल्कायां भस्मवर्णायां परचक्रागमो भवेत् ॥16॥

काली और लालवर्ण की उल्का गिरे तो वह शीघ्र ही महाभय की सूचना देती है तथा भस्मवर्ण की उल्का परचक्र का आना सूचित करती है ॥16॥

अग्निमग्निप्रभा कुर्याद् व्याधिमञ्जिष्ठसन्निभा।
नीला कृष्णा च धूम्रा च शुक्ला वाऽसिसमद्युतिः[4] ॥17॥
उल्का नीचैः समा स्निग्धा पतन्ति भयमादिशेत् ॥17½॥

शुक्ला रक्ता च पीता च कृष्णा चापि यथाक्रमम्।
चतुर्वर्णा विभक्तव्या साधुनोक्ता यथाक्रमम् ॥18॥

अग्नि की प्रभावाली उल्का अग्नि का भय करती है। मंजीठ के समान रंगवाली उल्का व्याधि की सूचना देती है। नील, कृष्ण, धूम्र तलवार के समान द्युतिवाली उल्का नीच प्रकृति-अधम होती है। स्निग्ध उल्का सम प्रकृतिवाली होती है। शुक्ल, रक्त, पीत और कृष्ण इन वर्णोंवाली उल्का क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ण में विभाजित समझनी चाहिए। ये चारों वर्णवाली उल्काएँ क्रमशः ब्राह्मणादि चारों वर्णों को भय की सूचना देती हैं, ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है। अभिप्राय यह है कि श्वेतवर्ण की उल्का ब्राह्मण संज्ञक है, इसका फलादेश ब्राह्मण वर्ण के लिए विशेष रूप से और सामान्यतः अन्य वर्णवालों को भी प्राप्त होता है। इसी प्रकार रक्त से क्षत्रिय, पीत से वैश्य और कृष्ण से शूद्रवर्ण के लिए प्रधानतः फल और गौण रूप से अन्य वर्णवालों को भी फलादेश प्राप्त होता है ॥17-18॥

---

1. स्नेहवन्तो आ०। 2. दक्षिणा मु० A. D.। 3. महाभय मु० C.। 4. एतद्वर्णा तदाविशेत् मु०, B. पतेत् वर्णा नदा ऽऽदिशेत्, मु० D.।

उदीच्यां ब्राह्मणान् हन्ति प्राच्यामपि च क्षत्रियान् ।
वैश्यान् निहन्ति याम्यायां प्रतीच्यां शूद्रघातिनी ॥19॥

यदि उल्का उत्तर दिशा में गिरे तो ब्राह्मणों का घात करती है, पूर्व दिशा में गिरे तो क्षत्रियों का, दक्षिण दिशा में गिरे तो वैश्यों का और पश्चिम दिशा में गिरे तो शूद्रों का घात करती है ॥19॥

उल्का [1]रूक्षेण वर्णेन स्वं स्वं वर्णं प्रबाधते ।
स्निग्धा चैवानुलोमा च प्रसन्ना च न बाधते ॥20॥

उल्का रूक्ष वर्ण से अपने-अपने वर्ण को बाधा देती है—श्वेतवर्ण की होकर रूक्ष हो तो ब्राह्मणों के लिए बाधासूचक, रक्तवर्ण की होकर रूक्ष हो तो क्षत्रियों को बाधासूचक, पीतवर्ण की होकर रूक्ष हो तो वैश्यों को बाधासूचक और कृष्णवर्ण की होकर रूक्ष हो तो शूद्रों को बाधासूचक होती है। स्निग्ध और अनुलोम—सव्यमार्ग तथा प्रसन्न उल्का हो तो शुभ होने से अपने-अपने वर्ण को बाधा नहीं देती है ॥20॥

या चादित्यात्[2] पतेदुल्का वर्णतो वा दिशोऽपि वा ।
तं तं वर्णं निहन्त्याशु वैश्वानर इवार्चिभि: ॥21॥

जो उल्का सूर्य से निकलकर जिस वर्ण की होकर जिस दिशा में गिरे उस वर्ण और दिशा पर से उसी-उसी वर्णवाले को अग्नि की ज्वाला के समान शीघ्र नाश करती है ॥21॥

अनन्तरां दिशं दीप्ता येषामुल्काग्रत: पतेत् ।
तेषां स्त्रियश्च गर्भाश्च भयमिच्छन्ति दारुणम् ॥22॥

यदि उल्का अव्यवहित दिशा को दीप्त करती हुई अग्रभाग में गिरे तो स्त्रियों और गर्भों को भयानक भय करती है अर्थात् गर्भनाश की सूचिका है ॥22॥

कृष्णा नीला च रूक्षाश्च प्रतिलोमाश्च[3] गर्हिता:[4] ।
पशुपक्षिसुसंस्थाना भैरवाश्च भयावहा: ॥23॥

कृष्ण अथवा नील वर्ण की रूक्ष उल्का प्रतिलोम—उलटे मार्ग से अर्थात् अपसव्यमार्ग—बायें से गिरे तो निन्दित है। यदि पशु-पक्षी की आकारवाली हो तो भयोत्पादक होती है ॥23॥

अनुगच्छन्ति याश्चोल्का बाह्यास्तूल्का समन्तत: ।
[5]वत्सानुसारिणी नाम सा तु राष्ट्रं विनाशयेत् ॥24॥

---

1. रूक्षेण वर्णेन मु० । 2. या स्वादित्यात् आ० । 3-4. [illegible] मु० [illegible] । 5. वर्णानुसारिणी मु० ।

जो उल्का मार्ग में गमन करती हुई आस-पास में दूसरी उल्काओं से भिड़ जाय, वह वत्सानुसारिणी (बच्चे की आकारवाली) उल्का कही जाती है और ऐसी उल्का राष्ट्र का नाश सूचित करती है ॥24॥

रक्ता पीता नभस्युल्काश्चेभ-नक्रेण[1] सन्निभाः ।
अन्येषां गर्हितानां च सत्त्वानां सदृशास्तु[2] याः[3] ॥25॥

उल्कास्ता न प्रशस्यन्ते निपतन्त्यः सुदारुणाः ।
यासु प्रपतमानासु[4] मृगा विविधमानुषाः ॥26॥

आकाश में उत्पन्न होती हुई जो उल्का हाथी और नक्र (मगर) के आकार तथा निन्दित प्राणियों के आकारवाली होती है, वह जहाँ गिरे वहाँ दारुण अशुभ फल की सूचना करती है और मृगों तथा विविध मनुष्यों को घोर कष्ट देती है ॥25-26॥

शब्दं मुञ्चन्ति दीप्तासु दिक्षु चासन्न[5] काम्यया ।
क्रव्यादाश्चाऽशु दृश्यन्ते[6] या खरा विकृताश्च याः ॥27॥

सधूम्रा या सनिर्घाता उल्कायाश्चमवाप्नुयुः[7] ।
सभूमिकम्पा परुषा रजस्विन्योऽपसव्यगाः[8] ॥28॥

ग्रहानादित्यचन्द्रौ च याः स्पृशन्ति दहन्ति वा ।
परचक्रभयं[9] घोरं क्षुधाव्याधिजनक्षयम् ॥29॥

जो उल्का अपने द्वारा प्रदीप्त दिशाओं में निकट कामना से शब्द करती - गड़गड़ाती हुई मांसभक्षी जीवों के समान शीघ्रता से दिखाई पड़े अथवा जो उल्का रूक्ष विकृतरूप धारण करती हुई धूमवाली, शब्दसहित, अग्नि के समान चमकवाली, भूमि को कँपाती हुई, कठोर, धूल उड़ाती हुई, बाएँ मार्ग से गमन करती हुई, ग्रहों तथा सूर्य और चन्द्रमा को स्पर्श करती हुई या जलाती हुई दिख पड़े -- गिरे तो वह परचक्र का घोर भय उपस्थित करती है तथा क्षुधा-रोग-जन क्षय, महामारी और मनुष्यों के नाश होने की सूचना देती है ॥27-29॥

एवं लक्षणसंयुक्ताः कुर्वन्त्युल्का महाभयम् ।
अष्टाशदवदुल्काभिर्दिशं[10] पश्येद् [11]यदाऽऽवृतम् ॥30॥

युगान्त इति विख्यातः[12] षड्मासेनोपलभ्यते[13] ।
पद्मश्रीवृक्षचन्द्रार्कनंद्यावर्तघटोपमाः ॥31॥

---

1. श्येनयानेन मु० । 2-3. नराः मु० A । 4. प्रजा आ० । 5. विधूमानव मु० । 6. भाषन्ते आ० । 7. उल्काश्चाप्यनुयुः मु० । 8. समव्यगाः मु० C । 9. भूपभयं आ० । 10. दिश आ० । 11. यदावृताम् मु० । 12. विख्यातं मु० । 13. भव्याद्दुर्गोच भया मु० ।

वर्द्धमानध्वजाकारा: पताकामत्स्यकूर्मवत् ।
वाजिवारणरूपाश्च शंखवादित्रछत्रवत् ॥32॥

[1]सिंहासनरथाकारा रूपपिण्डव्यवस्थिता: ।
रूपैरेतै: प्रशस्यन्ते[2] सुखमुल्का:[3] समाहिता: ॥33॥

उपर्युक्त लक्षणयुक्त उल्का महान् भय उत्पन्न करती है। यदि अष्टापद के समान उल्का दृष्टिगोचर हो तो छह मास में युगान्त की सूचिका समझनी चाहिए। यदि पूर्ण श्रीवृक्ष, चन्द्र, सूर्य, नन्द्यावर्त, कलश, वृद्धिगत होनेवाले ध्वज, पताका, मछली, कछुआ, अश्व, हाथी, शंख, वादित्र, छत्र, सिंहासन, रथ और चाँदी के पिण्ड के आकार रूप और आकारों में उल्का गिरे तो उसे उत्तम अवगत करना चाहिए। यह उल्का सभी को सुख देनेवाली है ॥30-33॥

नक्षत्राणि [4]विमुञ्चन्त्य: स्निग्धा: [5]प्रत्युत्तमा: शुभा: ।
सुवृष्टि क्षेममारोग्यं शस्यसम्पत्तिरुत्तमा: ॥34॥

यदि उल्का नक्षत्रों को छोड़कर गमन करनेवाली स्निग्ध और उत्तम शुभ लक्षणवाली दिखलाई दे तो सुवृष्टि, क्षेम, आरोग्य और धान्य की उत्पत्ति वाली होती है ॥34॥

सोमो राहुश्च शुक्रश्च केतुर्भौमश्च [6]यायिन: ।
बृहस्पतिर्बुध: सूर्य: [7]सौरिश्चाऽपीह[8] नागरा:[9] ॥35॥

यायी — युद्ध के लिए अन्य देश या नृपति पर आक्रमण करनेवाले व्यक्ति के लिए चन्द्र, राहु, शुक्र, केतु और मंगल का बल आवश्यक होता है और स्थायी — आक्रमण सहनेवाला देश, नृपति या अन्य व्यक्ति आक्रमित के लिए बृहस्पति, बुध, सूर्य और शनि का बल आवश्यक होता है। इन ग्रहों के बलाबल पर से यायी और स्थायी के बल का विचार करना चाहिए ॥35॥

हन्युर्मध्येन या[10] उल्का ग्रहाणां नाम विद्युता ।
सनिर्घाता सधूम्रा वा तत्र वक्ष्यादिदं फलम् ॥36॥

जो उल्का मध्य भाग से ग्रह को हने — प्रताड़ित करे, वह विद्युत् संज्ञक है। यह उल्का निर्घात सहित और धूम सहित हो तो उसका फल निम्न प्रकार होता है ॥36॥

1. [illegible] मु॰ A. रथस्कन्धाभा मु॰ B. D. । 2. प्रशस्यन्ते मु॰ । 3. सुखं सर्वं मु॰ A. [illegible] मु॰ C. । 4. विमुञ्चन्ते आ॰ । 5. प्रत्युत्तमा मु॰ D. । 6. यो [illegible] मु॰ A. [illegible] मु॰ C. । 7. शौरि मु॰ । A. सौर मु॰ D. । 8-9. श्चापि[illegible] मु॰ A. । 10. [illegible] मु॰ ।

नगरेषूपसृष्टेषु नागराणां महद्भयम् ।
यायिषु [1]चोपसृष्टेषु यायिनां तदभयं भवेत् ॥37॥

स्थायी के नगर की व्यूह रचना पर पूर्वोक्त प्रकार की उल्का गिरे तो उस स्थायी के नगरवासियों को महान् भय होता है । यदि यायी के सैन्य-शिविर पर गिरे तो यायी पक्ष वालों को महान् भय होता है ॥36॥

सन्ध्यानां रोहिणीं पौष्णं चित्रां त्रीण्युत्तराणि च ।
मैत्रं चोल्का[2] यदा हन्यात् तदा स्यात् पार्थिवं[3] भयम् ॥38॥

यदि सन्ध्या कालीन उल्का रोहिणी, रेवती, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा और अनुराधा नक्षत्रों को हने प्रताड़ित करे तो राजा को भय होता है अर्थात् सन्ध्याकालीन उल्का इन नक्षत्रों में प्रताड़ना कर गिरे तो देश और नृपति पर विपत्ति आती है ॥38॥

वायव्यं वैष्णवं पुष्यं यद्युल्काभि: प्रताडयेत् ।
ब्रह्मक्षत्रभयं विन्द्याद् राज्ञश्च भयमादिशेत् ॥39॥

स्वाती, श्रवण और पुष्य नक्षत्रों को यदि उल्का प्रताड़ित करे तो ब्राह्मण, क्षत्रिय और राजा को भय की सूचना देती है ॥39॥

यथा गृहं तथा ऋक्षं चातुर्वर्ण्यं विभावयेत् ।
अत: परं प्रवक्ष्यामि सेनासूल्का यथाविधि ॥40॥

जैसे ग्रह अथवा नक्षत्र हों, उन्हीं के अनुसार चारों वर्णों के लिए शुभाशुभ अवगत करना चाहिए । अब इससे आगे सेना के सम्बन्ध में उल्का का शुभाशुभ फल निरूपित करते हैं ॥40॥

सेनायास्तु समुद्योगे राज्ञो[4] विविध[5] - मानवा: ।
उल्का यदा पतन्तीति तदा वक्ष्यामि लक्षणम् ॥41॥

युद्ध के उद्योग के समय सेना के समक्ष जो उल्का गिरती है, उसका लक्षण, फलादि राजाओं और विविध मनुष्यों के लिए वर्णित किया जाता है ॥41॥

[6]उदगच्छन् सोममर्कं वा यद्युल्का संविदारयेत् ।
स्थावराणां विपर्यासं तस्मिन्नुत्पातदर्शने[7] ॥42॥

---

1. याम्येष्वनुपसृष्टेषु मु० । 2. चोल्का मु० । 3. पार्थिवाद् मु० । 4. राज्ञा मु० । 5. विवदमानया मु० । 6. उद्गच्छ मु० । 7. अस्मिन्नुत्पाते दर्शने मु० ।

यदि ऊपर को गमन करती हुई उल्का चन्द्र और सूर्य को विदारण करे तो स्थायि —स्थायी नगरवासियों के लिए विपरीत उत्पातों की सूचना देती है ॥42॥

अस्तं यातमथादित्यं सोममुल्का लिखेद् यदा ।
आगन्तुर्बध्यते सेना यथा चोशं[1] यथागमम् ॥43॥

सूर्य और चन्द्रमा के अस्त होने पर यदि उल्का दिखलाई दे तो वह आनेवाले यायी की दिशा में आगन्तुक सेना के वध का निर्देश करती है ॥43॥

उदयच्छेत् सोममर्कं वा यद्युल्का प्रतिलोमत: ।
प्रविशन्नागराणां स्याद् विपर्यास[2]स्तथागते ॥44॥

प्रतिलोम मार्ग से गमन करती हुई उल्का उदय होते हुए सूर्य और चन्द्र-मण्डल में प्रवेश करे तो स्थायी और यायी दोनों के लिए विपरीत फलदायक अर्थात् अशुभ होती है ॥44॥

एवंवास्तगते[3] उल्का आगन्तूनां भयं भवेत् ।
प्रतिलोमा जयं कुर्याद् यथास्तं चन्द्रसूर्ययो: ॥45॥

उपर्युक्त योग में सूर्य-चन्द्र के अस्त समय प्रतिलोम मार्ग से गमन करती हुई सूर्य-चन्द्र के मण्डल में आकर उल्का अस्त हो जाय तो स्थायी और यायी दोनों के लिए भयोत्पादक है ॥45॥

उदये भास्करस्योल्का यातोऽग्रतोऽभिसर्पति[4] ।
सोमस्यापि जयं कुर्यादेवां पुरस्सरावृति:[5] ॥46॥

यदि उल्का सूर्योदय होते हुए सूर्य के आगे और चन्द्र के उदय होते हुए चन्द्रमा के आगे गमन करे तथा मार्गों की आवृत्ति कर हो तो उसे जयसूचक समझना चाहिए ॥46॥

सेनामभिमुखी भूत्वा यद्युल्का प्रतिगृह्यते[6] ।
प्रतिसेनावधं विन्द्यात् तस्मिन्नुत्पातदर्शने ॥47॥

यदि उल्का सेना के सामने होकर गिरती हुई दिखलाई पड़े तो प्रतिसेना (प्रतिद्वन्द्वी सेना) के वध की सूचिका समझनी चाहिए ॥47॥

---

1. यथाद्वारं मु०, निर्ग्रन्थचर्चा यथा, मु० C. । 2. तदागते मु० । 3. यथैवास्तमने मु० A, एवंवास्तमिन मु० C. । 4. यो ऽग्रतो ऽभिसर्पति मु० । 5. पुरस्सरावृत्ति आ० । 6. प्रतिदृश्यते मु० ।

अथ यद्युभयां[1] सेनामेकैकं प्रतिलोमतः ।
उल्का तूर्णं प्रपद्येत उभयत्र भयं भवेत् ॥48॥

यदि दोनों सेनाओं की ओर एक-एक सेना में प्रतिलोम-अपसव्य मार्ग से उल्का शीघ्रता से गिरे तो दोनों सेनाओं को भय होता है ॥48॥

येषां सेनासु निपतेदुल्का नीलमहाप्रभा[2] ।
सेनापतिवधस्तेषामचिरात् सम्प्रजायते ॥49॥

नीले रंग की महाप्रभावशाली उल्का जिस सेना में गिरे उस सेना का सेनापति शीघ्र ही मरण को प्राप्त होता है ॥49॥

उल्कास्तु लोहिताः सूक्ष्माः पतन्त्यः पृतनां प्रति ।
यस्य राज्ञः प्रपद्यन्ते कुमारो हन्ति तं नृपम् ॥50॥

लोहित वर्ण की सूक्ष्म उल्का जिस राजा की सेना के प्रति गिरे, उस सेना के राजा को राजकुमार मारता है ॥50॥

उल्कास्तु बहुवः पीताः पतन्त्यः पृतनां प्रति ।
पृतनां व्याधितां प्राहुस्तस्मिन्नुत्पातदर्शने ॥51॥

पीतवर्ण की बहुत उल्काएँ सेना के समक्ष या सेना में गिरें तो उस उत्पात का फल सेना में रोग फैलना है ॥51॥

संघशास्त्राऽनुपद्येत् (?) उल्काः श्वेताः समन्ततः ।
ब्राह्मणेभ्यो भयं घोरं तस्य सैन्यस्य निर्दिशेत् ॥52॥

यदि श्वेत रंग की उल्का सेना में चारों तरफ गिरे तो वह उस सेना को और ब्राह्मणों को घोर भय की सूचना देती है ॥52॥

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु या पतेत्तिर्यगागता[4] ।
न तदा जायते युद्धं परिघा नाम सा भवेत् ॥53॥

बाण या खड्गरूप तिरछी उल्का सेना की व्यूह रचना में गिरे तो कुटिल युद्ध नहीं होता है, इसको परिघा नाम से स्मरण करते हैं - कहते हैं ॥53॥

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु पृष्ठतोऽपि[6] पतन्ति[7] याः ।
क्षयव्ययेन पीडयेरन्नुभयोः सेनयोर्नृपान्[8] ॥54॥

---

1. उभयं आ० । 2. महत्प्रभा मु० । 3. बहुशास्त्र प्रपद्येत् मु० । 4. पतन्ति आ० । 5. च सायका आ० । 6. पृष्ठतः आ० । 7. निपतन्ति आ० । 8. नृपाः आ० ।

सेना की व्यूह रचना के पीछे भाग में उल्का गिरे तो दोनों सेनाओं के राजाओं को वह नाश और हानि द्वारा कष्ट की सूचना करती है ॥54॥

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु प्रतिलोमाः पतन्ति याः ।
संग्रामेषु निपतन्ति[1] जायन्ते किंशुका वनाः ॥55॥

सेना की व्यूह रचना में अपसव्य मार्ग से उल्का गिरे तो संग्राम में योद्धा गिर पड़ते हैं—मारे जाते हैं, जिससे रणभूमि रक्तरंजित हो जाती है ॥55॥

उल्का यत्र समायान्ति यथाभावे [2]तथासु च ।
येषां मध्यान्तिकं यान्ति तेषां स्याद्विजयो ध्रुवम् ॥56॥

जहाँ उल्का जिस रूप में और जब गिरती है तथा जिनके बीच से या निकट से निकलती है, उनकी निश्चय ही विजय होती है ॥56॥

चतुर्दिक्षु यदा पृतना उल्का गच्छन्ति सन्ततम् ।
चतुर्दिशं तदा यान्ति भयातुरमसंगणः[3] ॥57॥

यदि उल्का गिरती हुई निरन्तर चारों दिशाओं में गमन करे तो लोग या सेना का समूह भयातुर होकर चारों दिशाओं में तितर-बितर हो जाता है ॥57॥

अग्रतो या पतेदुल्का सा सेना[4] तु प्रशस्यते ।
तिर्यगाचरते[5] मार्गं प्रतिलोमा भयावहा ॥58॥

सेना के आगे भाग में यदि उल्का गिरे तो अच्छी है। यदि तिरछी होकर प्रतिलोम गति से गिरे तो सेना को भय देनेवाली अवगत करनी चाहिए ॥58॥

यतः सेनामभिपतेत् तस्य सेनां प्रबाधयेत् ।
[6]तं विजयं कुर्यात् येषां पतेत्सोल्का यदा पुरा ॥59॥

जिस राजा की सेना में उल्का बीचों-बीच गिरे उस सेना को कष्ट होता है और आगे गिरे तो उसकी विजय होती है ॥59॥

डिम्भरूपा नृपतये बन्धमुल्का प्रताडयेत्[7] ।
प्रतिलोमा विलोमा च[8] प्रतिराजं भयं सृजेत् ॥60॥

डिम्भ रूप उल्का गिरने से राजा के बन्दी होने की सूचना मिलती है और प्रतिलोम तथा अनुलोम उल्का शत्रुराजाओं को भयोत्पादिका है ॥60॥

1. निपतिता आ० । 2. अनुकूला सपुर्वगा, मु० । 3. भयात्यप्रति संघशः मु० । 4. सेना मु० । 5. तिर्यक् संचरते मु० । 6. विजयं तु समाख्याति, येषां सोल्का पुरस्सरा मु० । 7. प्रदापयेत् मु० 8. यह पाठ मु० प्रति में नहीं है ।

यस्यापि जन्मनक्षत्रं उल्का गच्छेच्छरोपमा ।
विदारणा तस्य वाच्या व्याधिना वर्णसंकरः ॥61॥

जिसके जन्म-नक्षत्र में बाणसदृश उल्का गिरे तो उस व्यक्ति के लिए विदारण—घाव लगने, चीरे जाने का फल मिलता है और नाना वर्णरूप हो तो व्याधि प्राप्त होने की सूचना समझनी चाहिए ॥61॥

उल्का येषां यथारूपा दृश्यते प्रतिलोमतः ।
तेषां ततो भयं विन्द्यादनुलोमा शुभागमम् ॥62॥

विलोम मार्ग से जैसे रूप की उल्का जिसे दिखाई दे तो उसको भय होगा, ऐसा जानना चाहिए और अनुलोम गति से दिखाई दे तो शुभरूप जानना चाहिए ॥62॥

उल्का यत्र प्रसर्पन्ति भ्राजमाना दिशो दश ।
सप्तरात्रान्तरं[1] वर्षं दशाहादुत्तरं भयम् ॥63॥

जिस स्थान पर उल्का फैलती हुई दिखाई दे तो वहाँ भी जनता को दसों दिशाओं में भागना पड़ता है—उपद्रव के कारण दुःखी हो इधर-उधर जाना पड़ता है। यदि सात रात्रि के मध्य में वर्षा हो जाय तो इस दोष का उपशम हो जाता है, अन्यथा दस दिन के पश्चात् उपर्युक्त भयरूप फलादेश घटित होता है ॥63॥

पापासूल्कासु यत्रस्तु यदा देव प्रवर्षति ।
प्रशान्तं तद्भयं विन्द्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥64॥

पापरूप उल्कापात के पश्चात् मेघ बरस जाये = वर्षा हो जाय तो भय को शान्त हुआ समझना चाहिए, इस प्रकार भद्रबाहु स्वामी का कथन है ॥64॥

[2]यथाभिवृष्याः स्निग्धा यदि शान्ता निपतन्ति याः ।
उल्कास्वाशु भवेत् क्षेमं सुभिक्षं मन्दरोगवान् ॥65॥

अभिवृष्य, स्निग्ध और शान्त उल्का जिस दिशा में गिरती है, उस दिशा में वह शीघ्र क्षेम-कुशल सुभिक्ष करती है, परन्तु थोड़ा-सा रोग अवश्य होता है ॥65॥

यथामार्गं यथावृद्धि यथाद्वारं यथाऽऽगमम् ।
यथाविकारं विज्ञेयं ततो ब्रूयाच्छुभाऽशुभम् ॥66॥

---

1. सप्ताहमन्तरं मु० C. । 2. यथाभिवृष्टिः स्निग्धा न दिशि शान्ता पतन्ति या मु० ।

जिस मार्ग, वृद्धि, द्वार, आगमन प्रकार और विकार के अनुसार शुभाशुभ रूप उल्कापात हो उसी के समान शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए ॥66॥

तिथिश्च करणं चैव नक्षत्राश्च मुहूर्ततः ।
ग्रहाश्च [1]शकुनं चैव दिशो वर्णाः प्रमाणतः ॥67॥

उल्कापात का शुभाशुभ फल तिथि, करण, नक्षत्र, मुहूर्त, ग्रह, शकुन, दिशा, वर्ण, प्रमाण – लम्बाई-चौड़ाई पर से बतलाना चाहिए ॥67॥

[2]निमित्तादनुपूर्वाच्च पुरुषः कालतो बलात् ।
[3]प्रभावाच्च गतेश्चैवमुल्काया फलमादिशेत् ॥68॥

निमित्तानुसार क्रमपूर्वक उपर्युक्त प्रकार से निरूपित काल, बल, प्रभाव और गति पर से उल्का के फल को अवगत करना चाहिए ॥68॥

एतावदुक्तमुल्कानां लक्षणं जिनभाषितम् ।
परिवेषान् प्रवक्ष्यामि तान्निबोधत तत्त्वतः ॥69॥

जिस प्रकार जिनेन्द्र भगवान् ने उल्काओं का लक्षण और फल निरूपित किया है, उसी प्रकार यहाँ वर्णित किया गया है । अब परिवेष के सम्बन्ध में वर्णन किया जाता है, उसे यथार्थ रूप से अवगत करना चाहिए ॥69॥

इति भद्रबाहुसंहितायां (भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे) तृतीयोऽध्यायः ।

विवेचन —उल्कापात का फलादेश संहिता ग्रन्थों में विस्तारपूर्वक वर्णित है। यहाँ सर्वसाधारण की जानकारी के लिए थोड़ा-सा फलादेश निरूपित किया जाता है। उल्कापात से व्यक्ति, समाज, देश, राष्ट्र आदि का फलादेश ज्ञात किया जाता है । सर्वप्रथम व्यक्ति के लिए हानि, लाभ, जीवन, मरण, सन्तान-सुख, हर्ष-विषाद एवं विशेष अवसरों पर घटित होने वाली विभिन्न घटनाओं का निरूपण किया जाता है । आकाश का निरीक्षण कर टूटते हुए ताराओं को देखने से व्यक्ति अपने सम्बन्ध में अनेक प्रकार की जानकारी प्राप्त कर सकता है ।

रक्त वर्ण की टेढ़ी, टूटी हुई उल्काओं को पतित होते देखने से व्यक्ति को भय, पाँच महीने में परिवार के व्यक्ति की मृत्यु, धन-हानि और दो महीने के बाद किये गये व्यापार में हानि, राज्य से झगड़ा, मुकद्दमा एवं अनेक प्रकार की चिन्ताओं के कारण परेशानी होती है । कृष्ण वर्ण की टूटी हुई, छिन्न-भिन्न

1. शकुनाश्चैव मु० । 2. निमित्तादनुपूर्वाश्च, पुरुषो कालतो बलात् मु० ।
3. प्रभावाश्च गतिश्चैवमुल्कानां मु० ।

उल्काओं का पतन होते देखने से व्यक्ति के आत्मीय की सात महीने में मृत्यु, हानि, झगड़ा, अशान्ति और परेशानी उठानी पड़ती है। कृष्ण वर्ण की उल्का का पात सन्ध्या समय देखने से भय, विद्रोह और अशान्ति, सन्ध्या के तीन घटी उपरान्त देखने से विवाद, कलह, परिवार में झगड़ा एवं किसी आत्मीय व्यक्ति को कष्ट; मध्यरात्रि के समय उक्त प्रकार की उल्का का पतन देखने से स्वयं को महाकष्ट, अपनी या किसी आत्मीय की मृत्यु, आर्थिक कष्ट एवं नाना प्रकार की अशान्ति प्राप्त होने की सूचना होती है।

श्वेत वर्ण की उल्का का पतन सन्ध्या समय में दिखलायी पड़े तो धन लाभ, आत्मसन्तोष, सुख और मित्रों से मिलाप होता है। यह उल्का दण्डाकार हो तो सामान्य लाभ, मुसलाकार हो तो अत्यल्प लाभ और शकटाकार—गाड़ी के आकार या हाथी के आकार हो तो पुष्कल लाभ एवं अश्व के आकार प्रकाशमान हो तो विशेष लाभ होता है। मध्यरात्रि में उक्त प्रकार की उल्का दिखलायी पड़े तो पुत्र लाभ, स्त्री लाभ, धन लाभ एवं अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है। उपर्युक्त प्रकार की उल्का रोहिणी, पुनर्वसु, धनिष्ठा और तीनों उत्तराओं में पतित होती हुई दिखलायी पड़े तो व्यक्ति को पूर्णफलादेश मिलता है तथा सभी प्रकार से धन-धान्यादि की प्राप्ति के साथ, पुत्र-स्त्रीलाभ भी होता है। आश्लेषा, भरणी, तीनों पूर्वा—पूर्वाषाढा, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाभाद्रपद और रेवती इन नक्षत्रों में उपर्युक्त प्रकार का उल्कापतन दिखलाई पड़े तो सामान्य लाभ ही होता है। इन नक्षत्रों में उल्कापतन देखने पर विशेष लाभ या पुष्कल लाभ की आशा नहीं करनी चाहिए, लाभ होते-होते क्षीण हो जाता है। आर्द्रा, पुष्य, मघा, धनिष्ठा, श्रवण और हस्त इन नक्षत्रों में उपर्युक्त प्रकार श्वेतवर्ण की प्रकाशमान उल्का पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो प्रायः पुष्कल लाभ होता है। मघा, रोहिणी, तीनों उत्तरा—उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा और उत्तराभाद्रपद, मूल, मृगशिर और अनुराधा इन नक्षत्रों में उक्त प्रकार का उल्कापात दिखलाई पड़े तो स्त्रीलाभ और सन्तानलाभ समझना चाहिए। कार्यसिद्धि के लिए चिकनी, प्रकाशमान, श्वेतवर्ण की उल्का का रात्रि के मध्यभाग में पुनर्वसु और रोहिणी नक्षत्र में पतन होना आवश्यक माना गया है। इस प्रकार के उल्कापतन को देखने से अभीष्ट कार्यों की सिद्धि होती है। अल्प आभास से भी कार्य सफल हो जाते हैं। पीतवर्ण की उल्का सामान्यतया शुभप्रद है। सन्ध्या होने के तीन घटी पीछे कृत्तिका नक्षत्र में पीत-वर्ण का उल्कापात दिखलाई पड़े तो मुकद्दमे में विजय, बड़ी-बड़ी परीक्षाओं में उत्तीर्णता एवं राज्यकर्मचारियों से मैत्री बढ़ती है। आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और श्रवण में पीतवर्ण की उल्का पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो स्वजाति और स्वदेश में सम्मान बढ़ता है। मध्यरात्रि के समय उक्त प्रकार की उल्का दिखलाई पड़े तो

हर्ष, मध्यरात्रि के पश्चात् एक बजे रात में उक्त प्रकार का उल्कापात दिखलाई पड़े तो सामान्य पीड़ा, आर्थिक लाभ और प्रतिष्ठित व्यक्तियों से प्रशंसा प्राप्त होती है। प्राय: सभी प्रकार की उल्काओं का फल सन्ध्याकाल में चतुर्थांश, दस बजे षष्ठांश, ग्यारह बजे तृतीयांश, बारह बजे अर्ध, एक बजे अर्धाधिक और दो बजे से चार बजे रात तक किंचित् न्यून उपलब्ध होता है। सम्पूर्ण फलादेश बारह बजे के उपरान्त और एक बजे के पहले के समय में ही घटित होता है। उल्कापात भद्रा – विष्टि काल में हो तो विपरीत फलादेश मिलता है।

प्रतनुपुच्छा उल्का सिर भाग से गिरने पर व्यक्ति के लिए अरिष्टसूचक, मध्यभाग से गिरने पर विपत्तिसूचक और पुच्छ भाग से गिरने पर रोगसूचक मानी गई है। साँप के आकार का उल्कापात व्यक्ति के जीवन में भय, आतंक, रोग, शोक आदि उत्पन्न करता है। इस प्रकार का उल्कापात भरणी और आश्लेषा नक्षत्रों का घात करता हुआ दिखलाई पड़े तो महान् विपत्ति और अशान्ति मिलती है। पूर्वाफाल्गुनी, पुनर्वसु, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र के योग तारे को उल्का हनन करे तो युवतियों को कष्ट होता है। नारी जाति के लिए इस प्रकार का उल्कापात अनिष्ट का सूचक है। शूकर और चमगीदड़ के समान आकार की उल्का कृत्तिका, विशाखा, अभिजित्, भरणी और आश्लेषा नक्षत्र को प्रताड़ित करती हुई पतित हो तो युवक-युवतियों के लिए रोग की सूचना देती है। इन्द्रध्वज के आकार की उल्का आकाश में प्रकाशमान होकर पतित हो तथा पृथ्वी पर आते-आते चिनगारियाँ उड़ने लगें तो इस प्रकार की उल्काएँ कारागार जाने की सूचना सम्बन्धित व्यक्ति को देती हैं। सिर के ऊपर पतित हुई उल्का चन्द्रमा या नक्षत्रों का घात करती हुई दिखलायी पड़े तो आगामी एक महीने में किसी आत्मीय की मृत्यु या परदेशगमन होता है। सामने कृष्णवर्ण की उल्का गिरने से महान कष्ट, धनक्षय, विवाद, कलह और झगड़े होने की सूचना मिलती है। अश्विनी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, विशाखा, अनुराधा, मूल, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा और पूर्वाभाद्रपद इन नक्षत्रों में पूर्वोक्त प्रकार की उल्का का अभिघात हो तो व्यक्ति के भावी जीवन के लिए महान कष्ट होता है। पीछे की ओर कृष्णवर्ण की उल्का व्यक्ति को असाध्य रोग की सूचना देती है। विचित्र वर्ण उल्का मध्यरात्रि में च्युत होती हुई दिखलाई पड़े तो निश्चयतः अर्थहानि होती है। धूम्रवर्ण की उल्काओं का पतन व्यक्तिगत जीवन में हानि का सूचक है। अग्नि के समान प्रभावशाली, वृषभाकार उल्कापात व्यक्ति की उन्नति का सूचक है। तलवार की मुष्टि समान उल्काएँ व्यक्ति की अवनति सूचित करती हैं। सूक्ष्म आकार वाली उल्काएँ अच्छा फल देती हैं और स्थूल आकार वाली उल्काओं का फलादेश अशुभ होता है। हाथी, घोड़ा, बैल आदि पशुओं के आकार वाली उल्काएँ शान्ति और

सुख की सूचिकाएँ हैं। ग्रहों का स्पर्श कर पतित होनेवाली उल्काएँ भयप्रद हैं और स्वतन्त्र रूप से पतित होनेवाली उल्काएँ सामान्य फलवाली होती हैं। उत्तर और पूर्व दिशा की ओर पतित होनेवाली उल्काएँ सभी प्रकार का सुख देती हैं; किन्तु इस फल की प्राप्ति रात के मध्य समय में दर्शन करने से ही होती है।

कमल, वृक्ष, चन्द्र, सूर्य, स्वस्तिक, कलश, ध्वजा, शंख, वाद्य—ढोल, मंजीरा, तानपूरा और गोलाकार रूप में उल्काएँ रविवार, भौमवार और गुरुवार को पतित होती हुई दिखलाई पड़ें तो व्यक्ति को अपार लाभ, अकल्पित धन की प्राप्ति, घर में सन्तान लाभ एवं आगामी मांगलिकों की सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकार का उल्कापतन उक्त उक्त दिनों की सन्ध्या में हो तो अर्धफल, नौ-दस बजे रात में हो तो तृतीयांश फल और ठीक मध्यरात्रि में हो तो पूर्ण फल प्राप्त होता है। मध्यरात्रि के पश्चात् पतन दिखलाई पड़े तो षष्ठांश फल और ब्राह्म-मुहूर्त में दिखलाई पड़े तो चतुर्थांश फल प्राप्त होता है। दिन में उल्काओं का पतन देखनेवाले को असाधारण लाभ या असाधारण हानि होती है। उक्त प्रकार की उल्काएँ सूर्य, चन्द्रमा नक्षत्रों का भेदन करें तो साधारण लाभ और भविष्य में घटित होनेवाली असाधारण घटनाओं की सूचना समझनी चाहिए। रोहिणी, मृगशिरा और श्रवण नक्षत्र के साथ योग करानेवाली उल्काएँ उत्तम भविष्य की सूचिका हैं। कच्छप और मछली के आकार की उल्काएँ व्यक्ति के जीवन में शुभ फलों की सूचना देती हैं। उक्त प्रकार की उल्काओं का पतन मध्यरात्रि के उपरान्त और एक बजे के भीतर दिखलाई पड़े तो व्यक्ति को धरती के नीचे रखी हुई निधि मिलती है। इस निधि के लिए प्रयास नहीं करना पड़ता, कोई भी व्यक्ति उक्त प्रकार की उल्काओं का पतन देखकर चिन्तामणि पार्श्वनाथ स्वामी की पूजाकर तीन महीने में स्वयं ही निधि प्राप्त करता है। व्यन्तर देव उसे स्वप्न में निधि के स्थान की सूचना देते हैं और वह अनायास इस स्वप्न के अनुसार निधि प्राप्त करता है। उक्त प्रकार की उल्काओं का पतन सन्ध्याकाल अथवा रात में आठ या नौ बजे हो तो व्यक्ति के जीवन में विषम प्रकार की स्थिति होती है। सफलता मिल जाने पर भी असफलता ही दिखलाई पड़ती है। नौ-दस बजे का उल्कापात सभी के लिए अनिष्टकर होता है।

सन्ध्याकाल में गोलाकार उल्का दिखलाई पड़े और वह उल्का पतन समय में छिन्न-भिन्न होती हुई दृष्टिगोचर हो तो व्यक्ति के लिए रोग-शोक की सूचक है। आपस में टकराती हुई उल्काएँ व्यक्ति के लिए गुप्त रोगों की सूचना देती हैं। जिन उल्काओं को शुभ बतलाया गया है, उनका पतन भी शनि, बुध और शुक्र को दिखलाई पड़े तो जीवन में आनेवाले अनेक कष्टों की सूचना समझनी चाहिए। शनि, राहु और केतु से टकराकर उल्काओं का पतन दिखलाई पड़े तो महान्

अनिष्टकर है, इससे जीवन में अनेक प्रकार की विपत्तियों की सूचना समझनी चाहिए। खोई हुए, भूली हुई या चोरी गई वस्तु के समय में गुरुवार की मध्यरात्रि में दण्डाकार उल्का पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो उस वस्तु की प्राप्ति की तीन मास के भीतर की सूचना समझनी चाहिए। मंगलवार, सोमवार और शनिवार उल्कापात दर्शन के लिए अशुभ हैं, इन दिनों की सन्ध्या का उल्कापात दर्शन अधिक अनिष्टकर समझा जाता है। मंगलवार और आश्लेषा नक्षत्र में शुभ उल्कापात भी अशुभ होता है, इससे आगामी छः मासों में कष्टों की सूचना समझनी चाहिए। अनिष्ट उल्कापात के दर्शन के पश्चात् चिन्तामणि पार्श्वनाथ का पूजन करने से आगामी अशुभ की शान्ति होती है।

राष्ट्रघातक उल्कापात—जब उल्काएँ चन्द्र और सूर्य का स्पर्श कर भ्रमण करती हुई पतित हों और उस समय पृथ्वी कम्पायमान हो तो राष्ट्र दूसरे देश के अधीन होता है। सूर्य और चन्द्रमा के दाहिनी ओर उल्कापात हो तो राष्ट्र में रोग फैलते हैं तथा राष्ट्र की धनसम्पत्ति विशेषरूप से नष्ट होती है। चन्द्रमा से मिलकर उल्का सामने आवे तो राष्ट्र के लिए विजय और लाभ की सूचना देती है। श्याम, अरुण, नील, रक्त, दहन, असित, और भस्म के समान रूक्ष उल्का देश के शत्रुओं के लिए बाधक होती है। रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तरा भाद्रपद, मृगशिरा, चित्रा और अनुराधा नक्षत्र को उल्का घातित करे तो राष्ट्र को पीड़ा होती है। मंगल और रविवार को अनेक व्यक्ति मध्यरात्रि में उल्कापात देखें तो राष्ट्र के लिए भयसूचक समझना चाहिए। पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ और पूर्वाभाद्रपद, मघा, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र को उल्का ताड़ित करे तो देश के व्यापारी वर्ग को कष्ट होता है तथा अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, कृत्तिका और विशाखा नक्षत्र को उल्का ताड़ित करे तो कलाविदों को कष्ट होता है। देवमन्दिर या देवमूर्ति को उल्कापात हो तो राष्ट्र में बड़े-बड़े परिवर्तन होते हैं, आन्तरिक संघर्षों के साथ विदेशीय शक्ति का भी मुकाबला करना पड़ता है। इस प्रकार उल्कापतन देश के लिए महान् अनिष्टकारक है। श्मशान भूमि में पतित उल्का प्रशासकों में भय का संचार करती है तथा देश या राज्य में नवीन परिवर्तन उत्पन्न करती है। न्यायालयों पर उल्कापात हो तो किसी बड़े नेता की मृत्यु की सूचना अवगत करनी चाहिए। वृक्ष, धर्मशाला, तालाब और अन्य पवित्र भूमियों पर उल्कापात हो तो राज्य में आन्तरिक विद्रोह, वस्तुओं की मँहगाई एवं देश के नेताओं में फूट होती है। संगठन के अभाव होने से देश या राष्ट्र को महान् क्षति होती है। श्वेत और पीत वर्ण की मूल्याकार अनेक उल्काएँ किसी रिक्त स्थान पर पतित हों तो देश या राष्ट्र के लिए शुभकारक समझना चाहिए। राष्ट्र के नेताओं के बीच मेल-मिलाप की सूचना भी उक्त प्रकार के उल्कापात से ही सम-

क्षनी चाहिए। मन्दिर के निकटवर्ती वृक्षों पर उल्कापात हो तो प्रशासकों के बीच मतभेद होता है, जिससे देश या राष्ट्र में अनेक प्रकार की अशान्ति फैलती है। पुष्य नक्षत्र में श्वेतवर्ण की चमकती हुई उल्का राजप्रासाद या देवप्रासाद के किनारे पर गिरती हुई दिखलाई पड़े तो देश या राष्ट्र की शक्ति का विकास होता है, अन्य देशों से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होता है तथा देश की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है। इस प्रकार का उल्कापात राष्ट्र या देश के लिए शुभकारक है। मघा और श्रवण नक्षत्र में पूर्वोक्त प्रकार का उल्कापात हो तो भी देश या राष्ट्र की उन्नति होती है। खलिहान और बगीचे में मध्यरात्रि के समय उक्त प्रकार उल्का पतित हो तो निश्चय ही देश में अन्न का भाव द्विगुणित हो जाता है।

शनिवार और मंगलवार को कृष्णवर्ण की मन्द प्रकाशवाली उल्काएँ श्मशान भूमि या निर्जन वन-भूमि में पतित होती हुई देखी जाएँ तो देश में कलह होता है। पारस्परिक अशान्ति के कारण देश की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था बिगड़ जाती है। राष्ट्र के लिए इस प्रकार की उल्काएँ भयोत्पादक एवं घातक होती हैं। आश्लेषा नक्षत्र में कृष्णवर्ण की उल्का पतित हो तो निश्चय ही देश के किसी उच्चकोटि के नेता की मृत्यु होती है। (राष्ट्र की शक्ति और बल को बढ़ानेवाली श्वेत, पीत और रक्तवर्ण की उल्काएँ शुक्रवार और गुरुवार को पतित होती हैं।)

कृषिफलादेश सम्बन्धी उल्कापात---प्रकाशित होकर चमक उत्पन्न करती हुई उल्का यदि पतन के पहले ही आकाश में विलीन हो जाय तो कृषि के लिए हानिकारक है। मोर पूंछ के समान आकारवाली उल्का मंगलवार की मध्यरात्रि में पतित हो तो कृषि में एक प्रकार का रोग उत्पन्न होता है, जिससे फसल नष्ट हो जाती है। मण्डलाकार होती हुई उल्का शुक्रवार की सन्ध्या को गर्जन के साथ पतित हो तो कृषि में वृद्धि होती है। फसल ठीक उत्पन्न होती है और कृषि में कीड़े नहीं लगते। इन्द्रध्वज के रूप में आश्लेषा, विशाखा, भरणी और रेवती नक्षत्र में तथा रवि, गुरु, सोम और शनि इन वारों में उल्कापात हो तो कृषि में फसल पकने के समय रोग लगता है। इस प्रकार के उल्कापात में गेहूँ, जौ, धान और चने की फसल अच्छी होती है तथा अवशेष धान्य की फसल बिगड़ती है। वृष्टि का भी अभाव रहता है। शनिवार को दक्षिण की ओर बिजली चमके तथा तत्काल ही पश्चिम दिशा की ओर उल्का पतित हो तो देश के पूर्वीय भाग में बाढ़, तूफान, अतिवृष्टि आदि के कारण फसल को हानि पहुँचती है तथा इसी दिन पश्चिम की ओर बिजली चमके और दक्षिण दिशा की ओर उल्कापात हो तो देश के पश्चिमीय भाग में सुभिक्ष होता है। इस प्रकार का उल्कापात कृषि के लिए अनिष्टकर ही होता है। संहिताकारों ने कृषि के सम्बन्ध में विचार करते समय

समय-समय पर पतित होनेवाली उल्काओं के शुभाशुभत्व का विचार किया है। वराहमिहिर के मतानुसार पुष्य, मघा, तीनों उत्तरा इन नक्षत्रों में गुरुवार की सन्ध्या या इस दिन की मध्यरात्रि में चने के खेत पर उल्कापात हो तो आगामी वर्ष की कृषि के लिए शुभदायक है। ज्येष्ठ महीने की पूर्णमासी के दिन रात को होनेवाले उल्कापात से आगामी वर्ष के शुभाशुभ फल को ज्ञात करना चाहिए। इस दिन अश्विनी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी और ज्येष्ठा नक्षत्र को प्रताड़ित करता हुआ उल्कापात हो तो वह फसल के लिए खराब होता है। यह उल्कापात कृषि के लिए अनिष्ट का सूचक है। शुक्रवार को अनुराधा नक्षत्र में मध्यरात्रि में प्रकाशमान उल्कापात हो तो कृषि के लिए उत्तम होता है। इस प्रकार के उल्कापात द्वारा श्रेष्ठ फसल की सूचना समझनी चाहिए। श्रवण नक्षत्र का स्पर्श करता हुआ उल्कापात सोमवार की मध्यरात्रि में हो तो गेहूँ और धान की फसल उत्तम होती है। श्रवण नक्षत्र में मंगलवार को उल्कापात हो तो गन्ना अच्छा उत्पन्न होता है किन्तु चने की फसल में रोग लगता है। सोमवार, गुरुवार और शुक्रवार को मध्यरात्रि में कड़क के साथ उल्कापात हो तथा इस उल्का का आकार ध्वजा के समान चौकोर हो तो आगामी वर्ष में कृषि अच्छी होती है, विशेषतः चावल और गेहूँ की फसल उत्तम होती है। ज्येष्ठ मास की शुक्लपक्ष की एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी को पश्चिम दिशा की ओर उल्कापात हो तो फसल के लिए अशुभ समझना चाहिए। यहाँ इतनी विशेषता है कि उल्का का आकार त्रिकोण होने से यह फल यथार्थ घटित होता है। यदि इन दिनों का उल्कापात दण्डे के समान हो तो आरम्भ में सूखा पश्चात् समयानुकूल वर्षा होती है। दक्षिण दिशा में अनिष्ट फल घटता है। शुक्लपक्ष की चतुर्दशी की समाप्ति और पूर्णिमा के आरम्भ काल में उल्कापात हो तो आगामी वर्ष के लिए साधारणतः अनिष्ट होता है। पूर्णिमाविद्ध प्रतिपदा में उल्कापात हो तो फसल कई गुनी अधिक होती है। किन्तु पशुओं में एक प्रकार का रोग फैलता है जिससे पशुओं की हानि होती है।

आषाढ़ महीने के आरम्भ में निरभ्र आकाश में काली और लाल रंग की उल्काएँ पतित होती हुई दिखलाई पड़ें तो आगामी तथा वर्तमान दोनों वर्ष में कृषि अच्छी नहीं होती। वर्षा भी समय पर नहीं होती है। अतिवृष्टि और अनावृष्टि का योग रहता है। आषाढ़ कृष्ण प्रतिपदा शनिवार और मंगलवार को हो और इस दिन गोलाकार काले रंग की उल्काएँ टूटती हुई दिखलाई पड़ें तो महान् भय होता है और कृषि अच्छी नहीं होती। इन दिनों में मध्यरात्रि के बाद श्वेत रंग की उल्काएँ पतित होती हुई दिखलाई पड़ें तो फसल बहुत अच्छी होती है। यदि इन पतित होनेवाली उल्काओं का आकार मगर और सिंह के समान हो तथा

पतित होते समय शब्द हो रहा हो तो फसल में रोग लगता है और अच्छी होने पर भी कम ही अनाज उत्पन्न होता है। आषाढ़ कृष्ण तृतीया, पंचमी, षष्ठी, एकादशी, द्वादशी और चतुर्दशी को मध्यरात्रि के बाद उल्कापात हो तो निश्चय से फसल खराब होती है। इस वर्ष में ओले गिरते हैं तथा पाला पड़ने का भी भय रहता है। कृष्णपक्ष की दशमी और अष्टमी को मध्यरात्रि के पूर्व ही उल्कापात दिखलाई पड़े तो उस प्रदेश में कृषि अच्छी होती है। इन्हीं दिनों में मध्यरात्रि के बाद उल्कापात दिखलाई पड़े तो गुड़, गेहूँ की फसल अच्छी और अन्य वस्तुओं की फसल में कमी आती है। सन्ध्या समय चन्द्रोदय के पूर्व या चन्द्रास्त के उपरान्त उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसल अच्छी नहीं होती। अन्य समय में सुन्दर और शुभ आकार का उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसल अच्छी होती है। शुक्लपक्ष में तृतीया, दशमी और त्रयोदशी को आकाश गर्जन के साथ पश्चिम दिशा की ओर उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसल में कुछ कमी रहती है। तिल, तिलहन और दालवाले अनाज की फसल अच्छी होती है। केवल चावल और गेहूँ की फसल में कुछ त्रुटि रहती है।

फसल की अच्छाई और बुराई के लिए कार्तिक, पौष और माघ इन तीन महीनों के उल्कापात का विचार करना चाहिए। चैत्र और वैशाख का उल्कापात केवल वृष्टि की सूचना देता है। कार्तिक मास के कृष्णपक्ष की प्रतिपदा, चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी और चतुर्दशी को धूम्रवर्ण का उल्कापात दक्षिण और पश्चिम दिशा की ओर दिखलाई पड़े तो आगामी फसल के लिए अत्यन्त अनिष्ट-कारक और पशुओं की महँगी का सूचक है। चौपायों में मरी के रोग की सूचना भी इसी उल्कापात से समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथियाँ शनिवार, मंगलवार और रविवार को पड़ें तो समस्त फल और सोमवार, बुधवार, गुरुवार और शुक्रवार को पड़ें तो अनिष्ट चतुर्थांश ही मिलता है। कार्तिक की पूर्णिमा को उल्कापात का विशेष निरीक्षण करना चाहिए। इस दिन सूर्यास्त के उपरान्त ही उल्कापात हो तो आगामी वर्ष की बरबादी प्रकट करता है। मध्यरात्रि के पहले उल्कापात हो तो श्रेष्ठ फसल का सूचक है, मध्यरात्रि के उपरान्त उल्कापात हो तो फसल में साधारण गड़बड़ी रहने पर भी अच्छी होती है। मोटा धान्य खूब उत्पन्न होता है। पौष मास में पूर्णिमा को उल्कापात हो तो फसल अच्छी, अमावस्या को हो तो खराब, शुक्ल या कृष्णपक्ष की त्रयोदशी को हो तो श्रेष्ठ, द्वादशी को हो तो धान्य की फसल बहुत अच्छी और गेहूँ की साधारण, दशमी को हो तो साधारण एवं तृतीया, चतुर्थी और सप्तमी को हो तो फसलों में रोग लगने पर भी अच्छी ही होती है। पौष मास में कृष्णपक्ष की प्रतिपदा को यदि मंगलवार हो और उस दिन उल्कापात हो तो निश्चय ही फसल चौपट हो जाती है। वराहमिहिर ने इस

योग को अत्यन्त अनिष्टकारक माना है।

द्वितीया विद्ध माघ मास की कृष्ण प्रतिपदा को उल्कापात हो तो आगामी वर्ष फसल बहुत अच्छी उत्पन्न होती है और अनाज का भाव भी सस्ता हो जाता है। तृतीया विद्ध द्वितीया को रात्रि के पूर्वभाग में उल्कापात हो तो सुभिक्ष और अन्न की उत्पत्ति प्रचुर मात्रा में होती है। चतुर्थी विद्ध तृतीया को कभी भी उल्कापात हो तो कृषि में अनेक रोग, अवृष्टि और अनावर्षण से भी फसल को क्षति पहुँचती है। पंचमी विद्ध चतुर्थी को उल्कापात हो तो साधारणतया फसल अच्छी होती है। दालों की उपज कम होती है, अवशेष अनाज अधिक उत्पन्न होते हैं। तिलहन, गुड़ का भाव भी कुछ महँगा रहता है। इन वस्तुओं की फसल भी कमजोर ही रहती है। षष्ठी विद्ध पंचमी को उल्कापात हो तो फसल अच्छी उत्पन्न होती है। सप्तमी विद्ध षष्ठी को मध्यरात्रि के कुछ ही बाद उल्कापात हो तो फसल हल्की होती है। दाल, गेहूँ, बाजरा और ज्वार की उपज कम ही होती है। अष्टमी विद्ध सप्तमी को रात्रि के प्रथम प्रहर में उल्कापात हो तो अतिवृष्टि से फसल की हानि, द्वितीय प्रहर में उल्कापात हो तो साधारणतया अच्छी वर्षा, तृतीय प्रहर में उल्कापात हो तो फसल में कमी और चतुर्थ प्रहर में उल्कापात हो तो गेहूँ, गुड़, तिलहन की खूब उत्पत्ति होती है। नवमी विद्ध अष्टमी को शनिवार या रविवार हो और इस दिन उल्कापात दिखलाई पड़े तो निश्चयतः चने की फसल में क्षति होती है। दशमी, एकादशी और द्वादशी तिथियाँ शुक्रवार या गुरुवार को हों और इनमें उल्कापात दिखलाई पड़े तो अच्छी फसल उत्पन्न होती है। पूर्णमासी को लाल रंग या काले रंग का उल्कापात दिखलाई पड़े तो फसल की हानि, पीत और श्वेत का उल्कापात दिखलाई पड़े तो श्रेष्ठ फसल एवं चित्र-विचित्र वर्ण का उल्कापात दिखलाई पड़े तो सामान्य रूप से अच्छी फसल उत्पन्न होती है। होली के दिन होलिकादाह से पूर्व उल्कापात दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष फसल की कमी और होलिकादाह के पश्चात् उल्कापात नीले रंग का विचित्र वर्ण का दिखलाई पड़े तो अनेक प्रकार से फसल को हानि पहुँचती है।

वैयक्तिक फलादेश—सर्प और शूकर के समान आकारयुक्त शब्द सहित उल्कापात दिखलाई पड़े तो दर्शक को तीन महीने के भीतर मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट प्राप्त होता है। इस प्रकार का उल्कापात आर्थिक हानि भी सूचित करता है। इन्द्रधनुष के आकार समान उल्कापात किसी भी व्यक्ति को सोमवार की रात्रि में दिखलाई पड़े तो धन हानि, रोग वृद्धि तथा मित्रों द्वारा किसी प्रकार की सहायता की सूचना, बुधवार की रात्रि में उल्कापात दिखलाई पड़े तो वस्त्राभूषणों का लाभ, व्यापार में लाभ और मन प्रसन्न होता है। गुरुवार की रात्रि में उल्कापात इन्द्रधनुष के आकार का दिखलाई पड़े तो व्यक्ति को तीन मास में आर्थिक

लाभ, किसी स्वजन को कष्ट, सन्तान की वृद्धि एवं कुटुम्बियों द्वारा यश की प्राप्ति होती है, शुक्रवार को उल्कापात उस आकार का दिखलाई पड़े तो राज-सम्मान, यश, धन एवं मधुर पदार्थ भोजन के लिए प्राप्त होते हैं तथा शनि की रात्रि में उस प्रकार के आकार का उल्कापात दिखलाई पड़े तो आर्थिक संकट, धन की क्षति तथा आत्मीयों में भी संघर्ष होता है। रविवार की रात्रि में इन्द्रधनुष के आकार की उल्का का पतन देखना अनिष्टकारक बताया गया है। रोहिणी, तीनों उत्तरा --उत्तराषाढ़ा, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपदा, चित्रा, अनुराधा और रेवती नक्षत्र में इन्हीं नक्षत्रों में उत्पन्न हुए व्यक्तियों को उल्कापात दिखलाई पड़े तो वैयक्तिक दृष्टि से अभ्युदय सूचक और इन नक्षत्रों से भिन्न नक्षत्रों में जन्मे व्यक्तियों को उल्कापात दिखलाई पड़े तो कष्ट सूचक होता है। तीनों पूर्वा--पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभाद्रपदा, आश्लेषा, मघा, ज्येष्ठा और मूलनक्षत्र में जन्मे व्यक्तियों को इन्हीं नक्षत्रों में शब्द करता हुआ उल्कापात दिखलाई पड़े तो मृत्यु सूचक और भिन्न नक्षत्रों में जन्मे व्यक्तियों को इन्हीं नक्षत्रों में उल्कापात सशब्द दिखलाई पड़े तो किसी आत्मीय की मृत्यु और शब्द रहित दिखलाई पड़े तो आरोग्यलाभ प्राप्त होता है। विपरीत आकारवाली उल्का दिखलाई पड़े--जहाँ से निकली हो, पुन: उसी स्थान की ओर गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो भयकारक, विपत्तिसूचक तथा किसी भयंकर रोग की सूचक अवगत करना चाहिए। पवन की प्रतिकूल दिशा में उल्का कुटिल भाव से गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो दर्शक की पत्नी को भय, रोग और विपत्ति की सूचक समझना चाहिए।

व्यापारिक फल श्याम और असितवर्ण की उल्का रविवार की रात्रि के पूर्वार्ध में दिखलाई पड़े तो काले रंग की वस्तुओं की महँगाई, पीतवर्ण की उल्का इसी रात्रि में दिखलाई पड़े तो गेहूँ और चने के व्यापार में अधिक घटा-बढ़ी, श्वेतवर्ण की उल्का इसी रात्रि में दिखलाई पड़े तो चाँदी के भाव में गिरावट और लालवर्ण की उल्का दिखलाई पड़े तो सुवर्ण के व्यापार में गिरावट रहती है। मंगलवार, शनिवार और रविवार की रात्रि में सट्टेबाज व्यक्ति पूर्व दिशा में गिरती हुई उल्का देखें तो उन्हें माल बेचने में लाभ होता है, बाजार का भाव गिरता है और खरीदनेवाले की हानि होती है। यदि इन्हीं रात्रियों में पश्चिम दिशा की ओर से गिरती हुई उल्का उन्हें दिखलाई पड़े तो भाव कुछ ऊँचे उठते हैं और सट्टेवालों को खरीदने में लाभ होता है। दक्षिण से उत्तर की ओर गमन करती हुई उल्का दिखलाई पड़े तो मोती, हीरा, पन्ना, माणिक्य आदि के व्यापार में लाभ होता है। इन रत्नों के मूल्य में आठ महीने तक घटा-बढ़ी होती रहती है। जवाहरात का बाजार स्थिर नहीं रहता है। यदि सूर्यास्त या चन्द्रास्त काल में

उल्कापात हरे और लाल रंग का वृत्ताकार दिखलाई पड़े तो सुवर्ण और चाँदी के भाव स्थिर नहीं रहते। तीन महीनों तक लगातार घटा-बढ़ी चलती रहती है। कृष्ण सर्प के आकार और रंगवाली उल्का उत्तर दिशा से निकलती हुई दिखलाई पड़े तो लोहा, उड़द और तिलहन का भाव ऊँचा उठता है। व्यापारियों को खरीद से लाभ होता है। पतली और छोटी पूँछवाली उल्का मंगलवार की रात्रि में चमकती हुई दिखलाई पड़े तो गेहूँ, लाल कपड़ा एवं अन्य लाल रंग की वस्तुओं के भाव में घटा-बढ़ी होती है। मनुष्य, गज और अश्व के आकार की उल्का यदि रात्रि के मध्यभाग में शब्द सहित गिरे तो तिलहन के भाव में अस्थिरता रहती है। मृग, अश्व और वृक्ष के आकार की उल्का मन्द-मन्द चमकती हुई दिखलाई पड़े और इसका पतन किसी वृक्ष या घर के ऊपर हो तो पशुओं के भाव ऊँचे उठते हैं, साथ ही साथ तृण के दाम भी महँगे हो जाते हैं। चन्द्रमा या सूर्य के दाहिनी ओर उल्का गिरे तो सभी वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि होती है। यह स्थिति तीन महीने तक रहती है, पश्चात् मूल्य पुनः नीचे गिर जाता है। वन या श्मशान भूमि में उल्कापात हो तो दाल वाले अनाज महँगे होते हैं और अवशेष अनाज सस्ते होते हैं। पिण्डाकार, चिनगारी फूटती हुई उल्का आकाश में भ्रमण करती हुई दिखलाई पड़े और इसका पतन किसी नदी या तालाब के किनारे पर हो तो कपड़े का भाव सस्ता होता है। रूई, कपास, सूत आदि के भाव में भी गिरावट आ जाती है। चित्रा, मृगशिर, रेवती, पूर्वाषाढ़, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी और ज्येष्ठा इन नक्षत्रों में पश्चिम दिशा से चलकर पूर्व या दक्षिण की ओर उल्कापात हो तो सभी वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि होती है तथा विशेष रूप से अनाज का मूल्य बढ़ता है। रोहिणी, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़, उत्तराभाद्रपद, श्रवण और पुष्य इन नक्षत्रों में दक्षिण की ओर जाज्वल्यमान उल्कापात हो तो अन्न का भाव सस्ता, सुवर्ण और चाँदी के भावों में भी गिरावट, जवाहरात के भाव में कुछ महँगी, तृण और लकड़ी के मूल्य में वृद्धि एवं लोहा, इस्पात आदि के मूल्य में भी गिरावट होती है। अन्य धातुओं के मूल्य में वृद्धि होती है।

दहन और भस्म के समान रंग और आकारवाली उल्काएँ आकाश में गमन करती हुई रविवार, भौमवार और शनिवार की रात्रि को अकस्मात् किसी कुएँ पर पतित होती हुई दिखलाई पड़ें तो प्रायः अन्न का भाव आगामी आठ महीनों से महँगा होता है और इस प्रकार का उल्कापात दुर्भिक्ष का सूचक भी है। अन्नसंग्रह करनेवालों को विशेष लाभ होता है। शुक्रवार और गुरुवार को पुष्य या पुनर्वसु नक्षत्र हो और इन दोनों की रात्रि के पूर्वार्द्ध में श्वेत या पीतवर्ण का उल्कापात दिखलाई पड़े तो साधारणतया भाव सम रहते हैं। माणिक्य, मूँगा, मोती, हीरा, पद्मराग आदि रत्नों की कीमत में वृद्धि होती है। सुवर्ण और चाँदी का भाव भी

कुछ ऊँचा रहता है। गुरु-पुष्य योग में उल्कापात दिखलाई पड़े तो यह सोने, चाँदी के भावों में विशेष घटा-बढ़ी का सूचक है। जूट, बादाम, घृत, और तेल के भाव भी इस प्रकार के उल्कापात में घटा-बढ़ी को प्राप्त करते हैं। रवि-पुष्य योग में दक्षिणोत्तर आकाश में जाज्वल्यमान उल्कापात दिखलाई पड़े तो सोने का भाव प्रथम तीन महीने-तक नीचे गिरता है फिर ऊँचा चढ़ता है। घी और तेल के भाव में भी पहले गिरावट, पश्चात् तेजी आती है। यह व्यापार के लिए भी उत्तम है। नये व्यापारियों को इस प्रकार के उल्कापात के पश्चात् अपने व्यापारिक कार्यों में अधिक प्रगति करनी चाहिए। रोहिणी नक्षत्र यदि सोमवार को हो और उस दिन सुन्दर और श्रेष्ठ आकार में उल्का पूर्व दिशा से गमन करती हुई किसी हरे-भरे खेत या वृक्ष के ऊपर गिरे तो समस्त वस्तुओं के मूल्य में घटा-बढ़ी रहती है व्यापारियों के लिए यह समय विशेष महत्त्वपूर्ण है, जो व्यापारी इस समय का सदुपयोग करते हैं, वे शीघ्र ही धनिक हो जाते हैं।

रोग और स्वास्थ्य सम्बन्धी फलादेश--- सछिद्र, कृष्णवर्ण या नीलवर्ण की उल्काएँ ताराओं का स्पर्श करती हुई पश्चिम दिशा में गिरें तो मनुष्य और पशुओं में संक्रामक रोग फैलते हैं तथा इन रोगों के कारण सहस्रों प्राणियों की मृत्यु होती है। आश्लेषा नक्षत्र में मगर या सर्प की आकृति की उल्का नील या रक्तवर्ण की भ्रमण करती हुई गिरे तो जिस स्थान पर उल्कापात होता है, उस स्थान के चारों ओर पचास कोस की दूरी तक महामारी फैलती है। यह फल उल्कापात से तीन महीने के अन्दर ही उपलब्ध हो जाता है। श्वेतवर्ण की दण्डाकार उल्का रोहिणी नक्षत्र में पतित हो तो पतन स्थान के चारों ओर सौ कोश तक सुभिक्ष, सुख, शान्ति और स्वास्थ्य लाभ होता है। जिस स्थान पर यह उल्कापात होता है, उससे दक्षिण दिशा में दो सौ कोश की दूरी पर रोग, कष्ट एवं नाना प्रकार की शारीरिक बीमारियाँ प्राप्त होती हैं। इस प्रकार के प्रदेश का त्याग कर देना ही श्रेयस्कर होता है। गोपुच्छ के आकार की उल्का मंगलवार को आश्लेषा नक्षत्र में पतित होती हुई दिखलाई पड़े तो यह नाना प्रकार के रोगों की सूचना देती है। हैजा, चेचक आदि रोगों का प्रकोप विशेष रहता है। बच्चों और स्त्रियों के स्वास्थ्य के लिए विशेष हानिकारक है। किसी भी दिन प्रातःकाल के समय उल्कापात किसी भी वर्ण और किसी भी आकृति का हो तो भी यह रोगों की सूचना देता है। इस समय का उल्कापात प्रकृति विपरीत है, अतः इसके द्वारा अनेक रोगों की सूचना समझ लेनी चाहिये। इन्द्रधनुष या इन्द्र की ध्वजा के आकार में उल्कापात पूर्व की ओर दिखलाई पड़े तो उस दिशा से रोग की सूचना समझनी चाहिए। किवाड़, बन्दूक और तलवार के आकार की उल्का धूमिल वर्ण की पश्चिम दिशा में दिखलाई पड़े तो अनिष्टकारक समझना चाहिये। इस प्रकार का

उल्कापात व्यापी रोग और महामारियों का सूचक है। स्निग्ध, श्वेत, प्रकाशमान और सीधे आकार का उल्कापात शान्ति, सुख और नीरोगता का सूचक है। उल्कापात द्वार पर हो तो विशेष बीमारियाँ सामूहिक रूप से होती हैं।

चतुर्थोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि परिवेषान् यथाक्रमम् ।
प्रशस्तानप्रशस्तांश्च यथावदनुपूर्वतः[1] ॥1॥

उल्काध्याय के पश्चात् अब परिवेषों का पूर्व परम्परानुसार यथाक्रम से कथन करता हूँ। परिवेष दो प्रकार के होते हैं—प्रशस्त-शुभ और अप्रशस्त-अशुभ ॥1॥

पंच प्रकारा विज्ञेयाः पंचवर्णाश्च भौतिकाः ।
ग्रहनक्षत्रयोः कालं परिवेषाः समुत्थिताः[2] ॥2॥

पाँच वर्ण और पाँच भूतों—पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश—की अपेक्षा से परिवेष पाँच प्रकार के जानने चाहिए। ये परिवेष ग्रह और नक्षत्रों के काल को पाकर होते हैं ॥2॥

रूक्षाः खण्डाश्च वामाश्च क्रव्यादायुधसन्निभाः ।
अप्रशस्ताः[3] प्रकीर्त्यन्ते[4] [5]विपरीतगुणान्विताः ॥3॥

जो चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह और नक्षत्रों के परिवेष—मण्डल-कुण्डल रूक्ष, खण्डित—अपूर्ण, टेढ़े, क्रव्याद—मांसभक्षी जीव अथवा चिता की अग्नि और आयुध—तलवार, धनुष आदि अस्त्रों के समान होते हैं, वे अशुभ और इनसे विपरीत लक्षण वाले शुभ माने गये हैं ॥3॥

रात्रौ तु सम्प्रवक्ष्यामि प्रथमं तेषु लक्षणम् ।
ततः पश्चाद्दिवा भूयो तन्निबोध[6] यथाक्रमम्[7] ॥4॥

1. अनुपूर्वशः मु०। 2. समुपस्थिताः आ०। 3. प्रशस्ता मु० C.। 4. न प्रशस्यन्ते मु० C.। 5. विपरीता आ०। 6. तन्निबोधत मु० C.। 7. यतस्ततः मु० D.।

आगे हम रात्रि में होने वाले परिवेषों के लक्षण और फल को कहेंगे; पश्चात् दिन में होने वाले परिवेषों के लक्षण और फल का निरूपण करेंगे। क्रमशः उन्हें अवगत करना चाहिए ॥4॥

क्षीरशंखनिभश्चन्द्रे परिवेषो[1] यदा[2] भवेत्।
तदा क्षेमं सुभिक्षं च राज्ञो विजयमादिशेत् ॥5॥

चन्द्रमा के इर्द-गिर्द दूध अथवा शंख के सदृश परिवेष हो तो क्षेम-कुशल और सुभिक्ष होता है तथा राजा की विजय होती है ॥5॥

सर्पिस्तैलनिकाशस्तु परिवेषो यदा भवेत्।
न चाऽऽ[3]कृष्टोऽतिमात्रं च महामेघस्तदा भवेत् ॥6॥

यदि घृत और तैल के वर्ण का चन्द्रमा का मण्डल हो और वह अत्यन्त श्वेत न होकर किञ्चित् मन्द हो तो अत्यन्त वर्षा होती है ॥6॥

रूप्यपा[4]रापताभश्च[5] परिवेषो यदा भवेत्।
[6]महामेघास्तदाभीक्ष्णं[7] तर्पयन्ति जलैर्महीम् ॥7॥

चाँदी और कबूतर के समान आभा वाला चन्द्रमा का परिवेष हो तो निरन्तर जल-वर्षा द्वारा पृथ्वी जलप्लावित हो जाती है अर्थात् कई दिनों तक झड़ी लगी रहती है ॥7॥

इन्द्रायुध सवर्णस्तु[8] परिवेषो यदा भवेत्।
संग्रामं तत्र जानीयाद् वर्षं[9] चापि जलागमम्[10] ॥8॥

यदि पूर्वादि दिशाओं में इन्द्रधनुष के समान वर्ण वाला चन्द्रमा का परिवेष हो तो उस दिशा में संग्राम का होना और जल का बरसना जानना चाहिए ॥8॥

कृष्णे नीले ध्रुवं वर्षं पीते तु[11] व्याधिमादिशेत्।
[12]रूक्षे भस्मनिभे चापि दुर्वृष्टिभयमादिशेत् ॥9॥

काले और नीले वर्ण का चन्द्रमण्डल हो तो निश्चय ही वर्षा होती है। यदि पीले रंग का हो तो व्याधि का प्रकोप होता है। चन्द्रमण्डल के रूक्ष और भस्म सदृश होने पर वर्षा का अभाव रहता है और उससे भय होता है। तात्पर्य

---

1. परिवेषे आ० । 2. यथा आ० । 3. आकृष्ट मु० । 4. धारा मु० C. । 5. प्रभावस्तु मु० C. । 6. मेघः A. C. B. मु० । 7. भीक्ष्णं मु० C. । 8. सुवर्ण आ० । 9. वर्षं आ० । 10. जलागमे आ० । 11. पीतके आ० । 12. मुद्रित C में इसके पूर्व 'नक्षत्रप्रतिमानस्तु महामेघस्तदा भवेत्' यह पाठ भी मिलता है।

यह है कि जल की वर्षा न होकर वायु तेज चलती है, जिससे फूल की वर्षा दिखलाई पड़ती है ॥9॥

यदा तु सोममुदितं परिवेषो रुणद्धि हि ।
जीमूतवर्णस्निग्धश्च महामेघस्तदा भवेत् ॥10॥

यदि चन्द्रमा का परिवेष उदयप्राप्त चन्द्रमा को अवरुद्ध करता है—ढक लेता है और वह मेघ के समान तथा स्निग्ध हो तो उत्तम वृष्टि होती है ॥10॥

अभ्युन्नतो यदा श्वेतो रूक्षः सन्ध्यानिशाकरः ।
अचिरेणैव कालेन राष्ट्रं चौरैर्विलुप्यते ॥11॥

उदय होता हुआ सन्ध्या के समय का चन्द्रमा यदि श्वेत और रूक्ष वर्ण के परिवेष से युक्त हो तो देश को चोरों के उपद्रव का भय होता है ॥11॥

चन्द्रस्य परिवेषस्तु सर्वरात्रं यदा भवेत् ।
शस्त्रं जनक्षयं चैव तस्मिन् देशे विनिर्दिशेत् ॥12॥

यदि सारी रात —उदय से अस्त तक चन्द्रमा का परिवेष रहे तो उस प्रदेश में परस्पर कलह-मारपीट और जनता का नाश सूचित होता है ॥12॥

भास्करं तु यदा रूक्षः परिवेषो रुणद्धि हि ।
तदा मरणमाख्याति [1]नागरस्य महीपतेः ॥13॥

यदि सूर्य का परिवेष रूक्ष हो और वह उसे ढक ले तो उसके द्वारा नागरिक एवं प्रशासकों की मृत्यु की सूचना मिलती है ॥13॥

आदित्यपरिवेषस्तु यदा सर्वदिनं भवेत् ।
क्षुद्भयं जनमारिञ्च शस्त्रकोपं च निर्दिशेत् ॥14॥

सूर्य का परिवेष सारे दिन उदय से अस्त तक बना रहे तो क्षुधा का भय, मनुष्यों का महामारी द्वारा मरण एवं युद्ध का प्रकोप होता है ॥14॥

हरते सर्वसस्यानामीतिर्भवति दारुणा ।
वृक्षगुल्मलतानां च वर्तनीनां[2] तथैव च ॥15॥

उक्त प्रकार के परिवेष से सभी प्रकार के धान्यों का नाश, घोर ईति-भीति और वृक्षों, गुल्मों-झुरमुटों, लताओं तथा पथिकों को हानि पहुँचती है ॥15॥

---

1. सागरस्य आ० । 2. तस्मिन्नुत्पातदर्शने मु० C. ।

यतः खण्डस्तु दृश्येत् ततः प्रविशते परः।
ततः प्रयत्नं[1] कुर्वीत रक्षणे पुरराष्ट्रयोः ॥16॥

उपर्युक्त समस्त दिनव्यापी सूर्य परिवेष का जिस ओर का भाग खण्डित दिखाई दे, उस दिशा से परचक्र का प्रवेश होता है. अतः नगर और देश की रक्षा के लिए उस दिशा में प्रबन्ध करना चाहिए ॥16॥

रक्तो[2] वा यथाभ्युदितं[3] कृष्णपर्यन्त एव च[4]।
परिवेषो रविं[5] रुन्ध्याद्[6] [7]राजव्यसनमादिशेत् ॥17॥

रक्त अथवा कृष्णवर्ण पर्यन्त चार वर्ण वाला सूर्य का परिवेष हो और वह उदित सूर्य को आच्छादित करे तो कष्ट सूचित होता है ॥17॥

यदा त्रिवर्णपर्यन्तं परिवेषो दिवाकरम्।
तद्राष्ट्रमचिरात् कालाद् दस्युभिः परिलुप्यते[8] ॥18॥

यदि तीन वर्ण वाला परिवेष सूर्य मण्डल को ढक ले तो दस्युओं द्वारा देश में उपद्रव होता है तथा दस्यु वर्ग की उन्नति होती है ॥18॥

हरितो नीलपर्यन्तः परिवेषो यदा भवेत्।
आदित्ये यदि वा सोमे राजव्यसनमादिशेत् ॥19॥

यदि हरे रंग से लेकर नीले रंग पर्यन्त परिवेष सूर्य अथवा चन्द्रमा का हो तो प्रशासक वर्ग को कष्ट होता है ॥19॥

दिवाकरं बहुविधः परिवेषो रुणद्धि हि।
[9]भिद्यते बहुधा वापि गवां मरणमादिशेत् ॥20॥

यदि अनेक वर्ण वाला परिवेष सूर्य मण्डल को अवरुद्ध कर ले अथवा खण्ड-खण्ड अनेक प्रकार का हो तथा सूर्य को ढक ले तो गायों का मरण सूचित होता है ॥20॥

[10]यदाऽतिमुच्यते शीघ्रं[11] दिशि चैवाभिवर्धते।
गवां विलोपमपि च तस्य राष्ट्रस्य निर्दिशेत् ॥21॥

1. प्रयत्नं तत्र मु० । 2. रक्तं मु० A. । 3. [illegible] मु० C. । 4. [illegible] मु० D. । 5. रवि मु० D. । 6. विन्द्यात् आ० । 7. राजा मु० A., राजा मु० C. । 8. [illegible], और परिताप्यते, ये दोनों ही पाठ मिलते हैं। आ० । 9. राष्ट्रक्षोभो भवेत् [illegible] मु० । 10. यथाभिमुच्यते मु० । 11. दिवसश्चैवाभिवर्धते मु० ।

जिस दिशा में सूर्य का परिवेष शीघ्र हटे और जिस दिशा में बढ़ता जाय उस दिशा में राष्ट्र की गायों का लोप होता है —गायों का नाश होता है ॥21॥

अंशुमाली[1] यदा तु स्यात् परिवेषः समन्ततः ।
तदा सपुरराष्ट्रस्य देशस्य रुजमादिशेत् ॥22॥

सूर्य का परिवेष यदि सूर्य के चारों ओर हो तो नगर, राष्ट्र और देश के मनुष्य महामारी से पीड़ित होते हैं ॥22॥

ग्रहनक्षत्रचन्द्राणां परिवेषः प्रगृह्यते ।
अभीक्ष्णं यत्र वर्तेत[2] तं देशं परिवर्जयेत् ॥23॥

ग्रह—सूर्यादि सात ग्रह, नक्षत्र—अश्विनी, भरणी आदि 28 नक्षत्र और चन्द्रमा का परिवेष निरन्तर बना रहे और वह उस रूप में ग्रहण किया जाय तो उस देश का परित्याग कर देना चाहिए, यतः वहाँ शीघ्र ही भय उपस्थित होता है ॥23॥

परिवेषो विरुद्धेषु नक्षत्रेषु ग्रहेषु च ।
कालेषु वृष्टिर्विज्ञेया भयमन्यत्र निर्दिशेत्[3] ॥24॥

वर्षाकाल में ग्रहों और नक्षत्रों की जिस दिशा में परिवेष हों उस दिशा में वृष्टि होती है और अन्य प्रकार का भय होता है ॥24॥

अभ्रशक्तिर्यतो गच्छेत् तां दिशं त्वभियोजयेत् ।
रिक्ता[4] वा विपुला[5] चाभ्रे जयं कुर्वीत[6] शाश्वतम् ॥25॥

जल से रिक्त अथवा जल से परिपूर्ण बादलों की पंक्ति जिस दिशा की ओर गमन करे उस दिशा में शाश्वत जय होती है ॥25॥

यदाऽभ्रशक्तिर्दृश्येत परिवेषसमन्विता[7] ।
नागरान् यायिनो[8] हन्युस्तदा यत्नेन संयुगे ॥26॥

यदि परिवेष सहित अभ्रशक्ति—बादल दिखलाई पड़ें तो आक्रमण करने वाले शत्रु द्वारा नगरवासियों का युद्ध में विनाश होता है, अतः यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए ॥26॥

1. अंशुमाली अ० । 2. वर्तेत् मु० । 3. आदिशेत् मु० B. D. । 4. रक्ता मु० । 5. विपुला मु० । 6. कुर्वीत मु० । 7. समन्विता मु० C. । 8. यायिनो, यायिनः मु० A. D., यायिनं मु० C. ।

नानारूपो यदा दण्डः परिवेषं प्रमर्दति।
नागरास्तत्र [1]बध्यन्ते यायिनो नात्र संशयः ॥27॥

यदि अनेक वर्ण वाला दण्ड परिवेष को मर्दन करता हुआ दिखलाई पड़े तो आक्रमणकारियों द्वारा नागरिकों का नाश होता है, इसमें सन्देह नहीं ॥27॥

त्रिकोटि[2] यदि दृश्येत् परिवेषः कथञ्चन।
त्रिभागशस्त्रबध्योऽसाविति निर्ग्रन्थशासने ॥28॥

कदाचित् तीन कोने वाला परिवेष देखने में आवे तो युद्ध में तीन भाग सेना मारी जाती है, ऐसा निर्ग्रन्थ शासन में बतलाया गया है ॥28॥

चतुरस्रो यदा चापि परिवेषः प्रकाशते।
क्षुधया व्याधिभिश्चापि चतुर्भागोऽवशिष्यते[3] ॥29॥

यदि चार कोने वाला परिवेष दिखलाई दे तो क्षुधा—भूख और रोग से पीड़ित होकर विनाश को प्राप्त हो जाती है, जिससे जन-संख्या चतुर्थांश रह जाती है ॥29॥

अर्द्धचन्द्रनिकाशस्तु परिवेषो रुणद्धि हि।
आदित्यं[4] यदि वा सोमं[5] राष्ट्रं संकुलतां व्रजेत् ॥30॥

अर्ध चन्द्राकार परिवेष चन्द्रमा अथवा सूर्य को आच्छादित करे तो देश में व्याकुलता होती है ॥30॥

प्राकाराट्टालिकाप्रख्यः परिवेषो रुणद्धि हि।
आदित्यं यदि वा सोमं पुररोधं निवेदयेत् ॥31॥

यदि कोट और अट्टालिका के सदृश होकर परिवेष सूर्य और चन्द्रमा को अवरुद्ध करे तो नगर में शत्रु के घेरे पड़ जाते हैं ऐसा कहना चाहिए ॥31॥

समन्ताद् बध्यते यस्तु मुच्यते च मुहुर्मुहुः।
संग्रामं तत्र जानीयाद् दारुणं पर्युपस्थितम्[6] ॥32॥

सूर्य अथवा चन्द्रमा के चारों ओर परिवेष हो और वह बार-बार होवे और बिखर जाये तो वहाँ पर कलह एवं संग्राम होता है ॥32॥

---

1. व-न्ते मु० । 2. त्रिकोणो मु० । 3. विशिष्यते मु० । 4. आदित्ये मु० । 5. सोमे मु० । 6. भयमाख्याति दारुणम् मु० C. ।

यदा ग्रहमवच्छाद्य परिवेषः प्रकाशते ।
अचिरेणैव कालेन संकुलं[1] तत्र जायते ॥33॥

यदि परिवेष ग्रह को आच्छादित करके दिखलाई दे तो वहाँ शीघ्र ही सब आकुलता से व्याप्त हो जाते हैं ॥33॥

[2]यदि राहुमपि प्राप्तं परिवेषो रुणद्धि चेत् ।
तदा सुवृष्टिर्जानीयाद् व्याधिस्तत्र भयं भवेत् ॥34॥

यदि परिवेष राहु को भी ढक ले---घेरे के भीतर राहु ग्रह भी आ जाय—तो अच्छी वर्षा होती है, परन्तु वहाँ व्याधि का भय बना रहता है ॥34॥

पूर्वसन्ध्यां नागराणामागतानां[3] च पश्चिमा ।
अर्द्धरात्रेषु[4] राष्ट्रस्य मध्याह्ने राज्ञ उच्यते ॥35॥

पूर्व की सन्ध्या का फल स्थायी---नगरवासियों को होता है और पश्चिम की सन्ध्या का फल आगन्तुक- यायी को होता है। अर्धरात्रि का फल देश भर को और मध्याह्न का फल राजा को प्राप्त होता है ॥35॥

धूमकेतुं च सोमं च नक्षत्रं च रुणद्धि हि ।
परिवेषो यदा राहुं तदा यात्रा न सिध्यति ॥36॥

यदि परिवेष धूमकेतु- —पुच्छलतारा, चन्द्रमा, नक्षत्र और राहु को आच्छादित करे तो यायी --आक्रमण करने वाले राजा की यात्रा की सिद्धि नहीं होती ॥36॥

यदा तु ग्रहनक्षत्रे परिवेषो रुणद्धि हि ।
अभावस्तस्य देशस्य विज्ञेयः पर्युपस्थितः ॥37॥

यदि परिवेष ग्रह और नक्षत्रों को रोके तो उस देश का अभाव हो जाता है--उस देश में संकट होता है ॥37॥

त्रयो [5]यत्रावरुद्ध्यन्ते नक्षत्रं चन्द्रमा ग्रहः ।
त्र्यहाद् वा जायते वर्षं मासाद् वा जायते भयम् ॥38॥

नक्षत्र, चन्द्रमा और मंगल, बुध, गुरु और शुक्र इन पाँच ग्रहों में से किसी एक को एक साथ परिवेष अवरुद्ध करे तो तीन दिन में वर्षा होती है अथवा एक

1. संकुलं मु. । 2. राहुणा चैव यदा ग्रहं परिवेषो रुणद्धि हि । तदा वृष्टि विजानीयात् व्याधिमत्र भयं भवेत् ॥34॥ मु. C. । 3. आगन्तुकानां मु. । 4. नागेषु मु. । 5. ग्रहाणि यत्र विरुध्यन्ते, नक्षत्र चन्द्रमा ग्रहः मु. ।

मास में भय उत्पन्न होता है ॥38॥

उल्कावत् साधनं ज्ञेयं परिवेषु तत्त्वतः ।
लक्षणं सम्प्रवक्ष्यामि विद्युतां तन्निबोधत[1] ॥39॥

परिवेषों का फल उल्का के फल के समान ही अवगत करना चाहिए । अब आगे विद्युत् के लक्षणादि का निरूपण करते हैं ॥39॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे परिवेषवर्णनो नाम चतुर्थोऽध्यायः ।

विवेचन—परिवेषों के द्वारा शुभाशुभ अवगत करने की परम्परा निमित्त शास्त्र के अन्तर्गत है । परिवेषों का विचार ऋग्वेद में आया है । सूर्य अथवा चन्द्रमा की किरणें पर्वत के ऊपर प्रतिबिम्बित और पवन के द्वारा मंडलाकार होकर थोड़े से मेघ वाले आकाश में अनेक रंग और आकार की दिखलाई पड़ती हैं, इन्हीं को परिवेष कहते हैं । वर्षा ऋतु में सूर्य या चन्द्रमा के चारों ओर एक गोलाकार अथवा अन्य किसी आकार में एक मंडल-सा बनता है, उसी को परिवेष कहा जाता है ।

परिवेषों का साधारण फलादेश—जो परिवेष नीलकंठ, मोर, चांदी, तेल, दूध और जल के समान आभा वाला हो, स्वकालसम्भूत हो, जिसका वृत्त खण्डित न हो और स्निग्ध हो, वह सुभिक्ष और मंगल करने वाला होता है । जो परिवेष समस्त आकाश में गमन करे, अनेक प्रकार की आभा वाला हो, रुधिर के समान हो, रूखा हो, खण्डित हो तथा धनुष और शृंगाटिक के समान हो वह पापकारी, भयप्रद और रोगसूचक होता है । मोर की गर्दन के समान परिवेष हो तो अत्यन्त वर्षा, बहुत रंगों वाला हो तो राजा का वध, धूम्रवर्ण का होने से भय और इन्द्रधनुष के समान या अशोक के फूल के समान कान्ति वाला हो तो युद्ध होता है । किसी भी ऋतु में यदि परिवेष एक ही वर्ण का हो, स्निग्ध हो तथा छोटे-छोटे मेघों से व्याप्त हो और सूर्य की किरणें पीत वर्ण की हों तो इस प्रकार का परिवेष शीघ्र ही वर्षा का सूचक है । यदि तीनों कालों की सन्ध्या में परिवेष दिखलाई पड़े तथा परिवेष की ओर मुख करके मृग या पक्षी शब्द करते हों तो इस प्रकार का परिवेष अत्यन्त अनिष्टकारक होता है । यदि परिवेष का भेदन उल्का या विद्युत् द्वारा हो तो इस प्रकार के परिवेष द्वारा किसी बड़े नेता की मृत्यु की सूचना समझनी चाहिए । रक्तवर्ण का परिवेष भी किसी नेता की मृत्यु का सूचक है । उदयकाल, अस्तकाल और मध्याह्न या मध्यरात्रि काल में लगातार परिवेष दिखलाई पड़े तो किसी नेता की मृत्यु समझनी चाहिए । दो मण्डल का परिवेष

---

1. तन्निबोधत: मु० ।

सेनापति के लिए आतंककारी, तीन मंडल वाला परिवेष शस्त्रकोप का सूचक, चार मंडल का परिवेष देश में उपद्रव तथा महत्त्वपूर्ण युद्ध का सूचक एवं पाँच मण्डल का परिवेष देश या राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ सूचक है। मंगल परिवेष में हो तो सेना एवं सेनापति को भय; बुध परिवेष में हो तो कलाकार, कवि, लेखक एवं मन्त्री को भय; बृहस्पति परिवेष में हो तो पुरोहित, मन्त्री और राजा को भय; शुक्र परिवेष में हो तो क्षत्रियों को कष्ट एवं देश में अशान्ति और शनि परिवेष में हो तो देश में चोर, डाकुओं का उपद्रव वृद्धिंगत हो तथा साधु, संन्यासियों को अनेक प्रकार के कष्ट हों। केतु परिवेष में हो तो अग्नि का प्रकोप तथा शस्त्रादि का भय होता है। परिवेष में दो ग्रह हों तो कृषि के लिए हानि, वर्षा का अभाव, अशान्ति और साधारण जनता को कष्ट; तीन ग्रह परिवेष में हों तो दुर्भिक्ष, अन्न का भाव महँगा और धनिक वर्ग को विशेष कष्ट; चार ग्रह परिवेष में हों तो मन्त्री, नेता एवं किसी धर्मात्मा की मृत्यु और पाँच ग्रह परिवेष में हों तो प्रलय तुल्य कष्ट होता है। यदि मंगल बुधादि पाँच ग्रह परिवेष में हों तो किसी बड़े भारी राष्ट्रनायक की मृत्यु तथा जगत् में अशान्ति होती है। शासन परिवर्तन का योग भी इसी के द्वारा बनता है। यदि प्रतिपदा से लेकर चतुर्थी तक परिवेष हो तो क्रमानुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों को कष्टसूचक होता है। पंचमी से लेकर सप्तमी तक परिवेष हो तो नगर, कोष एवं धान्य के लिए अशुभकारक होता है। अष्टमी को परिवेष हो तो युवक, मन्त्री या किसी बड़े शासनाधिकारी की मृत्यु होती है। इस दिन का परिवेष गाँव और नगरों की उन्नति में रुकावट की भी सूचना देता है। नवमी, दशमी और एकादशी में होने वाला परिवेष नागरिक जीवन में अशान्ति और प्रशासक या मंडलाधिकारी की मृत्यु की सूचना देता है। द्वादशी तिथि में परिवेष हो तो देश या नगर में घरेलू उपद्रव; त्रयोदशी में परिवेष हो तो शस्त्र का क्षोभ, चतुर्दशी में परिवेष हो तो नारियों में भयानक रोग, प्रशासनाधिकारी की रमणी को कष्ट एवं पूर्णमासी में परिवेष हो तो साधारणतः शान्ति, समृद्धि एवं सुख की सूचना मिलती है। यदि परिवेष के भीतर रेखा दिखलाई पड़े तो नगरवासियों को कष्ट और परिवेष के बाहर रेखा दिखलाई पड़े तो देश में शान्ति और सुख का विस्तार होता है। स्निग्ध, श्वेत, और दीप्तिशाली परिवेष विजय, लक्ष्मी, सुख और शान्ति की सूचना देता है।

रोहिणी, धनिष्ठा और श्रवण नक्षत्र में परिवेष हो तो देश में सुभिक्ष, शान्ति, वर्षा एवं हर्ष की वृद्धि होती है। अश्विनी, कृत्तिका और मृगशिरा में परिवेष हो तो समयानुकूल वर्षा, देश में शान्ति, धन-धान्य की वृद्धि एवं व्यापारियों को लाभ; भरणी और आश्लेषा में परिवेष हो तो जनता को अनेक प्रकार का

कष्ट, किसी महापुरुष की मृत्यु, देश में उपद्रव, अन्न कष्ट एवं महामारी का प्रकोप; आर्द्रा नक्षत्र में परिवेष हो तो सुख-शान्ति का कारक; पुनर्वसु नक्षत्र में परिवेष हो तो देश का प्रभाव बढ़े, अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति मिले, नेताओं को सभी प्रकार के सुख प्राप्त हों तथा देश की उपज वृद्धिगत हो; पुष्य नक्षत्र में परिवेष हो तो कल-कारखानों की वृद्धि हो; आश्लेषा नक्षत्र में परिवेष हो तो सब प्रकार से भय, आतंक एवं महामारी की सूचना, मघा नक्षत्र में परिवेष हो तो श्रेष्ठ वर्षा की सूचना तथा अनाज सस्ते होने की सूचना; तीनों पूर्वाओं में परिवेष हो तो व्यापारियों को भय, साधारण जनता को भी कष्ट और कृषक वर्ग को चिन्ता की सूचना; तीनों उत्तराओं में परिवेष हो तो साधारणतः शान्ति, चेचक का प्रकोप, फसल की श्रेष्ठता और पर-शासन से भय; हस्त नक्षत्र में परिवेष हो तो सुभिक्ष, धान्य की अच्छी उपज और देश में समृद्धि; चित्रा नक्षत्र में परिवेष हो तो प्रशासकों में मतभेद, परस्पर कलह, और देश को हानि; स्वाती नक्षत्र में परिवेष हो तो समयानुकूल वर्षा, प्रशासकों को विजय और शान्ति; विशाखा नक्षत्र में परिवेष हो तो अग्निभय, शस्त्रभय और रोगभय; अनुराधा नक्षत्र में परिवेष हो तो व्यापारियों को कष्ट, देश की आर्थिक क्षति और नगर में उपद्रव; ज्येष्ठा नक्षत्र में परिवेष हो तो अशान्ति, उपद्रव और अग्नि भय; मूल नक्षत्र में परिवेष हो तो देश में घरेलू कलह, नेताओं में मतभेद और अन्न की क्षति; पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में परिवेष हो तो कृषकों को लाभ, पशुओं की वृद्धि और धन-धान्य की वृद्धि; उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में परिवेष हो तो जनता में प्रेम, नेताओं में सहयोग, देश की उन्नति और व्यापार में लाभ; शतभिषा में परिवेष हो तो शत्रु भय, अग्नि का विशेष प्रकोप और अन्न की कमी; पूर्वाभाद्रपद में परिवेष हो तो कलाकारों का सम्मान और प्रायः शान्ति; उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में परिवेष हो तो जनता में सहयोग, देश में कल-कारखानों की वृद्धि और शासन में तरक्की एवं रेवती नक्षत्र में परिवेष हो तो सर्वत्र शान्ति की सूचना समझनी चाहिए। परिवेष के रंग, आकृति और मण्डलों की संख्या के अनुसार फलादेश में न्यूनता या अधिकता हो जाती है। किसी भी नक्षत्र में एक मंडल का परिवेष साधारणतः प्रतिपादित फल की सूचना देता है, दो मंडल का परिवेष निरूपित फल से प्रायः डेढ़ गुने फल की सूचना, तीन मंडल का परिवेष द्विगुणित फल की सूचना, चार मंडल का परिवेष त्रिगुणित फल की सूचना और पाँच मंडल का परिवेष चौगुने फल की सूचना देता है। परिवेष में पाँच से अधिक मंडल नहीं होते हैं। साधारणतः एक मंडल का परिवेष शुभ ही माना जाता है। मंडलों में उनकी आकृति की स्पष्टता का भी विचार कर लेना उचित ही होगा।

वर्षा और कृषि सम्बन्धी परिवेष का फलादेश—वर्षा का विचार प्रधान रूप

से चन्द्रमा के परिवेष से किया जाता है और कृषि सम्बन्धी विचार के लिए सूर्य परिवेष का अवलम्बन लिया जाता है। यद्यपि दोनों ही परिवेष उभय प्रकार के फल की सूचना देते हैं, फिर भी विशेष विचार के लिए पृथक् परिवेष को ही लेना चाहिए।

चन्द्रमा का परिवेष कपोत रंग का हो और उसमें अधिक से अधिक दो मण्डल हों तो लगातार सात दिनों तक वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकार का परिवेष फसल की उत्तमता की सूचना भी देता है। वर्षा ऋतु में समय पर वर्षा होती है। आश्विन और कार्तिक में भी वर्षा होने से धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है। यदि उक्त प्रकार के परिवेष के समय चन्द्रमा का रंग श्वेत वर्ण हो तो माघ मास में भी वर्षा होने की सूचना समझ लेनी चाहिए। कदाचित् चन्द्रमा का रंग नीला या काला दिखलाई पड़े तो निश्चय से अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। चन्द्रमा के नीले या काले होने से सुभिक्ष भी होता है। गेहूँ, धान और गुड़ की फसल अच्छी उत्पन्न होती है। काले रंग के चन्द्रमा के होने से आश्विन मास में वर्षा का दस दिनों तक अवरोध रहता है, जिससे धान की फसल में कमी आती है। चन्द्रमा हरित वर्ण का मालूम हो और परिवेष दो मंडलों के घेरे में हो तो वर्षा सामान्य ही होती है, पर फसल अच्छी ही उत्पन्न होती है। चन्द्रमा जिस समय रोहिणी नक्षत्र के मध्य में स्थित हो, उसी समय विचित्र वर्ण का परिवेष रात्रि के मध्य भाग में दिखलाई पड़े तो इस प्रकार के परिवेष द्वारा देश की उन्नति की सूचना समझनी चाहिए। देश में धन-धान्य की उत्पत्ति प्रचुर रूप में होती है, वर्षा भी समय पर होती है तथा देश में सर्वत्र सुभिक्ष व्याप्त रहता है। चन्द्रमा का परिवेष रक्त वर्ण का दिखलाई पड़े और चन्द्रमा का रंग श्वेत या कपोत हो तथा एक ही मंडल वाला परिवेष हो तो वर्षा आषाढ़ में नहीं होती, श्रावण, भाद्रपद में अच्छी वर्षा और आश्विन में वर्षा का अभाव ही रहता है। फसल भी उत्पन्न नहीं होती। यदि आषाढ़ मास में चन्द्रमा का परिवेष सन्ध्या समय ही दिखलाई पड़े तो श्रावण में धूप होती है, वर्षा का अभाव रहता है। आषाढ़ कृष्ण प्रतिपदा को सन्ध्या काल में चन्द्रमा का परिवेष दो मंडलों में दिखलाई पड़े तो वर्षा का अभाव, एक मंडल में रक्त वर्ण का परिवेष दिखलाई दे तो साधारण वर्षा, एक मंडल में ही श्वेत वर्ण और हरित वर्ण मिश्रित परिवेष दिखलाई दे तो प्रचुर वर्षा, तीन मंडल में परिवेष दिखलाई दे तो दुष्काल, वर्षा का अभाव और चार मंडल में परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल में कमी और दुर्भिक्ष, वर्षा ऋतु के चारों महीनों अल्पवृष्टि और अन्न की कमी होती है। आषाढ़ कृष्ण द्वितीया को चन्द्रोदय होते हरित और रक्त वर्ण मिश्रित परिवेष दिखलाई पड़े तो खूब वर्षा होती है। तृतीया को चन्द्रोदय के तीन घड़ी बाद यदि

लाल वर्ण का एक मंडल वाला परिवेष दिखलाई पड़े तो निश्चयत: अधिक वर्षा होती है। नदी-नाले जल से भर जाते हैं। श्रावण के महीने में वर्षा की कुछ कमी रहती है, फिर भी फसल उत्पन्न होती है। यदि इसी तिथि को मध्य रात्रि के उपरान्त परिवेष दो मंडल वाला दिखलाई पड़े तो वर्षा का अभाव, कृषि में गड़बड़ी और सभी प्रकार की फसलों में रोगादि लग जाते हैं। चतुर्थी तिथि को चन्द्रोदय के साथ ही परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल उत्तम होती है और वर्षा भी समयानुकूल होती है, यदि इसी दिन चन्द्रोदय के चार-पाँच घड़ी उपरान्त परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा का भादों मास में अभाव ही समझना चाहिए। उपर्युक्त प्रकार का परिवेष फसल के लिए भी अनिष्टकारक होता है।

आषाढ़ कृष्ण पंचमी, षष्ठी और अष्टमी को चन्द्रास्त काल में विचित्र वर्ण का परिवेष दिखलाई पड़े तो निश्चयत: अल्प वर्षा होती है। अष्टमी तिथि को चन्द्रोदय काल में ही परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा प्रचुर परिमाण में तथा फसल उत्तम होती है। अष्टमी के उपरान्त कृष्ण पक्ष की अन्य तिथियों में अस्त या उदय काल में चन्द्र परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा की कमी ही समझनी चाहिए। फसल भी सामान्य ही होती है।

आषाढ़ शुक्ला द्वितीया को चन्द्रोदय होते ही परिवेष घेर ले तो अगले दिन नियमत: वर्षा होती है। इस परिवेष का फल तीन दिनों तक लगातार वर्षा होना भी है। आषाढ़ शुक्ला तृतीया को चन्द्रोदय के तीन घड़ी भीतर ही विचित्र वर्ण का परिवेष चन्द्रमा को घेर ले तो नियमत: अगले पाँच दिनों तक तेज धूप पड़ती है, पश्चात् हल्की वर्षा होती। आषाढ़ शुक्ला चतुर्थी को चन्द्रोदय काल में ही परिवेष रक्त वर्ण का हो तो आषाढ़ मास में सूखा पड़ता है और श्रावण में वर्षा होती है। आषाढ़ी पूर्णिमा को लाल वर्ण का परिवेष दिखलाई पड़े तो यह सुभिक्ष का सूचक है, इस वर्ष वर्षा विशेष रूप से होती है। फसल भी अच्छी होती है। अन्न का भाव भी सस्ता रहता है। श्रावण कृष्ण प्रतिपदा को मध्य रात्रि में चन्द्रमा का परिवेष दिखलाई पड़े तो अगले आठ दिनों में वर्षा का अभाव समझना चाहिए। यदि यह परिवेष श्वेत वर्ण का हो तो श्रावण भर वर्षा नहीं होती। कड़ाके की धूप पड़ती है, जिससे अनेक प्रकार की बीमारियाँ भी फैलती हैं। उदयकालीन चन्द्रमा को श्रावण कृष्ण द्वितीया के दिन परिवेष वेष्टित करे तो वर्षा अच्छी होती है। किन्तु गुर्जर, द्राविड़ और महाराष्ट्र में वर्षा का अभाव सूचित होता है। वर्षा ऋतु में ग्रहों और नक्षत्रों की जिस दिशा में परिवेष हो उस दिशा में वर्षा अधिक होती है, फसल भी अच्छी होती है। श्रावण कृष्णा सप्तमी को उदय काल में चन्द्र परिवेष दिखाई पड़े तो वर्षा सामान्यत: अल्प समझनी चाहिए। यदि प्रातःकाल चन्द्रास्त के समय ही परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा

अगले पाँच दिनों में खूब होती है। यदि त्रिकोण परिवेष श्रावण कृष्णा तृतीया को दिखलाई पड़े तो वर्षा का अभाव, दुर्भिक्ष और उपद्रव समझना चाहिए। नक्षत्रों का भी परिवेष होता है। श्रावण मास में नक्षत्रों का परिवेष हो तो वर्षा का अभाव उस देश में अवगत करना चाहिए। यदि श्रावण मास की किसी भी तिथि में चन्द्र परिवेष चन्द्रोदय से लेकर चन्द्रास्त तक बना रहे तो श्रावण और भाद्रपद इन दोनों ही महीनों में वर्षा का अभाव रहता है। आश्विन मास में किसी भी तिथि को चन्द्रोदय काल या चन्द्रास्त काल में चक्रपरिवेष दिखलाई पड़े तो वह फसल के लिए अच्छाई की सूचना देता है। वर्षा कम होने पर भी फसल अच्छी उत्पन्न होती है। ज्येष्ठ, वैशाख और चैत्र महीने का परिवेष घोर दुर्भिक्ष की सूचना देता है। इन तीनों महीनों में चन्द्रोदय काल में या चन्द्रास्त काल में परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल के लिए अत्यन्त अनिष्टकारक समझना चाहिए। उक्त महीनों की प्रतिपदाविद्ध पूर्णिमा को परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा के लिए उस वर्ष हाहाकार होता रहता है। बादल आकाश में व्याप्त रहते हैं, पर वर्षा नहीं होती। तृण और घास की भी कमी होती है जिससे पशुओं को भी कष्ट होता है। द्वितीयाविद्ध प्रतिपदा को परिवेष हो तो साधारण वर्षा होती है। द्वितीयाविद्ध पूर्णिमा में चन्द्र परिवेष दिखलाई पड़े तो उस वर्ष निश्चयतः सूखा पड़ता है। कुँओं का पानी भी सूख जाता है। फसल का अभाव ही उस वर्ष रहता है।

सूर्य परिवेष का फल—यदि सूर्योदय काल में ही सूर्य परिवेष दिखलाई पड़े तो साधारणतः वर्षा होने की सूचना देता है। मध्याह्न में परिवेष सूर्य को घेरकर मंडलाकार हो जाय तो आगामी चार दिनों में घोर वर्षा की सूचना देता है। इस प्रकार के परिवेष से फसल भी अच्छी होती है। सूर्य के परिवेष द्वारा प्रधान रूप से फसल का विचार किया जाता है। यदि किसी भी दिन सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक परिवेष बना रह जाय तो घोर दुर्भिक्ष का सूचक समझना चाहिए। दिन भर परिवेष का बना रह जाना वर्षा का अवरोधक भी करता है तथा अनेक प्रकार की विपत्तियों की भी सूचना देता है। वर्षा ऋतु में सूर्य का परिवेष प्रायः वर्षा सूचक समझा जाता है। वैशाख और ज्येष्ठ इन महीनों में यदि सूर्य का परिवेष दिखलाई पड़े तो निश्चयतः फसल की बरबादी का सूचक होता है। उस वर्ष वर्षा भी नहीं होती और यदि वर्षा होती है तो इतनी अधिक और असामयिक होती है, जिससे फसल मारी जाती है। इन तीनों महीनों का सूर्य का परिवेष मंगलवार, शनिवार और रविवार इन तीन दिनों में से किसी दिन हो तो संसार के लिए महान् भयकारक, उपद्रवसूचक और दुर्भिक्ष की सूचना समझनी चाहिए। सूर्य का परिवेष यदि आश्लेषा, विशाखा और भरणी इन नक्षत्रों में हो तथा सूर्य

भी इन नक्षत्रों में से किसी एक पर स्थित हो तो इस परिवेष का फल फसल के लिए अत्यन्त अशुभसूचक होता है। अनेक प्रकार के उपाय करने पर भी फसल अच्छी नहीं हो पाती। नाना वर्ण का परिवेष सूर्य मण्डल को अवरुद्ध करे अथवा अनेक टुकड़ों में विभक्त होकर सूर्य को आच्छादित करे तो उस वर्ष वर्षा का अभाव एवं फसल की बरबादी समझनी चाहिए। रक्त अथवा कृष्ण वर्ण का परिवेष उदय होते हुए सूर्य को आच्छादित कर ले तो फसल का अभाव और वर्षा की कमी सूचित होती है। मध्याह्न में सूर्य का कृष्ण वर्ण का परिवेष आच्छादित करे तो दालवाले अनाजों की उत्पत्ति अधिक तथा अन्य प्रकार के अनाज कम उत्पन्न होते हैं। मवेशी को कष्ट भी इस प्रकार के परिवेष से समझना चाहिए। यदि रक्त वर्ण का परिवेष सूर्य को आच्छादित करे और सूर्यमंडल श्वेतवर्ण का हो जाय तो इस प्रकार का परिवेष श्रेष्ठ फसल होने की सूचना देता है। आषाढ़, श्रावण और भाद्रपद मास में होने वाले परिवेषों का फलादेश विशेष रूप से घटित होता है। यदि आषाढ़ शुक्ला प्रतिपदा को सन्ध्या समय सूर्यास्त काल में परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल का अभाव, प्रातः सूर्योदय काल में परिवेष दिखलाई पड़े तो अच्छी फसल एवं मध्याह्न समय में परिवेष दिखलाई पड़े तो साधारण फसल उत्पन्न होती है। इस तिथि को सोमवार पड़े तो पूर्णफल, मंगलवार पड़े तो प्रतिपादित फल से कुछ अधिक फल, बुधवार हो तो अल्प फल, गुरुवार हो तो पूर्णफल, शुक्रवार हो तो सामान्य फल एवं शनिवार हो तो अधिक फल ही प्राप्त होता है। यदि आषाढ़ शुक्ला द्वितीया तिथि को पीतवर्ण का मंडलाकार परिवेष सूर्य के चारों ओर दिखलाई पड़े तो समय पर वर्षा, श्रेष्ठ फसल की उत्पत्ति, मनुष्य और पशुओं को सब प्रकार से आनन्द की प्राप्ति होती है। इस तिथि को त्रिकोणाकार, चौकोर या अनेक कोणाकार टेढ़ा-मेढ़ा परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल में बहुत कमी रहती है। वर्षा भी समय पर नहीं होती तथा अनेक प्रकार के रोग भी फसल में लग जाते हैं। सूर्य मंडल को दो या तीन वलयों में वेष्टित करने वाला परिवेष मध्यम फल का सूचक है। आषाढ़ शुक्ला चतुर्थी या पंचमी को कृष्ण वर्ण का परिवेष सूर्य को चार घड़ी तक वेष्टित किये रहे तो आगामी ग्यारह दिनों तक सूखा पड़ता है, तेज धूप होती है, जिससे फसल के सभी पौधे सूख जाते हैं। इस प्रकार का परिवेष केवल बारह दिनों तक अपना फल देता है, इसके पश्चात् उसका फल क्षीण हो जाता है।

आषाढ़ शुक्ला षष्ठी, अष्टमी और दशमी को सूर्योदय होते ही पीत वर्ण का त्रिगुणाकार परिवेष वेष्टित करे तो उस वर्ष फसल अच्छी नहीं होती; वृत्ताकार आच्छादित करे तो फसल साधारणतः अच्छी; दीर्घ वृत्ताकार -अण्डाकार या ढोलक के आकार में आच्छादित करे तो फसल बहुत अच्छी, चावल की उत्पत्ति

विशेष रूप से; चौकोर रूप में आच्छादित करे तो तिलहन की फसल और अन्य प्रकार की फसलों में गड़बड़ी एवं पंच भुजाकार आच्छादित करे तो गन्ना, घी, मधु आदि की उत्पत्ति प्रचुर परिणाम में तथा रुई की फसल को विशेष क्षति होती है। दशमी को सूर्यास्त काल में कृष्ण वर्ण का परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा का अभाव, फसल की क्षति और पशुओं में रोग फैलता है। षष्ठी और अष्टमी का फल जो उदय काल का है, वही अस्तकाल का भी है। विशेषता इतनी ही है कि उक्त तिथियों में अस्तकालीन परिवेष द्वारा प्रत्येक वस्तु की उपज अवगत की जा सकती है। आषाढ़ शुक्ला त्रयोदशी और पूर्णिमा को दोपहर के पश्चात् सूर्य के चारों ओर परिवेष दिखलाई पड़े तो सुभिक्ष, धान्य और तृण की विशेष उत्पत्ति होती है। श्रावण मास का सूर्य परिवेष फसल के लिए हानिकारक माना गया है। भौमादि कोई ग्रह और सूर्य नक्षत्र यदि एक ही परिवेष में हों तो तीन दिन में वर्षा होती है। यदि शनि परिवेष मण्डल में हो तो छोटे धान्य को नष्ट करता है और कृषकों के लिए अत्यन्त अनिष्टकारी होता है, तीव्र पवन चलता है। श्रावणी पूर्णिमा को मेघाच्छन्न आकाश में सूर्य का परिवेष दृष्टिगोचर हो तो अत्यन्त अनिष्टकारक होता है।

भाद्रपद मास में सूर्य के परिवेष का फल केवल कृष्णपक्ष की 3।6।7।10।11 और 13 तथा शुक्ल पक्ष में 2।5।7।8।13।14।15 तिथियों में मिलता है। कृष्ण-पक्ष में परिवेष दिखलाई दे तो साधारण वर्षा की सूचना के साथ कृषि के जघन्य फल को सूचित करता है। विशेषतः कृष्णपक्ष की एकादशी को सूर्य परिवेष दिखलाई पड़े तो नाना प्रकार के धान्यों की समृद्धि होती है, वर्षा समय पर होती है। अनाज का भाव भी सस्ता रहता है और जनता में सुख शान्ति रहती है। शुक्ल पक्ष की द्वितीया और पंचमी तिथि का परिवेष सूर्योदय या मध्याह्न काल में दिखलाई पड़े तो साधारणतः फसल अच्छी और अपराह्न काल में दिखलाई पड़े तो फसल में कमी ही समझनी चाहिए। सप्तमी और अष्टमी को अपराह्न काल में परिवेष दिखलाई पड़े तो वायु की अधिकता समझनी चाहिए। वर्षा के साथ वायु का प्राबल्य रहने से वर्षा की कमी रह जाती है और फसल में न्यूनता रह जाती है। यदि चार कोनों वाला परिवेष इसी महीने में सूर्य के चारों ओर दिखलाई पड़े तो संसार में अपकीर्ति के साथ फसल में भी कमी रहती है। आश्विन मास का सूर्य परिवेष केवल फसल में ही कमी नहीं करता, बल्कि इसका प्रभाव अनेक व्यक्तियों पर भी पड़ता है। सूर्य का परिवेष यदि उदय काल में हो और परिवेश के निकट बुध या शुक्र कोई ग्रह हो तो शुभ फसल की सूचना समझनी चाहिए। रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका और मृगशिर के नक्षत्र परिवेष की परिधि में आते हों तो पूर्णतया वर्षा का अभाव, धान्य की कमी, पशुओं को कष्ट

एवं विश्व के समस्त प्राणियों में भय का संचार होता है। कार्त्तिक मास का परिवेष अत्यन्त अनिष्टकारी और माघ मास का परिवेष समस्त आगामी वर्ष का फलादेश सूचित करता है। माघी पूर्णिमा को आकाश में बादल छा जाने पर विचित्र वर्ण का परिवेष सूर्य के चारों ओर वृत्ताकार में दिखलाई पड़े तो पूर्णतया सुभिक्ष आगामी वर्ष में होता है। इस दिन का परिवेष प्रायः शुभ होता है।

परिवेषों का राष्ट्र सम्बन्धी फलादेश—चन्द्रमा का परिवेष मंगल, शनि और रविवार को आश्लेषा, विशाखा, भरणी, ज्येष्ठा, मूल और शतभिषा नक्षत्र में काले वर्ण का दिखलाई पड़े तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ सूचक होता है। इस प्रकार के परिवेष का फल राष्ट्र में उपद्रव, घरेलू कलह, महामारी और नेताओं में मतभेद तथा झगड़ों के होने से राष्ट्र की क्षति आदि समझना चाहिए। तीन मंडल और पाँच मंडल का परिवेष सभी प्रकार से राष्ट्र की क्षति करता है। यदि अनेक वर्ण वाला दण्डाकार चन्द्र परिवेष मर्दन करता हुआ दिखलाई पड़े तो राष्ट्र के लिए अशुभ समझना चाहिए। इस प्रकार के परिवेष से राष्ट्र के निवासियों में आपसी कलह एवं किसी विशेष प्रकार की विपत्ति की सूचना मिलती है। जिन देशों में पारस्परिक व्यापारिक समझौते होते हैं, वे भी इस प्रकार के परिवेष से भंग हो जाते हैं अतः पर-राष्ट्र का भय और आतंक व्याप्त हो जाता है। देश की आर्थिक क्षति भी होती है। देश में चोर, डाकुओं का अधिक आतंक बढ़ता है और देश की व्यापारिक स्थिति असन्तुलित हो जाती है। रात्रि में शुक्ल पक्ष के दिनों में जब मेघाच्छन्न आकाश हो, उन दिनों पूर्व दिशा की ओर से बढ़ता हुआ चन्द्र परिवेष दिखलाई पड़े और इस परिवेष का दक्षिण का कोण अधिक बड़ा और उत्तर वाला कोण अधिक छोटा भी मालूम पड़े तो इस परिवेष का फल भी राष्ट्र के लिए भयप्रद समझना चाहिए। इस प्रकार के परिवेष से राष्ट्र की प्रतिष्ठा में भी कमी आती है तथा राष्ट्र की सम्पत्ति भी घटती हुई दिखलाई पड़ती है। अच्छे कार्य राष्ट्र हित के लिए नहीं हो पाते हैं, केवल ऐसे ही कार्य होते रहते हैं, जिनसे राष्ट्र में अशान्ति होती है। राष्ट्र के किसी अच्छे कर्णधार की मृत्यु होती है, जिससे राष्ट्र में महान् अशान्ति छा जाती है। प्रशासकों में भी मतभेद होता है, देश के प्रमुख-प्रमुख शासक अपने-अपने अहंभाव की पुष्टि के लिए विरोध करते हैं, जिससे राष्ट्र में अशान्ति होती है। मध्यरात्रि में निरभ्र आकाश में दक्षिण दिशा की ओर से विचित्र वर्ण का परिवेष उत्पन्न होकर चन्द्रमा को वेष्टित करे तथा इस मंडल में चन्द्रमा का उस दिन का नक्षत्र भी वेष्टित हो तो इस प्रकार का परिवेष राष्ट्र उत्थान का सूचक होता है। कलाकारों के लिए यह परिवेष उन्नतिसूचक है। देश में कल-कारखानों की उन्नति होती है। नदियां

एवं विश्व के समस्त प्राणियों में भय का संचार होता है। कार्त्तिक मास का परिवेष अत्यन्त अनिष्टकारी और माघ मास का परिवेष समस्त आगामी वर्ष का फलादेश सूचित करता है। माघी पूर्णिमा को आकाश में बादल छा जाने पर विचित्र वर्ण का परिवेष सूर्य के चारों ओर वृत्ताकार में दिखलाई पड़े तो पूर्णतया सुभिक्ष आगामी वर्ष में होता है। इस दिन का परिवेष प्रायः शुभ होता है।

परिवेषों का राष्ट्र सम्बन्धी फलादेश—चन्द्रमा का परिवेष मंगल, शनि और रविवार को आश्लेषा, विशाखा, भरणी, ज्येष्ठा, मूल और शतभिषा नक्षत्र में काले वर्ण का दिखलाई पड़े तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ सूचक होता है। इस प्रकार के परिवेष का फल राष्ट्र में उपद्रव, घरेलू कलह, महामारी और नेताओं में मतभेद तथा झगड़ों के होने से राष्ट्र की क्षति आदि समझना चाहिए। तीन मंडल और पाँच मंडल का परिवेष सभी प्रकार से राष्ट्र की क्षति करता है। यदि अनेक वर्ण वाला दण्डाकार चन्द्र परिवेष मर्दन करता हुआ दिखलाई पड़े तो राष्ट्र के लिए अशुभ समझना चाहिए। इस प्रकार के परिवेष से राष्ट्र के निवासियों में आपसी कलह एवं किसी विशेष प्रकार की विपत्ति की सूचना मिलती है। जिन देशों में पारस्परिक व्यापारिक समझौते होते हैं, वे भी इस प्रकार के परिवेष से भंग हो जाते हैं अतः पर-राष्ट्र का भय और आतंक व्याप्त हो जाता है। देश की आर्थिक क्षति भी होती है। देश में चोर, डाकुओं का अधिक आतंक बढ़ता है और देश की व्यापारिक स्थिति असन्तुलित हो जाती है। रात्रि में शुक्ल पक्ष के दिनों में जब मेघाच्छन्न आकाश हो, उन दिनों पूर्व दिशा की ओर से बढ़ता हुआ चन्द्र परिवेष दिखलाई पड़े और इस परिवेष का दक्षिण का कोण अधिक बड़ा और उत्तर वाला कोण अधिक छोटा भी मालूम पड़े तो इस परिवेष का फल भी राष्ट्र के लिए भयप्रद समझना चाहिए। इस प्रकार के परिवेष से राष्ट्र की प्रतिष्ठा में भी कमी आती है तथा राष्ट्र की सम्पत्ति भी घटती हुई दिखलाई पड़ती है। अच्छे कार्य राष्ट्र हित के लिए नहीं हो पाते हैं, केवल ऐसे ही कार्य होते रहते हैं, जिनसे राष्ट्र में अशान्ति होती है। राष्ट्र के किसी अच्छे कर्णधार की मृत्यु होती है, जिससे राष्ट्र में महान् अशान्ति छा जाती है। प्रशासकों में भी मतभेद होता है, देश के प्रमुख-प्रमुख शासक अपने-अपने अहंभाव की पुष्टि के लिए विरोध करते हैं, जिससे राष्ट्र में अशान्ति होती है। मध्यरात्रि में निरभ्र आकाश में दक्षिण दिशा की ओर से विचित्र वर्ण का परिवेष उत्पन्न होकर चन्द्रमा को वेष्टित करे तथा इस मंडल में चन्द्रमा का उस दिन का नक्षत्र भी वेष्टित हो तो इस प्रकार का परिवेष राष्ट्र उत्थान का सूचक होता है। कलाकारों के लिए यह परिवेष उन्नतिसूचक है। देश में कल-कारखानों की उन्नति होती है। नदियां

पर पुल बाँधने का कार्य विशेष रूप से होता है। धन-धान्य की उत्पत्ति विपुल परिमाणों में होती है और राष्ट्र में चारों ओर समृद्धि और शान्ति व्याप्त हो जाती है।

सूर्य परिवेष द्वारा भी राष्ट्र के भविष्य का विचार किया जाता है। चैत्र और वैशाख में बिना बादलों के आकाश में सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े और वह कम से कम डेढ़ घण्टे तक बना रहे तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ की सूचना देता है। इस परिवेष का फल तीन वर्षों तक राष्ट्र को प्राप्त होता है। वर्षा का अभाव होने से तथा राष्ट्र के किसी हिस्से में अतिवृष्टि से बाढ़, महामारी आदि का प्रकोप होता है। इस प्रकार का परिवेष राष्ट्र में महान् उपद्रव का सूचक है। ऐसा परिवेष तभी दिखलाई पड़ेगा, जब देश के ऊपर महान् विपत्ति आयेगी। सिकन्दर के आक्रमण के समय भारत में इस प्रकार का परिवेष देखा गया था। सूर्य के अस्तकाल में, जब नैऋत्य दिशा में वायु बह रहा हो, इसी दिशा से वायु के साथ बढ़ता हुआ परिवेष सूर्य को आच्छादित कर ले तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त शुभकारक होता है। देश में धन-धान्य की वृद्धि होती है। सभी निवासियों को सुख-शान्ति मिलती है। अच्छे व्यक्तियों का जन्म होता है। परराष्ट्रों से सन्धियाँ होती हैं तथा राष्ट्र की आर्थिक स्थिति दृढ़ होती है। देश में कला-कौशल का प्रचार होता है, नैतिकता, ईमानदारी और सच्चाई की वृद्धि होती है।

परिवेषों का व्यावहारिक फलादेश----रविवार को चन्द्र-परिवेष दिखलाई पड़े तो रूई, गुड़, कपास और चाँदी का भाव महँगा; तिल, तिलहन, घी और तैल का भाव सस्ता होता है। सोने के भाव में अधिक घटा-बढ़ी रहती है तथा अनाज का भाव सम दिखलाई पड़ता है। फल और तरकारियों के भाव ऊँचे रहते हैं। रविवार के चन्द्र परिवेष का फल अगले दिन से ही आरम्भ हो जाता है और दो महीनों तक प्राप्त होता है। जूट, मसाले एवं रत्नों की कीमत घटती है तथा इन वस्तुओं के मूल्यों में निरन्तर घटा-बढ़ी होती रहती है। उक्त दिन को सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े तो प्रत्येक वस्तु की महँगाई होती है तथा विशेष रूप से तृण, पशु, सोना, चाँदी और मशीनों के कल पुर्जों के मूल्य में वृद्धि होती है। व्यापारियों के लिए रविवार का सूर्य और चन्द्र-परिवेष विशेष महत्त्वपूर्ण होता है। इस परिवेष द्वारा सभी प्रकार के छोटे-बड़े व्यापारी लाभान्वित होते हैं। ऊन एवं ऊनी वस्त्रों के व्यापार में विशेष लाभ होता है। इनका मूल्य स्थिर नहीं रहता, उत्तरोत्तर मूल्य में वृद्धि होती जाती है। सोमवार को सुन्दर आकार वाला चन्द्र-परिवेष निरभ्र आकाश में दिखलाई पड़े तो प्रत्येक प्रकार की वस्तु सस्ती होती है। विशेष रूप से घृत, दुग्ध, तैल, तिलहन और अन्न का मूल्य सस्ता हो जाता है। व्यापारिक दृष्टि से इस प्रकार का परिवेष घाटे की ही सूचना देता है। जो लोग चाँदी,

सोना, रूई, सूत, कपास, जूट आदि का सट्टा करते हैं, उन्हें विशेष रूप से घाटा लगता है। यदि इसी दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े तो गेहूँ, गुड़, लाल वस्त्र, लाख, लाल रंग तथा लाल रंग की सभी वस्तुएँ महँगी होती हैं और इस प्रकार के परिवेष से उक्त प्रकार की वस्तुओं के खरीदारों को दुगुना लाभ होता है। यह परिवेष व्यापारिक जगत् के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, सीमेण्ट, चूना, रंग, पत्थर आदि के व्यापार में भी विशेष लाभ की संभावना रहती है। सोमवार को सूर्य परिवेष देखने वाले व्यापारियों को सभी प्रकार की वस्तुओं में लाभ होता है। ईंट, कोयला और अन्य प्रकार के इमारती समान के मूल्य में भी वृद्धि होती है।

मंगलवार को चन्द्र-परिवेष दिखलाई पड़े तो लाल रंग की वस्तुओं का मूल्य गिरता है और श्वेत रंग के पदार्थों का मूल्य बढ़ता है। धातुओं के मूल्य में प्रायः समता रहती है। सुवर्ण के मूल्य में परिवेष के एक महीने तक वृद्धि, पश्चात् कमी होती है। चाँदी का मूल्य आरम्भ में गिरता है, पश्चात् ऊँचा हो जाता है। श्वेत रंग का कपड़ा, सूत, कपास, रूई आदि का मूल्य तीन महीनों तक सस्ता होता रहता है। जवाहरात का मूल्य भी गिरता है। मंगलवार का चन्द्र-परिवेष तीन महीनों तक व्यापारिक स्थिति के क्षेत्र में सस्ते भावों की ही सूचना देता है। यदि मंगलवार को ही सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े तो प्रत्येक वस्तु का मूल्य सवाया बढ़ जाता है, यह स्थिति आरम्भ में एक महीने तक रहती है पश्चात् सोना, चाँदी, जवाहरात, रूई, चीनी, गुड़ आदि वस्तुओं के मूल्य में गिरावट आ जाती है और बाजार की स्थिति बिगड़ने लगती है। मशाला, फल एवं मेवों के मूल्य में भी गिरावट आ जाती है। दो महीने के पश्चात् कपड़ा तथा श्वेत रंग की अन्य वस्तुओं की स्थिति सुधर जाती है। अनाज का भाव कुछ सस्ता होता है, पर कालान्तर में उसमें भी महँगाई आ जाती है। यदि मंगलवार को पुष्य नक्षत्र हो और उस दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़ा हो तथा वह कम से कम दो घण्टे तक बना रहा हो तो सभी प्रकार की वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि होती है। व्यापारियों के लिए यह परिवेष कई गुने लाभ की सूचना देती है। प्रत्येक वस्तु के व्यापार में लाभ होता है। लगभग चार महीने तक इस प्रकार की व्यापारिक स्थिति अवस्थित रहती है। उक्त प्रकार के परिवेष से सट्टे के व्यापारियों को अपने लिए घाटे की ही सूचना समझनी चाहिए।

बुधवार को चन्द्र-परिवेष स्वच्छ रूप में दिखलाई पड़े और इस परिवेष की स्थिति कम से कम आध घण्टे तक रहे तो मशाला, तैल, घी, तिलहन, अनाज, सोना, चाँदी, रूई, जूट, वस्त्र, मेवा, फल, गुड़ आदि का मूल्य गिरता है और यह मूल्य की गिरावट कम से कम तीन महीनों तक बनी रहती है। केवल रेशमी वस्त्र का मूल्य बढ़ता है और इसके व्यापारियों को अच्छा लाभ होता है। यदि

इसी दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पड़े और वह एक घण्टे तक स्थित रहे तो सभी प्रकार की वस्तुओं के मूल्य की स्थिरता का सूचक समझना चाहिए। बुधवार को सूर्य-परिवेष सूर्योदय काल में ही दिखलाई पड़े तो श्वेत, लाल और काले रंग की वस्तुओं के भाव बढ़ते हैं। यदि परिवेष काल में आकाश का रंग गाय की आँख के समान हो जाय तो इस परिवेष का फल लाल रंग की वस्तुओं के व्यापार में लाभ एवं अन्य रंग की वस्तुओं के व्यापार में हानि की सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकार की व्यापारिक स्थिति एक महीने तक ही रहती है। गुरुवार को चन्द्र-परिवेष चन्द्रोदय काल या चन्द्रास्त काल में दिखलाई पड़े तो इसका फल महर्घता होता है। रसादि पदार्थों में विशेष रूप से महँगाई होती है। औषधियों के मूल्यों में भी वृद्धि होती है। घृत, तैल आदि स्निग्ध पदार्थों का मूल्य अनुपाततः ही बढ़ता है।

गुरुवार को सूर्य-परिवेष मंडलाकार में दिखलाई पड़े तो लाल, पीले और हरे रंग की वस्तुएं सस्ती होती हैं, अनाज का मूल्य भी घटता है। वस्त्र, चीनी, गुड़ आदि उपभोग की वस्तुओं में भी सामान्यतः कमी आती है। सट्टेबाजों के लिए यह परिवेष अनिष्ट सूचक है; अतः उन्हें हानि ही होती है, लाभ होने की संभावना बिल्कुल नहीं। यदि उक्त प्रकार का सूर्य-परिवेष दो घण्टे से अधिक समय तक ठहर जाय तो पशुओं के व्यापारियों को विशेष लाभ होता है। श्वेत रंग के सभी पदार्थ महँगे होते हैं और उपभोग की वस्तुओं का मूल्य बढ़ता है। बाजार में यह स्थिति चार महीनों तक रह सकती है।

शुक्रवार को चन्द्र-परिवेष लाल या पीले रंग का दिखलाई पड़े तो दूसरे दिन से ही सोना, पीतल आदि पीतवर्ण की धातुओं की कीमत बढ़ जाती है। चाँदी के भाव में थोड़ी गिरावट के पश्चात् बढ़ती होती है। मसाला, फल और तरकारियों के मूल्य में वृद्धि होती है। हरे रंग की सभी वस्तुएँ सस्ती होती हैं। पर तीन महीनों के पश्चात् हरे रंग की वस्तुओं के भाव में भी महँगी आ जाती है। रूई, कपास और सूत के व्यापार में सामान्य लाभ होता है। काले रंग की वस्तुओं में अधिक लाभ की संभावना है। यदि शुक्रवार को सूर्य परिवेष दिखलाई पड़े तो आरम्भ में वस्तुओं के भाव तटस्थ रहते हैं, परन्तु औषधियों, विदेश से आनेवाली वस्तुओं और पशुओं की कीमत में वृद्धि हो जाती है। श्वेत रंग की वस्तुओं का मूल्य सम रहता है, लाल और नीले रंग के पदार्थों का मूल्य बढ़ जाता है।

शनिवार को चन्द्र-परिवेष दिखलाई पड़े तो काले रंग के सभी पदार्थ तीन महीनों तक सस्ते रहते हैं। लाल और श्वेत रंग के पदार्थ तीन महीनों तक महँगे रहते हैं। जवाहरात विशेष रूप से महँगे होते हैं। सोना, चाँदी आदि खनिज पदार्थों के मूल्य में असाधारण रूप से वृद्धि होती है। यदि इसी दिन सूर्य-परिवेष

दिखलाई पड़े तो सभी प्रकार की वस्तुओं के मूल्य में वृद्धि होती है। विशेष रूप से जूट, सीमेन्ट, कागज एवं विदेश से आनेवाली वस्तुएँ अधिक महँगी होती हैं। चीनी, गुड़, शहद आदि मिष्ट पदार्थों के मूल्य गिरते हैं। यदि उक्त प्रकार का सूर्य-परिवेष दिन भर रह जाय तो इसका फल व्यापार के लिए अत्यन्त लाभप्रद है। वस्तुओं के मूल्य चौगुने बढ़ जाते हैं और व्यापारियों को अपरिमित लाभ होता है। बाजार में यह स्थिति अधिक से अधिक पाँच महीनों तक रह सकती है। आरम्भ के तीन माह महँगाई के और अवशेष दो महीने साधारण महँगाई के होते हैं।

पंचमोऽध्यायः

अथातः संप्रवक्ष्यामि विद्युतां नामविस्तरम्।
प्रशस्ता चाऽप्रशस्ता च यथावदनुपूर्वतः[1] ॥1॥

अब पूर्वाचार्यानुसार विद्युत्—बिजली का विस्तार से निरूपण करते हैं। विद्युत् (बिजली) दो प्रकार की होती है—प्रशस्त और अप्रशस्त ॥1॥

सौदामिनी च पूर्वा च कुसुमोत्पलनिभा[2] शुभा।
निरभ्रा मिश्रकेशी च क्षिप्रगा चाशनिस्तथा ॥2॥

एतासां नामभिर्वर्षं ज्ञेयं [3]कर्मनिरुक्तितः।
भूयो व्यासेन वक्ष्यामि प्राणिनां पुण्यपापजाम्[4] ॥3॥

सौदामिनी और पूर्वा बिजली यदि कमल के पुष्प के समान हो तो वह शुभ-अशुभ फल देने वाली होती है। वह बिजली निरभ्रा — बादलों से रहित, देवांगना के समान मिश्रकेशी, शीघ्र गमन करने वाली और वज्र के समान हो तो अशनि नाम से कही जाती है। वर्षा का कारण है, अतः यह वर्ष भी कही जाती है। इस बिजली के नाम उसकी क्रिया निरुक्ति से अवगत कर लेना चाहिए। अब पुनः

1. यथापूर्वशः मु०। 2. कुसुमोत्पला, मु०। 3. कर्मनिरुक्तितः मु०। 4. पापकर्मिणाम् मु०।

बिजली का विस्तारपूर्वक फल, लक्षण आदि का वर्णन किया जाता है, जो जीवों के पुण्य-पाप के निमित्त से होते हैं ॥2-3॥

स्निग्धास्निग्धेषु चाभ्रेषु विद्युत् प्राच्या जलावहा।
कृष्णा तु कृष्णमार्गस्था [1]वातवर्षावहा भवेत् ॥4॥

स्निग्ध बादल से उत्पन्न बिजली स्निग्धा कही जाती है। यदि यह पूर्व दिशा की हो तो अवश्य वर्षा करती है। यदि काले बादल से उत्पन्न हो तो कृष्णा कही जाती है और यह वायु की वर्षा करती है -- पवन चलता है। यहाँ पर 'कृष्ण' शब्द अग्निवाचक है, अतः अग्निकोण के मार्ग में स्थित विद्युत् कृष्णा नाम से कही जाती है। इसका फल तीव्र पवन का चलना है ॥4॥

अथ रश्मिगतोऽस्निग्धा[2] हरिता हरितप्रभा।
दक्षिणा दक्षिणावर्ता कुर्यादुदकसंभवम्[3] ॥5॥

जिस बिजली में रश्मियाँ नहीं हैं, वह अस्निग्धा कही जाती है और हरित प्रभावशाली बिजली हरिता कही जाती है, दक्षिण में गमन करने वाली दक्षिणा कहलाती है। इस प्रकार की विद्युत जल बरसने की सूचना देती है ॥5॥

रश्मिवती[4] मेदिनी[5] भाति विद्युदपरदक्षिणे।
हरिता[6] भाति रोमाञ्चं सोदकं पातयेद् बहुम् ॥6॥

पृथ्वी पर प्रकाश करने वाली विद्युत् रश्मिवती, नैर्ऋत्यकोण में गमन करने वाली हरिता और बहुत रोमवाली बिजली बहुत जल की वृष्टि करने वाली होती है ॥6॥

अपरेण[7] तु या विद्युच्चरते चोत्तरामुखी।
कृष्णाभ्रसंश्रिता[8] स्निग्धा साऽपि कुर्याज्जलागमम्[9] ॥7॥

पश्चिम दिशा में प्रकट होने वाली, उत्तर मुख करके गमन करने वाली, कृष्ण रंग के बादलों से निकलने वाली और स्निग्धा ये चारों प्रकार की बिजलियाँ जल के आने की सूचना देती है ॥7॥

अपरोत्तरा तु या विद्युन्मन्दतोया हि सा स्मृता।
उदीच्यां सर्ववर्णस्था[10] रूक्षा[11] तु सा तु वर्षति ॥8॥

---

1. वातवर्षावहा मु० D. । 2. भाति मु० । 3. संभवम् मु० । 4. भाति, मु० । 5. मेदिनी मु० । 6. हरितां नां प्रभासेत् मु० C. । 7. अपरोदये मु० A. C. । 8. संश्रिता मु० । 9. जलागमः आ० । 10. श्यामवर्णस्था मु० । 11. तक्षात् मु० ।

वायव्यकोण की बिजली थोड़ी वर्षा करने वाली और उत्तर दिशा की बिजली चाहे किसी भी वर्ण की क्यों न हो; अथवा रूक्ष भी हो तो भी जलवृष्टि करने वाली होती है ॥8॥

या तु पूर्वोत्तरा विद्युत् दक्षिणां[1] च पलायते।
चरत्यूर्ध्वं च तिर्यक्स्था[2] साऽपि श्वेता जलवहा ॥9॥

ईशानकोण की बिजली तिरछी होकर पूर्व में गमन करे और दक्षिण में जाकर विलीन हो जाय तथा श्वेत रंग की हो तो वह जल की वृष्टि करने वाली होती है ॥9॥

तथैवोर्ध्वमधो[3] वाऽपि स्निग्धा रश्मिमती भृशम्।
सघोषा चाप्यघोषा वा[4] दिक्षु सर्वासु वर्षति ॥10॥

इसी प्रकार ऊपर-नीचे जाने वाली, स्निग्धा और बहुत रश्मि वाली शब्द करती हुई अथवा शब्द न भी करने वाली बिजली सभी दिशाओं में वर्षा करने वाली होती है ॥10॥

शिशिरे चापि वर्षन्ति रक्ताः पीताश्च विद्युतः।
नीलाः श्वेता वसन्तेषु न वर्षन्ति कथंचन ॥11॥

यदि शिशिर—माघ, फाल्गुन में लाल और पीले रंग की बिजली हो तो वर्षा होती है तथा वसन्त—चैत्र, वैशाख में नील और श्वेत रंग की बिजली हो तो कदापि वर्षा नहीं होती ॥11॥

हरिता मधुवर्णाश्च ग्रीष्मे रूक्षाश्च निश्चलाः।
भवन्ति ताम्रगौराश्च वर्षास्वपि निरोधिकाः ॥12॥

हरे और मधु रंग की रूक्ष और स्थिर बिजली ग्रीष्म ऋतु—ज्येष्ठ, आषाढ़ में चमके तो वर्षा नहीं होती तथा इसी प्रकार वर्षा ऋतु—श्रावण, भाद्रपद में ताम्रवर्ण की बिजली चमके तो वर्षा का अवरोध होता है ॥12॥

शारद्यो नाभिवर्षन्ति नीला वर्षाश्च विद्युतः।
हेमन्ते श्यामताम्रास्तु तडितो निर्जलाः स्मृताः[5] ॥13॥

शरद् ऋतु—आश्विन, कार्तिक में नील वर्ण की बिजली चमके तो वर्षा नहीं होती और हेमन्त—मार्गशीर्ष, पौष में यदि श्याम और ताम्रवर्ण की बिजली

1. दक्षिणं मु०। 2. तिर्यग् सा, मु०। 3. तथैवमधोऽथवापि मु० A.। 4. च मु०। 5. हेमन्ते ताम्रवर्णास्तु तडितो निर्जला स्मृता. मु० C.।

चमके तो जल-वृष्टि नहीं होती ॥13॥

रक्तारक्तेषु चाभ्रेषु हरिताहरितेषु च ।
नीलानीलेषु वा स्निग्धा वर्षन्तेऽनिष्टयोनिषु ॥14॥

रक्त-अरक्त, हरित-अहरित और नील-अनील बादलों में यदि स्निग्धा बिजली चमकती है, तो उक्त प्रकार के बादलों के अनिष्टसूचक होने पर भी जल की वर्षा अवश्य होती है ॥14॥

अथ नीलाश्च पीताश्च रक्ताः श्वेताश्च विद्युतः ।
एतां श्वेतां पतत्यूर्ध्वं विद्युदुदकसंप्लवम् ॥15॥

अब बिजली के वर्णों का निरूपण करते हैं—नील, पीत, रक्त और श्वेत वर्ण की बिजलियों में से श्वेत रंग की बिजली ऊपर गिरे तो पृथ्वी पर जल ही जल बरसता है—पृथ्वी जल से प्लावित हो जाती है ॥15॥

वैश्वानरपथे विद्युत् श्वेता रूक्षा चरेद् यतः ।
विन्द्यात् तदाऽशनिवर्षं रक्तायामग्नितो भयम् ॥16॥

वैश्वानर पथ अर्थात् अग्निकोण में उत्पन्न हुई श्वेता और रूक्षा नाम की बिजलियाँ विद्युत् कही जाती हैं। ये अशनि वृष्टि करती हैं। रक्तवर्ण की बिजली अग्नि का भय करती है ॥16॥

यदा श्वेताऽभ्रवृक्षस्य विद्युच्छिरसि संचरेत् ।
अथ वा गृहयोर्मध्ये वातवर्षं सृजेन्महत् ॥17॥

यदि श्वेत रंग की बिजली वृक्ष के ऊपर गिरे अथवा दो गृहों के मध्य से होकर गिरे तो तेज वायु सहित जल की वर्षा होती है ॥17॥

अथ चन्द्राद् विनिष्क्रम्य विद्युन्मंडलसंस्थिता ।
श्वेताऽऽभा प्रविशेदर्कं विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥18॥

यदि चन्द्रमण्डल से निकलकर श्वेत प्रभा युक्त बिजली सूर्यमण्डल में प्रवेश करे तो उसे अधिक वर्षासूचिका समझनी चाहिए ॥18॥

[1]अथ सूर्याद् विनिष्क्रम्य रक्ता समलिना[2] भवेत् ।
प्रविश्य सोमं वा तस्य[3] तत्र[4] वृष्टिभयंकरा ॥19॥

यदि सूर्यमण्डल से निकलकर रक्त वर्ण की मलिन विद्युत् चन्द्रमण्डल में प्रवेश

1. यदा मु० C. । 2. समलिना A० । 3. तस्येत् मु० C. । 4. तत्र तु मु० C. ।

करे तो वहाँ पर भयंकर वायु चलती है ॥19॥

विद्युतं[1] तु यथा विद्युत् ताडयेत् प्रविशेद् यदा।
अन्योऽन्यं[2]वा लिखेयातां वर्षं विन्द्यात् तदा शुभम् ॥20॥

बिजली बिजली में ताडित होकर एक-दूसरे में प्रवेश करती हुई दिखलाई दे तो शुभ जानना चाहिए—वर्षा यथोचित रूप में होती है ॥20॥

राहुणा संवृतं चन्द्रमादित्यं चापि सर्वतः[3]।
कुर्यात् विद्युत् यदा साभ्रा तदा सस्यं न रोहति ॥21॥

राहु द्वारा चन्द्रमा और केतु द्वारा सूर्य अपसव्य मार्ग से ग्रहण किया गया हो और ये बादल से आच्छादित हों और उस समय उनसे बिजली निकले तो धान्य, नहीं उगते ॥21॥

नीला ताम्रा च गौरा[4] च श्वेता[5]चाऽभ्रान्तरं चरेत्।
सघोषा मन्दघोषा वा विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥22॥

नील, ताम्र, गौर और श्वेत बादलों में बिजली का संचार हो और वह भारी अथवा थोड़ी गर्जना युक्त हो तो अच्छी वर्षा होती है ॥22॥

मध्यमे मध्यमं वर्षं अधमे अधमं दिशेत्।
उत्तमं चोत्तमे मार्गे चरन्तीनां च विद्युताम् ॥23॥

आकाश के मध्यमार्ग से गमन करनेवाली बिजली मध्यम वर्षा, जघन्य मार्ग से गमन करनेवाली जघन्य वर्षा और उत्तम मार्ग से गमन करनेवाली उत्तम वर्षा की सूचिका है ॥23॥

वीथ्यन्तरेषु या विद्युच्चरतामफलं[6] विदुः।
अभीक्ष्णं दर्शयेच्चापि तत्र दूरगतं फलम् ॥24॥

यदि बिजली वीथी—चन्द्रादि के मार्ग के अन्तराल में संचार करे तो उसका कोई फल नहीं होता। यदि बार-बार दिखलाई पड़े तो उसका फल कुछ दूर जाकर होता है ॥24॥

उल्कावत् साधनं ज्ञेयं विद्युतामपि तत्त्वतः।
अथाभ्राणां [7]प्रवक्ष्यामि [8]लक्षणं तन्निबोधत ॥25॥

---

1. विद्युद्विद्युद्यदा मु० आ०। 2. वा मु० A.। 3. सर्वतः, मु० A, सैन्धवः मु० B.। 4. गौरी मु०। 5. वा, मु०। 6. वामफलं, मु० A, त्वां फलं मु० B.। भफलं मु० C.। 7. संप्रवक्ष्यामि, मु० C.। 8. लक्षणानि मु० C.।

बिजलियों के निमित्तों को उल्का के निमित्तों के समान ही अवगत करना चाहिए। अब आगे बादलों के लक्षण और फल को बतलाते हैं ॥25॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे विद्युल्लक्षणो नाम पंचमोऽध्यायः।

विवेचन— बिजली के निमित्तों द्वारा प्रधानतः वर्षा का विचार किया जाता है। रात्रि में चमकने से वर्षा के सम्बन्ध में शुभाशुभ अवगत करने के साथ फसल का भविष्य भी ज्ञात किया जा सकता है। जब आकाश में घने बादल छाये हुए हों, उस समय पूर्व दिशा में बिजली कड़के और इसका रंग श्वेत या पीत हो तो निश्चयतः वर्षा होती है। यह फल बिजली कड़कने के दूसरे दिन ही प्राप्त होता है। विशेषता यहाँ यह भी है कि यह फलादेश उसी स्थान पर प्राप्त होता है, जिस स्थान पर बिजली चमकती है। इस बात का सदा ध्यान रखना होता है कि बिजली चमकने का फल तत्काल और तद्देश में प्राप्त होता है। अत्यन्त इष्ट या अनिष्टसूचक यह निमित्त नहीं है और न इस निमित्त द्वारा वर्ष भर का फलादेश ही निकाला जा सकता है। सामान्य रूप से दो-चार दिन या अधिक-से-अधिक दस-पन्द्रह दिनों का फलादेश निकालना ही इस निमित्त का उद्देश्य है। जब पूर्व दिशा में रक्त वर्ण की बिजली जोर-जोर से कड़क कर चमके तो वायु चलती है तथा अल्प वर्षा होती है। मन्द-मन्द चमक के साथ जोर-जोर से कड़कने का शब्द सुनाई दे तथा एकाएक आकाश से बादल हट जावें तो अच्छी वर्षा होती है और साथ ही ओले भी बरसते हैं। पूर्व दिशा में केशरिया रंग की बिजली तेज प्रकाश के साथ चमके तो अगले दिन तेज धूप पड़ती है, पश्चात् मध्याह्नोत्तर जल की वर्षा होती है। जल भी इतना अधिक बरसता है, जिससे पृथ्वी जलमयी दिखलाई पड़ती है।

यदि पश्चिम दिशा में साधारण रूप से मध्य रात्रि में बिजली चमके तो तेज धूप पड़ती है। स्निग्ध विद्युत् पश्चिम दिशा में कड़ाके के शब्द के साथ चमके तो धूप होने के पश्चात् जल की वर्षा होती है। यहाँ इतनी बात और अवगत करनी चाहिए कि जल की वर्षा के साथ तूफान भी रहता है। अनेक वृक्ष धराशायी हो जाते हैं, पशु और पक्षियों को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। जिस समय आकाश काले-काले बादलों से आच्छादित हो, चारों ओर अन्धकार-ही-अन्धकार हो, उस समय नील प्रकाश करती हुई बिजली चमके, साथ ही भयंकर जोर का शब्द भी हो तो अगले दिन तीव्र वायु बहने की सूचना समझनी चाहिए। वर्षा तीन दिनों के बाद होती है यह भी इस निमित्त का फलादेश है। फसल के लिए इस प्रकार की बिजली विनाशकारी ही मानी गई है। पश्चिम दिशा से निकलकर विचित्रवर्ण की बिजली चारों ओर घूमती हुई चमके तो अगले तीन दिनों में वर्षा होने की

सूचना अवगत करनी चाहिए। इस प्रकार की बिजली फसल को भी समृद्धिशाली बनाने वाली होती है। गेहूँ, जौ, धान और ईख की वृद्धि विशेष रूप से होती है। पश्चिम दिशा में रक्तवर्ण की प्रभावशाली बिजली मन्द-मन्द शब्द के साथ उत्तर की ओर गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो अगले दिन तेज हवा चलती है और कड़ाके की धूप पड़ती है। इस प्रकार की बिजली दो दिनों में वर्षा होने की सूचना देती है। जिस बिजली में रश्मियाँ निकलती हों, ऐसी बिजली पश्चिम दिशा में गड़गड़ाहट के साथ चमके तो निश्चयतः अगले तीन दिनों तक वर्षा का अवरोध होता है। आकाश में बादल छाये रहते हैं, फिर भी जल की वर्षा नहीं होती। कृष्णवर्ण के बादलों में पश्चिम दिशा से पीतवर्ण की विद्युत् धारा प्रवाहित हो और वह अपने तेज प्रकाश के द्वारा आँखों में चकाचौंध उत्पन्न कर दे तो वर्षा की कमी समझनी चाहिए। वायु के साथ बूँदा-बूँदी होकर ही रह जाती है। धूप भी इतनी तेज पड़ती है, जिससे इस बूँदा बूँदी का भी कुछ प्रभाव नहीं होता। पश्चिम से बिजली निकलकर पूर्व की ओर जाय तो प्रातःकाल कुछ वर्षा होती है और इस वर्षा का जल फसल के लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होता है। फसल के लिए इस प्रकार बिजली उत्तम समझी गई है।]

[उत्तर दिशा में बिजली चमके तो नियमतः वर्षा होती है। उत्तर में जोर-जोर से कड़क के साथ बिजली चमके और आकाश मेघाच्छन्न हो तो प्रातःकाल घनघोर वर्षा होती है। जब आकाश में नीलवर्ण के बादल छाये हों और इनमें पीतवर्ण की बिजली चमकती हो तो साधारण वर्षा के साथ वायु का भी प्रकोप समझना चाहिए। जब उत्तर में केवल मन्द-मन्द शब्द करती हुई बिजली कड़कती है, उस समय वायु चलने की ही सूचना समझनी चाहिए। हरे और नीले रंग के बादल आकाश में हों तथा उत्तर दिशा में रह-रहकर बार-बार बिजली चमकती हो तो जल वर्षा का योग विशेष रूप से समझना चाहिए। यह वृष्टि उस स्थान से सौ कोश की दूरी तक होती है तथा पृथ्वी जलप्लावित हो जाती है। लालवर्ण के बादल जब आकाश में हों, उसी समय दिन में बिजली का प्रकाश दिखलाई पड़े तो वर्षा के अभाव की सूचना अवगत करनी चाहिए। इस प्रकार की बिजली दुष्काल पड़ने की सूचना भी देती है। यदि उक्त प्रकार की बिजली आषाढ़ मास के आरम्भ में दिखलाई पड़े तो उस वर्ष दुष्काल समझ लेना चाहिए। वायव्य कोण में बिजली कड़ाके के शब्द के साथ चमके तो अल्प जल की वर्षा समझनी चाहिए। वर्षा काल में ही उक्त प्रकार की बिजली का निमित्त घटित होता है। ईशान कोण में तिरछी चमकती हुई बिजली पूर्व दिशा की ओर गमन करे तो जल की वर्षा होती है। यदि इस कोण की बिजली गर्जन-तर्जन के साथ चमके तो तूफान की सूचना समझनी चाहिए। आषाढ़मास और श्रावणमास में उत्तम प्रकार की विद्युत् का

फल घटित होता है।]

[दक्षिण दिशा में बिजली की चकाचौंध उत्पन्न हो और श्वेत रंग की चमक दिखलाई पड़े तो सात दिनों तक लगातार जल की वर्षा होती है। यदि दक्षिण दिशा में केवल बिजली की चमक ही दिखलाई पड़े तो धूप होने की सूचना अवगत करनी चाहिए। जब लाल और काले वर्ण के मेघ आकाश में आच्छादित हों और बार-बार तेजी से बिजली चमकती हो तो, साधारणतया दिन भर धूप रहने के पश्चात् रात में वर्षा होती है। दक्षिण दिशा से पूर्वोत्तर गमन करती हुई बिजली चमके और उत्तर दिशा में इसका तेज प्रकाश भर जाए तो तीन दिनों तक लगातार जल-वर्षा होती है। यहाँ इतना विशेष और है कि वर्षा के साथ ओले भी पड़ते हैं। यदि इस प्रकार की बिजली शरद् ऋतु में चमकती है तो निश्चयत: ओले ही पड़ते हैं, जल-वर्षा नहीं होती। ग्रीष्म ऋतु में उक्त प्रकार की बिजली चमकती है तो वायु के साथ तेज धूप पड़ती है, वृष्टि नहीं होती। वर्षाकाल ऋतु में दक्षिण दिशा में बिजली चमके तो आगामी ग्यारह दिनों तक जल की अखण्ड वर्षा होती है। इस प्रकार की बिजली अतिवृष्टि की सूचना देती है। आषाढ़ बदी प्रतिपदा को दक्षिण दिशा में शब्द रहित बिजली चमके तो आगामी वर्ष में फसल निकृष्ट, उत्तर दिशा में शब्द रहित बिजली चमके तो फसल साधारण; पश्चिम दिशा में शब्द रहित बिजली चमके तो फसल के लिए मध्यम और पूर्व दिशा में शब्द रहित बिजली चमके तो बहुत अच्छी फसल उपजती है। यदि इन्हीं दिशाओं में शब्द सहित बिजली चमके तो क्रमश: आधी, तिहाई, साधारणत: पूर्ण और सवाई फसल उत्पन्न होती है। यदि आषाढ़ बदी द्वितीया चतुर्थी से विद्ध हो और उसमें दक्षिण दिशा में निकलती हुई बिजली उत्तर की ओर जावे तथा उसकी चमक बहुत तेज हो तो घोर दुर्भिक्ष की सूचना मिलती है। वर्षा भी इस प्रकार की बिजली से अवरुद्ध ही होती है। चटचटाहट करती हुई बिजली चमके तो वर्षाभाव एवं घोरोपद्रव की सूचना देती है।]

ऋतुओं के अनुसार विद्युत् निमित्त का फल—[शिशिर— माघ और फाल्गुन मास में नीले और पीले रंग की बिजली चमके तथा आकाश श्वेत रंग का दिखलाई पड़े तो ओलों के साथ जलवर्षा एवं कृषि के लिए हानि होती है। माघ कृष्ण प्रतिपदा को बिजली चमके तो गुड़, चीनी, मिश्री आदि वस्तुएं महँगी होती हैं तथा कपड़ा, सूत, कपास, रूई आदि वस्तुएँ सस्ती और शेष वस्तुएँ सम रहती हैं। इस दिन बिजली का कड़कना बीमारियों की सूचना भी देता है। माघ कृष्णा द्वितीया, षष्ठी और अष्टमी को पूर्व दिशा में बिजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष में अधिक व्यक्तियों के अकालमरण होने की सूचना समझनी चाहिए। यदि चन्द्रमा के बिम्ब के चारों ओर परिवेष होने पर उस परिवेष के निकट ही बिजली

चमकती प्रकाशमान दिखलाई पड़े तो आगामी आषाढ़ में अच्छी वर्षा होती है। माघ कृष्ण द्वितीया को गर्जन-तर्जन के साथ बिजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष में फसल साधारण तथा वर्षा की कमी होती है। माघी पूर्णिमा को मध्य रात्रि में उत्तर-दक्षिण चमकती हुई बिजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष राष्ट्र के लिए उत्तम होता है। व्यापारियों को सभी वस्तुओं के व्यापार में लाभ होता है। यदि दूसरी रात में चन्द्रोदय के समय में ही लगातार एक मुहूर्त—48 मिनट तक बिजली चमके तो आगामी वर्ष में राष्ट्र के लिए अनेक प्रकार से विपत्ति आती है। फाल्गुन मास की कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा, द्वितीया और तृतीया को मेघाच्छन्न आकाश हो और उसमें पश्चिम दिशा की ओर बिजली चमकती हुई दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष में फसल अच्छी होती है और तत्काल ओलों के साथ जलवृष्टि होती है। यदि होली की रात्रि में पूर्व दिशा से बिजली चमके तो आगामी वर्ष में अकाल, वर्षाभाव, बीमारियों एवं धन-धान्य की हानि और दक्षिण दिशा में बिजली चमके तो आगामी वर्ष में साधारण वर्षा, चेचक का विशेष प्रकोप, अन्न की महँगी एवं खनिज पदार्थ सामान्यतया महँगे होते हैं। पश्चिम दिशा की ओर बिजली चमके तो उपद्रव, झगड़े, मार-पीट, हत्याएँ, चोरी एवं आगामी वर्ष में अनेक प्रकार की विपत्ति और उत्तर दिशा में बिजली चमके तो अग्निभय, आपसी विरोध, नेताओं में मतभेद, आरम्भ में वस्तुएँ सस्ती पश्चात् महँगी एवं आकस्मिक दुर्घटनाएँ घटित होती हैं। होली के दिन आकाश में बादलों का छाना और बिजली का चमकना अशुभ है।

बसन्त ऋतु—चैत्र और बैशाख में बिजली का चमकना प्रायः निरर्थक होता है। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा को आकाश में मेघ व्याप्त हों और बूंदा-बूंदी के साथ बिजली चमके तो आगामी वर्ष के लिए अत्यन्त अशुभ होता है। फसल तो नष्ट होती ही है, साथ ही मोती, माणिक्य आदि जवाहरात भी नष्ट होते हैं। दिन में इस दिन मेघ छा जायें और वर्षा के साथ बिजली चमके तो अत्यन्त अशुभ होता है। आगामी वर्ष के लिए यह निमित्त विशेष अशुभ की सूचना देता है। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा तृतीया विद्ध हो तथा इस दिन भरणी नक्षत्र हो तो इस दिन चमकने वाली बिजली आगामी वर्ष में मनुष्य और पशुओं के लिए नाना प्रकार के अरिष्टों की सूचना देती है। पशुओं में आगामी आश्विन, कार्तिक, माघ और चैत्र में भयानक रोग फैलता है तथा मनुष्यों में भी इन्हीं महीनों में बीमारियाँ फैलती हैं। भूकम्प होने की सूचना भी उक्त प्रकार की बिजली से ही अवगत करनी चाहिए। चैत्री पूर्णिमा को अचानक आकाश में बादल छा जायें और पूर्व-पश्चिम बिजली कड़के तो आगामी वर्ष उत्तम रहता है और वर्षा भी अच्छी होती है। फसल के लिए यह निमित्त बहुत अच्छा है। इस प्रकार के निमित्त से सभी वस्तुओं की

सस्ताई प्रकट होती है। वैशाखी पूर्णिमा को दिन में तेज धूप हो और रात में बिजली चमके तो आगामी वर्ष में वर्षा अच्छी होती है।

ग्रीष्म ऋतु—ज्येष्ठ और आषाढ़ में साधारणतः बिजली चमके तो वर्षा नहीं होती। ज्येष्ठ मास में बिजली चमकने का फल केवल तीन दिन घटित होता है, अवशेष दिनों में कुछ भी फल नहीं मिलता। ज्येष्ठ कृष्ण प्रतिपदा, ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्या और पूर्णिमा इन तीन दिनों में बिजली चमकने का विशेष फल प्राप्त होता है। यदि प्रतिपदा को मध्य रात्रि के उपरान्त निरभ्र आकाश में दक्षिण-उत्तर की ओर गमन करती हुई बिजली दिखाई पड़े तो आगामी वर्ष के लिए अनिष्टकारक फल होता है। पूर्व-पश्चिम सन्ध्याकाल के दो घण्टे बाद तड़-तड़ करती हुई बिजली इसी दिन दिखलाई पड़े तो घोर दुर्भिक्ष और शब्दरहित बिजली दिखलाई पड़े तो समयानुकूल वर्षा होती है। अमावस्या के दिन बूँदा-बूँदी के साथ बिजली चमके तो जंगली जानवरों को कष्ट, धातुओं की उत्पत्ति में कमी एवं नागरिकों में परस्पर कलह होता है। ज्येष्ठ-पूर्णिमा को आकाश में बिजली तड़-तड़ शब्द के साथ चमके तो आगामी वर्ष के लिए शुभ, समयानुकूल वर्षा और धन-धान्य की उत्पत्ति प्रचुर परिमाण में होती है।

वर्षा ऋतु—श्रावण और भाद्रपद में ताम्रवर्ण की बिजली चमके तो वर्षा का अवरोध होता है। श्रावण में कृष्ण द्वितीया, प्रतिपदा, सप्तमी, एकादशी, चतुर्दशी, अमावस्या, शुक्ला प्रतिपदा, पंचमी, अष्टमी, द्वादशी और पूर्णिमा तिथियाँ विद्युत् निमित्त को अवगत करने के लिए विशेष महत्त्वपूर्ण हैं, अवशेष तिथियों में रक्त और श्वेत वर्ण की बिजली चमकने से वर्षा और अन्य वर्ण की बिजली चमकने से वर्षा का अभाव होता है। कृष्ण प्रतिपदा को रात्रि में लगातार दो घण्टे तक बिजली चमके तो श्रावण मास में वर्षा की कमी; द्वितीया को रह-रहकर बिजली चमके तथा गर्जन-तर्जन भी हो तो भादों में अल्पवर्षा और श्रावण के महीने में साधारण वर्षा; सप्तमी को पीले रंग की बिजली चमके तथा आकाश में बादल चित्र-विचित्र रंग के एकत्रित हों तो सामान्य वर्षा होती है। एकादशी को निरभ्र आकाश में बिजली चमके तो फसल में कमी और अनेक प्रकार से अशान्ति की सूचना समझनी चाहिए। चतुर्दशी को दिन में बिजली चमके तो उत्तम वर्षा और रात में चमके तो साधारण वर्षा होती है। अमावस्या को हरित, नील और ताम्र-वर्ण की बिजली चमके तो वर्षा का अवरोध होता है। भाद्रपद मास में कृष्णपक्ष और शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को निरभ्र आकाश में बिजली चमके तो अकाल की सूचना और मेघाच्छादित आकाश में बिजली चमकती हुई दिखलाई पड़े तो सुकाल की सूचना समझनी चाहिए। कृष्ण पक्ष की सप्तमी और एकादशी को गर्जन-तर्जन के साथ स्निग्ध और रश्मियुक्त बिजली चमके तो परम सुकाल, समयानुकूल वर्षा,

सब प्रकार के नागरिकों में सन्तोष एवं सभी वस्तुएँ सस्ती होती हैं। पूर्णिमा और अमावस्या को बूँदा-बूँदी के साथ बिजली शब्द करती हुई चमके और उसकी एक धारा-सी बन जाए तो वर्षा अच्छी होती है तथा फसल भी अच्छी ही होती है।

शरदृतु—आश्विन और कार्तिक में बिजली का चमकना प्राय: निरर्थक है। केवल विजयदशमी के दिन बिजली चमके तो आगामी वर्ष के लिए अशुभ सूचक समझना चाहिए। कार्तिक मास में भी बिजली चमकने का फल अमावस्या और पूर्णिमा के अतिरिक्त अन्य तिथियों में नहीं होता है। अमावस्या को बिजली चमकने से खाद्य-पदार्थ महँगे और पूर्णिमा को बिजली चमकने से रासायनिक पदार्थ महँगे होते हैं।

हेमन्तऋतु—मार्गशीर्ष और पौष में श्याम और ताम्रवर्ण की बिजली चमकने से वर्षाभाव तथा रक्त, हरित, पीत और चित्र-विचित्र वर्ण की बिजली चमकने से वर्षा होती है।

षष्ठोऽध्याय:

अभ्राणां लक्षणं कृत्स्नं प्रवक्ष्यामि यथाक्रमम्।
प्रशस्त[1]मप्रशस्तं[2] च तन्निबोधत तत्त्वत: ॥1॥

बादलों की आकृति के लक्षण यथाक्रम से वर्णित करता हूँ। ये दो प्रकार के होते हैं—शुभ और अशुभ ॥1॥

स्निग्धान्यभ्राणि यावन्ति वर्षदानि न संशय:।
उत्तरं मार्गमाश्रित्य तिथौ मुखे यदा भवेत् ॥2॥

चिकने बादल अवश्य बरसाते हैं, इसमें कुछ भी संशय नहीं, और उत्तर दिशा के आश्रित बादल प्रात:काल नियमत: वर्षा करते हैं ॥2॥

उदीच्यान्यथ पूर्वाणि वर्षदानि शिवानि[3] च।
दक्षिणाण्यपराणि स्यु: [4]समूत्राणि न संशय: ॥3॥

1. प्रशस्तान् मु० A. B. D.। 2. अप्रशस्तान् मु० A. B. D.। 3. शुभानि मु० C.। 4. शुभमूत्राणि मु० C. आ०.

उत्तर और पूर्व दिशा के बादल सदा उत्तम वर्षा करते हैं और दक्षिण तथा पश्चिम के बादल मूत्र के समान थोड़ी-थोड़ी वर्षा करते हैं, इसमें कुछ संशय नहीं ॥3॥

कृष्णानि पीत-ताम्राणि श्वेतानि च यदा भवेत् ।
तयोर्निर्देश[1]मासृत्य वर्षदानि शिवानि च ॥4॥

यदि बादल कृष्ण, पीले, ताँबे और श्वेत वर्ण के हों तो वे उत्तम वर्षा की सूचना देते हैं ॥4॥

अप्सराणां च सत्त्वानां सदृशानि चराणि च ।
सुस्निग्धानि च यानि स्युर्वर्षदानि शिवानि[3] च ॥5॥

यदि बादल देवांगनाओं और प्राणियों के सदृश आचरण करें—विचरण करें और स्निग्ध हों तो वे शुभ होते हैं और उनसे उत्तम वर्षा होती है ॥5॥

शुक्लानि स्निग्धवर्णानि विद्युच्चित्रघनानि च ।
सद्यो वर्षं समाख्यान्ति तान्यभ्राणि न संशयः ॥6॥

बादल शुक्ल वर्ण के हों, स्निग्ध हों, विद्युत् समान विचित्र—कबूतर के समान रंग के बादल हों तो तत्काल वर्षा होती है ॥6॥

शकुनैः कारणैश्चापि सम्भवन्ति शुभैर्यदा ।
तदा वर्षं च क्षेमं च सुभिक्षं च जयं भवेत्[4] ॥7॥

शुभ शकुन और अन्य शुभ-चिह्नों सहित यदि बादल हों तो वे वर्षा करते हैं तथा क्षेम, कुशल, सुभिक्ष और राजा की विजय सूचित करते हैं ॥7॥

पक्षिणां द्विपदानां च सदृशानि यदा भवेत् ।
चतुष्पदानां सौम्यानां तदा विद्यान्महज्जलम्[5] ॥8॥

सौम्य पक्षियों के सदृश, सौम्य द्विपद—मनुष्यों के सदृश और सौम्य चतुष्पद—चौपायों—गाय, भैंस, हाथी घोड़ों आदि के तुल्य बादल हों तो विजयसूचक समझना चाहिए। इस श्लोक में सौम्य विशेषण से तात्पर्य है कि क्रूर प्राणियों की आकृति नहीं ग्रहण करनी चाहिए। जो प्राणी सीधे-सादे स्वभाव के हैं, उन्हीं की आकृति के बादल शुभ सूचक होते हैं। सौम्य प्राणियों में हाथी, घोड़ा, बैल, हंस, मयूर, सारस, तोता, मैना, कोयल, कबूतर आदि प्राणी संग्रहीत हैं ॥8॥

1 ध्वजानिर्देशम् मु० । 2 सत्त्वानां मु० । 3 शुभानि मु० । 4. भवेत् मु० A. आ० । 5. जयं भवेत् मु० A. B. D. ।

यदा राज्ञः प्रयाणे तु यान्यभ्राणि शुभानि च ।
अनुमार्गाणि स्निग्धानि तदा राज्ञो जयं वदेत्[1] ।।9।।

राजा के प्रयाण के समय यदि शुभ रूप बादल हों और वे राजा के मार्ग के साथ-साथ गमन करें, स्निग्ध हों तो उस यात्रा में राजा की विजय होती है ।।9।।

[2]रथायुधानामश्वानां हस्तिनां सदृशानि च ।
यान्यग्रतो प्रधावन्ति[3] जयमाख्यान्त्युपस्थितम् ।।10।।

रथ—गाड़ी, मोटर तथा आयुध—तलवार, बन्दूक और हाथी आदि प्राणियों के सदृश बादल राजा के आगे-आगे गमन करें तो वे उसकी जय की सूचना देते हैं ।।10।।

ध्वजानां च पताकानां घण्टानां तोरणस्य च ।
सदृशान्यग्रतो यान्ति जयमाख्यान्त्युपस्थितम् ।।11।।

ध्वजा, पताका, घण्टा, तोरण इत्यादि की आकृति वाले बादल राजा के प्रयाण समय आगे-आगे चलें तो उनसे राजा की विजय सूचित होती है ।।11।।

शुक्लानि स्निग्धवर्णानि पुरतः[4] पृष्ठतोऽपि वा ।
अभ्राणि[5] दीप्तरूपाणि जयमाख्यान्त्युपस्थितम् ।।12।।

श्वेत और चिकने बादल राजा के आगे अथवा पीछे चमकते हुए गमन करें तो विजयलक्ष्मी उसके सामने उपस्थित रहती है—युद्ध में उसे विजय मिलती है ।।12।।

चतुष्पदानां पक्षिणां क्रव्यादानां च दंष्ट्रिणाम् ।
सदृशप्रतिलोमानि वधमाख्यान्त्युपस्थितम् ।।13।।

चौपायों—भैंसा, शूकर, गधा आदि पशुओं और मांसभक्षी क्रूर पक्षियों—गीध, काक, बगुला, बाज, तीतर आदि पक्षियों एवं दाँत वाले सिंहादि हिंसक प्राणियों के आकार वाले बादल राजा के युद्धार्थ गमन करते समय प्रतिलोम गति—अपसव्य मार्ग से गमन करते हुए दिखाई दें तो राजा का नाश अथवा पराजय होती है ।।13।।

---

1. भवेत् मु० C. । 2. अथायुधानाम्, मु०; रथायुधानाम्, मु० C. । 3. अभिधावन्ति मु० C. । 4. पुरस्तात् मु० । 5. अभ्राणां मु० B. ।

असिशक्तितोमराणां खड्गानां चक्रचर्मणाम्।
सदृशप्रतिलोमानि सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत् ॥14॥

तलवार, त्रिशूल, भाला, बर्छी, खड्ग, चक्र और ढाल के समान आकार वाले और प्रतिलोम—विपरीत मार्ग से गमन करने वाले बादल युद्ध की सूचना देते हैं ॥14॥

धनुषां कवचानां च बालानां सदृशानि च।
खण्डान्यभ्राणि रूक्षाणि सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत् ॥15॥

धनुषाकार, कवचाकार, बाल—हाथी, घोड़ों की पूंछ के बालों के समान तथा खण्डित और रूक्ष बादल संग्राम की सूचना देते हैं ॥15॥

नानारूपप्रहरणैः सर्वे यान्ति परस्परम्।
सङ्ग्रामं तेषु जानीयादतुलं प्रत्युपस्थितम् ॥16॥

नाना प्रकार के रूप धारण कर मेघ बादल परस्पर में आघात-प्रतिघात करें तो घोर संग्राम की सूचना अवगत करनी चाहिए ॥16॥

अभ्रवृक्षं समुच्छाद्य योऽनुलोमसमं व्रजेत्।
यस्य राज्ञो वधस्तस्य भद्रबाहुवचो यथा ॥17॥

जड़ से उखड़े हुए वृक्ष के समान यदि बादल गमन करते हुए दिखलाई पड़ें तो राजा के वध की सूचना ज्ञात करनी चाहिए, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥17॥

[1]बालाभ्रवृक्षमरणं कुमारामात्ययोर्वदेत्।
एवमेवं च विज्ञेयं प्रतिराजं[2] यदा भवेत् ॥18॥

छोटे-छोटे वृक्ष के समान आकृति वाले बादलों से युवराज और मन्त्री का मरण जानना चाहिए ॥18॥

तिर्यक्षु[3] यानि गच्छन्ति रूक्षाणि[4] च घनानि च।
निवर्तयन्ति तान्याशु चमूं सर्वां सनायकाम्[5] ॥19॥

यदि मेघ तिरछे गमन करते हों, रूक्ष हों और सघन हों तो उनसे नायक

---

1. बालाभ्र मु० A. -भिमरणं ब्रूते मु० B. -आमित्य मु० D. । 2. प्रतिरूपाणां मु० B., प्रतिराज्ञ मु० C., प्रतिराजा मु० D. । 3. तिर्यक् मु० C. । 4. रूपाणि मु० A. D., वृक्षाणि मु० C. । 5. च नायकाम् मु० C. ।

सहित समस्त सेना के युद्ध से लौट आने या पराङ्मुख हो जाने की सूचना मिलती है ॥19॥

अभिद्रवन्ति घोषेण[1] महता यां चमूं पुनः ।
सविद्युतानि [2]चाऽभ्राणि तदा विन्द्याच्चमूवधम् ॥20॥

जिस सेना के ऊपर बादल घोर गर्जना करते हुए बरसाते हैं तथा बिजली सहित होते हैं तो उस सेना का नाश सूचित होता है ॥20॥

रुधिरोदकवर्णानि निम्बगन्धीनि यानि च ।
व्रजन्त्यभ्राणि[3] अत्यन्तं सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत् ॥21॥

रुधिर के समान रंग वाली जलवर्षा हो और नीम जैसी गन्ध आती हो तथा बादल गमन करते हुए दिखलाई पड़ें तो युद्ध होने का निर्देश अवगत करना चाहिए ॥21॥

विस्वरं रवमाणाश्च शकुना यान्ति पृष्ठतः ।
यदा[4] चाभ्राणि धूम्राणि[5] तदा विन्द्यान्महद्[6] भयम्[7] ॥22॥

पीछे की ओर शब्द सहित अथवा शब्दरहित शकुन रूप धूम जैसी आकृति वाले बादल महान् भय की सूचना देते हैं ॥22॥

मलिनानि विवर्णानि[8] दीप्तायां दिशि यानि च ।
दीप्तान्येव यदा यान्ति भयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥23॥

मलिन तथा वर्णरहित बादल दीप्ति दिशा — सूर्य जिस दिशा में हो उस दिशा में स्थित हों तो भय की सूचना समझनी चाहिए ॥23॥

[9]सग्रहे [10]चापि नक्षत्रे ग्रहयुद्धे[11] ऽशुभे तिथौ ।
[12]सम्भ्रमन्ति यदाऽभ्राणि तदा विन्द्यान्महद् भयम् ॥24॥

मुहूर्ते शकुने वापि निमित्ते वाऽशुभे यदा ।
सम्भ्रमन्ति यदाऽभ्राणि तदा विन्द्यान्महद् भयम् ॥25॥

---

1. घोरेण मु० C. । 2. वा मु० । 3. प्रवर्जित-अभ्रमर्गाः मु० A. B. D. । 4. यानि अभ्राणि मु० C. । 5. सधूमानि मु० A. B. D. । 6-7. महाभयम् मु० A., भयम् महत् मु० B. E. । 8. विवर्णानि मु० A. । 9. सग्रहे मु० A., संग्रहे मु० D. । 10. वा । 11. अभ्रपूर्वे मु० C. । 12. सम्भवन्ति मु० C. ।

अशुभ ग्रह, नक्षत्र, ग्रहयुद्ध, तिथि-मुहूर्त-शकुन और निमित्त के अशुभ होने पर बादलों का भ्रमण हो तो बहुत भारी भय की सूचना समझनी चाहिए ॥24-25॥

अभ्रशक्तिर्यतो गच्छेत् तां दिशां[1] चाभियोजयेत्[2] ।
विपुला क्षिप्रगा स्निग्धा जयमाख्याति निर्भयम् ॥26॥

भारी शीघ्रगामी और स्निग्ध बादल जिस दिशा में गमन करें उस दिशा में वे यायी राजा की विजय की सूचना करते हैं ॥26॥

यदा तु धान्यसंधाना[3] सदृशानि[4] भवन्ति हि ।
अभ्राणि तोयवर्णानि सस्यं तेषु समृद्ध्यते[5] ॥27॥

यदि बादल धान्य के समूह के सदृश अथवा जल के वर्ण वाले दिखाई दें तो धान्य की बहुत पैदावार होती है ॥27॥

[6]विरागान्यनुलोमानि शुक्लरक्तानि यानि च ।
स्थावराणीति जानीयात् स्थावराणां च संश्रये ॥28॥

विरागी, अनुलोम गति वाले तथा श्वेत और रक्त वर्ण के बादल स्थिर हों तो स्थायी—उस स्थान के निवासी राजा की विजय होती है ॥28॥

क्षिप्रगानि विलोमानि नीलपीतानि यानि च ।
चलानीति[7] [8]विजानीयाच्चलानां[9] च समागमे[10] ॥29॥

शीघ्रगामी, प्रतिलोम गति से चलने वाले, पीत और नील वर्ण के बादल चल होते हैं और ये यायी के लिए समागमकारक हैं ॥29॥

स्थावराणां जयं विन्द्यात् स्थावराणां द्युतिर्यदा ।
यायिनां च जयं विन्द्याच्चलाभ्राणां द्युतावपि ॥30॥

जो बादल स्थावरों—निवासियों के अनुकूल द्युति आदि चिह्न वाले हों तो उस परसे स्थायियों की जय जानना और यायी के अनुकूल द्युति आदि चिह्नवाले हों तो यायी की विजय जानना चाहिए ॥30॥

1. दिशा मु० । 2. चाभियोजयेत् मु० । 3. धान्यसंधानात् मु० A । 4. सदृशानां मु० । 5. समृद्ध्यति मु० । 6. विरागानि मु० A । 7. चलानीति मु० A चलानीति मु० D । 8. विजानीयात् मु० D । 9. चलानां मु० A । 10. समागमे मु० A ।

राजा[1] तत्प्रतिरूपैस्तु[2] ज्ञेयान्यभ्राणि सर्वशः[3] ।
तत् सर्वं[4] सफलं[5] [6]विन्द्याच्छुभं वा यदि वाऽशुभम् ॥31॥

यदि राजा को बादल अपने प्रतिरूप—सदृश जान पड़ें तो उनसे शुभ और अशुभ दोनों प्रकार का फल अवगत करना चाहिए ॥31॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे अभ्रलक्षणो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥6॥

विवेचन—आकाश में बादलों के आच्छादित होने से वर्षा, फसल, जय, पराजय, हानि, लाभ आदि के सम्बन्ध में जाना जाता है। यह एक प्रकार का निमित्त है, जो शुभ-अशुभ की सूचना देता है। बादलों की आकृतियाँ अनेक प्रकार की होती हैं। कतिपय आकृतियाँ पशु-पक्षियों के आकार की होती हैं और कतिपय मनुष्य, अस्त्र-शस्त्र एवं गेंद, कुर्सी आदि के आकार की भी। इन समस्त आकृतियों को फल की दृष्टि से शुभ और अशुभ इन दो भागों में विभक्त किया गया है। जो पशु सरल, सीधे और पालतू होते हैं, उनकी आकृति के बादलों का फल शुभ और हिंसक, क्रूर, दुष्ट जंगली जानवरों की आकृति के बादलों का फल निकृष्ट होता है। इसी प्रकार सौम्य मनुष्य की आकृति के बादलों का फल शुभ और क्रूर मनुष्यों की आकृति के बादलों का फल निकृष्ट होता है। अस्त्र-शस्त्रों की आकृति के बादलों का फल साधारणतया अशुभ होता है। स्निग्ध वर्ण के बादलों का फल उत्तम और रूक्ष वर्ण के बादलों का फल सर्वदा निकृष्ट होता है।

पूर्व दिशा में मेघ गर्जन-तर्जन करते हुए स्थित हों तो उत्तम वर्षा होती है तथा फसल भी उत्तम होती है। उत्तर दिशा में बादल छाये हुए हों तो वर्षा की सूचना देते हैं। दक्षिण और पश्चिम दिशा में बादलों का एकत्र होना वर्षावरोधक होता है। वर्षा का विचार ज्येष्ठ की पूर्णिमा की वर्षा से किया जाता है। यदि ज्येष्ठ की पूर्णिमा के दिन पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र हो और उस दिन बादल आकाश में आच्छादित हों तो साधारण वर्षा आगामी वर्ष में समझनी चाहिए। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र यदि इस दिन हो तो अच्छी वर्षा होने की सूचना जाननी चाहिए। आषाढ़ कृष्ण पक्ष में रोहिणी के चन्द्रमा योग हो और उस दिन आकाश में पूर्व दिशा की ओर मेघ सुन्दर, सौम्य आकृति में स्थित हों तो आगामी वर्ष में सभी दिशाएं शान्त रहती हैं, पक्षीगण या मृगगण मनोहर शब्द करते हुए आनन्द से निवास करते हैं, भूमि सुन्दर दिखलाई पड़ती है और धन-धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती

---

1. राजा मु० C. । 2. निप्रति मु० C. । 3. सर्वतः मु० C. । 4. ततः मु० C. 5. सर्वमन्नं मु० C. । 6. शुभात् मु० B. C. ।

है। यदि आकाश में कहीं कृष्ण-श्वेत मिश्रित वर्ण के मेघ आच्छादित हों, कहीं श्वेत वर्ण के ही स्थित हों, कहीं कुण्डली आकार में स्थित हों, कहीं बिजली चमकती हुई मेघों में दिखलाई पड़ें, कहीं कुमकुम और टेसू के पुष्प के समान रंग के बादल सामने दिखलाई पड़ें, कहीं मेघों के इन्द्र-धनुष दिखलाई पड़ें तो आगामी वर्ष में साधारणतः वर्षा होती है। आचार्यों ने ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी से आषाढ़ शुक्ल तक के मेघों का फल विशेष रूप से प्रतिपादित किया है।

विशेष फल—यदि ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी को प्रातः निरभ्र आकाश हो और एकाएक मेघ मध्याह्नकाल में छा जायें तो पौष मास में वर्षा की सूचना देते हैं तथा इस प्रकार के मेघों से गुड़, चीनी आदि मधुर पदार्थों के महँगे होने की भी सूचना समझनी चाहिए। यदि इसी तिथि को रात्रि में गर्जन-तर्जन के साथ बूंदा-बूंदी हो और पूर्व दिशा में बिजली भी चमके तो आगामी वर्ष में सामान्यतया अच्छी वर्षा होने की सूचना देते हैं। यदि उपर्युक्त स्थिति में दक्षिण दिशा में बिजली चमकती है तो दुर्भिक्ष-सूचक समझना चाहिए। ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी को उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र हो और इस दिन उत्तर दिशा की ओर से मेघ एकत्र होकर आकाश को आच्छादित करें तो वस्त्र और अन्न सस्ते होते हैं और आषाढ़ से आश्विन तक अच्छी वर्षा होती है, सर्वत्र सुभिक्ष होने की सूचना मिलती है। केवल यह योग चूहों, सर्पों और जंगली जानवरों के लिए अनिष्टप्रद है। उक्त तिथि को गुरुवार, शुक्रवार और मंगलवार में से कोई भी दिन हो और पूर्व या दक्षिण दिशा की ओर से बादलों का उमड़ना आरम्भ हो रहा हो तो निश्चयतः मानव, पशु, पक्षी और अन्य समस्त प्राणियों के लिए वर्षा अच्छी होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठी को आकाश में मंडलाकार मेघ संचित हों और उनका लाल या काला रंग हो तो आगामी वर्ष में वृष्टि का अभाव अवगत करना चाहिए। यदि इस दिन बुधवार और मघा नक्षत्र का योग हो तथा पूर्व या उत्तर से मेघ उठ रहे हों तो श्रावण और भाद्रपद में वर्षा अच्छी होती है, परन्तु अन्न का भाव महँगा रहता है। फसल में कीड़े लगते हैं तथा सोना, चाँदी आदि खनिज धातुओं के मूल्य में भी वृद्धि होती है। यदि ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठी रविवार को हो और इस दिन पुष्य नक्षत्र का योग हो तो मेघ का आकाश में छाना बहुत अच्छा होता है। आगामी वर्ष वृष्टि बहुत अच्छी होती है, धन-धान्य की उत्पत्ति भी श्रेष्ठ होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी शनिवार को हो और इस दिन आश्लेषा नक्षत्र का भी योग हो तो आकाश में श्वेत रंग के बादलों का छा जाना उत्तम माना गया है। इस निमित्त से देश की उन्नति की सूचना मिलती है। देश का व्यापारिक सम्बन्ध अन्य देशों से बढ़ता है तथा उसकी सैन्य और अर्थ शक्ति का पूर्ण विकास होता

है। वर्षा भी समय पर होती है, जिससे कृषि बहुत ही उत्तम होती है। यदि उक्त तिथि को गुरुवार और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र का योग हो और दक्षिण से बादल गर्जना करते हुए एकत्र हों तो आगामी आश्विन मास में उत्तम वर्षा होती है तथा फसल भी साधारणतः अच्छी होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला अष्टमी को रविवार या सोमवार दिन हो और इस दिन पश्चिम की ओर पर्वताकृति बादल दिखलाई पड़ें तो आगामी वर्ष के शुभ होने की सूचना देते हैं। पुष्य, मघा और पूर्वा फाल्गुनी इन नक्षत्रों में से कोई भी नक्षत्र उस दिन हो तो लोहा, इस्पात तथा इनसे बनी समस्त वस्तुएँ महँगी होती हैं। जूट का बाजार भाव अस्थिर रहता है। तथा आगामी वर्ष में अन्न की उपज भी कम ही होती है। देश में गोधन और पशुधन का विनाश होता है। यदि उक्त नक्षत्रों के साथ गुरुवार का योग हो तो आगामी वर्ष सब प्रकार से सुखपूर्वक व्यतीत होता है। वर्षा प्रचुर परिमाण में होती है। कृषक वर्ग को सभी प्रकार से शान्ति मिलती है।

ज्येष्ठ शुक्ला नवमी शनिवार को यदि आश्लेषा, विशाखा और अनुराधा में से कोई भी नक्षत्र हो तो इस दिन मेघों का आकाश में व्याप्त होना साधारण वर्षा का सूचक है। साथ ही इन मेघों से माघ मास में जल के बरसने की भी सूचना मिलती है। जौ, धान, चना, मूँग और बाजरा की उत्पत्ति अधिक होती है। गेहूँ का अभाव रहता है या स्वल्प परिमाण में उत्पादन होता है। ज्येष्ठ शुक्ला दशमी को रविवार या मंगलवार हो और इस दिन ज्येष्ठा या अनुराधा नक्षत्र हो तो आगामी वर्ष में श्रेष्ठ फसल होने की सूचना समझनी चाहिए। तिल, तैल, घी और तिलहनों का भाव महँगा होता है तथा घृत में विशेष लाभ होता है। उक्त प्रकार का मेघ व्यापारी वर्ग के लिए भयदायक है तथा आगामी वर्ष में उत्पातों की सूचना देता है।

ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी को उत्तर दिशा की ओर सिंह, व्याघ्र के आकार में बादल छा जायें तो आगामी वर्ष के लिए अनिष्टप्रद समझना चाहिए। इस प्रकार की मेघस्थिति पौष या माघ मास में देश के किसी नेता की मृत्यु भी सूचित करती है। वर्षा और कृषि के लिए उक्त प्रकार की मेघस्थिति अत्यन्त अनिष्ट-कारक है। अन्न और जूट की फसल सामान्य रूप से अच्छी नहीं होती। कपास और गन्ने की फसल अच्छी ही होती है। यदि उक्त तिथि को गुरुवार हो तो इस प्रकार की मेघस्थिति द्विज लोगों में भय उत्पन्न करती है तथा देश में अधार्मिक वातावरण उपस्थित करने का कारण बनती है।

ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशी को बुधवार हो और इस दिन पश्चिम दिशा में सुन्दर और सौम्य आकार में बादल आकाश में छा जायें तो आगामी वर्ष में अच्छी वर्षा

होती है। यदि इस दिन ज्येष्ठा या मूल नक्षत्र में से कोई हो तो उक्त प्रकार की मेघ की स्थिति से धन-धान्य की उत्पत्ति में डेढ़ गुनी वृद्धि हो जाती है। दैनिक उपयोग की समस्त वस्तुएँ आगामी वर्ष में सस्ती होती हैं।

ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशी को गुरुवार हो और इस दिन पूर्व दिशा की ओर से बादल उमड़ते हुए एकत्र हों तो उत्तम वर्षा की सूचना देते हैं। अनुराधा नक्षत्र भी हो तो कृषि में वृद्धि होती है। ज्येष्ठ शुक्ला चतुर्दशी की रात्रि में वर्षा हो और आकाश मण्डलाकार रूप में मेघाच्छन्न हो तो आगामी वर्ष में खेती अच्छी होती है। ज्येष्ठ पूर्णिमा को आकाश में सघन मेघ आच्छादित हों और इस दिन गुरुवार हो तो आगामी वर्ष में सुभिक्ष की सूचना समझनी चाहिए।

आषाढ़ कृष्णा प्रतिपदा को हाथी और अश्व के आकार में कृष्ण वर्ण के बादल आकाश में अवस्थित हो जायें तथा पूर्व दिशा से वायु भी चलती हो और हल्की वर्षा हो रही हो तो आगामी वर्ष में दुष्काल की सूचना समझनी चाहिए। आषाढ़ कृष्णा प्रतिपदा के दिन आकाश में बादलों का आच्छादित होना तो उत्तम होता है, पर पानी का बरसना अत्यन्त अनिष्टप्रद समझा जाता है। इस दिन अनेक प्रकार के निमित्तों का विचार किया जाता है—यदि रात में उत्तर दिशा से शृगाल मन्द-मन्द शब्द करते हुए बोलें तो आश्विन मास में वर्षा का अभाव होता है तथा समस्त खाद्य पदार्थ महँगे होते हैं। तेज धूप का पड़ना श्रेष्ठ समझा जाता है और यह लक्षण सुभिक्ष का द्योतक होता है। आषाढ़ कृष्णा द्वितीया को पर्वत, या समुद्र के आकार में उमड़ते हुए बादल एकत्रित हों और गर्जना करें, पर वर्षा न हो तो साधारणतः अच्छा समझा जाता है। आगामी श्रावण और भाद्रपद में वर्षा होती है। आषाढ़ कृष्णा द्वितीया को सुन्दर द्विपदाकार मेघ आकाश में अवस्थित हों तो उत्तम समझा जाता है। वर्षा भी उत्तम होती है तथा आगामी वर्ष फसल भी अच्छी होती है। यदि आषाढ़ कृष्णा द्वितीया को सोमवार हो और इस दिन श्रवण नक्षत्र हो तो उक्त प्रकार के मेघ का विशेष फल प्राप्त होता है। तिलहन की उत्पत्ति प्रचुर परिमाण में होती है तथा पशु धन की वृद्धि होती रहती है। इस तिथि को मेघाच्छन्न आकाश होने पर रात्रि में शूकर और जंगली जानवरों का कर्कश शब्द सुनाई पड़े तो जिस नगर के व्यक्ति इस शब्द को सुनते हैं, उसके चारों ओर दस-दस कोश की दूरी तक महामारी फैलती है। यह फल कार्तिक मास में ही प्राप्त होता है, सारा नगर कार्तिक में वीरान हो जाता है। फसल भी कमजोर होती है और फसल को नष्ट करने वाले कीड़ों की वृद्धि होती है। यदि उक्त तिथि को प्रातःकाल आकाश निरभ्र हो और सन्ध्या समय रंग-बिरंगे वर्ण के बादल पूर्व से पश्चिम की ओर गमन करते हुए दिखलाई पड़ें तो सात दिन के उपरान्त घनघोर वर्षा होती है तथा श्रावण महीने में भी खूब वर्षा

होने की सूचना समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि को दिन भर मेघाच्छन्न आकाश रहे और सन्ध्या समय निरभ्र हो जाय तो आगामी महीने में साधारण जल-वर्षा होती है तथा भाद्रपद में सूखा पड़ता है।

आषाढ़ कृष्ण तृतीया को प्रातःकाल ही आकाश मेघाच्छन्न हो जाय तो आगामी दो महीने अच्छी वर्षा होती है तथा विश्व में सुभिक्ष होने की सूचना समझनी चाहिए। काले रंग के अनाज महँगे होते हैं और श्वेत रंग की सभी वस्तुएँ सस्ती होती हैं। यदि उक्त तिथि को मंगलवार हो तो विशेष वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। धनिष्ठा नक्षत्र सन्ध्या समय में स्थित हो और इस तिथि को मंगलवार मेघ स्थित हों तो भाद्रपद मास में भी वर्षा की सूचना समझनी चाहिए।

आषाढ़ कृष्णा चतुर्थी को मंगलवार या शनिवार हो, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और श्रावण में से कोई भी एक नक्षत्र हो तो उक्त तिथि को प्रातःकाल ही मेघाच्छन्न होने से आगामी वर्ष अच्छी वर्षा की सूचना मिलती है। धन-धान्य की वृद्धि होती है। जूट की उपज के लिए उक्त मेघस्थिति अच्छी समझी जाती है। आषाढ़ कृष्णा पञ्चमी को मनुष्य के आकार में मेघ आकाश में स्थित हों तो वर्षा और फसल उत्तम होती है। देश की आर्थिक स्थिति में वृद्धि होती है। विदेशों से भी देश का व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होता है। गेहूँ, गुड़ और लाल वस्त्र के व्यापार में विशेष लाभ होता है। मोती, सोना, रत्न और अन्य प्रकार के बहुमूल्य जवाहरात की महँगी होती है। आषाढ़ कृष्णा षष्ठी को निरभ्र आकाश रहे और पूर्व दिशा से तेज वायु चले तथा सन्ध्या के समय पीत वर्ण के बादल आकाश में व्याप्त हो जावें तो श्रावण में वर्षा की कमी, भाद्रपद में सामान्य वर्षा और आश्विन में उत्तम वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि रविवार, सोमवार और मंगलवार हो तो सामान्यतः वर्षा उत्तम होती है तथा तृण और काष्ठ का मूल्य बढ़ता है। पशुओं के मूल्य में वृद्धि हो जाती है। यदि उक्त तिथि अश्विनी नक्षत्र हो तो वर्षा अच्छी होती है, किन्तु फसल में कमी रहती है। बाढ़ और अतिवृष्टि के कारण फसल नष्ट हो जाती है। माघ मास में भी वृष्टि की सूचना उक्त प्रकार के मेघ की स्थिति से मिलती है। यदि आषाढ़ कृष्ण सप्तमी को रात में एकाएक मेघ एकत्र हो जायँ तथा वर्षा न हो तो तीन दिन के पश्चात् अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि को प्रातःकाल ही मेघ एकत्रित हों तथा हल्की वर्षा हो रही हो तो आषाढ़ मास में अच्छी वर्षा, श्रावण में कमी और भाद्रपद में वर्षा का अभाव तथा आश्विन मास में छिट-पुट वर्षा समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि को सोमवार पड़े तो सूर्य की मेघस्थिति जगत् में हाहाकार होने की सूचना देती है। अर्थात् मनुष्य

और पशु सभी प्राणी कष्ट पाते हैं। आश्विन मास में अनेक प्रकार की बीमारियाँ भी व्याप्त होती हैं। आषाढ़ कृष्ण अष्टमी को प्रातःकाल सूर्योदय ही न हो अर्थात् सूर्य मेघाच्छन्न हो और मध्याह्न में तेज धूप हो तो श्रावण मास में वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। भरणी नक्षत्र हो तो समस्त प्रदेश अत्यन्त अनिष्टकर होता है। फसल में अनेक प्रकार के रोग लग जाते हैं तथा व्यापार में भी हानि होती है। आषाढ़ कृष्णा नवमी को पर्वताकार बादल दिखलाई पड़े तो शुभ, ध्वजा-घण्टा-पताका के आकार में बादल दिखलाई पड़ें तो प्रचुर वर्षा और व्यापार में लाभ होता है। यदि इस दिन बादलों की आकृति मांसभक्षी पशुओं के समान हो तो राष्ट्र के लिए भय होता है तथा आन्तरिक गृह-कलह के साथ अन्य शत्रु-राष्ट्रों की ओर से भी भय होता है। यदि तलवार, त्रिशूल, भाला, बर्छी आदि अस्त्रों के रूप में बादलों की आकृति उक्त तिथि को दिखलाई पड़े तो युद्ध की सूचना समझनी चाहिए। यदि आषाढ़ कृष्ण दशमी को उखड़े हुए वृक्ष की आकृति के समान बादल दिखलाई पड़े तो वर्षा का अभाव तथा राष्ट्र में नाना प्रकार के उपद्रवों की सूचना समझनी चाहिए। आषाढ़ कृष्ण एकादशी को रुधिर वर्ण के बादल आकाश में आच्छादित हों तो आगामी वर्ष प्रजा को अनेक प्रकार का कष्ट होता है तथा खाद्य पदार्थों की कमी होती है। आषाढ़ कृष्ण द्वादशी और त्रयोदशी को पूर्व दिशा की ओर से बादलों का एकत्र होना दिखलाई पड़े तो फसल की क्षति तथा वर्षा का अभाव और चतुर्दशी को गर्जन-तर्जन के साथ बादल आकाश में व्याप्त हुए दिखलाई पड़ें तो श्रावण में सूखा पड़ता है। अमावस्या को वर्षा होना शुभ है और धूप पड़ना अनिष्टकारक है। शुक्ला प्रतिपदा को मेघों का एकत्र होना शुभ, वर्षा होना सामान्य और धूप पड़ना अनिष्टकारक है। शुक्ला द्वितीया और तृतीया को पूर्व में मेघों का एकत्रित होना शुभसूचक है।

सप्तमोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सन्ध्यानां लक्षणं ततः[1]।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथातत्त्वं निबोधत ॥1॥

---

1. सिद्ध मु० C ।

सन्ध्याओं के लक्षण का निरूपण किया जाता है। ये सन्ध्याएँ दो प्रकार की होती हैं—प्रशस्त और अप्रशस्त। विभिन्न शास्त्रों के शब्दों के अनुसार उनका फल अवगत करना चाहिए ॥1॥

उद्गच्छमाने चादित्ये[1] यदा सन्ध्या विराजते।
नागराणां जयं विन्द्यादस्तं गच्छति यायिनाम्[2] ॥2॥

सूर्योदय के समय की सन्ध्या नागरों को और सूर्यास्त के समय की सन्ध्या यायी के लिए जय देने वाली होती है ॥2॥

उद्गच्छमाने चादित्ये[3] शुक्ला सन्ध्या यदा भवेत्।
उत्तरेण गता[4] सौम्या ब्राह्मणानां जयं विदुः ॥3॥

सूर्योदय के समय की सन्ध्या यदि श्वेत वर्ण की हो और वह उत्तर दिशा में हो तथा सौम्य हो तो ब्राह्मणों के लिए जयदायक होती है ॥3॥

उद्गच्छमाने चादित्ये रक्ता सन्ध्या यदा भवेत्।
पूर्वेण च गता सौम्या क्षत्रियाणां जयावहा ॥4॥

सूर्योदय के समय लाल वर्ण की सन्ध्या हो और वह पूर्व दिशा में स्थित हो तथा सौम्य हो तो क्षत्रियों को जय देने वाली होती है ॥4॥

उद्गच्छमाने चादित्ये पीता सन्ध्या यदा भवेत्।
दक्षिणेन गता सौम्या वैश्यानां सा[5] जयावहा[6] ॥5॥

सूर्योदय के समय पीत वर्ण की सन्ध्या यदि हो और वह दक्षिण दिशा का आश्रय करे तथा सौम्य हो तो वैश्यों के लिए जयदायी होती है ॥5॥

उद्गच्छमाने चादित्ये कृष्णसन्ध्या यदा भवेत्।
अपरेण गता सौम्या शूद्राणां च जयावहा[7] ॥6॥

सूर्योदय के समय कृष्ण वर्ण की सन्ध्या यदि हो और वह पश्चिम दिशा का आश्रय करे तथा सौम्य हो तो शूद्रों के लिए जयकारक होती है ॥6॥

सन्ध्योत्तरा जयं राज्ञः सदा कुर्यात् पराजयम्[8]।
पूर्वा क्षेमं सुभिक्षं च पश्चिमा च[9] भयंकरा ॥7॥

---

1. चादित्य मु०। 2. यायिनाम् मु० C.। 3. चादित्ये मु०। 4. गता मु०। 5. सा मु० C.। 6. जयावहा मु० B. जयकराः मु० C.। 7. जयावहा मु० B. जयकरा मु० C.। 8. कुर्यात् दक्षिणा: च पराजयम् मु०। 9. तु मु०।

उत्तर दिशा की सन्ध्या राजा के लिए जयसूचक है और दक्षिण दिशा की सन्ध्या पराजयसूचक होती है। पूर्व दिशा की सन्ध्या क्षेमकुशलसूचक और पश्चिम दिशा की सन्ध्या भयंकर होती है ॥7॥

आग्नेयी अग्निमाख्याति नैर्ऋती राष्ट्रनाशिनी ।
वायव्या प्रावृषं[1] हन्यात् ईशानी च शुभावहा ॥8॥

अग्निकोण की सन्ध्या अग्निभय कारक, नैर्ऋत्य दिशा की सन्ध्या देश का नाश करने वाली, वायु कोण की सन्ध्या वर्षा की हानिकारक एवं ईशान कोण की सन्ध्या शुभ होती है ॥8॥

एवं सम्पत्कराद्येषु[2] नक्षत्रेष्वपि निर्दिशेत् ।
जयं सा कुरुते सन्ध्या साधकेषु समुत्थिता ॥9॥

इसी प्रकार सम्पत्ति का लाभ आदि कराने वाले नक्षत्रों में भी निर्देश करना चाहिए, इस प्रकार की सन्ध्या साधक को जयप्रदा होती है। तात्पर्य यह है कि साधक पुरुष को नक्षत्रों में भी शुभ सन्ध्या का दिखाई देना जयप्रद होता है ॥9॥

उदयास्तमनेऽर्कस्य यान्यभ्राण्यतो भवेत् ।
सम्प्रभाणि सरश्मीनि तानि सन्ध्या विनिर्दिशेत् ॥10॥

सूर्य के उदयास्त के समय बादलों पर जो सूर्य की प्रभा पड़ती है, उस प्रभा से बादलों में नाना प्रकार के वर्ण उत्पन्न हो जाते हैं, उसी का नाम सन्ध्या है ॥10॥

अभ्राणां यानि रूपाणि सौम्यानि विकृतानि[3] च ।
सर्वाणि तानि सन्ध्यायां[4] तथैव प्रतिचारयेत्[5] ॥11॥

अभ्र अध्याय में जो उनके अच्छे और बुरे फल निरूपित किये गये हैं, उस सबको इस सन्ध्या अध्याय में भी लागू कर लेना चाहिए ॥11॥

एवमस्तमने काले या सन्ध्या सर्व उच्यते ।
लक्षणं यत्[6] तु[7] सन्ध्यानां[8] शुभं[9] वा यदि [10]वाऽशुभम् ॥12॥

उपर्युक्त सूर्योदय की सन्ध्या के लक्षण और शुभाशुभ फलानुसार अस्तकाल

---

1. वर्षां म० । 2. सम्पदा स्थेषु मु० C. । 3. विकारांश्च मु० C. । 4. सन्ध्यासु मु० C. । 5. प्रतिचारयेत् मु० । 6.-7.-8. अथ भौमि मु० C. । 9. सन्ध्यानां शुभाशुभम् मु० C. । 10. च मु० ।

की सन्ध्या का भी शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए ॥12॥

स्निग्धवर्णमती सन्ध्या वर्षदा सर्वशो भवेत् ।
[1]सर्वा वीथिगता वाऽपि सुनक्षत्रा[2] विशेषत: ॥13॥

स्निग्ध वर्ण की सन्ध्या वर्षा देने वाली होती है; वीथियों में प्राप्त और विशेष कर शुभ नक्षत्रों वाली सन्ध्या वर्षा को करती है ॥13॥

[3]पूर्वरात्रपरिवेषा[4] [5]सविद्युत्परिखायुता ।
सरश्मी[6] सर्वत:[7] सन्ध्या[8] सद्यो वर्षं प्रयच्छति ॥14॥

पूर्व रात्रि—पिछली बीती हुई रात्रि को परिवेष हो और परिखायुक्त बिजली हो तथा सब ओर रश्मि सहित सन्ध्या हो तो तत्काल वर्षा होती है ॥14॥

प्रतिसूर्यागमस्तत्र [9]शक्रचापरजस्तथा ।
सन्ध्यायां यदि दृश्यन्ते सद्यो वर्षं प्रयच्छति ॥15॥

प्रतिसूर्य का आगमन हो, वहां पर इन्द्रधनुष रजोयुक्त सन्ध्या में दिखलाई पड़े तो तत्काल वर्षा होती है ॥15॥

सन्ध्यायामेकरश्मिस्तु यदा सृजति भास्कर: ।
उदितोऽस्तमितो चापि विन्द्याद् वर्षमुपस्थितम् ॥16॥

सन्ध्या में सूर्य उदय या अस्त के समय में एक रश्मि वाला दिखलाई पड़े तो तत्काल वर्षा होती है ॥16॥

आदित्यपरिवेषस्तु सन्ध्यायां यदि दृश्यते ।
वर्षं महद् विजानीयाद् भयं वाऽथ[10] प्रवर्षणं[11] ॥17॥

सन्ध्या में सूर्य के परिवेष दिखलाई दे तो भारी वर्षा होती है अथवा भय होता है। तात्पर्य यह है कि सन्ध्या काल में सूर्य का परिवेष दिखलाई देना शुभ नहीं माना जाता है। इसका फलादेश अच्छा नहीं होता। वर्षा भी होती है तो अधिक होती है जिससे मनुष्य और पशुओं को कष्ट ही होता है ॥17॥

त्रिमण्डलपरिक्षिप्तो यदि वा[12] पंचमण्डल: ।
सन्ध्यायां दृश्यते सूर्यो महावर्षस्य सम्भव: ॥18॥

---

1. [illegible] 2. [illegible] 3. [illegible] 4. [illegible]
5. [illegible] A. [illegible] 6. [illegible] 7. [illegible] 8. [illegible]
9. [illegible] 10-11. [illegible] A. [illegible] 12. [illegible]

यदि सूर्य सन्ध्या में तीन मंडल अथवा पाँच मंडल से घिरा हुआ दिखलाई दे तो महावर्षा का होना संभव होता है ॥18॥

द्योतयन्तो दिशा सर्वा यदा सन्ध्या प्रदृश्यते ।
[1]महामेघास्तदा विन्द्यात् भद्रबाहुवचो यथा ॥19॥

सब दिशाओं में प्रकाशमान झलझलाहट युक्त सन्ध्या दिखलाई दे तो भारी वर्षा होती है, ऐसा भद्रबाहु का वचन है ॥19॥

सरस्तडागप्रतिमाकूपकुम्भनिभा च या ।
यदा पश्यति[2] सुस्निग्धा सा सन्ध्या वर्षदा स्मृता[3] ॥20॥

सरोवर, तालाब, प्रतिमा, कूप और कुम्भ सदृश स्निग्ध सन्ध्या यदि दिखलाई दे तो वर्षा होगी, ऐसा जानना चाहिए ॥20॥

धूम्रवर्णा बहुच्छिद्रा खण्डपापसमा यदा ।
या सन्ध्या दृश्यते नित्यं सा तु राज्ञो भयंकरा ॥21॥

धूम्र वर्णवाली, छिद्रयुक्त, खण्डरूप सन्ध्या यदि नित्य दिखाई दे तो वह राजा को भयकारक है ॥21॥

द्विपदाश्चतुष्पदा: क्रूरा: पक्षिणश्च[4] भयंकरा: ।
सन्ध्यायां यदि दृश्यन्ते भयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥22॥

क्रूर स्वभाव वाले द्विपद, चतुष्पद और पक्षीगण के सदृश बादल यदि सन्ध्या काल में दिखलाई दें तो भय उपस्थित होता है ॥22॥

अनावृष्टिर्भयं रोगं दुर्भिक्षं राजविद्रवम् ।
रूक्षायां विकृतायां च [5]सन्ध्यायामभिनिर्दिशेत् ॥23॥

सन्ध्या में बादल रूक्ष और विकृतिरूप दिखाई दें तो अनावृष्टि, भय, रोग, दुर्भिक्ष और राजा का उपद्रव होता है ॥23॥

विंशतिर्योजनानि स्युर्विद्युद्भाति च सुप्रभा ।
ततोऽधिकं तु स्तनितं[6] अभ्रं यत्रैव दृश्यते ॥24॥

---

1. महामेघं मु० । 2. दृश्यन्ते मु० । 3. शिवा मु० C. । 4. पक्षिणस्तु मु० । 5. सन्ध्यायां विनिर्दिशेत्, मु० । 6. स्तनितम् मु० ।

विशेष नोट—मुद्रित प्रति में श्लोक-संख्या 22, 23 में व्यतिक्रम मिलता है ।

पंचयोजनिका सन्ध्या वायुवर्षं च दूरतः ।
त्रिरात्रं[1] सप्तरात्रं[2] च सद्यो वा पाकमादिशेत् ॥25॥

बिजली की प्रभा बीस योजन—अस्सी कोश पर से दिखाई दे तथा इससे भी अधिक दूरी से बादल दिखलाई दें तो वायु और वर्षा भी इतने ही योजन की दूरी तक दिखलाई देती हैं। यदि सन्ध्या पाँच योजन—बीस कोश से दिखलाई दे तो वायु और वर्षा भी इतनी ही दूरी से दिखलाई पड़ती है। उपर्युक्त चिह्नों का फल तीन या सात रात्रि में मिलता है। तात्पर्य यह है कि जब बीस कोस की दूरी से सन्ध्या और अस्सी कोश की दूरी से विद्युत्प्रभा और अभ्र-बादल दिखलाई देते हैं, तब वर्षा भी उस स्थान के चारों ओर अस्सी कोश या बीस कोश की दूरी तक होती है। यह फलादेश तीन या सात दिनों में प्राप्त होता है ॥24-25॥

उल्कावत् साधनं सर्वं सन्ध्यायामभिनिर्दिशेत् ।
अतः परं प्रवक्ष्यामि मेघानां तन्निबोधत ॥26॥

उल्का अध्याय के समान सन्ध्या के सब लक्षण और फल समझना चाहिए। जिस प्रकार अशुभ और दुर्भाग्य आकृति वाली उल्काएँ देश, समाज, व्यक्ति और राष्ट्र के लिए हानिकारक समझी जाती हैं, उसी प्रकार सन्ध्याएं भी। अब आगे मेघ का फल और लक्षण निरूपित किया जाता है, उसे अवगत करना चाहिए ॥26॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते सन्ध्यालक्षणो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥7॥

विवेचन—प्रतिदिन सूर्य के अर्धास्त हो जाने के समय से जब तक आकाश में नक्षत्र भलीभाँति दिखाई न दें तब तक सन्ध्या काल रहता है, इसी प्रकार अर्धोदित सूर्य से पहले तारा दर्शन तक सन्ध्या काल माना जाता है। सन्ध्या समय बार-बार ऊँचा भयंकर शब्द करता हुआ मृग ग्राम के नष्ट होने की सूचना करता है। सेना के दक्षिण भाग में स्थित मृग सूर्य के सम्मुख महान् शब्द करे तो सेना का नाश समझना चाहिए। यदि पूर्व में प्रातः सन्ध्या के समय सूर्य की ओर मुख करके मृग और पक्षियों के शब्द से युक्त सन्ध्या दिखलाई पड़े तो देश के नाश की सूचना मिलती है। दक्षिण में स्थित मृग सूर्य की ओर मुख करके शब्द करे तो शत्रुओं द्वारा नगर का ग्रहण किया जाता है। गृह, वृक्ष, तोरण मथन और धूलि के साथ मिट्टी के ढेलों को भी उड़ाने वाला पवन प्रबल वेग और भयंकर रूक्ष

1. त्रिरात्रं मु० । 2. सप्तरात्रं मु० ।

शब्द से पक्षियों को आक्रान्त करे तो अशुभकारी सन्ध्या होती है। सन्ध्या काल में मन्द पवन के प्रवाह से हिलते हुए पलाश अथवा मधुर शब्द करते हुए विहंग और मृग निनाद करते हों तो सन्ध्या पूज्य होती है। सन्ध्या काल में दण्ड, तड़ित्, मत्स्य, मंडल, परिवेष, इन्द्रधनुष, ऐरावत और सूर्य की किरणें इन सबका स्निग्ध होना शीघ्र ही वर्षा को लाता है। टूटी-फूटी, क्षीण, विध्वस्त, विकराल, कुटिल, बाईं ओर को झुकी हुई छोटी-छोटी और मलिन सूर्य-किरणें सन्ध्या काल में हों तो उपद्रव या युद्ध होने की सूचना समझनी चाहिए। उक्त प्रकार की सन्ध्या वर्षाविरोधक होती है। अन्धकारविहीन आकाश में सूर्य की किरणों का निर्मल, प्रसन्न, सीधा और प्रदक्षिणा के आकार में भ्रमण करना संसार के मंगल का कारण है। यदि सूर्यरश्मियाँ आदि, मध्य और अन्त-गामी होकर चिकनी, सरल, अखण्डित और श्वेत हों तो वर्षा होती है। कृष्ण, पीत, कपिश, रक्त, हरित आदि विभिन्न वर्णों की किरणें आकाश में व्याप्त हो जायें तो अच्छी वर्षा होती है तथा एक सप्ताह तक भय भी बना रहता है। यदि सन्ध्या समय सूर्य की किरणें ताम्र रंग की हों तो सेनापति की मृत्यु, पीले और लाल रंग के समान हों तो सेनापति को दुःख, हरे रंग की होने से पशु और धान्य का नाश, धूम्र वर्ण की होने से गायों का नाश, मंजीठ के समान आभा और रंगदार होने से शस्त्र व अग्निभय, पीत हों तो पवन के साथ वर्षा, भस्म के समान होने से अनावृष्टि और मिश्रित एवं कल्माष रंग होने से वृष्टि का क्षीण भाव होता है। सन्ध्याकालीन धूल दुपहरिया के फूल और अंजन के चूर्ण के समान काली होकर जब सूर्य के सामने आती है, तब मनुष्य सैकड़ों प्रकार के रोगों से पीड़ित होता है। यदि सन्ध्या काल में सूर्य की किरणें श्वेत रंग की हों तो मानव का अभ्युदय और उसकी शान्ति सूचित होती है। यदि सूर्य की किरणें सन्ध्या समय जल और पवन से मिलकर दण्ड के समान हो जायें, तो वह दण्ड कहलाता है। जब यह दण्ड विदिशाओं में स्थित होता है तो राजाओं के लिए और जब दिशाओं में स्थित होता है तो द्विजातियों के लिए अनिष्टकारी है। दिन निकलने से पहले और मध्य सन्धि में जो दण्ड दिखलाई दे तो शस्त्रभय और रोग-भय करने वाला होता है, शुक्लादि वर्ण का हो तो ब्राह्मणों को कष्टकारक, भयदायक और अर्थविनाश करने वाला होता है।

आकाश में सूर्य के ढकने वाले दही के समान किनारेदार नीले मेघ को अभ्र-तरु कहते हैं। यह नीले रंग का मेघ यदि नीचे की ओर मुख किये हुए मालूम पड़े तो अधिक वर्षा करता है। अभ्रतरु शत्रु के ऊपर आक्रमण करने वाले राजा के पीछे-पीछे चलकर अकस्मात् शान्त हो जाय तो युवराज और मन्त्री का नाश होता है।

नील कमल, वैडूर्य और पद्मकेसर के समान कान्तियुक्त, वायुरहित सन्ध्या सूर्य की किरणों को प्रकाशित करे तो घोर वर्षा होती है। इस प्रकार की सन्ध्या का फल तीन दिनों में प्राप्त हो जाता है। यदि सन्ध्या समय गन्धर्वनगर, कुहासा और धूम छाये हुए दिखलाई पड़े तो वर्षा की कमी होती है। सन्ध्याकाल में शस्त्र धारण किए हुए नर रूपधारी के समान मेघ सूर्य के सम्मुख छिन्न-भिन्न हों तो शत्रुभय होता है। शुक्लवर्ण और सुन्दर किनारी वाले मेघ सन्ध्या समय में सूर्य को आच्छादित करें तो वर्षा होने का योग समझना चाहिए। सूर्य के उदयकाल में शुक्ल वर्ण की परिधि दिखलाई दे तो राजा को विपद् होती है, रक्तवर्ण हो तो सेना की और कनकवर्ण की हो तो बल और पुरुषार्थ की वृद्धि होती है। प्रातःकालीन सन्ध्या के समय सूर्य के दोनों ओर की परिधि, यदि शरीर वाली हो जाय तो बहुत जल-वृष्टि होती है और सब परिधि दिशाओं को घेर ले तो जल का कण भी नहीं बरसता। सन्ध्या काल में मेघ, ध्वज, छत्र, पर्वत, हाथी और घोड़े का रूप धारण करें तो जय का कारण है और रक्त के समान लाल हों तो युद्ध का कारण होते हैं। पलाल के धुएँ के समान स्निग्ध मूर्तिधारी मेघ राजाओं के बल को बढ़ाते हैं। सन्ध्या काल में सूर्य का प्रकाश यदि तीक्ष्ण आकार हो या नीचे की ओर झुके आकार का हो तो मंगल होता है। सूर्य के सम्मुख होकर पक्षी, गीदड़ और मृग सन्ध्याकाल में शब्द करें तो सुभिक्ष का नाश होता है, प्रजा में आपस में संघर्ष होता है और अनेक प्रकार से देश में कलह एवं उपद्रव होते हैं।

यदि सूर्योदय काल में दिशाएँ पीत, हरित और चित्र-विचित्र वर्ण की मालूम हों तो सात दिन में प्रजा में भयंकर रोग, नील वर्ण की मालूम हों तो समय पर वर्षा और कृष्ण वर्ण की मालूम हों तो बालकों में रोग फैलता है। यदि सायं-कालीन सन्ध्या के समय दक्षिण दिशा से मेघ आते हुए दिखलाई पड़ें तो आठ दिनों तक वर्षाभाव, पश्चिम दिशा से आते हुए मालूम पड़ें तो पाँच दिनों का वर्षाभाव, उत्तर दिशा से आते हुए मालूम पड़ें तो खूब वर्षा और पूर्व दिशा से आते हुए मेघ गर्जन सहित दिखलाई पड़ें तो आठ दिनों तक मूसलधार वर्षा होने की सूचना मिलती है। प्रातःकालीन और सायंकालीन सन्ध्याओं का वर्ण एक समान हो तो एक महीने तक मसाला और तिलहन का भाव सस्ता, सुवर्ण और चाँदी का भाव महँगा तथा वर्ण परिवर्तन हो तो सभी प्रकार की वस्तुओं के भाव नीचे गिर जाते हैं।

ज्येष्ठ कृष्ण प्रतिपदा को प्रातःकालीन सन्ध्या श्वेत वर्ण की हो तो आषाढ़ में श्रेष्ठ वर्षा, लाल वर्ण की हो तो आषाढ़ में वर्षा का अभाव और श्रावण में साधारण वर्षा, पीत वर्ण की हो तो भी आषाढ़ में साधारण वर्षा एवं विचित्र वर्ण की हो तो आगामी वर्षा ऋतु में सामान्य रूप से अच्छी वर्षा होती है। उक्त तिथि को

सायंकालीन सन्ध्या श्वेत या रक्त वर्ण की हो तो सात दिन के उपरान्त वर्षा एवं मिश्रित वर्ण की हो तो वर्षा ऋतु में अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ कृष्ण द्वितीया को प्रातःकालीन सन्ध्या श्वेत वर्ण की हो तो वर्षा ऋतु में अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ कृष्ण द्वितीया प्रातःकालीन सन्ध्या श्वेतवर्ण की हो और पूर्व दिशा से बादल घुमड़कर एकत्र होते दिखलाई पड़ें तो आषाढ़ में वर्षा का अभाव और वर्षा ऋतु में भी अल्प वर्षा तथा सायंकालीन सन्ध्या में बादलों की गर्जना सुनाई पड़े या बूंदा-बूंदी हो तो घोर दुर्भिक्ष का अनुमान करना चाहिए। उक्त प्रकार की सन्ध्याएँ व्यापार में लाभ सूचित करती हैं। सट्टे के व्यापारियों के लिए उत्तम फल देती है। वस्तुओं के भाव प्रतिदिन ऊँचे उठते जाते हैं। सभी चिकने पदार्थ और तिलहन आदि का भाव कुछ सस्ता होता है। उक्त सन्ध्या का फल एक महीने तक प्राप्त होता है। यह सन्ध्या जनता में रोगों की उत्पन्नकारक होती है। ज्येष्ठ कृष्ण तृतीया का क्षय हो और इस दिन चतुर्थी पंचमी तिथि से विद्ध हो तो उक्त तिथि की प्रातःकालीन सन्ध्या अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। यदि इस प्रकार की सन्ध्या में अर्धोदय के समय सूर्य के चारों ओर नीलवर्ण का मंडलाकार परिवेष दिखलाई पड़े तो माघ और फाल्गुन मास में भूकम्प होने की सूचना समझनी चाहिए। इन दोनों महीनों में भूकम्प के साथ और भी प्रकार की अनिष्ट घटनाएँ घटित होती हैं। अनेक स्थानों पर जनता में संघर्ष होता है, गोलियाँ चलती हैं और रेल या विमान दुर्घटनाएँ भी घटित होती हैं। आकाश में ओले बरसते हैं तथा दुर्घटना द्वारा किसी प्रसिद्ध व्यक्ति की मृत्यु होती है। एक बार राज्य में क्रान्ति होती है तथा ऐसा लगता है कि राज्य-परिवर्तन ही होने वाला है। चैत्र में जाकर जनता में आत्म-विश्वास उत्पन्न होता है तथा सभी लोग प्रेम और श्रद्धा के साथ कार्य करते हैं। यदि उक्त प्रकार की सन्ध्या का वर्ण रक्त और श्वेत मिश्रित हो तो यह सन्ध्या सुकाल तथा समयानुकूल वर्षा और अमन-चैन की सूचना देती है। यदि उक्त प्रकार की सन्ध्या को उत्तर दिशा से सुमेरु पर्वत के आकार के बादल उठें और वे सूर्य को आच्छादित कर लें तो विश्व में शान्ति समझनी चाहिए। सायंकालीन सन्ध्या यदि इस दिन हँसमुख मालूम पड़े तो आषाढ़ में खूब वर्षा और रोती हुई मालूम पड़े तो वर्षाभाव जानना चाहिए।

ज्येष्ठ कृष्ण षष्ठी को आश्लेषा नक्षत्र हो और सायंकालीन सन्ध्या रक्त-वर्ण भास्वर रूप हो तो आगामी वर्ष अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। इस सन्ध्या के दर्शक मीन, कर्क और मकर राशि वाले व्यक्तियों को कष्ट होता है और अवशेष राशि वाले व्यक्तियों का वर्ष आनन्दपूर्वक व्यतीत होता है। प्रातः-कालीन सन्ध्या इस तिथि की रक्त, श्वेत और पीतवर्ण की उत्तम मानी गई है और अवशेष वर्ण की सन्ध्या हानिकारक होती है। ज्येष्ठ कृष्ण सप्तमी को उदय-

कालीन सन्ध्या में सिंह की आकृति के बादल दिखलाई पड़ें तो वर्षाभाव और निरभ्र आकाश हो तो यथोचित वर्षा तथा श्रेष्ठ फसल उत्पन्न होती है। सायं सन्ध्या में अग्निकोण की ओर रक्त वर्ण के बादल तथा उत्तर दिशा में श्वेत वर्ण के बादल सूर्य को आच्छादित कर रहे हों तो इसका फल देश के पूर्व भाग में यथोचित जलवृष्टि और पश्चिम भाग में वर्षा की कमी तथा सुवर्ण, चाँदी, मोती, माणिक्य, हीरा, पद्मराग, गोमेद आदि रत्नों की कीमत तीन दिनों के पश्चात् ही बढ़ती है। वस्त्र और खाद्यान्न का भाव कुछ नीचे गिरता है। ज्येष्ठ कृष्ण अष्टमी को भी प्रातः सन्ध्या निरभ्र और निर्मल हो तो आषाढ़ कृष्ण पक्ष में वर्षा होती है। यदि यह सन्ध्या मेघाच्छन्न हो तो वर्षाभाव रहता है तथा आषाढ़ का महीना प्रायः सूखा निकल जाता है। उक्त तिथि को सायं सन्ध्या मिश्रित वर्ण हो तो फसल उत्तम होती है तथा व्यापार में लाभ होता है। ज्येष्ठ कृष्णा नवमी की प्रातःसन्ध्या रक्त के समान लाल वर्ण की हो तो घोर दुर्भिक्ष की सूचक तथा सेना में विद्रोह कराने वाली होती है। सायंकालीन सन्ध्या उक्त तिथि को श्वेत वर्ण की हो तो सुभिक्ष और सुकाल की सूचना देती है। यदि उक्त तिथि को विशाखा या शत-भिषा नक्षत्र हो तथा उस तिथि का क्षय हो तो इस सन्ध्या की महत्ता फलादेश के लिए अधिक बढ़ जाती है। क्योंकि इसके रंग, आकृति और सौम्य या दुर्भग द्वारा अनेक प्रकार के स्वभाव-गुणानुसार फलादेश निरूपित किये गये हैं। यदि ज्येष्ठ कृष्ण दशमी की प्रातःकालीन सन्ध्या स्वच्छ और निरभ्र हो तो आषाढ़ में खूब वर्षा एवं श्रावण में साधारण वर्षा होती है। सायं सन्ध्या स्वच्छ और निरभ्र हो तो सुभिक्ष की सूचना देती है। ज्येष्ठ कृष्णा एकादशी को प्रातःसन्ध्या धूम्र वर्ण की मालूम हो तो भय, चिन्ता और अनेक प्रकार के रोगों की सूचना समझनी चाहिए। इस तिथि की सायं सन्ध्या स्वच्छ और निरभ्र हो तो आषाढ़ में वर्षा की सूचना समझ लेनी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्णा द्वादशी की प्रातःसन्ध्या भास्वर हो और सायं सन्ध्या मेघाच्छन्न हो तो सुभिक्ष की सूचना समझनी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्णा त्रयोदशी की प्रातः सन्ध्या निरभ्र हो तथा सायं सन्ध्या काल में परिवेष दिखलाई पड़े तो श्रावण में वर्षा, भाद्रपद में जल की कमी एवं वर्षा ऋतु में खाद्यान्नों की महँगी समझ लेनी चाहिए। यदि ज्येष्ठ चतुर्दशी की सन्ध्याएँ परिघ या परिधि से युक्त हों तथा सूर्य का त्रिमंडलाकार परिवेष दिखलाई पड़े तो महान् अनिष्ट की सूचना समझनी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्णा अमावस्या और शुक्ला प्रतिपदा इन दोनों तिथियों की दोनों ही सन्ध्याएँ छिद्र युक्त विकृत आकृति वाली और परिवेष या परिधयुक्त दिखलाई दें तो वर्षा साधारण होती है और फसल भी साधारण ही होती है। इस प्रकार की सन्ध्या तिलहन, गुड़ और वस्त्र की विशेष उपज की सूचना देती है। ज्येष्ठ मास की अवशेष तिथियों की सन्ध्या के वर्ण-

आकृति के अनुसार फलादेश अवगत करना चाहिए। आषाढ़ मास में कृष्ण प्रतिपदा की सन्ध्या विशेष महत्वपूर्ण है। इस दिन दोनों ही सन्ध्या स्वच्छ, निरभ्र और सौम्य दिखलाई पड़ें तो सुभिक्ष नियमतः होता है। नागरिकों में शान्ति और सुख व्याप्त होता है। यदि इस दिन की किसी भी सन्ध्या में इन्द्रधनुष दिखलाई पड़े तो आगामी उपद्रवों की सूचना समझनी चाहिए। आषाढ़ मास की अवशेष तिथियों की सन्ध्या का फल पूर्वोक्त प्रकार से ही समझना चाहिए। स्वच्छ, सौम्य और श्वेत, रक्त, पीत और नील वर्ण की सन्ध्या अच्छा फल सूचित करती है और मलिन, विकृत आकृति तथा छिद्र युक्त सन्ध्या अनिष्ट फल सूचित करती है।

अष्टमोऽध्यायः

अतः परं प्रवक्ष्यामि मेघनामपि लक्षणम्।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वशः ॥1॥

सन्ध्या का लक्षण और फल निरूपण करने के उपरान्त अब मेघों के लक्षण और फल का प्रतिपादन करते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं—प्रशस्त—शुभ और अप्रशस्त—अशुभ ॥1॥

यदांजननिभो मेघः[1] शान्तायां दिशि दृश्यते।
स्निग्धो मन्दगतिश्चापि तदा विन्द्याज्जलं शुभम् ॥2॥

यदि अंजन के समान गहरे काले मेघ पश्चिम दिशा में दिखलाई पड़ें और वे चिकने तथा मन्द गति वाले हों तो भारी जल-वृष्टि होती है ॥2॥

[2]पीतपुष्पनिभो यस्तु यदा मेघः समुत्थितः।
शान्तायां यदि दृश्येत स्निग्धो वर्षं तदुच्यते ॥3॥

पीले पुष्प के समान स्निग्ध मेघ पश्चिम दिशा में स्थित हों तो जल की वृष्टि तत्काल कराते हैं। इस प्रकार के मेघ वर्षा के कारक माने जाते हैं ॥3॥

1 देवः मु० । 2 तीन और चार संख्या वाले श्लोक मुद्रित प्रति में नहीं है।

रक्तवर्णो यदा मेघः शान्तायां दिशि दृश्यते।
स्निग्धो मन्दगतिश्चापि तदा विन्द्याज्जलं शुभम् ॥4॥

लाल वर्ण के तथा स्निग्ध और मन्द गति वाले मेघ पश्चिम दिशा में दिखलाई दें तो अच्छी जल-वृष्टि होती है ॥4॥

शुक्लवर्णो यदा मेघः शान्तायां दिशि दृश्यते।
स्निग्धो मन्दगतिश्चापि निवृत्तः[1] स जलावहः[2] ॥5॥

श्वेत वर्ण के स्निग्ध और मन्द गति वाले पश्चिम दिशा में दिखलाई दें तो जितने क्षण उनमें छाया है उतनी वर्षा करके वे निवृत्त हो जाते हैं ॥5॥

स्निग्धाः सर्वेषु वर्णेषु स्वां दिशं संसृता यदा।
[3]स्वर्णविजयं कुर्युर्दिक्षु शान्तासु ये स्थिताः ॥6॥

यदि पश्चिम दिशा में स्थित मेघ स्निग्ध हों तो सब वर्णों की विजय करते हैं और अपने-अपने वर्ण के अनुसार अपनी-अपनी दिशा में स्निग्ध मेघ स्थित हों तो वर्ण के अनुसार जय करते हैं ॥6॥

जाति	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
जातिवर्ण	श्वेत	रक्त	पीत	कृष्ण
जातिदिशा	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम

यथास्थितं शुभं [4]मेघमनुपश्यन्ति[5] पक्षिणः[6]।
जलाशयः जलधरास्तदा विन्द्याज्जलं शुभम्[7] ॥7॥

यदि शुभ मेघ पक्षिगण और जलाशय रूप दिखलाई दें तो अच्छी वर्षा होती है और यह वर्षा फसल को अधिक लाभ पहुँचाती है ॥7॥

स्निग्धवर्णाश्च ते (ये) मेघा स्निग्धाश्च ते (ये) सदा।
मन्दगाः सुमुहूर्ताश्च ये (ते) सर्वत्र जलावहाः ॥8॥

यदि स्निग्ध—सौम्य, मृदुल शब्द वाले, मन्द गति वाले और उत्तम मुहूर्त वाले मेघ दिखलाई पड़ें तो सर्वत्र वर्षा होती है ॥8॥

सुगन्धगन्धा ये मेघाः सुस्वराः[8] स्वादुसंस्थिताः।
मधुरोदकाश्च[9] ये मेघा[10] जलाय[11] जलदास्तथा ॥9॥

---

1 निवृत्तः मु० C । 2 जलावहः मु० C । 3 सवर्णं मु० । 4 अथ मु० C । 5 पश्यति मु० C । 6. दक्षिणः मु० C । 7. शिवम् मु० । 8. [illegible] मु० A [illegible] मु० C । 9 मधुरतोयाः मु० C । 10 मेघा मु० C । 11 जलदा मु० C ।

सुगन्ध—केशर और कस्तूरी के समान गन्ध वाले, मनोहर गर्जन करने वाले, स्वादु रस वाले, मीठे जल वाले मेघ सुगन्धित जल की वर्षा करते हैं ॥9॥

मेघा[1] यदाऽभिवर्षन्ति प्रयाणे पृथिवीपतेः ।
मधुराः मधुरेणैव[3] तदा सन्धिर्भविष्यति ॥10॥

राजा के आक्रमण के समय मनोहर और मधुर शब्द वाले मेघ वर्षा करें तो युद्ध न होकर परस्पर सन्धि हो जाती है ॥10॥

पृष्ठतो वर्षणः श्रेष्ठं[4] अग्रतो विजयंकरम् ।
मेघाः कुर्वन्ति ये दूरे सगर्जित-सविद्युतः ॥11॥

राजा के प्रयाण के समय यदि मेघ दुर्ग पर गर्जना और बिजली सहित दूर से [illegible] और पृष्ठ भाग पर हों तो श्रेष्ठ जानना चाहिए और अग्र भाग पर हों तो विजयप्रद समझना चाहिए ॥11॥

मेघशब्देन महता यदा निर्याति पार्थिवः ।
पृष्ठतो गर्जमानेन[5] तदा जयति दुर्जयम् ॥12॥

यदि राजा के प्रयाण के समय पीछे के भाग में मेघ बड़ी गर्जना करें तो दुर्जय शत्रु पर भी विजय संभव हो होती है ॥12॥

मेघशब्देन महता यदा तिर्यग् प्रधावति ।
न तत्र जायते सिद्धिरुभयोः[6] परिसैन्ययोः[7] ॥13॥

यदि आक्रमण काल में मेघ सम्मुख या पृष्ठ भाग में गर्जना न कर तिर्यक् बायें या दायें भाग गर्जना करें तो यायी और स्थायी इन दोनों ही सेनाओं को सिद्धि नहीं होती अर्थात् दोनों ही सेनाएँ परस्पर में विद्रूप्त करती हुई असफल रहती हैं ॥13॥

मेघा यत्राभिवर्षन्ति स्कन्धावार[8] समन्ततः ।
ससाधका[9] विद्रवते[10] सा [11]चमूर्नात्र संशयः ॥14॥

मेघ जिस स्थान पर मूसलाधार पानी बरसावें वहाँ पर नायक और सेना दोनों ही पराजित होते हैं, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है ॥14॥

---

1. मेघो मु॰ A. । 2. मधुराः । 3. मधुरस्वनैः । 4. श्रेष्ठं मु॰ A. मेघ मु॰ C. । 5. गर्जमाना मु॰ A. गर्जता । 6. मुद्गरूभयोः मु॰ । 7. परिसैन्ययोः मु॰ । 8. स्कन्धावारं मु॰ A. । 9. ससाधका मु॰ C. । 10. विद्रवन्ति मु॰ C. । 11. चमू मु॰ C. ।

रूक्षा वाता: प्रकुर्वन्ति व्याधयो विष्टगन्धिता: ।
कुशब्दाश्च विवर्णाश्च मेघो वर्षं न कुर्वते ॥15॥

रूक्ष वायु विष्टा गन्ध के समान गन्ध वाली बहती हो तो व्याधि उत्पन्न करती है। कुशब्द अर्थात् कठोर शब्द और विकृत वर्ण वाली हो तो मेघ जल-वृष्टि नहीं करते ॥15॥

सिंहा[1] शृगालमार्जारा व्याघ्रमेघा: [2]द्रवन्ति ये[3] ।
महता भीम[4] शब्देन रुधिरं वर्षन्ति ते घना: ॥16॥

जो मेघ सिंह, सियार, बिल्ली, चीता की आकृति वाले होकर बरसें और भारी कठोर वर्षा करें तो इस प्रकार के मेघों का फल रुधिर की वर्षा करना है ॥16॥

पक्षिणश्चापि क्रव्यादा वा पश्यन्ति[5] समुत्थिता: ।
मेघास्तदाऽपि रुधिरं[6] [7]वर्षं वर्षन्ति ते घना: ॥17॥

यदि मांसभक्षी पक्षियों---गृद्ध आदि पक्षियों की आकृति वाले मेघ तथा उड़ते हुए पक्षियों की आकृति वाले मेघ दिखलाई पड़ें तो वे रुधिर की वर्षा करते हैं ॥17॥

अनावृष्टिभयं घोरं दुर्भिक्षं मरणं[8] तथा ।
निवेदयन्ति ते मेघा ये भवन्तीदृशा[9] दिवि[10] ॥18॥

उपर्युक्त अशुभ आकृतिवाले मेघ अनावृष्टि, घोरभय, दुर्भिक्ष, मृत्यु आदि फलों को करने वाले होते हैं। अर्थात् मांसभक्षी पशु और मांसभक्षी पक्षियों की आकृतिवाले मेघ अत्यन्त अशुभ सूचक होते हैं ॥18॥

तिथौ [11]मुहूर्त्तकरणे नक्षत्रे शकुने[12] शुभे[13] ।
सम्भवन्ति यदा मेघा: पापदास्ते भयंकरा: ॥19॥

अशुभ तिथि, मुहूर्त, करण, नक्षत्र और शकुन में यदि मेघ आकाश में आच्छादित हों तो भयंकर पाप का फल देने वाले होते हैं ॥19॥

एवं लक्षणसंयुक्ताश्चमूं वर्षन्ति ये घना: ।
चमूं सनायकां सर्वां हन्तुमाख्यान्ति सर्वश: ॥20॥

---

1. सिंह मु० A. । 2. रवन्ति मु० A. । 3. यत् मु० A. । 4. भेद मु० A. B. D. । 5. पश्यन्ते: मु० B. आदृश्यन्ते मु० C. चाप्यन्ते मु० D. । 6. रुधिरं मु० B. । 7. वर्षन्ते तत दर्शने मु० । 8. मारकं मु० A. । 9. भवन्ति दृशा मु० B. D. । 10. भुवि मु० A. । 11. मूहूर्तं मु० A. D. । 12. करणे मु० C. । 13. तथा मु० A. ।

यदि उपर्युक्त आकृति और लक्षणवाले मेघ युद्धस्थल में स्थित सेना पर बहुत वर्षा करें तो सेना और उसके नायक सभी मारे जाते हैं ॥20॥

रक्तेः पांशुः सधूमं वा क्षौद्र[1] केशाऽस्थिशर्करा:[2]।
मेघाः वर्षन्ति विषये यस्य राज्ञो हतस्तु सः ॥21॥

धूलि, धूम्र, मधु, केश, अस्थि और खांड के समान लाल वर्ण के मेघ वर्षा करें तो देश का राजा मारा जाता है ॥21॥

क्षार वा कटुकं वाऽथ [3]दुर्गन्धं [4]सस्यनाशनम् ।
यस्मिन् देशेऽभिवर्षन्ति मेघा देशो[5] विनश्यति[6] ॥22॥

जिस देश में धान्य को नाश करनेवाले क्षार—लवणयुक्त, कटुक—चरपरे रस और दुर्गन्धित रस की मेघ वर्षा करें तो उस देश का नाश होता है ॥22॥

प्रयात[7] पार्थिवं यत्र मेघो वित्रास्य वर्षति ।
वित्रस्तो बध्यते राजा विपरीतस्तदाऽपरे ॥23॥

राजा के प्रयाण के समय त्रासयुक्त मेघ बरसें तो राजा का त्रासयुक्त वध होता है। यदि त्रासयुक्त वर्षा न हो तो ऐसा नहीं होता ॥23॥

सर्वत्रैव प्रयाणेन नृपो येनाभिषिच्यते ।
रुधिरादि[8]-विशेषेण सर्वघाताय निर्दिशेत् ॥24॥

राजा के आक्रमण के समय वर्षा से देश का सिंचन हो तो सबों के घात की सम्भावना समझनी चाहिए ॥24॥

मेघाः सविद्युतश्चैव[9] सुगन्धाः सुस्वराश्च[10] ये ।
सुवेषाश्च[11] सुवाताश्च[12] [13]सुधियाश्च सुभिक्षदाः ॥25॥

बिजली सहित, सुगन्धित, मधुर स्वर वाले, सुन्दर वर्ण और आकृति वाले, शुभ घोषणा वाले और अमृत समान वर्षा करने वाले मेघों को सुभिक्ष का सूचक समझना चाहिए ॥25॥

अभ्राणां यानि रूपाणि सन्ध्यायामपि यानि च ।
मेघेषु[14] तानि सर्वाणि समासव्यासतो विदुः ॥26॥

---

1. क्षौद्रं मु० B । 2. रक्तकेश मु० B । 3. दुर्ग मु० B. । 4. सस्या मु० A. । 5. मेघाद्देशे । 6. विनश्यन्ति मु० C. । 7. प्रयान्ति मु० । 8. नृप सरुधिराज्यं च मु० A. B. D. । 9. सौवर्ण मु० C. । 10. सुरभा मु० C. । 11. अवेषा मु० C. । 12. सुवेषा मु० C. । 13. सुधी पार्श्वं मु० B. मधाया मु० D. स्वमार्ग मु० C. । 14. अमेघे मु० C. ।

बादल, उल्का और सन्ध्या का जैसा निरूपण किया गया है, उसी प्रकार का संक्षेप और विस्तार से मेघों का भी समझना चाहिए ॥26॥

उल्कावत् साधनं [1]ज्ञेयं मेघेष्वपि [2]तदादिशेत् ।
अतः परं प्रवक्ष्यामि [3]वातानामपि लक्षणम् ॥27॥

इस मेघवर्णन अध्याय का भी उल्का की तरह ही फलादेश अवगत कर लेना चाहिए। इसके पश्चात् अब आगे वायु-अध्याय का निरूपण किया जायगा ॥27॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते मेघकाण्डो नामाष्टमोऽध्यायः ।

विवेचन—मेघों की आकृति, उनका काल, वर्ण, दिशा प्रभृति के द्वारा शुभाशुभ फल का निरूपण मेघ-अध्याय में किया गया है। यहाँ एक विशेष बात यह है कि मेघ जिस स्थान में दिखलाई पड़ते हैं उसी स्थान पर यह फल विशेष रूप से घटित होता है। इस अध्याय का प्रयोजन भी वर्षा, सुकाल, फसल की उत्पत्ति इत्यादि के सम्बन्ध में ही विशेष रूप से फल बतलाना है। यों तो पहले के अध्यायों द्वारा भी वर्षा और सुभिक्ष सम्बन्धी फलादेश निरूपित किया गया है, पर इस अध्याय में भी यही फल प्रतिपादित है। मेघों की आकृतियाँ चारों वर्ण के व्यक्तियों के लिए भी शुभाशुभ बतलाती हैं। अतः सामाजिक और वैयक्तिक इन दोनों ही दृष्टिकोणों से मेघों के फलादेश का विवेचन किया जाएगा।

मेघों का विचार ऋतु के क्रमानुसार करना चाहिए। वर्षा ऋतु के मेघ केवल वर्षा की सूचना देते हैं। शरद् ऋतु के मेघ शुभाशुभ अनेक प्रकार का फल सूचित करते हैं। ग्रीष्म ऋतु के मेघों से वर्षा की सूचना तो मिलती ही है, पर ये विजय, यात्रा, लाभ अलाभ, इष्ट, अनिष्ट, जीवन, मरण आदि को भी सूचित करते हैं। मेघों की भी भाषा होती है। जो व्यक्ति मेघों की भाषा—गर्जना को समझ लेते हैं, वे कई प्रकार के महत्त्वपूर्ण फलादेशों की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। पशु, पक्षी और मनुष्यों के समान मेघों की भी भाषा होती है और गर्जन-तर्जन द्वारा अनेक प्रकार का शुभाशुभ प्रकट हो जाता है। यहाँ सर्वप्रथम ग्रीष्म ऋतु के मेघों का निरूपण किया जाएगा। ग्रीष्म ऋतु का समय फाल्गुन से ज्येष्ठ तक माना जाता है। यदि फाल्गुन के महीने में अंजन के समान काले-काले मेघ दिखलाई पड़ें तो इनका फल दर्शकों के लिए शुभ, यशप्रद और आर्थिक लाभ देने वाला होता है। जिस स्थान पर उक्त प्रकार के मेघ दिखलाई पड़ते हैं, उस स्थान पर अन्न का भाव सस्ता होता है, व्यापारिक वस्तुओं में हानि तथा भोगोपभोग की वस्तुएँ प्रचुर

1. सर्व मु० C. । 2. सभा मु० C. । 3. [illegible] मु० B. D. ।

परिमाण में उपलब्ध होती है। वस्त्र के भाव साधारण रूप से कुछ ऊँचे चढ़ते हैं। स्निग्ध, श्वेत और मनोहर आकृति वाले मेघ जनता में शान्ति, सुख, लाभ और हर्ष सूचक होते हैं। व्यापारियों को वस्तुओं में साधारणतया लाभ होता है। ग्रीष्म ऋतु के अवशेष महीनों में सजल मेघ जहाँ दिखलाई पड़ें उस प्रदेश में दुर्भिक्ष, अन्न की फसल की कमी, जनता को आर्थिक कष्ट एवं आपस में मनमुटाव उत्पन्न होता है। चैत्र मास के कृष्ण पक्ष के मेघ साधारणतया जनता में उल्लास, आगामी खेती का विकास और सुभिक्ष की सूचना देते हैं। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा को वर्षा करने वाले मेघ जिस क्षेत्र में दिखलाई पड़ें उस क्षेत्र में आर्थिक संकट रहता है। हैजा और चेचक की बीमारी विशेष रूप से फैलती है। यदि इस दिन रक्त वर्ण के मेघ आकाश में संघर्ष करते हुए दिखलाई पड़ें तो वहाँ सामाजिक संघर्ष होता है। चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को भी मेघों की स्थिति का विचार किया जाता है। यदि इस दिन गर्जन-तर्जन करते हुए मेघ आकाश में बूँदा-बूँदी करें तो उस प्रदेश के लिए भयदायक समझना चाहिए। फसल की उत्पत्ति भी नहीं होती है तथा जनता में परस्पर संघर्ष होता है। चैत्री पूर्णिमा को पीतवर्ण के मेघ आकाश में घूमते हुए दिखलाई पड़ें तो आगामी वर्ष उस प्रदेश में फसल की क्षति होती है तथा पन्द्रह दिनों तक अन्न का भाव महँगा रहता है। सोना और चाँदी के भाव में घटा-बढ़ी होती है।

शरद् ऋतु के मेघ वर्षा और सुभिक्ष के साथ उस स्थान की आर्थिक और सामाजिक उन्नति-अवनति की भी सूचना देते हैं। यदि कार्तिक की पूर्णिमा को मेघ वर्षा करें तो उस प्रदेश की आर्थिक स्थिति दृढ़तर होती है, फसल भी उत्तम होती है तथा समाज में शान्ति रहती है। पशुधन की वृद्धि होती है, दूध और घी की उत्पत्ति प्रचुर परिमाण में होती है। उस प्रदेश के व्यापारियों को भी अच्छा लाभ होता है। जो व्यक्ति कार्तिकी पूर्णिमा को नील रंग के बादलों को देखता है, उसके उदर में भयंकर पीड़ा तीन महीनों के भीतर होती है। पीत वर्ण के मेघ उक्त दिन को दिखलाई पड़ें तो किसी स्थान विशेष से आर्थिक लाभ होता है। श्वेत वर्ण के मेघ के दर्शन से व्यक्ति को सभी प्रकार के लाभ होते हैं। मार्गशीर्ष मास की कृष्ण प्रतिपदा को प्रातःकाल वर्षा करने वाले मेघ गोधूम वर्ण के दिखलाई पड़ें तो उस प्रदेश में महामारी की सूचना अवगत करनी चाहिए। इस दिन कोई व्यक्ति स्निग्ध और सौम्य मेघों का दर्शन करे तो अपार लाभ, रूक्ष और विकृत वर्ण के मेघों का दर्शन करे तो आर्थिक क्षति होती है। उक्त प्रकार के मेघ वर्षा की भी सूचना देते हैं। आगामी वर्ष में उस प्रदेश में फसल अच्छी होती है। विशेषतः गन्ना, कपास, धान, गेहूँ, चना और तिलहन की उपज अधिक होती है। व्यापारियों के लिए उक्त प्रकार के मेघ का दर्शन लाभप्रद होता है। मार्गशीर्ष

कृष्णा अमावस्या को छिद्र युक्त मेघ बूंदा-बूंदी के साथ प्रातःकाल से सन्ध्याकाल तक अवस्थित रहें तो उस प्रदेश में वर्तमान वर्ष में फसल अच्छी तथा आगामी वर्ष में अनिष्टकारक होती है। इस महीने की पूर्णिमा को सन्ध्या समय रक्त-पीत वर्ण के मेघ दिखलाई पड़ें तथा गर्जन के साथ वर्षण भी करें तो निश्चय से उस प्रदेश में आगामी आषाढ़ मास में सम्यक् वर्षा होती है तथा वहाँ के निवासियों को सन्तोष और शान्ति की प्राप्ति होती है। यदि उक्त दिन प्रातःकाल आकाश निरभ्र रहे तो आगामी वर्ष वर्षा साधारण होती है तथा फसल भी साधारण ही होती है। जो व्यक्ति उक्त तिथि को अंजनवर्ण के समान मेघों का दर्शन प्रातःकाल ही करता है, उसे राजसम्मान प्राप्त होता है, तथा किसी प्रकार की उपाधि भी उसे प्राप्त होती है। रक्त वर्ण के मेघ का दर्शन इस दिन व्यक्तिगत रूप से अनिष्ट-कारक माना गया है। यदि कोई व्यक्ति उक्त तिथि को मध्य रात्रि में सछिद्र आकाश का दर्शन करे तथा दर्शन करने के कुछ ही समय उपरान्त वर्षा होने लगे तो व्यक्तिगत रूप से इस प्रकार के मेघ का दर्शन बहुत उत्तम होता है। पृथ्वी से निधि प्राप्त होती है तथा धार्मिक कार्यों के करने में विशेष प्रवृत्ति बढ़ती है। संसार में जिन-जिन स्थानों पर उक्त तिथि को वर्षा करते हुए मेघ देखे जाते हैं, उन-उन स्थानों पर सुभिक्ष होता है तथा वर्तमान और आगामी दोनों ही वर्ष श्रेष्ठ समझे जाते हैं। पौष मास की अमावस्या को आकाश में बिजली चमकने के उपरान्त वर्षा करते हुए मेघ दिखलाई पड़ें तो उत्तम फल होता है। इस दिन श्वेत वर्ण के मेघों का दर्शन बहुत शुभ माना जाता है। पौष मास की अमावस्या को यदि सोमवार, शुक्रवार और गुरुवार हो और इस दिन मेघ आकाश में घिरे हुए हों तो जल की वर्षा आगामी वर्ष अच्छी होती है। फसल भी उत्तम होती है और प्रजा भी सुखी रहती है। यदि यही तिथि शनिवार, रविवार और मंगलवार को हो तथा आकाश निरभ्र हो या सछिद्र विकृत वर्ण के मेघ आकाश में आच्छादित हों तो अनावृष्टि होती है और अन्न मँहगा होता है। डाक कवि ने हिन्दी में पौषमास की तिथियों के मेघों का फलादेश निम्न प्रकार बतलाया है:—

पौष इजोड़िया सप्तमी अष्टमी नवमी वाज।
डाकं जलद देखे प्रजा, पूरण सब विधि काज॥

अर्थात्—पौष शुक्ला प्रतिपदा, सप्तमी, अष्टमी, नवमी तिथि को यदि आकाश में बादल दिखलाई पड़ें तो उस वर्ष वर्षा अच्छी होती है। धन-धान्य की उत्पत्ति अधिक होती है और सर्वत्र सुभिक्ष दिखलाई पड़ता है। जो व्यक्ति उन तिथियों में प्रातःकाल या सायंकाल मयूर और हंसाकृति के मेघों का दर्शन करता है, वह जीवन में सभी प्रकार की इच्छाओं को प्राप्त कर लेता है। उक्त

प्रकार के मेघ का दर्शन व्यक्ति और समाज दोनों के लिए मंगल करने वाला होता है।

पौषबदी सतमी तिथि मांही, बिन जल बादल गर्जत आहीं।
पूनो तिथि सावन के मास, अतिशय वर्षा राखो आस ॥
पौषबदी दशमी तिथि मांहीं, जो वर्षे मेघा अधिकाहीं।
तो सावन बदि दशमी दरसे, सो मेघा पुहुमी बहु बरसे ॥
रवि या रवि सुत औ अंगार, पुस अमावस कहत गोआर।
अपन अपन घर चेतहु जाय, रतनक मोल अन्न बिकाय ॥

पौष बदी सप्तमी को बिना जल बरसाये बादल गर्जना करें तो श्रावण पूर्णिमा को अत्यन्त वर्षा होती है। यदि पौष बदी दशमी तिथि को अधिक वर्षा हो तो श्रावण बदी दशमी को इतना अधिक जल बरसता है कि पानी पृथ्वी पर नहीं समाता। पौष अमावस्या, शनिवार और रविवार को मंगलवार हो तो अन्न का भाव अत्यन्त मँहगा होता है। वर्षा की कमी रहती है। पौष मास में वर्षा होना और मेघों का छाया रहना अच्छा समझा जाता है। यदि इस महीने में आकाश निरभ्र दिखलाई पड़े तो दुष्काल के लक्षण समझना चाहिए। पौष पूर्णिमा को प्रातःकाल श्वेत रंग के बादल आकाश में आच्छादित हों तो आषाढ़ और श्रावण मास में अच्छी वर्षा होती है और सभी वर्ण वाले व्यक्ति को आनन्द की प्राप्ति होती है। यदि पौष शुक्ला चतुर्दशी को आकाश में गर्जना करते हुए बादल दिखलाई पड़ें तो भाद्रपद मास में अच्छी वर्षा होती है। माघ मास के मेघों का फल डाक ने निम्न प्रकार बतलाया है—

माघ बदी सतमी के ताईं, जो बिज्जु चमके नभ माईं।
मास बारहों बरसे मेह, मत सोचो चिन्ता तज देह ॥
माघ सुदी पडिवा के मध्य, दमके बिज्जु गरजे बद्ध।
तेल आस सुरही दीनन भार, मँहगो होवे 'डाक' गोआर ॥
माघ बदी तिथि अष्टमी, दशमी पूस अन्हार।
'डाक' मेघ देखी दिना, सावन जलद अपार ॥
माघ द्वितीया चन्द्रमा, वर्षा बिजुली होय।
'डाक' कहथि सुनहु नृपति, अन्नक महँगी होय ॥
माघ तृतीया सुदि में, वर्षा बिजुली देख।
'डाक' कहथि जौ गहुँम अति, मंहग वर्ष दिन लेख ॥
माघ सुदी के चौथ में, जो लागे घन देख।
मँहगो होवे नारियल, रहे न पानहि शेष ॥

माघ पंचमी चन्द्र तिथि, वहय जो उत्तर वाय।
तो जानौ भरि भाद्र में, जल बिन पृथ्वी जाय॥
माघ सुदी षष्ठी तिथि, यदि वर्षा न होय।
'डाक' कपास मँहगो मिले, राखें ता नहि कोय॥

अर्थ—माघ वदी सप्तमी के दिन आकाश में बिजली चमके और बरसते हुए मेघ दिखलाई पड़ें तो अच्छी फसल होती है और वर्षा भी उत्तम होती है। बारह महीनों ही वृष्टि होती रहती है, फसल उत्तम होती है। माघ सुदी प्रतिपदा के दिन आकाश में बिजली चमके, बादल गर्जना करें तो तेल, घृत, गुड़ आदि पदार्थ मँहगे होते हैं। इस दिन का मेघदर्शन वस्तुओं की मँहगाई सूचित करता है। माघ कृष्ण अष्टमी को वर्षा हो तो सुभिक्ष सूचक है। मेघ स्निग्ध और सौम्य आकृति के दिखलाई पड़ें तो जनता के लिए सुखदायी होते हैं। माघ बदी अष्टमी और पौष बदी दशमी को आकाश में बादल हों तथा वर्षा भी हो तो श्रावण के महीने में अच्छी वर्षा होती है। माघ शुक्ला द्वितीया को वर्षा और बिजली दिखलाई पड़े तो जौ और गेहूँ अत्यन्त मँहगे होते हैं। व्यापारियों को उक्त दोनों प्रकार के अनाज के संग्रह में विशेष लाभ होता है। यद्यपि सभी प्रकार के अनाज मँहगे होते हैं, फिर भी गेहूँ और जौ की तेजी विशेष रूप से होती है। यदि माघ शुक्ला चतुर्थी के दिन आकाश में बादल और बिजली दिखलाई पड़े तो नारियल विशेष रूप से मंहगा होता है। यदि माघ शुक्ला पंचमी को वायु के साथ मेघों का दर्शन हो तो भाद्रपद में जल के बिना भूमि रहती है। माघ शुक्ला षष्ठी को आकाश में केवल मेघ दिखलाई पड़ें और वर्षा न हो तो कपास मंहगा होता है। माघ शुक्ला अष्टमी और नवमी को विचित्र वर्ण के मेघ आकाश में दिखलाई पड़ें और हल्की सी वर्षा हो तो भाद्रपद मास में खूब वर्षा होती है।

वर्षा ऋतु के मेघ स्निग्ध और सौम्य आकृति के हों तो खूब वर्षा होती है। आषाढ़ कृष्णा प्रतिपदा के दिन मेघ गर्जन हो तो पृथ्वी पर अकाल पड़ता है और युद्ध होते हैं। आषाढ़ कृष्णा एकादशी को आकाश में वायु, मेघ और बिजली दिखलाई पड़े तो श्रावण और भाद्रपद में अल्पवृष्टि होती है। आषाढ़ शुक्ला तृतीया बुधवार को हो और इस दिन आकाश में मेघ दिखलाई पड़ें तो अधिक वर्षा होती है। श्रावण शुक्ल सप्तमी के दिन आकाश मेघाच्छन्न हो तो देवोत्थान एकादशी पर्यन्त जल बरसता है। श्रावण कृष्ण चतुर्थी को जल बरसे तो उस दिन से 45 दिन तक खूब वर्षा होती है। उक्त तिथि को आकाश में केवल मेघ दिखलाई पड़ें तो भी फसल अच्छी होती है। श्रावण बदी पंचमी को वर्षा हो और आकाश में मेघ छाये रहें तो चातुर्मास पर्यन्त वर्षा होती रहती है। श्रावण मास की अमावस्या सोमवार को हो और इस दिन आकाश में घने मेघ दिखलाई पड़ें तो दुष्काल समझना

चाहिए। इसका फल कहीं वर्षा, कहीं सूखा तथा कहीं पर महामारी और कहीं पर उपद्रव होना समझना चाहिए। भाद्रपद सुदी पंचमी स्वाती नक्षत्र में हो और इस दिन मेघ आकाश में सघन हों तथा वर्षा हो रही तो सर्वत्र सुख-शान्ति व्याप्त होती है और जगत् के सभी दु:ख दूर हो जाते हैं तथा सर्वत्र मंगल होता है। इस महीने में भरणी नक्षत्र में वर्षा हो और मेघ आकाश में व्याप्त हों तो सर्वत्र सुभिक्ष होता है। गेहूँ, चना, जौ, धान, गन्ना, कपास और तिलहन की फसल खूब उत्पन्न होती है। भाद्रपद मास की पूर्णिमा को जल बरसे तो जगत् में सुभिक्ष होता है। भाद्रपद मास में अश्विनी और रोहिणी नक्षत्र में आकाश में बादल व्याप्त हों, पर वर्षा न हो तो पशुओं में भयंकर रोग फैलता है। आर्द्रा और पुष्य में रक्त वर्ण के मेघ संघर्षरत दिखलाई पड़ें तो विद्रोह और अशान्ति की सूचना समझनी चाहिए। यदि इन नक्षत्रों में वर्षा भी हो जाए तो शुभ फल होता है। श्रवण नक्षत्र की वर्षा उत्तम मानी गयी है। भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा को श्रवण नक्षत्र हो और आकाश में मेघ हों तो सुभिक्ष होता है।

नवमोऽध्याय:

अथात: सम्प्रवक्ष्यामि वातलक्षणमुत्तमम्[1]।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वश:[2] ॥1॥

अब मैं वायु का उत्तम लक्षण पूर्वाचार्यों के अनुसार कहूँगा। वायु के द्वारा निरूपित फलादेश के भी दो भेद किये जा सकते हैं---प्रशस्त और अप्रशस्त ॥1॥

वर्षं भयं तथा क्षेमं राज्ञो जय-पराजयम्।
मारुत: कुरुते लोके जन्तूनां पुण्यपापजम्[3] ॥2॥

वायु संसारी प्राणियों के पुण्य एवं पाप से उत्पन्न होने वाले वर्षण, भय, क्षेम और राजा के जय-पराजय को सूचित करती है ॥2॥

1. संक्रमम् मु० C.। 2. पूर्वत: मु०। 3. पापजाम् मु०।

[1]आदानाच्चैव पाताच्च पचनाच्च विसर्जनात् ।
मारुतः सर्वगर्भाणां बलवान्नायकश्च सः ॥3॥

आदान, पातन, पचन और विसर्जन का कारण होने से मारुत बलवान् होता है और सब गर्भों का नायक बन जाता है ॥3॥

दक्षिणस्थां दिशि यदा वायुर्दक्षिणकाष्ठिकः ।
[2]समुद्रानुशयो[3] नाम स गर्भाणां तु सम्भवः ॥4॥

दक्षिण दिशा का वायु जब दक्षिण दिशा में बहता है, तब वह 'समुद्रानुशय' नाम का वायु कहलाता है और गर्भों को उत्पन्न करने वाला भी है ॥4॥

तेन सञ्जनितं गर्भं वायुर्दक्षिण[4]काष्ठिकः ।
धारयेत् धारणे[5] मासे पाचयेत् पाचने तथा ॥5॥

उस समुद्रानुशय वायु से उत्पन्न गर्भ को दक्षिण दिशा का वायु धारण मास में धारण करता है तथा पाचन मास में पकाता है ॥5॥

धारितं पाचितं गर्भं वायुरुत्तरकाष्ठिकः ।
प्रमुंचति यतस्तोयं वर्षं तन्मरुदुच्यते ॥6॥

उस धारण किये तथा पाक को प्राप्त हुए मेघ गर्भ को चूँकि उत्तर दिशा का वायु [illegible] है अतः [illegible] वर्षा करने वाले उस वायु को 'मरुत्' कहते हैं ॥6॥

आषाढीपूर्णिमायां तु पूर्ववातो यदा भवेत् ।
प्रवाति दिवसं सर्वं सुवृष्टिः सुषमा[6] तदा ॥7॥

आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन पूर्व दिशा का वायु यदि सारे दिन चले तो वर्षा काल में अच्छी वर्षा होती है और यह वर्ष अच्छा व्यतीत होता है ॥7॥

वाप्यानि सर्वबीजानि[7] जायन्ते निरुपद्रवम्[8] ।
शूद्राणामुपघाताय सोऽत्र लोके परत्र च ॥8॥

उक्त प्रकार के वायु में बोये गये सम्पूर्ण बीज उत्तम रीति से उत्पन्न होते हैं। परन्तु शूद्रों के लिए यह वायु इस लोक और परलोक में उपघात का कारण है ॥8॥

---

1. अर्थात् चैव धातं च पातनश्च विसर्जनः मु० A. D. । 2. धारयद्गुणारणोसे मु० A. । 3. निशयो मु० B. । 4. मध्यम मु० C. । 5. धारणे मु० A. । 6. सुवृष्टिस्तु [illegible] मु० । 7. सर्वजीवानि मु० B. । 8. [illegible] मु० C. ।

आषाढीपूर्णिमायां तु पश्चिमो यदि मारुतः।
मध्यमं वर्षणं सस्यं धान्यार्घो मध्यमस्तथा ॥14॥

आषाढ़ी पूर्णिमा को यदि पश्चिम वायु चले तो मध्यम प्रकार की वर्षा होती है। तृण और अन्न का मूल्य भी मध्यम—न अधिक मँहगा और न अधिक सस्ता रहता है ॥14॥

उद्विजन्ति[1] च[2] राजानो[3] वैराणि च[4] प्रकुर्वते।
परस्परोपघाताय[5] स्वराष्ट्रपरराष्ट्रयोः ॥15॥

उक्त प्रकार की वायु के चलने से राजा लोग उद्विग्न हो उठते हैं और अपने तथा दूसरों के राष्ट्रों को परस्पर में घात करने के लिए वैर-भाव धारण करने लगते हैं। तात्पर्य यह है कि आषाढ़ी पूर्णिमा को पश्चिम दिशा की वायु चले तो देश और राष्ट्र में उपद्रव होता है। प्रशासन और नेताओं में मतभेद बढ़ता है ॥15॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः स्यादुत्तरो यदि[6]।
वापयेत् सर्वबीजानि सस्यं ज्येष्ठं समृद्ध्यति ॥16॥

आषाढ़ी पूर्णिमा को उत्तर दिशा की वायु चले तो सभी प्रकार के बीजों को बो देना चाहिए; क्योंकि उक्त प्रकार के वायु में बोये गये बीज बहुतायत से उत्पन्न होते हैं ॥16॥

क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं प्रशान्ताः[7] पार्थिवास्तथा।
बहूदकास्तदा[8] मेघा मही[9] धर्मोत्सवाकुला ॥17॥

उक्त प्रकार की वायु क्षेम, कुशल, आरोग्य की वृद्धि का सूचक है, राजा—प्रशासक परस्पर में शान्ति और प्रेम से निवास करते हैं, प्रजा के साथ प्रशासकों का व्यवहार उत्तम होता है। मेघ बहुत जल बरसाते हैं और पृथ्वी धर्मोत्सवों से युक्त हो जाती है ॥17॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः स्यात् पूर्वदक्षिणः।
[10]राजमृत्यु[11]विजानीयाच्छिन्नं सस्यं तथा जलम् ॥18॥

---

1. उद्गच्छन्ते मु० A. B. D.। 2-3. यथा राजा म् A. तथा राजो मु० B. यथा राजा मु० D.। 4. न हि कुर्वते मु० C. प्रवर्तते मु० D.। 5. परस्परं प्रयान्ति मु० A.। 6. तदा मु०। 7. प्रसन्नो मु० A.। 8. बहूदका मु० C.। 9. महा मु० A. D. मध्य मु० C.। 10. राज्ञां मु० A.। 11. मुखं मु०।

आषाढ़ी पूर्णिमा को यदि पूर्व और पश्चिम के बीच—अग्निकोण का वायु चले तो प्रशासक अथवा राजा की मृत्यु होती है। शस्य तथा जल की स्थिति चित्र-विचित्र होती है ॥18॥

क्वचिन्निष्पद्यते सस्यं क्वचिच्चापि विपद्यते।
धान्यार्घो मध्यमो ज्ञेयः तदाऽग्नेश्च भयं नृणाम्[1] ॥19॥

धान्य की उत्पत्ति कहीं होती है और कहीं उस पर आपत्ति आ जाती है। मनुष्य को धान्य का लाभ मध्यम होता है और अग्निभय बना रहता है ॥19॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः स्याद् दक्षिणापरः।
सस्यानामुपघाताय चौराणां तु विवृद्धये[2] ॥20॥

आषाढ़ी पूर्णिमा को यदि दक्षिण और पश्चिम के बीच की दिशा अर्थात् नैऋत्य कोण का वायु चले तो वह धान्यघातक और चोरों की वृद्धिकारक होती है ॥20॥

भस्मपांशुरजस्कीर्णा यदा[3] भवति मेदिनी।
सर्वत्यागं तदा कृत्वा कर्त्तव्यो धान्यसंग्रहः ॥21॥

उस समय पृथ्वी भस्म, धूलि एवं रजकण से व्याप्त हो जाती है —अनावृष्टि के कारण पृथ्वी धूलि-मिट्टी से व्याप्त हो जाती है। अतः समस्त वस्तुओं को त्याग कर धान्य का संग्रह करना चाहिए ॥21॥

विद्रवन्ति च राष्ट्राणि क्षीयन्ते नगराणि च।
श्वेतास्थिमेदिनी ज्ञेया मांसशोणितकर्दमा ॥22॥

उक्त प्रकार की वायु चलने से राष्ट्रों में उपद्रव पैदा होते हैं और नगरों का क्षय होता है। पृथ्वी श्वेत हड्डियों से भर जाती है और मांस तथा खून की कीचड़ से सराबोर हो जाती है ॥22॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः स्यादुत्तरापरः।
मक्षिका[4]दंशमशका जायन्ते प्रबलास्तदा ॥23॥
मध्यमं क्वचिदुत्कृष्टं वर्षं सस्यं च जायते।
नूनं च मध्यमं किंचिद् धान्यार्घं तत्र[5] निर्दिशेत्[6] ॥24॥

आषाढ़ी पूर्णिमा को यदि वायु उत्तर और पश्चिम के बीच के कोण—

1. भयम् आ०। 2. सस्यवृद्धयः मु० A.। 3. यदा मु० A.। 4. काण्डम् मु०। 5-6. नात्र संशयः मु० C.। ऽऽचौराणां समुपद्रवम् मु० C.।

वायव्य कोण की चले तो मक्खी, डांस और मच्छर प्रबल हो उठते हैं। वर्षा और धान्योत्पत्ति कहीं मध्यम और कहीं उत्तम होती है और कुछ धान्यों का मूल्य अथवा लाभ निश्चित रूप से मध्यम समझना चाहिए ॥23-24॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः पूर्वोत्तरो यदा।
वापयेत् सर्वबीजानि तदा चौरांश्च घातयेत् ॥25॥
स्थलेष्वपि च यद्बीजमुप्यते तत् समृद्ध्यति।
क्षेमं चैव सुभिक्षं च भद्रबाहुवचो यथा ॥26॥
बहूदका सस्यवती यज्ञोत्सवसमाकुला।
प्रशान्तडिम्भ-डमरा शुभा भवति मेदिनी ॥27॥

आषाढ़ी पूर्णिमा को यदि पूर्व और उत्तर दिशा के बीच का—ईशान कोण का वायु चले तो उससे चोरों का घात होता है अर्थात् चोरों का उपद्रव कम होता है। उस समय सभी प्रकार के बीज बोना शुभ होता है। स्थलों पर अर्थात् कंकरीली, पथरीली जमीन में भी बोया हुआ बीज उगता तथा समृद्धि को प्राप्त होता है। सर्वत्र क्षेम और सुभिक्ष होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है। साथ ही पृथ्वी बहुजल और धान्य से सम्पन्न होती है, पूजा-प्रतिष्ठादि महोत्सवों से परिपूर्ण होती है और सब विडम्बनाएँ दूर होकर प्रशान्त वातावरण को लिये मंगलमय हो जाती हैं। नगर और देश में शान्ति व्याप्त हो जाती है ॥25-27॥

पूर्वो[1] वातः[2] स्मृतः श्रेष्ठः तथा चाप्युत्तरो भवेत्।
उत्तमस्तु[3] तथैशानो मध्यमस्त्वपरोत्तरः[4] ॥28॥
अपरस्तु तथा न्यूनः[5] शिष्टो[6] वातः[7] प्रकीर्तितः।
पापे नक्षत्रकरणे मुहूर्ते च तथा भृशम् ॥29॥

पूर्व दिशा का वायु श्रेष्ठ होता है, इसी प्रकार उत्तर का वायु भी श्रेष्ठ कहा जाता है। ईशान दिशा का वायु उत्तम होता है। वायव्यकोण तथा पश्चिम का वायु मध्यम होता है। शेष दक्षिण दिशा, अग्निकोण और नैर्ऋत्यकोण का वायु अधम कहा गया है, उस समय नक्षत्र, करण तथा मुहूर्त यदि अशुभ हों तो वायु भी अधिक अधम होता है ॥28-29॥

पूर्ववातं यदा हन्यादुदीर्णो दक्षिणोऽनिलः[8]।
न तत्र वापयेद् धान्यं कुर्यात् सञ्चयमेव च ॥30॥

1-2. पूर्वोत्तर मु० C. । 3. उत्तर मु० A. B D. । 4. परोत्तरः मु० A परोत्तरा मु० C. । 5 न्यूनं मु० A., न्यूनः मु० B. D. । 6-7. शस्त वाता मु० A. शिष्टोथ मु० C. शिष्टा वाता मु० D । 8. दक्षिणानलः मु० A. दक्षिणोऽनलः मु० B. ।

दुर्भिक्षं चाप्यवृष्टिं च शस्त्रं रोगं जनक्षयम् ।
कुरुते सोऽनिलो घोरं आषाढाभ्यतरं परम् ॥31॥

आषाढ़ी पूर्णिमा के दिन पूर्व के चलते हुए वायु को यदि दक्षिण का उठा हुआ वायु परास्त करके नष्ट कर दे तो उस समय धान्य नहीं बोना चाहिए। बल्कि धान्यसंचय करना ज्यादा अच्छा होता है, क्योंकि वह वायु दुर्भिक्ष, अनावृष्टि, शस्त्रसंचार और जनक्षय का कारण होता है ॥30-31॥

पापघाते तु[1] वातानां[2] श्रेष्ठं[3] सर्वत्र चादिशेत् ।
[4]श्रेष्ठानपि यदा हन्युः पापाः[5] पापं[6] तदाऽऽदिशेत् ॥32॥

श्रेष्ठ वायुओं में से किसी के द्वारा पापवायु का यदि घात हो तो उसका फल सर्वत्र श्रेष्ठ कहना ही चाहिए और पापवायुएँ श्रेष्ठ वायुओं का घात करें तो उसका फल अशुभ ही जानना चाहिए। तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार के वायु की प्रधानता होती है, उसी प्रकार का शुभाशुभ फल होता है ॥32॥

यदा तु वाताश्चत्वारो भृशं वान्त्यपसव्यतः[7] ।
अल्पोदकं[8] शस्त्राघातं[9] भयं व्याधिं च कुर्वते ॥33॥

यदि पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर के चारों पवन अपसव्य मार्ग में—दाहिनी ओर से तेजी के साथ चलें तो वे अल्पवर्षा, धान्यनाश और व्याधि उत्पन्न होने की सूचना देते हैं। उक्त बातें उस वर्ष घटित होती हैं ॥33॥

प्रदक्षिणं यदा वान्ति त एव सुखशीतलाः ।
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं [10]राज्यवृद्धिर्जयस्तथा ॥34॥

वे ही चारों पवन यदि प्रदक्षिणा करते हुए चलते हैं तो सुख एवं शीतलता को प्रदान करने वाले होते हैं तथा लोगों को क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य, राजवृद्धि और विजय की सूचना देनेवाले होते हैं ॥34॥

समन्ततो यदा वान्ति परस्परविघातिनः[11] ।
शस्त्रं[12] जनक्षयं[13] रोगं सस्यघातं च कुर्वते ॥35॥

चारों पवन यदि सब ओर से एक दूसरे का परस्पर घात करते हुए चलें तो शस्त्रभय, प्रजानाश, रोग और धान्यघात करनेवाले होते हैं ॥35॥

---

1. घातेषु मु० A. । 2. नागानां मु० A. । 3. श्रेष्ठः मु० A. D. । 4. श्रेष्ठानपि मु० A. । 5-6. पापोऽशुभम् मु० । 7. अपसव्याः मु० A. व समन्ततः मु० C. । 8. अल्पोदम् मु० । 9. सस्यसंघातं मु० । 10. राज्यवृद्धिर्जयस्तथा मु० । 11. परिविघातिनः मु० A. । 12. सर्वं मु० A. । 13. जनभयं मु० C. ।

एवं विज्ञाय वातानां[1] संयता [2]भैक्षवर्तिनः।
प्रशस्तं यत्र पश्यन्ति[3] वसेयुस्तत्र निश्चितम्[4] । 36।।

इस प्रकार पवनों और उनके शुभाशुभ फल को जानकर भिक्षावृत्तिवाले साधुओं को चाहिए कि वे जहाँ बाधारहित प्रशस्त स्थान देखें वहीं निश्चित रूप से निवास करें ।।36।।

आहारस्थितयः सर्वे जंगमस्थावरास्तथा।
जलसम्भवं[5] च सर्वं तस्यापि [6]जनकोऽनिलः ।।37।।

जंगम—चल और स्थावर समस्त जीवों की स्थिति आहार पर निर्भर है—सबका आधार आहार है और खाद्यपदार्थ जल से उत्पन्न होते हैं तथा जल की उत्पत्ति वायु पर निर्भर है ।।37।।

सर्वकालं प्रवक्ष्यामि वातानां लक्षणं[7] परम्[8]।
आषाढीवत् तत् साध्यं यत् पूर्वं सम्प्रकीर्तितम् ।।38।।

अब पवनों का सार्वकालिक उक्त लक्षण कहूँगा, उसे पूर्व में कहे हुए आषाढ़ी पूर्णिमा के समान सिद्ध करना चाहिए ।।38।।

पूर्ववातो यदा तूर्णं सप्ताहं वाति कर्कशः।
स्वस्थाने नाभिवर्षेत् महदुत्पद्यते भयम् ।।39।।
प्राकारपरिखाणां च शस्त्राणां[9] च समन्ततः।
निवेदयति राष्ट्राणां विनाशं तादृशोऽनिलः ।।40।।

पूर्व दिशा का पवन यदि कर्कशरूप धारण करके अतिशीघ्र गति से चले तो वह स्वस्थान में वर्षा के न होने की सूचना देता है और उससे अत्यन्त भय उत्पन्न होता है, उस प्रकार का पवन कोट, खाइयों, शस्त्रों और राष्ट्रों का सब ओर से विनाश सूचित करता है ।।39-40।।

सप्तरात्रं दिनार्धं[10] च यः कश्चिद् वाति मारुतः।
महद्भयं च विज्ञेयं वर्षं वाऽथ महद् भवेत् ।।41।।

किसी भी दिशा का वायु यदि साढ़े सात दिन तक लगातार चले तो उग

1. वातांस्तु मु० C. । 2. लक्षणानि तम् मु० C. । 3. निवात मु० C. । 4. निश्चितः मु० C. । 5. जनसंभ्रमं मु० B. । 6. जनक मु० । 7-8. लक्षणान्यथ तम् मु० A. B. D. । 9. शस्त्रकोपभयं तथा. मु० C. । 10. दिवानिशि मु० A. दिवा चार्धं मु० B. दिवा रात्रं मु० D.।

महान् भय का सूचक जानना चाहिए अथवा इस प्रकार का वायु अतिवृष्टि का सूचक होता है ॥41॥

पूर्वसन्ध्यां यदा [1]वायुरपसव्यं प्रवर्तते ।
पुरावरोधं कुरुते यायिनां तु जयावहः ॥42॥

यदि वायु अपसव्य मार्ग से पूर्व सन्ध्या' को वातान्वित करता है तो वह पुर के अवरोध का घेरे में पड़ जाने का सूचक है । इस समय यायियों—आक्रमणकारियों की विजय होती है ॥42॥

पूर्वसन्ध्यां यदा वायुः सम्प्रवाति प्रदक्षिणः ।
नागराणां जयं[2] कुर्याद् सुभिक्षं यायिविद्रवम्[3] ॥43॥

यदि वह वायु प्रदक्षिणा करता हुआ पूर्वसन्ध्या को व्याप्त करे तो उससे नागरिकों की विजय होती है, सुभिक्ष होता है और चढ़कर आनेवाले आक्रमण-कारियों को लेने के देने पड़ जाते हैं अर्थात् उन्हें भागना पड़ता है ॥43॥

मध्याह्ने वार्धरात्रे वा[4] तथा वाऽस्तमनोदये ।
वायुस्तूर्णं यदा वाति तदाऽवृष्टिभयं [5]रुजाम् ॥44॥

यदि वायु मध्याह्न में, अर्धरात्रि में तथा सूर्य के अस्त और उदय के समय शीघ्र गति से चले तो अनावृष्टि, भय और रोग उत्पन्न होते हैं ॥44॥

यदा राज्ञः प्रयातस्य प्रतिलोमोऽनिलो भवेत् ।
अपसव्यो [6]समार्गस्थस्तदा सेनावधं[7] विदुः ॥45॥

यदि राजा के प्रयाण के समय वायु प्रतिलोम – विपरीत बहे अर्थात् उस दिशा को न चलकर जिधर प्रयाण किया जा रहा है, उससे विपरीत जिधर से प्रयाण हो रहा है, चले तो उसमें आक्रमणकारी की सेना का वध समझना चाहिए ॥45॥

अनुलोमो यदा स्निग्धः सम्प्रवाति प्रदक्षिणः ।
[8]नागराणां जयं कुर्यात् सुभिक्षं च प्रदीपयेत् ॥46॥

---

1. स्परसन्ध्या द्रवात् पुरः मु० A., पश्चिमसन्ध्यायां द्रवात् परम् मु० B. पश्चिमसन्ध्या प्रवास्यते मु० D. । 2. भयं मु० D. । 3. विद्रवाम् मु० A. । 4. च मु० 5. रुजा मु० । 6. समार्गस्थ मु० । विमार्गस्थो मु० C. । 7. भयं मु० A. । 8. प्रदीपनश्च चार्थशब्दश्च तदा क्षिप्रं जयावहः मु० C. ।

यदि वायु स्निग्ध हो और प्रदक्षिणा करता हुआ अनुलोमरूप से बहे—उसी दिशा की ओर चले जिधर प्रयाण हो रहा है, तो नगरवासियों की विजय होती है और सुभिक्ष की सूचना मिलती है ।।46।।

दशाहं द्वादशाहं वा पापवातो यदा भवेत् ।
अनुबन्धं तदा विन्द्याद् राजमृत्युं जनक्षयम् ।।47।।

यदि अशुभ वायु दस दिन या बारह दिन तक लगातार चले तो उससे सेनादिक का बन्धन, राजा की मृत्यु और मनुष्यों का क्षय होता है, ऐसा समझना चाहिए ।।47।।

यदाभ्रवर्जितो वाति वायुस्तूर्णमकालजः ।
पांशुभस्मसमाकीर्णः सस्यघाती भयावहः ।।48।।

जब अकाल में मेघरहित उत्पात वायु धूलि और भस्म से भरा हुआ चलता है, तब वह शस्यघातक एवं महाभयंकर होता है ।।48।।

सविद्युत्सरजो वायुरूर्ध्वगो वायुभिः सह ।
[1]प्रवाति पक्षिशब्देन क्रूरेण स भयावहः ।।49।।

यदि बिजली और धूल से युक्त वायु अन्य वायुओं के साथ ऊर्ध्वगामी हो और क्रूरपक्षी के समान शब्द करता हुआ चले तो वह भयंकर होता है ।।49।।

प्रवान्ति सर्वतो वाता यदा तूर्णं मुहुर्मुहुः ।
यतो यतोऽभिगच्छन्ति तत्र देशं निहन्ति ते ।।50।।

यदि पवन सब ओर से बार-बार शीघ्र गति से चलें, तो वह जिस देश की ओर गमन करता है, उस देश को हानि पहुँचाता है ।।50।।

अनुलोमो यदाऽनीके सुगन्धो वाति मारुतः ।
[2]अयत्नतस्ततो राजा जयमाप्नोति सर्वदा ।।51।।

यदि राजा की सेना में सुगन्धित अनुलोम प्रयाण की दिशा में प्रगतिशील पवन चले तो बिना यत्न के ही राजा सदा विजय को प्राप्त करता है ।।51।।

प्रतिलोमो यदाऽनीके दुर्गन्धो वाति मारुतः ।
तदा यत्नेन साध्यन्ते वीरकीर्तिसुलब्धयः ।।52।।

यदि राजा की सेना में दुर्गन्धित प्रतिलोम—प्रयाण की दिशा में विपरीत

---

1. मुद्रित प्रति में श्लोकों का व्यतिक्रम है। आधा श्लोक पूर्व के श्लोक में है आधा उत्तर उत्तर के श्लोक में। 2. आयानश्च तो मु०।

दिशा में पवन चले तो उस समय वीर-नीति की उपलब्धियाँ बड़ी ही प्रयत्नसाध्य होती हैं ॥52॥

यदा सपरिघा सन्ध्या पूर्वो वात्यनिलो भृशम् ।
पूर्वस्मिन्नेव दिग्भागे पश्चिमा वध्यते चमूः ॥53॥

यदि प्रातः अथवा सायंकाल की सन्ध्या परिघसहित हो—सूर्य को लाँघती हुई मेघों की पंक्ति से युक्त हो—और उस समय पूर्व का वायु अतिवेग से चलता हो तो पूर्व दिशा में ही पश्चिम दिशा की सेना का वध होता है ॥53॥

यदा सपरिघा सन्ध्या पश्चिमो वाति मारुतः ।
परस्मिन् दिशो भागे पूर्वा स वध्यते चमूः ॥54॥

यदि सन्ध्या सपरिघा—सूर्य को लाँघती मेघपंक्ति से युक्त हो और उस समय पश्चिम पवन चले तो पूर्व दिशा में स्थित सेना का पश्चिम दिशा में वध होता होता है ॥54॥

यदा सपरिघा सन्ध्या दक्षिणो वाति मारुतः ।
अपरस्मिन् दिशो भागे उत्तरा वध्यते चमूः ॥55॥

यदि सन्ध्या सपरिघा—सूर्य को लाँघती हुई मेघपंक्ति से युक्त हो—और उस समय दक्षिण का वायु चलता हो तो उत्तर की सेना का पश्चिम में वध होता है ॥55॥

यदा सपरिघा सन्ध्या उत्तरो वाति मारुतः ।
अपरस्मिन् दिशो भागे दक्षिणा वध्यते चमूः ॥56॥

यदि सन्ध्या सपरिघा—सूर्य को लाँघती हुई मेघपंक्ति से युक्त हो और उस समय उत्तर का पवन चले तो दक्षिण की सेना का उत्तर दिशा में वध होता है ॥56॥

प्रशस्तस्तु यदा वातः प्रतिलोमोऽनुपद्रवः ।
तदा यान् प्रार्थयेत् कामांस्तान् प्राप्नोति नराधिपः ॥57॥

जब प्रतिलोम वायु प्रशस्त हो और उस समय कोई उपद्रव दिखाई न पड़ता हो तो राजा जिन कार्यों को चाहता है वे उसे प्राप्त होते हैं—राजा के अभीष्ट की सिद्धि होती है ॥57॥

अप्रशस्तो यदा वायुर्नाभिपश्यत्युपद्रवम् ।
प्रयातस्य नरेन्द्रस्य चमूर्हार्यते सदा ॥58॥

यदि वायु अप्रशस्त हो और उस समय कोई उपद्रव दिखाई न पड़े तो युद्ध

के लिए प्रयाण करनेवाले राजा की सेना सदा पराजित होती है ॥58॥

तिथीनां करणानां च मुहूर्तानां च ज्योतिषाम्।
मारुतो बलवान् नेता तस्माद् यत्रैव मारुतः ॥59॥

तिथियों, करणों, मुहूर्तों और ग्रह-नक्षत्रादिकों का बलवान् नेता वायु है, अतः जहाँ वायु है, वहीं उनका बल समझना चाहिए ॥59॥

वायमानेऽनिले पूर्वे मेघांस्तत्र समादिशेत्।
उत्तरे वायमाने तु जलं तत्र समादिशेत् ॥60॥

यदि पूर्व दिशा में पवन चले तो उस दिशा में मेघों का होना कहना चाहिए और यदि उत्तर दिशा में पवन चले तो उस दिशा में जल का होना कहना चाहिए ॥60॥

ईशाने वर्षणं ज्ञेयमाग्नेये नैर्ऋतेऽपि च।
याम्ये च विग्रहं ब्रूयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥61॥

यदि ईशान कोण में पवन चले तो वर्षा का होना जानना चाहिए और यदि नैर्ऋत्य तथा पूर्व-दक्षिण दिशा में पवन चले तो युद्ध का होना कहना चाहिए, ऐसा भद्रबाहुस्वामी का वचन है ॥61॥

सुगन्धेषु प्रशान्तेषु स्निग्धेषु मार्दवेषु च।
वायमानेषु[1] वातेषु सुभिक्षं क्षेममेव च ॥62॥

यदि चलने वाले पवन सुगन्धित, प्रशान्त, स्निग्ध एवं कोमल हों तो सुभिक्ष और क्षेम का होना ही कहना चाहिए ॥62॥

महतोऽपि समुद्भूतान् सतडित् साभिगर्जितान्।
मेघान्निहन्ते वायुर्नैर्ऋतो दक्षिणाग्निजः ॥63॥

नैर्ऋत्यकोण, अग्निकोण तथा दक्षिण दिशा का पवन उन बड़े मेघों को भी नष्ट कर देता है—बरसने नहीं देता, जो चमकती बिजली और भारी गर्जना से युक्त हों और ऐसे दिखाई पड़ते हों कि अभी बरसेंगे ॥63॥

सर्वलक्षणसम्पन्ना मेघा मुख्या जलवहाः।
मुहूर्त्तादुत्थितो वायुर्हन्यात् सर्वोऽपि नैर्ऋतः ॥64॥

सभी शुभ लक्षणों से सम्पन्न जल को धारण करने वाले जो मुख्य मेघ हैं, उन्हें भी नैर्ऋत्य दिशा का उठा हुआ पूर्व पवन एक मुहूर्त में नष्ट कर देता है ॥64॥

1. मु. प्रति में श्लोकों की संख्या में व्यतिक्रम होने से पूर्वार्ध श्लोक नहीं है।

सर्वथा बलवान् वायुः स्वचक्रे निरभिग्रहः।
करणादिभिः संयुक्तो विशेषेण शुभाऽशुभः ॥65॥

अभिग्रह से रहित वायु स्वचक्र में सर्वथा बलवान् होता है और करणादिक से संयुक्त हो तो विशेषरूप से शुभाशुभ होता है—शुभ करणादि से युक्त होने पर शुभफलसूचक और अशुभ करणादिक से युक्त होने पर अशुभसूचक होता है ॥65॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके नैमित्ते वातलक्षणो नाम नवमोऽध्यायः।

विवेचन—वायु के चलने पर अनेक बातों का फलादेश निर्भर है। वायु द्वारा यहाँ पर आचार्य ने केवल वर्षा, कृषि और सेना, सेनापति, राजा तथा राष्ट्र के शुभाशुभत्व का निरूपण किया है। वायु विश्व के प्राणियों के पुण्य और पाप के उदय से शुभ और अशुभ रूप में चलता है। अतः निमित्तों द्वारा वायु जगत् के निवासी प्राणियों के पुण्य और पाप को अभिव्यक्त करता है। जो जानकार व्यक्ति हैं, वे वायु के द्वारा भावी फल को अवगत कर लेते हैं। आषाढ़ी प्रतिपदा और पूर्णिमा ये दो तिथियाँ इस प्रकार की हैं, जिनके द्वारा वर्षा, कृषि, व्यापार, रोग, उपद्रव आदि के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। यहाँ पर प्रत्येक फलादेश का क्रमशः निरूपण किया जाता है।

वर्षा सम्बन्धी फलादेश—आषाढ़ी प्रतिपदा के दिन सूर्यास्त के समय पूर्व दिशा में वायु चले तो आश्विन महीने में अच्छी वर्षा होती है तथा इस प्रकार के वायु से अगले महीने में भी वर्षा का योग अवगत करना चाहिए। रात्रि के समय जब आकाश में मेघ छाये हुए हों और धीमी-धीमी वर्षा हो रही हो, उस समय पूर्व का वायु चले तो भाद्रपद मास में अच्छी वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। इस तिथि को यदि मेघ प्रातःकाल से ही आकाश में हों और वर्षा भी हो रही हो, तो पूर्व दिशा का वायु चतुर्मास में वर्षा का अभाव सूचित करता है। तीव्र धूप दिन भर पड़े और पूर्व दिशा का वायु दिन भर चलता रहे तो चातुर्मास में अच्छी वर्षा का योग होता है। आषाढ़ी प्रतिपदा का तपना उत्तम माना गया है, इससे चातुर्मास में उत्तम वर्षा होने का योग समझना चाहिए। उपर्युक्त तिथि को सूर्योदय काल में पूर्वीय वायु चले और साथ ही आकाश में मेघ हों पर वर्षा न होती हो तो श्रावण महीने में उत्तम वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। उक्त तिथि को दक्षिण और पश्चिम दिशा का वायु चले तो वर्षा चातुर्मास में बहुत कम या उसका बिल्कुल अभाव होता है। पश्चिमी वायु चलने से वर्षा का अभाव नहीं होता, बल्कि श्रावण में घनघोर वर्षा, भाद्रपद में अभाव और आश्विन में अल्प वर्षा होती है। दक्षिण दिशा का वायु वर्षा का अवरोध करता है। उत्तर दिशा का वायु चलने से भी वर्षा का अच्छा योग रहता है। आरम्भ में कुछ कमी रहती है, पर अन्त तक समयानुकूल और आवश्यकतानुसार होती जाती है। आषाढ़ी

पूर्णिमा को आधे दिन—दोपहर तक पूर्वीय वायु चलता रहे तो श्रावण और भाद्रपद में अच्छी वर्षा होती है। पूरे दिन पूर्वीय पवन चलता रहे तो चातुर्मास पर्यन्त अच्छी वर्षा होती है और एक प्रहर पूर्वीय पवन चले तो केवल श्रावण के महीने में अच्छी वर्षा होती है। यदि उक्त तिथि को दोपहर के उपरान्त पूर्वीय पवन चले और आकाश में बादल भी हों तो भाद्रपद और आश्विन इन दोनों महीनों में उत्तम वर्षा होती है। यदि उक्त तिथि को दिन भर सुगन्धित वायु चलता रहे और थोड़ी-थोड़ी वर्षा भी होती रहे तो चातुर्मास में अच्छी वर्षा होती है। माघ महीने का भी इस प्रकार का पवन वर्षा होने की सूचना देता है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमा को दक्षिण दिशा का वायु चले तो वर्षा का अभाव सूचित होता है। यह पवन सूर्योदय से लेकर मध्याह्न काल तक चले तो आरम्भ में वर्षा का अभाव और मध्याह्नोत्तर चले तब अन्तिम महीनों में वर्षा का अभाव समझना चाहिए। यदि आधे दिन दक्षिणी पवन और आधे दिन पूर्वीय या उत्तरीय पवन चले तो आरम्भ में वर्षाभाव, अनन्तर उत्तम वर्षा तथा आरम्भ में उत्तम वर्षा, अनन्तर वर्षाभाव अवगत करना चाहिए। वर्षा की स्थिति पूर्वार्ध और उत्तरार्ध पर अवलम्बित समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि को पश्चिमीय पवन चले, आकाश में बिजली तड़के तथा मेघों की गर्जना भी हो तो साधारणतः अच्छी वर्षा होती है। इस प्रकार की स्थिति मध्यम वर्षा होने की सूचना देती है। पश्चिमीय पवन यदि सूर्योदय से लेकर दोपहर तक चलता है तो उत्तम वर्षा और दोपहर के उपरान्त चले तो मध्यम वर्षा होती है।

श्रावण आदि महीनों के पवन का फलादेश 'डाक' ने निम्न प्रकार बताया है—

साँओन पछवा भादव पुरिया आसिन बह ईसान।
कातिक कन्ता सिकियो न डोलै, कहाँ तक रखबह धान॥
साँओन पछवा बह दिन चारि, चूल्हीक पाछाँ उपजै सारि।
बरिसै रिमझिम निशिदिन बारि, कहिगेल बचन 'डाक' परचारि॥
साँओन पुरिवा भादव पछवा आसिन बह नैऋत।
कातिक कन्ता सिकियो न डोलै, उपजै नहि भरिखेत॥
साँओन पुरिवा बह रविवार, कोदो मडुआक होय बहार।
खोजत भेटै नहि थोड़ो अहार, कहत बैन यह 'डाक' गोआर॥
जो साँओन पुरवैआ बहै, शाली लागु करीन।
भादव पछवा जो बहै होहि मनक्ख नर दीन॥
साँओन बह जो कजरुआगा, ओआ काटि धरै ने धामा।
साँओन जो बह पुरवैया, बड़द बेचिकँ कीनहु गैया॥

अर्थ—यदि श्रावण मास में पश्चिमीय हवा, भाद्रपद मास में पूर्वीय हवा और आश्विन मास में ईशान कोण की हवा चले तो अच्छी वर्षा होती है तथा फसल भी बहुत उत्तम उत्पन्न होती है। श्रावण में यदि चार दिनों तक पश्चिमीय हवा चले तो रात-दिन पानी बरसता है तथा अन्न की उपज भी खूब होती है। यदि श्रावण में पूर्वीय, भाद्रपद में पश्चिमीय और आश्विन में नैर्ऋत्य कोणीय हवा चले तो वर्षा नहीं होती है तथा फसल की उत्पत्ति भी नहीं होती। यदि श्रावण में पूर्वीय, भाद्रपद में पश्चिमीय हवा चले तथा इस महीने में रविवार के दिन पूर्वीय हवा चले तो अनाज उत्पन्न नहीं होता और वर्षा की भी कमी रहती है। श्रावण मास में पूर्वीय वायु का चलना अत्यन्त अशुभ समझा जाता है। अतः इस महीने में पश्चिमीय हवा के चलने से फसल अच्छी उत्पन्न होती है। श्रावण मास में यदि प्रतिपदा तिथि रविवार को हो, और उस दिन तेज पूर्वीय हवा चलती हो तो वर्षा का अभाव आश्विन मास में अवश्य रहता है। प्रतिपदा तिथि का रविवार और मंगलवार को पड़ना भी शुभ नहीं है। इससे वर्षा की कमी की और फसल की बरबादी की सूचना मिलती है। भाद्रपद मास में पश्चिमीय हवा का चलना अशुभ और पूर्वीय हवा का चलना अधिक शुभ माना गया है। यदि श्रावणी पूर्णिमा शनिवार को हो और इस दिन दक्षिणीय वायु चलता हो तो वर्षा की कमी आश्विन मास में रहती है। शनिवार के साथ शतभिषा नक्षत्र भी हो तो और भी अधिक हानिकर होता है। भाद्रपद प्रतिपदा को प्रातःकाल पश्चिमीय हवा चले और यह दिन भर चलती रह जाए, तो खूब वर्षा होती है। आश्विन मास के अतिरिक्त कार्तिक मास में भी जल बरसता है। गेहूँ और धान दोनों की फसल के लिए यह उत्तम होता है। भाद्रपद कृष्णा पंचमी शनिवार या मंगलवार को हो और इस दिन पूर्वीय हवा चले तो साधारण वर्षा और साधारण ही फसल तथा दक्षिणीय हवा चले तो फसल के अभाव के साथ वर्षा का भी अभाव होता है। पंचमी तिथि को भरणी नक्षत्र हो और इस दिन दक्षिणी हवा चले तो वर्षा का अभाव रहता है तथा फसल भी अच्छी नहीं होती। पंचमी तिथि को गुरुवार और अश्विनी नक्षत्र हो तो अच्छी फसल होती है। कृत्तिका नक्षत्र हो तो साधारणतया वर्षा अच्छी होती है।

राष्ट्र, नगर सम्बन्धी फलादेश—आषाढ़ी पूर्णिमा को पश्चिमीय वायु जिस प्रदेश में चलती है, उस प्रदेश में उपद्रव होता है, अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं तथा उस क्षेत्र के प्रशासकों में मतभेद होता है। यदि पूर्णिमा शनिवार को हो तो उस प्रदेश के शिल्पी कष्ट पाते हैं, रविवार को हो तो चारों वर्ण के व्यक्तियों के लिए अनिष्टकर होता है। मंगलवार को पूर्णिमा तिथि हो और दिनभर पश्चिमीय वायु चलता रहे तो उस प्रदेश में चोरों का उपद्रव बढ़ता है तथा धार्मिकात्माओं को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। गुरुवार और शुक्रवार को पूर्णिमा हो और इस दिन

सन्ध्या समय तीन घंटे तक पश्चिमीय वायु चलता रहे तो निश्चयत: उस नगर, देश या राष्ट्र का विकास होता है। जनता में परस्पर प्रेम बढ़ता है, धन-धान्य की वृद्धि होती है और उस देश का प्रभाव अन्य देशों पर भी पड़ता है। व्यापारिक उन्नति होती है तथा शान्ति और सुख का अनुभव होता है। उक्त तिथि को दक्षिणी वायु चले तो उस क्षेत्र में अत्यन्त भय, उपद्रव, कलह और महामारी का प्रकोप होता है। आपसी कलह के कारण आन्तरिक झगड़े बढ़ते जाते हैं और सुख-शान्ति दूर होती जाती है। मान्य नेताओं में मतभेद बढ़ता है, सैनिक शक्ति क्षीण होती है। देश में नये-नये करों की वृद्धि होती है और गुप्त रोगों की उत्पत्ति भी होती है। यदि रविवार के दिन अपसव्य मार्ग से दक्षिणीय वायु चले तो घोर उपद्रवों की सूचना मिलती है। नगर में शीतला और हैजे का प्रकोप होता है। जनता अनेक प्रकार का कष्ट उठाती है, भयंकर भूकम्प होने की सूचना भी इसी प्रकार के वायु से समझनी चाहिए। यदि अर्धरात्रि में दक्षिणीय वायु शब्द करता हुआ बहे तो इसका फलादेश समस्त राष्ट्र के लिए हानिकारक होता है। राष्ट्र को आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है तथा राष्ट्र के सम्मान का भी ह्रास होता है। देश में किसी महान् व्यक्ति की मृत्यु से अपूरणीय क्षति होती है। यदि यही वायु प्रदक्षिणा करता हुआ अनुलोम गति से प्रवाहित हो तो राष्ट्र को साधारण क्षति उठानी पड़ती है। स्निग्ध, मन्द, सुगन्ध दक्षिणीय वायु भी अच्छा होता है तथा राष्ट्र में सुख-शान्ति उत्पन्न कराता है। मंगलवार को दक्षिणीय वायु सायं-सायं का शब्द करता हुआ चले और एक प्रकार की दुर्गन्ध आती हो तो राष्ट्र और देश के लिए चार महीनों तक अनिष्ट सूचक होता है। इस प्रकार के वायु से राष्ट्र को अनेक प्रकार के संकट सहन करने पड़ते हैं। अनेक स्थानों पर उपद्रव होते हैं, जिससे प्रशासकों को गहरी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। देश के खनिज पदार्थों की उपज कम होती है और खानों में अग्नि लग जाती है, जिससे देश का धन नष्ट हो जाता है। शनिवार को आषाढ़ी पूर्णिमा को दक्षिणीय वायु चले तो देश को अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पड़ते हैं। जिस प्रदेश में इस प्रकार का वायु चलता है उस प्रदेश के सौ-सौ कोश चारों ओर अग्नि-प्रकोप होता है। आषाढ़ी पूर्णिमा को पूर्वीय वायु चले तो देश में सुख-शान्ति होती है तथा सभी प्रकार की शक्ति बढ़ती है। वन, खनिज पदार्थ, कल-कारखाने आदि की उन्नति होने का सुन्दर अवसर आता है। सोमवार को यदि पूर्वीय हवा प्रातःकाल से मध्याह्नकाल तक लगातार चलती रहे और हवा में से सुगन्धि आती हो तो देश का भविष्य उज्ज्वल होता है। सभी प्रकार से देश की समृद्धि होती है। नये-नये नेताओं का नाम होता है, राजनीतिक प्रभुत्व बढ़ता जाता है, सैनिक शक्ति का भी विकास होता है। यदि [illegible] इसी प्रकार का [illegible] देश में एक वर्ष तक आनन्दोत्सव होते रहते हैं, सभी प्रकार का अभ्युदय बढ़ता है। शिक्षा

कला-कौशल की वृद्धि होती है और नैतिकता का विकास नागरिकों में पूर्णतया होता है। नेताओं में प्रेमभाव बढ़ता है जिससे वे देश या राष्ट्र के कार्यों को बड़े सुन्दर ढंग से सम्पादित करते हैं। गुरुवार को पूर्वीय वायु चले तो देश में विद्या का विकास, नये-नये अन्वेषण के कार्य, विज्ञान की उन्नति एवं नये-नये प्रकार की विद्याओं का प्रसार होता है। नगरों में सभी प्रकार का अमन चैन रहता है। शुक्रवार को पूर्वीय वायु दिनभर चलता रहे तो शान्ति, सुभिक्ष और उन्नति का सूचक है, इस प्रकार के वायु से देश की सर्वांगीण उन्नति होती है।

व्यापारिक फलादेश—आषाढ़ी पूर्णिमा को प्रातःकाल पूर्वीय हवा, मध्याह्न दक्षिणीय हवा, अपराह्न काल पश्चिमीय हवा और सन्ध्या समय उत्तरीय हवा चले तो एक महीने में स्वर्ण के व्यापार में सवाया लाभ, चाँदी के व्यापार में डेढ़ गुना तथा गुड़ के व्यापार में बहुत लाभ होता है। अन्न का भाव सस्ता होता है तथा कपड़े और सूत के व्यापार में तीन महीनों तक लाभ होता रहता है। यदि इस दिन प्रातःकाल से सूर्यास्त तक दक्षिणीय हवा ही चलती रहे तो सभी वस्तुएँ पन्द्रह दिन के बाद ही मँहगी हो जाती हैं और यह मँहगी का बाजार लगभग छः महीने तक चलता है। इस प्रकार के वायु का फल विशेषतः यह है कि अन्न का भाव बहुत मँहगा होता है तथा अन्न की कमी भी हो जाती है। यदि आधे दिन दक्षिणीय वायु चले, उपरान्त पूर्वीय या उत्तरीय वायु चलने लगे तो व्यापारिक जगत् में विशेष हलचल रहती है तथा वस्तुओं के भाव स्थिर नहीं रहते हैं। सट्टे के व्यापारियों के लिए उक्त प्रकार का निमित्त विशेष लाभ सूचक है। यदि पूर्वार्ध भाग में उक्त तिथि को उत्तरीय वायु चले और उत्तरार्ध में अन्य किसी भी दिशा की वायु चलने लगे तो जिस प्रदेश में यह निमित्त देखा गया है, उस प्रदेश के दो-दो सौ कोश तक अनाज का भाव सस्ता तथा वस्त्र को छोड़ अवशेष सभी वस्तुओं का भाव भी सस्ता ही रहता है। केवल दो महीने तक वस्त्र तथा श्वेत रंग के पदार्थों के भाव ऊँचे चढ़ते हैं तथा इन वस्तुओं की कमी भी रहती है। सोना, चाँदी और अन्य प्रकार की खनिज धातुओं का मूल्य प्रायः सम रहता है। इस निमित्त के दो महीने के उपरान्त सोने के मूल्य में वृद्धि होती है, यद्यपि कुछ ही दिनों के पश्चात् पुनः उसका मूल्य गिर जाता है। पशुओं का मूल्य बहुत बढ़ जाता है। गाय, बैल और घोड़े के मूल्य में पहले से लगभग सवाया अन्तर आ जाता है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमा की रात में ठीक बारह बजे के समय दक्षिणीय वायु चले तो उस प्रदेश में छः महीनों तक अनाज की कमी रहती है और अनाज का मूल्य भी बहुत बढ़ जाता है। यदि उक्त तिथि की मध्यरात्रि में उत्तरीय हवा चलने लगे तो मसाला, नारियल, सुपाड़ी आदि का भाव ऊँचा उठता है, अनाज सस्ता होता है। सोना, चाँदी का भाव पूर्ववत् ही रहता है। यदि श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को सूर्योदय काल में पूर्वीय हवा, मध्याह्न उत्तरीय, अपराह्न में पश्चिमीय हवा और

सन्ध्या काल में उत्तरीय हवा चलने लगे तो लगभग एक वर्ष तक अनाज सस्ता रहता है, केवल आश्विन मास में अनाज मँहगा होता है, अवशेष सभी महीनों में अनाज सस्ता ही रहता है। सोना, चाँदी और अभ्रक का भाव आश्विन से माघ तक सस्ता तथा फाल्गुन से ज्येष्ठ तक मँहगा रहता है। व्यापारियों को कुछ लाभ ही रहता है। उक्त प्रकार के वायु निमित्त से व्यापारियों के लिए शुभ फलादेश ही समझा जाता है। यदि इस दिन सन्ध्या काल में वर्षा के साथ उत्तरीय हवा चले तो अगले दिन से ही अनाज मँहगा होने लगता है। उपयोग और विलास की सभी वस्तुओं के मूल में वृद्धि हो जाती है, विशेष रूप से आभूषणों के मूल्य भी बढ़ जाते हैं। जूट, सन, मूंज आदि का भाव भी बढ़ता है। रेशम की कीमत पहले से डेढ़ गुनी हो जाती है। काले रंग की प्रायः सभी वस्तुओं के भाव सम रहते हैं। हरे, लाल और पीले रंग की वस्तुओं का मूल्य वृद्धिगत होता है। श्वेत रंग के पदार्थों का मूल्य सम रहता है। यदि उक्त तिथि को ठीक दोपहर के समय पश्चिमीय वायु चले तो सभी वस्तुओं का भाव सस्ता रहता है; फिर भी व्यापारियों के लिए यह निमित्त अशुभ सूचक नहीं; उन्हें लाभ होता है। यदि श्रावणी पूर्णिमा को प्रातःकाल वर्षा हो और दक्षिणीय वायु भी चले तो अगले दिन से ही सभी वस्तुओं की मँहगाई समझ लेनी चाहिए। इस प्रकार के निमित्त का प्रधान फलादेश खाद्य पदार्थों के मूल्य में वृद्धि होना है। खनिज धातुओं के मूल्य में भी वृद्धि होती है, पर थोड़े दिनों के उपरान्त उनका भाव भी नीचे उतर आता है। यदि उक्त तिथि को पूरे दिन एक ही प्रकार की हवा चलती रहे तो वस्तुओं के भाव सस्ते और हवा बदलती रहे तो वस्तुओं के भाव ऊँचे उठते हैं। विशेषतः मध्याह्न और मध्यरात्रि में जिस प्रकार की हवा हो, वैसा ही फल समझना चाहिए। पूर्वीय और उत्तरीय हवा से वस्तुएँ सस्ती और पश्चिमीय और दक्षिणीय हवा के चलने से वस्तुएँ मँहगी होती हैं।

दशमोऽध्याय:

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि प्रवर्षणं[1] निबोधत।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वतः[2] ॥1॥

अब प्रवर्षण का वर्णन किया जाता है। यह भी पूर्व की तरह प्रशस्त— शुभ

---

1. प्रवर्षणं आ०, प्रवर्षणं मु० A. D. । 2. अनुपूर्वशः मु० ।

और अप्रशस्त—अशुभ इस प्रकार दो तरह का होता है ।।1।।

ज्येष्ठे[1] मूलमतिक्रम्य [2]पतन्ति बिन्दवो यदा ।
प्रवर्षणं तदा[3] ज्ञेयं शुभं वा यदि वाऽशुभम् ।।2।।

ज्येष्ठ मास में मूल नक्षत्र को बिताकर यदि वर्षा हो तो उसके शुभाशुभ का विचार करना चाहिए ।।2।।

आषाढे शुक्लपूर्वासु ग्रीष्मे मासे तु पश्चिमे ।
[4]देवः प्रतिपदायां[5] तु यदा[6] कुर्यात् प्रवर्षणम् ।।3।।
चतुःषष्टिमाढकानि तदा वर्षति वासवः[7] ।
निष्पद्यन्ते च सस्यानि सर्वाणि निरुपद्रवम् ।।4।।

ग्रीष्म ऋतु में शुक्ला प्रतिपदा को पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में पश्चिम दिशा से बादल उठकर वर्षा हो तो 64 आढ़क प्रमाण वर्षा होती है और निरुपद्रव—बिना किसी बाधा के सभी प्रकार के अनाज उत्पन्न होते हैं ।।3-4।।

धर्मकामार्था[8] वर्तन्ते[9] परचक्रं प्रणश्यति[10] ।
क्षेमं सुभिक्ष[11]मारोग्यं दशरात्रं[12] त्वपग्रहम् ।।5।।

उक्त प्रकार के प्रवर्षण से धर्म, काम और धन विद्यमान रहते हैं तथा क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य की वृद्धि होती है और परचक्र—परशासन का भय दूर हो जाता है किन्तु दस दिन के बाद पराजय होती है—अशुभ फल घटित होता है ।।5।।

[13]उत्तराभ्यामषाढाभ्यां यदा देवः प्रवर्षति ।
विज्ञेया[14] द्वादश द्रोणा अतो वर्षं सुभिक्षदम्[15] ।।6।।
तदा निम्नानि वातानि[16] मध्यमं वर्षणं भवेत् ।
सस्यानां चापि निष्पत्तिः सुभिक्षं क्षेममेव च ।।7।।

जब उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में वर्षा होती है, तब 12 द्रोण प्रमाण जल की वर्षा होती है तथा सुभिक्ष भी होता है । मन्द-मन्द वायु चलता है, मध्यम वर्षा होती है, अनाजों की उत्पत्ति होती है, सुभिक्ष और कल्याण-मंगल होता है ।।6-7।।

---

1. [illegible] मु० A. D. । 2. पतन्ति मु० B. C. D. । 3. यथा मु० A. B. D. । 4. देवः मु० C. D. । 5. प्रतिपदायां मु० C. । 6. यदा, मु० A., यदा मु० D. । 7. [illegible] आ० । 8. [illegible] आ० । 9. वर्तन्ते मु० A, D. । 10. प्रणश्यति मु० C. । 11. [illegible] मु० । 12. [illegible] मु० । 13. [illegible] मु० C. । 14. [illegible] मु० C. । 15. सुभिक्षकम् मु० A. । 16. [illegible] मु० B. ।

श्रवणेन वारि विज्ञेयं श्रेष्ठं सस्यं च निर्दिशेत् ।
चौराश्च प्रबला[1] ज्ञेया व्याधयोऽत्र पृथग्विधा: ॥8॥
क्षेत्राण्यत्र प्ररोहन्ति दंष्ट्रानां[2] नास्ति जीवितम् ।
अष्टादशाहं जानीयादपग्रहं[3] न संशय: ॥9॥

यदि श्रवण नक्षत्र में जल की वर्षा हो तो अन्न की उपज अच्छी होती है, चोरों की शक्ति बढ़ती है और अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। खेतों में अन्न के अंकुर अच्छी तरह उत्पन्न होते हैं, दंष्ट्रों—चूहों के लिए तथा डांस, मच्छरों के लिए यह वर्षा हानिकारक है, उनकी मृत्यु होती है। अठारह दिनों के पश्चात् अपग्रह-पराजय तथा अशुभ फल की प्राप्ति होती है, इसमें सन्देह नहीं ॥8-9॥

आढकानि धनिष्ठायां[4] सप्तपंच[5] समादिशेत्[6] ।
मही सस्यवती ज्ञेया वाणिज्यं च विनश्यति ॥10॥
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं सप्तरात्रमपग्रह: ।
प्रबला दंष्ट्रिणो ज्ञेया मूषका: शलभा: शुका: ॥11॥

धनिष्ठा नक्षत्र में वर्षा हो तो उस वर्ष 57 आढक वर्षा होती है, पृथ्वी पर फसल अच्छी उत्पन्न होती है और व्यापार गड़बड़ा जाता है। इस प्रकार की वर्षा से क्षेम-कल्याण, सुभिक्ष और आरोग्य होता है किन्तु सात दिनों के उपरान्त अपग्रह—अशुभ का फल प्राप्त होता है। दन्तधारी प्राणी मूषक, पतंग, तोता आदि प्रबल होते हैं अर्थात् उनके द्वारा फसल को हानि पहुँचती है ॥10-11॥

वारीस्तु वारिणो [7]विन्द्यात् सस्यानां [8]चाप्युपद्रवम् ।
चौरास्तु प्रबला ज्ञेया न च कश्चिदपग्रह:[9] ॥12॥

शतभिषा नक्षत्र में वर्षा हो तो फसल उत्पन्न होने में अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। चोरों की शक्ति बढ़ती है, किन्तु अशुभ किसी का नहीं होता ॥12॥

पूर्वाभाद्रपदायां तु यदा मेघ: प्रवर्षति ।
चतु:षष्टिमाढकानि तदा वर्षति सर्वश: ॥13॥
सर्वधान्यानि जायन्ते बलवन्तश्च तस्करा: ।
[10]नाणकं क्षुभ्यते[11] चापि दशरात्रमपग्रह: ॥14॥

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में जब मेघ बरसता है तो उस समय सर्वत्र 64 आढक प्रमाण वर्षा होती है। सभी प्रकार के अनाज उत्पन्न होते हैं, चोरों की शक्ति

---

1. सबला आ० । 2. नष्टानां मु० C. । 3. अवग्रह: मु० C. । 4. [illegible] आ० । 5. [illegible] मु० C. । 6. [illegible] । 7. [illegible] मु० A. B. D. । 8. [illegible] मु० A. । 9. अपग्रह: मु० A. । 10. नाणकं मु० B. । 11. विद्यते आ० ।

बढ़ती है तथा मुद्रा का चलन तेज हो जाता है। लेकिन दस दिन के बाद अनिष्ट या अशुभ होता है ॥13-14॥

नवतिराढकानि स्युरुत्तरायां समादिशेत्।
स्थलेषु वापयेद् बीजं सर्वसस्यं[1] समृद्ध्यति ॥15॥
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं विंशद्रा[2]त्रमपग्रह:।
दिवसानां विजानीयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥16॥

यदि प्रथम वर्षा उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में हो तो 90 आढक प्रमाण जल-वृष्टि होती है। स्थल में बोया गया बीज भी समृद्धि को प्राप्त होता है, तथा सभी प्रकार के अनाज बढ़ते हैं। क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य की प्राप्ति होती है तथा 20 दिन के पश्चात् अपग्रह—अशुभ होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥15-16॥

चतुःषष्टिमाढकानीह रेवत्यामभिनिर्दिशेत्।
सस्यानि च समृद्ध्यन्ते सर्वाण्येव यथाक्रमम् ॥17॥
उत्पद्यन्ते[3] च राजान: परस्परविरोधिन:[4]।
धान्यपुण्यानि शोभन्ते [5]बलवद्दंष्ट्रिवर्धनम् ॥18॥

यदि प्रथम वर्षा रेवती नक्षत्र में हो तो उस वर्ष 64 आढक प्रमाण जल-वृष्टि होती है और क्रम से सभी प्रकार के अनाज की समृद्धि होती है। राजाओं में परस्पर विरोध उत्पन्न होता है, सेना और दंष्ट्रधारी—चूहों की वृद्धि होती है ॥17-18॥

एकोनानि[6] तु पंचाशदाढकानि समादिशेत्।
अश्विन्यां कुरुते यत्र प्रवर्षणमसंशय: ॥19॥
[7]भवेतामुभये [8]सस्ये पीड्यन्ते यवना: शका:।
गान्धारिकाश्च [9]काम्बोजा: पांचालाश्च चतुष्पदा: ॥20॥

यदि प्रथम वर्षा अश्विनी नक्षत्र में हो तो 49 आढक जल की वर्षा होती है, इसमें कोई भी सन्देह नहीं है। कार्तिकी और वैशाखी दोनों ही प्रकार की फसल होती है। यवन, शक, गान्धार, काम्बोज, पांचाल और चतुष्पद पीड़ित होते हैं अर्थात् उन्हें नाना प्रकार के कष्ट होते हैं ॥19-20॥

एकोनविंशतिविन्द्यादाढकानि न संशय:।
भरण्यां वासवश्चैव यदा कुर्यात् प्रवर्षणम् ॥21॥

1. सर्वमुदक आ०। 2. विंशरात्रं मु० A. B. D.। 3. उद्भवन्ति मु० A. B. D.। 4. परस्पर-विरोधिनम् मु० A., परस्परविनाशिन: मु० C.। 5. बलवद्दष्टुवर्धनम् मु०। 6. एकोनमानि मु० C.। 7. भवेत् मु०, भव मु०, D., भवन्तु मु० C.। 8. सस्ये मु० C.। 9. शककाम्बोजा: आ०।

व्यालाः सरीसृपाश्चैव मरणं[1] व्याधयो रुजः ।
सस्यं कनिष्ठं[2] विज्ञेयं प्रजाः सर्वाश्च दुखिताः ॥22॥

जब प्रथम वर्षा का प्रारम्भ भरणी नक्षत्र में होता है, उस समय वर्ष भर में निसन्देह उन्नीस आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है। सर्प और सरीसृप—दुमुही, विभिन्न जातियों के सर्पादि, मरण, व्याधि, रोग आदि उत्पन्न होते हैं। अनाज भी निम्न कोटि का उत्पन्न होता है और प्रजा को सभी प्रकार से कष्ट उठाने पड़ते हैं ॥21-22॥

आढकान्येकपंचाशत् कृत्तिकासु समादिशेत् ।
तदा त्वपग्रहो ज्ञेयः सप्तविंशतिरात्रकः ॥23॥
द्वैमासिकस्तदा [3]देवश्चित्रं सस्यमुपद्रवम् ।
निम्नेषु वापयेद् बीजं भयमग्नेर्विनिर्दिशेत् ॥24॥

यदि प्रथम वर्षा कृत्तिका नक्षत्र में हो तो 51 आढक प्रमाण वर्षा समझनी चाहिए और 27 दिनों के बाद अनिष्ट समझना चाहिए। उस वर्ष मेघ दो महीने तक ही बरसते हैं, अनाज की उत्पत्ति में विघ्न आते हैं, अतः निम्न स्थानों में बीज बोना अच्छा होता है। उस वर्ष अग्नि-भय भी कहा है ॥23-24॥

आढकान्येकविंशच्च[4] रोहिण्यामभिवर्षति[5] ।
अपग्रहं निजानीयात् सर्वमेकादशाह्निकाम् ॥25॥
[6]सुभिक्षं क्षेममारोग्यं नैऋतीयं बहूदकम् ।
स्थलेषु वापयेद् बीजं राज्ञो विजयमादिशेत् ॥26॥

यदि प्रथम वर्षा रोहिणी नक्षत्र में हो तो 91 आढक प्रमाण उस वर्ष जल बरसता है और 11 दिनों के बाद अपग्रह—अनिष्ट होता है। उस वर्ष क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य समझना चाहिए। नैऋत्य दिशा की ओर से बादल उठकर अधिक जल की वर्षा करते हैं। स्थल में बीज बोने पर भी अच्छी फसल उत्पन्न होती है तथा राजा की विजय की सूचना भी समझनी चाहिए ॥25-26॥

आढकान्येकनवतिः सौम्ये प्रवर्षते यदा ।
[7]अपग्रहं तदा विन्द्यात् सर्वमेकादशाह्निकम् ॥27॥
महामात्याश्च पीड्यन्ते [8]क्षुधा व्याधिश्च जायते ।
[9]क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं दंष्ट्रिणः प्रबलास्तदा ॥28॥

---

1. मृत्युव्याधिरो विविधैश्चैः मु० A. । 2. कनिष्ठकं ज्ञेयं । 3. मेघः मु० । 4. नवतिं मु० । 5. विनिर्दिशेत् मु० । 6. मुद्रित प्रति में 'क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं' पाठ मिलता है । 7. तदाऽप्यपग्रहं विन्द्यात् वासराणि चतुर्दश. मु० । 8. बहुव्याधि विनिर्दिशेत् । 9. गर्भिणी चैव विशेषं दंष्ट्रिण प्रबलास्तथा ।

यदि प्रथम वर्षा मृगशिरा नक्षत्र में हो तो 91 आढक प्रमाण उस वर्ष जल की वर्षा समझ लेनी चाहिए और ग्यारह (चौदह) दिन के उपरान्त अपग्रह—अनिष्ट समझना चाहिए। प्रधानमन्त्री को पीड़ा तथा अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं। वैसे सुभिक्ष एवं चूहों का प्रकोप उस वर्ष में समझना चाहिए ॥27-28॥

आढकानि तु द्वात्रिंशदार्द्रायां चापि निर्दिशेत्[1]।
दुर्भिक्षं व्याधिमरणं सस्यंघातमुपद्रवम् ॥29॥
श्रावणे प्रथमे मासे [2]वर्षं वा न च वर्षति।
प्रोष्ठपदं च वर्षित्वा शेषकालं न वर्षति ॥30॥

यदि प्रथम वर्षा आर्द्रा में हो तो 32 आढक प्रमाण उस वर्ष जल की वर्षा होती है। उस वर्ष दुर्भिक्ष, नाना प्रकार की व्याधियाँ, मृत्यु और फसल को बाधा पहुँचाने वाले अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। श्रावण मास के प्रथम पक्ष—कृष्ण पक्ष में अनेक बार वर्षा होती है, किन्तु भाद्रपद मास में एक बार जल बरसता है, फिर वर्षा नहीं होती ॥29-30॥

आढकान्येकमर्वांत विन्द्याच्चैव पुनर्वसौ।
सस्यं निष्पद्यते क्षिप्रं व्याधिश्च प्रबला[3] भवेत् ॥31॥

यदि पुनर्वसु नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो 91 आढक प्रमाण उस वर्ष जल-वृष्टि होती है, अनाज शीघ्र ही उत्पन्न होता है। रोगों का जोर रहता है ॥31॥

चत्वारिंशच्च द्वे वाऽपि जानीयादाढकानि[4] च।
पुष्येण मन्दवृष्टिश्च निम्ने बीजानि वापयेत् ॥32॥
पक्षमश्वयुजे चापि[5] पक्षं प्रोष्ठपदे तथा।
अपग्रहं विजानीयात् बहुलेऽपि प्रवर्षति[6] ॥33॥

पुष्य नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो 42 आढक प्रमाण जल-वृष्टि होती है। वर्षा मन्द-मन्द धीरे-धीरे होती है, अतः निम्न स्थानों पर बीज बोने से अच्छी फसल उत्पन्न होती है। आश्विन और भाद्रपद मास में कृष्ण पक्ष में अपग्रह—अनिष्ट होता है तथा वर्षा भी इन्हीं पक्षों में होती है ॥32-33॥

[7]चतुष्षष्टिमाढकानीह तदा वर्षति वासवः।
यदा श्लेषाश्च कुरुते प्रथमे च प्रवर्षणम् ॥34॥

---

1. अभिनिर्दिशेत् मु०। 2. वर्षित्वा न च वर्षति, वर्षच्चैव पुनः पुनः मु० C। 3. बलवान् विद्: मु०। 4. -न्यथ मु०। 5. मासे मु०। 6. प्रवर्षणम् मु०। 7. संख्या 34 का श्लोक मुद्रित प्रति में नहीं है।

सस्यघातं विजानीयाद् व्याधिभिश्चोदकेन तु ।
साधवो दु:खिता [1]ज्ञेया प्रोष्ठपदमपग्रह: ।।35।।

यदि आश्लेषा नक्षत्र में प्रथम जल-वृष्टि हो तो 64 आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है । फसल में अनेक प्रकार के रोग लगते हैं, नाना प्रकार के रोगों से जनता में आतंक व्याप्त रहता है, साधुओं को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं तथा भाद्रपद मास में अपग्रह—अनिष्ट होता है ।।34-35।।

मघासु खारी विज्ञेया सस्यानाञ्च समुद्भव: ।
कुक्षिव्याधिश्च बलवाननीतिश्च तु जायते ।।36।।

यदि मघा नक्षत्र में प्रथम जल की वर्षा हो तो खारी प्रमाण—16 द्रोण जल-वृष्टि उस वर्ष होती है और अनाज की उत्पत्ति खूब होती है। पेट के नाना प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं और अन्याय-नीति का प्रचार होता है ।।36।।

फाल्गुनीषु च पूर्वासु यदा देव: प्रवर्षति ।
खारी तदाऽऽदिशेत् पूर्णा तदा स्त्रीणां सुखानि च[2] ।।37।।
सस्यानि फलवन्ति स्युर्वाणिज्यानि दिशन्ति च ।
अपग्रहश्चतुस्त्रिंशच्छ्रावणे सप्तरात्रिक: ।।38।।

यदि पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो उस वर्ष खारी प्रमाण—16 द्रोण जल की वर्षा होती है । स्त्रियों को अनेक प्रकार का सुख प्राप्त होता है। कृषि और वाणिज्य दोनों ही सफल होते हैं । 24 दिनों के पश्चात् अर्थात् श्रावण मास में 7 दिन व्यतीत होने पर अपग्रह—अनिष्ट होता है ।।37-38।।

उत्तरायां तु फाल्गुन्यां षष्टिसप्त च निर्दिशेत् ।
आढकानि सुभिक्षं च क्षेममारोग्यमेव च ।।39।।
बहुजा[3] दीना शीलाश्च धर्मशीलाश्च साधव: ।
अपग्रहं विजानीयात् कार्तिके द्वादशाहिकम् ।।40।।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो उस वर्ष 67 आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है तथा सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य की प्राप्ति होती है। सभी मनुष्यों में दानशीलता और साधुओं के धर्मशीलता की वृद्धि होती है । कार्तिक मास में 12 दिन व्यतीत होने पर अपग्रह—अनिष्ट होता है ।।39-40।।

पश्चाशीतिं विजानीयात् हस्ते प्रवर्षणं यदा ।
तदा निम्नानि वाप्यानि पंचवर्णं च जायते ।।41।।

---

1. विन्द्यात् मु० । 2. च तत्सुखम् मु० । 3. दानशीलाश्च मनुजा मु० ।

संग्रामाश्चानुवर्धन्ते शिल्पिकानां सुखोत्तमम्।
श्रावणाश्वयुजे[1] मासि[2] तथा कार्तिकमेव च ॥42॥
अपग्रहं विजानीयान्मासि[3] मासि दशाह्निकम्।
चौराश्च बलवन्तः स्युरुत्पद्यन्ते च पार्थिवाः ॥43॥

हस्त नक्षत्र में जब प्रथम वर्षा होती है तो 85 आढक प्रमाण जल उस वर्ष बरसता है। निम्न स्थानों की वापियाँ—बावड़ियाँ पंचवर्णात्मक हो जाती हैं। इस वर्ष में युद्ध की वृद्धि होती है, शिल्पियों को उत्तम सुख प्राप्त होता है। श्रावण, आश्विन और कार्त्तिक इन तीनों महीनों में से प्रत्येक महीने में 10 दिन तक अपग्रह— अनिष्ट समझना चाहिए। चोर, सेना—योद्धा और नृपतियों की उत्पत्ति होती है अर्थात् उस वर्ष चोरों की, सैनिकों की और नृपतियों की कार्यसिद्धि होती है ॥41-43॥

द्वात्रिंशमाढकानि स्युश्चित्रायां च[4] प्रवर्षणम्।
चित्रं विन्द्यात् तदा सस्यं चित्रं वर्षं प्रवर्षति[5] ॥44॥
निम्नेषु वापयेद् बीजं स्थलेषु परिवर्जयेत्।
मध्यमं तं विजानीयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥45॥

चित्रा नक्षत्र में जिस वर्ष प्रथम वर्षा होती है, उस वर्ष 32 आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है। अनाज की उत्पत्ति भी विचित्र रूप से होती है और यह वर्ष भी विचित्र ही होता है। इस वर्ष निम्न स्थानों—आर्द्र स्थानों में बीज बोना चाहिए, ऊँचे स्थलों में नहीं, क्योंकि यह वर्ष मध्यम होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥44-45॥

द्वात्रिंशदाढकानि स्युः स्वातौ स्याच्चेत् प्रवर्षणम्।
[6]वायुरग्निरनावृष्टिः मासमेकं तु वर्षति ॥46॥

स्वाति नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो 32 आढक प्रमाण वृष्टि होती है। इस वर्ष में एक ही महीने तक जल की वर्षा होती है। वायु चलता है, अग्नि बरसती है तथा अनावृष्टि होती है ॥46॥

विशाखासु विजानीयात् खारीमेकां न[7] संशयः।
सस्यं निष्पद्यते चापि वाणिज्यं पीड्यते तदा ॥47॥

---

1. युजो मु०। 2. मासो मु०। 3. मासे मासे मु०। 4. वर्षणं यदा मु०। 5. विनिर्दिशेत्। 6. वायुवृष्टिरनावृष्टिर्मासमेकं च वर्षति मु०। 7. खारिरेव न संशयः मु०।

अपग्रहं तु जानीयाद् दशाहं प्रौष्ठपादिकम्।
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं तां समां[1] नाऽत्र संशय: ॥48॥

विशाखा में प्रथम वृष्टि हो तो एक खारी प्रमाण 16 द्रोण निस्सन्देह जल बरसता है। फसल बहुत अच्छी होती है तथा व्यापार भी निर्बाध रूप से चलता है। भाद्रपद मास में दश दिन जाने पर अपग्रह—अनिष्ट होता है। यों इस वर्ष में निस्सन्देह क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य की स्थिति होती है ॥47-48॥

जानीयादनुराधायां खारीमेकां[2] प्रवर्षणम्।
[3]तदा सुभिक्षं सक्षेमं परचक्रं प्रशाम्यति ॥49॥
दूरं प्रवासिका यान्ति धर्मशीलाश्च मानवा:।
मैत्री च स्थावरा ज्ञेया शाम्यन्ते चेतयस्तदा ॥50॥

यदि अनुराधा नक्षत्र में प्रथम जल-वृष्टि हो तो एक खारी प्रमाण—16 द्रोण प्रमाण जल उस वर्ष बरसता है। क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य रहते हैं तथा परशासन भी शान्त रहता है। इस वर्ष दूर के प्रवासी भी वापस आते हैं, सभी व्यक्ति धर्मात्मा रहते हैं। मित्रता स्थिर होती है तथा भय और आतंक नष्ट होते जाते हैं ॥49-50॥

ज्येष्ठायामाढकानि स्युर्दशश्चाष्टौ[4] विनिर्दिशेत्।
स्थलेषु वापयेद् बीजं तदा भूदाहविद्रवम्[5] ॥51॥

ज्येष्ठा नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो 18 आढक प्रमाण जल-वृष्टि होती है। स्थल में बीज बोने पर भी फसल उत्तम होती है; किन्तु भूकम्प, भूदाह, आदि उपद्रव भी होते हैं। तात्पर्य यह है कि ज्येष्ठा नक्षत्र की प्रथम वर्षा फसल के लिए उत्तम है ॥51॥

मूलेन खारी [6]विज्ञेया सस्यं सर्वं समृद्ध्यति।
एकमूलानि पीड्यन्ते [7]वर्द्धन्ते तस्करा अपि ॥52॥

मूल नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो एक खारी प्रमाण जल बरसता है और सभी प्रकार के अनाजों की उत्पत्ति खूब होती है। सैनिक—योद्धा पीड़ा प्राप्त करते हैं तथा चोरों की वृद्धि होती है ॥52॥

---

1. सस्यं सम्पद्येत् सर्वं वाणिज्य पीड्यते न हि मु०। 2. खारि प्रवर्षणं सदा मु०। 3. क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं मु०। 4. चतुःषष्टि मु०। 5. विद्रव: मु०। 6. विजानीयात् मु०। 7. चोराश्च प्रबलाश्च ये मु०।

एतद् व्यासेन कथितं [1]समासाच्छ्रूयतां पुनः।
भद्रबाहुवचः श्रुत्वा मतिमानवधारयेत् ॥53॥

यह विस्तार से वर्णन किया है, संक्षेप में पुनः सुनिये। भद्रबाहु के वचनों को सुनकर बुद्धिमानों को उनका अवधारण करना चाहिए ॥53॥

द्वात्रिंशदाढकानि स्युः नक्रमासेषु निर्दिशेत्।
समक्षेत्रे द्विगुणितं तत् [2]त्रिगुणं वाहिकेषु च ॥54॥

नक्रमास---श्रावण मास में 32 आढक प्रमाण वर्षा हो तो समक्षेत्र में दुगुनी और निम्न स्थल—आर्द्र स्थलों में तिगुनी फसल होती है ॥54॥

उल्कावत् साधनं चात्र वर्षणं च विनिर्दिशेत्।
शुभाऽशुभं [3]तदा वाच्यं सम्यग् ज्ञात्वा यथाविधि[4] ॥55॥

उल्का के समान वर्षण की सिद्धि भी कर लेनी चाहिए तथा सम्यक् प्रकार जानकर के शुभाशुभ फल का निरूपण करना चाहिए ॥55॥

इति भद्रबाहुके संहितायां महानैमित्तशास्त्रे सकलमारसमुच्चयवर्षणो नाम दशमोऽध्यायः परिसमाप्तः।

विवेचन---वर्षा का विचार यद्यपि पूर्वोक्त अध्यायों में भी हो चुका है, फिर भी आचार्य विशेष महत्ता दिखलाने के लिए पुनः विचार करते हैं। प्रथम वर्षा जिस नक्षत्र में होती है, उसी के अनुसार वर्षा के प्रमाण का विचार किया गया है। आचार्य ऋषिपुत्र ने निम्न प्रकार वर्षा का विचार किया है।

यदि मार्गशीर्ष महीने में पानी बरसता है तो ज्येष्ठ के महीने में वर्षा का अभाव रहता है। यदि पौष मास में बिजली चमककर पानी बरसे तो आषाढ़ के महीने में अच्छी वर्षा होती है। माघ और फाल्गुन महीनों के शुक्लपक्ष में तीन दिनों तक पानी बरसता रहे तो छठे और नौवें महीने में अवश्य पानी बरसता है। यदि प्रत्येक महीने में आकाश में बादल आच्छादित रहें तो उस प्रदेश में अनेक प्रकार की बीमारियाँ होती हैं। वर्ष के आरम्भ में यदि कृत्तिका नक्षत्र में पानी बरसे तो अनाज की हानि होती है और उस वर्ष में अतिवृष्टि या अनावृष्टि का भी योग रहता है। रोहिणी नक्षत्र में प्रथम वर्षा होने पर भी देश की हानि होती है तथा असमय में वर्षा होती है, जिससे फसल अच्छी नहीं उत्पन्न होती। अनेक प्रकार की व्याधियाँ तथा अनाज की महँगाई भी इस नक्षत्र में पानी बरसने से होती है। परस्पर कलह और विसंवाद भी होते हैं। मृगशिर नक्षत्र में प्रथम वर्षा होने से अवश्य सुभिक्ष होता है। फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। यदि सूर्य नक्षत्र

1. समासेन पुनः श्रृणु। 2. त्रिगुणं श्राधितेषु च मु०। 3. ततो मु०। 4. क्रमम् मु०।

मृगशिर हो तो खण्डवृष्टि होती है तथा कृषि में अनेक प्रकार के रोग भी लगते हैं। इस नक्षत्र की वर्षा व्यापार के लिए भी उत्तम नहीं है। राजा या प्रशासक को भी कष्ट होते हैं। मन्त्री-पुत्र या किसी बड़े अधिकारी की मृत्यु भी दो महीने में होती है। आर्द्रा नक्षत्र में प्रथम जल-वृष्टि हो तो खण्डवृष्टि का योग रहता है, फसल साधारणतया आधी उत्पन्न होती है। चीनी, गुड़, और मधु का भाव सस्ता रहता है। श्वेत रंग के पदार्थों में कुछ महँगाई आती है। पुनर्वसु नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो एक महीने तक लगातार जल बरसता है। फसल अच्छी नहीं होती तथा बोया गया बीज भी मारा जाता है। आश्विन और कार्तिक में वर्षा का अभाव रहता है और सभी वस्तुएं प्राय: महँगी होती हैं, लोगों में धर्माचरण की प्रवृत्ति होती है। रोग-व्याधियों के लिए उक्त प्रकार का वर्ष अत्यन्त अनिष्टकर होता है, सर्वत्र अशान्ति और असन्तोष दिखलाई पड़ता है; तो साधारण जनता का ध्यान धर्म-साधन की ओर अवश्य जाता है। पुष्य नक्षत्र में प्रथम जल वर्षा होने पर समयानुकूल जल की वर्षा एक वर्ष तक होती रहती है, कृषि बहुत उत्तम होती है, खाद्यान्नों के सिवाय फलों और मेवों की अधिक उत्पत्ति होती है। प्राय: समस्त वस्तुओं के भाव गिरते हैं। जनता में पूर्णतया शान्ति रहती है, प्रशासक वर्ग की समृद्धि बढ़ती है। जनसाधारण में परस्पर विश्वास और सहयोग की भावना का विकास होता है। यदि आश्लेषा नक्षत्र में प्रथम जल की वर्षा हो तो वर्षा उत्तम नहीं होती, फसल की हानि होती है, जनता में असन्तोष और अशान्ति फैलती है। सर्वत्र अनाज की कमी होने से हाहाकार व्याप्त हो जाता है। अग्निभय और शस्त्रभय का आतङ्क उस प्रदेश में अधिक रहता है। चोरी और लूट का व्यापार अधिक बढ़ता है। दैन्य और निराशा का संचार होने से राष्ट्र में अनेक प्रकार के दोष प्रविष्ट होते हैं। यदि इस नक्षत्र में वर्षा के साथ ओले भी गिरें तो जिस प्रदेश में इस प्रकार की वर्षा हुई है, उस प्रदेश के लिए अत्यन्त भयकारक समझना चाहिए। उक्त प्रदेश में प्लेग, हैजा जैसी संक्रामक बीमारियाँ अधिक बढ़ती हैं, जनसंख्या घट जाती है। जनता सब तरह से कष्ट उठाती है। आश्लेषा नक्षत्र में तेज वायु के साथ वर्षा हो तो एक वर्ष पर्यन्त उक्त प्रदेश को कष्ट उठाना पड़ता है, धूल और कंकड़ पत्थरों के साथ वर्षा हो तथा चारों ओर बादल मण्डलाकार बन जाएं, तो निश्चयत: उस प्रदेश में अकाल पड़ता है तथा पशुओं की भी हानि होती है और अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पड़ते हैं। प्रशासक वर्ग के लिए उक्त प्रकार की वर्षा भी कष्टकारक होती है।

/यदि मघा और पूर्वा फाल्गुनी में प्रथम वर्षा हो तो समयानुकूल वर्षा होती है, फसल भी उत्तम होती है। जनता में सब प्रकार का अमन-चैन व्याप्त रहता है। कलाकार और शिल्पियों के लिए उक्त नक्षत्रों की वर्षा कष्टप्रद है तथा

मनोरंजन के साधनों की कमी रहती है। राजनीतिक और सामाजिक दृष्टि से उक्त नक्षत्रों की वर्षा साधारण फल देती है। देश में सभी प्रकार की समृद्धि बढ़ती है और नागरिकों में अभ्युदय की वृद्धि होती है। यद्यपि उक्त नक्षत्रों की वर्षा फसल की वृद्धि के लिए शुभ है, पर आन्तरिक शान्ति में बाधक होती है। भीतरी आनन्द प्राप्त नहीं हो पाता और आन्तरिक अशान्ति बनी ही रह जाती है। उत्तरा फाल्गुनी और हस्त नक्षत्र में प्रथम वर्षा होने से सुभिक्ष और आनन्द दोनों की ही प्राप्ति होती है। वर्षा प्रचुर परिमाण में होती है, फसल की उत्पत्ति भी अच्छी होती है। विशेषतः धान की फसल खूब होती है। पशु-पक्षियों को भी शान्ति और सुख मिलता है। तृण और धान्य दोनों की उपज अच्छी होती है। आर्थिक शान्ति के विकास के लिए उक्त नक्षत्रों में वर्षा होना अत्यन्त शुभ है। गुड़ की फसल बहुत अच्छी होती है तथा गुड़ का भाव भी सस्ता रहता है। जूट की फसल साधारण होती है, इसका भाव भी आरम्भ में सस्ता, पर आगे जाकर तेज हो जाता है। व्यापारियों के लिए भी उक्त नक्षत्रों की वर्षा सुखदायक होती है। साधारणतः व्यापार बहुत ही अच्छा चलता है। देश में कल-कारखानों का विकास भी अधिक होता है। चित्रा नक्षत्र में प्रथम जल की वर्षा हो तो वर्षा अत्यन्त कम होती है, परन्तु भाद्रपद और आश्विन में वर्षा का योग अच्छा रहता है। स्वाती नक्षत्र में प्रथम वर्षा होने से मामूली वर्षा होती है। श्रावण मास में अच्छा पानी बरसता है, जिससे फसल अच्छी हो जाती है। कार्तिकी फसल साधारण ही रहती है, पर चैत्री फसल अच्छी हो जाती है; क्योंकि उक्त नक्षत्र की वर्षा आश्विन मास में भी जल की वर्षा का योग उत्पन्न करती है। यदि विशाखा और अनुराधा नक्षत्र में प्रथम जल की वर्षा हो तो उस वर्ष खूब जल-वृष्टि होती है। तालाब और पोखरे प्रथम जल की वर्षा से ही भर जाते हैं। धान, गेहूँ, जूट और तिलहन की फसल विशेष रूप से उत्पन्न होती है। व्यापार के लिए यह वर्ष साधारणतया अच्छा होता है। अनुराधा में प्रथम वर्षा होने से गेहूँ में एक प्रकार का रोग लगता है जिससे गेहूँ की फसल मारी जाती है। यद्यपि गन्ना की फसल बहुत अच्छी उत्पन्न होती है। व्यापार की दृष्टि से अनुराधा नक्षत्र की वर्षा बहुत उत्तम है। इस नक्षत्र में वर्षा होने से व्यापार में उन्नति होती है। देश का आर्थिक विकास होता है तथा कला-कौशल की भी उन्नति होती है। ज्येष्ठ नक्षत्र में प्रथम वर्षा होने से पानी बहुत कम बरसता है, पशुओं को कष्ट होता है। तृण की उत्पत्ति अनाज की अपेक्षा कम होती है, जिससे पालतू पशुओं को कष्ट उठाना पड़ता है। मवेशी का मूल्य सस्ता भी रहता है। दूध की उत्पत्ति भी कम होती है। उक्त प्रकार की वर्षा देश की आर्थिक क्षति की द्योतिका है। धन-धान्य की कमी होती है, संक्रामक रोग बढ़ते हैं। चेचक का प्रकोप विशेष रूप से होता है। सम-शीतोष्ण वाले प्रदेशों को मौसम बदल जाने से यह वर्षा विशेष कष्ट की

सूचिका है। तिलहन और तैल का भाव महँगा रहता है, घृत की कमी रहती है तथा प्रशासक और बड़े धनिक व्यक्तियों को भी कष्ट उठाना पड़ता है। सेना में परस्पर विरोध और जनता में अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। साधारण व्यक्तियों को अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पड़ते हैं। आश्विन और भाद्रपद के महीनों में केवल सात दिन वर्षा होती है तथा उक्त प्रकार की वर्षा फाल्गुन मास में घनघोर वर्षा की सूचना देती है जिससे फसल और अधिक नष्ट होती है। चैत्र के महीनों में जल बरसता है तथा ज्येष्ठ में भयंकर गर्मी पड़ती है जिससे महान् कष्ट होता है।

यदि मूल नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो उस वर्ष सभी महीनों में अच्छा पानी बरसता है। फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। विशेष रूप से भाद्रपद और आश्विन में समय पर उचित वर्षा होती है, जिससे दोनों ही प्रकार की फसलें बहुत अच्छी उत्पन्न होती हैं। व्यापार के लिए भी उक्त प्रकार की वर्षा अच्छी होती है। खनिज पदार्थ और वन-सम्पत्ति की वृद्धि के लिए उक्त प्रकार की वर्षा बहुत अच्छी होती है। मूल नक्षत्र की वर्षा यदि गर्जना के साथ हो तो माघ में भी जल की वर्षा होती है। बिजुली अधिक कड़के तो फसल में कमी रहती है शान्त और सुन्दर मन्द-मन्द वायु चलते हुए वर्षा हो तो सभी प्रकार की फसलें अत्युत्तम होती हैं। धान की उत्पत्ति अत्यधिक होती है। गाय-बैल आदि मवेशी को भी चावल खाने को मिलते हैं। चावल का भाव भी सस्ता रहता है। गेहूँ, जौ और चना की फसल भी साधारणतः उत्तम होती है। चने का भाव अन्य अनाजों की अपेक्षा महँगा रहता है तथा दाल वाले सभी अनाज महँगे होते हैं। यद्यपि इन अनाजों की उत्पत्ति भी अधिक होती है फिर भी इनका मूल्य वृद्धिगत होता है। उत्तराषाढ़ नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो अच्छी वर्षा होती है तथा हवा भी तेजी से चलती है। इस नक्षत्र में वर्षा होने से चैत्र वाली फसल बहुत अच्छी होती है, अगहनी धान भी अच्छा होता है; किन्तु कात्तिकी अनाज कम उत्पन्न होते हैं। नदियों में बाढ़ आती है, जिससे जनता को अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। भाद्रपद और पौष में हवा चलती है, जिससे फसल को भी क्षति होती है। श्रवण नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो कात्तिक मास में जल का अभाव और अवशेष महीनों में जल की वर्षा अच्छी होती है। भाद्रपद में अच्छा जल बरसता है, जिससे धान, मकई, ज्वार और बाजरा की फसलें भी अच्छी होती हैं। आश्विन में जल की वर्षा शुक्ल पक्ष में होती है जिससे फसल अच्छी हो जाती है। गेहूँ में एक प्रकार का कीड़ा लगता है, जिससे इसकी फसल में क्षति उठानी पड़ती है। उक्त प्रकार की वर्षा आश्विन, कात्तिक और चैत्र के महीनों में रोगों की सूचना देती है। छोटे बच्चों को अनेक प्रकार के रोग होते हैं। स्त्रियों के लिए यह वर्षा उत्तम है, उनका सम्मान बढ़ता है तथा वे सब प्रकार

से शान्ति प्राप्त करती है। धनिष्ठा नक्षत्र में जल की वर्षा होने पर पानी श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्तिक, माघ और वैशाख में खूब बरसता है। फसल कहीं-कहीं अतिवृष्टि के कारण नष्ट भी हो जाती है। आर्थिक दृष्टि से उक्त प्रकार की वर्षा अच्छी होती है। देश के वैभव का भी विकास होता है। यदि गर्जन-तर्जन के साथ उक्त नक्षत्र में वर्षा हो तो उपर्युक्त फल का चतुर्थांश फल कम समझना चाहिए। व्यापार के लिए भी उक्त प्रकार की वर्षा मध्यम है। यद्यपि विदेशों से व्यापारिक सम्बन्ध बढ़ता है तथा प्रत्येक वस्तु के व्यापार में लाभ होता है। धनिष्ठा नक्षत्र के आरम्भ में ही जल की वर्षा हो तो फसल उत्तम और अन्तिम तीन घटियों में जल बरसे तो साधारण फल होता है और वर्षा भी मध्यम ही होती है। शतभिषा नक्षत्र में जल की प्रथम वर्षा हो तो बहुत पानी बरसता है। अगहनी फसल मध्यम होती है, पर चैती फसल अच्छी उपजती है। व्यापार में हानि उठानी पड़ती है, जूट और चीनी के व्यापार में साधारण लाभ होता है। पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र के आरम्भ की पाँच घटियों में जल बरसे तो फसल मध्यम और वर्षा भी मध्यम होती है। माघ मास में वर्षा का अभाव होने से चैती फसल में कमी आती है। यद्यपि चातुर्मास में जल खूब बरसता है, फिर भी फसल में न्यूनता रह जाती है। अन्तिम की घटियों में जल की वर्षा होने से अगहन में पानी की वर्षा होती है, फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। धान की फसल में रोग लग जाते हैं, फिर भी फसल मध्यम हो ही जाती है। यदि उक्त नक्षत्र के मध्य भाग में वर्षा हो तो अधिक जल की वर्षा होती है तथा आवश्यकतानुसार जल बरसने से फसल बहुत उत्तम होती है। व्यापारियों के लिए उक्त प्रकार की वर्षा हानि पहुँचाने वाली होती है। यदि उत्तराभाद्रपद विद्ध पूर्वाभाद्रपद में वर्षा आरम्भ हो तो शासकों के लिए अशुभकारक होती है तथा देश की समृद्धि में भी कमी आती है।

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो चातुर्मास में अच्छी वर्षा होती है। फसल अतिवृष्टि के कारण कुछ बिगड़ जाती है। कार्तिक मास में आने वाली फसलों में कमी होती है। चैती फसल अच्छी होती है। ज्वार और बाजरा की उत्पत्ति बहुत कम होती है। उत्तराभाद्रपद के प्रथम चरण में वर्षा आरम्भ होकर बन्द हो जाय तो कार्तिक में पानी नहीं बरसता, अवशेष महीनों में वर्षा होती है। फसल भी उत्तम होती है। द्वितीय चरण में वर्षा होकर तृतीय चरण में समाप्त हो तो वर्षा समयानुकूल होती है और फसल भी उत्तम होती है। यदि उत्तराभाद्रपद के तृतीय चरण में वर्षा हो तो चातुर्मास में वर्षा होने के साथ मार्गशीर्ष और माघ मास में भी पर्याप्त वर्षा होती है। चतुर्थ चरण में वर्षा आरम्भ हो तो भाद्रपद मास में अत्यल्प पानी बरसता है। आश्विन मास में साधारण वर्षा होती है। माघ मास में वर्षा होने के कारण गेहूँ-चने की फसल बहुत अच्छी

होती है। रेवती नक्षत्र में वर्षा आरम्भ हो तो अनाज का भाव ऊँचा हो जाता है, वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। श्रावण मास के शुक्लपक्ष में केवल पाँच दिन ही वर्षा होने का योग रहता है। भाद्रपद और आश्विन में यथेष्ट जल बरसता है। भाद्रपद मास में वस्त्र और अनाज महँगे होते हैं। कार्तिक मास के अन्त में भी जल की वर्षा होती है। रेवती नक्षत्र के प्रथम चरण में वर्षा होने पर चातुर्मास में यथेष्ट वर्षा होती है तथा पौष और माघ में भी वर्षा होने का योग रहता है। वस्तुओं के भाव अच्छे रहते हैं। गुड़ के व्यापार में अच्छा लाभ होता है। देश में सुभिक्ष और सुख-शान्ति रहती है। यदि रेवती नक्षत्र लगते ही वर्षा आरम्भ हो जाय तो फसल के लिए मध्यम है; क्योंकि अतिवृष्टि के कारण फसल खराब हो जाती है। चैती फसल उत्तम होती है, अगहनी में भी कमी नहीं आती; केवल कार्तिकीय फसल में कमी आती है। मोटे अनाजों की उत्पत्ति कम होती है। श्रावण के महीने में प्रत्येक वस्तु महँगी होती है। यदि रेवती नक्षत्र के तृतीय चरण में वर्षा हो तो भाद्रपद मास सूखा जाता है; केवल हल्की वर्षा होकर रुक जाती है। आश्विन मास में अच्छी वर्षा होती है, जिससे फसल साधारणतः अच्छी हो जाती है। श्रावण से आश्विन मास तक सभी प्रकार का अनाज महँगा रहता है। अन्य वस्तुओं में साधारण लाभ होता है। घी का भाव इस वर्ष अधिक ऊँचा रहता है। मवेशी की भी कमी रहती है, मवेशी में एक प्रकार का रोग फैलता है, जिससे मवेशी को क्षति होती है। द्वितीय चरण के अन्त में वर्षा आरम्भ होने पर वर्ष के लिए अच्छा फलादेश होता है। गेहूँ, चना और गुड़ का भाव प्रायः सस्ता रहता है, केवल मूल्यवान् धातुओं का भाव ऊँचा उठता है। खनिज पदार्थों की उत्पत्ति इस वर्ष अधिक होती है तथा इन पदार्थों के व्यापार में भी लाभ रहता है। रेवती नक्षत्र के तृतीय चरण में वर्षा हो तो प्रायः अनावृष्टि का योग समझना चाहिए। श्रावण में पाँच दिन, भादों में तीन और आश्विन में आठ दिन जल की वर्षा होती है। फसल निकृष्ट श्रेणी की उत्पन्न होती है, वस्तुओं के भाव महँगे रहते हैं। देश में अशान्ति और लूट-पाट अधिक होती है। चतुर्थ चरण में वर्षा होने से समयानुकूल पानी बरसता है, फसल भी अच्छी होती है; व्यापारियों के लिए भी यह वर्षा उत्तम होती है। यदि रेवती नक्षत्र का क्षय हो और अश्विनी में वर्षा आरम्भ हो तो इस वर्ष अच्छी वर्षा होती है; पर मनुष्य और पशुओं को अधिक शीत पड़ने के कारण महान् कष्ट होता है। फसल को भी पाला मारता है। यदि अश्विनी नक्षत्र के प्रथम चरण में वर्षा आरम्भ हो तो चातुर्मास में अच्छी वर्षा होती है, फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। विशेषतः चैती फसल बड़े जोर की उपजती है तथा मनुष्य और पशुओं को सुख-शान्ति प्राप्त होती है। यद्यपि इस वर्ष वायु और अग्नि का अधिक प्रकोप रहता है। फिर भी किसी प्रकार की बड़ी क्षति नहीं होती है। ग्रीष्म ऋतु में लू अधिक

चलती है, तथा इस वर्ष गर्मी भी भीषण पड़ती है। देश के नेताओं में मतभेद एवं उपद्रव होते हैं। व्यापारियों के लिए उक्त प्रकार की वर्षा अधिक लाभदायक होती है। प्रथम चरण के लगते ही वर्षा का आरम्भ हो और समस्त नक्षत्र के अन्त तक वर्षा होती रहे तो वर्ष उत्तम नहीं रहता है। चातुर्मास के उपरान्त जल नहीं बरसता, जिससे फसल अच्छी नहीं होती। तृतीय चरण में वर्षा होने पर पौष में वर्षा का अभाव तथा फाल्गुन में वर्षा होती है। इस चरण में वर्षा का आरम्भ होना साधारण होता है। वस्तुओं के भाव नीचे गिरते हैं। आश्विन मास से वस्तुओं के भावों में उन्नति होती है। व्यापारियों को अशान्ति रहती है, बाजार भाव प्रायः अस्थिर रहता है। चतुर्थ चरण में वर्षा आरम्भ होने पर इस वर्ष उत्तम वर्षा होती है। सभी प्रकार के अनाज अच्छी तादाद में उत्पन्न होते हैं। भरणी नक्षत्र में वर्षा आरम्भ हो तो इस वर्ष प्रायः वर्षा का अभाव रहता है या अल्प वर्षा होती है। फसल के लिए भी उक्त नक्षत्र में जल की वर्षा होना अच्छा नहीं है। अनेक प्रकार की बीमारियाँ भी उक्त नक्षत्र में वर्षा होने पर फैलती हैं। यदि भरणी का क्षय हो और कृत्तिका भरणी के स्थान पर चल रहा हो तो प्रथम वर्षा के लिए बहुत उत्तम है। भरणी के प्रथम और तृतीय चरण बहुत अच्छे हैं, इनके होते वर्षा होने पर फसल प्रायः अच्छी होती है, जनता में शान्ति रहती है। यद्यपि उक्त चरण में वर्षा होने पर भी जल की कमी ही रहती है, फिर भी फसल हो जाती है। द्वितीय और चतुर्थ चरण में वर्षा हो तो वर्षा के अभाव के साथ फसल का भी अभाव रहता है। प्रायः सभी वस्तुएँ महँगी हो जाती हैं, व्यापारियों को भी साधारण ही लाभ होता है। नाना प्रकार की व्याधियाँ भी फैलती हैं।

यहाँ वर्षा का आरम्भ श्रावण कृष्ण प्रतिपदा को मानना होगा तथा उसके बाद ही या उसी दिन जो नक्षत्र हो उसके अनुसार उपर्युक्त क्रम से फलाफल अवगत करना चाहिए। समस्त वर्ष का फल श्रावण कृष्ण प्रतिपदा से ही अवगत किया जाता है।

वर्षा का प्रमाण निकालने का विशेष विचार—जिस समय सूर्य रोहिणी नक्षत्र में प्रवेश करे, उस समय चार घड़ा सुन्दर स्वच्छ जल मंगाएँ और चतुष्कोण घर में गोबर या मिट्टी से लीपकर पवित्र चौके पर चारों घड़ों को उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम क्रम से स्थापित कर दें और उन जलपूरित घड़ों को उसी स्थान पर रोहिणी नक्षत्र पर्यन्त 15 दिन तक रखें, उन्हें तनिक भी अपने स्थान से इधर-उधर न उठाएँ। रोहिणी नक्षत्र के बीत जाने पर उत्तर दिशा वाले घड़े के जल का निरीक्षण करें। यदि उस घड़ा में पूर्णाकार समस्त जल मिले तो श्रावण भर खूब वर्षा होगी। आधा खाली होवे तो आधे महीने वृष्टि और चतुर्थांश जल अवशेष हो तो चौथाई वर्षा एवं जल से शून्य घड़ा देखा जाय तो श्रावण में वर्षा का अभाव समझना चाहिए। तात्पर्य यह है कि उत्तर दिशा के घड़े के जलप्रमाण

से ही श्रावण में वर्षा का अनुमान लगाया जा सकता है। जितना कम जल घड़े में रहेगा, उतनी ही कम वर्षा होगी। इसी प्रकार पूर्व दिशा के घड़े से भाद्रपद मास की वर्षा, दक्षिण दिशा के घड़े से आश्विन मास की वर्षा, और पश्चिम के घड़े के जल से कार्त्तिक की वर्षा का अनुमान करना चाहिए। यह एक अनुभूत और सत्य वर्षा परिज्ञान का नियम है।

चित्र

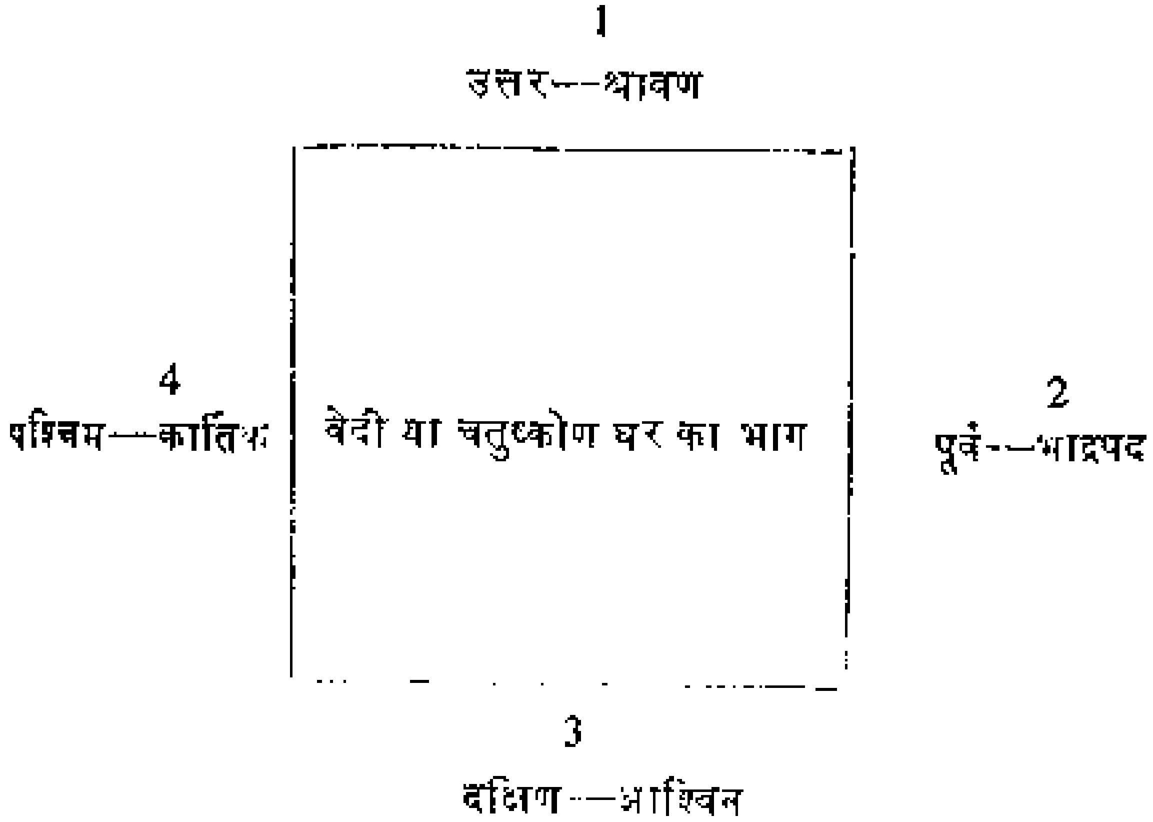

वर्षा का विचार रोहिणी-चक्र के अनुसार भी किया जाता है। 'वर्षप्रबोध' में मेघविजय गणि ने इस चक्र का उल्लेख निम्न प्रकार किया है :

राशिचक्रं लिखित्वादौ मेषसंक्रान्ति भादिकम् ।
अष्टाविंशतिकं तत्र लिखेन्नक्षत्रसंकुले ॥
सन्धौ द्वयं जलं दद्यादन्यत्रैकैकमेव च ।
चत्वारः सागरास्तत्र सन्ध्यश्चाष्टसंख्यया ॥
शृंगाणि तत्र चत्वारि तटान्यष्टौ स्मृतानि च ।
रोहिणी पतिता यत्र ज्ञेयं तत्र शुभाशुभम् ॥
जाता जलप्रदस्यैषा चन्द्रस्य परमप्रिया ।
समुद्रे ति महावृष्टिस्तटे वृष्टिश्च शोभना ॥
पर्वते बिन्दुमात्रा च खण्डवृष्टिश्च सन्धिषु ।
सन्धौ वणिग् गृहे वासः पर्वते कुम्भकृद्गृहे ॥
मालाकारगृहे सिन्धौ रजकस्य गृहे तटे ।

अर्थात् सूर्य की मेष संक्रान्ति के समय जो चन्द्र नक्षत्र हो, उसको आदि कर

अट्ठाईस नक्षत्रों को क्रम से स्थापित करना चाहिए। इनमें दो-दो शृंग में, एक-एक नक्षत्र सन्धि में, और एक-एक तट में स्थापित करे। यदि उक्त क्रम से रोहिणी समुद्र में पड़े तो अधिक वर्षा, शृंग में पड़े तो थोड़ी वर्षा, सन्धि में पड़े तो वर्षाभाव और तट में पड़े तो अच्छी वर्षा होती है। यदि रोहिणी नक्षत्र सन्धि में हो तो वैश्य के घर, पर्वत पर हो तो कुम्हार के घर, सिन्धु में हो तो माली के घर और तट में हो तो धोबी के घर रोहिणी का वास समझना चाहिए। रोहिणी चक्र में अश्विनी नक्षत्र के स्थान पर मेष सूर्य संक्रान्ति का नक्षत्र रखना होगा।

रोहिणी—चक्र

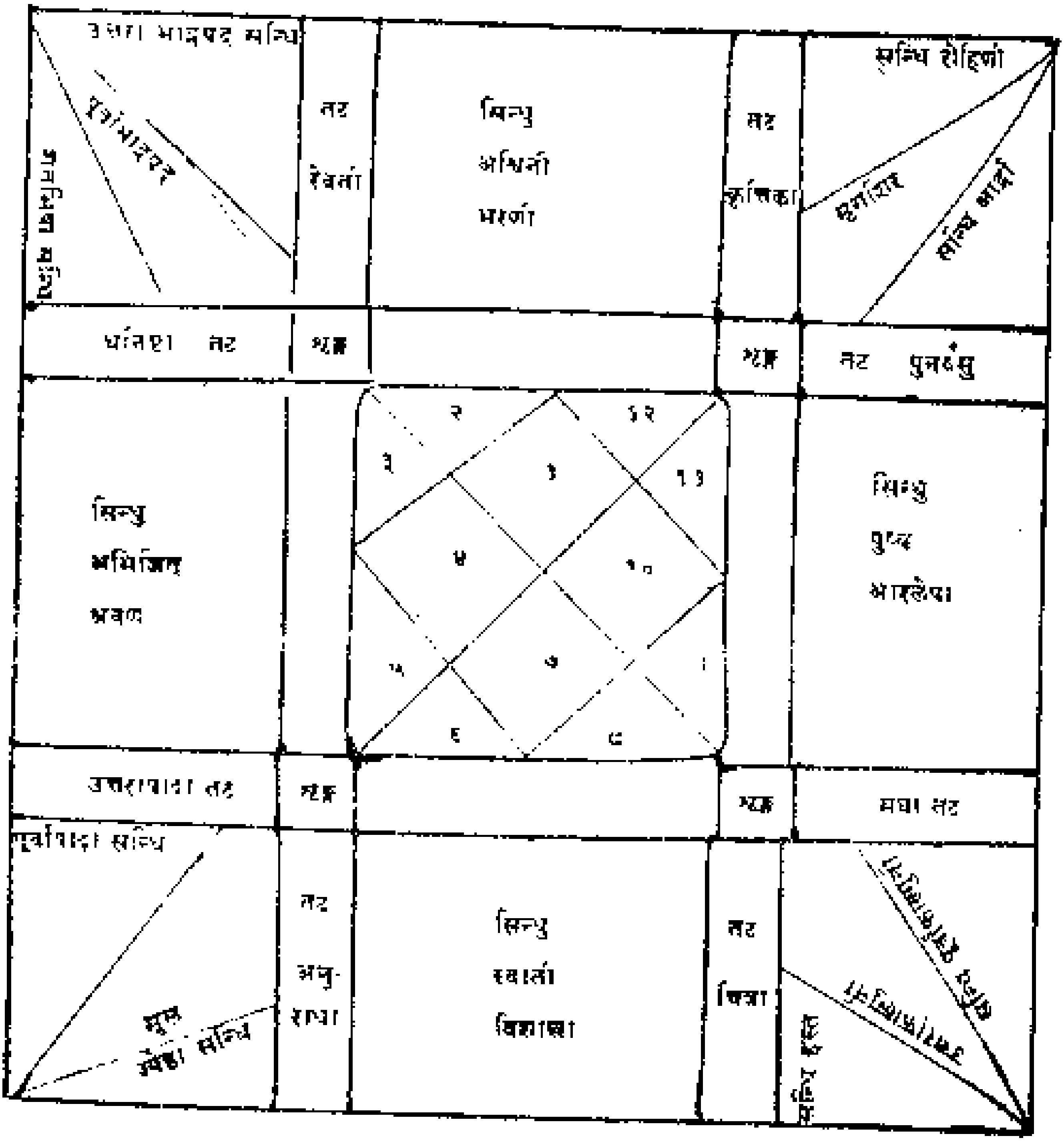

वर्षा का विचार एवं अन्य फलादेश—यदि माघ मास में मेघ आच्छादित रहें और चैत्र में आकाश निर्मल रहे तो पृथ्वी में धान्य अधिक उत्पन्न हों और

वर्षा अधिक मनोरम होती है। चैत्र शुक्लपक्ष में आकाश में बादलों का छाया रहना शुभ समझा जाता है। यदि चैत्र शुक्ला पंचमी को रोहिणी नक्षत्र हो और इस दिन बादल आकाश में दिखलाई पड़ें तो निश्चय से आगामी वर्ष अच्छी वर्षा होती है। सुभिक्ष रहता है तथा प्रजा में सुख-शान्ति रहती है। सूर्य जिस समय या जिस दिन आर्द्रा में प्रवेश करता है, उस समय या उस दिन के अनुसार भी वर्षा और सुभिक्ष का फल ज्ञात किया जाता है। आचार्य मेघ महोदय गार्ग ने लिखा है कि सूर्य रविवार के दिन आर्द्रा नक्षत्र में प्रवेश करे तो वर्षा का अभाव या अल्पवृष्टि, देश में उपद्रव, पशुओं का नाश, फसल की कमी, अन्न का भाव महँगा एवं देश में उपद्रव आदि फल घटित होते हैं। सोमवार को आर्द्रा में रवि का प्रवेश हो तो समयानुकूल यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष, शान्ति, परस्पर मेल-मिलाप की वृद्धि, सहयोग का विकास, देश की उन्नति, व्यापारियों को लाभ, तिलहन में विशेष लाभ, वस्त्र-व्यापार का विकास एवं घृत सस्ता होता है। मंगलवार को आर्द्रा में रवि का प्रवेश हो तो देश में धन की हानि, अग्निभय, कलह-विसंवादों की वृद्धि, जनता में परस्पर संघर्ष, चोर-लुटेरों की उन्नति, साधारण वर्षा, फसल में कमी और धन एवं खनिज पदार्थों की उत्पत्ति में कमी होती है। बुधवार को आर्द्रा में सूर्य का प्रवेश हो तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, धान्य भाव सस्ता, रस भाव महँगा, खनिज पदार्थों की उत्पत्ति अधिक, मोती-माणिक्य की उत्पत्ति में वृद्धि, घृत की कमी, पशुओं में रोग और देश का आर्थिक विकास होता है। गुरुवार के दिन आर्द्रा में सूर्य का प्रवेश हो तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, अर्थ वृद्धि, देश में उपद्रव, महामारियों का प्रकोप, गुड़-गेहूँ का भाव महँगा तथा अन्य प्रकार के अनाजों का भाव सस्ता; शुक्रवार में प्रवेश हो तो चातुर्मास में अच्छी वर्षा, पर माघ में वर्षा का अभाव तथा कार्तिक में भी वर्षा की कमी रहती है। इसके अतिरिक्त फसल में साधारणत: रोग, पशुओं में व्याधि और अग्निभय एवं शनिवार को प्रवेश हो तो दुष्काल, वर्षाभाव या अल्पवृष्टि, असमय पर अधिक वर्षा, अनावृष्टि के कारण जनता में अशान्ति, अनेक प्रकार के रोगों की वृद्धि, धान्य का अभाव और व्यापार में भी हानि होती है। वर्षा का परिज्ञान रवि का आर्द्रा में प्रवेश होने पर किया जा सकेगा। पर इस बात का ध्यान रखना होगा कि प्रवेश के समय चन्द्र नक्षत्र कौन-सा है? यदि चन्द्र नक्षत्र मृदु और जलसंज्ञक हो तो निश्चयत: अच्छी वर्षा होती है। उग्र तथा अग्नि संज्ञक नक्षत्रों में जल की वर्षा नहीं होती। प्रातःकाल आर्द्रा में प्रवेश होने पर सुभिक्ष और साधारण वर्षा, मध्याह्न काल में प्रवेश होने पर चातुर्मास के आरम्भ में वर्षा, मध्य में कमी और अन्त में अल्पवृष्टि एवं सन्ध्या समय प्रवेश होने पर अतिवृष्टि या अनावृष्टि का योग रहता है। रात्रि में जब सूर्य आर्द्रा में प्रवेश करता है, तो उस वर्ष वर्षा अच्छी होती है, किन्तु फसल साधारण ही रहती है। अन्न का भाव निरन्तर ऊँचा-नीचा होता रहता है। सबसे

उत्तम समय मध्य रात्रि का है। इस समय रवि आर्द्रा में प्रवेश करता है तो अच्छी वर्षा और धान्य की उत्पत्ति उत्तम होती है। जब सूर्य का आर्द्रा में प्रवेश हो उस समय चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोण में प्रवेश करे अथवा चन्द्रमा की दृष्टि हो तो पृथ्वी धान्य से परिपूर्ण हो जाती है। जिस ग्रह के साथ सूर्य का इत्थशाल सम्बन्ध हो, उसके अनुसार भी फलादेश घटित होता है। मंगल, चन्द्रमा और शनि के साथ यदि सूर्य इत्थशाल कर रहा हो तो उस वर्ष घोर दुर्भिक्ष तथा अतिवृष्टि या अनावृष्टि का योग समझना चाहिए। गुरु के साथ यदि सूर्य का इत्थशाल हो तो यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष और जनता में शान्ति रहती है। व्यापार के लिए भी यह योग उत्तम है। देश का आर्थिक विकास होता है। बुध के साथ सूर्य का इत्थशाल हो तो पशुओं के व्यापार में विशेष लाभ, समयानुकूल वर्षा, धान्य की वृद्धि और सुख-शान्ति रहती है। शुक्र के साथ इत्थशाल होने पर चातुर्मास में कुल तीस दिन वर्षा होती है।

प्रश्नलग्नानुसार वर्षा का विचार—यदि प्रश्नलग्न के समय चौथे स्थान में राहु और शनि हों तो उस वर्ष घोर दुर्भिक्ष होता है तथा वर्षा का अभाव रहता है। यदि चौथे स्थान में मंगल हो तो उस वर्ष वर्षा साधारण ही होती है और फसल भी उत्तम नहीं होती। चौथे स्थान में गुरु और शुक्र के रहने से वर्षा उत्तम होती है। चन्द्रमा चौथे स्थान में हो तो श्रावण और भाद्रपद में अच्छी वर्षा होती है; किन्तु कार्तिक में वर्षा का अभाव और आश्विन में कुल सात दिन वर्षा होती है। हवा बहुत तेज चलती है, जिससे फसल भी अच्छी नहीं हो पाती। यदि प्रश्नलग्न में गुरु हो और एक या दो ग्रह उच्च के चतुर्थ, सप्तम, दशम भाव में स्थित हों तो वर्ष बहुत ही उत्तम होता है। समयानुसार यथेष्ट वर्षा होती है, गेहूँ, चना, धान, जौ, तिलहन, गन्ना आदि की फसल बहुत अच्छी होती है। जूट का भाव ऊपर उठता है तथा इसकी फसल भी बहुत अच्छी रहती है। व्यापारियों के लिए वर्ष बहुत ही अच्छा रहता है। यदि प्रश्नलग्न में कन्या राशि हो तो अच्छी वर्षा, पूर्वीय हवा के साथ होती है। वर्ष में कुल 90 दिन वर्षा होती है, फसल भी अच्छी होती है। मनुष्य और पशुओं को सुख-शान्ति मिलती है। केन्द्र स्थानों में शुभ ग्रह हों तो सुभिक्ष और वर्षा होती है जिस दिशा में क्रूर ग्रह हों अथवा शनि देखे तो उस दिशा में अवश्य दुर्भिक्ष होता है। यदि वर्षा के सम्बन्ध में प्रश्न करने वाला पाँचों अंगुलियों को स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो अल्प वर्षा, फसल की क्षति एवं अँगूठे का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा होती है। यदि वर्षा के प्रश्न काल में पृच्छक सिर का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो आश्विन में वर्षा भाव तथा अन्य महीनों में साधारण वर्षा; कान का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा, पर भाद्रपद में कुल दस दिन की वर्षा; आँखों को मलता हुआ प्रश्न करे तो चातुर्मास के सिवा अन्य महीनों में वर्षा का

अभाव तथा चातुर्मास में भी कुल सत्ताईस दिन वर्षा; घुटनों को स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो सामान्यतया सभी महीनों में वर्षा, फसल उत्तम जनता का आर्थिक विकास, कला-कौशल की वृद्धि; पेट का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा, श्रावण और भाद्रपद में अच्छी वर्षा, फसल साधारण, देश का आर्थिक विकास, अग्निभय, जलभय, बाढ़ आने का भय; कमर स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो परिमित वर्षा, धान्य की सामान्य उत्पत्ति, अनेक प्रकार के रोगों की वृद्धि, वस्तुओं के भाव महँगे; पाँव का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो श्रावण में वर्षा की कमी, अन्य महीनों में अच्छी वर्षा, फसल की अच्छी उत्पत्ति, जौ और गेहूँ की विशेष उपज एवं जंघा का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो अनेक प्रकार के धान्यों की उत्पत्ति, मध्यम वर्षा, देश में समृद्धि, उत्तम फसल और देश का सर्वांगीण विकास होता है। प्रश्न काल में यदि मन में उत्तेजना आये, या किसी कारण से क्रोधादि आ जाये तो वर्षा का अभाव समझना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति को प्रश्नकाल में रोते हुए देखें तो चातुर्मास में अच्छी वर्षा होती है, किन्तु फसल में कमी रहती है। व्यापारियों के लिए भी यह वर्ष उत्तम नहीं होता। प्रश्नकाल में यदि काना व्यक्ति भी वहाँ उपस्थित हो और वह अपने हाथ से दाहिने कान को खुजला रहा हो तो घोर दुर्भिक्ष की सूचना समझनी चाहिए। विकृत अंग वाला किसी भी प्रकार का व्यक्ति वहाँ रहे तो वर्षा की कमी ही समझनी चाहिए। फसल भी साधारण ही होती है। सौम्य और सुन्दर व्यक्तियों का वहाँ उपस्थित रहना उत्तम माना जाता है।

एकादशोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गन्धर्वनगरं तथा।
शुभाऽशुभार्थभूतानां [1]निर्ग्रन्थस्य च भाषितम्॥1॥

अब गन्धर्व नगर का फलादेश कहता हूँ, जिस प्रकार पूर्वाचार्यों ने प्राणियों के शुभाशुभ का निरूपण किया है, उसी प्रकार यहाँ पर भी फल अवगत करना चाहिए॥1॥

---

1. नैर्ग्रन्थे निपुणं यथा मु०।

पूर्वसूरे यदा घोरं गन्धर्वनगरं भवेत् ।
नागराणां वधं विन्द्यात् तदा घोरमसंशयम् ॥2॥

यदि सूर्योदय काल में पूर्व दिशा में गन्धर्व नगर दिखलाई दे तो नागरिकों का वध होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥2॥

[1]अस्तमायाति दीप्तांशौ गन्धर्वनगरं भवेत् ।
यायिनां च तु [2]भयं विन्द्याद् [3]तदा घोरमुपस्थितम् ॥3॥

यदि सूर्य के अस्तकाल में गन्धर्व नगर दिखलाई दे तो यायी—आक्रमणकारी के लिए घोर भय की उपस्थिति सूचित करता है ॥3॥

रक्तं गन्धर्वनगरं दिशं दीप्तां यदा [4]भवेत् ।
शस्त्रोत्पातं तदा विन्द्याद् दारुणं समुपस्थितम् ॥4॥

यदि रक्त गन्धर्वनगर पूर्व दिशा में दिखलाई पड़े तो शस्त्रोत्पात—मार-काट का भय समझना चाहिए ॥4॥

पीतं गन्धर्वनगरं दिशं [5]दीप्तां यदा [6]भवेत् ।
व्याधिं तदा विजानीयात् प्राणिनां मृत्युसन्निभम् ॥5॥

यदि पीत—पीला गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो प्राणियों के लिए मृत्यु के तुल्य कष्टदायक व्याधि उत्पन्न होती है ॥5॥

कृष्णं गन्धर्वनगरमपरां[7] [8]दिशिमास्थितम् ।
[9]वधं तदा विजानीयाद् भयं वा शूद्रयोनिजम् ॥6॥

यदि कृष्ण वर्ण—काले रंग का गन्धर्वनगर पश्चिम दिशा में दिखलाई पड़े तो वध—मार-काट से उत्पन्न वध होता है तथा शूद्रों के लिए भयोत्पादक है ॥6॥

श्वेतं गन्धर्वनगरं दिशं सौम्यां यदा भृशम् ।
राज्ञो विजयमाख्याति [10]नगरश्च धनान्वितम् ॥7॥

यदि श्वेत गन्धर्वनगर उत्तर दिशा में दिखलाई पड़े तो राजा की विजय होती है और नगर धन-धान्य से परिपूर्ण होता है ॥7॥

---

1. अस्तं याते यथाऽऽदित्ये मु० । 2. तदा मु० । 3. वधं मु० । 4. भृशम् मु० । 5. याम्यां मु० । 6. भृशम् मु० । 7. अपरस्यां मु० । 8. मूर्तं दिशि मु० । 9. वर्ण मु० A. B. D. । 10. नगरस्य मु०; नगरं मु० C. ।

सर्वास्वपि यदा दिक्षु गन्धर्वनगरं भवेत् ।
सर्वे वर्णा विरुध्यन्ते सर्वदिक्षु परस्परम् ॥8॥

यदि सभी दिशाओं में गन्धर्वनगर हो तो सभी दिशाओं में सभी वर्ण वाले परस्पर विरोध करते हैं—कलह करते हैं ॥8॥

कपिलं सस्यघाताय मांजिष्ठं हरिणं [1]गवाम् ।
अव्यक्तवर्णं कुरुते बलक्षोभं [2]न संशयः ॥9॥

कपिल वर्ण का गन्धर्वनगर धान्य घातक, मञ्जिष्ठ वर्ण का गन्धर्वनगर हरिण, गौ आदि पशुओं का घातक और अव्यक्त वर्ण का गन्धर्वनगर सेना में क्षोभ उत्पन्न करता है ॥9॥

गन्धर्वनगरं स्निग्धं सप्राकारं सतोरणम् ।
शान्तदिशि समाश्रित्य राज्ञस्तद् विजयं [3]वदेत् ॥10॥

यदि स्निग्ध, परकोटा और तोरण सहित गन्धर्वनगर नीरव दिशा में दिखलाई पड़े तो राजा के लिए विजय देने वाला होता है ॥10॥

गन्धर्वनगरं व्योम्नि परुषं यदि दृश्यते ।
वाताशनिनिपातांस्तु तत् करोति सुदारुणम् ॥11॥

यदि आकाश में परुष—कठोर गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वायु के चलने और बिजली के गिरने का महान भय होता है ॥11॥

इन्द्रायुधसवर्णं च धूमाग्निसदृशं च यत् ।
तदाग्निभयमाख्याति गन्धर्वनगरं नृणाम् ॥12॥

यदि इन्द्रधनुष के समान वर्णवाला और धूमयुक्त अग्नि के समान गन्धर्व नगर दिखलाई पड़े तो मनुष्यों को अग्नि-भय होता है ॥12॥

खण्डं विशीर्णं [4]सच्छिद्रं गन्धर्वनगरं यदा ।
तदा तस्करसंघानां [5]भयं सञ्जायते सदा ॥13॥

यदि खण्डित, विशृंखलित और छिद्रयुक्त गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो पृथ्वी पर चोरों का भय होता है ॥13॥

यदा गन्धर्वनगरं सप्राकारं सतोरणम् ।
दृश्यते तस्करान् हन्ति तदा [6]चानूपवासिनः ॥14॥

---

1. गवां मु० । 2. समन्ततः मु० । 3. ―कारम् मु० । 4. छिद्रं वा मु० । 5. स भयं जायते भुवि मु० । 6. चवान्सवासिनः मु० ।

यदि गन्धर्व नगर परकोटा और तोरणरहित दिखलाई पड़े तो वनवासी तस्करों—चोरों और अनूपदेश निवासियों का विनाश होता है ॥14॥

विशेषतापसव्यं तु गन्धर्वनगरं यदा।
परचक्रेण सहसा नगरं [1]चाभिभूयते ॥15॥

यदि विशेष रूप से अपसव्य—दक्षिण की ओर गन्धर्व नगर दिखलाई पड़े तो परशासन के द्वारा नगर का घेरा डाला जाता है—परशासन का आक्रमण होता है ॥15॥

गन्धर्वनगरं क्षिप्रं [2]जायते वाभिदक्षिणम्।
स्वपक्षागमनं चैव जयं वृद्धि जलं वहेत् ॥16॥

यदि शीघ्रतापूर्वक दक्षिण की ओर गन्धर्वनगर गमन करता हुआ दिखलाई पड़े तो स्वपक्ष की सिद्धि, जय, वृद्धि और बल—सामर्थ्य की प्राप्ति होती है ॥16॥

यदा गन्धर्वनगरं प्रकटं तु दवाग्निवत्।
दृश्यते पुररोधाय तद्भवेन्नात्र संशयः ॥17॥

जब गन्धर्वनगर दावाग्नि—अरण्य में लगी अग्नि के समान दिखलाई पड़े तब नगर का अवरोध अवश्य होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥17॥

[3]अपसव्यं विशीर्णं तु गन्धर्वनगरं यदा।
तदा विलुप्यते राष्ट्रं बलक्षोभश्च जायते ॥18॥

अपसव्य—दक्षिण की ओर जर्जरित गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो राष्ट्रों में विप्लव—उपद्रव और सेना में क्षोभ होता है ॥18॥

यदा गन्धर्वनगरं प्रविशेच्चाभिदक्षिणम्।
अपूर्वां लभते राजा तदा स्फीतां वसुन्धराम् ॥19॥

जब गन्धर्वनगर दक्षिण से प्रवेश करे—दक्षिण से चारों दिशाओं की ओर घूमता हुआ दिखलाई दे तब राजा अपूर्व विशाल भूमि प्राप्त करता है ॥19॥

सध्वजं सपताकं वा सुस्निग्धं सुप्रतिष्ठितम्।
शान्तां दिशं प्रपद्येत राजवृद्धि[4]स्तथा भवेत् ॥20॥

ध्वजा और पताकाओं से युक्त स्निग्ध तथा सुव्यवस्थित शान्त दिशा—

1. परिचार्यते मु० । 2. दक्षिणे जायते यदा । 3. विशीर्यत् मु० C. । 4. तदाऽदिशेत् मु० ।

नीरव दिशा में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो राजवृद्धि का फलादेश समझना चाहिए ॥20॥

यदा [1]चाभ्रैर्घनैर्मिश्रं [2]सघनैः सबलाहकम् ।
गन्धर्वनगरं स्निग्धं विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥21॥

यदि शुभ मेघों से युक्त विद्युत् सहित स्निग्ध गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जल की बाढ़ आती है—वर्षा अधिक होती है और नदियों में बाढ़ आती है; सर्वत्र जल ही जल दिखलाई पड़ता है ॥21॥

सध्वजं सपताकं वा गन्धर्वनगरं [3]भवेत् ।
दीप्तां दिशं समाश्रित्य नियतं राजमृत्युदम् ॥22॥

यदि ध्वजा और पताका सहित गन्धर्वनगर पूर्व दिशा में दिखलाई पड़े तो नियमित रूप से राजा की मृत्यु होती है ॥22॥

विदिक्षु [4]चापि सर्वासु गन्धर्वनगरं यदा ।
संकरः सर्ववर्णानां तदा भवति दारुणः ॥23॥

यदि सभी विदिशाओं में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सभी वर्णों का अत्यन्त संकर-सम्मिश्रण होता है ॥23॥

द्विवर्णं वा त्रिवर्णं वा गन्धर्वनगरं [5]भवेत् ।
चातुर्वर्ण्यमयं भेदं तदाऽत्रापि विनिर्दिशेत् ॥24॥

यदि दो रंग, तीन रंग या चार रंग का गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भी उक्त प्रकार का ही फल घटित होता है ॥24॥

अनेकवर्णसंस्थानं गन्धर्वनगरं [6]यदा ।
क्षुभ्यन्ते तत्र राष्ट्राणि ग्रामाश्च नगराणि च ॥25॥
सङ्ग्रामाश्चापि जायन्ते[7] मांसशोणितकर्दमाः ।
[8]एतैश्च लक्षणैर्युक्तं भद्रबाहुवचो यथा ॥26॥

यदि अनेक वर्ण आकार का गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नगर, ग्राम और राष्ट्र में क्षोभ उत्पन्न होता है, युद्ध होते हैं और स्थान मांस तथा रक्त की कीचड़ से भर जाते हैं। उक्त प्रकार के निमित्त से अनेक प्रकार का उत्पात होता है, इस प्रकार का भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥25-26॥

---

1. शुभैः मु० । 2. सविद्युत् मु० । 3. यदा मु० 4. चैव मु० । 5. यदा मु० । 6. भवेत् मु० । 7. अनुवर्तन्ते मु० । 8. एतैर्निमित्तलक्षणैश्चापि मु० ।

रक्तं गन्धर्वनगरं क्षत्रियाणां भयावहम् ।
पीतं वैश्यान् निहन्त्याशु कृष्णं शूद्रान् सितं द्विजान् ॥27॥

लाल रंग का गन्धर्वनगर क्षत्रियों के लिए भयोत्पादक, पीतवर्ण का गन्धर्वनगर वैश्यों को, कृष्णवर्ण का गन्धर्वनगर शूद्रों को और श्वेत वर्ण का गन्धर्वनगर ब्राह्मणों को भयोत्पादक होने के साथ शीघ्र ही विनाश करता है ॥27॥

अरण्यानि तु सर्वाणि गन्धर्वनगरं यदा ।
आरण्यं जायते [1]सर्वं [2]तद्राष्ट्रं नात्र संशयः ॥28॥

यदि अरण्य में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शीघ्र ही राष्ट्र उजड़कर अरण्य —जंगल बन जाता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥28॥

अम्बरेषूदकं विन्द्याद् भयं प्रहरणेषु च ।
अग्निजेषूपकरणेषु भयमग्नेः समादिशेत् ॥29॥

यदि स्वच्छ आकाश में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जल की वृष्टि, अस्त्रों के बीच गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भय और अग्नि सम्बन्धी उपकरणों के मध्य गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अग्निभय होता है ॥29॥

शुभाऽशुभं विजानीयाच्चातुर्वर्ण्यं यथाक्रमम् ।
दिक्षु सर्वासु नियतं भद्रबाहुवचो यथा ॥30॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ण को क्रमानुसार पूर्वादि सभी दिशाओं के गन्धर्वनगर के अनुसार भद्रबाहु स्वामी के वचनों में शुभाशुभत्व जानना चाहिए ॥30॥

उल्कावत् साधनं दिक्षु जानीयात् पूर्वकीर्तितम् ।
गन्धर्वनगरं [3]सर्वं यथावदनुपूर्वशः ॥31॥

उल्का के समान पूर्व बताये गये निमित्तों के अनुसार गन्धर्व नगरों के फलाफल को अवगत कर लेना चाहिए ॥31॥

इति भद्रबाहुविरचिते निमित्ताधिकारद्वादशांगाद्—उद्धृत-निमित्तशास्त्रे गन्धर्वनगरं एकादशमं लक्षणम् ।

विवेचन—वराहमिहिर ने उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशा के गन्धर्वनगर का फलादेश क्रमशः पुरोहित, राजा, सेनापति और युवराज को विघ्नकारक बताया है। श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण के गन्धर्वनगर को ब्राह्मण,

1. राष्ट्र मु० । 2. अचिरान्नात्र संशयः । 3. सर्वगन्धर्वनगरं ।

क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के नाश का कारण माना है। उत्तर दिशा में गन्धर्वनगर हो तो राजाओं को जयदायी; ईशान, अग्नि और वायुकोण में स्थित हो तो नीच जाति का नाश होता है। शान्त दिशा में तोरणयुक्त गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो प्रशासकों की विजय होती है। यदि सभी दिशाओं में गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो राजा और राज्य के लिए समान रूप से भयदायक होता है। धूम, अनल और इन्द्रधनुष के समान हो तो चोर और वनवासियों को कष्ट देता है। कुछ पाण्डु रंग का गन्धर्वनगर हो तो वज्रपात होता है, भयंकर पवन भी चलता है। दीप्त दिशा में गन्धर्वनगर हो तो राजा की मृत्यु, वाम दिशा में हो तो शत्रुभय और दक्षिण भाग में स्थित हो तो जय की प्राप्ति होती है। नाना रंग की पताका से युक्त गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो रण में हाथी, मनुष्य और घोड़ों का अधिक रक्तपात होता है।

आचार्य ऋषिपुत्र ने बतलाया है कि पूर्व दिशा में गन्धर्वनगर दिखाई पड़े तो पश्चिम दिशा का नाश अवश्य होता है। पश्चिम में अन्न और वस्त्र की कमी रहती है। अनेक प्रकार के कष्ट पश्चिम निवासियों को सहन करने पड़ते हैं। दक्षिण दिशा में गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो राजा का नाश होता है, प्रशासक वर्ग में आपसी मनमुटाव भी रहता है, नेताओं में पारस्परिक कलह होती है, जिससे आन्तरिक अशान्ति होती रहती है। पश्चिम दिशा का गन्धर्वनगर पूर्व के वैभव का विनाश करता है। पूर्व में हैजा, प्लेग जैसी संक्रामक बीमारियाँ फैलती हैं और मलेरिया का प्रकोप भी अधिक रहेगा। उक्त दिशा का गन्धर्वनगर पूर्व दिशा के निवासियों को अनेक प्रकार का कष्ट देता है। उत्तर दिशा का गन्धर्वनगर उत्तर निवासियों के लिए ही कष्टकारक होता है। यह धन, जन और वैभव का विनाश करता है। हेमन्तऋतु के गन्धर्वनगर से रोगों का विशेष आतंक रहता है। वसन्त ऋतु में दिखाई देनेवाला गन्धर्वनगर सुकाल करता है तथा जनता का पूर्णरूप से आर्थिक विकास होता है। ग्रीष्मऋतु में दिखलाई देनेवाला गन्धर्वनगर नगर का विनाश करता है, नागरिकों में अनेक प्रकार से अशान्ति फैलाता है। अनाज की उपज भी कम होती है। वस्त्राभाव के कारण भी जनता में अशान्ति रहती है। आपस में भी झगड़े बढ़ते हैं, जिससे परिस्थिति उत्तरोत्तर विषम होती जाती है। वर्षा ऋतु में दिखलाई देनेवाला गन्धर्वनगर वर्षा का अभाव करता है। इस गन्धर्वनगर का फल दुष्काल भी है। व्यापारी और कृषक दोनों के लिए ही इस प्रकार के गन्धर्वनगर का फलादेश अशुभ होता है। जिस वर्ष में उक्त प्रकार का गन्धर्वनगर दिखलाई पड़ता है, उस वर्ष में गेहूँ और चावल की उपज भी बहुत कम होती है। शरद्ऋतु में गन्धर्वनगर दिखाई पड़े तो मनुष्यों को अनेक प्रकार की पीड़ा होती है। चोट लगना, शरीर में घाव लगना, चेचक निकलना एवं अनेक प्रकार के फोड़े होना आदि फल घटित होते हैं। अवशेष ऋतुओं में गन्धर्वनगर

दिखलाई दे तो नागरिकों को कष्ट होता है। साथ ही छः महीने तक उपद्रव होते रहते हैं। प्रकृति का प्रकोप होने से अनेक प्रकार की बीमारियाँ भी होती हैं। रात्रि में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो देश की आर्थिक हानि, वैदेशिक सम्मान का अभाव तथा देशवासियों को अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। यदि कुछ रात्रि शेष रहे तब गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चोर, नृपति, प्रबन्धक एवं पूंजीपतियों के लिए हानिकारक होता है। रात्रि के अन्तिम प्रहर में—ब्रह्म-मुहूर्त काल में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो उस प्रदेश में धन सम्पदा का अधिक विकास होता है। भूमि के नीचे से धन प्राप्त होता है। यह गन्धर्वनगर सुभिक्ष-कारक है। इसके द्वारा धन-धान्य की वृद्धि होती है। प्रशासक वर्ग का भी अभ्युदय होता है। कला-कौशल की वृद्धि के लिए भी इस समय का गन्धर्वनगर श्रेष्ठ माना गया है।

पँचरंगा गन्धर्वनगर हो तो नागरिकों में भय और आतंक का संचार करता है, रोगभय भी इसके द्वारा होते हैं। हवा बहुत तेज चलती है, जिससे फसल को भी क्षति पहुँचती है। श्वेत और रक्तवर्ण की वस्तुओं की महँगाई विशेष रूप से रहती है। जनता में अशान्ति और आतंक फैलता है। श्वेतवर्ण का गन्धर्वनगर हो तो घी, तेल और दूध का नाश होता है। पशुओं की भी कमी होती है और अनेक प्रकार की व्याधियाँ भी व्याप्त हो जाती हैं। गाय, बैल और घोड़ों की कीमत में अधिक वृद्धि होती है। तिलहन और तिल का भाव ऊँचा बढ़ता है। विदेशों से व्यापारिक सम्बन्ध दृढ़ होता है। काले रंग का गन्धर्वनगर वस्त्र नाश करता है, कपास की उत्पत्ति कम होती है तथा वस्त्र बनानेवाले मिलों में भी हड़ताल होती है, जिससे वस्त्र का भाव तेज हो जाता है। कागज तथा कागज के द्वारा निर्मित वस्तुओं के मूल्य में भी वृद्धि होती है। पुरानी वस्तुओं का भाव भी बढ़ जाता है तथा वस्तुओं की कमी होने के कारण बाजार तेज होता जाता है। लालरंग का गन्धर्वनगर अधिक अशुभ होता है, यह जितनी ज्यादा देर तक दिखलाई पड़ता रहता है, उतना ही हानिकारक होता है। इस प्रकार के गन्धर्वनगर का फल मारपीट, झगड़ा, उपद्रव, अस्त्र-शस्त्र का प्रहार एवं अन्य प्रकार से झगड़े-टण्टों का होना आदि है। सभी प्रकार के रंगों में लालरंग का गन्धर्वनगर अशुभ कहा गया है। इसका फल रक्तपात निश्चित है। जिस रंग का गन्धर्वनगर जितने अधिक समय तक रहता है, उसका फल उतना ही अधिक शुभाशुभ समझना चाहिए।

गन्धर्वनगर जिस स्थान या नगर में दिखलाई देता है, उसका फलादेश उसी स्थान और नगर में समझना चाहिए। जिस दिशा में दिखलाई दे उस दिशा में भी हानि या लाभ पहुँचाता है। इसका फलादेश विश्वजनीन नहीं होता, केवल थोड़े से प्रदेश में ही होता है। जब गन्धर्वनगर आकाश के तारों की तरह बीच में

छाया हुआ दिखलाई दे तो मध्य देश को अवश्य नाश करता है। यह जितनी दूर तक फैला हुआ दिखलाई दे तो समझ लेना चाहिए कि उतनी दूर तक देश का नाश होगा। रोग, मरण, दुर्भिक्ष आदि अनिष्टकारक फलादेशों की प्राप्ति होती है। इस प्रकार का गन्धर्वनगर जनता, प्रशासक और उच्चवर्ग के लोगों के लिए भी भयदायक होता है। अवर्षण, सूखा आदि के कारण फसल भी मारी जाती है। यदि गन्धर्वनगर इन्द्रधनुषाकार या साँप के बिल के आकार में दिखलाई पड़े तो देशनाश, दुर्भिक्ष, मरण, व्याधि आदि अनेक प्रकार के अनिष्टकारक फल प्राप्त होते हैं। यदि चारदीवारी के समान गन्धर्वनगर की भी चहारदीवारी दिखलाई पड़े और ऊपर के गुम्बज भी दिखलाई पड़ें तो निश्चयतः प्रशासक या मन्त्री का विनाश होता है। नगर के मुखिया के लिए भी इस प्रकार का गन्धर्वनगर दुःखदायक बताया गया है। जब गन्धर्वनगर का ऊपरी हिस्सा टूटा हुआ दिखलाई दे तो दस दिन के भीतर ही किसी प्रधान व्यक्ति की मृत्यु सूचित करता है। ऊपर स्वर्ण की गुम्बजें दिखलाई पड़ें और उनपर स्वर्ण-कलश भी दिखलाई देते हों तो निश्चयतः उस प्रदेश की आर्थिक हानि, किसी प्रधान व्यक्ति की मृत्यु, वस्तुओं की महँगाई और रोगादि उपद्रव होते हैं। जब गन्धर्वनगर के घरों की स्थिति ऊँचे मन्दिरों के समान दिखलाई दे और उनके कलशों पर मालाएँ लटकती हुई दिखलाई पड़ें तो सुभिक्ष, समयानुसार वर्षा, कृषि का विकास, अच्छी फसल और धन-धान्य की समृद्धि होती है। टूटते-ढहते गन्धर्वनगर दिखलाई दें तो उनका फल अच्छा नहीं होता। रोग और मानसिक आपत्तियों के साथ पारस्परिक कलह की भी सूचना समझनी चाहिए। जिस गन्धर्वनगर के द्वारपर सिंहाकृति दिखलाई दे, वह जनता में बल, पौरुष और शक्ति का विकास करता है। वृषभाकृतिवाला गन्धर्वनगर जनता को धर्म-मार्ग की ओर ले जानेवाला है। उस प्रदेश की जनता में संयम और धर्म की भावनाएँ विशेष रूप से उत्पन्न होती हैं। जो व्यक्ति उक्त प्रकार के गन्धर्वनगरों को स्वर्णाकृति में देखता है, उसे उस क्षेत्र में शान्ति समझ लेनी चाहिए।

मास और वार के अनुसार गन्धर्वनगर का फलादेश—यदि रविवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को कष्ट, दुर्भिक्ष, अन्न का भाव तेज, तृण की कमी, वृश्चिक-सर्प आदि विषैले जन्तुओं की वृद्धि, व्यापार में लाभ, कृषि का विनाश और अन्य प्रकार के उपद्रव भी होते हैं। तेज वायु चलता है, आश्विन मास में कुछ वर्षा होती है, जिससे साधारण रूप से अच्छी फसल हो जाती है। रविवार को सन्ध्या में गन्धर्वनगर देखने से भूकम्प का भय, मध्याह्न में गन्धर्वनगर देखने से जनता में अराजकता एवं प्रातःकाल सूर्योदय के साथ गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नगर में साधारणतः शान्ति रहती है। सन्ध्या काल का गन्धर्वनगर बहुत अधिक बुरा समझा जाता है। रात में दिखलाई देने से कम फल देता है।

मेघविजय गणि ने रविवार के गन्धर्वनगर को अधिक अशुभकारक बतलाया है। इस दिन का गन्धर्वनगर वर्षा का अभाव करता है तथा व्यापारिक दृष्टि से भी हानिकारक होता है। सोमवार को गन्धर्वनगर दीप्तियुक्त दिखलाई पड़े तो कलाकारों के लिए शुभफल, प्रशासक वर्ग और कृषकों के लिए भी शुभ-फलदायक होता है। इस प्रकार के गन्धर्वनगर के देखने से श्रावण और आषाढ़ मास में अच्छी वर्षा होती है। भाद्रपद और आश्विन में वर्षा की कमी रहती है। यदि इस प्रकार का गन्धर्वनगर ज्येष्ठ मास में रविवार को दिखलाई पड़े तो निश्चयतः दुर्भिक्ष होता है। आषाढ़ में रविवार को दिखलाई पड़े तो आश्विन में वर्षा, अवशेष महीनों में वर्षा का अभाव तथा साधारण फसल; श्रावण में दिखलाई पड़े तो भूकम्प का भय, मार्गशीर्ष में अल्प वर्षा, बन-बगीचों की वृद्धि, खनिज पदार्थों की उपज में कमी; भाद्रपद मास में रविवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आश्विन और कार्तिक में अनेक प्रकार के रोग, जनता में अशान्ति तथा उपद्रव होते हैं। आश्विन मास में रविवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण कष्ट, माघ में ओलों की वर्षा, भयंकर शीत का प्रकोप और चैती फसल की हानि होती है। कार्तिक और अगहन मास में रविवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अनेक प्रकार के रोगों के साथ घृत, दूध, तैल आदि पदार्थों का अभाव होता है, पशुओं के लिए चारे की भी कमी रहती है। पौष और माघ मास में गन्धर्वनगर रविवार को दिखलाई पड़े तो छः महीनों तक जनता को आर्थिक कष्ट रहता है। निमोनिया और प्लेग दो महीने तक विशेष रूप से उत्पन्न होते हैं। होली के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष घोर दुर्भिक्ष पड़ता है। अन्न की अत्यन्त कमी रहती है, चोर और लुटेरों का भय-आतंक बढ़ता चला जाता है। फाल्गुन और चैत में रविवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जिस दिन गन्धर्वनगर का दर्शन हो उससे ग्यारह दिन के भीतर में भूकम्प या अन्य किसी भी प्रकार का महान् उत्पात होता है। वज्रपात होना या आकस्मिक घटनाओं का घटित होना आदि फलादेश समझना चाहिए। वैशाख महीने में रविवार का गन्धर्व नगर दिखलाई पड़े तो साधारणतः शुभ फल होता है। केवल उस प्रदेश के प्रशासनाधिकारी के लिए अनिष्टप्रद समझना चाहिए। इसी प्रकार ज्येष्ठमास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता में साधारण शान्ति, आषाढ़ मास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो श्रावण में वर्षा की कमी, धान्योत्पत्ति की साधारण कमी, वस्त्र के व्यापार में लाभ, घी, नमक और चीनी के व्यापार में अत्यधिक लाभ, सोना-चाँदी के व्यापार में साधारण हानि और अन्न के व्यापार में लाभ होता है। श्रावण मास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चातुर्मास में अच्छी वर्षा, श्रेष्ठ फसल और जनता में सुख-शान्ति रहती है। व्यापारियों के लिए भी इस महीने का गन्धर्वनगर उत्तम माना

गया है। भाद्रपद और आश्विनमास में सोमवार के दिन का गन्धर्वनगर अनिष्टकारक; लोहा, सोना, चांदी आदि धातुओं के व्यापार में अत्यधिक लाभ, फसल साधारण एवं जनता में शान्ति रहती है। कार्तिकमास के सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शरद् ऋतु में अत्यधिक हवा चलती है, जिससे शीत का प्रकोप बढ़ जाता है। अगहन मास में गन्धर्वनगर सोमवार को दिखलाई पड़े तो सुभिक्ष, शान्ति और आर्थिक विकास होता है। मांगलिक कार्यों की वृद्धि के लिए यह गन्धर्वनगर उत्तम माना गया है। पौष, माघ और फाल्गुन मास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष सुभिक्ष, अनेक प्रकार के रोगों की वृद्धि, देश की समृद्धि और व्यापार में साधारण लाभ होता है। चैत्र मास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को कष्ट, आर्थिक क्षति, अनेक प्रकार की व्याधियाँ और प्रशासकवर्ग का विनाश होता है। अन्य प्रदेशों से संघर्ष का भी भय रहता है। वैशाखमास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो जनता में धार्मिक रुचि उत्पन्न होती है, उस वर्ष अनेक धार्मिक महोत्सव होते हैं। राजा, प्रजा सभी में धर्माचरण का विकास होता है।

ज्येष्ठमास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो उस वर्ष आषाढ़ में साधारण वर्षा होती है, श्रावण और भाद्रपद में वर्षा की कमी रहती है तथा आश्विन मास में पुनः वर्षा हो जाती है, जिससे फसल अच्छी हो जाती है। व्यापारिक दृष्टि से वर्ष अच्छा नहीं रहता। लोहा, सोना और वस्त्र के व्यापार में हानि उठानी पड़ती है। पुराने पदार्थों के व्यापार में लाभ होता है। कागज के मूल्य में भी वृद्धि होती है। इसी महीने में बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अशान्ति, कष्ट, भूकम्प, वज्रपात, रोग, धनहानि आदि फल प्राप्त होता है। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखाई पड़े तो जनता को लाभ, पारस्परिक प्रेम, शान्ति और सुभिक्ष होता है। शुक्रवार को इस महीने में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण व्यक्तियों को विशेष लाभ, धनी-मानियों को कष्ट, प्रशासक वर्ग की हानि, तत्प्रदेशीय किसी नेता की मृत्यु, कलाकारों को कष्ट और वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। फसल भी अच्छी होती है। इसी महीने में शनिवार को गन्धर्व-नगर दिखलाई पड़े तो वर्षा का अभाव, दुर्भिक्ष, जनता को कष्ट, तेज वायु या तूफानों का प्रकोप, अग्निभय, विषैले जन्तुओं का विकास तथा उनके प्रभाव से जनता में अधिक आतंक होता है।

आषाढ़ महीने में मंगलवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, अन्न का भाव सस्ता, सोना, चांदी के मूल्य में भी गिरावट, कला-कार और शिल्पियों को सुख-शान्ति, देश का आर्थिक विकास, व्यापारी समाज को सुख और प्रशासकों को भी शान्ति मिलती है। केवल लोहे की बनी वस्तुओं में हानि होती है। इसी महीने में बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता

पयोष्णी, गोमती तथा विन्ध्य, महेन्द्र और मलयाचल की नदियाँ आदि हैं।

बुध के प्रदेश—सिन्धु और लौहित्य, गंगा, मंदीरका, रथा, सरयू और कौशिकी के प्रान्त के देश तथा चित्रकूट, हिमालय और गोमन्त पर्वत, सौराष्ट्र देश और मथुरा का पूर्व भाग आदि हैं।

बृहस्पति के प्रदेश—सिन्धु का पूर्वार्द्ध, मथुरा का पश्चिमार्द्ध भाग तथा विराट् और शतद्रु नदी, मत्स्यदेश (धौलपुर, भरतपुर, जयपुर आदि) का आधा भाग, उदीच्यदेश, अर्जुनायन, सारस्वत, वारधान, रमट, अम्बष्ठ, पारत, सुघ्न, सौवीर, भरत, साल्व, त्रैगर्त, पौरव और यौधेय हैं।

शुक्र के प्रदेश—वितस्ता, इरावती और चन्द्रभागा नदी, तक्षशिला, गान्धार, पुष्कलावत, मालव, उशीनर, शिबि अम्बल, शालिकायन, दशार्ण और कैकेय हैं।

शनि के प्रदेश—वेदस्मृति, विदिशा, कुरुक्षेत्र का समीपवर्ती देश, प्रभास क्षेत्र, पश्चिम देश, सौराष्ट्र, आभीर, शूद्रक देश तथा आनर्त से पुष्कर प्रान्त तक के प्रदेश, आबू और रैवतक पर्वत हैं।

केतु के प्रदेश—मारवाड़, कुचिकादिक, अवगाण, श्वेत हूणदेश, पल्लव, चोल और कोलक हैं।

वृष्टिकारक अन्य योग—सूर्य, गुरु और बुध का योग जल की वर्षा करता है। यदि इन्हीं के ग्रहों के साथ मंगल का योग हो जाये तो वायु के साथ जल की वर्षा होती है। गुरु और सूर्य, राहु और चन्द्रमा, गुरु और मंगल, शनि और चन्द्रमा, गुरु और मंगल, गुरु और बुध तथा शुक्र और चन्द्रमा इन ग्रहों के योग होने से जल की वर्षा होती है।

सुभिक्ष-दुर्भिक्ष का परिज्ञान—

प्रभवाद् द्विगुणं कृत्वा त्रिभिर्न्यूनं च कारयेत्।
सप्तभिस्तु हरेद्भागं शेषं ज्ञेयं शुभाशुभम्॥
एकं चत्वारि दुर्भिक्षं पंचद्वाभ्यां सुभिक्षकम्।
त्रिषष्ठे तु समं ज्ञेयं शून्ये पीडा न संशयः॥

अर्थात् प्रभवादि क्रम से वर्तमान चालू संवत् की संख्या को दुगुना कर उसमें से तीन घटा के सात का भाग देने से जो शेष रहे, उससे शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए। उदाहरण—साधारण नाम का संवत् चल रहा है। इसकी संख्या प्रभवादि से 44 आती है, अतः इसे दुगुना किया। 44 × 2 = 88, 88 — 3 = 85, 85 ÷ 7 = 12 ल०, 1 शेष, इसका फल दुर्भिक्ष है। क्योंकि एक और चार शेष में दुर्भिक्ष, पांच और दो शेष में सुभिक्ष, तीन या छः शेष में साधारण और

शून्य शेष में पीड़ा समझनी चाहिए।

अन्य नियम—विक्रम संवत् की संख्या को तीन से गुणा कर पाँच जोड़ना चाहिए। योगफल में सात का भाग देने से शेष क्रमानुसार फल जानना। 3 और 5 शेष में दुर्भिक्ष, शून्य में महाकाल और 1, 2, 4, 6 शेष में सुभिक्ष होता है।

उदाहरण—विक्रम संवत् 2048, इसे तीन से गुणा किया; 2048 × 3 = 6144, 6144 + 5 = 6149, इसमें 7 का भाग दिया, 6149 ÷ 7 = 878 लब्धि, शेष 3 रहा। इसका फल दुर्भिक्ष हुआ।

प्रभवादि संवत्सरबोधक चक्र

संख्या	संवत्सर	संख्या	संवत्सर	संख्या	संवत्सर	संख्या	संवत्सर
1	प्रभव	16	चित्रभानु	31	हेमलम्बी	46	परिधावी
2	विभव	17	सुभानु	32	विलम्बी	47	प्रमादी
3	शुक्ल	18	तारण	33	विकारी	48	आनन्द
4	प्रमोद	19	पार्थिव	34	शार्वरी	49	राक्षस
5	प्रजापति	20	व्यय	35	प्लव	50	नल
6	अंगिरा	21	सर्वजित्	36	शुभकृत्	51	पिंगल
7	श्रीमुख	22	सर्वधारी	37	शोभन	52	कालयुक्त
8	भाव	23	विरोधी	38	क्रोधी	53	सिद्धार्थी
9	युवा	24	विकृति	39	विश्वावसु	54	रौद्र
10	धाता	25	खर	40	पराभव	55	दुर्मति
11	ईश्वर	26	नन्दन	41	प्लवंग	56	दुन्दुभि
12	बहुधान्य	27	विजय	42	कीलक	57	रुधिरोद्गारी
13	प्रमाथी	27	जय	43	सौम्य	58	रक्ताक्षी
14	विक्रम	29	मन्मथ	44	साधारण	59	क्रोधन
15	वृष	30	दुर्मुख	45	विरोधकृत	60	क्षय

संवत्सर निकालने की प्रक्रिया

संवत्कालो ग्रहयुत: कृत्वा शून्यरसैर्हृत: ।
शेषा: संवत्सरा ज्ञेया: प्रभवाद्या बुधै: क्रमात् ॥

अर्थात्—विक्रम संवत् में 9 जोड़कर 60 का भाग देने में जो शेष रहे, वह प्रभवादि गत संवत्सर होता है, उससे आगे वाला वर्तमान होता है। उदाहरण—संवत् 2047, इसमें 9 जोड़ा तो 2047 + 9 = 2056 ÷ 60 = 34 उपलब्धि शेष 16, अत: 16वीं संख्या चित्रभानु की थी, जो गत हो चुका है, वर्तमान में सुभानु संवत् है, जो आगे बदल जाएगा, और वर्षान्त में तारण हो जाएगा।

प्रभवादि संवत्सर बोधक चक्र

पाँच वर्ष का एक युग होता है, इसी प्रमाण से 60 वर्ष के 12 युग और उनके 12 स्वामी हैं विष्णु, बृहस्पति, इन्द्र, अग्नि, ब्रह्मा, शिव, पितर, विश्वेदेवा, चन्द्र, अग्नि, अश्विनीकुमार और सूर्य।

मतान्तर से प्रथम बीस संवत्सरों के स्वामी ब्रह्मा, इसके आगे बीस संवत्सरों के स्वामी विष्णु और इससे आगे वाले बीस संवत्सरों के स्वामी रुद्र शिव हैं।

द्वादशोऽध्याय:

अथात: सम्प्रवक्ष्यामि गर्भान् सर्वान् सुखावहान्।
भिक्षुकाणां[1] विशेषेण परदत्तोपजीविनाम् ॥1॥

अब सभी प्राणियों को सुख देने वाले मेघ के गर्भधारण का वर्णन करता हूँ। विशेष रूप से इस निमित्त का फल दूसरों के द्वारा दिये गए भोजन को ग्रहण करने वाले भिक्षुकों के लिए प्रतिपादित करता हूँ। तात्पर्य यह है कि उक्त निमित्त द्वारा वर्षा और फसल की जानकारी सम्यक् प्रकार से प्राप्त की जाती है। जिस देश में सुभिक्ष नहीं, उस देश में त्यागी, मुनियों का निवास करना कठिन है।

1. भिक्षाचरणां मु० A.।

अतः मुनिजन इस निमित्तद्वारा पहले से ही सुकाल दुष्काल का ज्ञान कर विहार करते हैं ।।1।।

ज्येष्ठा-मूलममावस्यां मार्गशीर्षं प्रपद्यते[1] ।
मार्गशीर्षप्रतिपदि गर्भाधानं प्रवर्त्तते ।।2।।

मार्गशीर्ष—अगहन की अमावस्या को, जिस दिन चन्द्रमा ज्येष्ठा या मूल नक्षत्र में होता है, मेघ गर्भ धारण करते हैं अथवा मार्गशीर्ष शुक्ला प्रतिपदा को, जबकि चन्द्रमा पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में होता है, मेघ गर्भ धारण करते हैं ।।2।।

[2]दिवा समुत्थितो गर्भो रात्रौ विसृजते जलम् ।
रात्रौ समुत्थितश्चापि दिवा विसृजते जलम् ।।3।।

दिन का गर्भ रात्रि में जल की वर्षा करता है और रात्रि का गर्भ दिन में जल की वर्षा करता है ।।3।।

सप्तमे सप्तमे मासे सप्तमे सप्तमेऽहनि ।
गर्भाः पाकं विगच्छन्ति यादृशं तादृशं फलम् ।।4।।

सात-सात महीने और सात-सात दिन में गर्भ पूर्ण परिपाक अवस्था को प्राप्त होता है। जिस प्रकार का गर्भ होता है, उसी प्रकार का फल प्राप्त होता है। अभिप्राय यह है कि गर्भ के परिपक्व होने का समय सात महीना और सात दिन है। वाराही संहिता में यद्यपि 196 दिन ही गर्भ परिपक्व होने के लिए बताये गए हैं, किन्तु यहाँ आचार्य ने सात महीने और सात दिन कहे हैं। दोनों कथनों में अन्तर कुछ भी नहीं है, यतः यहाँ भी नक्षत्र मास गृहीत है, एक नक्षत्र मास 27 दिन का होता है, अतः योग करने पर यहाँ भी 196 दिन आते हैं ।।4।।

पूर्वसन्ध्या-समुत्पन्नः पश्चिमायां प्रयच्छति ।
पश्चिमायां समुत्पन्नः पूर्वायां तु[3] प्रयच्छति ।।5।।

पूर्व सन्ध्या में धारण किया गया गर्भ पश्चिम सन्ध्या में बरसता है और पश्चिम में धारण किया गया गर्भ पूर्व सन्ध्या में बरसता है। अभिप्राय यह है कि प्रातः धारण किया गया गर्भ सन्ध्या समय बरसता है और सन्ध्या समय धारण किया गया गर्भ प्रातः बरसता है ।।5।।

नक्षत्राणि मुहूर्त्तांश्च सर्वमेवं समादिशेत् ।
[4]षण्मासं समतिक्रम्य ततो देवः प्रवर्षति ।।6।।

---

1. प्रवर्तते मु० C. । 2. दिवसो मु० A. । 3. च मु० । 4. षण्मासान् मु० ।

नक्षत्र, मुहूर्त आदि सभी का निर्देश करना चाहिए। मेघ गर्भ धारण के छः महीने के पश्चात् वर्षा करते हैं ॥6॥

गर्भाधानादयो मासास्ते च मासा अवधारिण: ।
विपाचनत्रयश्चापि त्रय: कालाभिवर्षणा: ॥7॥

गर्भाधान, वर्षा आदि के महीनों का निश्चय करना चाहिए। तीन महीनों तक गर्भ की पक्व-क्रिया होती है और तीन महीने वर्षा के होते हैं ॥7॥

शीतवातश्च विद्युच्च गर्जितं परिवेषणम् ।
सर्वगर्भेषु शस्यन्ते निर्ग्रन्था: साधुदर्शिन: ॥8॥

सभी गर्भों में शीत वायु का बहना, बिजली का चमकना, गर्जन करना और परिवेष की प्रशंसा सभी निर्ग्रन्थ साधु करते हैं। अर्थात् मेघों के गर्भ धारण के समय शीतवायु का बहना, बिजली का चमकना, गर्जन करना और परिवेष धारण करना अच्छा माना गया है। उक्त चिह्न फसल के लिए भी श्रेष्ठ होते हैं ॥8॥

गर्भास्तु विविधा ज्ञेया: शुभाऽशुभा यदा तदा ।
पापलिंगा निरुदका भयं दद्युर्न संशय:[2] ॥9॥
उल्कापातोऽथ निर्घाता: दिग्-दाहा[3] पांशुवृष्टय: ।
गृहयुद्धं निवृत्तिश्च ग्रहणं चन्द्रसूर्ययो: ॥10॥
ग्रहाणां चरितं चक्रं साधूनां[4] कोपसम्भवम् ।
गर्भाणामुपघाताय न ते ग्राह्या [5]विचक्षणै: ॥11॥

मेघ-गर्भ अनेक प्रकार के होते हैं, पर इनमें दो मुख्य हैं—शुभ और अशुभ। पाप के कारणीभूत अशुभ मेघ गर्भ निस्सन्देह जल की वर्षा नहीं करते हैं तथा भय भी प्रदान करते हैं। अशुभ गर्भ से उल्कापात, दिग्दाह, धूलि की वर्षा, गृहकलह, घर से विरक्ति और चन्द्रग्रहण तथा सूर्यग्रहण होते हैं। ग्रहों का युद्ध, साधुओं का क्रोधित होना, गर्भों का विनाश होता है, अत: बुद्धिमान व्यक्तियों को अशुभ गर्भ-मेघों का ग्रहण नहीं करना चाहिए ॥9-11॥

धूमं रज: पिशाचांश्च शस्त्रमुल्कां सनागज: ।
तैलं घृतं सुरामस्थि क्षारं[6] लाक्षां वसां मधु ॥12॥
अंगारकान् नखान् केशान् मांसशोणितकर्दमान् ।
विपच्यमाना मुञ्चन्ति गर्भा: पापभयावहा: ॥13॥

---

1. गर्जनं मु०। 2. अशंसय: मु०। 3. दिशां दाहा मु०। 4. सधूमं मु० B.। 5. विनिश्चितै: मु०। 6. और मु० A.।

पापगर्भ पंचममान होने के उपरान्त धूप, रज—धूलि का वर्षण, पिशाच—भूत-पिशाचादि का भय, शस्त्रप्रहार, उल्कापतन, हाथियों का विनाश; तैल, घी, मद्य, हड्डी, क्षार—घातक तेज पदार्थ, लाख, चर्बी, मधु, अग्नि के अंगारे, भस्म, फेन, मांस, रक्त, कीचड़ आदि की वर्षा करते हैं ॥12-13॥

कार्तिकं [1]चाऽथ पौषं च चैत्र-वैशाखमेव च।
श्रावणं चाश्विनं सौम्यं गर्भं विन्द्याद् बहूदकम् ॥14॥

कार्तिक, पौष, चैत्र, वैशाख, श्रावण, आश्विन मास में सौम्य अर्थात् शुभ गर्भ होता है और अधिक जल की वर्षा करता है। अर्थात् उक्त मासों में यदि मेघ गर्भ धारण करे तो अच्छी वर्षा होती है ॥14॥

ये तु पुष्येण दृश्यन्ते हस्तेनाभिजिता तथा।
अश्विन्यां सम्भवन्तश्च ते पश्चान्नैव शोभनाः ॥15॥

आर्द्राऽश्लेषासु ज्येष्ठासु मूले वा सम्भवन्ति ये।
[2]ये गर्भागमदक्षाश्च मतास्तेऽपि बहूदकाः[3] ॥16॥

यदि पुष्य, हस्त, अभिजित, अश्विनी इन नक्षत्रों में गर्भ धारण हो तो शुभ है, इन नक्षत्रों के बाद शुभ नहीं। आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, मूल इन नक्षत्रों में गर्भ धारण का कार्य हो तो उत्तम जल की वर्षा होती है ॥15-16॥

[4]उच्छ्रितं चापि वैशाखात् कार्तिके स्रवते जलम्।
हिमागमेन गर्भिका [5]तेऽपि मन्दोदकाः स्मृताः ॥17॥

वैशाख में गर्भ धारण करने पर कार्तिक मास में जल की वर्षा होती है। इस प्रकार के मेघ हिमागम के साथ जल की मन्दवृष्टि करने वाले होते हैं ॥17॥

स्वातौ च मैत्रदेवे च वैष्णवे च सुवारुणे[6]।
गर्भाः सुधारणा ज्ञेया ते स्रवन्ते[7] बहूदकम् ॥18॥

स्वाती, अनुराधा, श्रवण और शतभिषा इन नक्षत्रों में मेघ गर्भ धारण करें तो अधिक जल की वर्षा होती है ॥18॥

पूर्वामुदीचीमैशानीं ये गर्भा दिशमाश्रिताः।
ते सम्भवन्तस्तोयाढ्यास्ते गर्भास्तु सुपूजिताः ॥19॥

पूर्व, उत्तर और ईशान कोण में जो मेघ गर्भ धारण करते हैं, वे जल की वर्षा

---

1. चाथ मु०। 2. गर्भागमनदक्षाश्च मु०। 3. बहूदका: मु०। 4. उच्छ्रितं मु०। 5. मन्दोदास्ते प्रकीर्तिताः। 6. सुदारुणे मु० A, सदारुणे मु० D.। 7. संभवन्तो बहूदकाः मु०।

करते हैं तथा फसल भी उत्तम होती है ॥19॥

[1]वायव्यामथ वारुण्यां ये गर्भा स्रवन्ति च ।
[2]ते वर्षं मध्यमं दद्युः सस्यसम्पदमेव च ॥20॥

वायव्यकोण और पश्चिम दिशा में जो मेघ गर्भ धारण करते हैं, उनसे मध्यम जल की वर्षा होती है और अनाज की फसल उत्तम होती है ॥20॥

शिष्टं सुभिक्षं विज्ञेयं जघन्या नात्र संशयः ।
मन्दगाश्च घना वा च सर्वतश्च सुपूजिताः ॥21॥

दक्षिण दिशा में मेघ गर्भ धारण करें तो सामान्यतः शिष्टता, सुभिक्ष समझना चाहिए, इसमें सन्देह नहीं है तथा इस प्रकार के मन्दगति वाले मेघ सर्वत्र पूजे भी जाते हैं ॥21॥

मारुतः तत्प्रभवाः गर्भा धूयन्ते मारुतेन च ।
वातो गर्भाश्च वर्षञ्च करोत्यपकरोति च ॥22॥

वायु से उत्पन्न गर्भ वायु के द्वारा ही आन्दोलित किये जाते हैं तथा वायु चलता है, वर्षा करता है और गर्भ की क्षति भी होती है ॥22॥

कृष्णा नीलाश्च रक्ताश्च पीताः शुक्लाश्च सर्वतः ।
व्यामिश्राश्चापि ये गर्भाः स्निग्धाः सर्वत्र पूजिताः ॥23॥

कृष्ण, नील, रक्त, पीत, शुक्ल, मिश्रितवर्ण तथा स्निग्ध गर्भ सभी जगह पूज्य होते हैं शुभ होते हैं ॥23॥

अप्सराणां तु सदृशाः पक्षिणां जलचारिणाम् ।
वृक्षपर्वतसंस्थाना गर्भाः सर्वत्र पूजिताः ॥24॥

देवांगनाओं के सदृश, जलचर पक्षियों के समान, वृक्ष और पर्वत के आकार वाले गर्भ सर्वत्र पूज्य हैं— शुभ हैं ॥24॥

वापीकूपतडागाश्च[1] नद्यश्चापि मुहुर्मुहुः ।
पूर्यन्ते तादृशैर्गर्भैस्तोयक्लिन्ना [5]नदीवहैः ॥25॥

इस प्रकार के गर्भ से बावड़ी, कुंआ, तालाब, नदी आदि जल से लबालब भर आते हैं तथा इस प्रकार जल कई बार बरसता है ॥25॥

---

1. वायव्यां (यायां) तु मु० । 2. मध्यमं वर्षण दद्युः मु० । 3. नागंतु गर्भाश्च मु० । 4 तडागानि मु० । 5 धनावहैः मु० ।

नक्षत्रेषु तिथौ चापि मुहूर्त्ते करणे दिशि ।
यत्र यत्र समुत्पन्नाः [1]गर्भाः सर्वत्र पूजिताः ॥26॥

जिस-जिस नक्षत्र, तिथि, दिशा, मुहूर्त, करण में स्निग्ध मेघ गर्भ धारण करते हैं, वे उस-उस प्रकार के मेघ पूज्य होते हैं—शुभ होते हैं ॥26॥

सुसंस्थानाः सुवर्णश्च सुवेषाः स्वभ्रजा घनाः ।
सुबिन्दवः स्थिता गर्भाः सर्वे सर्वत्र पूजिताः ॥27॥

सुन्दर आकार, सुन्दर वर्ण, सुन्दर वेष, सुन्दर बादलों से उत्पन्न, सुन्दर बिन्दुओं से युक्त मेघगर्भ सर्वत्र पूजित होते हैं—शुभ होते हैं ॥27॥

कृष्णा रूक्षाः सुखण्डाश्च विद्रवन्तः पुनः पुनः ।
विस्वरा रूक्षशब्दाश्च गर्भाः सर्वत्र निन्दिताः ॥28॥

कृष्ण, रूक्ष, खण्डित तथा विकृत-आकार वाले, भयंकर और रूक्ष शब्द करने वाले मेघगर्भ सर्वत्र निन्दित हैं ॥28॥

[2]अन्धकारसमुत्पन्ना गर्भास्ते तु न पूजिताः ।
चित्राः स्रवन्ति सर्वाणि गर्भाः सर्वत्र निन्दिताः ॥29॥

अन्धकार में समुत्पन्न गर्भ —कृष्णपक्ष में उत्पन्न गर्भ पूज्य नहीं —शुभ नहीं होते हैं। चित्रा नक्षत्र में उत्पन्न गर्भ भी निन्दित हैं ॥29॥

मन्दवृष्टिमनावृष्टिं भयं राजपराजयम् ।
दुर्भिक्षं मरणं रोगं गर्भाः कुर्वन्ति तादृशम् ॥30॥

उक्त प्रकार का मेघगर्भ मन्दवृष्टि, अनावृष्टि, राजा की पराजय का भय, दुर्भिक्ष, मरण, रोग इत्यादि बातों को करता है ॥30॥

मार्गशीर्षे तु गर्भास्तु ज्येष्ठामूलं समादिशेत् ।
पौषमासस्य गर्भास्तु विन्द्यादाषाढिकां बुधाः ॥31॥
माघजात् श्रवणे विन्द्यात् प्रोष्ठपदे च फाल्गुनात् ।
चैत्रामश्वयुजे विन्द्याद्गर्भं जलविसर्जनम् ॥32॥

मार्गशीर्ष का गर्भ ज्येष्ठा या मूल में और पौष का गर्भ पूर्वाषाढ़ा में, माघ में उत्पन्न गर्भ श्रवण में, फाल्गुन में उत्पन्न धनिष्ठा नक्षत्र में, चैत्र में उत्पन्न गर्भ अश्विनी नक्षत्र में जल-वृष्टि करता है ॥31-32॥

---

1. स्निग्धाः मु० । 2. इस श्लोक के पहले B. C. D. में यह श्लोक मुद्रित है—अत्युष्णाश्चातिशीताश्च बहूदका विकृताश्च ये । चित्राः स्रवन्ति सर्वाणि गर्भाः सर्वत्र निन्दिताः ।। मु० ।

मन्दोदा: प्रथमे मासे पश्चिमे ये च कीर्तिता: ।
शेषा बहूदका ज्ञेया: प्रशस्तैर्लक्षणैर्यदा ॥33॥

पहले दिन मेघगर्भों का निरूपण किया है, उनमें से उपर्युक्त मेघगर्भ पहले महीने में कम जल की वर्षा करते हैं, अवशेष प्रशस्त-शुभ लक्षणों के अनुसार अधिक जल की वर्षा करते हैं ॥33॥

यानि रूपाणि दृश्यन्ते गर्भाणां यत्र यत्र च ।
तानि सर्वानि ज्ञेयानि भिक्षूणां भैक्षवर्तिनाम् ॥34॥

मेघगर्भों का जहाँ-जहाँ जो-जो रूप दिखाई देता हो, मधुकरीवृत्ति करने वाले साधु को वहाँ-वहाँ उसका निरीक्षण करना चाहिए ॥34॥

सन्ध्यायां यानि रूपाणि मेघेष्वभ्रेषु यानि च ।
तानि गर्भेषु सर्वाणि [1]यथावदुपलक्षयेत् ॥35॥

मेघों का जो रूप सन्ध्या समय में हो, उनका गर्भकाल में अवस्था के अनुसार निरीक्षण करना चाहिए ॥35॥

ये केचिद् विपरीतानि पठ्यन्ते तानि सर्वश: ।
लिंगानि तोयगर्भेषु भयदेषु भवेत् तदा ॥36॥

प्रतिपादित शुभ चिह्नों के विपरीत चिह्न यदि दिखलाई पड़ें तो उन चिह्नों वाला मेघगर्भ भय देने वाला होता है ॥36॥

गर्भा यत्र न दृश्यन्ते तत्र विन्द्यान्महद्भयम् ।
उत्पन्ना वा स्रवन्त्याशु भद्रबाहुवचो यथा ॥37॥

जहाँ मेघगर्भ दिखलाई नहीं पड़ें, वहाँ अत्यन्त भय समझना चाहिए । उत्पन्न हुई फसल शीघ्र नष्ट हो जाती है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥37॥

निर्ग्रन्था यत्र गर्भांश्च न पश्येयु: कदाचन ।
[2]तं च देशं परित्यज्य सगर्भं संश्रयेत् त्वरा ॥38॥

निर्ग्रन्थ मुनि जिस देश में मेघगर्भ न देखें, उस देश को छोड़कर शीघ्र ही उन्हें मेघगर्भ वाले अन्य देश का आश्रय लेना चाहिए ॥38॥

इति श्रीभद्रबाहुके संहितायां सकलमुनिजनानन्द भद्रबाहुविरचिते महानैमित्तशास्त्रे गर्भवातलक्षणं द्वादशमं परिसमाप्तम् ।

---

1. यथावस्थ निरीक्षयेत् मु० । 2. तं देशं प्रथमं त्यक्त्वा सगर्भं स्थगितं श्रयेत् मु० ।

विवेचन—मेघगर्भ की परीक्षा द्वारा वर्षा का निश्चय किया जाता है। वराहमिहिर ने बतलाया है—"दैवविदवहितचित्तो द्युनिशं यो गर्भलक्षणे भवति। तस्य मुनेरिव वाणी न भवति मिथ्याम्बुनिर्देशे" ॥ अर्थात् जो दैव का जानकार पुरुष रात-दिन गर्भलक्षण में मन लगाकर सावधान चित्त से रहता है, उसके वाक्य मुनियों के समान मेघगणित में कभी मिथ्या नहीं होते। अतः गर्भ की परीक्षा का परिज्ञान कर लेना आवश्यक है। आचार्य ने इस अध्याय में गर्भधारण का निरूपण किया है। मार्गशीर्ष मास में शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से जिस दिन चन्द्रमा पूर्वाषाढा नक्षत्र में होता है, उस दिन से ही सभी गर्भों का लक्षण जानना चाहिए। चन्द्रमा जिस नक्षत्र में रहता है, यदि उसी नक्षत्र में गर्भ धारण हो तो उस नक्षत्र से 195 दिन के उपरान्त प्रसवकाल—वर्षा होने का समय होता है। शुक्लपक्ष का गर्भ कृष्णपक्ष में और कृष्णपक्ष का गर्भ शुक्लपक्ष में, दिन का गर्भ रात्रि में, रात का गर्भ दिन में, प्रातःकाल का गर्भ सन्ध्या में और सन्ध्या का गर्भ प्रातःकाल में जल की वर्षा करता है। मार्गशीर्ष के आदि में उत्पन्न गर्भ एवं पौष मास में उत्पन्न गर्भ मन्दफल युक्त हैं—अर्थात् कम वर्षा होती है। माघ मास का गर्भ श्रावण कृष्णपक्ष में प्रातःकाल को प्राप्त होता है। माघ के कृष्ण पक्ष द्वारा भाद्रपद मास का शुक्लपक्ष निश्चित है। फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष में उत्पन्न गर्भ भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष में जल की वर्षा करता है। फाल्गुन के कृष्ण पक्ष का गर्भ आश्विन के शुक्लपक्ष में जल की वृष्टि करता है।

पूर्व दिशा के मेघ जब पश्चिम की ओर उड़ते हैं और पश्चिम के मेघ पूर्व दिशा में उदित होते हैं, इसी प्रकार चारों दिशाओं के मेघ पवन के कारण अदला-बदली करते रहते हैं, तो मेघ का गर्भकाल जानना चाहिए। जब उत्तर, ईशानकोण और पूर्व दिशा वायु में आकाश निर्मल, स्वच्छ और आनन्दयुक्त होता है तथा चन्द्रमा और सूर्य स्निग्ध, श्वेत और बहुत घेरेदार होते हैं, उस समय भी मेघों के गर्भधारण का समय रहता है। मेघों के गर्भधारण करने का समय मार्गशीर्ष—अगहन, पौष, माघ और फाल्गुन हैं। इन्हीं महीनों में मेघ गर्भ धारण करते हैं। जो व्यक्ति गर्भधारण का काल पहचान लेता है, वह गणित द्वारा बड़ी ही सरलता से जान सकता है कि गर्भधारण के 195 दिन के उपरान्त वर्षा होती है। अगहन के महीने में जिस तिथि को मेघ गर्भ धारण करते हैं, उस तिथि से ठीक 195वें दिन में अवश्य वर्षा होती है। अतः गर्भधारण की तिथि का ज्ञान लक्षणों के आधार पर ही किया जा सकता है। स्थूल और स्निग्ध मेघ जब आकाश में आच्छादित हों और आकाश का रंग काक के अण्डे और मोर के पंख के समान हो तो मेघों का गर्भधारण समझना चाहिए। इन्द्रधनुष और गम्भीर गर्जनायुक्त, सूर्याभिमुख, बिजली का प्रकाश करने वाले मेघ हों तो;

को साधारण कष्ट, अच्छी वर्षा, सुभिक्ष और व्यापार में साधारण लाभ होता है। वज्रपात का योग अधिक रहता है। इस दिन गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भी जनता को विशेष लाभ, अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, श्रेष्ठ फसल, व्यापार में लाभ और सभी प्रकार का अमन-चैन रहता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण वर्षा, पर फसल अच्छी, वस्त्र के व्यापार में अधिक लाभ, मशीनों के कल-पुर्जों में अधिक लाभ, गुड़, चीनी का भाव सस्ता एवं प्रतिदिन उपभोग में आनेवाली वस्तुएँ महँगी होती हैं। शनिवार को गन्धर्वनगर उक्त महीने में दिखलाई पड़े तो साधारण वर्षा, फसल की कमी और व्यापारियों को कष्ट होता है।

श्रावण मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षा की कमी, किन्तु भाद्रपद में अच्छी वर्षा, फसल साधारण, धन-धान्य की वृद्धि, व्यापारियों को लाभ, जनता को कष्ट, वस्त्र का अभाव, आपसी-कलह और उक्त प्रदेश में उपद्रव होते हैं। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अल्प वर्षा, साधारण फसल, घी की महँगी, तैल की भी महँगी, वस्त्र का बाजार सस्ता, सोना-चाँदी का बाजार भी सस्ता, शरद् ऋतु में अधिक शीत, अन्न का भाव भी महँगा रहता है। साधारण जनता को तो कष्ट होता ही है, पर धनी-मानियों को भी अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, जनता में शान्ति और व्यापारियों को साधारण लाभ होता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षाभाव, दुर्भिक्ष और जनता को आर्थिक कष्ट होता है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो घोर दुर्भिक्ष और नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं।

भाद्रपद मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अल्प वर्षा, फसल की कमी, जनता को कष्ट एवं आर्थिक क्षति होती है। बुधवार को दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, व्यापारी समाज को लाभ, मसाले के व्यापार में हानि एवं पशुओं में अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अतिवृष्टि, फसल की कमी, बाढ़, राजा की मृत्यु, नागरिकों में अशान्ति, घृत, तैल के व्यापार में लाभ और गुड़, चीनी का भाव घटता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को कष्ट, अनेक प्रकार के उपद्रव, व्यापार में हानि और आभिजात्य वर्ग के व्यक्तियों को कष्ट होता है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षा में रुकावट, फसल की कमी और धान्य का भाव महँगा होता है।

आश्विन मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सामान्य वर्षा, माघ में विशेष वर्षा और शीत का प्रकोप, फसल साधारण, खनिज पदार्थों का विकास और देश की समृद्धि होती है। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो

ईशान और पूर्व दिशा में गर्भधारण करते हैं। जिस समय मेघ गर्भधारण करते हैं उस समय दिशाएँ शान्त हो जाती हैं, पक्षियों का कलरव सुनाई पड़ने लगता है। अगहन मास में जिस तिथि को मेघ सन्ध्या की अरुणिमा से अनुरक्त और मंडलाकार होते हैं, उसी तिथि को उनकी गर्भ धारण की क्रिया समझनी चाहिए। अगहन मास में जिस तिथि को प्रबल वायु चले, लाल-लाल बादल आच्छादित हों, चन्द्र और सूर्य की किरणें तुषार के समान कलुषित और शीतल हों तो छिन्न-भिन्न गर्भ समझना चाहिए। गर्भधारण के उपर्युक्त चारों मासों के अतिरिक्त ज्येष्ठ मास भी माना गया है। ज्येष्ठ में शुक्ल पक्ष की अष्टमी से चार दिनों तक गर्भ धारण की क्रिया होती है। यदि ये चारों दिन एक समान हों तो सुखदायी होते हैं, तथा गर्भधारण क्रिया बहुत उत्तम होती है। यदि इन दिनों में एक दिन जल बरसे, एक दिन पवन चले, एक दिन तेज धूप पड़े और एक दिन आँधी चले तो निश्चयतः गर्भ शुभ नहीं होता। ज्येष्ठमास का गर्भ मात्र 89 दिनों में बरसता है। अगहन का गर्भ दिन में वर्षा करता है; किन्तु वास्तविक गर्भ अगहन, पौष और माघ का ही होता है। अगहन के गर्भ द्वारा आषाढ़ में वर्षा, पौष के गर्भ से श्रावण में, माघ के गर्भ से भाद्रपद और फाल्गुन के गर्भ से आश्विन में जल-वृष्टि होती है।

फाल्गुन में तीक्ष्ण पवन चलने से, स्निग्ध बादलों के एकत्र होने से, सूर्य के अग्नि समान पिंगल और ताम्रवर्ण होने से गर्भ क्षीण होता है। चैत्र में सभी गर्भ पवन, मेघ, वर्षा और परिवेष युक्त होने से शुभ होते हैं। बैशाख में मेघ, वायु, जल और बिजली की चमक एवं कड़कड़ाहट के होने से गर्भ की पुष्टि होती है। उल्का, वज्र, धूलि, दिग्दाह, भूकम्प, गन्धर्वनगर, कीलक, केतु, ग्रहयुद्ध, निर्घात, परिघ, इन्द्रधनुष, राहुदर्शन, रुधिरादिका वर्षण आदि के होने से गर्भ का नाश होता है। पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और रोहिणी नक्षत्र में धारण किया गया गर्भ पुष्ट होता है। इन पाँच नक्षत्रों में गर्भ धारण करना शुभ माना जाता है तथा मेघ प्रायः इन्हीं नक्षत्रों में गर्भ धारण करते भी हैं। अगहन महीने में जब ये नक्षत्र हों, उन दिनों गर्भ काल का निरीक्षण करना चाहिए। पौष, माघ और फाल्गुन में भी इन्हीं नक्षत्रों का मेघगर्भ शुभ होता है, किन्तु शतभिषा, आश्लेषा, आर्द्रा और स्वाती नक्षत्र में भी गर्भ धारण की क्रिया होती है। अगहन से बैशाख मास तक छः महीनों में गर्भ धारण करने से 8, 6, 16, 24, 20 और 3 दिन तक निरन्तर वर्षा होती है। क्रूरग्रहयुक्त होने पर समस्त गर्भ में ओले, अशनि और मछली की वर्षा होती है। यदि गर्भ समय में अकारण ही घोर वर्षा हो तो गर्भ का स्खलन हो जाता है।

गर्भ पाँच प्रकार के निमित्तों से पुष्ट होता है। जो पुष्टगर्भ है, वह सौ योजन

तक फैल कर जल की वर्षा करता है। चतुर्निमित्तक पुष्ट गर्भ 50 योजन, त्रिनिमित्तक 25 योजन, द्विनिमित्तक $12\frac{1}{2}$ योजन और एकनिमित्तक 5 योजन तक जल की वर्षा करता है। पञ्चनिमित्तों में पवन, जल, बिजली, गर्जना और मेघ शामिल हैं। वर्षा का प्रभाव भी निमित्तों के अनुसार ही ज्ञात किया जाता है। पञ्चनिमित्त मेघगर्भ से एक द्रोण जल की वर्षा, चतुर्निमित्तक से बारह आढक जल की वर्षा, त्रिनिमित्तक से 8 आढक जल की वर्षा, द्विनिमित्तक से 6 आढक और एक निमित्तक से 3 आढक जल की वर्षा होती है। यदि गर्भकाल में अधिक जल की वर्षा हो जाय तो प्रसवकाल के अनन्तर ही जल की वर्षा होती है।

मेघविजयगणि ने मेघगर्भ का विचार करते हुए लिखा है कि मार्गशीर्ष शुक्ला प्रतिपदा के उपरान्त जब चन्द्रमा पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र पर स्थित हो, उसी समय गर्भ के लक्षण अवगत करने चाहिए। जिस नक्षत्र में मेघ गर्भ धारण करते हैं, उससे 195 वें दिन जब वही नक्षत्र आता है तो जल-वृष्टि होती है। मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष का गर्भ तथा पौष कृष्णपक्ष का गर्भ अत्यल्प वर्षा करने वाला होता है। माघ शुक्लपक्ष का गर्भ श्रावण में और माघ कृष्ण का गर्भ भाद्रपद शुक्ल में जल की वृष्टि करता है। फाल्गुन शुक्ल का गर्भ भाद्रपद कृष्ण में, फाल्गुन कृष्ण का आश्विन शुक्ल में, चैत्र शुक्ल का गर्भ आश्विन कृष्ण में, चैत्र कृष्ण का गर्भ कार्तिक शुक्ल में जल की वर्षा करता है। सन्ध्या समय पूर्व में आकाश मेघाच्छादित हो और ये मेघ पर्वत या हाथी के समान हों तथा अनेक प्रकार के श्वेत हाथियों के समान दिखलाई पड़ें तो पाँच या सात रात में अच्छी वर्षा होती है। सन्ध्या समय उत्तर में आकाश मेघाच्छादित हो और मेघ पर्वत या हाथी के समान मालूम पड़ें तो तीन दिन में उत्तम वर्षा होती है। सन्ध्या समय पश्चिम दिशा में श्याम रंग के मेघ आच्छादित हों तो सूर्यास्त काल में ही जल की उत्तम वर्षा होती है। दक्षिण और आग्नेय दिशा के मेघ, जिन्होंने पौष में गर्भ धारण किया है, अल्प वर्षा करते हैं। श्रावण मास में ऐसे मेघों द्वारा श्रेष्ठ वर्षा होने की सम्भावना रहती है। आग्नेय दिशा में अनेक प्रकार के आकार वाले मेघ स्थित हों तो ईति, सन्ताप के साथ सामान्य वर्षा करते हैं। वायव्य और ईशान दिशा के बादल शीघ्र ही जल बरसाते हैं। जिन मेघों ने किसी भी महीने की चतुर्थी, पंचमी, षष्ठी और सप्तमी को गर्भ धारण किया है, वे मेघ शीघ्र ही जल-वृष्टि करते हैं। मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष में मघा नक्षत्र में मेघ गर्भ धारण करे अथवा मार्गशीर्ष कृष्णा चतुर्दशी को मेघ और बिजली दिखलाई पड़े तो आषाढ़ शुक्ल पक्ष में अवश्य ही जल-वृष्टि होती है।

मार्गशीर्ष कृष्ण चतुर्थी, पंचमी और षष्ठी इन तिथियों में आश्लेषा, मघा

और पूर्वाफाल्गुनी ये नक्षत्र हों और इन्हीं में गर्भ धारण की क्रिया हुई हो तो आषाढ़ में केवल तीन दिनों तक ही उत्तम वर्षा होती है। यदि मार्गशीर्ष में उत्तरा, हस्त और चित्रा ये नक्षत्र सप्तमी तिथि को पड़ते हों और इसी तिथि को गर्भ धारण करें तो आषाढ़ में केवल बिजली चमकती है और मेघों की गर्जना होती है। अन्तिम दिनों में तीन दिन वर्षा होती है। आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को स्वाती नक्षत्र पड़े तो इस दिन महावृष्टि होने का योग रहता है। मार्गशीर्ष कृष्णा दशमी, एकादशी और द्वादशी और अमावस्या को चित्रा, स्वाती, विशाखा नक्षत्र हों और इन तिथियों में मेघों ने गर्भ धारण किया हो तो आषाढ़ी पूर्णिमा को घनघोर वर्षा होती है। जब गर्भ का प्रसवकाल आता है, उस समय पूर्व में बादल धूमिल, सूर्यास्त में श्याम और मध्याह्न में विशेष गर्मी रहती है। यह लक्षण प्रसवकाल का है। श्रावण, भाद्रपद और आश्विन का गर्भ सात दिन या नौ दिन में ही बरस जाता है। इन महीनों का गर्भ अधिक वर्षा करने वाला होता है। दक्षिण की प्रबल हवा के साथ पश्चिम की वायु भी साथ ही चले तो शीघ्र ही वर्षा होती है। यदि पूर्व पवन चले और सभी दिशाएँ धूम्रवर्ण हो जायँ तो चार प्रहर के भीतर मेघ बरसता है। यदि उदयकाल में सूर्य पिघलाये गये स्वर्ण के समान या वैडूर्य मणि के समान उज्ज्वल हो तो शीघ्र ही वर्षा करता है। गर्भकाल में साधारणतः आकाश में बादलों का छाया रहना शुभ माना गया है। उल्कापात, विद्युत्पात, धूलि, वर्षा, भूकम्प, दिग्दाह, गन्धर्वनगर, निर्घात शब्द आदि का होना मेघगर्भ काल में अशुभ माना गया है। पंचनक्षत्र—पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी, पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद में धारण किया गया गर्भ सभी ऋतुओं में वर्षा का कारण होता है। शतभिषा, आश्लेषा, आर्द्रा, स्वाती, मघा इन नक्षत्रों में धारण किया गया गर्भ भी शुभ होता है। अच्छी वर्षा के साथ सुभिक्ष, शान्ति, व्यापार में लाभ और जनता में सन्तोष रहता है। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र का गर्भ पशुओं के लिए लाभदायक होता है। इस गर्भ का निमित्त नर और मादा पशुओं की उन्नति का कारण होता है। पशुओं के रोग आदि नष्ट हो जाते हैं और उन्हें अनेक प्रकार से लोग अपने कार्यों में लाते हैं। पशुओं की कीमत भी बढ़ जाती है। देश में कृषि का विकास पूर्णरूप से होता है तथा कृषि के सम्बन्ध में नये-नये अन्वेषण होते हैं। पूर्वाषाढ़ा में गर्भ धारण करने से चातुर्मास में उत्तम वर्षा होती है और माघ के महीने में भी वर्षा होती है, जिससे फसल की उत्पत्ति अच्छी होती है। पूर्वाषाढ़ा का गर्भ देश के निवासियों के आर्थिक विकास का भी कारण बनता है। यदि इस नक्षत्र के मध्य में गर्भ धारण का कार्य होता है, तो प्रशासक के लिए हानि होती है तथा राजनीतिक दृष्टि से उक्त प्रदेश का सम्मान गिर जाता है। उत्तराषाढ़ा में गर्भ धारण की क्रिया होती है तो भाद्रपद के महीने में अल्प वर्षा होती है, अवशेष महीनों में खूब वर्षा होती है। कलाकार और शिल्पियों के

लिए उक्त प्रकार का गर्भ अच्छा होता है। देश में कला-कौशल की भी वृद्धि होती है। यदि उक्त नक्षत्र में सन्ध्या समय गर्भ धारण की क्रिया हो तो व्यापारियों के लिए अशुभ होता है। वर्षा प्रचुर परिमाण में होती है। विद्युत्पात अधिक होता है, तथा देश के किसी बड़े नेता की मृत्यु की भी सूचक होती है। उत्तराषाढ़ा के प्रथम चरण में गर्भ धारण की क्रिया हो तो साधारण वर्षा आश्विन मास में होती है, द्वितीय चरण में गर्भधारण की क्रिया हो तो भाद्रपद मास में अल्प वर्षा होती है और यदि तृतीय चरण में गर्भधारण की क्रिया हो तो पशुओं को कष्ट होता है। अतिवृष्टि के कारण बाढ़ अधिक आती है तथा समस्त बड़ी नदियाँ जल से आप्लावित हो जाती हैं। दिग्दाह और भूकम्प होने का योग भी आश्विन और माघ मास में रहता है। कृषि के लिए उक्त प्रकार की जलवृष्टि हानिकारक ही होती है। उत्तराषाढ़ा के चतुर्थ चरण में गर्भधारण होने पर उत्तम वर्षा होती है और फसल के लिए यह वर्षा अमृत के समान गुणकारी सिद्ध होती है।

पूर्वा भाद्रपद में गर्भ धारण हो तो चातुर्मास के अलावा पौष में भी वर्षा होती है और फसल में अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं, जिससे फसल की क्षति होती है। यदि इस नक्षत्र के प्रथम चरण में गर्भ धारण की क्रिया मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष में हो तो गर्भ धारण के 193 दिन बाद उत्तम वर्षा होती है और आषाढ़ के महीने में आठ दिन वर्षा होती है। प्रथम चरण की आरम्भ वाली तीन घटियों में गर्भ धारण हो तो पाँच आढक जल आषाढ में, सात आढक श्रावण में, छ: आढक भाद्रपद और चार आढक आश्विन में बरसता है। गर्भ धारण के दिन से ठीक 193 वें दिन में निश्चयत: जल बरस जाता है। यदि द्वितीय चरण में गर्भ धारण की क्रिया मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष में हो तो 192 दिन के पश्चात् या 192वें दिन ही जल वृष्टि हो जाती है। आषाढ़ कृष्ण पक्ष में उत्तम जल बरसता है, शुक्ल पक्ष में केवल दो दिन अच्छी वर्षा और तीन दिन साधारण वर्षा होती है। द्वितीय चरण का गर्भ चार सौ कोश की दूरी में जल बरसाता है। यदि इसी नक्षत्र के इसी चरण में मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष में गर्भ धारण की क्रिया हो तो आषाढ़ में प्राय: वर्षा का अभाव रहता है। श्रावण मास में पानी बरसना आरम्भ होता है, भाद्रपद में भी अल्प ही वर्षा होती है। यद्यपि उक्त नक्षत्र के उक्त चरण में गर्भ धारण करने का फल वर्ष में एक बारी जल बरसता है; किन्तु यह जल इस प्रकार बरसाता है, जिससे इसका सदुपयोग पूर्ण रूप से नहीं हो पाता। यदि पूर्वाभाद्रपद के तृतीय चरण में मेघ मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष में गर्भधारण करें तो 190वें दिन वर्षा होती है। वर्षा का आरम्भ आषाढ़ कृष्ण सप्तमी से हो जाता है तथा आषाढ़ में ग्यारह दिनों तक वर्षा होती रहती है। श्रावण में कुल आठ दिन, भाद्रपद में चौदह दिन और आश्विन में नौ दिन वर्षा होती है। कार्त्तिक मास में कृष्णपक्ष की त्रयोदशी से शुक्लपक्ष की पंचमी

तक वर्षा होती है। इस चरण का गर्भधारण फसल के लिए भी उत्तम होता है तथा सभी प्रकार के धान्यों की उत्पत्ति उत्तम होती है। जब नक्षत्र के चतुर्थ चरण में गर्भ धारण की क्रिया हो तो 196वें दिन घोर वर्षा होती है। सुभिक्ष, शान्ति और देश के आर्थिक विकास के लिए उक्त गर्भ धारण का योग उत्तम है। वर्ष में कुल 84 दिन वर्षा होती है। आषाढ़ में 16 दिन, श्रावण में 19 दिन, भाद्रपद में 14 दिन, आश्विन में 19 दिन, कार्तिक में 10 दिन, मार्गशीर्ष में 3 दिन और माघ में 3 दिन पानी बरसता है। अन्न का भाव सस्ता रहता है। गुड़, चीनी, घी, तैल, तिलहन का भाव कुछ तेज रहता है।

उत्तराभाद्रपद के प्रथम चरण में मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष में गर्भधारण हो तो गर्भधारण के 188वें दिन वर्षा होती है; वर्षा का आरम्भ आषाढ़ शुक्ल तृतीया से होता है। वर्ष में 73 दिन वर्षा होती है। आषाढ़ में 6 दिन, श्रावण में 18 दिन, भाद्रपद में 18, आश्विन में 14 दिन, कार्तिक में 10 दिन, मार्गशीर्ष में 5 दिन और पौष में 2 दिन वर्षा होती है। द्वितीय चरण में गर्भ धारण होने पर 185वें दिन वर्षा आरम्भ होती है तथा वर्ष में कुल 66 दिन जल बरसता है। तृतीय चरण में गर्भ धारण होने पर 183वें दिन ही जल की वर्षा होने लगती है। यदि इसी नक्षत्र में आषाढ़ या श्रावण में मेघ गर्भ धारण करे तो 7 वें दिन ही वर्षा हो जाती है। चतुर्थ चरण में गर्भ धारण करने पर 178वें दिन वर्षा आरम्भ हो जाती है तथा फसल भी अच्छी होती है। ज्येष्ठ में उक्त नक्षत्र के उक्त चरण में गर्भ धारण हो तो 11वें दिन वर्षा, आषाढ़ में गर्भधारण हो तो छठे दिन वर्षा, और श्रावण में गर्भधारण हो तो तीसरे दिन वर्षा आरम्भ होती है। रोहिणी नक्षत्र में गर्भधारण होने पर अच्छी वर्षा होती है तथा वर्ष में कुल 81 दिन जल बरसता है। आषाढ़ में 12 दिन, श्रावण में 16 दिन, भाद्रपद में 18 दिन, आश्विन में 14, कार्तिक में 5 दिन, मार्गशीर्ष में 7 दिन, पौष में 3 दिन और माघ में 6 दिन पानी बरसता है। फसल उत्तम होती है। गेहूँ की उत्पत्ति विशेष रूप से होती है।

त्रयोदशोऽध्याय:

अथात: सम्प्रवक्ष्यामि यात्रां [1]मुख्यां जयावहाम् ।
[2]निर्ग्रन्थदर्शनं तथ्यं पार्थिवानां जयैषिणाम् ।।1।।

अब निर्ग्रन्थ आचार्यों के द्वारा प्रतिपादित एवं राजाओं को विजय और सुख देने वाली यात्रा का वर्णन करता हूँ ।।1।।

आस्तिकाय विनीताय श्रद्दधानाय धीमते ।
कृतज्ञाय सुभक्ताय यात्रा सिद्ध्यति श्रीमते ।।2।।

आस्तिक—लोक, परलोक, धर्म, कर्म, पुण्य, पाप पर आस्था रखने वाले, विनीत, श्रद्धालु, बुद्धिमान्, कृतज्ञ, भक्त और श्रीमान् की यात्रा सफल होती है ।।2।।

अहंकृतं नृपं क्रूरं नास्तिकं पिशुनं शिशुम् ।
कृतघ्नं चपलं भीरुं श्रीर्जहात्यबुधं शठम् ।।3।।

अहंकारी, क्रूर, नास्तिक, चुगलखोर, बालक, कृतघ्नी, चपल, डरपोक और शठ नृप की यात्रा असफल होती है—यात्रा में सफलता रूपी लक्ष्मी की प्राप्ति उपर्युक्त लक्षण विशिष्ट व्यक्ति को नहीं होती ।।3।।

वृद्धान् साधून् समागम्य देवज्ञांश्च विपश्चितान् ।
ततो यात्राविधिं कुर्यात् [3]नृपस्तान् पूज्य बुद्धिमान् ।।4।।

वृद्ध, साधु, दैवज्ञ—ज्योतिषी, विद्वान् का यथाविधि सम्मान कर बुद्धिमान् राजा को यात्रा करनी चाहिए ।।4।।

राज्ञा बहुश्रुतेनापि प्रष्टव्या ज्ञाननिश्चिता: ।
अहंकारं परित्यज्य तेभ्यो गृह्णीत निश्चयम् ।।5।।

अनेक शास्त्रों के ज्ञाता नृपति को भी अहंकार का त्याग कर निमित्तज्ञ से यात्रा का मुहूर्त ग्रहण करना चाहिए—ज्योतिषी से यात्रा का मुहूर्त एवं यात्रा के शकुनों का विचार कर ही यात्रा करनी चाहिए ।।5।।

ग्रहनक्षत्रतिथयो मुहूर्त[4] करणं स्वरा: ।
लक्षणं व्यंजनोत्पातं[5] निमित्तं साधुमंगलम् ।।6।।

ग्रह, नक्षत्र, करण, तिथि, मुहूर्त, स्वर, लक्षण, व्यंजन, उत्पात, साधुमंगल आदि निमित्तों का विचार यात्राकाल में करना आवश्यक है ।।6।।

---

1. यात्रामथ सुखावहाम् मु० । 2. निर्ग्रन्थदर्शितां तथ्यां पार्थिवानां जिगीषिणाम् । 3. नृपस्तं मु० । 4. मुहूर्त: मु० । 5. उत्पात:, मु० ।

[1]यस्माद्देवासुरे युद्धे निमित्तं दैवतैरपि।
कृतं प्रमाणं तस्माद्वै [2]विविधं दैवतं मतम् ॥7॥

देवासुर संग्राम में देवताओं ने भी निमित्तों का विचार किया था, अतः राजाओं को सर्वदा निश्चयपूर्वक निमित्तों की पूजा करनी चाहिए—निमित्तों के शुभा-शुभ के अनुसार यात्रा करनी चाहिए ॥7॥

हस्त्यश्वरथपादातं बलं खलु चतुर्विधम्।
निमित्ते तु तथा ज्ञेयं [2]यत्र तत्र शुभाऽशुभम् ॥8॥

हाथी, घोड़ा, रथ और पैदल इस प्रकार चार तरह की चतुरंग सेना होती है। यात्रा कालीन निमित्तों के अनुसार उक्त प्रकार की सेना का शुभाशुभत्व अवगत करना चाहिए ॥8॥

[3]शनैश्चरगता एव हीयन्ते हस्तिनो [4]यदा।
अहोरात्रान्यमाक्रोशु: तत्प्रधानवधस्मृत:[5] ॥9॥

यदि कोई राजा ससैन्य शनिश्चर को यात्रा करे तो हाथियों का विनाश होता है। अहर्निश यमराज का प्रकोप रहता है तथा प्रधान सेना नायक का वध होता है ॥9॥

यावच्छायाकृतिरवैर्हीयन्ते वाजिनो यदा।
विमनस्का विगतय: [6]तत्प्रधानवध: स्मृत: ॥10॥

यदि घोड़ों की छाया, आकृति और हिनहिनाने की ध्वनि—आवाज हीयमान हो तथा वे अन्यमनस्क और अस्त-व्यस्त चलते हों तो सेनापति का वध होता है ॥10॥

[7]मेघशंखस्वराभास्तु हेमरत्नविभूषिता:।
[8]छायाहीना: प्रकुर्वन्ति तत्प्रधानवधस्तथा[9] ॥11॥

यदि स्वर्ण आभूषणों से युक्त घोड़े मेघ के समान आकृति और शंख ध्वनि के समान शब्द करते हुए छायाहीन दिखलाई पड़ें तो प्रधान सेनापति के वध की सूचना देते हैं ॥11॥

---

1. पूर्वं च पूजिता: सेति निमित्ता: भूपतैरपि। तस्माद्वै पूजनीयाश्च निमित्ता: सततं नृपै: ॥7॥ 2. तत्र मु०। 3. शनिश्चरमवाप्ता: मु०। 4. यथा मु०। 5. वधस्तथा मु०। 6. प्रधानस्य वधस्तथा मु०। 7. मेघशंखस्वनाभाश्च मु०। 8. छायाप्रहीणा कुर्वन्ति मु०। 9. सदा मु०।

शौर्यशस्त्रबलोपेता विख्यातास्च पदातयः ।
परस्परेण भिद्यन्ते तत्प्रधानवधस्तदा ॥12॥

यदि यात्रा काल में प्रसिद्ध पैदल सेना शौर्य, शस्त्र और शक्ति से सम्पन्न होकर आपस में ही झगड़ जाये तो प्रधान सेनापति के वध की सूचना अवगत करनी चाहिए ॥12॥

निमित्ते लक्षयेदेतां चतुरंगां तु वाहिनीम् ।
[1]नैमित्तः स्थपतिर्वैद्यः पुरोधाश्च ततो विदुः ॥13॥

चतुरंग सेना के गमन समय के निमित्तों का अवलोकन करना चाहिए। नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित इन चारों के लक्षणों को निम्न प्रकार ज्ञात करना चाहिए ॥13॥

चतुर्विधोऽयं विष्कम्भस्तस्य विम्बाः प्रकीर्तिताः ।
स्निग्धो जीमूतसंकाशः [2]सुस्वप्नः चापविच्छुभः ॥14॥

नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित यह चार प्रकार का विष्कम्भ है, इसके बिम्ब—पर्याय स्निग्ध, जीमूतसंकाश—मेघों का सान्निध्य, सुस्वप्न और धनुष्ज्ञ है ॥14॥

[3]नैमित्तः साधुसम्पन्नो राज्ञः कार्यहिताय सः ।
संघाता पार्थिवेनोक्ताः समानस्थाप्यकोविदः ॥15॥
स्कन्धावारनिवेशेषु कुशलः [4]स्थापको मतः ।
कायशल्यशलाकासु विषोन्मादज्वरेषु च ॥16॥
चिकित्सानिपुणः कार्यः राज्ञा वैद्यस्तु यात्रिकः ।
ज्ञानवानल्प[5]वाग्धीमान् [6]कांक्षामुक्तो [7]यशःप्रियः ॥17॥
मानोन्मानप्रभायुक्तो पुरोधा गुणवांछितः ।
स्निग्धो गम्भीरघोषश्च [8]सुमनाश्चाशुगान् बुधः ॥18॥
छायालक्षणपुष्टश्च सुवर्णः पुष्टकः सुवाक् ।
सबलः पुरुषो [9]विद्वान् क्रोधश्च यतिः शुचिः ॥19॥

---

1. एवमेव जयं कुर्यात् [illegible] आ० । 2. सुस्वप्न, मु० । 3 यह श्लोक हस्तलिखित प्रति में नहीं है । 4 [illegible] मु० । 5. [illegible] मु० । 6. [illegible] मु० । 7. [illegible] मु० । 8 [illegible] मु० । 9 [illegible] मु० ।

हिंस्रो त्रिवर्णः पिंगो वा नीरोमा [1]छिद्रवर्जितः ।
रक्तश्मश्रुः पिंगनेत्रो गौरस्ताम्रः पुरोहितः ॥20॥

शुभ लक्षणों से युक्त, राजा के हित कार्य में संलग्न, राजा के द्वारा प्रतिपादित योजनाओं को घटित करने वाला, समताभाव स्थापित करने वाला और निमित्तों का ज्ञाता नैमित्तिक होता है ।

छावनी—सैन्य-शिविर बनाने में निपुण, युद्ध-संचालक और समयज्ञ स्थपति राजा होता है।

शरीरशास्त्र, निदानशास्त्र, शल्यकर्म—ऑपरेशन, सूचीकर्म—इन्जेक्शन, मूर्च्छा, ज्वर आदि कर्मों में प्रवीण और चिकित्सा कार्य में दक्ष वैद्य को ही राजा द्वारा यात्रा काल में वैद्य निर्वाचित किया जाना चाहिए।

ज्ञानी, अल्प भाषण करनेवाला अर्थात् मितभाषी, बुद्धिमान्, सांसारिक आकांक्षाओं से रहित, यश की कामना रखने वाला, गुणवान्, मानोन्मान प्रभायुक्त समान कद वाला, स्निग्ध और गम्भीर स्वर—कोमल और स्निग्ध स्वर वाला, श्रेष्ठ चित्त वाला, बुद्धिमान्, पुष्ट शरीर वाला, सुन्दर वर्ण वाला, सुन्दर आकृति वाला, सुन्दर वचन वाला, बलवान्, विद्वान्, अक्रोधी—शान्तचित्त, जितेन्द्रिय, पवित्र, त्रिवर्ण—द्विज, हिंसक, दिगवर्ण, लोभरहित, छिद्र—चेचक के दाग रहित, लाल मूंछ, पिंगल नेत्र, गौरवर्ण, ताम्र-कांचन देह पुरोहित होता है ॥15-20॥

नित्योद्विग्नो [2]नृपहिते युक्तः प्राज्ञः सदाहितः ।
एवमेतान् यथोद्दिष्टान् सत्कर्मषु च योजयेत् ॥21॥

नित्य ही चिन्तित, राजा के हित कार्य में संलग्न, बुद्धिमान्, सर्वदा हित चाहने वाला पुरोहित नैमित्त होता है। राजा को चाहिए कि यहपूर्वोक्त गुण वाले नैमित्त, वैद्य और पुरोहित को ही कार्य में लगाये ॥21॥

इतरेतरयोगेन न सिद्ध्यन्ति कदाचन ।
[3]अशान्तो शान्तकारो यो शान्तिपुष्टिशरीरिणाम् ॥22॥

इतरेतर योग—उपर्युक्त लक्षणों से रहित व्यक्तियों को कार्य में लगा देने पर संग्राम सम्बन्धी यात्रा सफल नहीं होती। ऐसे ही व्यक्ति को नियुक्त करना चाहिए, जो अशान्त को शान्त कर सके और प्रजा में शान्ति और पुष्टि—समृद्धि स्थापित कर सके ॥22॥

---

1. निरुपद्रवम् मु० । 2. नराणां युक्तः मु० । 3. अशान्तः शान्तकरणः शान्तपुष्टाभिचारिणाम् मु० ।

यद्देवाऽसुरयुद्धे च निमित्तं दैवतैरपि।
कृतप्रमाणं च [1]तस्माद्धि द्विविधं दैवतं मतम् ॥23॥

देवासुर संग्राम में देवताओं ने निमित्तों को देखा था और उन्हें प्रमाणभूत स्वीकार किया था। अतएव निमित्त दो प्रकार के होते हैं—शुभ और अशुभ ॥23॥

ज्ञानविज्ञान[2]युक्तोऽपि लक्षणैर्यैर्विवर्जितः।
[3]न कार्यसाधको ज्ञेयो यथा चक्रो रथस्तथा ॥24॥

ज्ञान-विज्ञान से सहित होने पर भी यदि नैमित्त, पुरोहितादि उपर्युक्त लक्षणों से रहित हों तो वे कार्य-साधक नहीं हो सकते हैं। जिस प्रकार वक्ररथ – टेढ़ा रथ अच्छी तरह से गमन करने में असमर्थ है, इसी प्रकार उपर्युक्त लक्षणों से हीन व्यक्तियों से युक्त होने पर राजा अपने कार्य के सम्पादन में असमर्थ रहता है ॥24॥

यस्तु लक्षणसम्पन्नो ज्ञानेन च समायुतः।
स [4]कार्यसाधनो ज्ञेयो यथा सर्वांगिको रथः ॥25॥

जो नृप उपर्युक्त लक्षणों से युक्त, ज्ञान-विज्ञान से सहित व्यक्तियों को नियुक्त करता है, उसके कार्य सफल हो जाते हैं। जिस प्रकार सर्वांगीण रथ द्वारा मार्ग तय करने में सुविधा होती है, उसी प्रकार उक्त लक्षणों से सहित व्यक्तियों के नियुक्त करने पर कार्य साधने में सफलता प्राप्त होती है ॥25॥

अल्पेनापि तु ज्ञानेन कर्मज्ञो लक्षणान्वितः।
तद् विन्द्यात् सर्वमतिमान् राजकर्मसु [5]सिद्धये ॥26॥

कार्यकुशल, भले ही अल्पज्ञानी हो, किन्तु उपर्युक्त लक्षणों से युक्त बुद्धिमान् व्यक्ति को ही राजकार्यों की सिद्धि के लिए नियुक्त करना चाहिए ॥26॥

अपि लक्षणवान् मुख्यः कंचिदर्थं प्रसाधयेत्।
[6]न च लक्षणहीनस्तु [7]विद्वानपि न साधयेत् ॥27॥

उपर्युक्त लक्षणवाला व्यक्ति अल्पज्ञानी होने पर भी कार्य की सिद्धि कर सकता है। किन्तु लक्षण रहित विद्वान् व्यक्ति भी कार्य को सिद्ध नहीं कर सकता है ॥27॥

---

1. तस्मात् यद्युक्तं दैवतैरपि मु०। 2. युक्तोऽपि मु०। 3. तं साधुकार्यगो मु०। 4. सत्कार्यगो मु०। 5. सिद्ध्यति मु०। 6. ज्ञानेन लक्षहीनस्तु मु०। 7 वेदज्ञानपि मु०।

अच्छी वर्षा, सामान्य ओले, माघ में वज्रपात, अन्न का भाव महँगा और व्यापारी वर्ग या धोबी, कुम्हार, नाई आदि के लिए फाल्गुन, चैत्र और वैशाख में कष्ट होता है। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जिस दिन इसका दर्शन होता है, उस दिन के आठ दिन पश्चात् ही घोर वर्षा होती है। इस वर्षा से नदियों में बाढ़ आने की भी संभावना रहती है। व्यापारी वर्ग के लिए यह दर्शन उत्तम माना गया है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को आनन्द, सुभिक्ष, परस्पर में सहयोग की भावना का विकास, धन-जन की वृद्धि एवं नागरिकों को सुख-शान्ति मिलती है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण जनता को भी कष्ट होता है। वर्षा अच्छी होती है, पर असामयिक वर्षा होने के कारण जनता के साथ पशु वर्ग को भी कष्ट उठाना पड़ता है।

कार्तिक मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अग्नि का प्रकोप होता है, अनेक स्थानों पर आग लगने की घटनाएँ सुनाई पड़ती हैं। व्यापार में घाटा होता है। देश में कुछ अशान्ति रहती है। पशुओं के लिए चारे का अभाव रहता है। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शीत का प्रकोप होता है। शहरों में भी ओले बरसते हैं। पशु और मनुष्यों को अपार कष्ट होता है। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को अपार कष्ट होता है। यद्यपि आर्थिक विकास के लिए इस प्रकार के गन्धर्वनगर दिखलाई पड़ना उत्तम होता है। शुक्र को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शान्ति रहती है। जनता में सहयोग बढ़ता है। औद्योगिक विकास के लिए उत्तम होता है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सिंह, व्याघ्र आदि हिंसक पशुओं द्वारा जनता को कष्ट होता है। व्यापार के लिए इस प्रकार के गन्धर्वनगर का दिखलाई पड़ना शुभ नहीं है।

मार्गशीर्ष मास में मंगलवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को कष्ट, आगामी वर्ष उत्तम वर्षा, फसल अच्छी और बड़े पूँजीपतियों को कष्ट होता है। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भी जनता को कष्ट होता है। गुरुवार को गन्धर्वनगर का दिखलाई पड़ना अच्छा होता है, देश का सर्वांगीण विकास होता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर का देखा जाना लाभ, सुख, आरोग्य और शनिवार को देखने से हानि होती है। शनिवार की शाम को यदि पश्चिम दिशा में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो गदर होता है। कोई किसी को पूछता नहीं, मारकाट और लूटपाट की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

पौषमास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो प्रजा को कष्ट, रोग और अग्निभय; बुधवार को दिखलाई पड़े तो पूर्ण सुभिक्ष, धान्य का भाव सस्ता, सोना-चाँदी का भाव महँगा; शुक्रवार को दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष अनधोर

यथान्धः पथिको भ्रष्टः पथि क्लिश्यत्यनायकः ।
अनैमित्तस्तथा राजा नष्टे श्रेयसि क्लिश्यति ॥28॥

जिस प्रकार अन्धा रास्तागीर ले जाने वाले के न रहने से च्युत हो जाने से कष्ट उठाता है उसी प्रकार नैमित्तिक के बिना राजा भी कल्याण के नष्ट होने से कष्ट उठाता है ॥28॥

यथा तमसि चक्षुष्मान्न रूपं साधु पश्यति ।
अनैमित्तस्तथा राजा न श्रेयः साधु गम्यति ॥29॥

जिस प्रकार नेत्र वाला व्यक्ति भी अन्धकार में अच्छी तरह रूप को नहीं देख सकता है, उसी प्रकार नैमित्तिक से हीन राजा भी अच्छी तरह कल्याण को नहीं प्राप्त कर सकता है ॥29॥

यथा वक्रो रथो गन्ता चित्रं[1] यति यथा च्युतम्[2] ।
अनैमित्तस्तथा राजा न [3]साधुफलमीहते ॥30॥

जिस प्रकार वक्र—टेढ़े-मेढ़े रथ द्वारा मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति मार्ग से च्युत हो जाता है और अभीष्ट स्थान पर नहीं पहुंच पाता; उसी प्रकार नैमित्तिक से रहित राजा भी कल्याणमार्ग नहीं प्राप्त कर पाता है ॥30॥

चतुरंगान्वितो युद्धं कुलालो वर्तिनं यथा ।
अविनष्टं न गृह्णाति वर्जितं सूत्रतन्तुना ॥31॥

जिस प्रकार कुम्हार बर्तन बनाते समय मृत्तिका, चाक, दण्ड आदि उपकरणों के रहने पर भी, बर्तन निकालने वाले धागे के बिना बर्तन बनाने का कार्य सम्यक् प्रकार नहीं कर सकता है, उसी प्रकार चतुरंग सेना से सहित होने पर भी राजा नैमित्तिक के बिना सफलता प्राप्त नहीं कर सकता है ॥31॥

चतुरंगबलोपेतस्तथा राजा न शक्नुयात् ।
अविनष्टफलं भोक्तुं नैमित्तेन विवर्जितः ॥32॥

चतुरंग सेना से युक्त होने पर भी राजा नैमित्तिक से रहित होने पर युद्ध के समग्रफल प्राप्त नहीं कर सकता है ॥32॥

तस्माद्राजा निमित्तज्ञं अष्टांगकुशलं वरम् ।
बिभृयात् प्रथमं प्रीत्याऽभ्यर्थयेत् सर्वसिद्धये ॥33॥

अतएव राजा सभी प्रकार की सिद्धि प्राप्त करने के अष्टांग निमित्त के ज्ञाता,

1. चित्र मु० । 2. च्यवम् मु० । 3. सेना:- मु० ।

चतुर, श्रेष्ठ नैमित्तिक को प्रार्थना पूर्वक अपने यहाँ नियुक्त करें ॥33॥

आरोग्यं जीवितं लाभं सुखं मित्राणि सम्पद: ।
धर्मार्थकाममोक्षाय तदा यात्रा नृपस्य हि ॥34॥

आरोग्य, जीवन, लाभ, सुख, सम्पत्ति, मित्र-मिलाप, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति जिस समय होने का योग हो, उसी समय राजा को यात्रा करनी चाहिए ॥34॥

शय्याऽऽसनं यानयुग्मं हस्त्यश्वं स्त्री-नरं स्थितम् ।
वस्त्रान्तस्वप्नयोधांश्च यथास्थानं स योक्ष्यति ॥35॥

शुभ-यात्रा से ही शय्या, आसन, सवारी, हाथी, घोड़ा, स्त्री, पुरुष, वस्त्र, योद्धा आदि यथासमय प्राप्त होते हैं । अर्थात् कुसमय में यात्रा करने से अच्छी वस्तुएँ भी नष्ट हो जाती हैं । अत: समय का प्रभाव सभी वस्तुओं पर पड़ता है ॥35॥

भृत्यामात्यास्त्रिय: पूज्या राज्ञा स्थाप्या: सुलक्षणा: ।
[1]एभिस्तु लक्षणै राजा लक्षणोऽप्यवर्सादति ॥36॥

भृत्य, अमात्य—प्रधानमन्त्री और स्त्रियों का यथोचित सम्मान करके इन्हें राज्य चलाने के लिए राजधानी में स्थापित करना चाहिए । इन उपर्युक्त लक्षणों से युक्त राजा ही लक्ष्य को प्राप्त करता है ॥36॥

तस्माद् देशे च काले च सर्वज्ञानवतां वरम् ।
सुमना: पूजयेद् राजा नैमित्तं दिव्यचक्षुषम् ॥37॥

अतएव देश और काल में सभी प्रकार के ज्ञानियों में श्रेष्ठ दिव्य चक्षुधारी नैमित्तिक का सम्मान राजा को प्रसन्न चित्त से करना चाहिए ॥37॥

न वेदा नापि चांगानि न विद्याश्च पृथक् पृथक् ।
प्रसाधयन्ति तानर्थान्निमित्तं यत् सुभाषितम् ॥38॥

निमित्तों के द्वारा जितने प्रकार के और जैसे कार्य सफल हो सकते हैं, उस प्रकार के उन कार्यों को न वेद से सिद्ध किया जा सकता है, न वेदांग से और न अन्य किसी भी प्रकार की विद्या से ॥38॥

अतीतं वर्तमानं च भविष्यद्यच्च किंचन ।
सर्वं विज्ञायते येन तज्ज्ञानं नेतरं मतम् ॥39॥

---

1. एषां कुलक्षणै: मु० ।

अतीत—भूत, वर्तमान और भविष्यत् का परिज्ञान निमित्तों के द्वारा ही किया जा सकता है, अन्य किसी शास्त्र या विद्या के द्वारा नहीं ॥39॥

स्वर्गप्रीतिफलं प्राहुः सौख्यं धर्मविदो जनाः।
तस्मात् प्रीतिः सखा ज्ञेया सर्वस्य जगतः सदा ॥40॥

धर्म के जानकार व्यक्तियों ने प्रेम का फल स्वर्ग और सुख बतलाया है। अतएव समस्त संसार के प्रेम को मित्र जानना चाहिए ॥40॥

स्वर्गेण तादृशा प्रीतिर्विषयैर्वापि मानुषैः।
[1]यदेष्टः स्यान्निमित्तेन सतां प्रीतिस्तु जायते ॥41॥

मनुष्यों की स्वर्ग में जैसी प्रीति होती है अथवा विषयों में---भोगों में जैसी प्रीति होती है, उस प्रकार निमित्तों से सज्जनों की प्रीति होती है अर्थात् शुभाशुभ को ज्ञात करने के लिए निमित्तों की परम आवश्यकता है, अतः निमित्तों से प्रीति करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है ॥41॥

तस्मात् स्वर्गास्पदं पुण्यं निमित्तं जिनभाषितम्।
पावनं परमं[2] श्रीमत् कामदं च[3] [4]प्रमोदकम् ॥42॥

अतएव जिनेन्द्र भगवान् के द्वारा निरूपित निमित्त स्वर्ग के तुल्य पुण्यास्पद, परम पवित्र, इच्छाओं को पूर्ण करने वाले और प्रमोद को देने वाले हैं ॥42॥

रागद्वेषौ च मोहं च वर्जयित्वा निमित्तवित्।
देवेन्द्रमपि निर्भीको यथाशास्त्रं समादिशेत् ॥43॥

निमित्तज्ञ को राग, द्वेष और मोह का त्याग कर निर्भय होकर शास्त्र के अनुसार इन्द्र को भी यथार्थ बात कह देनी चाहिए ॥43॥

सर्वाण्यपि निमित्तानि [5]अनिमित्तानि सर्वशः।
[6]नैमित्ते पृच्छतो यांति निमित्तानि भवन्ति च[7] ॥44॥

सभी निमित्त और सभी अनिमित्त नैमित्तिक से पूछने पर निमित्त हो जाते हैं। अर्थात् नैमित्तिक व्यक्ति अनिमित्तकों को निमित्त मानकर फलाफल का निर्देश करता है ॥44॥

यथान्तरिक्षात् पतितं यथा भूमौ च तिष्ठति।
तथांगजनिता चेष्टं निमित्तं फलमात्मकम् ॥45॥

1. यदि ष्टा निमित्तेन मु०। 2. प्रवर मु०। 3. वा मु०। 4. प्रमोदनं मु०। 5. निमित्तान्यपि मु०। 6. निमित्तं मु०। 7. तु मु०।

निमित्त तीन प्रकार के हैं—आकाश से पतित, भूमि पर दिखाई देने वाले और शरीर से उत्पन्न चेष्टाएँ ॥45॥

[1]पतेन्निम्ने यथाऽम्भो सेतुबन्धे च तिष्ठति।
[2]चेतो निम्ने तथा[3] तत्त्वं [4]तद्विद्यादफलात्मकम् ॥46॥

जिस प्रकार जल नीचे की ओर जाता है, पर पुल बाँध देने पर रुक जाता है, उसी प्रकार मानव का मन भी निम्न बातों की ओर जाता है, किन्तु इन बातों को अफलात्मक—फल रहित जानना चाहिए ॥46॥

[5]बहिरंगाश्च जायन्ते अन्तरंगाश्च चिन्तितम्।
तज्ज्ञः शुभाऽशुभं ब्रूयान्निमित्तज्ञानकोविदः ॥47॥

अन्तरंग में विचार करने पर ही बहिरंग में विकृति आती है। अतः निमित्त ज्ञान में प्रवीण व्यक्ति को शुभाशुभ निमित्त का वर्णन करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि बाह्य प्रकृति में विकार अन्तरंग कारणों से ही होता है, अतः बाह्य निमित्तों में किया वर्णन सत्य सिद्ध होता है ॥47॥

सुनिमित्तेन संयुक्तस्तत्परः साधुवृत्तयः।
अदीनमनसंकल्पो भव्यादि लक्षयेद् बुधः[6] ॥48॥

सुनिमित्तों को जानकर, साधु आचरण वाला व्यक्ति, मन को दृढ़ करता हुआ, शुभाशुभ फल का निरूपण करे ॥48॥

कुञ्जरस्तु तदा नर्देत् ज्वलमाने[7] हुताशने।
स्निग्धदेशे [8]ससम्भ्रान्तो राज्ञां विजयमावहेत् ॥49॥

स्निग्ध देश में यकायक अग्नि प्रज्वलित हो और हाथी गर्जना करे तो राजा की विजय होती है ॥49॥

एवं हयवृषाश्चाऽपि सिंहव्याघ्राश्च सस्वराः[9]।
नर्दयन्ति तु [10]सैन्यानि तदा राजा प्रमर्दति ॥50॥

इसी प्रकार घोड़ा, बैल, सिंह, व्याघ्र स्वरपूर्वक सुन्दर नाद या गर्जन करें तो राजा सेना को कुचलता है ॥50॥

---

1. तथैवाम्भो यथा निम्ने सेतुबन्धे च तिष्ठति मु०। 2. चित्ते मु०। 3. तद्वै मु०। 4. विन्द्यात् सत्फलात्मकम् मु०। 5. बहिरंगादिविषयमन्तरंगाच्च चिन्तितम् मु०। 6. विधिम् मु०। 7. नर्देद्धूयमाने मु०। 8. स्निग्धमुखं च विजानीयात् राजा मु०। 9. सुस्वरः मु०। 10. सौम्यानि मु०।

स्निग्धोऽल्पघोषो धूमोऽथ गौरवर्णो महानृजुः ।
प्रदक्षिणोऽप्यविच्छिन्नः सेनानी विजयावहः ॥51॥

यदि गमन काल में स्निग्धा, मन्द ध्वनि, धूम्रयुक्ता, गौरवर्णा, सीधी बड़ी शिखावाली अग्नि दाहिनी ओर से चारों ओर की प्रदक्षिणा करती हुई भी अविच्छिन्ना दिखलाई पड़े तो सेनानी की विजय होती है ॥51॥

कृष्णो वा विकृतो रूक्षो वामावर्तो हुताशनः ।
हीनार्चिर्धूमबहुलः स प्रस्थाने भयावहः ॥52॥

यदि गमन समय में कृष्ण शिखावाली, रूक्ष विकृति-विकार वाली, अधिक धूम वाली अग्नि सेना की बायीं ओर दिखलाई पड़े तो भयप्रद होती है ॥52॥

सेनाग्रे हूयमानस्य यदि पीता शिखा भवेत् ।
श्यामाऽथवा यदा रक्ता पराजयति सा चमूः ॥53॥

यदि गमनकाल में सेना के आगे पीतवर्ण की अग्नि की ज्वाला धू-धू करती हुई दिखलाई पड़े, रक्त वर्ण की अथवा कृष्ण वर्ण की शिखा उपर्युक्त प्रकार की ही दिखलाई पड़े तो सेना की पराजय होती है ॥53॥

यदि होतुः पथे शीघ्रं[1] ज्वलत्स्फुलिंगमग्रतः ।
पार्श्वतः पृष्ठतो वाऽपि तदेवं फलमादिशेत् ॥54॥

यदि गमन समय मार्ग में होता अर्थात् हवन करने वाले के आगे अग्निकण शीघ्रता से उड़ते हुए दिखलाई पड़ें, अथवा पीछे या बगल की ओर अग्निकण दिखलाई पड़ें तो भी सेना की पराजय होती है ॥54॥

यदि धूमाभिभूता स्याद् वातो भस्म निपातयेत् ।
आहुतः कम्पते वाऽऽज्यं न सा यात्रा विधीयते ॥55॥

यदि अग्नि धूमयुक्त हो और वायु के द्वारा इसकी भस्म—राख इधर-उधर उड़ रही हो अथवा अग्नि में आहुति रूप दिया गया घी कम्पित हो रहा हो तो यात्रा नहीं करनी चाहिए ॥55॥

राजा परिजनो वाऽपि कुप्यते मन्त्रशासने ।
होतुराज्यविलोपे च तस्यैव वधमादिशेत् ॥56॥

राजा या परिजन मन्त्री के अनुशासन से क्रोधित हों और हवन करनेवाले होता का घी नष्ट हो जाये तो उसकी बध की सूचना समझनी चाहिए ॥56॥

1. जुहृवतः शुभमग्रतः मु० ।

यद्याज्यभाजने केशा भस्मास्थीनि पुनः पुनः ।
सेनाग्रे हूयमानस्य मरणं तत्र निर्दिशेत् ॥57॥

यदि सेना के समक्ष हवन के घृतपात्र में केश, भस्म, हड्डी पुनः-पुनः गिरती हों तो सेना के मरण का निर्देश करना चाहिए ॥57॥

आपो होतुः पतेद्धस्तात् पूर्णपात्राणि वा भुवि ।
कालेन स्याद्वधस्तत्र सेनाया नात्र संशयः ॥58॥

यदि होता के हाथ से जल गिर जाये अथवा पूर्ण पात्र पृथ्वी पर गिर जाये तो कुछ समय में सेना का वध होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥58॥

यदा होता तु सेनायाः प्रस्थाने स्खलते मुहुः ।
बाधयेद् ब्राह्मणान् भूमौ तदा स्ववधमादिशेत् ॥59॥

जब सेना के प्रस्थान में होता बार-बार स्खलित हो और पृथ्वी पर ब्राह्मणों को बाधा पहुँचाता हो तो अपने वध का निर्देश करता है ॥59॥

धूमः [1]कुणिपगन्धो वा पीतको वा यदा भवेत् ।
सेनाग्रे हूयमानस्य तदा सेना पराजयः ॥60॥

यदि आमन्त्रित सेना के आगे हवन की अग्नि का धूम मुर्दा जैसी गन्ध वाला हो अथवा धूम पीले वर्ण का हो तो सेना के पराजय की सूचना समझनी चाहिए ॥60॥

मूषको नकुलस्थाने वराहो [2]गच्छतोऽन्तरा ।
[3]धामावर्तः पतंगो वा राज्ञो व्यसनमादिशेत् ॥61॥

न्यौला, मूषक और शूकर यदि पीछे की ओर आगे हुए दिखलाई पड़ें अथवा बायीं ओर पतंग - चिड़िया उड़ती हुई दिखलाई पड़े तो राजा की विपत्ति की सूचना समझनी चाहिए ॥61॥

मक्षिका वा पतंगो वा यद्वाऽन्यस्तः सरीसृपः ।
सेनाग्रे निपतेत् किञ्चिद्धूयमाने वधं वदेत् ॥62॥

मधुमक्खी, पतंग, सरीसृप—रेंगकर चलने वाला जन्तु, सर्पादि आमन्त्रित सेना के आगे गिरे तो वध होने की सूचना समझनी चाहिए ॥62॥

शुष्कं प्रदह्यते यदा वृष्टिश्चाप्यपवर्षति ।
ज्वाला धूमाभिभूता तु ततः सैन्यो निवर्तते ॥63॥

---

1. कुणिम मु० । 2. गच्छतेऽग्रतः मु० । 3. वामा- मु० ।

शुष्क --सूखे काष्ठादि जलने लगें, कुछ-कुछ वर्षा भी हो और अग्नि की लौ धूमयुक्त हो तो सेना लौट आती है ॥63॥

[1]जुह्वतो दक्षिणं देशं यदि गच्छन्ति चार्चिषः ।
राज्ञो विजयमाचष्टे वामतस्तु पराजयम् ॥64॥

यदि राजा के गमन समय में दक्षिण ओर हवन करती हुई अग्नि दिखलाई पड़े तो विजय और बायीं ओर उक्त प्रकार की अग्नि दिखलाई पड़े तो पराजय होती है ॥64॥

जुह्वत्यनुपसर्पणस्थानं[2] तु यत् पुरोहितः ।
जित्वा शत्रून् रणे सर्वान् राजा तुष्टो निवर्तते ॥65॥

यदि पुरोहित ढालू स्थान पर यज्ञ करता हो अथवा जिधर राजा गमन कर रहा हो, उधर पुरोहित यज्ञ करता हो तो समस्त शत्रुओं को जीत कर प्रसन्न होता हुआ राजा लौटता है ॥65॥

यस्य वा सम्प्रयातस्य [3]सम्मुखो पृष्ठतोऽपि वा ।
पतत्युल्का सनिर्घाता वधं तस्य निवेदयेत् ॥66॥

प्रयाण करने वाले जिस राजा के सम्मुख या पीछे घर्षण करती हुई उल्का गिरे तो उस राजा का वध होता है ॥66॥

सेनां यान्ति प्रयातां यां क्रव्यादाश्च जुगुप्सिताः ।
अभीक्ष्णं विस्वरा घोराः सा सेना वध्यते परैः ॥67॥

घृणित मांसभक्षी जन्तु— शेर, व्याघ्र, गृद्ध आदि जन्तु बार-बार विकृत और भयंकर शब्द करते हुए प्रयाण करने वाली सेना का अनुगमन करें तो सेना शत्रुओं द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥67॥

प्रयाणे निपतेदुल्का प्रतिलोमा यदा चमूः ।
निवर्तयति मासेन तत्र यात्रा न [4]सिध्यति ॥68॥

जब सेना के प्रयाण के समय विपरीत दिशा में उल्कापात होता है, तब सेना एक महीने में लौट आती है और यात्रा सफल नहीं होती ॥68॥

छिन्ना भिन्ना प्रदृश्येत तदा सम्प्रस्थिता चमूः ।
निवर्तयेत सा शीघ्रं न सा सिद्ध्यति कुत्रचित् ॥69॥

---

1. जुह्वतः प्रदक्षिणं देशं यदि गच्छन्ति वा शिखा मु० । 2. सर्पणस्थान मु० । 3 सम्मुखे मु० । 4. सिध्यति मु० ।

यदि सेना के प्रयाण के समय उल्का छिन्न-भिन्न दिखलाई पड़े तो शीघ्र ही सेना लौट आती है और यात्रा सफल नहीं होती ॥69॥

यस्याः प्रयाणे सेनायाः सनिर्घाता मही चलेत्।
न तया सम्प्रयातव्यं साऽपि वध्येत सर्वशः ॥70॥

जिस सेना के प्रयाण के समय घर्षण करती हुई पृथ्वी चले—भूकम्प हो तो उस सेना के साथ नहीं जाना चाहिए; क्योंकि उसका भी वध होता है ॥70॥

अग्रतस्तु सपाषाणं तोयं वर्षति वासवः।
सङ्ग्रामं घोरमत्यन्तं जयं राज्ञश्च शंसति ॥71॥

यदि सेना के आगे मेघ ओलों सहित वर्षा कर रहा हो तो भयंकर युद्ध होता है और राजा के जय लाभ में सन्देह समझना चाहिए ॥71॥

प्रतिलोमो यदा वायुः सपाषाणो रजस्करः।
निवर्तयति प्रस्थाने परस्परजयावहः ॥72॥

कंकड़-पत्थर और धूलि को लिये हुए यदि विपरीत दिशा का वायु चलता हो तो प्रस्थान करने वाले राजा को लौटना पड़ता है तथा परस्पर विजय लाभ होता है—दोनों को—पक्ष-विपक्षियों को जयलाभ होता है ॥72॥

मारुतो दक्षिणो वापि यदा हन्ति परां चमूम्।
[1]प्रस्थितानां प्रमुखतः विन्द्यात् तत्र पराजयम् ॥73॥

यदि सेना के प्रयाण के समय दक्षिणी वायु चल रहा हो और वह सेना का घात कर रहा हो तो प्रस्थान करने वाले राजा की पराजय होती है ॥73॥

[2]यदा तु तत्परां सेनां समागम्य महाघनाः[3]।
तस्य विजयमाख्याति भद्रबाहुवचो यथा ॥74॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना के चारों ओर बादल एकत्र हो जायें तो भद्रबाहु स्वामी के वचनानुसार उस सेना की विजय होती है ॥74॥

हीनांगा जटिला बद्धा व्याधिताः [4]पापचेतसः।
षण्ढाः पापस्वरा ये च प्रयाणे ते तु निन्दिताः ॥75॥

प्रस्थान काल में ही हीनांग व्यक्ति, बेड़ी आदि में बद्ध व्यक्ति, रोगी, पाप बुद्धि, नपुंसक, पाप स्वर—विकृत स्वर—तोतली बोली बोलने वाला, हकलाने

1. प्रस्थितानां प्रमुखे तत्र मु०। 2. यदा तु तत्परां सेनां समागम्य महाजनाः मु०। 3. महाजनाः मु०। 4. पापपांशवः मु०।

बाला आदि व्यक्ति यदि मिल जायें तो राजा को विजयी समझना चाहिए ॥75॥

नग्नं प्रव्रजितं [1]दृष्ट्वा मंगलं मंगलार्थिनः ।
कुर्यादमंगलं यस्तु तस्य सोऽपि न मंगलम् ॥76॥

नग्न, दीक्षित मुनि आदि साधुओं का दर्शन मंगलार्थी के लिए मंगलमय होता है। जिसको साधु-मुनि का दर्शन अमंगल रूप होता है, उसके लिए वह भी मंगल रूप नहीं है ॥76॥

पीडितोऽपचयं कुर्यादाक्रुष्टो वधबन्धनम् ।
ताडितो मरणं दद्याद् त्रासितो रुदितं तथा ॥77॥

यदि प्रयाण काल में पीड़ित व्यक्ति दिखलाई पड़े तो हानि, चीखता हुआ दिखलाई पड़े तो वध-बन्धन, ताड़ित दिखलाई पड़े तो मरण और रुदित दिखलाई पड़े तो त्रासित होना पड़ता है ॥77॥

पूजितः [2]सानुरागेण लाभं राज्ञः समादिशेत् ।
तस्मात्तु मंगलं कुर्यात् प्रशस्तं साधुदर्शनम् ॥78॥

अनुराग पूर्वक पूजित व्यक्ति दिखलाई पड़े तो राजा को लाभ होता है, अतएव आनन्द मंगल करना चाहिए। यात्रा काल में साधु का दर्शन शुभ होता है ॥78॥

दैवतं तु यदा बाह्यं राजा सत्कृत्य स्वं पुरम् ।
प्रवेशयति तद्राजा बाह्यस्तु लभते पुरम् ॥79॥

जब राजा बाह्य देवता के मन्दिर की अर्चना कर अपने नगर में प्रवेश करता है तो बाह्य से ही नगर को प्राप्त कर लेता है ॥79॥

वैजयन्त्यो विवर्णास्तु[3] '[4]बाह्ये राज्ञो यदाग्रतः ।
पराजयं समाख्याति तस्मात् तां परिवर्जयेत् ॥80॥

यदि राजा के आगे बहिर्भाग की पताका विकृत रंग बदरंगी दिखलाई पड़े तो राजा की पराजय होती है, अतः उसका त्याग कर देना चाहिए ॥80॥

सर्वार्थेषु प्रमत्तश्च यो भवेत् पृथिवीपतिः ।
हितं न शृण्वतश्चापि तस्य विन्द्यात् पराजयम् ॥81॥

जो राजा समस्त कार्यों में प्रमाद करता है और हितकारी वचनों को नहीं सुनता है, उसकी पराजय होती है ॥81॥

---

1. दृष्ट्वा मु० । 2. सांतगमेन मु० । 3. ध्वज मु० । 4. राज्ञो बाह्यो यदा ग्रहः मु० ।

अभिद्रवन्ति यां सेनां विस्वरं मृगपक्षिणः।
श्वमानुषश्रृगाला वा सा सेना वध्यते परैः ॥82॥

जिस सेना पर विकृत स्वर में आवाज करते हुए पशु-पक्षी आक्रमण करें अथवा कुत्ता, मनुष्य और श्रृगाल सेना का पीछा करें तो वह सेना शत्रुओं के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥82॥

भग्नं दग्धं च शकटं यस्य राज्ञः प्रयायिणः।
दैवोपसृष्टं जानीयान्न तत्र गमनं शिवम् ॥83॥

प्रस्थान करने वाले जिस राजा की गाड़ी---रथ, या अन्य वाहन अकस्मात भग्न या दग्ध हो जाय तो उसे यह दैविक उपसर्ग समझना चाहिए और उसका गमन करना कल्याणकारी नहीं है ॥83॥

उल्का वा विद्युतोऽभ्रं वा कनकाः सूर्यरश्मयः।
स्तनितं यदि वा छिद्रं सा सेना वध्यते परैः ॥84॥

यदि प्रयाण काल में उल्का, विद्युत्, अभ्र और सूर्य की स्वर्ण किरणें स्तनित कड़कती हुई अथवा सछिद्र दिखाई पड़ें तो सेना शत्रुओं के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥84॥

प्रयातायास्तु सेनाया यदि कश्चिन्निवर्तते।
चतुष्पदो द्विपदो वा न सा यात्रा विशिष्यते ॥85॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना से कोई चतुष्पद---हाथी, घोड़े आदि पशु (या द्विपद---मनुष्य (या पक्षी) लौटने लगें तो उस यात्रा को शिष्ट-शुभकारी नहीं समझना चाहिए ॥85॥

प्रयातो यदि वा राजा निपतेद् वाहनात् क्वचित्।
अन्यो वाऽपि गजाऽश्वो वा साऽपि यात्रा जुगुप्सिता ॥86॥

यदि प्रयाण करता हुआ राजा यकायक सवारी से गिर जाये अथवा अन्य हाथी, घोड़े गिर जायें तो यात्रा को निन्दित समझना चाहिए ॥86॥

क्रव्यादाः पक्षिणो यत्र निलीयन्ते ध्वजादिषु।
निवेदयन्ति ते राज्ञस्तस्य घोरं चमूवधम् ॥87॥

जिस राजा की सेना की ध्वजा पर मांसभक्षी पक्षी बैठ जायें तो उस राजा की सेना का भयंकर वध होता है ॥87॥

मुहुर्मुहुर्यदा राजा निवर्तन्तो निमित्ततः।
प्रयातः परचक्रेण सोऽपि वध्येत संयुगे ॥88॥

वर्षा, आर्थिक कष्ट, आवास की समस्या और अन्न कष्ट, एवं शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो राजा और प्रजा दोनों को अपार कष्ट होता है।

माघ मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चैती फसल बहुत उत्तम, लोहा के व्यापार में पूर्ण लाभ, रबर या गोंद के व्यापार में हानि, राजनीतिक उपद्रव और अशान्ति; बुधवार को दिखलाई पड़े तो उत्तम वर्षा; सुभिक्ष, आर्थिक विकास और शान्ति; गुरुवार को दिखलाई पड़े तो सुख, सुभिक्ष और प्रसन्नता; शुक्रवार को दिखलाई पड़े तो शान्ति, लाभ और आनन्द एवं शनिवार को दिखलाई पड़े तो अपार कष्ट होता है। प्रातःकाल शनिवार को इस महीने में गन्धर्वनगर का देखना शुभ होता है। उस प्रदेश में सुभिक्ष, सुख और शान्ति रहती है।

फाल्गुन मास में मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो आषाढ़ से आश्विन तक अच्छी वर्षा होती है, गेहूँ, धान, ज्वार, जौ, गन्ना के भाव में महँगी रहती है। यद्यपि कार्तिक के पश्चात् ये पदार्थ भी सस्ते हो जाते हैं। व्यापारियों, कलाकारों और राजनीतिज्ञों के लिए वर्ष उत्तम रहता है। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई देने से फसल में कमी, राजा या अधिकारी शासक का विनाश, पंचायत में मतभेद एवं सोना-चाँदी के व्यापार में लाभ; गुरुवार को दिखलाई दे तो पीले रंग की वस्तुओं का भाव सस्ता, लाल रंग की वस्तुओं का भाव महँगा और तिल, तिलहन आदि का भाव समर्घ, शुक्र को दिखलाई पड़े तो पत्थर, चूने के व्यापार में विशेष लाभ, जूट में घाटा और वर्षा समयानुसार; एवं शनिवार को दिखलाई पड़े तो वर्षा अच्छी और फसल सामान्यतया अच्छी ही होती है।

चैत्र मास में मंगलवार को सन्ध्या समय गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नगर में अग्नि का प्रकोप, पशुओं में रोग, नागरिकों में कलह और अर्थहानि; बुधवार को मध्याह्न में दिखलाई पड़े तो अर्थविनाश, नागरिकों में असन्तोष, रसादि पदार्थों का अभाव और पशुओं के लिए चारे की कमी; गुरुवार को रात्रि में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को अत्यन्त कष्ट, व्यसनों का प्रचार, अधार्मिक जीवन एवं अर्थक्षति, शुक्रवार को दिखलाई पड़े तो चातुर्मास में अच्छी वर्षा, उत्तम फसल, अनाज का भाव सस्ता, घी, दूध की अधिक उत्पत्ति, व्यापारियों को लाभ एवं शनिवार को मध्यरात्रि या मध्य दिन में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता में घोर संघर्ष, मारकाट एवं अशान्ति होती है। अराजकता सर्वत्र फैल जाती है।

वैशाख मास में मंगलवार को प्रातःकाल या अपराह्न काल में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चातुर्मास में अच्छी वर्षा और सुभिक्ष, बुधवार को दिखलाई पड़े तो व्यापारियों में मतभेद, आपस में झगड़ा और आर्थिक क्षति; गुरुवार को

जब किसी निमित्त—कार्य के लिए राजा प्रयाण करने वाली सेना से लौट करके जाए तो शत्रु राजा के द्वारा वह युद्ध में मारा जाता है ॥88॥

यदा राज्ञः प्रयातस्य रथश्च पथि भज्यते।
[1]भग्नानि चोपकरणानि तस्य राज्ञो वधं दिशेत् ॥89॥

जब यात्रा करने वाले राजा का रथ मार्ग में भग्न हो जाये तथा उस राजा के छत्र, चमर आदि उपकरण भग्न हो जायें तो उसका बध समझना चाहिए ॥89॥

प्रयाणे पुरुषा वाऽपि यदि नश्यन्ति सर्वशः।
सेनाया बहुशश्चाऽपि हता दैवेन सर्वशः ॥90॥

यदि प्रस्थान में - यात्रा में अनेक व्यक्तियों की मृत्यु हो तो भाग्यवश सेना में भी अनेक प्रकार की हानि होती है ॥90॥

यदा राज्ञः प्रयातस्य दानं न कुरुते जनः।
हिरण्यव्यवहारेषु साऽपि यात्रा न सिध्यति[2] ॥91॥

यदि प्रयाण करने वाले राजा का व्यक्ति प्रयाण काल में स्वर्णादिक दान न करें तो यात्रा सफल नहीं होती है ॥91॥

प्रवरं घातयेत् भृत्यं प्रयाणे यस्य[3] पार्थिवः।
अभिषिञ्चेत् सुतं चापि चमूस्तस्यापि बध्यते ॥92॥

प्रयाणकाल में जिस राजा के प्रधान भृत्य का घात हो और नृप उसके पुत्र को अभिषिक्त करे तो उसकी सेना का वध होता है ॥92॥

विपरीतं यदा कुर्यात् सर्वकार्यं मुहुर्मुहुः।
तदा तेन परित्रस्ता सा सेना परिवर्तते ॥93॥

यदि प्रयाण काल में नृप बार-बार विपरीत कार्य करे तो सेना उससे परित्रस्त होकर लौट आती है ॥93॥

परिवर्तेद् यदा वातः सेनामध्ये यदा-यदा।
तदा तेन परित्रस्ता सा सेना परिवर्तते ॥94॥

सेना में जब वायु बार-बार सेना को अभिघातित और परिवर्तित करे तो सेना उसके द्वारा त्रस्त होकर लौट आती है ॥94॥

---

1. भग्नानि चोपकरणा मु० । 2. सिध्यते मु० । 3. यदि मु० ।

विशाखारोहिणीभानु[1] नक्षत्रैरुत्तरैश्च या।
पूर्वाह्णे च [2]प्रयाता वा सा सेना परिवर्तते ॥95॥

विशाखा और रोहिणी सूर्य के नक्षत्र तथा उत्तरात्रय सूर्य नक्षत्रों के पूर्वाह्न में प्रयाण करने पर सेना लौट आती है ॥95॥

पुष्येण मैत्रयोगेन योऽश्विन्यां च नराधिपः।
पूर्वाह्णे विनर्याति वांछितं स समाप्नुयात् ॥96॥

पुष्य, अनुराधा और अश्विनी नक्षत्र में अपराह्नकाल में जो राजा प्रयाण करता है, वह इच्छित कार्य को पूरा कर लेता है अर्थात् उसकी इच्छा पूर्ण हो जाती है ॥96॥

दिवा हस्ते तु रेवत्यां वैष्णवे च न शोभनम्।
प्रयाणं सर्वभूतानां विशेषेण महीपतेः ॥97॥

हस्त नक्षत्र में दिन में तथा रेवती और श्रवण नक्षत्र में प्रयाण करना सभी को अच्छा होता है, किन्तु, राजाओं का प्रयाण विशेष रूप से अच्छा होता है ॥97॥

हीने मुहूर्ते नक्षत्रे तिथौ च करणे तथा।
पार्थिवो योऽभिनिर्याति अचिरात् सोऽपि बध्यते ॥98॥

हीन मुहूर्त, नक्षत्र, तिथि और करण में जो राजा अभिनिष्क्रमण करता है, वह शीघ्र ही वध को प्राप्त होता है ॥98॥

[3]यदाप्ययुक्तो मात्रयात्यधिको मारुतस्तदा।
परैस्तद्बध्यते सैन्यं यदि वा न निवर्तते ॥99॥

यदि यात्राकाल में वायु परिमाण से अधिक चले तो सेना को लौट आना चाहिए। यदि ऐसी स्थिति में सेना नहीं लौटती है तो सेना शत्रुओं के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥99॥

विहारानुत्सवांश्चापि कारयेत् पथि पार्थिवः।
स सिद्धार्थो निवर्तेत भद्रबाहुवचो यथा ॥100॥

यदि राजा मार्ग में विहार और उत्सव करे तो सफल मनोरथ होकर लौटता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥100॥

1. -ध्यां तु नक्षत्रैरुत्तरैश्च यत् मु०। 2. प्रयातस्य [illegible] निवर्तते मु०। 3 यथा-मथुर्षिन वा राजा मात्रमभिप्रसूयते मु०। नया सर्वन्यो [illegible] यदि नैव निवर्तते मु०।

वसुधा वारि वा यस्य यानेषु प्रतिहीयते।
वज्रादयो निपतन्ते ससैन्यो वध्यते नृपः ॥101॥

यदि प्रयाण काल में पृथ्वी जल से युक्त हो अथवा यान—रथ, घोड़ा, हाथी आदि की सवारी में हीनता हो— सवारियों के चलने में किसी तरह की कठिनाई आ रही हो अथवा बिजली आदि गिरे तो राजा का सेना सहित विनाश होता है ॥101॥

सर्वेषां शकुनानां च प्रशस्तानां स्वरः शुभः।
[1]पूर्णं विजयमाख्याति प्रशस्तानां च दर्शनम् ॥102॥

सभी शुभ शकुनों में स्वर शुभ शकुन होता है। श्रेष्ठ शुभ वस्तुओं का दर्शन पूर्ण विजय देता है ॥102॥

फलं वा यदि वा पुष्पं ददते यस्य पादपः।
अकालजं प्रयातस्य न सा यात्रा विधीयते ॥103॥

प्रयाण काल में जिस नृप को असमय में ही वृक्ष फल या पुष्प दें, तो उस समय यात्रा नहीं करनी चाहिए ॥103॥

येषां [2]निदर्शने किंचित् विपरीतं मुहुर्मुहुः।
स्थालिका पिठरो वाऽपि तस्य तद्वधमीहते ॥104॥

प्रयाण काल में जिन वस्तुओं के दर्शन में कुछ विपरीतता दिखलाई पड़े अथवा बटलोई, मथानी आदि वस्तुओं के दर्शन हों तो उस राजा की सेना का वध होता है ॥104॥

[3]अचिरेणैवाकालेन तद् विनाशाय कल्पते।
निवर्तयन्ति ये केचित् प्रयाता बहुशो नराः ॥105॥

यदि गमन करने वाले अधिक व्यक्ति लौट कर वापस जाने लगें तो शीघ्र ही असमय में सेना का विध्वंस होता है ॥105॥

यात्रामुपस्थितोपकरणं तेषां च स्याद् ध्रुवं वधः।
पक्वानां विरसं दग्धं [4]सर्पिभाण्डो विभिद्यते ॥106॥
तस्य व्याधिभयं चाऽपि मरणं वा पराजयम्।
[5]रथानां प्रहरणानांच ध्वजानामथ यो नृपः ॥107॥

1. पूर्णं मु०। 2. निदर्शनं मु०। 3. अनागतं कालेनैव मु०। 4. दग्धमपिषु मीहते मु०। 5. रथप्रहरणं नीनां ध्वजध्वानां यो नृपः मु०।

[1]चिह्नं कुर्यात् क्वचिन्नीलं [2]मन्त्रिणा सह बध्यते।
म्रियते पुरोहितो वाऽस्य छत्रं वा पथि भज्यते ॥108॥

जिनको यात्राकाल में उपकरण --अस्त्र-शस्त्रों का दर्शन हो, उनका वध होता है। पक्वान्न नीरस और जला हुआ तथा घृत का बर्तन फूटा हुआ दिखलाई पड़े तो व्याधि, भय, मरण और पराजय होता है। रथ, अस्त्र-शस्त्र और ध्वजा में जो राजा नील चिह्न अंकित करता है, वह मन्त्री सहित वध को प्राप्त होता है। यदि मार्ग में राजा का छत्र भंग हो तो पुरोहित का मरण होता है॥106-108॥

[3]जायते चक्षुषो व्याधिः स्कन्धवारे प्रयायिनाम्।
अनग्निज्वलनं वा स्यात् सोऽपि राजा विनश्यति ॥109॥

प्रयाण करने वालों के सैन्य-शिविर में यदि नेत्र रोग उत्पन्न हो अथवा बिना अग्नि जलाये ही आग जल जाये तो प्रयाण करने वाले राजा का विनाश होता है॥109॥

द्विपदश्चतुष्पदो वाऽपि सकृन्मुंचति विस्वरः।
बहुशो व्याधितार्त्ता वा सा सेना विद्रवं व्रजेत् ॥110॥

यदि द्विपद—मनुष्यादि, चतुष्पद—चौपाये आदि एक साथ विकृत शब्द करें तो अधिक व्याधि से पीड़ित होकर सेना उपद्रव को प्राप्त होती है॥110॥

सेनायास्तु प्रयातायाः कलहो यदि जायते।
द्विधा त्रिधा वा सा सेना विनश्यति न संशयः ॥111॥

यदि सेना के प्रयाण के समय कलह हो और सेना दो या तीन भागों में बँट जाये तो निस्सन्देह उसका विनाश होता है॥111॥

जायते चक्षुषो व्याधिः स्कन्धावारे प्रयायिणाम्।
अचिरेणैव कालेन साऽग्निना दह्यते चमूः ॥112॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना की आँख में शिविर में ही पीड़ा उत्पन्न हो तो शीघ्र ही अग्नि के द्वारा वह सेना विनाश को प्राप्त होती है॥112॥

व्याधयश्च प्रयातानामतिशीतं विपर्ययेत्।
अत्युष्णं चातिरूक्षं च राज्ञो यात्रा न सिध्यति ॥113॥

---

1. चिह्नं मु०। 2. स च मन्त्री मु०। 3. जायते चक्षुषो व्याधिः [illegible] प्रयायिनां, यह पंक्ति मुद्रित प्रति में नहीं है।

यदि प्रयाण करने वालों के लिए व्याधियाँ उत्पन्न हो जायें तथा अति शीत विपरीत—अति उष्ण या अति रूक्ष में परिणत हो जाये तो राजा की यात्रा सफल नहीं होती है ॥113॥

निविष्टो यदि सेनाग्निः क्षिप्रमेव प्रशाम्यति ।
उपवह्या [1]नदन्तश्च भज्यते सोऽपि वध्यते ॥114॥

यदि सेना की प्रज्वलित अग्नि शीघ्र ही शान्त हो जाये—बुझ जाये तो बाहर में स्थित आनन्दित भागने वाले व्यक्ति भी वध को प्राप्त होते हैं ॥114॥

[2]देवो वा यत्र नो वर्षेत् क्षीराणां [3]कल्पना तथा ।
विद्यान्महद्भयं घोरं शान्तिं तत्र तु कारयेत् ॥115॥

जहाँ वर्षा न हो और जल जहाँ केवल कल्पना की वस्तु ही रहे, वहाँ अत्यन्त घोर भय होता है, अतः शान्ति का उपाय करना चाहिए ॥115॥

दैवतं दीक्षितान् वृद्धान् पूजयेत् ब्रह्मचारिणः ।
ततस्तेषां तपोभिश्च पापं राज्ञां प्रशाम्यति ॥116॥

राजा को देवताओं, यतियों, वृद्धों और ब्रह्मचारियों की पूजा करनी चाहिए; क्योंकि इनके तप के द्वारा ही राजा का पाप शान्त होता है ॥116॥

[4]उत्पाताश्चापि जायन्ते हस्त्यश्वरथपत्तिषु ।
[5]भोजनेष्वन्नीकेषु राजबन्धश्चमूवधः ॥117॥

यदि हाथी, घोड़े, रथ और पैदल सेना में उत्पात हो तथा सेना के भोजन में भी उत्पात—कोई अद्भुत बात दिखलाई पड़े तो राजा को कैद और सेना का वध होता है ॥117॥

उत्पाता विकृताश्चापि दृश्यन्ते ये प्रयायिणाम् ।
सेनायां चतुरङ्गायां तेषामौत्पातिकं फलम् ॥118॥

प्रयाण करने वालों को जो उत्पात और विकार दिखलाई पड़ते हैं, चतुरंग सेना में उनका औत्पातिक फल अवगत करना चाहिए ॥118॥

भेरीशंखमृदंगाश्च प्रयाणे ये यथोचिताः ।
निबध्यन्ते प्रयातानां विस्वरा वाहनाश्च ये ॥119॥

भेरी, शंख, मृदंग का शब्द प्रयाण-काल में यथोचित हो—न अधिक और न

1. नदन्तश्च मु० । 2. देवश्चेत्र न वर्षेत् मु० । 3. कल्पितं मु० । 4. उत्पातश्चापि मु० ।
5. भोजनेषु अंकिता मु० ।

कम तथा सैनिकों के वाहन भी विकृत शब्द न करें तो शुभ फल होता है ॥119॥

पृष्ठतस्तु प्रयायेत काकसैन्यं प्रयायिणाम्।
विस्वरं निभृतं वाऽपि येषां विद्यांच्चमूवधम् ॥120॥

यदि प्रयाण करने वालों के आगे काकसेना—कौओं की पंक्ति गमन करे अथवा विकृत स्वर करती हुई काकपंक्ति लौटे तो सेना का वध होता है ॥120॥

राज्ञो यदि प्रयातस्य गायन्ते ग्रामिका: पुरे।
चण्डानिलो नदीं शुष्येत् सोऽपि बध्येत पार्थिवः ॥121॥

यदि प्रयाण करने वाले राजा के आगे ग्रामवासी नारियाँ गाना (रुदन करती) गाती हों और प्रचण्ड वायु नदी को सुखा दे तो राजा के वध की सूचना समझनी चाहिए ॥121॥

देवताऽतिथिभृत्येभ्योऽदत्वा तु भुंजते यदा।
यदा भक्ष्याणि भोज्यानि तदा राजा विनश्यति ॥122॥

देवता की पूजा, अतिथि का सत्कार और भृत्यों को बिना दिये जो भोजन करता है, वह राजा विनाश को प्राप्त होता है ॥122॥

द्विपदाश्चतु:पदा वाऽपि यदाऽभीक्ष्णं [1]रदन्ति वै।
परस्परं सुसम्बद्धा सा सेना बध्यते परैः ॥123॥

द्विपद—मनुष्यादि अथवा चतुष्पद - पशु आदि चौपाये परस्पर में सुसंगठित होकर आवाज करते हैं गर्जना करते हैं, तो सेना शत्रुओं के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥123॥

ज्वलन्ति यस्य शस्त्राणि नमन्ते निष्क्रमन्ति वा।
सेनाया: शस्त्रकोशेभ्य: साऽपि सेना विनश्यति ॥124॥

यदि प्रयाण के समय सेना के अस्त्र-शस्त्र ज्वलन्त होने लगें अपने आप झुकने लगें अथवा शस्त्रकोश से बाहर निकलने लगें तो भी सेना का विनाश होता है ॥124॥

नर्दन्ति द्विपदा यत्र पक्षिणो वा चतुष्पदा:।
क्रव्यादास्तु विशेषेण तत्र संग्राममादिशेत् ॥125॥

द्विपद पक्षी अथवा चतुष्पद चौपाये गर्जना करते हों अथवा विशेष रूप से मांसभक्षी पशु-पक्षी गर्जना करते हों तो संग्राम की सूचना समझनी

1. रुदन्ति मु.।

चाहिए ॥125॥

विलोमेषु च वातेषु [1]प्रदीप्टे वाहनेऽपि च।
शकुनेषु च दीप्तेषु युध्यतां तु पराजयः ॥126॥

उलटी हवा चलती हो, वाहन -सवारियाँ प्रदीप्त मालूम पड़ें और शकुन भी दीप्त हों तो युद्ध करने वाले की पराजय होती है ॥126॥

युद्धप्रियेषु हृष्टेषु नर्दत्सु वृषभेषु च।
रक्तेषु चाभ्रजालेषु सन्ध्यायां युद्धमादिशेत्। 127॥

प्रयाण-काल में तगड़े, हट्टे-कट्टे एवं युद्धप्रिय (लड़ाकू) साँड़ों, बैलों आदि के गर्जना करने पर और सन्ध्याकाल में बादलों के लाल होने पर युद्ध की सूचना समझनी चाहिए ॥127॥

अभ्रेषु च विवर्णेषु युद्धोपकरणेषु च।
दृश्यमानेषु सन्ध्यायां सद्यः संग्राममादिशेत् ॥128॥

युद्ध के उपकरण - अस्त्र-शस्त्रादि एवं सन्ध्याकाल में बादलों के विवर्ण दिखलाई देने पर शीघ्र ही युद्ध का निर्देश समझना चाहिए ॥128॥

कपिले रक्तपीते वा हरिते च तले चमूः।
स सद्यः परसैन्येन बध्यते नाऽत्र संशयः ॥129॥

यदि प्रयाण-काल में सेना कपिल वर्ण, हरित, रक्त और पीत वर्ण के बादलों के नीचे गमन करे तो सेना निस्सन्देह शीघ्र ही शत्रुसेना के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥129॥

काका गृध्राः शृगालाश्च कंका ये चामिषप्रियाः।
पश्यन्ति यदि सेनायां प्रयातायां भयं भवेत् ॥130॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना के समक्ष काक, गृद्ध, शृगाल और मांसप्रिय अन्य चिड़ियाँ दिखलाई पड़ें तो सेना को भय होता है ॥130॥

उलूका वा बिडाला वा मूषका वा यदा भृशम्।
वासन्ते यदि सेनायां [2]निश्चितः स्वामिनो वधः ॥131॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना में उल्लू, बिडाल या मूषक अधिक संख्या में निवास करें तो निश्चित रूप से स्वामी का वध होता है ॥131॥

1. दिनेषु वाहिनेषु मु०। 2. नियतं सोऽहित का वधः मु०।

ग्राम्या वा यदि वाऽरण्या विवा वसन्ति निर्भयम्।
सेनायां संप्रयातायां [1]स्वामिनोऽत्र भयं भवेत् ॥132॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना में शहरी या ग्रामीण कौए निर्भय होकर निवास करें तो स्वामी को भय होता है ॥132॥

मैथुनेन विपर्यासं यदा कुर्युर्विजातयः।
रात्रौ दिवा च सेनायां [2]स्वामिनो वधमादिशेत् ॥133॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना में रात्रि या दिन में विजाति के प्राणी—गाय के साथ घोड़ा या गधा मैथुन में विपर्यास— उल्टी क्रिया करें, पुरुष का कार्य स्त्री और स्त्री का कार्य पुरुष करे तो स्वामी का वध होता है ॥133॥

चतुःपदानां मनुजा यदा कुर्वन्ति [3]वाशितम्।
मृगा वा पुरुषाणां तु तत्रापि [4]स्वामिनो वधः ॥134॥

यदि चतुष्पद की आवाज मनुष्य करें अथवा पुरुषों की आवाज मृग—पशु करें तो स्वामी का वध होता है ॥134॥

एकपादस्त्रिपादो वा त्रिशृंगो यदि वाऽधिकः।
प्रसूयते पशुर्यत्र यत्रापि सौप्तिको वधः ॥135॥

जहाँ एक पैर या तीन पैर वाला अथवा तीन सींग या उससे अधिक वाला पशु उत्पन्न हो तो स्वामी का वध होता है ॥135॥

अश्रुपूर्णमुखादीनां शेरते च यदा भृशम्।
पदान्विलिखमानास्तु हया यस्य स वध्यते ॥136॥

जिस सेना के घोड़े अत्यन्त आँसुओं से मुख भरे होकर शयन करें अथवा अपनी टाप से जमीन को खोदें तो उसके राजा का वध होता है ॥136॥

निष्कुट्यन्ति पादैर्वा भूमौ बालान् किरन्ति च।
प्रहृष्टाश्च प्रपश्यन्ति तत्र संग्राममादिशेत् ॥137॥

जब घोड़े पैरों से धरती को कूटते हों अथवा भूमि में आने वालों को गिराते हों और प्रसन्न-से दिखलाई पड़ते हों तो संग्राम की सूचना समझनी चाहिए ॥137॥

न चरन्ति यदा ग्रासं न च पानं पिबन्ति वै।
श्वसन्ति वाऽपि धावन्ति विन्द्यादग्निभयं तदा ॥138॥

---

1. सौप्तिको। मु०। 2. सौप्तिका मु०। 3. वाशितम् मु०। 4. सौप्तिको मु०।

जब घोड़े घास न खायें, जल न पीयें, हाँफते हों या दौड़ते हों तो अग्निभय समझना चाहिए ॥138॥

क्रौञ्चस्वरेण स्निग्धेन मधुरेण पुन: पुन: ।
हेषन्ते गर्वितास्तुष्टास्तदा राज्ञो जयावहा: ॥139॥

जब क्रौंच पक्षी स्निग्ध और मधुर स्वर से बार-बार प्रसन्न और गर्वित होता हुआ शब्द करे तो राजा के लिए जय देने वाला समझना चाहिए ॥139॥

प्रहेषन्ते प्रयातेषु यदा वादित्रनि:स्वनै: ।
लक्ष्यन्ते बहवो हृष्टास्तस्य राज्ञो ध्रुवं जय: ॥140॥

जिस राजा के प्रयाण करने पर बाजे शब्द करते हुए दिखलाई पड़ें तथा अधिकांश व्यक्ति प्रसन्न दिखलाई पड़ें, उस राजा की निश्चयत: जय होती है ॥140॥

यदा मधुरशब्देन हेषन्ति खलु वाजिन: ।
कुर्यादभ्युत्थितं सैन्यं तदा तस्य पराजयम् ॥141॥

जब मधुर शब्द करते हुए घोड़े हींसने की आवाज करें तो प्रयाण करने वाली सेना की पराजय होती है ॥141॥

अभ्युत्थितायां सेनायां लक्ष्यते यच्छुभाऽशुभम् ।
वाहने प्रहरणे वा तत् तत् फलं समीहते ॥142॥

प्रयाण करने वाली सेना के वाहन—सवारी और प्रहरण—अस्त्र-शस्त्र सेना में जितने शुभाशुभ शकुन दिखलाई पड़ें उन्हीं के अनुसार फल प्राप्त होता है ॥142॥

सन्नाहिको यदा युक्तो नष्टसैन्यो बहिर्व्रजेत् ।
तदा राज्यप्रणाशस्तु अचिरेण भविष्यति ॥143॥

जब बख्तर से युक्त सेनापति सेना के नष्ट होने पर बाहर चला जाता है तो शीघ्र ही राज्य का विनाश हो जाता है ॥143॥

[1]सौम्यं बाह्यं नरेन्द्रस्य हयमारुहते हय: ।
सेनायामन्यराजानां तदा मार्गन्ति नागरा: ॥144॥

---

1. अथवाह्य मु० ।

यदि राजा के उत्तर में घोड़ा घोड़े पर चढ़े तो उस समय नागरिक अन्य राजा की सेना में प्रवेश करते हैं—शरण ग्रहण करते हैं ॥144॥

अर्द्धवृत्ताः[1] प्रधावन्ति वाजिनस्तु युयुत्सवः।
हेषमाना: प्रमुदितास्तदा ज्ञेयो जयो ध्रुवम् ॥145॥

प्रसन्न हींसते हुए युद्धोन्मुख घोड़े अर्द्धवृत्ताकार में जब दौड़ते हुए दिखलाई पड़ें तो निश्चय से जय समझना चाहिए ॥145॥

पादं पादेन मुक्तानि निःक्रमन्ति यदा हयाः।
पृथग् पृथग् संस्पृश्यन्ते तदा विन्द्याद्भयावहम् ॥146॥

जब घोड़े पैर को पैर से मुक्त करके चलें और पैरों का पृथक्-पृथक् स्पर्श हो तो उस समय भय समझना चाहिए ॥146॥

यदा राज्ञः प्रयातस्य वाजिनं सांग्राहिकः।
पथि च म्रियते यस्मिन्नचिरात्सो नो भविष्यति ॥147॥

जब प्रयाण करने वाले राजा के घोड़ों को सन्नद्ध करने वाला सईस मार्ग में मृत्यु को प्राप्त हो जाये तो राजा की शीघ्र ही मृत्यु होती है ॥147॥

शिरस्यास्ये च दृश्यन्ते यदा हृष्टास्तु वाजिनः।
तदा राज्ञो जयं विन्द्यान्नचिरात् समुपस्थितम् ॥148॥

जब घोड़ों के सिर और मुख प्रसन्न दिखलाई पड़ें तो शीघ्र ही राजा की विजय समझनी चाहिए ॥148॥

[2]हयानां ज्वलिते चाग्निः पुच्छे पाणौ पदेषु वा।
जघने च नितम्बे च तदा विद्यान्महद्भयम् ॥149॥

यदि प्रयाण काल में घोड़ों की पूंछ, पांव, पिछले पैर, जघन और नितम्ब—चूतड़ों में अग्नि प्रज्वलित दिखलाई पड़े तो अत्यन्त भय समझना चाहिए ॥149॥

हेषमानस्य दीप्तासु निपतन्त्यर्चिषो मुखात्।
अश्वस्य विजयं श्रेष्ठमूर्ध्वदृष्टिश्च शंसते ॥150॥

यदि हींसते हुए घोड़े के मुख से प्रदीप्त अग्नि निकलती हुई दिखलाई पड़े तो

---

1. अर्धवृत्ताः मु०। 2. हयानां जघने नाभौ पुच्छे पादेषु वा यदि। दृश्येताग्निरथवा धूमास्तदा...।

दिखलाई पड़े तो अनेक प्रकार के लाभ और सुख, शुक्रवार को दिखलाई पड़े तो समय पर वर्षा, धान्य की अधिक उत्पत्ति और वस्त्र-व्यापार में लाभ एवं शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सामान्यतया अच्छी फसल होती है।

गन्धर्वनगर सम्बन्धी फलादेश अवगत करते समय उनकी आकृति, रंग और सौम्यता या कुरूपता का भी ख्याल करना पड़ेगा। जो गन्धर्वनगर स्वच्छ होगा उसका फल उतना ही अच्छा और पूर्ण तथा कुरूप और अस्पष्ट गन्धर्वनगर का फलादेश अल्पतर होता है।

तत्काल वर्षा होने के निमित्त—वर्षा ऋतु में जिस दिन सूर्य अत्यन्त जोशीला, दुस्सह और घृत के रंग के समान प्रभावशाली हो उस दिन अवश्य वर्षा होती है। वर्षा काल में जिस दिन उदय के समय का सूर्य अत्यन्त प्रकाश के कारण देखा न जाय, पिघले हुए स्वर्ण के समान हो, स्निग्ध वैडूर्य मणि की-सी प्रभावाला हो और अत्यन्त तीव्र होकर तप रहा हो अथवा आकाश में बहुत ऊँचा चढ़ गया हो तो उस दिन खूब अच्छी वर्षा होती है। उदय या अस्त के समय सूर्य अथवा चन्द्रमा फीका होकर शहद के रंग के समान दिखलाई पड़े तथा प्रचण्ड वायु चले तो अतिवृष्टि होती है। सूर्य की अमोघ किरणें सन्ध्या के समय निकली रहें और बादल पृथ्वी पर झुके रहें तो ये महावृष्टि के लक्षण समझने चाहिए। सूर्यपिण्ड से एक प्रकार की जो सीधी रेखा कभी-कभी दिखलाई देती है, वह अमोघ किरण कहलाती है। चन्द्रमा यदि कबूतर और तोते की आँखों के सदृश हो अथवा शहद के रंग का हो और आकाश में चन्द्रमा का दूसरा बिम्ब दिखलाई दे तो शीघ्र ही वर्षा होती है। चन्द्रमा के परिवेश चकवाक की आँखों के समान हों तो वे वृष्टि के सूचक होते हैं और यदि आकाश तीतर के पंखों के समान बादलों से आच्छादित हो तो वृष्टि होती है। चन्द्रमा के परिवेश हो, तारागण में तीव्र प्रकाश हो, तो वे वृष्टि के सूचक होते हैं। दिशाएँ निर्मल हों और आकाश काक के अण्डे की कान्तिवाला हो, वायु का गमन रुककर होता हो एवं आकाश गोनेत्र की-सी कान्तिवाला हो तो यह भी वृष्टि के आगमन का लक्षण है। रात में तारे चमकते हों, प्रातःकाल लाल वर्ण का सूर्य उदय हो और बिना वर्षा के इन्द्रधनुष दिखलाई पड़े तो तत्काल वृष्टि समझनी चाहिए। प्रातःकाल इन्द्रधनुष पश्चिम दिशा में दिखलाई देता हो तो शीघ्र वर्षा होती है। नील रंग वाले बादलों में सूर्य के चारों ओर कुण्डलता हो और दिन में ईशान कोण के अन्दर बिजली चमकती हो तो अधिक वर्षा होती है। श्रावण महीने में प्रातःकाल गर्जना हो और जल पर मछली का भ्रम हो तो अठारह प्रहर के भीतर पृथ्वी जल से पूरित हो जाती है। श्रावण में एक बार ही दक्षिण की प्रचण्ड हवा चले तो हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल, पूर्वाषाढ़ा, श्रवण, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, भरणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी इन नक्षत्रों के आने पर वर्षा होती है। रात में गर्जना

विजय होती है। घोड़े का ऊपर को मुख किये रहना भी अच्छा समझा जाता है ॥150॥

श्वेतस्य कृष्णं दृश्येत पूर्वकाये तु वाजिनः।
हन्यात् तं स्वामिनं क्षिप्रं विपरीते [1]धनागमम् ॥151॥

यदि घोड़े का पूर्व भाग श्वेत या कृष्ण दिखलाई पड़े तो स्वामी की मृत्यु शीघ्र कराता है। विपरीत -परभाग—श्वेत का कृष्ण और कृष्ण का श्वेत दिखलाई पड़े तो स्वामी को धन की प्राप्ति होती है ॥151॥

[2]वाहकस्य वधं विन्द्याद् यदा स्कन्धे हयो ज्वलेत्।
पृष्ठतो ज्वलमाने तु भयं सेनापतेर्भवेत् ॥152॥

जब घोड़े का स्कन्ध—कन्धा जलता हुआ दिखलाई पड़े तो सवार का वध और पृष्ठ भाग ज्वलित दिखलाई पड़े तो सेनापति का वध समझना चाहिए ॥152॥

तस्यैव तु यदा धूमो निर्धावति प्रहेषतः।
पुरस्यापि तदा नाशं निर्दिशेत् प्रत्युपस्थितम् ॥153॥

यदि हींसते हुए घोड़े का धुआँ पीछा करे तो उस नगर का भी नाश उपस्थित हुआ समझना चाहिए ॥153॥

सेनापतिवधं विद्याद् वालस्थानं यदा ज्वलेत्।
त्रीणि वर्षाण्यनावृष्टिस्तदा तद्विषये भवेत् ॥154॥

यदि घोड़े के वालस्थान—कब्बारस्थान जलने लगे तो सेनापति का वध समझना चाहिए। और उस देश में तीन वर्ष तक अनावृष्टि समझनी चाहिए ॥154॥

अन्तःपुरविनाशाय मेढ्ं प्रज्वलते यदा।
उदरं ज्वलमानं च कोशनाशाय वा ज्वलेत् ॥155॥

यदि घोड़े का मेढ् अण्डकोश स्थान जलने लगे तो अन्तःपुर का विनाश और उदर के जलने से कोशनाश होता है ॥155॥

शेरते दक्षिणे पार्श्वे हयो जयपुरस्कृतः।
स्वबन्धशायिनश्चाहुर्जयमाश्चर्यसाधकः ॥156॥

1. नधागमम् मु०। 2. वाचकस्य मु०।

हो और दिन में दण्डाकार बिजली चमकती हो और प्राची दिशा में शीतल हवा चलती हो तो शीघ्र ही वर्षा होती है। पूर्व दिशा में धूम्रवर्ण बादल यदि सूर्यास्त होने पर काला हो जाय और उत्तर में मेघमाला हो तो शीघ्र ही वर्षा होती है। प्रातःकाल सभी दिशाएँ निर्मल हों और मध्याह्न के समय गर्मी पड़ती हो तो अर्द्धरात्रि के समय प्रजा के सन्तोष के लायक अच्छी वर्षा होती है। अत्यन्त वायु का चलना, सर्वथा वायु का न चलना, अत्यन्त गर्मी पड़ना, अत्यन्त शीत पड़ना, अत्यन्त बादलों का होना और सर्वथा ही बादलों का न होना छः प्रकार के मेघ के लक्षण बतलाये गये हैं। वायु का न चलना, बहुत वायु चलना, अत्यन्त गर्मी पड़ना वर्षा होने के लक्षण हैं। वर्षा काल के आरम्भ में दक्षिण दिशा में यदि वायु बहे, बादल या चमकती हुई बिजली दिखलाई पड़े तो अवश्य वर्षा होती है। शुक्रवार के निकले हुए बादल यदि शनिवार तक ठहरे रहें तो वे बिना वर्षा किये कभी नष्ट नहीं होते। उत्तर में बादलों का घटाटोप हो रहा हो और पूर्व से वायु चलता हो तो अवश्य वर्षा होती है। सायंकाल में अनेक तह वाले बादल यदि मोर, धनुष, लाल पुष्प और तोते के तुल्य हों अथवा जल-जन्तु, लहरों एवं पहाड़ों के तुल्य दिखाई दें तो शीघ्र ही वर्षा होती है। तीतर के पंखों की-सी आभा वाले विचित्र वर्ण के मेघ यदि उदय और अस्त के समय अथवा रात-दिन दिखलाई दें तो शीघ्र ही बहुत वर्षा होती है। मोटे तहवाले बादलों से जब आकाश ढका हुआ हो और हवा चारों ओर से रुकी हुई हो तो शीघ्र ही अधिक वर्षा होती है।

घड़े में रखा हुआ जल गर्म हो जाय, सभी लताओं का मुख ऊँचा हो जाय, कुसुम्भ का-सा तेज चारों ओर निकलता हो, पक्षी स्नान करते हों, गीदड़ सायंकाल में चिल्लाते हों, सात दिन तक आकाश मेघाच्छन्न रहे, रात्रि में जुगुनू जल के स्थान के समीप जाते हों तो तत्काल वृष्टि होती है। गोबर में कीटों का होना, अत्यन्त कठिन परिताप का होना, तक्र—छाछ का खट्टा हो जाना, जल का स्वाद रहित हो जाना, मछलियों का भूमि की ओर कूदना, बिल्ली का पृथ्वी को खोदना, लोहे की जंग से दुर्गन्ध निकलना, पर्वत का काजल के समान वर्ण का हो जाना, कन्दराओं से भाप का निकलना, गिरगिट, कृकलास आदि का वृक्ष की चोटी पर चढ़कर आकाश को स्थिर होकर देखना, गायों का सूर्य को देखना, पशु-पक्षी और कुत्तों का पंजों और खुरों द्वारा कान का खुजलाना, मकान की छत पर स्थित होकर कुत्ते का आकाश को स्थिर होकर देखना, बगुलों का पंख फैलाकर स्थिरता से बैठना, वृक्ष पर चढ़े हुए सर्पों का चीत्कार शब्द होना, मेढकों की जोर की आवाज आना, चिड़ियों का मिट्टी में स्नान करना, टिटिहरी का जल में स्नान करना, चातक का जोर से शब्द करना, छोटे-छोटे सर्पों का वृक्ष पर चढ़ना, बकरी का अधिक समय तक पवन की गति की ओर मुँह करके खड़ा

रहना, छोटे पेड़ों की कलियों का जल जाना, बड़े पेड़ों में कलियों का निकल आना, बड़ की शाखाओं में खोखलों का हो जाना, दाढ़ी-मूँछों का चिकना और नरम हो जाना, अत्यधिक गर्मी से प्राणियों का व्याकुल होना, मोर के पंखों में भन-भन शब्द का होना, गिरगिट का लाल आभायुक्त हो जाना, चातक-मोर-सियार आदि का रोना, आधी रात में मुर्गों का रोना, मक्खियों का अधिक घूमना, भ्रमरों का अधिक घूमना और उनका गोबर की गोलियों को ले जाना, काँसे के बर्तन में जंग लग जाना, वृक्षतुल्य लता आदि का स्निग्ध, छिद्र रहित दिखलाई पड़ना, पित्त प्रकृति के व्यक्ति का गाढ निद्रा में शयन करना, कागज पर लिखने से स्याही का न सूखना, एवं वातप्रधान व्यक्ति के सिर का घूमना तत्काल वर्षा का सूचक है।

वर्षा ज्ञान के लिए अत्युपयोगी सप्तनाड़ी चक्र—शनि, बृहस्पति, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध और चन्द्रमा—इनकी क्रम से चण्डा, समीरा, दहना, सौम्या, नीरा, जला और अमृता—ये सात नाड़ियाँ होती हैं।

कृत्तिका से आरम्भ कर अभिजित् सहित 28 नक्षत्रों को उपर्युक्त सात नाड़ियों में चार बार घुमाकर विभक्त कर देना चाहिए। इस चक्र में नक्षत्रों का क्रम इस प्रकार होगा कि कृत्तिका से अनुराधा तक सरल क्रम से और मघा से धनिष्ठा तक विपरीत क्रम से नक्षत्रों को लिखें। सात नाड़ियों के मध्य में सौम्य नाड़ी रहेगी और इसके आगे-पीछे तीन-तीन नाड़ियाँ। दक्षिण दिशा में गई हुई नाड़ियाँ क्रूर कहलायेंगी और उत्तर दिशा में गई हुई नाड़ियाँ सौम्य कहलायेंगी। मध्य में रहनेवाली नाड़ी मध्यनाड़ी कही जायेगी। ये नाड़ियाँ ग्रहयोग के अनुसार फल देती हैं।

दिशा	दक्षिण में निर्जल नाड़ी			मध्य	उत्तर में सजल नाड़ी		
नाड़ी के नाम	चण्डा	समीरा	दहना	सौम्या	नीरा	जला	अमृता
स्वामी	शनि	गुरु या सूर्य	मंगल	सूर्य या गुरु	शुक्र	बुध	चन्द्रमा
नक्षत्र	कृतिका विशाखा अनुराधा भरणी	रोहिणी स्वाती ज्येष्ठा अश्विनी	मृगशिर चित्रा मूल रेवती	आर्द्रा हस्त पूर्वाषाढा उत्तराभाद्रपद	पुनर्वसु उत्तराफाल्गुनी उत्तराषाढा पूर्वाभाद्रपद	पुष्य पूर्वाफाल्गुनी अभिजित शतभिषा	आश्लेषा मघा श्रवण धनिष्ठा

सप्तनाड़ी चक्र द्वारा वर्षाज्ञान करने की विधि—जिस ग्राम में वर्षा का ज्ञान करना हो, उस ग्राम के नामानुसार नक्षत्र का परिज्ञान कर लेना चाहिए। अब

इष्टग्राम के नक्षत्र को उपर्युक्त चक्र में देखना चाहिए कि वह किस नाड़ी का है। यदि ग्राम-नक्षत्र की सौम्या नाड़ी---आर्द्रा, हस्त, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभाद्रपद हो और उस पर चन्द्रमा शुक्र के साथ हो अथवा ग्राम-नक्षत्र, चन्द्रमा और शुक्र ये तीनों सौम्या नाड़ी के हों तथा उस पर पापग्रह की दृष्टि या संयोग नहीं हो तो अच्छी वर्षा होती है। पापयोग दृष्टि बाधक होती है। इस विचार के अनुसार चण्डा, समीरा और दहना नाड़ियाँ अशुभ हैं, शेष सौम्या, नीरा, जला और अमृता शुभ हैं।

चक्र का विशेष फल - चण्डा नाड़ी में दो-तीन से अधिक स्थित हुए ग्रह प्रचण्ड हवा चलाते हैं। समीरा नाड़ी में स्थित होने पर वायु और दहना नाड़ी पर स्थित होने से ऊष्मा पैदा करते हैं। सौम्या नाड़ी में स्थित होने से समता करते हैं। नीरा नाड़ी में स्थित होने पर मेघों का संचय करते हैं, जला नाड़ी में प्रविष्ट होने से वर्षा करते हैं तथा वे ही दो-तीन से अधिक एकत्रित ग्रह अमृता नाड़ी में स्थित होने पर अतिवृष्टि करते हैं। अपनी नाड़ी में स्थित हुआ एक भी ग्रह उस नाड़ी का फल दे देता है। किन्तु मंगल सभी नाड़ियों में स्थित नाड़ी के अनुसार ही फल देता है। पुंग्रहों गुरु, मंगल और सूर्य के योग से धुआँ, स्त्री----चन्द्रमा और शुक्र और पुंग्रहों के योग से वर्षा तथा केवल स्त्री ग्रहों के योग से छाया होती है, जिस नाड़ी में क्रूर और सौम्यग्रह मिले हुए स्थित हों उसमें जिस दिन चन्द्रमा का गमन हो, उस दिन अच्छी वर्षा होती है। यदि एक नक्षत्र में ग्रहों का योग हो तो उस काल में महावृष्टि होती है। जब चन्द्रमा पापग्रहों से या केवल सौम्यग्रहों से विद्ध हो तब साधारण वर्षा होती है तथा फसल भी साधारण ही होती है।

चन्द्रमा जिस ग्रह की नाड़ी में स्थित हो, उस ग्रह से यदि वह युक्त हो जाये तथा क्षीण न दिखलाई देता हो तो वह अवश्य वर्षा करता है। तात्पर्य यह है कि शुक्लपक्ष की षष्ठी से कृष्ण पक्ष की दशमी तक का चन्द्रमा जिस नाड़ी में हो और नाड़ी का स्वामी चन्द्रमा के साथ बैठा हो या उसे देखता हो तो वह अवश्य वर्षा करता है। चन्द्रमा सौम्य एवं क्रूर ग्रहों के साथ यदि अमृत नाड़ी में हो तो एक, तीन या सात दिन में दो, पाँच या सात बार वर्षा होती है। इसी प्रकार चन्द्रमा क्रूर और सौम्य ग्रहों से युक्त हो और जला नाड़ी में स्थित हो तो इस योग से आधा दिन, एक पहर या तीन दिन तक वर्षा होती है। यदि सभी ग्रह अमृता नाड़ी में स्थित हों तो 18 दिन, जला नाड़ी में हों तो 12 दिन और नीरा नाड़ी में हों तो 6 दिन तक वर्षा होती है। मध्य नाड़ी में गये हुए सभी ग्रह तीन दिन तक वर्षा करते हैं। शेष नाड़ियों में गए हुए सभी ग्रह महावायु और दुष्ट वृष्टि करते हैं। अधिक शुभग्रहों के योग से निर्जला नाड़ियाँ भी जलदायिनी तथा क्रूर ग्रहों के योग से सजल नाड़ियाँ भी निर्जला बन जाती हैं। दक्षिण की तीनों नाड़ियों में गये हुए ग्रह अनावृष्टि की सूचना देते हैं। और ये ही क्रूरग्रह शुभ-ग्रहों से युक्त हों और

उत्तर की तीन नाड़ियों में स्थित हों तो कुछ वर्षा कर देते हैं। जलनाड़ी में स्थित चन्द्र और शुक्र यदि क्रूर ग्रहों से युक्त हो जायें तो वे इस क्रूर योग से अल्पवृष्टि करते हैं। जलनाड़ी में स्थित हुए बुध, शुक्र और बृहस्पति ये चन्द्रमा से युक्त होने पर उत्तम वर्षा करते हैं। जलनाड़ी में चन्द्रमा और मंगल आरूढ़ हों तो वे चन्द्रमा से समागम होने पर अच्छी वर्षा करते हैं। जलनाड़ी में चन्द्रमा और मंगल शनि द्वारा दृष्ट हों तो वर्षा की कमी होती है। गमनकाल, संयोगकाल, वक्रगतिकाल, मार्गगतिकाल, अस्त या उदयकाल में इन सभी दशाओं में जलनाड़ी में प्राप्त हुए सभी ग्रह महावृष्टि करने वाले होते हैं।

अक्षर क्रमानुसार ग्रामनक्षत्र निकालने का नियम—चू चे चो ला = अश्विनी, ली लू ले लो = भरणी, अ ई उ ए = कृत्तिका, ओ वा वी वू = रोहिणी, वे वो का की = मृगशिर, कू घ ङ छ = आर्द्रा, के को हा ही = पुनर्वसु, हू हे हो डा = पुष्य, डी डू डे डो = आश्लेषा, मा मी मू मे = मघा, मो टा टी टू = पूर्वाफाल्गुनी, टे टो पा पी = उत्तराफाल्गुनी, पू ष ण ठ = हस्त, पे पो रा री = चित्रा, रू रे रो ता = स्वाती, ती तू ते तो = विशाखा, ना नी नू ने = अनुराधा, नो या यी यू = ज्येष्ठा, ये यो भा भी = मूल, भू धा फा ढा = पूर्वाषाढ़ा, भे भो जा जी = उत्तराषाढ़ा, खी खू खे खो = श्रवण, गा गी गू गे = धनिष्ठा, गो सा सी सू = शतभिषा, से सो दा दी = पूर्वाभाद्रपद, दू थ झ ञ = उत्तराभाद्रपद, दे दो चा ची = रेवती।

वर्षा के सम्बन्ध में एक आवश्यक बात यह भी जान लेनी चाहिए कि भारत में तीन प्रकार के प्राकृतिक प्रदेश हैं—अनूप, जांगल और मिश्र। जिस प्रदेश में अधिक वर्षा होती है, वह अनूप; कम वर्षा वाला जांगल और अल्प जल वाला मिश्र कहलाता है। मारवाड़ में मामूली भी अशुभ योग वर्षा को नष्ट कर देता है और अनूप देश में प्रबल अशुभ योग भी अल्प वर्षा कर ही देता है। जिस ग्रह के जो प्रदेश बतलाये गये हैं, वह ग्रह अपने ही प्रदेशों में वर्षा का अभाव या सद्भाव करता है।

ग्रहों के प्रदेश—सूर्य के प्रदेश—द्राविड़ देश का पूर्वार्द्ध, नर्मदा और सोन नदी का पूर्वार्द्ध, यमुना के दक्षिण का भाग, इक्षुमती नदी, श्री शैल और विन्ध्याचल के देश, चम्प, मुण्डू, चेदीदेश, कौशाम्बी, मगध, औण्ड्र गुड्म, बंग, कलिंग, प्राग्ज्योतिष, शबर, किरात, मेकल, चीन, बाह्लीक, यवन, काम्बोज और शक हैं।

चन्द्रमा के प्रदेश—दुर्ग, आर्द्र, द्वीप, समुद्र, जलाशय, तुषार, रोम, स्त्रीराज, मरुकच्छ और कोशल हैं।

मंगल के प्रदेश—नासिक, दण्डक, अश्मक, केरल, कुन्तल, कोंकण, आन्ध्र, कान्ति, उत्तर पाण्ड्य, द्रविड, नर्मदा, सोन नदी और भीमरथी का पश्चिम अर्ध भाग, निर्विन्ध्या, क्षिप्रा, वेत्रवती, वेणा, गोदावरी, मन्दाकिनी, तापी, महानदी,

यदि दक्षिण—दाहिनी, पार्श्व—ओर से घोड़ा शयन करे तो जय देने वाला और पेट की ओर से शयन करे तो आश्चर्यपूर्वक जय देता है ॥156॥

वामार्धशायिनश्चैव तुरङ्गा नित्यमेव च।
राज्ञो यस्य न सन्देहस्तस्य मृत्युं समादिशेत् ॥157॥

यदि नित्य बायीं आधी करवट से घोड़ा शयन करे तो निःसन्देह उस राजा की मृत्यु की सूचना समझनी चाहिए ॥157॥

सौसुप्यन्ते यदा नागः पश्चिमश्चरणस्तथा।
सेनापतिवधं विद्याद् यदाऽन्नं च न भुञ्जते ॥158॥

यदि हाथी पश्चिम की ओर पैर करके शयन करे तथा कोई अन्न नहीं खाये तो सेनापति का वध समझना चाहिए ॥158॥

[1]यवान्नं पादवारीं वा नाभिनन्दन्ति हस्तिनः।
यस्यां तस्यां तु सेनायामचिराद्वधमादिशेत् ॥159॥

जिस सेना में हाथी अन्न, जल और तृण नहीं खाते हों—त्याग कर चुके हों, उस सेना में शीघ्र ही वध होता है ॥159॥

निपतन्त्यग्रतो यद्वै त्रस्यन्ति वा रुदन्ति वा।
निष्पदन्ते समुद्विग्नाः यस्य तस्य वधं वदेत् ॥160॥

जिस राजा के प्रयाण काल में उसके आगे आकर दुःखी या रुदन करता हुआ व्यक्ति गिरता हो अथवा उद्विग्न होकर आता हो तो उस राजा का वध होता है ॥160॥

क्रूरं नदन्ति विषमं विस्वरं निशि हस्तिनः।
दीप्यमानास्तु केचित्तु तदा सेनावधं ध्रुवम् ॥161॥

यदि रात्रि में हाथी क्रूर, विषम, घोर और विस्वर—विकृत स्वर वाली आवाज करें अथवा दीप्त—ताप में जलते हुए दिखलाई पड़ें तो सेना का शीघ्र वध होता है ॥161॥

गो-नागवाजिनां स्त्रीणां मुखाच्छोणितबिन्दवः।
द्रवन्ति बहुशो यत्र तस्य राज्ञः पराजयः ॥162॥

जिस राजा को प्रयाण-काल में गाय, हाथी, घोड़ा, और स्त्रियों के मुख पर

---

1. यदन्नाः पादचारी वा नाभिनन्दन्ति हस्तिनः ।

रक्त की बूँदें दिखलाई पड़ें उस राजा की पराजय होती है ॥162॥

नरा यस्य विपद्यन्ते प्रयाणे वारणैः पथि।
कपालं गृह्य धावन्ति दीनास्तस्य पराजयः ॥163॥

जिस राजा के प्रयाण-काल में मार्ग में उसके हाथियों के द्वारा मनुष्य पीड़ित हों और वे मनुष्य अपना सिर पकड़कर दीन होकर भागें तो उस राजा की पराजय होती है ॥163॥

यदा धुनन्ति सीदन्ति निपतन्ति किरन्ति च।
खादमानास्तु खिद्यन्ते तदाऽऽख्याति पराजयम् ॥164॥

जिसके प्रयाण काल में घोड़े पूँछ का संचालन अधिक करते हों, खिन्न होते हों, गिरते हों, दुःखी होते हों, अधिक लीद करते हों और घास खाते समय खिन्न होते हों तो वे उसकी पराजय की सूचना देते हैं ॥164॥

हेषन्त्यभीक्ष्णमश्वास्तु विलिखन्ति खुरैर्धराम्।
नदन्ति च यदा नागास्तदा विन्द्याद् ध्रुवं जयम् ॥165॥

घोड़े बार-बार हींसते हों, खुरों से जमीन को खोदते हों और हाथी प्रसन्नता की चिंघाड़ करते हों तो उसकी निश्चित जय समझनी चाहिए ॥165॥

पुष्पाणि पीतरक्तानि शुक्लानि च यदा गजाः।
अभ्यन्तराग्रदन्तेषु दर्शयन्ति यदा जयम् ॥166॥

यदि हाथी पीत, रक्त और श्वेत रंग के पुष्पों को भीतरी दाँतों के अग्रभाग में दिखलाते हुए मालूम हों तो जय समझना चाहिए ॥166॥

यदा मुंचन्ति शुण्डाभिर्नागा नादं पुनः पुनः।
परसैन्योपघाताय तदा विन्द्याद् ध्रुवम्जयम् ॥167॥

जब हाथी सूँड से बार-बार नाद करते हों तो परसेना—शत्रु सेना के विनाश के लिए प्रयाण करने वाले राजा की जय होती है ॥167॥

पादैः पादान् विकर्षन्ति तलैर्वा विलिखन्ति च।
गजास्तु यस्य सेनायां निरुध्यन्ते ध्रुवं[1] परैः ॥168॥

जिस सेना के हाथी पैरों द्वारा पैरों को खींचें अथवा तल के द्वारा धरती को खोदें तो शत्रु के द्वारा सेना का निरोध होता है ॥168॥

---

1. विरुध्यन्ते मु०।

मत्ता यत्र विपद्यन्ते न माद्यन्ते च योजिता: ।
नागास्तत्र वधो राज्ञो महाऽमात्यस्य वा भवेत् ॥169॥

जहाँ मदोन्मत्त हाथी विपत्ति को प्राप्त हों अथवा मत्त हाथियों की योजना करने पर भी वे मद को प्राप्त न हों तो उस समय वहाँ राजा या महामात्य—महामन्त्री का वध होता है ॥169॥

यदा राजा निवेशेत भूमौ कण्टकसंकुले ।
विषमे सिकताकीर्णे सेनापतिवधो ध्रुवम् ॥170॥

जब राजा कंटकाकीर्ण, विषम, बालुकायुक्त भूमि में सेना का निवास करावे—सैन्य शिविर स्थापित करे तो सेनापति के वध का निर्देश समझना चाहिए ॥170॥

श्मशानास्थिरज:कीर्णे दग्धस्थलद्रुमगते ।
शुष्कवृक्षसमाकीर्णे निविष्टो[1] वधमाप्यते ॥171॥

श्मशान भूमि की हड्डियाँ जहाँ हों, धूलि युक्त, दग्ध वनस्पति और शुष्क वृक्ष वाली भूमि में सैन्य शिविर की स्थापना की जाय तो वध होता है ॥171॥

कोविदारसमाकीर्णे श्लेष्मान्तकमहाद्रुमे ।
पिलू-कालनिविष्टस्य प्राप्नुयाच्च चिराद् वधम् ॥172॥

लाल कचनार वृक्ष से युक्त तथा गोंद वाले बड़े वृक्षों से युक्त और पीलू के वृक्ष के स्थान में सैन्य शिविर स्थापित किया जाये तो विलम्ब से वध होता है ॥172॥

असारवृक्षभूयिष्ठे पाषाणतृणकुत्सिते ।
देवतायतनाक्रान्ते निविष्टो वधमाप्नुयात् ॥173॥

रेंडी के अधिक वृक्ष वाले स्थान में अथवा पाषाण-पत्थर और तिनके वाले स्थान में, कुत्सित—ऊँची-नीची खराब भूमि में, अथवा देवमन्दिर की भूमि में यदि सैन्य शिविर हो तो वध प्राप्त होता है ॥173॥

अमनोज्ञै: फलै: पुष्पै: पापपक्षिसमन्वितै ।
अधोमार्गे निविष्टश्च युद्धमिच्छति पार्थिव: ॥174॥

कुरूप फल, पुष्प से युक्त तथा पापी—मांसाहारी पक्षियों से युक्त वृक्षों के

---

1. निविष्टो मु० ।

नीचे सैन्य पड़ाव करने वाला राजा युद्ध की इच्छा करता है ॥174॥

नीचैर्निविष्टभूपस्य[1] नीचेभ्यो भयमादिशेत् ।
यथा दृष्टेषु देशेषु तज्ज्ञेभ्यः प्राप्नुयाद् वधम् ॥175॥

नीचे स्थानों में स्थित रहने वाले राजा को नीचों से भय होता है। तथानुसार देखे गये देशों में उनसे वध प्राप्त होता है ॥175॥

यत् किंचित् परिहीनं स्यात् तत् पराजयलक्षणम् ।
परिवृद्धं च यद् किंचिद् दृश्यते विजयावहम् ॥176॥

जो कुछ भी कमी दिखलाई पड़े वह पराजय की सूचिका है और जो अधिकता दिखलाई पड़े वह विजय की सूचिका होती है ॥176॥

दुर्वर्णाश्च दुर्गन्धाश्च कुवेषा व्याधिनस्तथा ।
सेनायां ये नराश्च स्युः शस्त्रवध्या भवन्त्यथ ॥177॥

बुरे रंग वाले, दुर्गन्धित, कुवेषधारी और रोगी सेना के व्यक्ति शस्त्र के द्वारा वध्य होते हैं ॥177॥

यथाज्ञानप्ररूपेण राज्ञो जयपराजयः ।
विज्ञेयः सम्प्रयातस्य भद्रबाहुवचो यथा ॥178॥

इस प्रकार से भद्रबाहु स्वामी के वचनानुसार प्रयाण करने वाले राजा की जय-पराजय अवगत कर लेनी चाहिए ॥178॥

परस्य विषयं लब्ध्वा अग्निदग्धा न लोपयेत् ।
परदारां न हिंस्येत् पशून् वा पक्षिणस्तथा ॥179॥

शत्रु के देश को प्राप्त करके भी उसे अग्नि से नहीं जलाना चाहिए और न उस देश का लोप ही करना चाहिए। परस्त्री, पशु और पक्षियों की भी हिंसा नहीं करनी चाहिए ॥179॥

वशीकृतेषु मध्येषु न च शस्त्रं निपातयेत्[2] ।
निरपराधचित्तानि नाददीत कदाचन ॥180॥

अधीन हुए देशों में शस्त्रपात प्रयोग नहीं करना चाहिए। निरपराधी व्यक्तियों को कभी भी कष्ट नहीं देना चाहिए ॥180॥

---

1. भूपस्य मु० । 2. अग्निकृतेषु मध्यन्तु शस्त्राणां निपातयेत् ।

देवतान् पूजयेत् वृद्धान् [1]लिंगिनो ब्राह्मणान् गुरून्।
परिहारेण[2] नृपती राज्यं मोदति सर्वतः ॥181॥

जो राजा देवता, वृद्ध, मुनि, ब्राह्मण, गुरु की पूजा करता है और समस्त बुराइयोंको दूर करता है, वह सर्व प्रकार से आनन्दपूर्वक राज्य करता है ॥181॥

राजवंशं न वोच्छिद्यात् बालवृद्धांश्च पण्डितान्।
[3]न्यायेनार्थान् समासाद्य सार्थो राजा विवर्द्धते ॥182॥

किसी राज्य पर अधिकार कर लेने पर भी उस राजवंश का उच्छेद—विनाश नहीं करना चाहिए तथा बाल, वृद्ध और पंडितों का भी विनाश नहीं करना चाहिए। न्यायपूर्वक जो धनादि को प्राप्त करता है, वही राजा वृद्धिगत होता है ॥182॥

धर्मोत्सवान् विवाहांश्च [4]सुतानां कारयेद् बुधः।
न चिरं धारयेद् कन्यां तथा धर्मेण वर्द्धते ॥183॥

अधिकार किये गये राज्य में धर्मोत्सव करे, अधिकृत राजा की कन्याओं का विवाह कराये और उसकी कन्याओं को अधिक समय तक न रखे, क्योंकि धर्म-पूर्वक ही राज्य की वृद्धि होती है ॥183॥

कार्याणि धर्मतः कुर्यात् पक्षपातं विसर्जयेत्।
व्यसनैर्विप्रयुक्तश्च [5]तस्य राज्यं विवर्द्धते ॥184॥

धर्मपूर्वक ही पक्षपात छोड़कर कार्य करे और सभी प्रकार के व्यसन—जुआ खेलना, मांस खाना, चोरी करना, परस्त्रीसेवन करना, शिकार खेलना, वेश्या गमन करना और मद्यपान करना इन व्यसनों से अलग रहे, उसका राज्य बढ़ता है ॥184॥

यथोचितानि सर्वाणि यथा न्यायेन पश्यति।
राजा कीर्त्ति समाप्नोति [6]परत्रेह च मोदते ॥185॥

यथोचित सभी को जो न्यायपूर्वक देखता है, वही राजकीर्ति—यश प्राप्त करता है और इह लोक और परलोक में आनन्द को प्राप्त होता है ॥185॥

---

1. लिंगस्थान्। 2. परिहारं नृपतिर्दद्याद्ग्रामार्जितजनाम् मु०। 3. न्यायेनार्थाः समं दद्यात् तथा राज्येन वर्धते। 4. सुतानां मु०। 5. यथोचित-मुखप्रदः मु०। 6. यदा प्रकाम-भोगी मु०।

इमं यात्राविधिं कृत्स्नं योऽभिजानाति तत्त्वत:।
न्यायतश्च प्रयुंजीत् प्राप्नुयात् स महत् पदम् ॥186॥

जो राजा इस यात्रा विधि को वास्तविक और सम्पूर्ण रूप से जानता है और न्यायपूर्वक व्यवहार करता है, वह महान् पद प्राप्त करता है ॥186॥

इति महामुनीश्वरसकलानन्दमहामुनिभद्रबाहुविरचिते
महानिमित्तशास्त्रे राजयात्राध्याय: समाप्त:।

विवेचन—प्रस्तुत यात्रा प्रकरण में राजा महाराजाओं की यात्रा का निरूपण आचार्य ने किया है। चूँकि अब गणतन्त्र भारत में राजाओं की परम्परा ही समाप्त हो चुकी है। अत: यहाँ पर सर्व सामान्य के लिए यात्रा सम्बन्ध की उपयोगी बातों पर प्रकाश डाला जायगा। सर्वप्रथम यात्रा के मुहूर्त के सम्बन्ध में कुछ लिखा जाता है। क्योंकि समय के शुभाशुभत्व का प्रभाव प्रत्येक जड़ या चेतन पदार्थ पर पड़ता है। यात्रा के मुहूर्त के लिए शुभ नक्षत्र, शुभ तिथि, शुभ वार और चन्द्रवास के विचार के अतिरिक्त वारशूल, नक्षत्र शूल, समय शूल, योगिनी और राशि के क्रम का विचार भी करना चाहिए।

यात्रा के लिए नक्षत्र-विचार

अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्र यात्रा के लिए उत्तम; रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, ज्येष्ठा, मूल और शतभिषा ये नक्षत्र मध्यम एवं भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, चित्रा, स्वाति, विशाखा ये नक्षत्र यात्रा के लिए निन्द्य हैं।

तिथियों में द्वितीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी और त्रयोदशी शुभ बताई गई हैं।

दिक्शूल और नक्षत्रशूल तथा प्रत्येक दिशा के शुभ दिन

ज्येष्ठा नक्षत्र, सोमवार तथा शनिवार को पूर्व में, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र और गुरुवार को दक्षिण में; रोहिणी नक्षत्र और शुक्रवार को पश्चिम एवं मंगल तथा बुधवार को उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में उत्तर दिशा में यात्रा करना वर्जित है। पूर्व दिशा में रविवार, मंगलवार और गुरुवार; पश्चिम में शनिवार, सोमवार, बुधवार और गुरुवार; उत्तर दिशा में गुरुवार, रविवार, सोमवार और शुक्रवार एवं दक्षिण दिशा में बुधवार, मंगलवार, सोमवार, रविवार और शुक्रवार को गमन करना शुभ होता है। जो नक्षत्र का विचार नहीं कर सकते हैं वे उक्त

शुभवारों में यात्रा कर सकते हैं। पूर्व दिशा में ऊषा काल में यात्रा वर्जित है। पश्चिम दिशा में गोधूलिकी यात्रा वर्जित है। उत्तर दिशा में अर्धरात्रि और दक्षिण दिशा में दोपहर की यात्रा वर्जित है।

योगनीवास-विचार

नवभूम्यः शिववह्नयोऽक्षविश्वेऽर्ककृताः शक्ररसास्तुरंगा तिथयः।
द्विदशोमा वशश्च पूर्वतः स्युः तिथयः सम्मुखवामगा च शस्ताः॥

अर्थ---प्रतिपदा और नवमी को पूर्व दिशा में; एकादशी और तृतीया को अग्निकोण, पंचमी और त्रयोदशी को दक्षिण दिशा में, चतुर्थी और द्वादशी को नैऋत्य कोण में, षष्ठी और चतुर्दशी को पश्चिम दिशा में, सप्तमी और पूर्णिमा को वायव्यकोण में; द्वितीया और दशमी को उत्तर दिशा में एवं अमावस्या और अष्टमी को ईशान कोण में योगिनी का वास होता है। सम्मुख और बायें तरफ अशुभ एवं पीछे और दाहिनी ओर योगिनी शुभ होती है।

चन्द्रमा का निवास

चन्द्रश्चरति पूर्वादौ क्रमात्त्रिदिचतुष्टये।
मेषादिष्वेष यात्रायां सम्मुखस्त्वतिशोभनः॥

अर्थात् मेष, सिंह और धनु राशि का चन्द्रमा पूर्व में; वृष, कन्या और मकर राशि का चन्द्रमा दक्षिण दिशा में; तुला, मिथुन और कुम्भ राशि का चन्द्रमा पश्चिम दिशा में एवं कर्क, वृश्चिक और मीन राशि का चन्द्रमा उत्तर दिशा में वास करता है।

चन्द्रमा का फल

सम्मुखीनोऽर्थलाभाय दक्षिणः सर्वसम्पदे।
पश्चिमः कुरुते मृत्युं वामश्चन्द्रो धनक्षयम्॥

अर्थ---सम्मुख चन्द्रमा धन लाभ करने वाला; दक्षिण चन्द्रमा सुख-सम्पत्ति देने वाला; पृष्ठ चन्द्रमा शोक-सन्ताप देनेवाला और वाम चन्द्रमा धन-हानि करने वाला होता है।

राहु विचार

अष्टासु प्रथमाद्येषु प्रहरार्धेष्वहर्निशम्।
पूर्वस्यां वामतो राहुस्तुर्यां तुर्यां व्रजेद्दिशम्॥

अर्थ—राहु प्रथम अर्धमास में पूर्व दिशा में, द्वितीय अर्धमास में वायव्य-

कोण में, तृतीय अर्धमास में दक्षिण दिशा में, चतुर्थ अर्धमास में ईशानकोण में, पञ्चम अर्धमास में पश्चिम दिशा में, षष्ठ अर्धमास में आग्नेय दिशा में, सप्तम अर्धमास में उत्तर दिशा में और अष्टम अर्धमास में नैऋत्यकोण में राहु का वास रहता है।

यात्रा के लिए राहु आदि का विचार

जयाय दक्षिणो राहु योगिनी वामतः स्थिता।
पृष्ठतो द्वयमप्येतच्चन्द्रमाः सम्मुखः पुनः॥

अर्थ—दिशाशूल का बायीं ओर रहना, राहु का दाहिनी ओर या पीछे की ओर रहना, योगिनी का बायीं ओर या पीछे की ओर रहना एवं चन्द्रमा का सम्मुख रहना यात्रा में शुभ होता है। द्वादश महीनों में पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के क्रम से प्रतिपदा से पूर्णिमा तक क्रम से सौख्य, क्लेश, भीति, अर्थागम, शून्य, निःस्वत्व, मित्रघात, द्रव्य-क्लेश, दुःख, इष्टाप्ति, अर्थलाभ, लाभ, सौख्य, मंगल, वित्तलाभ, लाभ, द्रव्यप्राप्ति, धन, सौख्य, भीति, लाभ, मृत्यु, अर्थागम, लाभ, कष्ट, द्रव्यलाभ, कष्ट, सौख्य, क्लेश, सुख, सौख्य, लाभ, कार्य सिद्धि, कष्ट, क्लेश, अर्थ, धन-लाभ, मृत्यु, लाभ, द्रव्यलाभ, शून्य, शून्य, सौख्य, मृत्यु, अत्यन्त कष्ट फल होता है। 13, 14 और 15 तिथि का फल 3, 4 और 5 तिथि के फल समान जानना चाहिए।

तिथि चक्र प्रकार

पौ.	मा.	फा.	चै.	वै.	ज्ये.	आ.	श्रा.	भा.	आ.	का.	मा.	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	सौख्यं	क्लेश	भीतिः	अर्थाग
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	शून्यम्	नैःस्वम्	निःस्व	मित्रघा:
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	द्रव्यक्ले	दुःखम्	इष्टाप्तिः	अर्थः
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	लाभः	सौख्यं	मङ्गलम्	वित्तला
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	लाभः	द्रव्याप्ति	धनम्	सौख्यं
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	भीतिः	लाभः	मृत्युः	अर्थाग
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	लाभः	कष्टम्	द्रव्यला	सुखम्
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कष्टम्	सौख्यम्	क्लेश	सुखम्
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	सौख्य	लाभः	कार्यसि	कष्टम्
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	क्लेशः	कष्टम्	अर्थः	धनम्
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	मृत्युः	लाभः	द्रव्यला	शून्यम्
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	शून्यम्	सौख्यं	मृत्युः	कष्ट

यात्रामुहूर्त चक्र

नक्षत्र	अश्वि० पुन० अनु० मृ० पु० रे० ह० श्र० ध० ये उत्तम हैं।
	रो० उफा० उषा० उभा० पूफा० पूषा० पूभा० ज्ये० मू० शत० ये मध्यम हैं।
	भ० कृ० आ० आश्ले० म० चि० स्वा० वि० ये निन्द्य हैं।
तिथि	2,3,5,7,10,11,12

चन्द्रवास चक्र

पूर्व	पश्चिम	दक्षिण	उत्तर
मेष	मिथुन	वृष	कर्क
सिंह	तुला	कन्या	वृश्चिक
धनु	कुम्भ	मकर	मीन

समयशूल चक्र

पूर्व	प्रातःकाल
पश्चिम	सायंकाल
दक्षिण	मध्याह्नकाल
उत्तर	अर्द्धरात्रि

दिक्शूल चक्र

पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
चं० श०	बृ०	शु० शु०	मं० बु०

योगिनी चक्र

पू०	आ०	द०	नै०	प०	वा०	उ०	ई०	दिशा
9,1	3,11	13,5	12,4	14,6	15,7	10,2	30,8	तिथि

यात्रा के शुभाशुभत्व का गणित द्वारा ज्ञान

शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से लेकर तिथि, वार, नक्षत्र इनके योग को तीन स्थान में स्थापित करें और क्रमशः सात, आठ और तीन का भाग देने से यदि प्रथम स्थान में शून्य शेष रहे तो यात्रा करनेवाला दुःखी होता है। द्वितीय स्थान में शून्य बचने से धन नाश होता है और तृतीय स्थान में शून्य शेष रहने से मृत्यु होती है। उदाहरण—कृष्णपक्ष की एकादशी रविवार और विशाखा नक्षत्र में भुवनमोहनराय को यात्रा करनी है। अतः शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से कृष्ण पक्ष की द्वादशी तिथि तक गणना की तो 27 संख्या आई; रविवार की संख्या एक ही हुई और अश्विनी से विशाखा तक गणना की तो 16 संख्या हुई। इन तीनों अंक का योग किया तो 27+1+16=44 हुआ। इसे तीन स्थानों पर रखकर 7,8 और 3 का भाग दिया। 44÷7=6 लब्ध और 2 शेष; 44÷8=5 लब्ध और 4 शेष; 44÷3=14 लब्ध और 2 शेष। यहाँ एक भी स्थान पर शून्य शेष नहीं आया है। अतः फलादेश उत्तम है, यात्रा करना शुभ है।

घातक चन्द्र विचार

मेषराशि वालों को जन्म का, वृषराशि वालों को पाँचवाँ, मिथुन राशि वालों को नौवाँ, कर्क राशि वालों को दूसरा, सिंह राशि वालों को छठा, कन्या राशि वालों को दशवाँ, तुला राशि वालों को तीसरा, वृश्चिक राशि वालों को सातवाँ, धनराशि वालों को चौथा, मकर राशि वालों को आठवाँ, कुम्भ राशि वालों को ग्यारहवाँ और मीन राशि वालों को बारहवाँ चन्द्र घातक होता है। यात्रा में घातक चन्द्र त्यक्त है।

घातक नक्षत्र

कृत्तिका, चित्रा, शतभिषा, मघा, धनिष्ठा, आर्द्रा, मूल, रोहिणी, पूर्वाभाद्रपद, मघा, मूल और पूर्वाभाद्रपद ये नक्षत्र मेषादि बारह राशिवाले व्यक्तियों के लिए घातक हैं। किसी-किसी आचार्य का मत है कि मेष राशि वालों को कृत्तिका का प्रथम चरण, वृषराशि वालों को चित्रा का दूसरा चरण, मिथुन राशि वालों को शतभिषा का तीसरा चरण, वृषराशि वालों को मघा का तीसरा चरण, सिंहराशि वालों को धनिष्ठा का प्रथम चरण, कन्या राशि वालों को आर्द्रा का तीसरा चरण, तुला राशि वालों को मूल का दूसरा चरण, वृश्चिक राशि वालों को रोहिणी का चौथा चरण, धनराशि वालों को पूर्वाभाद्रपद का चौथा चरण, मकर राशि वालों को मघा का चौथा चरण, कुम्भ राशि वालों को मूल का चौथा चरण और मीन राशि वालों को पूर्वाभाद्रपद का तीसरा चरण त्याज्य है।

घाततिथि विचार

वृष, कन्या और मीन राशि वालों को पंचमी, दशमी और पूर्णिमा घाततिथि हैं। मिथुन और कर्क राशि वाले व्यक्तियों को द्वितीया, द्वादशी और सप्तमी घाततिथियाँ हैं। वृश्चिक और मेष राशिवालों को प्रतिपदा, षष्ठी और एकादशी घात तिथि हैं। मकर और तुला राशि वालों को चतुर्थी, चतुर्दशी और नवमी घाततिथियाँ एवं धन, कुम्भ और सिंह राशिवाले व्यक्तियों के लिए तृतीया, त्रयोदशी और अष्टमी घात तिथियाँ हैं। इनका यात्रा में त्याग परम आवश्यक है।

घातवार

मकर राशि वाले व्यक्तियों को मंगलवार घातक है; वृष, सिंह और कन्या राशि वालों को शनिवार; मिथुन राशि वाले व्यक्ति के लिए सोमवार, मेष राशिवालों को रविवार, कर्क राशिवालों को बुधवार; धनु, मीन और वृश्चिक को शुक्रवार एवं कुम्भ और तुला राशिवालों को गुरुवार घातक है। इन घातक वारों में यात्रा करना वर्जित है।

घातक लग्न

मेष, वृष आदि द्वादश राशिवालों को क्रमश: मेष, वृष, कर्क, तुला, मकर, मीन, कन्या, वृश्चिक, धनु, कुम्भ, मिथुन और सिंह लग्न घातक हैं। अत: यात्रा में वर्जित हैं।

राशि ज्ञात करने की विधि

चू, चे, चो,ला, ली, लू, ले लो और आ इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर अपने नाम के आदि का हो तो मेष राशि; ई, उ, ए, ओ, वा, वी, वू, वे और वो इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर अपने नाम का आदि अक्षर हो तो मिथुन राशि; ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे और डो इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर अपने नाम का आदि अक्षर हो तो कर्क राशि; मा, मी, मू, मे, मो, टा, टी, टू और टे इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो सिंह राशि; टो, पा, पी, पू, ष, ण, ठ, पे और पो इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो कन्या राशि; रा, री, रू, रे, रो, ता, ती, तू और ते इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम के आदि का अक्षर हो तो तुला राशि; तो, ना, नी, नू, ने, नो, या, यी और यू इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम के आदि का अक्षर हो तो वृश्चिक राशि; ये, यो, भा, भी, भू, धा, फा, ढा और भे इन अक्षरों में से कोई भी

अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो धनु राशि; भो, जा, जी, खी, खू, खे खो, गा और गी इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम के आदि का अक्षर हो तो मकर राशि; गू, गे, गो, सा, सी, सू, से, सो और दा इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो कुम्भ राशि एवं दी, दू, था, झ, ञ, दे, दो, चा और ची इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो मीन राशि होती है।

संक्षिप्त विधि

आला = मेष, उवा = वृष, काछा = मिथुन, डाहा = कर्क, माटा = सिंह, पाठा = कन्या, राता = तुला, नोया वृश्चिक, भू धा फा ढ, = मकर, गोसा = कुम्भ, दा चा = मीन।

उपर्युक्त अक्षर विधि पर से अपनी राशि निकाल कर घाततिथि, घातनक्षत्र, घातवार और घातलग्न का विचार करना चाहिए।

यात्राकालीन शकुन—ब्राह्मण, घोड़ा, हाथी, फल, अन्न, दूध, दही, गौ, सरसों, कमल, वस्त्र, वेश्या, बाजा, मोर, पपैया, नेवला, बँधा हुआ पशु, मांस, श्रेष्ठ वाक्य, फूल, ऊख, भरा कलश, छाता, मृत्तिका, कन्या, रत्न, पगड़ी, बिना बँधा सफेद बैल, मदिरा, पुत्रवती स्त्री, जलती हुई अग्नि और मछली आदि पदार्थ यात्रा के लिए गमन करते हुए दिखलाई पड़ें तो शुभ शकुन समझना चाहिए। सीसा, काजल, धुला वस्त्र, अथवा धोये हुए वस्त्र लिये हुए धोबी, मछली, घृत, सिंहासन, रोदन रहित मुर्दा, ध्वजा, शहद, मेढा, धनुष, गोरोचन, भरद्वाज पक्षी, पालकी, वेदध्वनि, श्रेष्ठ स्तोत्र पाठ की ध्वनि, मांगलिक गायन और अंकुश ये पदार्थ यात्रा के समय सम्मुख आवें और बिना जल का घड़ा लिये हुए आदमी पीछे जाता हो तो अत्युत्तम है।

बांझ स्त्री, चमड़ा, धान की भूसी, हाड़, सर्प, लवण, अंगार, इन्धन, हिजड़ा, विष्ठा लिये पुरुष, तैल, पागल व्यक्ति, चर्बी, औषध, शत्रु, जटावाला व्यक्ति, संन्यासी, तृण, रोगी, मुनि और बालक के अतिरिक्त अन्य नंगा व्यक्ति, तेल लगाकर बिना स्नान किये हुए, छूटे केश, जाति से पतित, कान-नाक कटा व्यक्ति, भूखा, रुधिर, रजस्वला स्त्री, गिरगिट, निज घर का जलना, बिलावों का लड़ना और सम्मुख छींक यात्रा में अशुभ है। गेरू से रंगा कपड़ा, या इस प्रकार के वस्त्रों को धारण करने वाला व्यक्ति, गुड़, छाछ, कीचड़, विधवा स्त्री, कुबड़ा व्यक्ति, लड़ाई, शरीर से वस्त्र गिर जाना, भैंसों की लड़ाई, काला अन्न, रूई, वमन, दाहिनी ओर गर्दभ शब्द, अतिक्रोध, गर्भवती, शिरमुण्डा, गीले वस्त्र वाला, दुष्ट वचन बोलने वाला, अन्धा और बहरा ये सब यात्रा समय में सम्मुख आयें तो अति निन्दित है।

गोहा, जाहा, शूकर, सर्प और खरगोश का शब्द शुभ होता है। निज या पर के मुख से इनका नाम लेना शुभ है, परन्तु इनका शब्द या दर्शन शुभ नहीं है। रीछ और वानर का नाम लेना और सुनना अशुभ है, पर शब्द सुनना शुभ होता है। नदी का तैरना, भयकार्य, गृहप्रवेश और नष्ट वस्तु का देखना पश्चात्‌ शुभ है। कोयल, छिपकली, पोतकी, शूकरी, रला, पिंगला, छछुन्दरि, सियारिन, कपोत, खंजन, तीतर इत्यादि पक्षी यदि राजा की यात्रा के समय वाम भाग में हों तो शुभ है। छिक्कर, पपीहा, श्रीकण्ठ, वानर और रुरुमृग यात्रा समय दक्षिण भाग में हों तो शुभ है। दाहिनी ओर आये हुए मृग और पक्षी यात्रा में शुभ होते हैं। विषम संख्यक मृग अर्थात्‌ तीन, पाँच, सात, नौ, ग्यारह, तेरह, पन्द्रह, सत्रह, उन्नीस, इक्कीस आदि संख्या में मृगों का झुण्ड चलते हुए साथ दें तो शुभ है। यात्रा समय बायीं ओर गदहे का शब्द शुभ है। यदि सिर के ऊपर दही की हण्डी रखे हुए कोई ग्वालिन आ रही हो और दही के कण गिरते हुए दिखलाई पड़े तो यह शकुन यात्रा के लिए अत्यन्त शुभ है। यदि दही की हण्डी काले रंग की हो और वह काले रंग के वस्त्र से आच्छादित हो तो यात्रा में आधी सफलता मिलती है। श्वेत रंग की हण्डी श्वेत वस्त्र से आच्छादित हो तो पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। यदि रक्त वस्त्र से आच्छादित हो तो यश प्राप्त होता है, पर यात्रा में कठिनाइयाँ अवश्य सहन करनी पड़ती हैं। पीतवर्ण के वस्त्र से आच्छादित होने पर धन लाभ होता है तथा यात्रा भी सफलतापूर्वक निर्विघ्न हो जाता है। हरे रंग का वस्त्र विजय की सूचना देता है तथा यात्रा करने वाले की मनोकामना सिद्ध होने की ओर संकेत करता है। यदि यात्रा करने के समय कोई व्यक्ति खाली घड़ा लेकर सामने आये और तत्काल भरकर साथ-साथ वापस चले तो यह शकुन यात्रा की सिद्धि के लिए अत्यन्त शुभकारक है। यदि कोई व्यक्ति भरा घड़ा लेकर सामने आये और तत्काल पानी गिराकर खाली घड़ा लेकर चले तो यह शकुन अशुभ है, यात्रा की कठिनाइयों के साथ धनहानि की सूचना देता है।

यात्रा समय में काक का विचार- यदि यात्रा के समय काक वाणी बोलता हुआ वाम भाग में गमन करे तो सभी प्रकार के मनोरथों की सिद्धि होती है। यदि काक मार्ग में प्रदक्षिणा करता हुआ बायें हाथ आ जाये तो कार्य की सिद्धि, क्षेम, कुशल तथा मनोरथों की सिद्धि होती है। यदि पीठ पीछे काक मन्द रूप से मधुर शब्द करता हुआ गमन करे अथवा शब्द करता हुआ उसी ओर मार्ग में आगे बढ़े, जिधर यात्रा के लिए जाना है, अथवा शब्द करता हुआ काक आगे हरे वृक्ष की हरी डाली पर स्थित हो और अपने पैर से मस्तक को खुजला रहा हो तो यात्रा में अभीष्ट फल की सिद्धि होती है। यदि गमन काल में काक हाथी के ऊपर बैठा दिखलाई पड़े या हाथी पर बजते हुए बाजों पर बैठा हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा में सफलता मिलती है, साथ ही धनधान्य, सवारी, भूमि आदि का

लाभ होता है। यदि काक घोड़े के ऊपर स्थित दिखलाई पड़े तो भूमिलाभ, मित्र-लाभ एवं धनलाभ करता है। देवमन्दिर, ध्वजा, ऊँचे महल, धान्य की राशि, अन्न के ढेर एवं उन्नत भूमि पर बैठा हुआ काक मुँह में सूखी घास लेकर चबा रहा हो तो निश्चय यात्रा में अर्थ लाभ होता है। इस प्रकार की यात्रा में सभी प्रकार के सुख साधन प्रस्तुत रहते हैं। यह यात्रा अत्यन्त सुखकर मानी जाती है। आगे-पीछे काक गोबर के ढेर पर बैठा हो या दूध वाले—वट, पीपल आदि पर स्थित होकर बीट कर रहा हो अथवा मुँह में अन्न, फल, मूल, पुष्प आदि हों तो अनायास ही यात्रा की सिद्धि होती है। यदि कोई स्त्री जल का भरा हुआ कलश लेकर आये और उस पर काक स्थित होकर शब्द करने लगे तथा जल के भरे हुए घड़े पर स्थित हो काक शब्द करे तो स्त्री और धन की प्राप्ति होती है। यदि शय्या के ऊपर स्थित होकर काक शब्द करे तो आप्तजनों की प्राप्ति होती है। गाय की पीठ पर बैठकर या दूर्वा पर बैठकर अथवा गोबर पर बैठकर काक चोंच घिसता हो तो अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थों की प्राप्ति होती है। धान्य, दूध, दही, मनोहर अंकुर, पत्र, पुष्प, फल, हरे-भरे वृक्ष पर स्थित होकर काक बोलता जाय तो सभी प्रकार के इच्छित कार्य सिद्ध होते हैं। वृक्षों के ऊपर स्थित होकर काक शान्त शब्द बोले तो स्त्रीप्रसंग हो, धन-धान्य पर स्थित होकर शान्त शब्द करे तो धन-धान्य का लाभ हो एवं गाय की पीठ पर स्थित होकर शब्द करे तो स्त्री, धन, यश और उत्तम भोजन की प्राप्ति होती है। ऊँट की पीठ पर स्थित होकर शान्त शब्द करे, गदहे की पीठ पर स्थित होकर शान्त शब्द करे तो धन-लाभ और सुख की प्राप्ति होती है। यदि शूकर, बैल, खाली घड़ा, मुर्दा मनुष्य या मुर्दा पशु, पाषाण और सूखे वृक्ष की डाली पर स्थित होकर काक शब्द करे तो यात्रा में ज्वर, अर्थहानि, चोरों द्वारा धन का अपहरण एवं यात्रा में अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। यदि काक दक्षिण की ओर गमन करे और दक्षिण की ओर ही शब्द करे, पीछे से सम्मुख आये, कोलाहल करता हो और प्रतिलोम गति करके पीठ पीछे की ओर चला आये तो यात्रा में चोट लगती है, रक्तपात होता है तथा और भी अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। बलिभोजन करता हुआ काक बायीं ओर शब्द करता हो और वहाँ से दक्षिण की ओर चला आये एवं वाम प्रदेश में प्रति-लोम गमन करता हो तो यात्रा में अनेक प्रकार के विघ्न होते हैं। आर्थिक हानि भी होती है। यदि गमनकाल में काक दक्षिण बोलकर पीठ पीछे की ओर चला आये तो किसी की हत्या सुनाई पड़ती है। गाय की पूँछ या सर्प के बिल पर बैठा हुआ काक दिखलाई पड़े तो मार्ग में सर्पदर्शन, नाना तरह के संघर्ष और भय होते हैं। यदि काक आगे कठोर शब्द करता हुआ स्थित हो तो हानि, रोग; पीठ पीछे स्थित हो कठोर शब्द करे तो मृत्यु एवं खाली बैठकर शब्द कर रहा हो तो यात्रा सदा निन्दित है। सूखे काठ के टूक को तोड़कर चोंच के अग्रभाग में

दबाकर रखा हो और बायें भाग में स्थित हो तो मृत्यु या नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। यदि चोंच में काक हड्डी दबाये हो तो अशुभ फल होता है। वाम भाग में सूखे वृक्ष पर काक स्थित हो तो अतिरोग, खाली या तीखे वृक्ष पर बैठा हो तो यात्रा में कलह और कार्यनाश एवं काँटेदार वृक्ष पर स्थित होकर रूखा शब्द करे तो यात्रा में मृत्यु होती है।

मानशरण के वृक्ष पर स्थित काक कठोर शब्द करता हो तो यात्रा में धन-क्षय, कुटुम्बी मरण एवं नाना तरह से अशुभ होता है। यदि छत पर बैठकर काक बोलता हो तो यात्रा नहीं करनी चाहिए। इस शकुन के होने पर यात्रा करने से वज्रपात—बिजली गिरती है। यदि कूड़े के ढेर पर या राख—भस्म के ढेर पर स्थित होकर काक शब्द करे तो कार्य का नाश होता है। अपयश, धनक्षय एवं नाना तरह के कष्ट यात्रा में उठाने पड़ते हैं। लता, रस्सी, केश, सूखी लकड़ी, चमड़ा, हड्डी, फटे-पुराने चिथड़े, वृक्षों की छाल, रुधिरयुक्त वस्तु, जलती लकड़ी एवं कीचड़ काक की चोंच में दिखलाई पड़े तो यात्रा में पापयुक्त कार्य करने पड़ते हैं, यात्रा में कष्ट होता है, धनक्षय या धन की चोरी, अचानक दुर्घटनाएं आदि घटित होती हैं। आयुध, छत्र, घड़ा, हड्डी, वाहन, काष्ठ एवं पाषाण चोंच में रखे हुए काक दिखलाई पड़े तो यात्रा करने वाले की मृत्यु होती है। एक पाँव समेटकर, चंचल चित्त होकर जोर-जोर से कठोर शब्द करता हो तो काक युद्ध, झगड़े, मार-पीट आदि की सूचना देता है। यदि यात्रा करते समय काक अपनी बीट यात्रा करने वाले के मस्तक पर गिरा दे तो यात्रा में विपत्ति आती है। नदी तट या मार्ग में काक तीव्र स्वर बोले तो अत्यन्त विपत्ति की सूचना समझ लेनी चाहिए। यात्रा के समय में यदि काक रथ, हाथी, घोड़ा और मनुष्य के मस्तक पर बैठा दीख पड़े तो पराजय, कष्ट, चोरी और झगड़े की सूचना समझनी चाहिए। शस्त्र, ध्वजा, छत्र पर स्थित होकर काक आकाश की ओर देख रहा हो तो यात्रा में सफलता मिलनी चाहिए।

यात्रा में उल्लू का विचार—यदि यात्रा काल में उल्लू बायीं ओर दिखलाई पड़े तथा उल्लू अपना भोजन भी साथ में लिये हो तो यात्रा सफल होती है। यदि उल्लू वृक्ष पर स्थित होकर अपना भोजन संचय करता हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा करने वाला इस यात्रा में अवश्य धन लाभ कर लौटता है। यदि गमन करने वाले पुरुष के वाम भाग में उल्लू का प्रशान्तमय शब्द हो और दक्षिण भाग में असम शब्द हो तो यात्रा में सफलता मिलती है। किसी भी प्रकार की बाधा नहीं आती है। यदि यात्रा कर्त्ता के वाम भाग में उल्लू शब्द करता हुआ दिखलाई पड़े अथवा बायीं ओर से उल्लू का शब्द सुनाई पड़े तो यात्रा प्रशस्त होती है। यदि पृथ्वी पर स्थित होकर उल्लू शब्द कर रहा हो तो धनहानि; आकाश में स्थित होकर शब्द कर रहा हो तो कलह; दक्षिण भाग में स्थित होकर शब्द कर रहा

हो तो कलह या मृत्युतुल्य कष्ट होता है। यदि उल्लू का शब्द तैजस और पवन-युक्त हो तो निश्चयतः यात्रा करने वाले की मृत्यु होती है। यदि उल्लू पहले बायीं ओर शब्द करे, पश्चात् दक्षिण की ओर शब्द करे तो यात्रा में पहले समृद्धि, सुख और शान्ति; पश्चात् कष्ट होता है। इस प्रकार के शकुन में यात्रा करने से कभी-कभी मृत्यु तुल्य कष्ट भी भोगना पड़ता है।

नीलकण्ठ विचार—यदि यात्रा काल में नीलकण्ठ स्वस्तिक गति में भक्ष्य पदार्थों को ग्रहण कर प्रदक्षिणा करता हुआ दिखलाई पड़े तो सभी प्रकार के मनोरथों की सिद्धि होती है। यदि दक्षिण—दाहिनी ओर नीलकण्ठ गमन समय में दिखलाई पड़े तो विजय, धन, यश और पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। यदि नीलकण्ठ काक को पराजय करता हुआ सामने दिखलाई पड़े तो निर्विघ्न यात्रा की सिद्धि करता है। यदि वन मध्य में रुदन करता हुआ नीलकण्ठ सामने आये अथवा भयंकर शब्द करता हुआ या घबड़ाकर शब्द करता हुआ आगे आये तो यात्रा में विघ्न आते हैं। धन चोरी चला जाता है और जिस कार्य की सिद्धि के लिए यात्रा की जाती है वह सफल नहीं होता। यदि यात्राकाल में नीलकण्ठ मयूर के समान शब्द करे तो यशप्राप्ति, धनलाभ, विजय एवं निर्विघ्न यात्रा सिद्ध होती है। गमन करने वाले व्यक्ति के आगे-आगे कुछ दूर तक नीलकण्ठ के दर्शन हों तो यात्रा सफल होती है। धन, विजय और यश प्राप्त होता है। शत्रु भी यात्रा में मित्र बन जाते हैं तथा वे भी सभी तरह की सहायता करते हैं।

खंजन विचार—यदि यात्राकाल में खंजन पक्षी हरे पत्र, पुष्प और फल युक्त वृक्ष पर स्थित दिखलाई पड़े तो यात्रा सफल होती है; मित्रों से मिलन, शुभ कार्यों की सिद्धि एवं लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। हाथी, घोड़ा के बँधने के स्थान में, उपवन, घर के समीप, देवमन्दिर, राजमहल आदि के शिखर पर खंजन बैठा हुआ सशब्द दिखलाई पड़े तो यात्रा सफल होती है। दही, दूध, घृत आदि को मुख में लिये हुए खंजन पक्षी दिखलाई पड़े तो नियमतः लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यात्रा में इस प्रकार के शुभ शकुन मिलते हैं, जिनसे चित्त प्रसन्न रहता है तथा बिना किसी प्रकार के कष्ट के यात्रा सिद्ध हो जाती है। सहस्रों व्यक्ति सहायक मिल जाते हैं। छाया सहित, सुन्दर, फल-पुष्प युक्त वृक्ष पर खंजन पक्षी दिखलाई पड़े तो लक्ष्मी की प्राप्ति के साथ विजय, यश और अधिकारों की प्राप्ति होती है। खंजन का दर्शन यात्रा काल में बहुत ही उत्तम माना जाता है। गधा, ऊँट, श्वान की पीठ पर खंजन पक्षी दिखलाई पड़े अथवा अशुचि और गन्दे स्थानों पर बैठा हुआ खंजन दिखलाई पड़े तो यात्रा में बाधाएँ आती हैं, धनहानि होती है और पराजय भी होती है।

तोता विचार—यदि गमन समय में दाहिनी ओर या सम्मुख तोता दिखलाई पड़े तथा वह मधुर शब्द कर रहा हो, बन्धन मुक्त हो तो यात्रा में सभी प्रकार

से सफलता प्राप्त होती है। यदि तोता मुख में फल दबाये और बायें पैर से अपनी गर्दन खुजला रहा हो तो यात्रा में अनायास ही सिद्धि होती है। हरित फल, पुष्प और पत्तों से युक्त वृक्ष के ऊपर तोता स्थित हो तो यात्रा में विजय, सफलता, धन और यश की प्राप्ति समझनी चाहिए। किसी विशेष व्यक्ति से मिलने के लिए यदि यात्रा की जाय और यात्रा के आरम्भ में तोता जयनाद करता हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा पूर्ण सफल होती है। यदि गमन काल में तोता बायीं ओर से दायीं ओर चला आये और प्रदक्षिणा करता हुआ-सा प्रतीत हो तो यात्रा में सभी प्रकार की सफलता समझनी चाहिए। यदि तोता शरीर को कँपाता हुआ इधर से उधर घूमता जाय अथवा निन्दित, दूषित और घृणित स्थलों पर जाकर स्थित हो जाय तो यात्रा की सिद्धि में कठिनाई होती है। मुक्त विचरण करने वाला तोता यदि सामने फल या पुष्प को कुरेदता हुआ दिखलाई पड़े तो धनप्राप्ति का योग समझना चाहिए। यदि तोता रुदन करता हुआ या किसी प्रकार के शोक शब्द को करता हुआ सामने आये तो यात्रा अत्यन्त अशुभ होती है। इस प्रकार के शकुन में यात्रा करने से प्राणघात का भी भय रहता है।

चिड़िया विचार—यदि छोटी लाल मुनैया सामने दिखलाई पड़े तो विजय, पीठ पीछे शब्द करे तो कष्ट, दाहिनी ओर शब्द करती हुई दिखलाई पड़े तो हर्ष एवं बायीं ओर धन क्षय, रोग या अनेक प्रकार की आपत्तियों की सूचना देती है। जिस चिड़िया के सिर पर कलंगी हो, यदि वह सामने या दाहिनी ओर दिखलाई पड़े तो शुभ, बायीं ओर तथा पीठ पीछे उसका रहना अशुभ होता है। मुँह में चारा लिये हुए दिखलाई पड़े तो यात्रा में सभी प्रकार की सिद्धि, धन-धान्य की प्राप्ति, सांसारिक सुखों का लाभ एवं अभीष्ट मनोरथों की सिद्धि होती है। यदि किसी भी प्रकार की चिड़ियाँ आपस में लड़ती हुई सामने गिर जायँ तो यात्रा में कलह, विवाद, झगड़ा के साथ मृत्यु भी प्राप्त होती है। चिड़िया के परों का टूटकर सामने गिरना यात्राकर्त्ता को विपत्ति की सूचना देता है। चिड़िया का लँगड़ाकर चलना और धूल में स्नान करना यात्रा में कष्टों की सूचना देता है।

मयूर विचार—यात्रा में मयूर का नृत्य करते हुए देखना अत्यन्त शुभ होता है। मधुर शब्द एवं नृत्य करता हुआ मयूर यदि यात्रा करते समय दिखलाई पड़े तो यह शकुन अत्यन्त उत्तम है, इसके द्वारा धन-धान्य की प्राप्ति, विजय-प्राप्ति, सुख एवं सभी प्रकार के अभीष्ट मनोरथों की सिद्धि समझ लेनी चाहिए। मयूर का एक ही झटके में उड़कर सूखे वृक्ष पर बैठ आना यात्रा में विपत्ति की सूचना देता है।

हाथी विचार—यदि प्रस्थान काल में हाथी सूँड़ को ऊपर किये हुए दिखलाई पड़े तो यात्रा में इच्छाओं की पूर्ति होती है। यदि यात्रा करते समय हाथी का दाँत ही टूटा हुआ दिखलाई पड़े तो भय, कष्ट और मृत्यु होती है। गर्जना करता

हुआ मदोन्मत्त हाथी यदि सामने आता हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा सफल होती है। जो हाथी पीलवान को गिराकर आगे दौड़ता हुआ आये तो यात्रा में कष्ट, पराजय, आर्थिक क्षति आदि फलों की प्राप्ति होती है।

अश्व विचार—यदि प्रस्थान काल में घोड़ा हिनहिनाता हुआ दाहिने पैर से पृथ्वी को खोद रहा हो और दाहिने अंग को खुजला रहा हो तो वह यात्रा में पूर्ण सफलता दिलाता है तथा पद-वृद्धि की सूचना देता है। घोड़े का दाहिनी ओर हिनहिनाते हुए निकल जाना, पूंछ को फटकारते हुए चलना एवं दाना खाते हुए दिखलाई पड़ना शुभ है। घोड़े का लेटे हुए दिखलाई पड़ना, कानों को फटफटाना, मल-मूत्र त्याग करते हुए दिखलाई पड़ना यात्रा के लिए अशुभ होता है।

गर्दभ विचार—वाम भाग में स्थित गर्दभ अतिदीर्घ शब्द करता हुआ यात्रा में शुभ होता है। आगे या पीछे स्थित होकर गर्दभ शब्द करे तो भी यात्रा की सिद्धि होती है। यदि प्रयाण काल में गर्दभ अपने दाँतों से अपने कन्धे को खुजलाता हो तो धन की प्राप्ति, सफल मनोरथ और यात्रा में किसी भी प्रकार का कष्ट नहीं होता है। यदि संभोग करता हुआ गर्दभ दिखलाई पड़े तो स्त्रीलाभ, युद्ध करता हुआ दिखलाई पड़े तो वध-बंधन एवं देह या कान को फटफटाता हुआ दिखलाई पड़े तो कार्य नाश होता है। खच्चर का विचार भी गर्दभ के विचार के समान ही है।

वृषभ विचार—प्रयाण काल में वृषभ बायीं ओर शब्द करे तो हानि, दाहिनी ओर शब्द करे और सींगों से पृथ्वी को खोदे तो शुभ; घोर शब्द करता हुआ साथ-साथ चले तो विजय एवं दक्षिण की ओर गमन करता हुआ दिखलाई पड़े तो मनोरथ सिद्धि होती है। बैल या साँड़ बायीं ओर आकर बायीं सींग से पृथ्वी को खोदे, बायीं करवट लेटा हुआ दिखलाई पड़े तो अशुभ होता है। यात्रा काल में बैल या साँड़ का बायीं ओर आना भी अशुभ कहा गया है।

महिष विचार—दो महिष सामने लड़ते हुए दिखलाई पड़ें तो अशुभ, विवाद कलह और युद्ध की सूचना देते हैं। महिष का दाहिनी ओर रहना, दाहिने सींग से या दाहिनी ओर स्थित होकर दोनों सींगों से मिट्टी का खोदना यात्रा में विजय कारक है। बैल और महिष दोनों की छींक यात्रा के लिए वर्जित है।

गाय विचार—गर्भिणी गाय, गर्भिणी भैंस और गर्भिणी बकरी का यात्रा काल में सम्मुख या दाहिनी ओर आना शुभ है। रँभाती हुई गाय सामने आये और बच्चे को दूध पिला रही हो तो यात्रा काल में अत्यधिक शुभ माना जाता है। जिस गाय का दूध दुहा जा रहा हो, वह भी यात्रा काल में शुभ होती है। रँभाती हुई, बच्चे को देखने के लिए उत्सुक, हर्षयुक्त गाय का प्रयाण काल में दिखलाई पड़ना शुभ होता है।

बिडाल विचार—यात्रा काल में बिल्ली रोती हुई, लड़ती हुई, छींकती हुई

दिखलाई पड़े तो यात्रा में नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। बिल्ली का रास्ता काटना भी यात्रा में संकट पैदा कराता है। यदि अकस्मात् बिल्ली दाहिनी ओर से बायीं ओर आये तो किंचित् शुभ और बायीं ओर से दाहिनी ओर आये तो अत्यन्त अशुभ होता है। इस प्रकार का बिल्ली का आना यात्रा में संकटों की सूचना देता है। यदि बिल्ली चूहे को मुख में दबाये सामने आ जाय तो कष्ट, रोटी का टुकड़ा दबाकर सामने आये तो यात्रा में लाभ एवं दही या दूध पीकर सामने आये तो साधारणतः यात्रा सफल होती है। बिल्ली का रुदन यात्रा काल में अत्यन्त वर्जित है, इसमें यात्रा में मृत्यु या तत्तुल्य कष्ट होता है।

कुत्ता विचार—यात्रा काल में कुत्ता दक्षिण भाग से वाम भाग में गमन करे तो शुभ और कुतिया वाम भाग से दक्षिण भाग की ओर आये तो शुभ; सुन्दर वस्तु को मुख में लेकर यदि कुत्ता सामने दिखलाई पड़े तो यात्रा में लाभ होता है। व्यापार के निमित्त की गयी यात्रा अत्यन्त सफल होती है। यदि कुत्ता थोड़ी-सी दूर आगे चलकर, पुनः पीछे की ओर लौट आये तो यात्रा करने वाले को सुख; प्रसन्न क्रीड़ा करता हुआ कुत्ता सम्मुख आने के उपरान्त पीछे की ओर लौट जाय तो यात्रा करने वाले को धन-धान्य की प्राप्ति होती है। इस प्रकार के शकुन से यात्रा में विजय, सुख और शान्ति रहती है। यदि श्वान ऊँचे स्थान से उतरकर नीचे भाग में आ जाय तथा वह दाहिनी ओर आ जाये तो शुभकारक होता है। निर्विघ्न यात्रा की सिद्धि तो होती ही है, साथ ही यात्रा करने वाले को अत्यधिक सम्मान की प्राप्ति होती है। हाथी के बँधने के स्थान, घोड़ा के स्थान, शय्या, आसन, हरी घास, छत्र, ध्वजा, उत्तम वृक्ष, घड़ा, ईंटों के ढेर, चमर, ऊँची भूमि आदि स्थानों पर मूत्र करके कुत्ता यदि मनुष्य के आगे गमन करे तो अभीष्ट कार्यों की सिद्धि हो जाती है। यात्रा सभी प्रकार से सफल होती है। सन्तुष्ट, पुष्ट, प्रसन्न, रोग-रहित, आनन्दयुक्त, लीला सहित एवं क्रीड़ा सहित कुत्ता सम्मुख आये तो अभीष्ट कार्यों की सिद्धि होती है। नवीन अन्न, घृत, विष्ठा, गोबर इनको मुख में धारण कर दाहिनी ओर और बायीं ओर देखता हुआ श्वान सामने आये तो सभी प्रकार से यात्रा सफल होती है। यदि श्वान आगे पृथ्वी को खोदता हुआ यात्रा करने वाले को देखे तो निस्सन्देह इस यात्रा से धन लाभ होता है। यदि कुत्ता गमन करने वाले को आकर सूँघे, अनुलोम गति से आगे बढ़े, पैर से मस्तक को खुजलाये तो यात्रा सफल होती है। श्वान गमनकर्ता के साथ-साथ बायीं ओर चले तो सुन्दर रमणी, धन और यश की प्राप्ति कराता है। श्वान जूता मुँह में लेकर सामने आये या साथ-साथ चले; हड्डी लेकर सामने आये या साथ-साथ चले; केश, वल्कल, पाषाण, जीर्णवस्त्र, अंगार, भस्म, ईंधन, ठीकरा इन पदार्थों को मुँह में लेकर श्वान सामने आये तो यात्रा में रोग, कष्ट, मरण, धन हानि आदि फल प्राप्त होते हैं। काष्ठ, पाषाण को कुत्ता मुख में लेकर यात्रा करने वाले के सामने आये; पूँछ,

कान और शरीर को यात्रा करने वाले के सामने हिलावे तो यात्रा में धन हरण, कष्ट एवं रोग आदि होते हैं। यदि यात्रा करने वाला व्यक्ति किसी कुत्ता को जल, वृक्ष की लकड़ी, अग्नि, भस्म, केश, हड्डी, काष्ठ, सींग, श्मशान, भूसा, अंगार, शूल, पाषाण, विष्ठा, चमड़ा आदि पर मूत्र करते हुए देखे तो यात्रा में नाना प्रकार के कष्ट होते हैं।

शृगाल विचार—जिस दिशा में यात्रा की जा रही हो, उसी दिशा में शृगाल या शृगाली का शब्द सुनाई पड़े तो यात्रा में सफलता प्राप्त होती है। यदि पूर्व दिशा की यात्रा करने वाले व्यक्ति के समक्ष शृगाल या शृगाली आ जाय और वह शब्द भी कर रही हो तो यात्रा करने वाले को महान् संकट की सूचना देती है। यदि सूर्य सम्मुख देखती हुई शृगाली बायीं ओर बोले तो भय, दाहिनी ओर बोले तो कार्य हानि फल होता है। दक्षिण दिशा की यात्रा करने वाले व्यक्ति के दायीं ओर शृगाली शब्द करे तो यात्रा में सफलता की सूचना देती है। इसी दिशा के यात्री के आगे सूर्य की ओर मुंह कर शृगाली बोले तो मृत्यु की प्राप्ति होती है। पश्चिम दिशा को गमन करने वाले के सम्मुख शृगाली बोले तो किंचित् हानि और सूर्य की ओर मुंह करके बोले तो अत्यन्त संकट की सूचना देती है। यदि पश्चिम दिशा के यात्री के पीठ के पीछे शृगाली शब्द करती हुई चले तो अर्थनाश, बायीं ओर शब्द करे तो अर्थागम होता है। उत्तर दिशा को गमन करने वाले व्यक्ति के पीठ पीछे शृगाली सूर्य की ओर मुंह कर बोले तो यात्रा में अर्थहानि और मरण होता है। यदि यात्रा-काल में शृगाली दाहिनी ओर से निकलकर बाईं ओर चली जाय और वहीं पर शब्द करे तो यात्रा में सफलता की सूचना समझनी चाहिए। शृगाली शब्द की कर्कशता और मधुरता के अनुसार फल में भी हीनाधिकता हो जाती है।

यात्रा में छींक विचार—छींक होने पर सभी प्रकार के कार्यों को बन्द कर देना चाहिए। गमन काल में छींक होने से प्राणों की हानि होती है। सामने छींक होने पर कार्य का नाश, दाहिने नेत्र के पास छींक हो तो कार्य का निषेध, दाहिने कान के पास छींक हो तो धन का क्षय, दक्षिण कान के पृष्ठ भाग में छींक हो तो शत्रुओं की वृद्धि, बायें कान के पास छींक हो तो जय, बायें कान के पृष्ठ भाग की ओर छींक हो तो भोगों की प्राप्ति, बायें नेत्र के आगे छींक हो तो धन लाभ होता है। प्रयाण काल में सम्मुख की छींक अत्यन्त अशुभकारक है और दाहिनी छींक धन नाश करने वाली है। अपनी छींक अत्यन्त अशुभकारक होती है। ऊँचे स्थान की छींक मृत्युभय है, पीठ पीछे की छींक भी शुभ होती है। छींक का विचार 'डाक' में इस प्रकार किया है—

दक्षिन छींकैं धन लै दीजै, नैरित कोन सिंहासन दीजै ॥
पच्छिम छींकै मिठ भोजना, गेलो पलटै वायब कोना ॥
उत्तर छींकै मान समान, सर्वं सिद्ध लै कोन ईशान ॥
पूरब छिक्का मृत्यु हंकार, अग्निकोन में दुःख के भार ॥
सबके छिक्का कहिगेल 'डाक' अपने छिक्का नहि कस काज ॥
आकाश छिक्के जे नर होय, पलटि अन्न मन्दिर नहि खाय ।

अर्थात्—दक्षिण दिशा से होने वाली छींक धन हानि करती है, नैऋत्यकोण की छींक सिंहासन दिलाती है, पश्चिम दिशा की छींक मीठा भोजन और वायव्य

आठों दिशाओं में प्रहरानुसार छींकफल बोधकचक्र

ईशान 1. हर्ष 2. नाश 3. व्याधि 4. मित्रसंगम	**पूर्व** 1. लाभ 2. धनलाभ 3. मित्रलाभ 4. अग्निभय	**आग्नेय** 1. लाभ 2. मित्रदर्शन 3. शुभवार्ता 4. अग्निभय
उत्तर 1. शत्रुभय 2. रिपुसंग 3. लाभ 4. भोजन	यात्रा	**दक्षिण** 1. लाभ 2. मृत्युभय 3. नाश 4. काल
वायव्यकोण 1. स्त्रीलाभ 2. लाभ 3. मित्रलाभ 4. दूरगमन	**पश्चिम** 1. दूरगमन 2. हर्ष 3. कलह 4. चोर	**नैऋत्य** 1. लाभ 2. मित्रभेंट 3. शुभवार्ता 4. लाभ

कोण की छींक द्वारा गया हुआ व्यक्ति सकुशल लौट आता है। उत्तर की छींक मान-सम्मान दिलाती है, ईशान कोण की छींक समस्त मनोरथों की सिद्धि करती है। पूर्व की छींक मृत्यु और अग्निकोण की दुःख देती है। यह अन्य लोगों की छींक का फल है। अपनी छींक तो सभी कार्यों को नष्ट करने वाली होती है। अतः अपनी छींक का सदा त्याग करना चाहिए। ऊँच स्थान की छींक में जो व्यक्ति यात्रा के लिए जाता है, वह पुनः वापस नहीं लौटता है। नीचे स्थान की छींक विजय देती है।

'वसन्तराज शाकुन' में दशों दिशाओं की अपेक्षा छींक के दस भेद बतलाये हैं। पूर्व दिशा में छींक होने से मृत्यु, अग्निकोण में शोक, दक्षिण में हानि, नैऋत्य में प्रियसंगम, पश्चिम में मिष्ट आहार, वायव्य में श्रीसम्पदा, उत्तर में कलह, ईशान में धनागम, ऊपर की छींक में संहार और नीचे की छींक में सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। आठों दिशाओं में प्रहर-प्रहर के अनुसार छींक का शुभाशुभत्व दिखलाया गया है। छींक फल-बोधक चक्र में देखें।

चतुर्दशोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पूर्वकर्मविपाकजम्।
[1]शुभाशुभतथोत्पातं राज्ञो जनपदस्य च ॥1॥

अब राजा और जनपद के पूर्वोपार्जित शुभाशुभ कार्यों के फल से होने वाले उत्पातों का निरूपण करता हूँ ॥1॥

प्रकृतेर्यो विपर्यासः [2]स चोत्पातः प्रकीर्तितः।
दिव्याऽन्तरिक्षभौमाश्च व्यासमेषां निबोधत ॥2॥

प्रकृति के विपर्यास—विपरीत कार्य के होने को उत्पात कहते हैं। ये उत्पात तीन प्रकार के होते हैं—दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। इनका विस्तार से वर्णन अवगत करना चाहिए ॥2॥

---

1. शुभाऽशुभान् समुत्पातान् मु०। 2. स उत्पातं मु०।

यदात्युष्णं भवेच्छीते शीतमुष्णे तथा ऋतौ।
तदा तु नवमे मासे दशमे वा भयं भवेत् ॥3॥

यदि शीत ऋतु में अधिक गर्मी पड़े और ग्रीष्म ऋतु में कड़ाके की सर्दी पड़े तो उक्त घटना के नौ महीने या दश महीने के उपरान्त महान् भय होता है ॥3॥

सप्ताहमष्टरात्रं वा नवरात्रं दशाह्निकम्।
यदा निपतते वर्षं प्रधानस्य वधाय तत् ॥4॥

यदि वर्षा सात दिन और आठ रात अथवा नौ रात्रि और दश दिन तक हो तो प्रधान—राजा या मन्त्री का वध होता है। तात्पर्य यह है कि वर्षा लगातार सात दिन और आठ रात अर्थात् दिन में आरम्भ होकर आठवीं रात में समाप्त हो या नौ रात और दश दिन अर्थात् रात में आरम्भ होकर दशवें दिन समाप्त हो तो प्रधान का वध होता है ॥4॥

पक्षिणश्च यदा मत्ताः पशवश्च पृथग्विधाः।
विपर्ययेण संसक्ता विन्द्याज्जनपदे भयम् ॥5॥

यदि पक्षी मत्त—पागल और पशु भिन्न स्वभाव के हो जायें तथा विपर्यय—विपरीत जाति, गुण, धर्म वालों का संयोग हो अर्थात् पशु-पक्षियों से मिलें, पक्षी पशुओं से अथवा गाय आदि पशु भी भिन्न स्वभाव वालों से संयोग करें तो राष्ट्र में भय—आतंक व्याप्त हो जाता है ॥5॥

आरण्या ग्राममायान्ति वनं गच्छन्ति नागराः।
रुदन्ति चाथ जल्पन्ति तदापायाय[1] कल्पते ॥6॥

[2]अष्टादशसु मासेषु तथा सप्तदशसु च।
राजा च म्रियते तत्र भयं रोगश्च जायते ॥7॥

जंगली पशु गांव में आयें और ग्रामीण पशु जंगल को जायें, रुदन करें और शब्द करें तो जनपद के पाप का उदय समझना चाहिए। इस पाप के फल से अठारह महीनों में या सत्रह महीनों में राजा का मरण होता है और उस जनपद में भय एवं रोग आदि उत्पन्न होते हैं। अर्थात् उस जनपद में सभी प्रकार का कष्ट व्याप्त हो जाता है ॥6-7॥

---

1. तदापायाय मु.। 2. अष्टादशस्य मासस्य तथा सप्तदशस्य च।

स्थिराणां कम्पसरणे चलानां [1]गमने तथा।
ब्रूयात् तत्र वधं राज्ञः षण्मासात् पुत्रमन्त्रिणः ॥8॥

स्थिर पदार्थ—जड़-चेतनात्मक स्थिर पदार्थ काँपने लगें—चंचल हो जायँ और चंचल पदार्थों की गति रुक जाय—स्थिर हो जायें तो इस घटना के छः महीने के उपरान्त राजा एवं मंत्री पुत्र का वध होता है ॥8॥

[2]ज्वलने हसने चापि [3]क्रन्दने युद्धकारणे।
स्थावराणां वधं विन्द्यात्त्रिमासं[4] नात्र संशयः ॥9॥

युद्धकाल में अकारण जलने, हँसने और रोने-कलपने से तीन महीने के उपरान्त स्थावर—वहाँ के निवासियों का निस्सन्देह वध होता है ॥9॥

पक्षिणः पशवो मर्त्याः प्रसूयन्ति [5]विपर्ययात्।
यदा तदा तु षण्मासाद् [6]भूयात् राजवधो ध्रुवम् ॥10॥

यदि पक्षी, पशु और मनुष्य विपर्यय—विपरीत सन्तान उत्पन्न करें अर्थात् पक्षियों के पशु या मनुष्य की आकृति की सन्तान उत्पन्न हो, पशुओं के पक्षी या मनुष्य की आकृति की सन्तान उत्पन्न हो और मनुष्यों के पशु या पक्षी की आकृति की सन्तान उत्पन्न हो तो इस घटना के छः महीने उपरान्त राजा का वध होता है और उस जनपद में भय—आतंक व्याप्त हो जाता है ॥10॥

विकृतैः पाणिपादाद्यैर्न्यूनैश्चाप्यधिकैस्तथा।
यदा त्वेते प्रसूयन्ते क्षुद्भयानि तदादिशेत् ॥11॥

विकृत हाथ, पैर वाली अथवा न्यून या अधिक हाथ, पैर, सिर, आँख वाली सन्तान पशु-पक्षी और मनुष्यों के उत्पन्न हो तो क्षुधा की पीड़ा और भय—आतंक आदि होने की सूचना अवगत करनी चाहिए ॥11॥

षण्मासं द्विगुणं चापि परं वाथ चतुर्गुणम्।
राजा च म्रियते तत्र भयानि च न संशयः ॥12॥

जहाँ उक्त प्रकार की घटना घटित होती है, वहाँ छः महीने, एक वर्ष और दो वर्ष के उपरान्त राजा की मृत्यु एवं निस्सन्देह भय होता है ॥12॥

मद्यानि रुधिराऽस्थीनि धान्यांगारवसास्तथा।
[7]मघवान् वर्षते यत्र तत्र विन्द्यात् महद्भयम् ॥13॥

1. गमने नि मु० । 2. ज्वलने हसने मु० । 3. क्रन्दने मु० । 4. स्थावरसंक्रमम् मु० । 5. विपर्ययं मु० । 6. [illegible] मु० । 7. मेघो वा वर्षते यत्र भय विद्यात्क्षुद्भयम्

जहाँ मेघ मद्य, रुधिर, हड्डी, अग्नि चिनगारियाँ और चर्बी की वर्षा करते हैं वहाँ चार प्रकार का भय होता है ॥13॥

[1]सरीसृपा जलचराः पक्षिणो द्विपदास्तथा।
[2]वर्षमाणा जलधरात् तदाख्यान्ति महाभयम् ॥14॥

जहाँ मेघों से सरीसृप—रीढ़ वाले सर्पादि जन्तु, जलचर—मेंढक, मछली आदि एवं द्विपद पक्षियों की वर्षा हो, वहाँ घोर भय की सूचना समझनी चाहिए ॥14॥

निरिन्धनो यदा चाग्नि[3]रीक्ष्यते सततं पुरे।
स राजा नश्यते देशाच्छण्मासात् परतस्तदा ॥15॥

यदि राजा नगर में निरन्तर बिना ईंधन के अग्नि को प्रज्वलित होते हुए देखे तो वह राजा छः महीने के अनन्तर—उक्त घटना के छः महीने पश्चात् विनाश को प्राप्त हो जाता है ॥15॥

दीप्यन्ते यत्र शस्त्राणि वस्त्राण्यश्वा नरा गजाः।
वर्षं च म्रियते राजा देशस्य च महद्भयम् ॥16॥

जहाँ शस्त्र, वस्त्र, अश्व—घोड़ा, मनुष्य और हाथी आदि जलते हुए दिखलाई पड़ें वहाँ इस घटना के पश्चात् एक वर्ष में राजा का मरण हो जाता है और देश के लिए महान् भय होता है ॥16॥

चैत्य[4]वृक्षा रसान् यद्वत् [5]प्रस्रवन्ति विपर्ययात्।
समस्ता यदि वा व्यस्तास्तदा [6]देशे भयं वदेत् ॥17॥

यदि चैत्यवृक्ष—गूलर के वृक्षों से विपर्यय रस टपके अथवा चैत्यालय के समक्ष स्थित वृक्षों में से सभी से या पृथक्-पृथक् वृक्ष से विपरीत रस टपके अर्थात् जिस वृक्ष से जिस प्रकार का रस निकलता है, उससे भिन्न प्रकार का रस निकले तो जनपद के लिए भय का आगमन समझना चाहिए ॥17॥

दधि क्षौद्रं घृतं तोयं दुग्धं रेतर्विमिश्रितम्।
[7]प्रस्रवन्ति यदा वृक्षास्तदा व्याधिभयं भवेत्[8] ॥18॥

जब वृक्षों से दही, शहद, घी, जल, दूध और वीर्य मिश्रित रस निकले तब

1. प्रसर्पन्ति मु०। 2. वर्षमाणो जल हस्माद् भयम् [illegible] दारुणम् मु०। 3. रीक्ष्यते C मु०। 4. वृक्षाग्रेषु मु०। 5. प्रभवन्ति मु०। 6. विद्याद्भयागमम् मु०। 7. निस्रवन्ति मु०। 8 विदुः मु०।

जनपद के लिए व्याधि और भय समझना चाहिए ॥18॥

रक्ते [1]पुत्रभयं [2]विन्द्यात् नीले श्रेष्ठिभयं [3]तथा।
अन्येष्वेषु विचित्रेषु वृक्षेषु तु भयं विदुः ॥19॥

यदि लाल रंग का रस निकले तो पुत्र को भय, नील रंग का रस निकले तो सेठों को भय, और अन्य विविध प्रकार का रस निकले तो जनपद को भय होता है ॥19॥

विस्वरं रवमानस्तु चैत्यवृक्षो [4]यदा पतेत्।
[5]सततं भयमाख्याति देशजं पञ्चमासिकम् ॥20॥

यदि चैत्य वृक्ष—चैत्यालय के समक्ष स्थित वृक्ष अथवा गूलर का वृक्ष विकृत आवाज करता हुआ गिरे तो देश-निवासियों को पंचमासिक—पाँच महीनों के लिए भय होता है ॥20॥

नानावस्त्रैः समाच्छन्ना [6]दृश्यन्ते चैव यद् द्रुमाः।
राष्ट्रजं तद्भयं विन्द्याद् विशेषेण तदा विशे ॥21॥

यदि नाना प्रकार के वस्त्रों से युक्त वृक्ष दिखलाई पड़ें तो राष्ट्र के निवासियों को भय होता है तथा विशेष रूप से देश के लिए भय समझना चाहिए ॥21॥

शुक्लवस्त्रो द्विजान् हन्ति रक्तः क्षत्रं तदाश्रयम्।
पीतवस्त्रो यदा व्याधिं तदा च वैश्यघातकः ॥22॥

यदि वृक्ष श्वेत वस्त्र से युक्त दिखलाई पड़े तो ब्राह्मणों का विनाश, रक्त वस्त्र से युक्त दिखलाई पड़े तो क्षत्रियों का विनाश और पीत वस्त्र से युक्त दिखलाई पड़े तो व्याधि उत्पन्न होती है और वैश्यों के लिए विनाशक है ॥22॥

[7]नीलवस्त्रैस्तथा श्रेणीन् कपिलैर्म्लेच्छमण्डलम्।
धूम्रैर्निहन्ति श्वपचान् चाण्डालानप्यसंशयम् ॥23॥

नील वर्ण के वस्त्र से युक्त वृक्ष दिखलाई पड़े तो अश्रेणी—शूद्रादि निम्न वर्ग के व्यक्तियों का विनाश, कपिल वर्ण के वस्त्र से युक्त दिखलाई पड़े तो म्लेच्छ—यवनादि का विनाश, धूम्र वर्ण के वस्त्र से युक्त दिखलाई पड़े तो श्वपच—चाण्डाल डोमादि का विनाश होता है ॥23॥

---

1. शत्रु मु.। 2. श्रे मु.। 3. विदुः मु.। 4. यदा मु.। 5. ततो भयं समाख्याति मु.। 6. यदा दृश्यन्ते वै द्रुमाः मु.। 7. नीलवस्त्रो निहन्त्याशु शूद्रांश्च प्रभुनिन्नरान्। पशुपक्षिभयं चित्र विवर्णैः सर्वभयंकरः मु.।

मधुराः क्षीरवृक्षाश्च[1]श्वेतपुष्पफलाश्च ये ।
सौम्यायां दिशि यज्ञार्थं जानीयात् प्रतिपुद्गलाः ॥24॥

जो मधुर, क्षीर, श्वेत पुष्प और फलों से युक्त वृक्ष उत्तर दिशा में होते हैं, वे यज्ञ के लिए उत्पात के फल की सूचना देते हैं। अर्थात्, उत्तर दिशा में मधुर, श्वेत पुष्प और फलों से युक्त क्षीर वृक्ष ब्राह्मणों के लिए उत्पात की सूचना देते हैं ॥24॥

कषायमधुरास्तिक्ता उष्णवीर्यविलासिनः ।
रक्तपुष्पफलाः प्राच्यां सुदीर्घनृपक्षत्रयोः ॥25॥

कषाय, मधुर, तिक्त, उष्णवीर्य, विलासी, लाल पुष्प और फल वाले वृक्ष पूर्व दिशा में बलवान् राजा और क्षत्रियों के लिए प्रतिपुद्गल—उत्पातसूचक हैं ॥25॥

अम्लाः सलवणाः स्निग्धाः पीतपुष्पफलाश्च ये ।
[2]दक्षिण दिशि विज्ञेया वैश्यानां प्रतिपुद्गलाः ॥26॥

आम्ल, लवणयुक्त, स्निग्ध, पीत पुष्प और फल वाले वृक्ष दक्षिण दिशा में वैश्यों के लिए उत्पात सूचक हैं ॥26॥

कटुकण्टकिनो रूक्षाः कृष्णपुष्पफलाश्च ये ।
वारुण्यां दिशि वृक्षाः स्युः शूद्राणां प्रतिपुद्गलाः ॥27॥

कटु, काँटों वाले, रूक्ष, काले रंग के फूल-फल वाले वृक्ष पश्चिम दिशा में शूद्रों के लिए उत्पात सूचक हैं ॥27॥

[3]महान्तश्चतुरस्राश्च गाढाश्चापि विरोधिणः ।
वनमध्य स्थिताः सन्तः स्थावराः प्रतिपुद्गलाः ॥28॥

महान्, चौकोर, और विशेष रूप से गाढ़—मजबूत और वन के मध्य में स्थित वृक्ष स्थावरों—वहाँ के निवासियों के लिए उत्पात सूचक होते हैं ॥28॥

ह्रस्वाश्च तरवो येऽन्ये अन्ये जाता वनस्य च ।
अचिरोद्भवकारा ये यायिनां प्रतिपुद्गलाः ॥29॥

छोटे वृक्ष और जो अन्य वृक्ष वन के अन्त में उत्पन्न हुए हैं एवं शीघ्र ही उत्पन्न हुए पौधों जैसा जिनका आकार है अर्थात् जो छोटे-छोटे हैं, वे यायी—आक्रमण करने वालों के लिए उत्पात सूचक हैं ॥29॥

1. फलाश्च ये मु० । 2. दक्षिणा मु० । 3. महान्तश्चतुरस्राश्च स्थगाढाश्च वरोधिनः ।

ये विदिक्षु विमिश्राश्च [1]विकर्मस्था विजातिषु ।
[2]प्रतिपुद्गलाश्च येषां तेषामुत्पातजं फलम् ॥30॥

जो विदिशाओं में अलग-अलग हों तथा विजाति—भिन्न-भिन्न जाति के वृक्षों में विकर्मस्थ—जिनके कार्य पृथक्-पृथक् हों वे जनपद के लिए उत्पात सूचक होते हैं। प्रति पुद्गल का तात्पर्य उत्पात से होने वाले फल की सूचना देना है ॥30॥

श्वेतो रसो द्विजान् हन्ति रक्तः क्षत्रनृपान् वदेत् ।
पीतो वैश्यविनाशाय कृष्णः शूद्रनिषूदये ॥31॥

यदि वृक्षों से श्वेत रस का क्षरण हो तो द्विज—ब्राह्मणों का विनाश, लाल रस क्षरित हो तो क्षत्रिय और राजाओं का विनाश, पीला रस क्षरित हो तो वैश्यों का विनाश और कृष्ण—काला रस क्षरित हो तो शूद्रों का विनाश होता है ॥31॥

परचक्रं नृपभयं क्षुधाव्याधिधनक्षयम् ।
एवं लक्षणसंयुक्ताः स्रावाः कुर्युर्महद्भयम् ॥32॥

यदि श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण का मिश्रित रस क्षरित हो तो परशासन और नृपति का भय, क्षुधा, रोग, धन का नाश और महान् भय होता है ॥32॥

कीटदष्टस्य वृक्षस्य व्याधितस्य च यो रसः ।
विवर्णः स्रवते गन्धं न दोषाय स कल्पते ॥33॥

यदि कीड़ों द्वारा खाये गये रोगी वृक्ष का विकृत और दुर्गन्धित रस क्षरित होता है, तो उसका दोष नहीं माना जाता। अर्थात् रोगी वृक्ष के रस क्षरण का विचार नहीं किया जाता ॥33॥

वृद्धा द्रुमा [4]स्रवन्त्याशु मरणे पर्युपस्थिताः ।
ऊर्ध्वाः शुष्का भवन्त्यते तस्मात् तांल्लक्षयेद् बुधः ॥34॥

मरण के लिए उपस्थित—जर्जरित टूटकर गिरने वाले पुराने वृक्ष ही रस का क्षरण करते हैं। ऊपर की ओर से सूखे होते हैं। अतएव बुद्धिमान् व्यक्तियों को इनका लक्ष्य करना चाहिए ॥34॥

यथा वृद्धो नरः कश्चित् प्राप्य हेतुं विनश्यति ।
तथा वृद्धो द्रुमः कश्चित् प्राप्य हेतुं विनश्यति ॥35॥

---

1. विकर्मसु मु० । 2. पुद्गलाश्च तु ये येषां न तेषां प्रतिपुद्गलाः मु० । 3. राजा मु० ।
4. निद्रुत्याशु मु० ।

जैसे कोई वृद्ध पुरुष किसी निमित्त के मिलते ही मरण को प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार पुराना वृक्ष भी किसी निमित्त को प्राप्त होते ही विनाश को प्राप्त हो जाता है ॥35॥

इतरेतरयोगास्तु वृक्षादिवर्णनाश्रिताः ।
वृद्धाबलोग्रमूलाश्च चलच्छैयांश्च साधयेत् ॥36॥

वृद्ध पुरुष और पुराने वृक्ष का परस्पर में इतरेतर—अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। अतः पुराने वृक्ष के उत्पातों से वृद्ध का फल तथा नवीन युवा वृक्षों से युवक और शिशुओं का उत्पात निमित्तक फल ज्ञात करना चाहिए तथा उल्कापात आदि के द्वारा भी निमित्तों का परिज्ञान करना चाहिए ॥36॥

हसने रोदने नृत्ये देवतानां प्रसर्पणे ।
महद्भयं विजानीयात् [1]षण्मासाद्द्विगुणात्परम् ॥37॥

देवताओं के हँसने, रोने, नृत्य करने और चलने से छह महीने से लेकर एक वर्ष तक जनपद के लिए महान् भय अवगत करना चाहिए ॥37॥

चित्राश्चर्यसुलिंगानि निमीलन्ति वदन्ति वा ।
ज्वलन्ति च विगन्धीनि भयं राजवधोद्भवम् ॥38॥

विचित्र, आश्चर्य कारी चिह्न लुप्त हों या प्रकट हों और ठूँठ वृक्ष सहसा जलने लगें तो जनपद के लिए भय और राजा का मरण होता है ॥38॥

[2]तोयावहानि सहसा रुदन्ति च हसन्ति च ।
मार्जारवच्च वासन्ति तत्र विन्द्याद् महद्भयम् ॥39॥

तोयावहानि—नदियाँ सहसा रोती और हँसती हुई दिखलाई पड़ें तथा मार्जार—बिल्ली के समान गन्ध आती हो तो महान् भय समझना चाहिए ॥39॥

वादित्रशब्दाः श्रूयन्ते देशे यस्मिन्न मानुषैः ।
स देशो राजदण्डेन पीड्यते नात्र संशयः ॥40॥

जिस देश में मनुष्य बिना किसी के बजाये भी बाजे की आवाज सुनते हैं, वह देश राजदण्ड से पीड़ित होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥40॥

तोयावहानि[3] सर्वाणि वहन्ति रुधिरं यदा ।
षष्ठे मासे समुद्भूते सङ्ग्रामः शोणिताकुलः ॥41॥

जिस देश में नदियों में रक्त की-सी धारा प्रवाहित होती है, उस देश में छह

1. षण्मासाद्विगुणात् परम् । 2. तोयावहानि मु० । 3. तोयावहानि मु० ।

घटना के छठे महीने में संग्राम होता है और पृथ्वी जल से प्लावित हो जाती है ॥41॥

चिरस्थायीनि तोयानि [1]पूर्वं यान्ति पयःक्षयम् ।
गच्छन्ति वा प्रतिस्रोतः परचक्रागमस्तदा ॥42॥

चिरस्थायी नदियों का जल जब पूर्ण क्षय हो जाय—सूख जाय अथवा विपरीत धारा प्रवाहित होने लगे तो परशासन का आगमन होता है ॥42॥

वर्धन्ते चापि शीर्यन्ते चलन्ति वा तदाश्रयात् ।
सशोणितानि दृश्यन्ते यत्र तत्र महद्भयम् ॥43॥

जहाँ नदियाँ बढ़ती हों, विशीर्ण होती हों अथवा चलती हों और रक्त युक्त दिखलाई पड़ती हों, वहाँ महान् भय समझना चाहिए ॥43॥

शस्त्रकोषात् प्रधावन्ते नदन्ति विचरन्ति वा ।
यदा रुदन्ति दीप्यन्ते संग्रामस्तेषु निर्दिशेत् ॥44॥

जहाँ अस्त्र अपने कोश से बाहर निकलते हों, शब्द करते हों, विचरण करते हों, रोते हों और दीप्त—चमकते हों, वहाँ संग्राम की सूचना समझनी चाहिए ॥44॥

यानानि वृक्षवेश्मानि धूमायन्ति ज्वलन्ति वा ।
अकालजं फलं पुष्पं तत्र मुख्यो विनश्यति ॥45॥

जहाँ सवारी, वृक्ष और घर धूमायमान—धुआँ युक्त या जलते हुए दिखलाई पड़ें अथवा वृक्षों में अकाल में फल, पुष्प उत्पन्न हों, मुख्य—प्रधान का नाश होता है ॥45॥

भवने यदि श्रूयन्ते गीतवादित्रनिस्वनाः ।
यस्य तद्भवनं तस्य शारीरं जायते भयम् ॥46॥

जिसके घर में बिना किसी व्यक्ति के द्वारा गाये-बजाये जाने पर भी गीत, वादित्र का शब्द सुनाई पड़ता हो, उसके शारीरिक भय होता है ॥46॥

[2]पुष्पं पुष्पे निबध्येत फलेन च यदा फलम् ।
वितथं च तदा विन्द्यात् महज्जनपदक्षयम् ॥47॥

---

1. [illegible] मु० । 2. पुष्प पुष्प फले पुष्प फल वा [illegible] यदा । [illegible] [illegible] विन्द्यात्तथा जनपदे भयम् ॥ मु० ।

जब पुष्प में पुष्प निबद्ध हो अर्थात् पुष्प में पुष्प की-सी उत्पत्ति हो अथवा फल में फल निबद्ध हो अर्थात् फल में फल की उत्पत्ति हुई हो तो सर्वत्र वितण्डा-वाद का प्रचार एवं जनपद का महान् विनाश होता है ॥47॥

चतुष्पदानां सर्वेषां मनुजानां यदाऽम्बरे ।
श्रूयते व्याहृतं घोरं तदा मुख्यो विपद्यते ॥48॥

जब आकाश में समस्त पशुओं और मनुष्यों का व्यवहार किया गया घोर शब्द सुनाई पड़े तो मुखिया की मृत्यु होती है अथवा मुखिया विपत्ति को प्राप्त होता है ॥48॥

निर्घाते कम्पने भूमौ [1]शुष्कवृक्षप्ररोहणे ।
देशपीडां विजानीयान्मुख्यश्चात्र न जीवति ॥49॥

भूमि के अकारण निर्घातित और कम्पित होने तथा सूखे वृक्ष के पुनः हरे हो जाने से देश को पीड़ा समझनी चाहिए तथा वहाँ के मुखिया की मृत्यु होती है ॥49॥

[2]यदा भूधरशृंगाणि निपतन्ति महीतले ।
तदा राष्ट्रभयं विन्द्यात् भद्रबाहुवचो यथा ॥50॥

जब अकारण ही पर्वतों की चोटियाँ पृथ्वीतल पर आकर गिर जायँ, तब राष्ट्र भय समझना चाहिए, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥50॥

वल्मीकस्याशु जनने मनुजस्य निवेशने ।
अरण्यं विशतश्चैव तत्र विद्यान्महद् भयम् ॥51॥

मनुष्यों के निवास स्थान में चींटियाँ जल्दी ही अपना बिल बनावें और नगर से निकलकर जंगल में प्रवेश करें तो राष्ट्र के लिए महान् भय जानना चाहिए ॥51॥

महापिपीलिकावृन्दं सन्द्रकाभूत्यविप्लुतम् ।
तत्र तत्र च सर्वं तद्राष्ट्रभङ्गस्य चादिशेत् ॥52॥

जहाँ-जहाँ अत्यधिक चींटियाँ एकत्रित होकर झुण्ड-के-झुण्ड बनाकर भाग रही हों, वहाँ-वहाँ सर्वत्र राष्ट्र भंग का निर्देश समझना चाहिए ॥52॥

---

1. शुष्क मु० । 2. शिखराणि भूमि गच्छन्ति यदा पर्वतानां । निपतन्ति न भवानि तदा विन्द्यात् राष्ट्रभयम् ॥ मु० ।

प्रथमे मण्डले शुक्रो यदास्तं यात्युदेति च ।
मध्यमा सस्यनिष्पत्ति[1]र्मध्यमं वर्षमुच्यते ।।14।।

यदि प्रथम मण्डल में शुक्र अस्त हो या उदित हो—भरणी, कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिरा नक्षत्र में शुक्र अस्त हो या उदित हो तो उस वर्ष मध्यम वर्षा होती है और फसल भी मध्यम ही होती है ।।14।।

भोजान् कलिंगानंगांश्च काश्मीरान् दस्युमालवान् ।
यवनान् सौरसेनांश्च गोद्विजान् शबरान् वधेत् ।।15।।

भोज, कलिंग, अंग, काश्मीर, यवन, मालव, सौरसेन, गो, द्विज और शबरों का उक्त प्रकार के शुक्र के अस्त और उदय से वध होता है ।।15।।

पूर्वत: [2]शौरकालिंगान् मागधो जयते नृप: ।
[3]सुभिक्षं क्षेममारोग्यं मध्यदेशेषु [4]जायते ।।16।।

पूर्व में शौर और कलिंग को मागध नृप जीतता है तथा मध्य देश में सुवृष्टि, क्षेम और आरोग्य रहता है ।।16।।

यदा चान्ये तिरोहन्ति तत्रस्थभार्गवं ग्रहा: ।
[5]कुण्डानि अंगा वधय: क्षत्रिया: लम्बशाकुना: ।।17।।

[6]धार्मिका: शूरसेनाश्च, किराता मांससेवका: ।
यवना भिल्लदेशाश्च प्राचीनाश्चीनदेशजा: ।।18।।

यदि शुक्र को अन्य ग्रह आच्छादित करते हों तो विदर्भ और अंग देश के क्षत्रिय, लम्बादि पक्षियों का वध होता है। धार्मिक शूरसेन देशवासी, मांसाहारी, किरात, यवन, भिल्ल और चीन देशवासियों को शुक्र की पीड़ा होने से पीड़ित होना पड़ता है ।।17-18।।

द्वितीयमण्डले शुक्रो यदास्तं यात्युदेति वा ।
शारदस्योपघाताय विषमां वृष्टिमादिशेत् ।।19।।

यदि द्वितीय मण्डल में शुक्र अस्त हो या उदित हो तो शरद् ऋतु में होनेवाली फसल का उपघात होता है और वर्षा हीनाधिक होती है ।।19।।

अहिच्छत्रं च कच्छं च सूर्यावर्तं च पीडयेत् ।
[7]ततोत्पातनिवासानां देशानां क्षयमादिशेत् ।।20।।

1. मध्यमा सस्यं सुगमम् मु० । 2. नरं मु० । 3. सुवृष्टि मु० । 4. विनिर्दिशेत् मु० । 5. कुण्डा निजसा मु० । 6. धर्मिण शूरसेनाश्च मत्स्यकोश अनेकश: । किराता बहिशश्चैव [illegible] शुक्रपीडिते मु० । 7. यह पंक्ति मुद्रित प्रति में नहीं है ।

अहिच्छत्र, कच्छ और सूर्यावर्त को पीड़ा होती है। उत्पात वाले देशों का विनाश होता है ॥20॥

यदा वाऽन्ये तिरोहन्ति तत्रस्थं भार्गवं ग्रहाः।
निषादाः [1]पाण्डवा म्लेच्छाः संकुलस्थाश्च साधवः ॥21॥

[2]कौण्डजाः पुरुषादाश्च शिल्पिनो बर्बराः शकाः।
बाह्लीका यवनाश्चैव मण्डूकाः केकरास्तथा ॥22॥

पाञ्चालाः कुरवश्चैव पीड्यन्ते [3]सयुगन्धराः।
एकमण्डलसंयुक्ते भार्गवे पीडिते फलम् ॥23॥

यदि द्वितीय मण्डल स्थित शुक्र को अन्य ग्रह आच्छादित करें तो निषाद, पाण्डव, म्लेच्छ, साधु, व्यापारी, कौण्डेय, पुरुषार्थी, शिल्पी, बर्बर, शक, बाह्लीक, यवन, मण्डूक, केकर, पांचाल, कौरव और गान्धार आदि को पीड़ा होती है। यह एक मण्डल में स्थित शुक्र के पीड़न का फल है ॥21-23॥

तृतीये मण्डले शुक्रो यदास्तं यात्युदेति वा।
तदा धान्यं सनिचयं पीड्यन्ते [4]व्यूहकेतवः ॥24॥

वाटधानाः कुनाटाश्च कालकूटश्च पर्वतः।
ऋषयः कुरुपाञ्चालाश्चातुर्वर्णश्च पीड्यते ॥25॥

वाणिजश्चैव [5]कालज्ञः पण्या [6]वासास्तथाऽश्मकाः।
अवन्तीश्चापरान्ताश्च सपल्याः सचराचराः ॥26॥

पीड्यन्ते [7]भयेनाथ क्षुधारोगेण चार्दिताः।
[8]महान्तश्शबराश्चैव पारसीकास्सयावनाः ॥27॥

यदि तृतीय मण्डल में शुक्र उदय या अस्त को प्राप्त हो तो धान्य और उसका समूह विनाश को प्राप्त होता है। मूर्ख और धूर्त पीड़ित होते हैं। वाटधान, कुनाट, कालकूट पर्वत, ऋषि, कुरु, पांचाल और चातुर्वर्ण को पीड़ा होती है। व्यापारी, कुलीन, ज्योतिषी, दुकानदार, वनवासी-ऋषि-मुनि, दक्षिणी प्रदेश, अवन्तिनिवासी, अपरान्तक, गोमांस भक्षी शबरादि, पारसीक, यवनादिक भयभीत और शत्रु के द्वारा पीड़ित होते हैं तथा क्षुधा की पीड़ा भी उठानी पड़ती है। शुक्र के स्नेह, संस्थान और वर्ण के द्वारा नृपपीडन का भी विचार करना चाहिए ॥24-27॥

---

1. पाण्डिका मु०। 2. कौण्डिका मु०। 3. शुभगन्धराः। मु०। 4. मूढकितवः मु०। 5. कुलजाः मु०। 6. वनवासी तथा मु०। 7. भयशस्त्राग्निना क्षुधारोगेण चार्दिताः मु०। 8. महान्तश्शबराश्चैव विचार्य नृपपीडनम्॥ मु०।

चतुर्थे मण्डले शुक्रो कुर्यादस्तमनोदयम् ।
तदा सस्यानि जायन्ते महामेघाः सुभिक्षदाः ॥28॥
पुण्यशीलो जनो राजा [1]प्रजानां मधुरोहितः ।
बहुधान्यां महीं विद्यादुत्तमं देववर्षणम् ॥29॥
[2]अन्तवश्चावन्तश्च शूलकाः कास्यपास्तथा ।
बाह्लो [3]वृद्धोऽर्थवन्तश्च पीड्यन्ते सर्वपास्तथा ॥30॥
यदा चान्ये ग्रहा यान्ति [4]रौरवा म्लेच्छसंकुलाः ।
टंकणाश्च पुलिन्दाश्च किराताः [5]सौरकर्णजाः ॥31॥
पीड्यन्ते पूर्ववत्सर्वे दुर्भिक्षेण भयेन च ।
ऐक्ष्वाको म्रियते राजा शेषाणां क्षेममादिशेत् ॥32॥

यदि चतुर्थ मण्डल में शुक्र का उदय या अस्त हो तो वर्षा अच्छी होती है, मेघ जल की अधिक वर्षा करते हैं, सुभिक्ष और फसल उत्तम उत्पन्न होती है। राजा, प्रजा और पुरोहित धर्म का आचरण करने वाले होते हैं। पृथ्वी में अनाज खूब उत्पन्न होता है तथा वर्षा भी उत्तम होती है। अन्तधा, अवन्ती, शूलिका, कश्यपिका और सर्वत्र पीड़ा होती है। यदि शुक्र अन्य ग्रहों द्वारा आच्छादित हो तो म्लेच्छ, शिल्पी, पुलिन्द, किरात, सौरकर्णज और पूर्ववत् अन्य सभी भय और दुर्भिक्ष से पीड़ित होते हैं। इक्ष्वाकुवंशी राजा की मृत्यु होती है, किन्तु अवशेष सभी राजाओं की क्षेम-कुशल बनी रहती है ॥28-32॥

यदा [6]तु पञ्चमे शुक्रः कुर्यादस्तमनोदयौ ।
अनावृष्टिभयं घोरं दुर्भिक्षं जनयेत् तदा ॥33॥
सर्वं श्वेतं तदा धान्यं कर्तव्यं सिद्धिमिच्छता ।
त्याज्या देशास्तथा चेमे निर्ग्रन्थैः साधुवृत्तिभिः ॥34॥
स्त्रीराज्य ताम्रकर्णाश्च कर्णाटाः कमनोत्कटाः ।
बाह्लीकाश्च विदर्भाश्च मत्स्यकाशीसतस्कराः ॥35॥
स्फीताश्च रामदेशाश्च सूरसेनास्तथैव च ।
जायन्ते वत्सराजाश्च परं यदि [7]तथा हताः ॥36॥

---

1. प्रजानां च पुरोहिताः मु० । 2. अन्ध्राश्चावन्तश्च पुलिन्दाः श्यामकास्तथा । मु० । 3. विदर्भश्च ... मु० । 4. गौरिका मु० । 5. सौराष्ट्रकणिकाः मु० । 6. च मु० । 7. तदा हताः मु० ।

क्षुधामरणरोगेभ्यश्चतुर्भागे भविष्यति।
एषु देशेषु चान्येषु भद्रबाहुवचो यथा ॥37॥

यदि पंचम मण्डल में शुक्र का उदय या अस्त हो तो अनावृष्टि, दुर्भिक्ष और भय उत्पन्न करता है। धन-धान्य की वृद्धि चाहने वालों को सभी श्वेत पदार्थ और अनाज खरीद लेना चाहिए और निर्ग्रन्थ साधुओं को इन देशों का त्याग कर देना चाहिए। स्त्री राज्य, ताम्रकर्ण, कर्णाटक, आसाम, बाह्लीक, विदर्भ, मत्स्य, काशी, स्फीत देश, रामदेश, सुरसेन, वत्सराज इत्यादि देशों में क्षुधा, मरण, रोग, दुर्भिक्ष आदि का कष्ट होगा, इस प्रकार का भद्रबाहु स्वामी का वचन है॥33-37॥

यदा चान्येऽभिगच्छन्ति तत्रस्थं भार्गवं ग्रहाः।
[1]सौराष्ट्राः सिन्धुसौवीराः मन्तिसाराश्च साधवः ॥38॥
[2]अनार्याः कच्छयोधेयाः सांदृष्टार्जुननायकाः।
पीड्यन्ते तेषु देशेषु [3]म्लेच्छो वै म्रियते नृपः ॥39॥

यदि पंचम मंडल में शुक्र अन्य ग्रहों के द्वारा अभिभूत हो तो सौराष्ट्र, सिन्धु देश, सौवीर देश, मन्तिसार देश, साधुजन, अनार्य (या आगर्त) देश, कच्छ देश, सन्धि के योग्य हैं। पूर्व दिशा के स्वामी भी सन्धि करने के योग्य हैं। इन देशों में पीड़ा होती है तथा म्लेच्छ नृप का मरण होता है॥38-39॥

यदा तु मण्डले षष्ठे कुर्यादस्तमथोदयम्।
शुक्रस्तदा प्रकुर्वीत भयानि तत्र क्षुद्भयम् ॥40॥
[4]रसाः पाञ्चालबाह्लीका गन्धाराश्च [5]गवोलकाः।
विदर्भाश्च दशार्णाश्च पीड्यन्ते नात्र संशयः ॥41॥
द्विगुणं धान्यसर्घेण नोत्तरं वर्षयेत् तदा।
क्षतैः शस्त्रं च व्याधिं च मूर्च्छयेत् तादृशेन यत् ॥42॥

यदि शुक्र छठे मंडल में अस्त या उदय को प्राप्त हो तो साधारण भयों को उत्पन्न करता है तथा यहाँ क्षुधा का भय होता है। वत्स, पांचाल, बाह्लीक, गान्धार, गवोलक, विदर्भ, दशार्ण निस्सन्देह पीड़ा को प्राप्त होते हैं। अनाज का भाव दूना महँगा हो जाता है तथा उत्तरार्ध चातुर्मास में वर्षा भी नहीं होती है। शस्त्र, घात और मूर्च्छा इस प्रकार के शुक्र में होती है॥40-42॥

---

1. सुराष्ट्राः मु०। 2. अनर्तकच्छयौधेयाः साम्बष्ठाश्चार्जुना जनाः। मु०। 3. म्लेच्छना म्रियते ग०। 4. वत्साः। 5. गर्भलिका. मु०।

[1]यदा चान्येऽभिगच्छन्ति तत्रस्थं भार्गवं ग्रहाः ।
हिरण्यौषधयश्चैव शौण्डिका दूतलेखकाः ॥43॥
काश्मीरा बर्बराः पौण्ड्रा भृगुकच्छा अनुप्रजाः ।
पीड्यन्तेऽवन्तिमाश्चैव म्रियन्ते च नृपास्तथा ॥44॥

यदि अन्य ग्रह इस छठे मंडल में स्थित शुक्र के साथ संयोग करें तो हिरण्य, औषधि, शौण्डिक, दूतलेखक, काश्मीर, बर्बर, पौण्ड्र, भड़ौच, अवन्तिक पीड़ित होते हैं और नृप का मरण होता है ॥43-44॥

नागवीथीति विज्ञेया भरणी कृत्तिकाऽश्विनी ।
[2]रोहिण्यार्द्रा मृगशिरगजवीथीति निर्दिशेत् ॥45॥
ऐरावणपथं विन्द्यात् पुष्याऽऽश्लेषा पुनर्वसुः ।
फाल्गुनौ च मघा चैव वृषवीथीति संज्ञिता ॥46॥

गोवीथी रेवती चैव द्वे च प्रोष्ठपदे तथा ।
जरद्गवपथं [3]विन्द्याच्छ्रवणे वसुवारुणे ॥47॥
अजवीथी विशाखा च चित्रा स्वातिः करस्तथा ।
ज्येष्ठा मूलाऽनुराधासु मृगवीथीति संज्ञिता ॥48॥
अभिजिद् द्वे तथाषाढे वैश्वानरपथः स्मृतः ।
शुक्रस्याग्रगताद्वर्णात् संस्थानाश्च फलं वदेत् ॥49॥

अश्विनी, भरणी और कृत्तिका की संज्ञा नागवीथि; रोहिणी, मृगशिरा और आर्द्रा की गजवीथि; पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा की संज्ञा ऐरावतवीथि; पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी और मघा की संज्ञा वृषवीथि; पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती की गोवीथि; श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा की जरद्गववीथि; हस्त, विशाखा और चित्रा की अजवीथि; ज्येष्ठा, मूल और अनुराधा की मृगवीथि एवं पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा और स्वाति या अभिजित् की वैश्वानरवीथि है। शुक्र के अग्रगत वर्ण और आकार से फल का निरूपण करना चाहिए ॥45-49॥

तज्जातप्रतिरूपेण जघन्योत्तममध्यमम् ।
स्नेहादिषु शुभं ब्रूयाद् रूक्षादिषु [4]न संशयः ॥50॥

तीन-तीन नक्षत्रों की एक-एक वीथि बतायी गयी है। इन नक्षत्रों में शुक्र के

---

1. यदाऽन्येऽभि मु० । 2. नक्षत्राणां रोहिणी चार्द्रा, गजवीथीति निर्दिशेत् । मु० । 3. चक्षुश्रवण वसुवारुणं म० । 4. अथ वदेत् मु० ।

गमन करने से जघन्य, उत्तम और मध्यम फल होता है। अतएव इन नक्षत्रों से निस्सन्देह शुभाशुभ फल का प्रतिपादन करना चाहिए ॥50॥

तिष्यो ज्येष्ठा तथाऽऽश्लेषा [1]हरिणो मूलमेव च।
हस्तं चित्रा मघाऽषाढ़े शुक्रो दक्षिणतो व्रजेत् ॥51॥

पुष्य, आश्लेषा, ज्येष्ठा, मृगशिरा, मूल, हस्त, चित्रा, मघा, पूर्वाषाढ़ा इन नक्षत्रों में शुक्र दक्षिण से गमन करता है ॥51॥

शुष्यन्ते तोयधान्यानि राजानः क्षत्रियास्तथा।
उग्रभोगाश्च पीड्यन्ते धननाशो [2]विनायकः ॥52॥

दक्षिण मार्ग से जब शुक्र गमन करता है तो जल और अनाज के पौधे सूख जाते हैं तथा राजा, क्षत्रिय और महाजन पीड़ित होते हैं एवं धन का नाश होता है ॥52॥

वैश्वानरपथो नाम्ना यदा हेमन्तग्रीष्मयोः।
मारुताऽग्निभयं [3]कुर्यात् [4]खारीं च चतुःषष्टिकाम् ॥53॥

जब हेमन्त और ग्रीष्म ऋतु में वैश्वानरवीथि से शुक्र गमन करता है तो वायु और अग्नि भय, मृत्यु आदि फल घटित होते हैं तथा एक आढक प्रमाण जल बरसाता है ॥53॥

एतेषामेव मध्येन यदा गच्छति भार्गवः।
विषमं [5]वर्षमाख्याति [6]स्थले बीजानि वापयेत् ॥54॥

जब शुक्र इनके मध्य से गमन करता है तो सभी बातें विषम हो जाती हैं अर्थात् वर्षा निकृष्ट होता है। उस वर्ष बीज स्थल में बोना चाहिए ॥54॥

खारी द्वात्रिंशिका ज्ञेया मृगवीथीति संज्ञिता।
[7]व्याधयः त्रिषु विज्ञेयास्तथा[8] चरति भार्गवे ॥55॥

जब शुक्र मृगवीथि में विचरण करता है तब धान्य 32 खारी प्रमाण उत्पन्न होते हैं और दैहिक, दैविक तथा भौतिक तीनों प्रकार की व्याधियाँ अवगत करनी चाहिए ॥55॥

एतेषां तु यदा शुक्रो व्रजत्युत्तरस्तथा।
विषमं वर्षमाख्याति [9]निम्ने बीजानि वापयेत् ॥56॥

---

1. मध्यानां मु०। 2. विनाशक मु०। 3. मृत्यु मु०। 4. खारी मु०। 5. सर्व मु०। 6. बीजानि तु स्थले वपेत् मु०। 7. आश्वयुज मु०। 8. यदा मु०। 9. भूमौ निम्ने वांछता मु०।

जब शुक्र उत्तर की ओर जाता है तो सभी वस्तुओं को विषम समझना चाहिए तथा निम्न स्थान में बीज बोना चाहिए ॥56॥

कोद्रवाणां च बीजानां खारी षोडशिका वदेत्।
अजवीथीति विज्ञेया पुनरेषा न संशय: ॥57॥

यदि शुक्र अजवीथि में गमन करे तो निस्सन्देह कोद्रव बीज सोलह खारी प्रमाण उत्पन्न होते हैं ॥57॥

कृत्तिका रोहिणी चार्द्रा मघा मैत्रं पुनर्वसु:।
स्वातिस्तथा विशाखासु फाल्गुन्योरुभयोस्तथा ॥58॥

दक्षिणेन यदा शुक्रो व्रजत्येतैर्यदा समम्।
मध्यमं वर्षमाख्याति समे बीजानि वापयेत् ॥59॥

[1]निष्पद्यन्ते च शस्यानि मध्यमेनापि वारिणा।
जरद्गवपथश्चैव [2]खारी द्वात्रिंशिकां भवेत् ॥60॥

कृत्तिका, रोहिणी, आर्द्रा, मघा, अनुराधा, पुनर्वसु, स्वाति, विशाखा, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी इन नक्षत्रों के साथ जब शुक्र दक्षिण की ओर गमन करता है, तो मध्यम वर्षा होता है तथा समभूमि में बीज बोने से अच्छी फसल होती है। कम वर्षा होने पर भी फसल उत्तम होती है तथा जरद्गववीथि से शुक्र का गमन होने पर द्वादश खारी प्रमाण धान्य की उत्पत्ति होती है ॥58-60॥

एतेषामेव मध्येन यदा गच्छति भार्गव:।
तदापि मध्यमं वर्षं मौषत् पूर्वा विशिष्यते ॥61॥

उपर्युक्त नक्षत्रों के मध्य से जब शुक्र गमन करे तो मध्यम वर्षा होता है तथा पूर्वोक्त वर्षा की अपेक्षा कुछ उत्तम रहता है ॥61॥

सर्वं निष्पद्यते धान्यं न व्याधिर्नापि चेतय:।
खारी तदाऽष्टिका ज्ञेया [3]गोवीथीति च संज्ञिता ॥62॥

सभी प्रकार के धान्य उत्पन्न होते हैं, किसी भी प्रकार की महामारी और व्याधियाँ नहीं होतीं। इस गोवीथि में शुक्र के गमन से आठ खारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है ॥62॥

एतेषामेव यदा शुक्रो व्रजत्युत्तरतस्तदा।
मध्यमं सर्वमाचष्टे नेतयो नापि व्याधय: ॥63॥

1. निष्पद्यते तथा शस्यं मन्देनाप्यथ वारिणा मु०। 2. खारी द्वादशिका मु०। 3. गा वीथी मान्यसंज्ञिता।

जब उपर्युक्त नक्षत्रों में शुक्र उत्तर की ओर से गमन करता है तो मध्यम वर्षा होती है तथा महामारी और व्याधियों का अभाव होता है ॥63॥

निष्पत्तिः सर्वधान्यानां भयं चात्र न मूर्च्छति।
खारीचतुष्का विज्ञेया वृषवीथीति संज्ञिता ॥64॥

जब वृषवीथि में शुक्र गमन करता है तो सभी प्रकार के धान्यों की उत्पत्ति होती है, भय और आतंक का अभाव रहता है तथा चार खारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है ॥65॥

अभिजिच्छ्रवणं चापि धनिष्ठावारुणे तथा।
रेवती भरणी चैव तथा भाद्रपदाऽश्विनी ॥65॥

निचयास्तदा विपद्यन्ते खारी विन्द्याच्च पञ्चिका।
ऐरावणपथो ज्ञेयोऽश्रेष्ठ एव प्रकीर्तितः ॥66॥

अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, भरणी, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और अश्विनी इन नक्षत्रों में शुक्र का गमन करना ऐरावणपथ माना जाता है। इस मार्ग में गमन करने से समुदायों की विपत्ति होती है और पाँच खारी प्रमाण उत्पन्न होता है ॥65-66॥

[1]एषां यदा दक्षिणतो भार्गवः प्रतिपद्यते।
बहूदकं तदा विन्द्यात् [2]महाधान्यानि वापयेत् ॥67॥

उपर्युक्त नक्षत्रों में यदि शुक्र दक्षिण मार्ग से गमन करे तो अत्यधिक वर्षा होती है तथा स्थल में बीज बोने पर भी धान्य की उत्पत्ति होती है ॥67॥

जलजानि तु शोभन्ते ये च जीवन्ति वारिणा।
खारी तदाष्टिका ज्ञेया गजवीथीति संज्ञिता ॥68॥

जलचर जन्तु शोभित और आनन्दित होते हैं तथा इसमें आठ खारी प्रमाण धान्य और इसकी संज्ञा गजवीथि है ॥68॥

एतेषामेव तु मध्येन यदा याति तु भार्गवः।
[3]स्थलेष्वप्तबीजानि जायन्ते निरुपद्रवम् ॥69॥

जब शुक्र उपर्युक्त नक्षत्रों के मध्य से गमन करता है तो स्थल में बोये गये बीज भी निर्विघ्न होते हैं ॥69॥

---

1. एतेषां मु०। 2. महाधान्यं स्थले वपेत् मु०। 3. स्थलेष्वप्तानि बीजानि जायन्ते निरुपद्रवम् मु०।

निचयाश्च विनश्यन्ति खारी द्वादशिका भवेत् ।
दानशीला नरा[1] हृष्टा नागवीथीति संज्ञिता ॥70॥

नागवीथि में शुक्र के गमन करने से समुदायों की हानि होती है तथा द्वादश खारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है और मनुष्य दानशील होते हैं ॥70॥

[2]एवमेव यदा शुक्रो व्रजत्युत्तरतस्तदा ।
स्थले धान्यानि जायन्ते शोभन्ते जलजानि वा ॥71॥

जब शुक्र उपर्युक्त नक्षत्रों में उत्तर की ओर से गमन करता है तो स्थल में भी फसल उत्पन्न होती है और जलज जीव शोभित होते हैं ॥71॥

सर्वोत्तरा नागवीथी सर्वदक्षिणतोऽग्निजा ।
गोवीथी मध्यमा ज्ञेया मार्गाश्चैवं त्रयः स्मृताः ॥72॥

नागवीथि सबसे उत्तर, वैश्वानर वीथि दक्षिण और गोवीथि मध्यमा होती है, इस प्रकार तीन प्रकार के मार्ग बतलाये गये हैं ॥72॥

उत्तरेणोत्तरं विद्यान्मध्यमे मध्यमं फलम् ।
दक्षिणे तु जघन्यं स्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥73॥

उत्तरवीथि में गमन करने पर उत्तम फल, मध्यवीथि में गमन करने पर मध्यम फल और दक्षिण में गमन करने पर जघन्य फल होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥73॥

यत्रोदितश्च विचरेन्नक्षत्रं भार्गवस्तथा ।
नृपं पुरं धनं मुख्यं पशुं हन्याद् विलम्बकः ॥74॥

निम्न प्रकार प्रतिपादित रविवारादि क्रूर वारों में उक्त नक्षत्रों में जब शुक्र गमन करता है तो राजा, नगर, धान्य, धन और मुख्य पशुओं का अविलम्ब नाश होता है अर्थात् श्रेष्ठ वारों में उत्तम फल और क्रूर वारों में गमन करने पर निकृष्ट फल प्राप्त होता है ॥74॥

आदित्ये विचरेद् रोगं मार्गेऽतुल्यास्रयं भयम् ।
गर्भोपघातं कुरुते ज्वलनेनाविलम्बितम् ॥75॥
[3]ईतिव्याधिभयं चौरान् कुरुतेऽन्तःप्रकोपनम् ।
प्रविशन् भार्गवः सूर्ये जिह्मे नाथ विलम्बिना ॥76॥

---

1. हृष्टा मु० । 2. प्रवासन मु० । 3. ईतिव्याधि-इत्यादि यह पंक्ति हस्तलिखित प्रति में अधिक मिलती है ।

शुक्र के सूर्य में विचरण करने पर रोग, अत्यधिक भय, शीघ्र ही अग्नि के द्वारा गर्भोपघात आदि फल घटित होते हैं, शुक्र के सूर्य में प्रवेश करने पर व्याधि, भय, दारुण प्रकोप आदि फल होते हैं ॥75-76॥

प्रथमे मण्डले शुक्रो विलम्बी डमरायते।
पूर्वापरा दिशो हन्यात् पृष्ठे तेन विलम्बिना ॥77॥

यदि प्रथम मण्डल में शुक्र लम्बायमान होकर अधिक समय तक रहे तो पूर्व और पश्चिम दिशा में घात करता है ॥77॥

द्वितीयमण्डले शुक्रश्चिरगो मण्डलेरितः।
हन्याद्देशान् धनं तोयं सकलेन विलम्बिना ॥78॥

यदि द्वितीय मण्डल में शुक्र सूर्य से प्रेरित होकर अधिक समय तक रहे तो देश के धन, जल एवं धान्य का विनाश करता है ॥78॥

तृतीये चिरगो व्याधिं मृत्युं सृजति भार्गवः।
चलितेन विलम्बेन मण्डलोक्ताश्च या दिशः ॥79॥

यदि तृतीय मण्डल में शुक्र अधिक समय तक विचरण करे तो व्याधि और मृत्यु मण्डल की दिशा होती है अर्थात् तृतीय मण्डल की जिस दिशा में अधिक समय तक शुक्र गमन करता है उस दिशा में व्याधि और मृत्यु फल घटित होते हैं ॥79॥

चतुर्थे विचरन् शुक्रो [1]शयी हन्यात् सुयानकान्।
शस्यशेषं च सृजते निन्दितेन विलम्बिना ॥80॥

चतुर्थ मण्डल में शयनावस्थागत शुक्र के रहने से अच्छे वाहनों का विनाश होता है तथा निन्दित विलम्बी शुक्र धान्य का विनाश करता है ॥80॥

पञ्चमे विचरन् शुक्रो दुर्भिक्षं जनयेत् तदा।
[2]हन्याच्च मण्डलं देशं क्षीणेनाथ विलम्बिना ॥81॥

क्षीण और विलम्बी शुक्र यदि पंचम मण्डल में विचरण करे तो दुर्भिक्ष उत्पन्न होता है तथा उस मण्डल और देश का विनाश होता है ॥81॥

यदा तु मण्डले षष्ठे भार्गवश्चिरगो भवेत्।
तदा तं मण्डलं देशं हन्ति लम्बेन पाशिना ॥82॥

जब षष्ठ मण्डल में शुक्र अधिक समय तक गमन करता है तो लम्बायमान

---

1. सर्वा मु०। 2. हन्याद्तं मु०।

पाश के द्वारा उस मण्डल और देश का विनाश करता है ॥82॥

हीने चारे जनपदानतिरिक्ते नृपं वधेत्।
समे तु समतां विन्द्याद्विषमे विषमं वदेत्॥83॥

हीनचार—हीन गतिवाला शुक्र जनपद का विनाश, अतिरिक्त—अधिक गतिवाला शुक्र नृप का वध, समगतिवाला शुक्र समता और विषमगति वाला शुक्र विषमता करता है। अर्थात् शुक्र अपनी गति के अनुसार शुभाशुभ फल होता है ॥83॥

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रां [1]मैत्रमित्रं तथैव च।
वर्षासु दक्षिणाद्यासु यदा चरति भार्गवः॥84॥
व्याधिश्चेतिश्च दुर्वृष्टिस्तदा धान्यं विनाशयेत्।
महार्घं जनमारिश्च जायते नात्र संशयः॥85॥

कृत्तिका, रोहिणी, चित्रा, अनुराधा, विशाखा, इन नक्षत्रों में, दक्षिणादि दिशाओं में, वर्षाकाल में जब शुक्र गमन करता है, तब निम्न फल घटित होते हैं। उक्त प्रकार के शुक्र में व्याधि, ईति, महामारी, अनावृष्टि या अतिवृष्टि, महँगाई, जनमारी एवं धान्य का नाश निस्सन्देह होता है। तात्पर्य यह है कि उक्त नक्षत्रों में जब शुक्र शीघ्र गति से गमन करता है या अधिक मन्दगति से गमन करता है, तब उपर्युक्त अशुभ फल घटता है ॥84-85॥

एतेषामेव मध्येन मध्यमं फलमादिशेत्।
उत्तरेणोत्तरं विन्द्यात् सुभिक्षं क्षेममेव च॥86॥

जब उपर्युक्त नक्षत्रों में शुक्र मध्यम गति से गमन करता है, तो मध्यम फल घटता है। उत्तर दिशा में शुक्र के गमन करने से सुभिक्ष और कल्याण होता है ॥86॥

मघायां च विशाखायां वर्षासु मध्यमस्थितः।
तदा सम्पद्यते सस्यं समर्घं च सुखं शिवम्॥87॥

वर्षाकाल में जब शुक्र मघा और विशाखा में मध्यम गति से स्थित रहता है तो धान्य की खूब उत्पत्ति होने के साथ वस्तुओं के भाव में समता, सुख और कल्याण होता है ॥87॥

पुनर्वसुमाषाढां च याति मध्येन भार्गवः।
[2]तदा सुवृष्टिञ्च विन्द्यात् व्याधिश्च समुदीर्यते॥88॥

1. मैत्रमैन्द्रं मु०। 2. यह पंक्ति हस्तलिखित प्रति में नहीं है।

यदि पुनर्वसु और पूर्वाषाढ़ा में शुक्र मध्यम गति से गमन करे तो व्याधि और वर्षा सर्वत्र होती है ॥88॥

आषाढां श्रवणं चैव यदि मध्येन गच्छति।
कुमारांश्चैव पीड्येताऽनार्यश्चान्त्यवासिनः ॥89॥

उत्तराषाढ़ा और श्रवण में जब शुक्र मध्यम गति से गमन करता है तो कुमार, अनार्य और अन्त्यजों को पीड़ा होती है ॥89॥

[1]प्रजापत्यमाषाढां च यदा मध्येन गच्छति।
तदा व्याधिश्च चौराश्च पीड्यन्ते वणिजस्तथा ॥90॥

रोहिणी और उत्तराषाढ़ा में जब शुक्र मध्यम गति से गमन करता है तो व्यापारी, रोगी और चोरों को पीड़ा होती है ॥90॥

चित्रामैन्द्र विशाखां च याम्यमार्द्रां च रेवतीम्।
मैत्रं भद्रपदां चैव याति वर्षति भार्गवः ॥91॥

चित्रा, विशाखा, भरणी, आर्द्रा, रेवती, अनुराधा और पूर्वभाद्रपद में जब शुक्र गमन करता है तो वर्षा होती है ॥91॥

फल्गुन्यथ भरण्यां च चित्रवर्णस्तु भार्गवः।
तदा तु तिष्ठेद् गच्छेद् तु[2] वक्रं भाद्रपदं जलम् ॥92॥

जब विचित्र वर्ण का शुक्र पूर्वाफाल्गुनी और भरणी में गमन करता है या स्थित रहता है तो भाद्रपद मास में निश्चय से वर्षा होती है ॥92॥

प्रत्यूषे पूर्वतः शुक्रः पृष्ठतश्च बृहस्पतिः।
यदाऽन्योऽन्यं [3]न पश्येत् तदा चक्रं [4]परिवर्तते ॥93॥

धर्मार्थकामा लुप्यन्ते सम्भ्रमो वर्णसंकरः।
नृपाणां च समुद्योगो यतः शुक्रस्ततो जयः ॥94॥

अनृष्टिश्च भयं घोरं दुर्भिक्षं च तदा भवेत्।
आढकेन तु धान्यस्य प्रियो भवति ग्राहकः ॥95॥

प्रातःकाल में पूर्व में शुक्र हो और उसके पीछे बृहस्पति हो और परस्पर में एक-दूसरे को न देखते हों तो शासनचक्र में परिवर्तन होता है; धर्म, अर्थ, काम लुप्त हो जाते हैं, वर्णसंकरों में आकुलता व्याप्त हो जाती है और राजाओं की

1. प्रा० मु० । 2. वा ध्रुव भाद्रपदं जलम् मु० । 3. स मु० । 4. प्रवर्तते मु० ।

उद्योग में प्रवृत्ति होती है। क्योंकि जिस ओर शुक्र रहता है, उसी ओर जय होती है। तात्पर्य यह है कि जो नृप शुक्र के सम्मुख रहता है, उसे विजय लाभ होता है। अनावृष्टि, घोर दुर्भिक्ष तथा एक आढ़क प्रमाण जल की वर्षा होने से धान्य ग्राहकों के लिए प्रिय हो जाते हैं अर्थात् अनाज का भाव महँगा होता है ॥93-95॥

यदा च पृष्ठतः शुक्रः पुरस्ताच्च बृहस्पतिः।
यदा लोकयतेऽन्योन्यं तदेव हि फलं तदा ॥96॥

जब शुक्र पीछे हो और बृहस्पति आगे हो और परस्पर दृष्टि भी हो तो भी उपर्युक्त फल की प्राप्ति होती है ॥96॥

कृत्तिकायां यदा शुक्रः विकृष्य [1]प्रतिपद्यते।
ऐरावणपथे यद्वत् तद्वद् ब्रूयात् फलं तदा ॥97॥

यदि शुक्र कृत्तिका नक्षत्र में खिंचा हुआ-सा दिखलायी पड़े तो जो फलादेश शुक्र का ऐरावणवीथि में शुक्र के गमन करने का है, वही यहाँ पर भी समझना चाहिए ॥97॥

रोहिणीशकटं शुक्रो यदा समभिरोहति।
चक्रारूढाः प्रजा ज्ञेया महद्भयं विनिर्दिशेत् ॥98॥
पाण्ड्यकेरलचोलाश्च [2]चेद्याश्च [3]करनाटकाः।
[4]चेरा विदर्भकाश्चैव पीड्यन्ते तादृशेन यत् ॥99॥

यदि शुक्र शकटाकार रोहिणी में आरोहण करे तो प्रजा शासन में आरूढ़ रहती है और महान् भय होता है। पाण्ड्य, केरल, चोल, कर्नाटक, चेदि, चेर और विदर्भ आदि प्रदेश पीड़ा को प्राप्त होते हैं ॥98-99॥

प्रदक्षिणं यदा याति तदा हिंसति स प्रजाः ॥
उपघातं बहुविधं वा शुक्रः कुरुते भुवि ॥100॥

जब शुक्र दक्षिण की ओर गमन करता है तो प्रजा का विनाश एवं पृथ्वी पर नाना प्रकार के उपद्रव, उत्पात आदि करता है ॥100॥

संव्यानमुपसेवानो [5]भवेयं सोमशर्मणः।
सोमं च सोमजं चैव सोमपार्श्वं च हिंसति ॥101॥

---

1. प्रतिदृश्यते मु०। 2. चेदिकाश्च मु०। 3. कर्णाटका मु०। 4. चोरा मु०। 5. भद्रेय मु०।

बायीं ओर से शुक्र गमन करे तो शोण और शर्त नागधारियों के लिए कल्याणप्रद होता है। सोम, सोम से उत्पन्न और सोमपार्श्व की हिंसा करता है ॥101॥

वत्सा विदेहजिह्वाश्च[1] वसा [2]मद्रास्तथोरगाः ।
पीड्यन्ते ये च तद्भक्ताः [3]सन्ध्यानमारोहेत् यथा ॥102॥

वत्स, विदेह, कुन्तल, वसा, मद्रा, उरगपुर आदि प्रदेश शुक्र के बायीं ओर जाने पर पीड़ित होते हैं ॥102॥

अलंकारोपघाताय यदा दक्षिणतो व्रजेत् ।
सौम्ये सुराष्ट्रं च तदा वामगः परिहिंसति ॥103॥

जब शुक्र दक्षिण की ओर से गमन करता है तो अलंकारों का विनाश होता है तथा बायीं ओर से गमन करने पर सुन्दर सुराष्ट्र का घात करता है ॥103॥

आर्द्रां हत्वा निवर्तेत यदि शुक्रः कदाचन ।
संग्रामास्तत्र जायन्ते मांसशोणितकर्दमाः ॥104॥

यदि शुक्र आर्द्रा का घात कर परिवर्तित हो तो युद्ध होते हैं तथा पृथ्वी में रक्त और मांस की कीचड़ हो जाती है ॥104॥

तैलिकाः [4]सारिकाश्चान्तं चामुण्डामांसिकास्तथा ।
[5]आषण्डाः क्रूरकर्माणः पीड्यन्ते तादृशेन यत् ॥105॥

उक्त प्रकार के शुक्र के होने से तेली, शौनिक, ऊंट, भैंस तथा कूंची आदि से कठोर क्रूर कार्य करने वाले पीड़ित होते हैं ॥105॥

दक्षिणेन यदा गच्छेद् द्रोणमेघं तदा दिशेत् ।
वामगो रुद्रकर्माणि भार्गवः परिहिंसति ॥106॥

यदि आर्द्रा का घात कर दक्षिण की ओर शुक्र गमन करे तो एक द्रोण प्रमाण जल की वर्षा होती है और बायीं ओर शुक्र गमन करे तो रौद्रकर्म—क्रूर कर्मों का विनाश होता है ॥106॥

पुनर्वसुं यदा रोहेद् गाश्च गोजीविनस्तथा ।
हासं प्रहासं राष्ट्रं च विदर्भान् दासकांस्तथा ॥107॥

जब शुक्र पुनर्वसु नक्षत्र में आरोहण करता है तो गाय और गोपाल आदि में

---

1. जिह्वाश्च मु० । 2. भौमाश्च मु० । 3. संस्थाने मार्क्षे यथा मु० । 4. सौण्डिकाश्चांगा उष्ट्रा माहिषकास्तथा । मु० । 5. ऐषिकाः मु० ।

हास-परिहास, आमोद-प्रमोद होता है। विदर्भ और दासों को भी प्रसन्नता और आमोद-प्रमोद प्राप्त होता है ॥107॥

शम्बरान् [1]पुलिन्दकाश्च श्वानषण्ढांश्च वल्कलान्।
पीडयेच्च [2]महासण्डान् शुक्रस्तादृशेन यत् ॥108॥

उक्त प्रकार का शुक्र भील, पुलिन्द, श्वान, नपुंसक, वल्कलधारी और अत्यन्त नपुंसकों को अत्यन्त पीड़ित करता है ॥108॥

प्रदक्षिणे प्रयाणे तु द्रोणमेकं तदा दिशेत्।
वामयाने तदा पीडां ब्रूयात्सर्वैकर्मणाम् ॥109॥

पुनर्वसु का घातकर शुक्र के दाहिनी ओर से प्रयाण करने पर एक द्रोण प्रमाण जल की वर्षा कहनी चाहिए और बायीं ओर से प्रयाण करने पर सभी कार्यों का घात कहना चाहिए ॥109॥

पुष्यं प्राप्तो द्विजान् हन्ति [3]पुनर्वसावपि शिल्पिनः।
[4]पुरुषान् धर्मिणश्चापि पीड्यन्ते चोत्तरायणाः ॥110॥

पुष्य नक्षत्र को प्राप्त होने वाला उत्तरायण शुक्र द्विज, प्रजावान् और धनुष के शिल्पी और धार्मिक व्यक्तियों को पीड़ित करता है ॥110॥

वङ्गा उत्कल[5]-चाण्डालाः पार्वतेयाश्च ये नराः।
इक्षुमन्त्याश्च पीड्यन्ते आर्द्रामारोहणं यथा[6] ॥111॥

जब शुक्र आर्द्रा में आरोहण करता है तो बंगवासी, उत्कलवासी चाण्डाल, पहाड़ी व्यक्ति और इक्षुमती नदी के किनारे के निवासी व्यक्तियों को पीड़ा होती है ॥111॥

[7]मत्स्यभागीरथीनां तु शुक्रोऽश्लेषां यदाऽऽरुहेत्।
वामगः [8]सृजते व्याधिं दक्षिणो [9]हिंसते प्रजाः ॥112॥

जब शुक्र बायें जाता हुआ आश्लेषा में आरोहण करता है तो मत्स्यदेश और भागीरथी के तटनिवासियों को व्याधि होती है और दक्षिण से गमन करता हुआ आरोहण करता है तो प्रजा की हिंसा होती है ॥112॥

मघानां दक्षिणं पार्श्वं भिनत्ति यदि भार्गवः।
आढकेन तदा धान्यं प्रियं विन्द्यादसंशयम् ॥113॥

---

1. मांगवन्धांश्च मु०। 2. महागु० मु०। 3. प्रजांश्च धनुशिल्पिनः मु०। 4. महान्तः मु०। 5. कुकुल- मु०। 6. यदा मु०। 7. पर्णाशीमरथीनां मु०। 8. सृजति मु०। 9. हिंसति।

यदि शुक्र मघा नक्षत्र के दक्खिन भाग का भेदन करे तो आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है और धान्य महँगा होता है ॥113॥

विलम्बेन यदा तिष्ठेन् मध्ये भित्त्वा यदा मघाम्।
आढकेन हि धान्यस्य प्रियो भवति ग्राहक: ॥114॥

जब मघा के मध्य का भेदन कर शुक्र अधिक समय तक रहता है तो आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है और धान्य प्रिय होता—महँगा होता है ॥114॥

मघानामुत्तरं पार्श्वं भिनत्ति यदि भार्गव:।
कोष्ठागाराणि पीड्यन्ते तदा [1]धान्यमुपहिंसन्ति ॥115॥

यदि मघा के उत्तर भाग का शुक्र भेदन करे तो धान्य के लिए हिंसा होती है और कोष्ठागार—खजांची लोग पीड़ित होते हैं ॥115॥

प्राज्ञा महान्त: पीड्यन्ते ताम्रवर्णो [2]यदा भृगु:।
प्रदक्षिणे विलम्बश्च [3]महदुत्पादयेज्जलम् ॥116॥

जब शुक्र ताम्रवर्ण का होता है तो विद्वान् मनीषी व्यक्ति पीड़ित होते हैं और प्रदक्षिणा में शुक्र विलम्ब करे तो अत्यधिक वर्षा होती है ॥116॥

पूर्वाफाल्गुनीं सेवेत गणिका रूपजीविनी:।
पीडयेद् वामग: कन्यामुग्रकर्माणं दक्षिण: ॥117॥

पूर्वाफाल्गुनी में शुक्र का बायीं ओर से आरोहण हो तो रूप से आजीविका करने वाली गणिकाएँ पीड़ित होती हैं और दाहिनी ओर से आरोहण हो तो उग्रकार्य करने वाले पीड़ित होते हैं ॥117॥

शबरान् प्रतिलिङ्गानि पीडयेदुत्तरां [4]श्रित:।
वामग: स्थविरान् हन्ति दक्षिण: स्त्रीनिपीडयेत् ॥118॥

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में बायीं ओर से शुक्र आरोहण करे तो शबर, ब्रह्मचारी, स्थविर—निवासी राजा को पीड़ा होती है तथा दाहिनी ओर से आरोहण करने पर स्त्रियों को पीड़ा होती है ॥118॥

काशांश्च रेवतीहस्ते पीडयेत् भार्गव: स्थित:।
दक्षिणे चोरघाताय वामश्चोरजयावह: ॥119॥

दाहिनी ओर से रेवती और हस्त नक्षत्र में शुक्र स्थित हो तो काश और चोरों का घात करता है और बायीं ओर से स्थित होने पर चोरों को जय-लाभ देता है ॥119॥

1. धान्यार्थमुपहिंसन्ति मु०। 2. यदा नृपा: मु०। 3. महान् मु०। 4. मन: मु०।

चित्रस्थ: पीडयेत् सर्वं विचित्रं गणितं लिपिम् ।
कोशलान् मेखलान् शिल्पं द्यूतं कनक[1]वाणिजान् ॥120॥

चित्रा नक्षत्र स्थित शुक्र गणित, लिपि, साहित्य आदि सभी का घात करता है। कला-कौशल, द्यूत, स्वर्ण का व्यापार आदि को पीड़ित करता है ॥120॥

आरूढपल्लवान् हन्ति [2]मारीचोदारकोशलान् ।
मार्जारनकुलांश्चैव कक्षमार्गे च पीड्यते ॥121॥

चित्रा नक्षत्र पर आरूढ़ शुक्र पल्लव, सौराष्ट्र, कोशल का विनाश करता है और कक्षमार्ग में स्थित होने पर मार्जार-बिल्ली और नेवलों को पीड़ित करता है ॥121॥

[3]चित्रमूलाश्च त्रिपुरां वातल्वतमथापि च ।
वामग: सृजते व्याधिं दक्षिणो [4]वणिकान् वधेत् ॥122॥

यदि वाम भाग से गमन करता हुआ शुक्र चित्रा के अन्तिम चरण में कुछ समय तक अपना विस्तार करे तो व्याधि की उत्पत्ति एवं दक्षिण ओर से गमन करता हुआ अन्तिम चरण में स्थित हो तो व्यापारियों का विनाश करता है ॥122॥

स्वातौ दशार्णांश्चेति सुराष्ट्रं चोपहिंसति ।
आरूढो नायकं हन्ति वामो [6]वामं तु दक्षिण: ॥123॥

स्वाति नक्षत्र में शुक्र गमन करे तो दशार्ण और सौराष्ट्र की हिंसा करता है तथा बायीं ओर से आरूढ़ होने वाला शुक्र बायीं ओर के नायक और दाहिनी ओर से आरूढ़ होने वाला शुक्र दाहिनी ओर के नायक का वध करता है ॥123॥

विशाखायां समारूढो [6]वरसामन्त जायते ।
अथ विन्द्यात् महापीडां [7]उशना स्रवते यदि ॥124॥

यदि विशाखा नक्षत्र में शुक्र आरूढ़ हो तो श्रेष्ठ सामन्त उत्पन्न होते हैं और शुक्र आदि स्रवण करे -च्युत हो तो महा पीड़ा होती है ॥124॥

दक्षिणस्तु मृगान् हन्ति [8]पश्चिमो पक्षिणान् यथा ।
अग्निकर्माणि वामस्थो हन्ति सर्वाणि भार्गव: ॥125॥

दक्षिणस्थ शुक्र मृगों—पशुओं का विनाश करता है, पश्चिमस्थ पक्षियों का विनाश और वामस्थ समस्त अग्नि कार्यों का विनाश करता है ॥125॥

---

1. वाणिजम् मु० । 2. मिलोध्र रूक्षकोशलान् मु० । 3. चित्रचूलां त्रिपुरां मु० । 4. गणिका मु० । 5. वातजस्तु मु० । 6. नाममाशी भवेत्नम: मु० । 7. पीडयंतुशनास्त्रथा मु० । 8. पक्षिणश्चलितो वत: मु० ।

मध्येन प्रज्वलन् गच्छन् विशाखामश्वजे नृपम् ।
उत्तरोऽवन्तिजान् हन्ति [1]स्त्रीराज्यस्थांश्च दक्षिण: ॥126॥

यदि शुक्र प्रज्वलित होता हुआ उत्तर से विशाखा और अश्विनी नक्षत्र के मध्य से गमन करता है तो अवन्ति देश में उत्पन्न व्यक्तियों का घात एवं दक्षिण से गमन करता है तो स्त्री राज्य के व्यक्तियों का विनाश करता है ॥126॥

अनुराधास्थितो शुक्रो यायिन: प्रस्थितान् वधेत् ।
मर्दते च मिथो भेदं दक्षिणे न तु वामग: ॥127॥

अनुराधा स्थित शुक्र यायी – आक्रमण करने के लिए प्रस्थान करने वालों के वध का संकेत करता है । यदि अनुराधा नक्षत्र का शुक्र मर्दन करे तो परस्पर में मतभेद होता है । यह फल दक्षिण की ओर का है, बायीं ओर का नहीं ॥127॥

मध्यदेशे तु दुर्भिक्षं जयं विन्द्यादुदये तत: ।
फलं प्राप्यन्ति चारेण भद्रबाहुवचो यथा ॥128॥

यदि अनुराधा नक्षत्र में शुक्र का उदय हो तो मध्य देश में दुर्भिक्ष और जय होती है । भद्रबाहु स्वामी का ऐसा वचन है कि शुक्र का फल उसके विचरण के अनुसार प्राप्त होता है ॥128॥

ज्येष्ठास्थ: पीडयेज्ज्येष्ठान् [2]इक्ष्वाकून् गन्धमादजान् ।
मर्दनारोहणे [3]व्याधिं मध्यदेशे [4]ततो वधेत् ॥129॥

ज्येष्ठा नक्षत्र में स्थित शुक्र इक्ष्वाकुवंश तथा गन्धमादन पर्वत पर स्थित बड़े व्यक्तियों को पीड़ित करता है । मर्दन और आरोहण करने वाला शुक्र विनाश करता है तथा मध्य देश के मत-मतान्तरों का निराकरण करता है ॥129॥

दक्षिण: क्षेमकृज्ज्ञेयो वामगस्तु भयंकर: ।
[5]प्रसन्नवर्णो विमल: स विज्ञेयो [6]सुखंकर: ॥130॥

दक्षिण की ओर से ज्येष्ठा नक्षत्र में गमन करने वाला शुक्र क्षेम करने वाला होता है और बायीं ओर से गमन करने वाला शुक्र भयंकर होता है तथा निर्मल श्रेष्ठवर्ण का शुक्र सुखकारक होता है ॥130॥

हन्ति मूलफलं मूले [7]कन्दानि च वनस्पतिम् ।
औषध्यांर्मलयं चाऽपि माल्यकाष्ठोपजीविन: ॥131॥

मूल नक्षत्र में स्थित शुक्र वनस्पति के फल, मूल, कन्द, औषधि, चन्दन एवं

---

1. स्त्रीराज्य० मु० । 2. इक्ष्वाकानश्चान्यरिकान् मु० । 3. हन्ति मु० । 4. मतान् वधेत् मु० । 5. प्रशस्त मु० । 6. सुखावह: मु० । 7. कन्दानथ मु० ।

चंदन-लकड़ी आदि के द्वारा आजीविका करने वालों का विनाश करता है।।131।।

यदाऽऽरुहेत् प्रमर्देत कुटुम्बा भूश्च दुःखिता:।
कन्दमूलं फलं हन्ति दक्षिणो वामगो जलम् ।।132।।

दक्षिण की ओर से गमन करता हुआ शुक्र जब मूल नक्षत्र का आरोहण या प्रमर्दन करे तो कुटुम्ब, भूमि आदि दुःखित होती है, कन्द, मूल, फल का विनाश होता है और बायीं ओर से गमन करता हुआ जल का विनाश करता है ।।132।।

[1]सामभूमिजलेचारं आषाढस्य: प्रपीडयेत्।
[2]शान्तिकरश्च मेघश्च तालोरारोह-मर्दने ।।133।।

पूर्वाषाढा नक्षत्र में स्थित शुक्र सभी भूमि और जलचर आदि को पीड़ा देता है और शुक्र के आरोहण और मर्दन करने से शान्तिकर जल की वर्षा होती है ।।133।।

दक्षिण: स्थविरान् हन्ति वामगो भयमावहेत्।
सुवर्णो मध्यम: स्निग्धो भार्गव: सुखमावहेत् ।।134।।

दक्षिण की ओर से गमन कर पूर्वाषाढा नक्षत्र में विचरण करने वाला शुक्र स्थावरों---निवासी राजाओं का घात करता है और बायीं ओर गमन करने वाला शुक्र भय उत्पन्न करता है तथा सुन्दर, स्निग्ध मध्यम से गमन करने वाला शुक्र सुख उत्पन्न करता है ।।134।।

यद्युत्तरासु तिष्ठेच्च पाञ्चालान् मालवत्रयान्।
पीडयेन्मर्दयेद्द्रोहाद्विश्वासाद्भेदकृत्तथा ।।135।।

यदि उत्तराषाढा नक्षत्र में शुक्र स्थित हो तो पाञ्चाल तथा तीनों मालवों को पीड़ित, मर्दित, द्रोहित एवं विश्वास के कारण भेद उत्पन्न करता है ।।135।।

अभिजित्स्थ: कुरून् हन्ति कौरव्यान् क्षत्रियांस्तथा।
[3]पशव: साधवश्चापि पीड्यन्ते रोह-मर्दने ।।136।।

अभिजित् नक्षत्र पर जब शुक्र स्थित रहता है तो कौरवों तथा क्षत्रियों का मर्दन करता है तथा अभिजित् नक्षत्र में आरोहण और मर्दन करने पर शुक्र पशु और साधुओं को पीड़ित करता है ।।136।।

यदा प्रदक्षिणं गच्छेत् पञ्चत्वं कुरुमादिशेत्।
वामतो गच्छमानस्तु ब्राह्मणानां भयंकर: ।।137।।

इस नक्षत्र के लिए दक्षिण की ओर से जब शुक्र गमन करता है तो कुरुवंशी

---

1. भूमिजलचरान मु०। 2. शान्तकेशांश्च मरीश्च मु०। 3. नराश्च मु०।

क्षत्रियों के लिए मृत्यु एवं बायीं ओर से जब गमन करता है तो ब्राह्मणों के लिए भयंकर होता है ॥137॥

सौरसेनांश्च मत्स्यांश्च श्रवणस्थः प्रपीडयेत् ।
वंगांगमगधान् हन्यादारोहणप्रमर्दने ॥138॥

यदि शुक्र श्रवण नक्षत्र में स्थित हो तो सौरसेन और मत्स्य देश को पीड़ित करता है । श्रवण नक्षत्र में आरोहण और प्रमर्दन करने से शुक्र वंग, अंग और मगध का विनाश करता है ॥138॥

दक्षिणः श्रवणं गच्छेद् द्रोणमेघं निवेदयेत् ।
वामगस्तूपघाताय नृणां च प्राणिनां तथा ॥139॥

यदि दक्षिण की ओर से शुक्र श्रवण नक्षत्र में जाय तो शुक्र द्रोण प्रमाण जल की वर्षा होती है और बायीं ओर से गमन करे तो मनुष्य और पशुओं के लिए घातक होता है ॥139॥

धनिष्ठास्थो धनं हन्ति समृद्धांश्च कुटुम्बिनः ।
पाञ्चालान् सूरसेनांश्च मत्स्यानारोहमर्दने ॥140॥

यदि धनिष्ठा नक्षत्र में शुक्र गमन करे तो समृद्धशाली, धनिक कुटुम्बियों के धन का अपहरण करता है । धनिष्ठा नक्षत्र के आरोहण और मर्दन करने पर शुक्र पाञ्चाल, सूरसेन और मत्स्य देश का विनाश करता है ॥140॥

दक्षिणो धनिनो हन्ति वामगो व्याधिकृद् भवेत् ।
मध्यगः सुप्रसन्नश्च सम्प्रशस्यति भार्गवः ॥141॥

दक्षिण की ओर गमन करने वाला शुक्र धनिकों का विनाश और बायीं ओर से गमन करने वाला शुक्र व्याधि करने वाला होता है । मध्य से गमन करने वाला शुक्र उत्तम होता है तथा सुख और शान्ति की वृद्धि करता है ॥141॥

शलाकिनः शिलाकृतान् वारुणस्थः प्रहिंसति ।
कालकूटान् कुनाटांश्च हन्यादारोहमर्दने ॥142॥

शतभिषा नक्षत्र में स्थित शुक्र शलाकी और शिलाकृतों की हिंसा करता है । इस नक्षत्र में आरोहण और मर्दन करने वाला शुक्र कालकूट और कुनाटों की हिंसा करता है ॥142॥

दक्षिणो नीचकर्माणि हिंसते नीचकर्मिणः ।
वामगो दारुणं व्याधिं ततः सृजति भार्गवः ॥143॥

दक्षिण से गमन करने वाला शुक्र नीच कार्य और नीच कार्य करने वालों का

हन्यादश्विनीप्राप्तः सिन्धुसौवीरमेव च।
मत्स्यांश्च कुनटान् रूढो मर्दमानश्च हिंसति ॥150॥

अश्विनी नक्षत्र में स्थित शुक्र सिन्धु और सौवीर देश का विनाश करता है। इस नक्षत्र का आरोहण और मर्दन करने से शुक्र मत्स्य और कुनटों का घात करता है ॥150॥

अश्वपण्योपजीविनो दक्षिणो हन्ति भार्गवः।
तेषां व्याधिं तथा मृत्युं सृजत्यथ तु [1]वामगः।

दक्षिणस्थ भार्गव—शुक्र अश्व-घोड़ों के व्यापारी और दुकानदारों का घात करता है और वामग शुक्र उनके लिए व्याधि और मृत्यु करता है ॥151॥

भृत्यकरान् यवनांश्च भरणीस्थः प्रपीडयेत्।
किरातान् मद्रदेशानामाभीरान्मर्द-रोहणे ॥152॥

भरणी स्थित शुक्र भृत्यकर्म करने वालों एवं यवनों—मुसलमानों को पीड़ा करता है। इस नक्षत्र का मर्दन और रोहण करने वाला शुक्र किरात, मद्र और आभीर देश का घात करता है ॥152॥

प्रदक्षिणं प्रयातश्च द्रोणं मेघं निवेदयेत्।
वामगः संम्प्रयातस्य रुद्रकर्माणि हिंसति ॥153॥

इस नक्षत्र में दक्षिण की ओर गया शुक्र एक द्रोण प्रमाण मेघों की वर्षा करता है और बायीं ओर गया शुक्र रुद्र कार्यों का विनाश करता है ॥153॥

एवमेतत् फलं कुर्यादनुचारं तु भार्गवः।
पूर्वतः पृष्ठतश्चापि [2]समाचारो भवेल्लघुः ॥154॥

इस प्रकार शुक्र अपने विचरण का फल देता है। पूर्व से और पीछे से शुक्र के गमन का संक्षिप्त फल कहा गया है ॥154॥

उदये च प्रवासे च ग्रहाणां कारणं रविः।
प्रवासं छादयन्कुर्यात् मुञ्चमानस्तथोदयम् ॥155॥

ग्रहों के उदय और प्रवास में कारण सूर्य है। यहाँ प्रवास का अभिप्राय ग्रहों के अस्त होने से है। जब सूर्य ग्रहों को आच्छादित करता है तो यह उनका अस्त कहा जाता है और जब छोड़ता है तो उदय माना जाता है ॥155॥

---

1. भार्गवः मु०। 2. समाचारं तु यल्लघुः मु०।

प्रवासाः पञ्च शुक्रस्य पुरस्तात् पञ्च पृष्ठतः ।
मार्गे तु मार्गसन्ध्याश्च वक्रे वीथीसु निर्दिशेत् ॥156॥

शुक्र के सम्मुख और पीछे पांच-पांच प्रकार के अस्त हैं । मार्गी होने पर सन्ध्या होती है तथा वक्री का कथन भी वीथियों में अवगत करना चाहिए ॥156॥

त्रैमासिकः प्रवासः स्यात् पुरस्तात् दक्षिणे पथि ।
पञ्चसप्ततिर्मध्ये स्यात् पञ्चाशीतिस्तथोत्तरे ॥157॥
चतुर्विंशत्यहानि स्युः पृष्ठतो दक्षिणे पथि ।
मध्ये पञ्चदशाहानि षडहान्युत्तरे पथि ॥158॥

दक्षिण मार्ग में शुक्र का सम्मुख त्रैमासिक अस्त है, मध्य में 75 दिनों का और उत्तर में 85 दिनों का अस्त होता है । दक्षिण मार्ग में पीछे की ओर 24 दिनों का, मध्य में पन्द्रह दिनों का और उत्तर मार्ग में 6 दिनों का अस्त होता है ॥157-158॥

ज्येष्ठानुराधयोश्चैव [1]द्वौ मासौ पूर्वतो विदुः ।
आश्लेषाष्टरात्रं तु तौ च पश्चिमे स्मृते बुधैः ॥159॥

ज्येष्ठा और अनुराधा में पूर्व की ओर से द्विमास—दो महीनों की और पश्चिम से आठ रात्रि की सन्ध्या विद्वानों द्वारा प्रतिपादित की गयी है ॥159॥

मूलादिदक्षिणो मार्गः फाल्गुन्यादिषु मध्यमः ।
उत्तरश्च भरण्यादिर्जघन्यो मध्यमोऽन्तिमौ ॥160॥

मूलादि नक्षत्र में दक्षिण मार्ग, पूर्वाफाल्गुनी आदि नक्षत्रों में मध्यम और भरणी आदि नक्षत्र में उत्तर मार्ग होता है । इनमें प्रथम मार्ग जघन्य है और अन्तिम दोनों मध्यम हैं ॥160॥

[2]वामो वदेत् यदा खारीं विंशकां त्रिंशकामपि ।
करोति नागवीथीस्थो भार्गवश्चारमार्गगः[3] ॥161॥

नागवीथि में विचरण करने वाला वामगत शुक्र दश, बीस और तीस खारी अन्न का भाव करता है ॥161॥

विंशका त्रिंशका खारी चत्वारिंशतिकाऽपि वा ।
वामे शुक्रे तु विज्ञेया गजवीथीमुपागते ॥162॥

---

1. द्विमास मु० । 2. वामोऽथ दशकां मु० । 3. ०मार्गतः मु० ।

गजवीथि में विचरण करने वाला वाम शुक्र बीस, तीस और चालीस खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है ॥162॥

ऐरावणपथे त्रिंशच्चत्वारिंशदथापि वा।
पंचाशीतिका ज्ञेया खारी तुल्या तु भार्गव: ॥163॥

ऐरावणवीथि में विचरण करने वाला शुक्र तीस, चालीस और पचासी खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है ॥163॥

विंशका त्रिंशका खारी चत्वारिंशतिकाऽपि वा।
[1]व्योमगो वीथिमागम्य [2]करोत्यर्घेण भार्गव: ॥164॥

बीस, तीस और चालीस खारी प्रमाण अन्न का भाव व्योमवीथि में गमन करने वाला शुक्र करता है ॥164॥

चत्वारिंशत् पंचाशद् वा षष्टि वाऽथ समादिशेत्।
जरद्गवपथं प्राप्ते भार्गवे खारिसंज्ञया ॥165॥

जरद्गव वीथि को प्राप्त होने वाला शुक्र चालीस, पचास और साठ खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है ॥165॥

सप्तर्ति चाथ वाऽशीतिं नवतिं वा तथा दिशेत्।
अजवीथीगते शुक्रे भद्रबाहुवचो यथा ॥166॥

अजवीथि को प्राप्त होने वाला शुक्र सत्तर, अस्सी अथवा नब्बे खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥166॥

[3]विंशत्यशीतिकां खारिं शतिकामप्यथा दिशेत्।
मृगवीथीमुपागम्य विवर्णो भार्गवो यदा ॥167॥

जब शुक्र विवर्ण होकर मृगवीथि को प्राप्त करता है तो बीस, अस्सी अथवा सौ खारी प्रमाण अन्न का भाव होता है ॥167॥

विच्छिन्नविषमृणालं न च पुष्पं फलं यदा।
वैश्वानरपथं प्राप्तो यदा वामस्तु भार्गव: ॥168॥

जब वामस्थ शुक्र वैश्वानर वीथि में गमन करता है तब कमल का डण्ठल, विसपत्र, पुष्प और फल उत्पन्न नहीं होते हैं ॥168॥

---

1. व्योमगो मु० । 2. करोत्यर्घं न भार्गव मु० । 3. शतिका त्रिंशत: खारी, त्रिंशता वा तदा भवेत् मु० ।

[1]अनुलोमो विजयं ब्रूते प्रतिलोम: पराजयम् ।
उदयास्तमने शुक्रो बुधश्च कुरुते तथा ॥169॥

शुक्र और बुध अनुलोम उदय, अस्त को प्राप्त होने पर विजय करते हैं और प्रतिलोम उदय, अस्त को प्राप्त होने पर पराजय ॥169॥

मार्गमेकं समाश्रित्य सुभिक्षक्षेमदस्तथा ।
उशना दिशतितरां सानुलोमो न संशय: ॥170॥

शुक्र सीधी दिशा में एक-सा ही गमन करता है तो निस्सन्देह सुभिक्ष और कल्याण देता है ॥170॥

यस्य देशस्य नक्षत्रं शुक्रो हन्याद्विकारग: ।
तस्मात् भयं परं विन्द्याच्चतुर्मासं न चापरम् ॥171॥

विकृत होकर शुक्र जिस देश के नक्षत्र का घात करता है, उस देश को, उस घातित होने वाले दिन से चार महीने तक भय होता है, अन्य कोई दुर्घटना नहीं घटती है ॥171॥

शुक्रोदये ग्रहो याति प्रवासं यदि कश्चन ।
क्षेमं सुभिक्षमाचष्टे[2] [3]सर्ववर्षसमस्तदा ॥172॥

शुक्र के उदय होने पर यदि कोई ग्रह अस्त हो जाय तो सुभिक्ष, कल्याण और समयानुकूल यथेष्ट वर्षा होती है तथा वर्ष भर एक-सा आनन्द रहता है ॥172॥

बलक्षोभो भवेच्छ्यामे मृत्यु: कपिलकृष्णयो: ।
नीले गवां [4]च मरणं रूक्षे वृष्टिक्षय: क्षुधा ॥173॥

यदि शुक्र श्यामवर्ण का हो तो बल क्षुब्ध होता है । पिंगल और कृष्ण वर्ण का शुक्र हो तो मृत्यु, नीलवर्ण का होने पर गायों का मरण और रूक्ष होने पर वर्षा का नाश तथा क्षुधा की वेदना का सूचक होता है ॥173॥

वाताक्षिरोगो माञ्जिष्ठे पीते शुक्रे ज्वरो भवेत् ।
कृष्णे विचित्रे वर्णे च क्षयं लोकस्य निर्दिशेत् ॥174॥

शुक्र के मंजिष्ठ वर्ण होने पर वात और अक्षिरोग, पीतवर्ण होने पर ज्वर और विचित्र कृष्ण वर्ण होने पर लोक का क्षय होता है ॥174॥

1. नवा विजयमाख्याति मु० । 2. मान्याति मु० । 3. सद्वर्षं च तथा मु० । 3. तु मु० ।

नभस्तृतीयभागं च आरोहेत् त्वरितो यदा ।
नक्षत्राणि च चत्वारि [1]प्रवासमारुह्यश्चरेत् ॥175॥

जब शुक्र शीघ्र ही आकाश के तृतीय भाग का आरोहण करता है तब चार नक्षत्रों में प्रवास— अस्त होता है ॥175॥

एकोनविंशदृक्षाणि मासानष्टौ च भार्गवः ।
चत्वारि पृष्ठतश्चारं प्रवासं कुरुते ततः ॥176॥

जब शुक्र आठ महीनों में उन्नीस नक्षत्रों का भोग करता है, उस समय पीछे के चार नक्षत्रों में प्रवास करता है ॥176॥

द्वादशैकोनविंशाह्नं दशाहं[2] चैव भार्गवः ।
एकैकस्मिश्च नक्षत्रे चरमाणोऽवतिष्ठति ॥177॥

शुक्र एक नक्षत्र पर बारह दिन, दस दिन और उन्नीस दिन तक विचरण करता है ॥177॥

वक्रं याते द्वादशाहं[3] समक्षेत्रे दशाह्निकम् ।
शेषेषु पृष्ठतो विन्द्यात् एकविंशमहोनिशम् ॥178॥

वक्र मार्ग में — वक्री होने पर शुक्र को बारह दिन और सम क्षेत्र में दस दिन एक नक्षत्र के भोग में लगते हैं। पीछे की ओर गमन करने में उन्नीस दिन एक नक्षत्र के भोग में व्यतीत होते हैं ॥178॥

पूर्वतः समचारेण पंच पक्षेण भार्गवः ।
[4]तदा करोति कौशल्यं भद्रबाहुवचो यथा ॥179॥

पूर्व में गमन करता हुआ शुक्र पाँच पक्ष अर्थात् 75 दिनों में कौशल करता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥179॥

ततः पंचदशर्क्षाणि [5]सञ्चरत्युशना पुनः ।
षड्भिर्मासैस्ततो ज्ञेयः प्रवासं पूर्वतः [6]परम् ॥180॥

इसके पश्चात् शुक्र पन्द्रह नक्षत्र चलता है और हटता है। इस प्रकार छः महीनों में पुनः प्रवास को प्राप्त हो जाता है ॥180॥

द्व्यशीतिं चतुराशीतिं षडशीतिं च भार्गवः ।
भक्तं समेषु भागेषु प्रवासं कुरुते समम् ॥181॥

---

1. प्रवासमाचरेत् मु० । 2. [illegible] मु० । 3. [illegible] मु० । 4. [illegible] क्षाणि, मु० । 5. सञ्चरत्युशनाद्रुत मु० । 6. परः मु० ।

82, 84 और 86 दिनों में समान भाग देने पर शुक्र का समान प्रवास आ जाता है ।।181।।

द्वादशाहं च विंशाहं दशपंच च भार्गव: ।
नक्षत्रे तिष्ठते ह्येवं समचारेण पूर्वत: ।।182।।

बारह दिन, बीस दिन और पन्द्रह दिन शुक्र एक नक्षत्र पर पूर्व दिशा में विचरण करने पर निवास करता है ।।182।।

पांशुं वातं रजो धूमं शीतोष्णं वा प्रवर्षणम् ।
विद्युदुल्काश्च कुरुते भार्गवोऽस्तमनोदये ।।183।।

शुक्र का अस्त होना धूलि, वर्षा, धूम, गर्मी और ठण्डक का पड़ना, विद्युत्पात और उल्कापात आदि फलों को करता है ।।183।।

सितकुसुमनिभस्तु भार्गव: प्रचलति वीथीषु [1]सर्वशो यदा वै ।
घटगृहजलपोतस्थितोऽभूद् बहुजलकृच्च तत: सुखदश्चारु ।।184।।

श्वेत पुष्पों के समान वर्ण वाला शुक्र वीथियों में गमन करता है, तो निश्चय से सभी ओर खूब जलवृष्टि होती है तथा वर्ष सुख देने वाला और आनन्ददायी व्यतीत होता है ।।184।।

अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि वक्रं चारं निबोधत ।
भार्गवस्य समासेन तथ्यं निर्ग्रन्थभाषितम् ।।185।।

इसके पश्चात् शुक्र के वक्रचार का निरूपण संक्षेप में किया जाता है, जैसा कि निर्ग्रन्थ मुनियों ने वर्णन किया है ।।185।।

पूर्वेण विंशदृक्षाणि [2]पश्चिमेकोनविंशति: ।
चरेत् प्रकृतिचारेण सम्यं [3]सीमानिरीक्ष्ययो: ।।186।।

सीमा निरीक्षण में स्वाभाविक गति से शुक्र पूर्व में बीस नक्षत्र और पश्चिम में उन्नीस नक्षत्र गमन करता है ।।186।।

एकविंशं यदा गत्वा याति विंशतिमं पुन: ।
भार्गवोऽस्तमने काले तद्वक्रं विकृतं भवेत् ।।187।।

अस्त काल में इक्कीसवें नक्षत्र तक पहुँचकर शुक्र पुन: बीसवें नक्षत्र पर आता है, इसी लौटने की गति को उसका विकृत वक्र कहा जाता है ।।187।।

---

1. सर्वशोभाकरः, मु० । 2. पश्चार्द मु० । 3. सीमानिरीक्षयो: मु० ।

विंशतिं तु यदा गत्वा पुनरेकोनविंशतिम् ।
आयात्यस्तमने काले वायव्यं वक्रमुच्यते ॥194॥

जब शुक्र अस्तकाल में बीसवें नक्षत्र पर जाकर पुनः उन्नीसवें नक्षत्र पर लौट आता है तो उसे वायव्यवक्र कहते हैं ॥194॥

वायुवेगसमां विन्द्यान्महीं वातसमाकुलाम् ।
[1]क्लिष्टामल्पेन जलेन जनेनान्येन सर्वशः ॥195॥

उक्त प्रकार के वायव्यवक्र में पृथ्वी वायु से परिपूर्ण हो जाती है तथा वायु का जोर अत्यधिक रहता है, अल्प वर्षा होने से पृथ्वी जल से परिपूर्ण हो जाती है तथा अन्य राष्ट्र के द्वारा प्रदेश आक्रान्त हो जाता है ॥195॥

एकविंशतिं यदा गत्वा पुनरेकोनविंशतिम् ।
आयात्यस्तमने काले भस्म तद् वक्रमुच्यते ॥196॥

अस्तकाल में यदि शुक्र इक्कीसवें नक्षत्र पर जाकर पुनः उन्नीसवें नक्षत्र पर लौट आता है तो उसे भस्मवक्र कहते हैं ॥196॥

ग्रामाणां नगराणां च प्रजानां च दिशो दिशम् ।
नरेन्द्राणां च चत्वारि भस्मभूतानि निर्दिशेत् ॥197॥

इस प्रकार के वक्र में ग्राम, नगर, प्रजा और राजा ये चारों भस्मभूत हो जाते हैं अर्थात् यह वक्र अपने नामानुसार फल देता है ॥197॥

एतानि पंच वक्राणि कुरुते यानि भार्गवः ।
अतिचारं प्रवक्ष्यामि फलं यच्चास्य किंचन ॥198॥

इस प्रकार शुक्र के पाँच-पाँच वक्रों का निरूपण किया गया है। अब अतिचार के किंचित् फलादेश के साथ वर्णन किया जाता है ॥198॥

यदाऽतिक्रमते चारमुशना दारुणं फलम् ।
तदा सृजति लोकस्य दुःखक्लेशभयावहम् ॥199॥

यदि शुक्र अपनी गति का अतिक्रमण करे तो यह उसका अतिचार कहलाता है, इसका फल संसार को दुःख, क्लेश, भय आदि होता है ॥199॥

तदाऽन्योन्यं तु राजानो ग्रामांश्च नगराणि च ।
समयुक्तानि [2]बाधन्ते [3]नष्टधर्म-जयार्थिनः ॥200॥

1. क्लिष्टा माल्पेन जलेन मु० । 2. घातयन्ति मु० । 3. नष्टकार्य मु० ।

शुक्र के अतिचार में राजा ग्राम और नगर धर्म से च्युत होकर जय की अभिलाषा से परस्पर में दौड़ लगाते हैं अर्थात् परस्पर में संघर्षरत होते हैं ॥200॥

धर्मार्थकामा लुप्यन्ते जायते वर्णसंकरः ।
शस्त्रेण संक्षयं विन्द्यान्महाजनगतं तदा ॥201॥

राष्ट्र में धर्म, अर्थ और काम लुप्त हो जाते हैं और सभी धर्म भ्रष्ट होकर वर्णसंकर हो जाते हैं तथा शस्त्र द्वारा क्षत्र-विनाश होता है ॥201॥

मित्राणि स्वजनाः पुत्रा गुरुद्वेष्या जनास्तथा ।
[1]जहति प्राणवर्णांश्च कुरुते तादृशेन यत् ॥202॥

शुक्र के अतिचार में लोगों की प्रवृत्ति इस प्रकार की हो जाती है जिससे वे आपस में द्वेष-भाव करने लगते हैं तथा मित्र, कुटुम्बी, पुत्र, भाई, गुरु आदि भी द्वेष में रत रहते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि अपने वर्ण—जाति मर्यादा एवं प्राणों का त्याग कर देते हैं। तात्पर्य यह है कि दुराचार की प्रवृत्ति बढ़ जाने से जाति-मर्यादा का लोप हो जाता है ॥202॥

विलीयन्ते च राष्ट्राणि दुर्भिक्षेण भयेन च ।
चक्रं प्रवर्तते दुर्गे भार्गवस्यातिचारतः ॥203॥

शुक्र के अतिचार में दुर्भिक्ष और भय से राष्ट्र विलीन हो जाते हैं और दुर्ग के ऊपर अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा होती है तथा यह अन्य चक्र शासन के अधीन हो जाता है ॥203॥

ततः श्मशानभूतास्थिकृष्णभूता मही तदा ।
वसा-रुधिरसंकुला काकगृध्रसमाकुला ॥204॥

पृथ्वी श्मशान भूमि बन जाती है, मुर्दाओं की भस्म से कृष्ण हो जाती है तथा मांस, रुधिर और चर्बी से युक्त होने के कारण काक, शृगाल और गृद्धों से युक्त हो जाती है ॥204॥

वक्राण्युक्तानि सर्वाणि फलं यच्चातिचारकम् ।
वक्रचारं प्रवक्ष्यामि पुनरस्तमनोदयात् ॥205॥

जो फल सभी प्रकार के वक्रों का कहा गया है, वह अतिचार में भी घटित होता है। अब अस्तकाल में पुनः वक्रचार का निरूपण करते हैं ॥205॥

---

1. जहति मु० ।

वैश्वानरपथं प्राप्त: पूर्वत: प्रविशेद यदा।
षडशीति तदाऽह्नानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥206॥

जब शुक्र वैश्वानरपथ में पूर्व की ओर से प्रवेश करता है तो 86 दिनों के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥206॥

मृगवीथीं [1]पुन: प्राप्त: प्रवासं यदि गच्छति।
चतुरशीति तदाऽह्नानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥207॥

यदि शुक्र मृगवीथि को दुबारा प्राप्त होकर अस्त हो तो 84 दिनों के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥207॥

अजवीथिमनुप्राप्त: प्रवासं यदि गच्छति।
अशीतिं षडह्नानि तु गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥208॥

यदि शुक्र अजवीथि को पुन: प्राप्त कर अस्त हो तो 86 दिनों के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥208॥

जरद्गवपथप्राप्त: प्रवासं यदि गच्छति।
सप्ततिं पंच वाऽह्नानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥209॥

यदि शुक्र जरद्गवपथ को प्राप्त होकर प्रवास करे तो 75 दिनों के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥209॥

गोवीथीं समनुप्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
सप्ततिं तु तदाऽह्नानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥210॥

गोवीथि को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 70 दिनों के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥210॥

वृषवीथिमनुप्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
पंचषष्टिं तदाऽह्नानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥211॥

वृषवीथि को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 65 दिनों के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥211॥

ऐरावणपथं प्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
षष्टिं तु स तदाऽह्नानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥212॥

ऐरावणवीथि को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 60 दिनों के पश्चात् पीछे

1. अनुप्राप्त: मु.।

की ओर दिखलाई पड़ता है ॥212॥

गजवीथिमनुप्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
पंचाशीतिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥213॥

गजवीथि को पुन: प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 85 दिनों के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥213॥

नागवीथिमनुप्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
पंचपंचाशत्तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥214॥

नागवीथि को पुन: प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 55 दिनों के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥214॥

वैश्वानरपथं प्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
चतुर्विंशत्तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पूर्वत: ॥215॥

वैश्वानर पथ को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 24 दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर दिखलाई पड़ता है ॥215॥

मृगवीथिमनुप्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
द्वाविंशतिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पूर्वत: ॥216॥

शुक्र जब मृगवीथि को पुन: प्राप्त होकर अस्त हो तो 22 दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर दिखलाई पड़ता है ॥216॥

अजवीथिमनुप्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
तदा विंशतिरात्रेण पूर्वत: प्रतिदृश्यते ॥217॥

शुक्र जब अजवीथि को पुन: प्राप्त होकर अस्त हो तो 20 रात्रियों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ॥217॥

जरद्गवपथं प्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
तदा सप्तदशाहानि गत्वा दृश्येत पूर्वत: ॥218॥

जब शुक्र जरद्गवपथ को प्राप्त होकर अस्त होता है तो 17 दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ॥218॥

गोवीथीं समनुप्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
चतुर्दशदशाहानि गत्वा दृश्येत पूर्वत: ॥219॥

गोवीथि को प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो चौदह दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ॥219॥

वृषवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा।
तदा द्वादशरात्रेण गत्वा दृश्येत पूर्वतः ॥220॥

वृषवीथि को प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो 12 रात्रियों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ॥220॥

ऐरावणपथं प्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा।
तदा स दशरात्रेण पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥221॥

ऐरावणवीथि को प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो 10 रात्रियों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय को प्राप्त होता है ॥221॥

गजवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा।
अष्टरात्रं तदा गत्वा पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥222॥

गजवीथि को प्राप्त होकर यदि शुक्र अस्त हो तो अष्ट रात्रियों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय को प्राप्त होता है ॥222॥

नागवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा।
षडहं तु तदा गत्वा पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥223॥

जब नागवीथि को पुनः प्राप्त होकर शुक्र अस्त हो तो 6 दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय को प्राप्त होता है ॥223॥

एते प्रवासाः शुक्रस्य पूर्वतः पृष्ठतस्तथा।
यथाशास्त्रं समुद्दिष्टा वर्ण-पाको निबोधत ॥224॥

शुक्र के ये प्रवास—अस्त पूर्व और पृष्ठ में यथाशास्त्र प्रतिपादित किये गये हैं। इसके वर्ण का फल निम्न प्रकार ज्ञात करना चाहिए ॥224॥

शुक्लो नीलश्च कृष्णश्च पीतश्च हरितस्तथा।
कपिलश्चाग्निवर्णश्च विज्ञेयः स्यात् कदाचन ॥225॥

शुक्र के नील, कृष्ण, पीत, हरित, कपिल—पिंगल वर्ण और अग्नि वर्ण होते हैं ॥225॥

हेमन्ते शिशिरे रक्तः शुक्रः सूर्यप्रभानुगः।
पीतो वसन्त-ग्रीष्मे च शुक्लः स्यान्नित्यसूर्यतः ॥226॥

हेमन्त और शिशिर ऋतु में शुक्र का रक्त वर्ण सूर्य की कान्ति के अनुसार होता है तथा वसन्त और ग्रीष्म में पीत वर्ण एवं नित्य सूर्य की कान्ति से शुक्र का शुक्ल वर्ण होता है ॥226॥

अतोऽस्य येऽन्यथाभावा विपरीता भयावहा:।
शुक्रस्य भयदो[1] लोके कृष्णे नक्षत्रमण्डले ॥227॥

उपर्युक्त प्रतिपादित वर्णों में यदि विपरीत वर्ण शुक्र का दिखलाई पड़े तो भयप्रद होता है। शुक्र का कृष्णनक्षत्र मण्डल में प्रवेश करना अत्यन्त भयप्रद है। अर्थात् जिस ऋतु में शुक्र का जो वर्ण बतलाया गया है, उससे विपरीत वर्ण का दिखलाई पड़ना अशुभ फल-सूचक होता है ॥227॥

पूर्वोदये फलं यत् तु पच्यतेऽपरतस्तु तत्।
शुक्रस्यापरतो यत्तु पच्यते पूर्वत: फलम् ॥228॥

शुक्र के पूर्वोदय का जो फल है वही पश्चिमोदय में घटित होता है तथा शुक्र के पश्चिमोदय का जो फल है, वही पूर्वोदय में भी घटित होता है ॥228॥

एवमेवं विजानीयात् फल-पाकौ समाहित:।
कालातीतं यदा कुर्यात् तदा घोरं समादिशेत् ॥229॥

इस प्रकार शुक्र के फलादेश को समझ लेना चाहिए। जब शुक्र के उदय में कालातीत हो—विलम्ब हो तो अत्यन्त कष्ट होता है ॥229॥

सवक्रचारं यो वेत्ति शुक्रचारं स बुद्धिमान्।
श्रमण: स सुखं याति क्षिप्रं देशमपीडितम् ॥230॥

जो श्रमण—मुनि शुक्र के चार, वक्र, उदय, अतिचार आदि को जानता है, वह बुद्धिमान् अपीड़ित देश में विहार कर शीघ्र ही सुख प्राप्त करता है ॥230॥

यदाऽग्निवर्णो रविसंस्थितो वा वैश्वानरं मार्गसमाश्रितश्च[2]।
तदा भयं शंसति[3] सोऽग्निजातं तज्जातजं साधयितव्यमन्यत: ॥231॥

जब शुक्र अग्निवर्ण हो अथवा सूर्य के अंश—कला पर स्थित हो अथवा वैश्वानर वीथि में स्थित हो तो अग्नि का भय रहता है तथा अग्नि से उत्पन्न अन्य प्रकार के उपद्रवों की भी सम्भावना रहती है ॥231॥

इति सकलमुनिजनानन्दकन्दोदयमहामुनिश्रीभद्रबाहुविरचिते महानिमित्त-शास्त्रे भगवल्लिलोकपतिदैत्यगुरो: शुक्रस्य चार: समाप्त: ॥15॥

विवेचन—**शुक्रोदय विचार**—शुक्र का अश्विनी, मृगशिर, रेवती, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण और स्वाति नक्षत्र में उदय होने से सिन्धु, गुर्जर,

1. भयदा मु.। 2. श्रितस्य मु.। 3. शंस A.।

कर्वट प्रदेशों में खेती का नाश, महामारी एवं राजनीतिक संघर्ष होता है। शुक्र का उक्त नक्षत्रों में उदय होना नेताओं, महापुरुषों एवं राजनीतिक व्यक्तियों के लिए शुभ नहीं है। पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी और भरणी इन नक्षत्रों में शुक्र का उदय होने से, जालन्धर और सौराष्ट्र में दुर्भिक्ष, विग्रह-संघर्ष एवं कलिंग, स्त्रीराज्य और मरुदेश में मध्यम वर्षा और मध्यम फसल उत्पन्न होती है। घी और धान्य का भाव सम्पूर्ण देश में कुछ महँगा होता है। कृत्तिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र में शुक्र का उदय हो तो गुर्जर देश में पुद्गल का भय, दुर्भिक्ष और द्रव्यहीनता; सिन्धु देश में उत्पात, मालव में संघर्ष; आसाम, बिहार और बंग प्रदेश में भय, उत्पात, वर्षाभाव एवं महाराष्ट्र, द्रविड़ देश में सुभिक्ष, समय पर वर्षा होती है। शुक्र का उक्त नक्षत्रों में उदय होना अच्छा माना जाता है। सम्पूर्ण देश के भविष्य की दृष्टि से आश्लेषा, भरणी, विशाखा, पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रों का उदय अशुभ, दुर्भिक्ष, हानि एवं अशान्ति करने वाला है। अवशेष सभी नक्षत्रों का उदय शुभ एवं मंगल देने वाला है।

शुक्रास्त विचार—अश्विनी, मृगशिर, हस्त, रेवती, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण और स्वाति नक्षत्र में शुक्र का अस्त हो तो इटली, रोम, जापान में भूकम्प का भय; बर्मा, श्याम, चीन, अमेरिका में सुख-शान्ति; रूस, भारत में साधारण शान्ति रहती है। देश के अन्तर्गत कोंकण, लाट और सिन्धु प्रदेश में अल्प वर्षा, सामान्य धान्य की उत्पत्ति, उत्तर प्रदेश में अत्यल्प वर्षा, अकाल, द्रविड़ प्रदेश में विग्रह, गुर्जर देश में सुभिक्ष, बंगाल में अकाल, बिहार और आसाम में साधारण वर्षा, मध्यम खेती उपजती है। शुक्रास्त के उपरान्त एक महीना तक अन्न महँगा बिकता है, पश्चात् कुछ सस्ता हो जाता है। घी, तेल, जूट आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। प्रजा को सुख की प्राप्ति होती है। सभी लोग अमन-चैन के साथ निवास करते हैं। कृत्तिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र में शुक्र अस्त हो तो हिन्दुस्तान में विग्रह, मुस्लिम राष्ट्रों में शान्ति एवं उनकी उन्नति, इंगलैण्ड और अमेरिका में सफलता, चीन में सुभिक्ष, वर्मा में उत्तम फसल एवं हिन्दुस्तान में साधारण फसल होती है। मिश्र देश के लिए इस प्रकार का शुक्रास्त भयोत्पादक होता है, अन्न का अभाव होने से जनता को अत्यधिक कष्ट होता है। मरुस्थल और सिन्धु देश में सामान्यतया दुर्भिक्ष होता है। मित्र राष्ट्रों के लिए उक्त प्रकार का शुक्रास्त अनिष्टकर है। भारत के लिए सामान्यतया अच्छा है। वर्षाभाव होने के कारण देश में आन्तरिक अशान्ति रहती है तथा देश में कल-कारखानों की उन्नति होती है। मघा में शुक्रास्त होकर विशाखा में उदय को प्राप्त करे तो देश के लिए सभी तरह से भयोत्पादक होता

है। तीनों पूर्वा—पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाषाढ़ा, उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद—रोहिणी और भरणी नक्षत्रों में शुक्र का अस्त हो तो पंजाब, दिल्ली, राजस्थान, विन्ध्यप्रदेश के लिए सुभिक्षदायक, किन्तु इन प्रदेशों में राजनीतिक संघर्ष, धान्य भाव सस्ता तथा उक्त प्रदेशों में रोग उत्पन्न होते हैं। बंगाल, आसाम और बिहार, उड़ीसा के लिए उक्त प्रकार का शुक्रास्त शुभकारक है। इन प्रदेशों में धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है। धन-धान्य की शक्ति वृद्धिगत होती है। अन्न का भाव सस्ता होता है। शुक्र का भरणी नक्षत्र पर अस्त होना पशुओं के लिए अशुभकारक है। पशुओं में नाना प्रकार के रोग फैलते हैं तथा धान्य और तृण दोनों का भाव महँगा होता है। जनता को कष्ट होता है, राजनीति में परिवर्तन होता है। शुक्र का मध्यरात्रि में अस्त होना तथा आश्लेषाविद्ध मघा नक्षत्र में शुक्र का उदय और अस्त दोनों ही अशुभ होते हैं। इस प्रकार की स्थिति में जनसाधारण को भी कष्ट होता है।

शुक्र के गमन की नौ वीथियाँ हैं—नाग, गज, ऐरावत, वृषभ, गो, जरद्गव, मृग, अज और दहन—वैश्वानर, ये वीथियाँ अश्विनी आदि तीन-तीन नक्षत्रों की मानी जाती हैं। किसी-किसी के मत से स्वाति, भरणी और कृत्तिका नक्षत्र में नागवीथि होती है। गज, ऐरावत और वृषभ नामक वीथियों में रोहिणी से उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र तक तीन-तीन वीथियाँ हुआ करती हैं तथा अश्विनी, रेवती, पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में गोवीथि है। श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र में जरद्गव वीथि; अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र में मृगवीथि; हस्त, विशाखा और चित्रा नक्षत्र में अजवीथि एवं पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा में दहनवीथि होती है। शुक्र का भरणी नक्षत्र से उत्तरमार्ग, पूर्वाफाल्गुनी से मध्यममार्ग और पूर्वाषाढ़ा से दक्षिणमार्ग माना जाता है। जब उत्तरवीथि में शुक्र अस्त या उदय को प्राप्त होता है, तो प्राणियों के सुख सम्पत्ति और धन-धान्य की वृद्धि करता है। मध्यम वीथि में रहने से शुक्र मध्यम फल देता है और जघन्य या दक्षिण वीथि में विद्यमान शुक्र कष्टप्रद होता है। आर्द्रा नक्षत्र से आरम्भ करके मृगशिर तक जो नौ वीथियाँ हैं, उनमें शुक्र का उदय या अस्त होने से यथाक्रम से अत्युत्तम, उत्तम, ऊन, सम, मध्यम, न्यून, अधम, कष्ट और कष्टतम फल उत्पन्न होता है। भरणी नक्षत्र से लेकर चार नक्षत्रों में जो मण्डल—वीथि हो, उसकी प्रथम वीथि में शुक्र का अस्त या उदय होने से सुभिक्ष होता है, किन्तु अंग, बंग, कलिंग और वाह्लीक देश में भय होता है। आर्द्रा से लेकर चार नक्षत्रों—आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा इन चार नक्षत्रों के मण्डल में शुक्र का उदय या अस्त हो तो अधिक जल की वर्षा होती है, धन-धान्य सम्पत्ति वृद्धिगत होती है। प्रत्येक प्रदेश में शान्ति रहती है, जनता में सौहार्द और प्रेम का संचार होता है। यह द्वितीय मण्डल उत्तम माना गया है। अर्थात् शुक्र का भरणी से मृगशिरा नक्षत्र तक प्रथम

विनाश करता है तथा वाम ओर से गमन करने वाला शुक्र भयंकर रोग उत्पन्न करता है ॥143॥

यदा भाद्रपदां सेवेत् धूर्तान् दूतांश्च हिंसति।
मलयान्मालवान् हन्ति मर्दनारोहणे तथा ॥144॥

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र में स्थित शुक्र धूर्त और दूतों की हिंसा करता है तथा मर्दन और आरोहण करने वाला शुक्र मलय और मालवानों की हिंसा करता है ॥144॥

दूतोपजीविनो वैद्यान् दक्षिणस्थः प्रहिंसति।
वामगः स्थविरान् हन्ति भद्रबाहुवचो यथा ॥145॥

दक्षिणस्थ शुक्र दौत्य कार्य द्वारा आजीविका करने वालों और वैद्यों का घात करता है तथा वामस्थ शुक्र स्थविरों की हिंसा करता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥145॥

उत्तरां तु यदा सेवेज्जलजान् हिंसते सदा।
वत्सान् वाह्लीकगान्धारानारोहणप्रमर्दने ॥146॥

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में स्थित शुक्र जलज—जलनिवासी और जल में उत्पन्न प्राणियों का घात करता है। इस नक्षत्र में आरोहण और प्रमर्दन करने वाला शुक्र वत्स, वाह्लीक और गान्धार देशों का विनाश करता है ॥146॥

दक्षिणे स्थावरान् हन्ति वामगः स्याद् भयंकरः।
[1]मध्यगः सुप्रसन्नश्च भार्गवः सुखमावहेत् ॥147॥

दक्षिणस्थ शुक्र स्थावरों का विनाश करता है और वामग शुक्र भयंकर होता है। मध्यग शुक्र प्रसन्नता और सुख प्रदान करता है ॥147॥

भयान्तिकं नागराणां नागरांश्चोपहिंसति।
भार्गवो रेवतीप्राप्तो दुःप्रभश्च कृशो यदा ॥148॥

रेवती नक्षत्र को प्राप्त होने वाला शुक्र नागरिक और नगरों के लिए भय और आतंक करने वाला है ॥148॥

मर्दनारोहणे हन्ति नाविकानथ नागरान्।
दक्षिणो गोपकान् हन्ति चोत्तरो[2] भूषणानि तु ॥149॥

रेवती नक्षत्र को मर्दन और आरोहण करने वाला शुक्र नाविक और नागरिकों की हिंसा करता है। दक्षिणस्थ शुक्र गोपों का घात करता है और उत्तरस्थ भूषणों का विनाश करता है ॥149॥

---

1. मध्यमः मु० । 2. उत्तरे मु० ।

महापिपीलिकाराशिर्विस्फुरन्ती विपद्यते ।
उह्यानुत्तिष्ठते यत्र तत्र विन्द्यान्महद्भयम् ॥53॥

जहाँ अत्यधिक चींटियों का समूह विस्फुरित— काँपते हुए मृत्यु को प्राप्त हो और उह्य—क्षत-विक्षत—घायल होकर स्थित हो, वहाँ महान् भय होता है ॥53॥

श्वश्वपिपीलिकावृन्दं निम्नमूर्ध्वं विसर्पति ।
वर्षं तत्र विजानीयाद्भद्रबाहुवचो यथा ॥54॥

जहाँ चींटियाँ रूप बदल कर—पंख वाली होकर नीचे से ऊपर को जाती हैं, वहाँ वर्षा होती है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥54॥

राजोपकरणे भग्ने चलिते पतितेऽपि वा ।
क्रव्यादसेवने चैव राजपीड़ां समादिशेत् ॥55॥

राजा के उपकरण—छत्र, चमर, मुकुट आदि के भग्न होने, चलित होने या गिरने से तथा मांसाहारी के द्वारा सेवा करने से राजा पीड़ा को प्राप्त होता है ॥55॥

वाजिवारणयानानां मरणे छेदने द्रुते ।
परचक्रागमात् विन्द्यादुत्पातज्ञो जितेन्द्रियः ॥56॥

घोड़ा, हाथी आदि सवारियों के अचानक मरण, घायल या छेदन होने से जितेन्द्रिय उत्पात शास्त्र के जानने वाले को परशासन का आगमन जानना चाहिए ॥56॥

क्षत्रियाः पुष्पितेऽश्वत्थे ब्राह्मणाश्चाप्युदुम्बरे ।
वैश्याः प्लक्षेऽथ पीड्यन्ते न्यग्रोधे शूद्रदस्यवः ॥57॥

असमय में पीपल के पेड़ के पुष्पित होने से ब्राह्मणों को, उदुम्बर के वृक्ष के पुष्पित होने से क्षत्रियों को, पाकर वृक्ष के पुष्पित होने से वैश्यों को और वट वृक्ष के पुष्पित होने से शूद्रों को पीड़ा होती है ॥57॥

इन्द्रायुधं निशिश्वेतं विप्रान् रक्तं च क्षत्रियान् ।
निहन्ति पीतकं वैश्यान् कृष्णं शूद्रभयंकरम् ॥58॥

रात्रि में इन्द्रधनुष यदि श्वेत रंग का हो तो ब्राह्मणों को, लाल रंग का हो तो क्षत्रियों को, पीले रंग का हो तो वैश्यों को और काले रंग का हो तो शूद्रों को भयदायक होता है ॥58॥

मज्यते नश्यते तत्तु कम्पते शीर्यते जलम्।
चतुर्मासं परं राजा म्रियते भज्यते तदा ॥59॥

यदि इन्द्रधनुष भग्न होता हो, नष्ट होता हो, काँपता हो और जल की वर्षा करता हो तो राजा चार महीने के उपरान्त मृत्यु को प्राप्त होता है, या आघात को प्राप्त होता है ॥59॥

[1]पितामहर्षयः सर्वे सोमं च क्षतसंयुतम्।
त्रैमासिकं विजानीयादुत्पातं ब्राह्मणेषु [2]वै ॥60॥

पिता, महर्षि तथा चन्द्रमा यदि क्षत-विक्षत दिखलाई पड़े तो निश्चय से ब्राह्मणों में त्रैमासिक उत्पात होता है ॥60॥

रूक्षा विवर्णा विकृता यदा सन्ध्या भयानका।
मारीं कुर्युः सुविकृतां पक्षत्रिपक्षकं भयम् ॥61॥

यदि सन्ध्या रूक्ष, विकृत और विवर्ण हो तो नाना प्रकार के विकार और मरण को करने वाली होती है तथा एक पक्ष या तीन पक्ष में भय की प्राप्ति भी होती है ॥61॥

[3]यदि वैश्रवणे कश्चिदुत्पातं समुदीरयेत्।
राजानश्च सचिवाश्च पञ्चमासान् स पीडयेत् ॥62॥

यदि गमन समय में—राजा को युद्ध के लिए प्रस्थान करते समय कोई उत्पात दिखलाई पड़े तो राजा और मन्त्री को पाँच महीने तक कष्ट होता है ॥62॥

यदोत्पातोऽयमेकश्चिद् दृश्यते विकृतः क्वचित्।
तदा व्याधिश्च मारी च चतुर्मासात् परं भवेत् ॥63॥

यदि कहीं कोई विकृत उत्पात दिखलाई पड़े तो इस उत्पात-दर्शन के चार महीने के उपरान्त व्याधि और मरण होता है ॥63॥

यदा चन्द्रे वरुणे वोत्पातः कश्चिदुदीर्यते।
मारकः सिन्धु-सौवीर-सुराष्ट्र-वत्सभूमिषु ॥64॥
भोजनेषु[4] भयं विन्द्यात् पूर्वे च म्रियते नृपः।
पञ्चमासात् परं विन्द्याद् भयं घोरमुपस्थितम् ॥65॥

---

1. पितामहर्षयः सर्वे सर्वं चन्द्रमा जलम्। 2. च मु०। 3. यदा वैश्रवणे गमने कश्चिदुत्पातः समुदीर्यते। 4. भोजेषु च मु०।

यदि चन्द्रमा या वरुण में कोई उत्पात दिखलाई पड़े तो सिन्धु देश, सौवीर देश, सौराष्ट्र—गुजरात और वत्सभूमि में मरण होता है। भोजन सामग्री में भय रहता है और राजा का मरण पूर्व में ही हो जाता है। पाँच महीने के उपरान्त वहाँ घोर भय का संचार होता है अर्थात् भय व्याप्त होता है ॥64-65॥

रुद्रे च वरुणे कश्चिदुत्पात: समुदीर्यते।
सप्तपक्षं भयं विन्द्याद् ब्राह्मणानां न संशय: ॥66॥

शिवजी और वरुणदेव की प्रतिमा में यदि किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो वहाँ ब्राह्मणों के लिए सात पक्ष अर्थात् तीन महीना पन्द्रह दिन का भय समझना चाहिए, इसमें किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं है ॥66॥

इन्द्रस्य प्रतिमायां तु यद्युत्पात: प्रदृश्यते।
संग्रामे त्रिषु मासेषु राज्ञ: सेनापतेर्वध: ॥67॥

यदि इन्द्र की प्रतिमा में कोई भी उत्पात दिखलाई पड़े तो तीन महीने में संग्राम होता है और राजा या सेनापति का वध होता है ॥67॥

यद्युत्पातो बलन्देवे तस्योपकरणेषु च।
महाराष्ट्रान् महायोद्धान् सप्तमासान् प्रपीडयेत् ॥68॥

यदि बलदेव की प्रतिमा या उसके उपकरणों—छत्र, चमर आदि में किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो सात महीनों तक महाराष्ट्र के महान् योद्धाओं को पीड़ा होती है ॥68॥

वासुदेवे यद्युत्पातस्तस्योपकरणेषु च।
चक्रारूढा: प्रजा ज्ञेयाश्चतुर्मासान् वधो नृपे ॥69॥

वासुदेव की प्रतिमा उसके उपकरणों में किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो प्रजा चक्रारूढ़—षड्यन्त्र में तल्लीन रहती है और चार महीनों में राजा का वध होता है ॥69॥

प्रद्युम्ने चाऽथ उत्पातो गणिकानां भयावह:।
[1]कुशीलानां च द्रष्टव्यं भयं चेद्वाऽष्टमासिकम् ॥70॥

प्रद्युम्न की मूर्ति में किसी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो वेश्याओं के लिए अत्यन्त भय कारक होता है और कुशील व्यक्ति के लिए आठ महीनों तक भय बना रहता है ॥70॥

1. विगतायां मु०।

यदार्कप्रतिमायां तु किञ्चिदुत्पातजं भवेत् ।
चौरा मासा त्रिपक्षाद्वा विलीयन्ते [1]रुदन्ति वा ॥71॥

यदि सूर्य की प्रतिमा में कुछ उत्पात हो तो एक महीने या तीन पक्ष—डेढ़ महीने में चोर विलीन हो जाते—नष्ट हो जाते हैं या विलाप करते हुए दुःख को प्राप्त होते हैं ॥71॥

यद्युत्पातः श्रियाः कश्चित् त्रिमासात् कुरुते फलम् ।
वणिजां पुष्पबीजानां वनितालेख्यजीविनाम् ॥72॥

यदि लक्ष्मी की मूर्ति में उत्पात हो तो इस उत्पात का फल तीन महीने में प्राप्त होता है और वैश्य—व्यापारी वर्ग, पुष्प, बीज और लिपिकार आजीविका करने वालों की स्त्रियों को कष्ट होता है ॥72॥

वीरस्थाने श्मशाने च यद्युत्पातः समीर्यते ।
चतुर्मासात् क्षुधामारी पीड्यन्ते च ततस्ततः ॥73॥

वीरभूमि या श्मशानभूमि में यदि उत्पात दिखलाई पड़े तो चार महीने तक क्षुधामारी—भुखमरी से इधर-उधर की समस्त जनता पीड़ित होती है ॥73॥

यद्युत्पाताः प्रदृश्यन्ते विश्वकर्माणमाश्रिताः ।
पीड्यन्ते शिल्पिनः सर्वे पञ्चमासात्परं भयम् ॥74॥

यदि विश्वकर्मा में किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो सभी शिल्पियों को पीड़ा होती है और इस उत्पात के पाँच महीने के उपरान्त भय होता है ॥74॥

[2]भद्रकाली विकुर्वन्ती स्त्रियो हन्तीह सुव्रताः ।
आत्मानं वृत्तिनो ये च षण्मासात् पीडयेत् प्रजाम् ॥75॥

यदि भद्रकाली की प्रतिमा में विकार—उत्पात हो तो सुव्रता स्त्रियों का नाश होता है और इस उत्पात के छः महीने पश्चात् प्रजा को पीड़ा होती है ॥75॥

इन्द्राण्याः समुत्पातः कुमार्यः परिपीडयेत् ।
त्रिपक्षादक्षिरोगेण कुक्षिकर्णशिरोज्वरैः ॥76॥

यदि इन्द्राणी की मूर्ति में उत्पात हो तो कुमारियों को तीन पक्ष—डेढ़ महीने के उपरान्त नेत्ररोग, कुक्षिरोग, कर्णरोग, शिररोग और ज्वर की पीड़ा से पीड़ित होना पड़ता है—कष्ट होता है ॥76॥

1. रुजन्ति मु. । 2. [illegible] मु. । 3. भद्रकाली मु. ।

धन्वन्तरे समुत्पातो वैद्यानां स भयंकर: ।
षाण्मासिकविकारांश्च रोगजान् जनयेन्नृणाम् ॥77॥

धन्वन्तरि की प्रतिमा में उत्पात हो तो वैद्य को अत्यन्त भयंकर उत्पात होता है और छ: महीने तक मनुष्यों को विकार और रोग उत्पन्न होते हैं ॥77॥

जामदग्न्ये यदा रामे विकार: कश्चिदीर्यते ।
तापसांश्च तपाढ्यांश्च त्रिपक्षेण जिघांसति ॥78॥

परशुराम या बलभद्र की प्रतिमा में विकार दिखलाई पड़े तो तपस्वी और तप आरम्भ करने वालों का तीन पक्ष में विनाश होता है ॥78॥

पञ्चविंशतिरात्रेण कबन्धं यदि दृश्यते ।
सन्ध्यायां भयमाख्याति महापुरुषविद्रवम् ॥79॥

यदि सन्ध्या काल में कबन्ध धड़ दिखलाई पड़े तो पच्चीस रात्रियों तक भय रहता है तथा किसी महापुरुष का विद्रवण-विनाश होता है ॥79॥

सुलसायां यदोत्पात: षण्मासं सर्पजीविन: ।
पीडयेद् गरुडे यस्य वासुकास्तिकभक्तिषु ॥80॥

यदि सुलसा की मूर्ति में उत्पात दिखलाई पड़े तो सर्पजीवियों—सपहरों आदि के छ: महीनों तक पीड़ा होती है और गरुड़ की मूर्ति में उत्पात दिखलाई पड़े तो वासुकी में श्रद्धाभाव और भक्ति करने वालों को कष्ट होता है ॥80॥

भूतेषु य: समुत्पात: [1]सदैव परिचारिका: ।
मासेन पीडयेत्तूर्णं निर्ग्रन्थवचनं यथा ॥81॥

भूतों की मूर्ति में उत्पात दिखलाई पड़े तो परिचारिकाओं—दासियों को सदा पीड़ा होती है और इस उत्पात-दर्शन के एक महीने तक अधिक पीड़ा रहती है, ऐसा निर्ग्रन्थ गुरुओं का वचन है ॥81॥

अर्हत्सु वरुणे रुद्रे ग्रहे शुक्रे नृपे भवेत् ।
पञ्चालगुरुशुक्रेषु पावकेषु पुरोहिते ॥82॥
वातेऽम्भो वासुभद्रे च विश्वकर्मप्रजापतौ ।
सर्वस्य तद् विजानीयात् वक्ष्ये सामान्यजं फलम् ॥83॥

अर्हन्त प्रतिमा, वरुणप्रतिमा, रुद्रप्रतिमा, सूर्यादिग्रहों की प्रतिमाओं, शुक्र-प्रतिमा, द्रोणप्रतिमा, इन्द्रप्रतिमा, अग्निपुरोहित, वायु, अग्नि, समुद्र, विश्वकर्मा,

1. सदैवपरिचारिका: मु० ।

प्रजापति की प्रतिमाओं के विकार उत्पात का फल सामान्य ही अवगत करना चाहिए ।।82-83।।

चन्द्रस्य वरुणस्यापि रुद्रस्य च वधूषु च ।
[1]समाहारे यदोत्पातो राजाग्रमहिषीभयम् ।।84।।

चन्द्रमा, वरुण, शिव और पार्वती की प्रतिमाओं में उत्पात हो तो राजा की पट्टरानी को भय होता है ।।84।।

कामजस्य[2] यदा भार्या या चान्याः केवलाः स्त्रियः ।
कुर्वन्ति किञ्चिद् विकृतं प्रधानस्त्रीषु तद्भयम् ।।85।।

यदि कामदेव की स्त्री रति की प्रतिमा अथवा किसी भी स्त्री की प्रतिमा में उत्पात दिखलाई पड़े तो प्रधान स्त्रियों में भय का संचार होता है ।।85।।

एवं देशे च जातौ च कुले पाखण्डिभिक्षुषु ।
तज्जातिप्रतिरूपेण स्वैः स्वैर्देवैः शुभं वदेत् ।।86।।

इस प्रकार जाति, देश, कुल और धर्म की उपासना आदि के अनुसार अपने-अपने आराध्य देव की प्रतिमा के विकार-उत्पात से अपना-अपना शुभाशुभ फल ज्ञात करना चाहिए ।।86।।

उद्गच्छमानः सविता पूर्वतो विकृतो यदा ।
स्थावरस्य विनाशाय पृष्ठतो यायिनाशनः ।।87।।

यदि उदय होता हुआ सूर्य पूर्व दिशा में -- सम्मुख विकृत उत्पात युक्त दिखलाई पड़े तो स्थावर---निवासी राजा के और पीछे की ओर विकृत दिखलाई पड़े तो यायी --आक्रमक राजा के विनाश का सूचक होता है ।।87।।

हेमवर्णः सुतोयाय मधुवर्णो भयंकरः ।
शुक्ले च सूर्यवर्णेऽस्मिन् सुभिक्षं क्षेममेव च ।।88।।

यदि उदयकालीन सूर्य स्वर्ण वर्ण का हो तो जल की वर्षा, मधु वर्ण का हो तो लाभप्रद और शुक्ल वर्ण का हो तो सुभिक्ष और कल्याण की सूचना देता है ।।88।।

हेमन्ते शिशिरे रक्तः पीतो ग्रीष्मवसन्तयोः ।
वर्षासु शरदि शुक्लो विपरीतो भयंकरः ।।89।।

हेमन्त और शिशिर ऋतु में लाल वर्ण, ग्रीष्म और वसन्त ऋतु में पीत एवं

---
1. म महाराजसूनानां राजाग्रमहिषीषु च । 2. एका मध्य मु० ।

वर्षा और शरद् में शुक्ल वर्ण का सूर्य शुभप्रद है, इन वर्णों से विपरीत वर्ण हो तो भयप्रद है ॥89॥

दक्षिणे चन्द्रशृंगे तु यदा तिष्ठति भार्गवः ।
[1]अभ्युद्गतं तदा राजा बलं हन्यात् सपार्थिवम् ॥90॥

यदि चन्द्रमा के उदय काल में चन्द्रमा के दक्षिण शृंग पर शुक्र हो तो ससैन्य राजा का विनाश होता है ॥90॥

चन्द्रशृंगे यदा भौमो[2] विकृतस्तिष्ठतेतराम् ।
[3]भृशं प्रजा विपद्यन्ते कुरवः पार्थिवाश्चलाः ॥91॥

यदि चन्द्रशृंग पर विकृत मंगल स्थित हो तो प्रजा को अत्यन्त कष्ट होता है और पुरोहित एवं राजा चंचल हो जाते हैं ॥91॥

शनैश्चरो यदा सौम्यशृंगे पर्युपतिष्ठति ।
तदा वृष्टिभयं घोरं दुर्भिक्षं प्रकरोति च ॥92॥

यदि चन्द्रशृंग पर शनैश्चर हो तो वर्षा का भय होता है और भयंकर दुर्भिक्ष होता है ॥92॥

भिनत्ति सोमं मध्येन ग्रहेष्वन्यतमो यदा ।
तदा राजभयं विन्द्यात् प्रजाक्षोभं च दारुणम् ॥93॥

जब कोई भी ग्रह चन्द्रमा के मध्य में भेदन करता है तो राजभय होता है और प्रजा को दारुण क्षोभ होता है ॥93॥

राहुणा गृह्यते चन्द्रो यस्य नक्षत्रजन्मनि ।
रोगं मृत्युभयं वाऽपि तस्य कुर्यान्न संशयः ॥94॥

जिस व्यक्ति के जन्म नक्षत्र पर राहु चन्द्रमा का ग्रहण करे—चन्द्रग्रहण हो तो रोग और मृत्यु भय निस्सन्देह होता है ॥94॥

क्रूरग्रहयुतश्चन्द्रो गृह्यते दृश्यतेऽपि वा ।
यदा क्षुभ्यन्ति सामन्ता राजा राष्ट्रं च पीड्यते ॥95॥

क्रूरग्रह युक्त चन्द्रमा राहु के द्वारा ग्रसित या दृष्ट हो तो राजा और सामन्त क्षुब्ध होते हैं और राष्ट्र को पीड़ा होती है ॥95॥

---

1. अभ्युत्कृत मु० । 2. भौमस्तिष्ठते विकृतं भृशम् मु० । 3. प्रजास्तत्र मु० ।

लिखेत सोमः [1]शृंगेन भौमं शुक्रं गुरुं यथा।
शनैश्चरं त्वाक्रिश्नं षड्भयानि तदा दिशेत् ॥96॥

चन्द्रश्रृंग के द्वारा मंगल, शुक्र और गुरु का स्पर्श हो तथा शनैश्चर आक्रान्त किया जा रहा हो तो छः प्रकार के भय होते हैं ॥96॥

यदा बृहस्पतिः शुक्रं भिद्येदथ विशेषतः।
पुरोहितास्तदाऽमात्याः प्राप्नुवन्ति महद्भयम् ॥97॥

यदि बृहस्पति—गुरु, शुक्र का भेदन करे तो विशेष रूप से पुरोहित और मन्त्री महान् भय को प्राप्त होते हैं ॥97॥

ग्रहाः परस्परं यत्र भिन्दन्ति प्रविशन्ति वा।
तत्र शस्त्रवाणिज्यानि विन्द्यादर्थविपर्ययम् ॥98॥

यदि ग्रह परस्पर में भेदन करें अथवा प्रवेश को प्राप्त हों तो शस्त्र का अर्थ-विपर्यय—विपरीत हो जाना है अर्थात् वहाँ युद्ध होते हैं ॥98॥

श्वतो ग्रहमन्यं श्वेतं प्रविशेत लिखेत् तदा।
ब्राह्मणानां मिथो भेदं मिथः पीडां विनिर्दिशेत् ॥99॥

यदि श्वेत वर्ण का ग्रह—चन्द्रमा, शुक्र श्वेत वर्ण के ग्रहों का स्पर्श और प्रवेश करे तो ब्राह्मणों में परस्पर मतभेद होता है तथा परस्पर में पीड़ा को भी प्राप्त होते हैं ॥99॥

एवं शेषेषु वर्णेषु स्ववर्णश्चारयेद् ग्रहः।
वर्णतः स्वभयानि स्युस्तद्युतान्युपलक्षयेत् ॥100॥

इसी प्रकार रक्त वर्ण के ग्रह रक्त वर्ण ग्रहों का स्पर्श और प्रवेश करें तो क्षत्रियों को, पीत वर्ण के ग्रह पीत वर्ण के ग्रहों का स्पर्श और प्रवेश करें तो वैश्यों को एवं कृष्ण वर्ण के ग्रह कृष्ण वर्ण के ग्रहों का स्पर्श और प्रवेश करें तो शूद्रों को भय, पीड़ा या उनमें परस्पर मतभेद होता है। ज्योतिषशास्त्र में सूर्य को रक्तवर्ण, चन्द्रमा को श्वेतवर्ण, मंगल को रक्तवर्ण, बुध को श्यामवर्ण, गुरु को पीतवर्ण, शुक्र को श्यामगौर वर्ण, शनि को कृष्णवर्ण, राहु को कृष्णवर्ण और केतु को कृष्णवर्ण माना गया है ॥100॥

श्वेतो ग्रहो यदा पीतो रक्तकृष्णोऽथवा भवेत्।
सवर्णविजयं कुर्यात् यथास्वं वर्णसंकरम् ॥101॥

---

1. शृंगिणाम् मु०।

यदि श्वेतग्रह पीत, रक्त अथवा कृष्ण हो तो जाति के वर्णानुसार विजय प्राप्त कराता है अर्थात् रक्त होने पर क्षत्रियों की, पीत होने पर वैश्यों की और कृष्ण-वर्ण होने पर शूद्रों की विजय होती है। मिश्रितवर्ण होने से वर्णसंकरों की विजय होती है ॥101॥

उत्पाता विविधा ये तु ग्रहाऽघाताश्च दारुणाः।
उत्तराः सर्वभूतानां दक्षिणा [1]मृगपक्षिणाम् ॥102॥

अनेक प्रकार के उत्पात होते हैं, इनमें ग्रहघात –ग्रहयुद्ध उत्पात अत्यन्त दारुण हैं। उत्तर दिशा का ग्रहघात समस्त प्राणियों को कष्टप्रद होता है और दक्षिण का ग्रहघात केवल पशु-पक्षियों को कष्ट देता है ॥102॥

करंकं शोणितं मांसं विद्युतश्च भयं वदेत्।
दुर्भिक्षं जनमारिं च शीघ्रमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥103॥

अस्थिपंजर, रक्त, मांस और बिजली का उत्पात भय की सूचना देता है तथा जहाँ यह उत्पात हो वहाँ दुर्भिक्ष और जनमारी शीघ्र ही फैल जाती है ॥103॥

शब्देन महता भूमिर्यदा रसति कम्पते।
सेनापतिरमात्यश्च राजा राष्ट्रं च पीड्यते ॥104॥

अकारण भयंकर शब्द के द्वारा जब पृथ्वी काँपने लगे तथा सर्वत्र शोर-गुल व्याप्त हो जाय तो सेनापति, मन्त्री, राजा और राष्ट्र को पीड़ा होती है ॥104॥

फले फलं यदा किंचित् पुष्पे पुष्पं च दृश्यते।
गर्भाः पतन्ति नारीणां युवराजा च वध्यते ॥105॥

यदि फल में फल और पुष्प में पुष्प दिखलाई पड़े तो स्त्रियों के गर्भ गिर जाते हैं तथा युवराज का वध होता है ॥105॥

नर्तनं जल्पनं हासमुत्कीलननिमीलने।
[2]देवाः यत्र प्रकुर्वन्ति तत्र विन्द्यान्महद्भयम् ॥106॥

जहाँ देवों द्वारा नाचना, बोलना, हँसना, कीलना और पलक झपकना आदि क्रियाएँ की जायँ; वहाँ अत्यन्त भय होता है ॥106॥

पिशाचा यत्र दृश्यन्ते देशेषु नगरेषु वा।
अन्यराजो भवेत्तत्र प्रजानां च महद्भयम् ॥107॥

---

1. मृगपक्षिणाम् मु०। 2. दिशा मु०।

जहाँ देश और नगरों में पिशाच दिखलाई पड़ें वहाँ अन्य व्यक्ति राजा होता है तथा प्रजा को अत्यन्त भय होता है ॥107॥

भूमिर्यत्र नभो याति विशति वसुधाजलम् ।
दृश्यन्ते वाऽम्बरे देवास्तत्र राजवधो ध्रुवम् ॥108॥

जहाँ पृथ्वी आकाश की ओर जाती हुई मालूम हो अथवा पाताल में प्रविष्ट होती हुई दिखलाई पड़े और आकाश में देव दिखलाई पड़ें तो वहाँ राजा का वध निश्चयतः होता है ॥108॥

धूमज्वालां रजो भस्म यदा मुञ्चन्ति देवताः ।
तदा तु म्रियते राजा मूलतस्तु जनक्षयः ॥109॥

यदि देव धूम, ज्वाला, धूलि और भस्म -- राख की वर्षा करें तो राजा का मरण होता है तथा मूलरूप से मनुष्यों का भी विनाश होता है ॥109॥

[1]अस्थिमांसैः पशूनां च भस्मनां निचयैरपि ।
जनक्षयाः प्रभूतास्तु विकृते वा नृपवधः ॥110॥

यदि पशुओं की हड्डियाँ और मांस तथा भस्म का समूह आकाश से बरसे तो अधिक मनुष्यों का विनाश होता है। अथवा उक्त वस्तुओं में विकार— उत्पात होने पर राजा का वध होता है ॥110॥

विकृताकृति-संस्थाना जायन्ते यत्र मानवाः ।
तत्र राजवधो ज्ञेयो विकृतेन सुखेन वा ॥111॥

जहाँ मनुष्य विकृत आकार वाले और विचित्र दिखलाई पड़ें वहाँ राजा का वध होता है अथवा विकृत दिखलाई पड़ने से सुख क्षीण होता है ॥111॥

वधः सेनापतेश्चापि भयं दुर्भिक्षमेव च ।
अग्नेर्वा ह्यथवा वृष्टिस्तदा स्यान्नात्र संशयः ॥112॥

यदि आकाश से अग्नि की वर्षा हो तो सेनापति का वध, भय और दुर्भिक्ष आदि फल घटित होते हैं, इसमें सन्देह नहीं है ॥112॥

द्वारं शस्त्रगृहं वेश्म राज्ञो देवगृहं तथा ।
धूमायन्ते यदा राजस्तदा मरणमादिशेत् ॥113॥

देवमन्दिर या राजा के महल के द्वार, शस्त्रागार, दालान या बरामदे में धुआँ दिखलाई पड़े तो राजा का मरण होता है ॥113॥

---

1. मुगाक्षिणजूनां च वादर्शे [illegible] पदे मु० ।

परिघाऽर्गला कपाटं द्वारं रुन्धन्ति वा स्वयम् ।
पुररोधस्तदा विन्द्यान्नैगमानां महद्भयम् ॥114॥

यदि स्वयं ही बिना किसी के बन्द किये बेड़ा, साँकल और द्वार के किवाड़ बन्द हो जायें तो पुरोहित और वेद के व्याख्याताओं को महान् भय होता है ॥114॥

यदा द्वारेण नगरं शिवा प्रविशते दिवा ।
वास्यमाना विकृता वा तदा राजवधो ध्रुवम् ॥115॥

यदि दिन में सियारिन---गीदड़ी नगर के द्वार से विकृत या सिक्त होकर प्रविष्ट हो तो राजा का वध होता है ॥115॥

अन्तःपुरेषु द्वारेषु विष्णुमित्रे तथा पुरे ।
अट्टालकेऽथ हट्टेषु मधु लीनं विनाशयेत् ॥116॥

यदि सियारिन अन्तःपुर, द्वार, नगर, तीर्थ, अट्टालिका और बाजार में प्रवेश करे तो गृह का विनाश करती है ॥116॥

धूमकेतुहतं मार्गं शुक्रश्चरति वै यदा ।
तदा तु सप्तवर्षाणि महान्तमनयं वदेत् ॥117॥

यदि शुक्र धूमकेतु द्वारा आक्रान्त मार्ग में गमन करे तो सात वर्षों तक महान् अन्याय-अकल्याण होता रहता है ॥117॥

गुरुणा प्रहतं मार्गं यदा भौमः प्रपद्यते ।
भयं तु सार्वजनिकं करोति बहुधा नृणाम् ॥118॥

यदि बृहस्पति के द्वारा प्रताडित मार्ग में मंगल गमन करे तो सार्वजनिक भय होता है तथा अधिकतर मनुष्यों को भय होता है ॥118॥

भौमेनापि हतं मार्गं यदा सौरिः प्रपद्यते ।
तदाऽपि शूद्रचौराणामनयं कुरुते नृणाम् ॥119॥

मंगल के द्वारा प्रताडित मार्ग में शनैश्चर गमन करे तो शूद्र और चोरों का अकल्याण होता है ॥119॥

सौरेण तु हतं मार्गं [1]वाचस्पतिः प्रपद्यते ।
भयं सर्वजनानां तु करोति बहुधा तदा ॥120॥

---

1. वाचस्पति मु० ।

यदि शनैश्चर के द्वारा अनाक्रान्त मार्ग में बृहस्पति गमन करे तो सभी मनुष्यों को भय होता है ॥120॥

राजदीपो निपतते भ्रश्यतेऽधः कदाचन ।
षण्मासात् पंचमासाद्वा नृपमन्यं निवेदयेत् ॥121॥

यदि राजा का दीपक अकारण नीचे गिर जाय तो छः महीने या पाँच महीने में अन्य राजा होने का निर्देश समझना चाहिए ॥121॥

[1]हसन्ति यत्र निर्जीवाः धावन्ति प्रवदन्ति च ।
जातमात्रस्य तु शिशोः सुमहद्भयमादिशेत् ॥122॥

जहाँ निर्जीव—जड़ पदार्थ हँसते हों, दौड़ते हों और बातें करते हों वहाँ उत्पन्न हुए समस्त बच्चों को महान् भय का निर्देश समझना चाहिए ॥122॥

निवर्तते यदा छाया [2]परितो वा [3]जलाशयान् ।
प्रदृश्यते च दैत्यानां सुमहद्भय[4]मादिशेत् ॥123॥

यदि जलाशय—तालाब, नदी आदि के चारों ओर से छाया लौटती हुई दिखलाई पड़े तो दैत्यों के महान् भय का निर्देश समझना चाहिए ॥123॥

अद्वारे द्वारकरणं कृतस्य च विनाशनम् ।
हृतस्य ग्रहणं वाऽपि तदा ह्युत्पातलक्षणम् ॥124॥

अद्वार में—जहाँ द्वार करने योग्य न हो वहाँ द्वार करना, किये हुए कार्य का विनाश करना और नष्ट वस्तु को ग्रहण करना उत्पात का लक्षण है ॥124॥

[5]यजनोच्छेदनं यस्य ज्वलितांगमथाऽपि वा ।
स्पन्दते वा स्थिरं किंचित् कुलहानिं तदाऽऽदिशेत् ॥125॥

यदि किसी के यजन—पूजा, प्रतिष्ठा, यज्ञादि का स्वयमेव उच्छेद—विनाश हो अथवा अंग प्रज्वलित होते हों अथवा स्थिर वस्तु में चंचलता उत्पन्न हो जाय तो कुलहानि समझनी चाहिए ॥125॥

दैवज्ञा भिक्षवः प्राज्ञाः साधवश्च पृथग्विधाः ।
परित्यजन्ति तं देशं ध्रुवमन्यत्र शोभनम् ॥126॥

दैवज्ञ—ज्योतिषियों, भिक्षुओं, मनीषियों और साधुओं को विभिन्न प्रकार के उत्पात होने वाले देश को छोड़कर अन्यत्र निवास करना ही श्रेष्ठ होता है ॥126॥

---

1. निर्जीवस्थावर्णं हसने सम्भवेत् प्रवर्तन मु० । 2. परितस्ता मु० । 3. जलाशयान् मु० । 4. लक्षणम् मु० । 5. यजनं छेदनं यस्य मु० ।

युद्धानि कलहा बाधा विरोधाऽरिविवृद्धय: ।
अभीक्ष्णं यत्र वर्तन्ते देशं परिवर्जयेत् ॥127॥

युद्ध, कलह, बाधा, विरोध एवं शत्रुओं की वृद्धि जिस देश में निरन्तर हो उस देश का त्याग कर देना चाहिए ॥127॥

विपरीता यदा छाया दृश्यन्ते वृक्ष-वेश्मनि ।
यदा ग्रामे पुरे वाऽपि प्रधानवधमादिशेत् ॥128॥

ग्राम और नगर में जब वृक्ष और घर की छाया विपरीत— जिस समय पूर्व में छाया रहती हो, उस समय पश्चिम में और जब पश्चिम में रहती हो तब पूर्व में हो तो प्रधान का वध होता है ॥128॥

महावृक्षो यदा शाखामुत्करां मुञ्चते द्रुतम् ।
भोजकस्य वधं विन्द्यात् सर्पाणां वधमादिशेत् ॥129॥

महावृक्ष जब अकारण ही अपनी शाखा को शीघ्र ही गिराता है तो भोजक लोगों का वध होता है तथा सर्पों का भी वध होता है ॥129॥

पांशुवृष्टिस्तथोल्का च निर्घातश्च सुदारुणा: ।
यदा पतन्ति युगपद् घ्नन्ति राष्ट्रं सनायकम् ॥130॥

धूलि की वर्षा, उल्कापात, भयंकर कड़क -विद्युत्पात एक साथ हों तो राष्ट्रनायक का विनाश होता है ॥130॥

रसाश्च विरसा यत्र नायकस्य च दूषणम् ।
तुलामानस्य हसनं राष्ट्रनाशाय तद्भवेत् ॥131॥

जब अकारण ही रस-विरस विकृत रस वाले हों तो नायक में दोष लगता है तथा तराजू के हँसने से राष्ट्र का नाश होता है ॥131॥

शुक्लप्रतिपदि चन्द्रे समं भवति मण्डलम् ।
भयंकरं तदा तस्य नृपस्याथ न संशय: ॥132॥

यदि शुक्ल प्रतिपदा को चन्द्रमा के दोनों शृंग समान दिखलाई पड़ें—समान मण्डल हो तो निस्सन्देह राजा के लिए भय करने वाला होता है ॥132॥

समाभ्यां यदि शृंगाभ्यां यदा दृश्येत चन्द्रमा: ।
धान्यं भवेत् तदा न्यूनं मन्दवृष्टिं विनिर्दिशेत् ॥133॥

यदि उसी दिन दोनों शृंग समान दिखलाई पड़ें तो अन्न की उपज कम होती है और वृष्टि भी कम होती है । यहाँ विशेषता यह है कि आषाढ़ शुक्ला प्रतिपदा

को चन्द्रमा के शृंगों का अवलोकन करना चाहिए ॥133॥

वामशृंगं यदा वा स्यादुन्नतं[1] दृश्यते भृशम्।
तदा सृजति लोकस्य दारुणत्वं न संशयः ॥134॥

यदि चन्द्रमा का बायाँ शृंग उन्नत मालूम हो तो लोक में दारुण भय का संचार होता है, इसमें संशय नहीं है ॥134॥

ऊर्ध्वस्थितं नृणां पापं तिर्यक्स्थं राजमन्त्रिणाम्।
अधोगतं च वसुधां सर्वां हन्यादसंशयम् ॥135॥

ऊर्ध्वस्थित चन्द्रमा मनुष्यों के पाप का, तिर्यक्स्थ राजा और मन्त्री के पाप का, अधोगत समस्त पृथ्वी के पाप का निस्सन्देह विनाश करता है ॥135॥

शस्त्रं रक्ते भयं पीते धूम्रे दुर्भिक्षविद्रवे।
चन्द्रे तदोदिते ज्ञेयं भद्रबाहुवचो यथा ॥136॥

चन्द्रमा यदि रक्तवर्ण का उदित हो तो शस्त्र का भय, पीतवर्ण का हो तो दुर्भिक्ष का भय और धूम्रवर्ण होने पर आतंक का सूचक होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥136॥

दक्षिणात्परतो दृष्टः चोरदूतभयंकरः।
अपरे तोयजीवानां वायव्ये हन्ति वै गदम् ॥137॥

यदि दक्षिण की ओर शृंग या रक्तवर्णादि दिखलाई पड़ें तो चोर और दूत को भयकारी होता है, पूर्व की ओर दिखलाई पड़े तो जल-जन्तुओं का और वायव्य दिशा की ओर दिखलाई पड़े तो रोग का विनाश होता है ॥137॥

[2]विवदत्सु च लिंगेषु यानेषु प्रवदत्सु च।
वाहनेषु च हृष्टेषु विन्द्याद्भयमुपस्थितम् ॥138॥

शिवलिंगों में विवाद होने पर, सवारियों में वार्तालाप होने पर और वाहनों में प्रसन्नता दिखलाई पड़ने पर महान भय होता है ॥138॥

ऊर्ध्वं वृषो यदा नर्दत् तदा स्याच्च भयंकरः।
ककुदं चलते वापि तदाऽपि स भयंकरः ॥139॥

यदि बैल—साँड ऊपर को मुँह कर गर्जना करे तो अत्यन्त भयंकर होता है और वह अपने ककुद (कुब्ब) को चंचल करे तो भी भयंकर समझना चाहिए ॥139॥

---

1. उन्नत मु०। 2. प्रवदत्सु... [illegible] मु०।

व्याधयः प्रबला यत्र माल्यगन्धं न वायते ।
आहूतिपूर्णकुम्भाश्च विनश्यन्ति भयं वदेत् ।।140।।

जहाँ व्याधियाँ प्रबल हों, माल्यगन्ध न मालूम पड़ती हो और आहूतिपूर्ण कलश—मंगल-कलश विनाश को प्राप्त होते हों, वहाँ भय होता है ।।140।।

नववस्त्रं प्रसंगेन ज्वलते मधुरा गिरा ।
अरुन्धतीं न पश्येत स्वदेहं यदि दर्पणे ।।141।।

यदि नवीन वस्त्र अकारण जल जाय और मधुर वचन मुँह से निकलें, अरुन्धती तारा दिखलाई न पड़े तो महान् भय अवगत करना चाहिए अर्थात् मृत्यु की सूचना समझनी चाहिए ।।141।।

न पश्यति स्वकार्याणि परकार्यविशारदः ।
मैथुने यो निरक्तश्च न च सेवति मैथुनम् ।।142।।
न मित्रचित्तो भूतेषु स्त्रीं वृद्धं [1]हिंसते शिशुम् ।
विपरीतश्च सर्वत्र सर्वदा स भयावहः ।।143।।

जो परकार्य में तो रत हो, पर स्व कार्य का सेवन न करता हो, मैथुन में संलग्न रहने पर भी मैथुन का सेवन न करता हो, मित्र में जिसका चित्त आसक्त नहीं हो और जो स्त्री, वृद्ध और शिशुओं की हिंसा करता हो तथा स्वभाव और प्रकृति से विपरीत जितने भी कार्य हैं, सब भयप्रद हैं ।।142-143।।

अभीक्ष्णं [2]चापि सुप्तस्य निरुत्साहाविलम्बिनः ।
[3]अलक्ष्मीपूर्णचित्तस्य प्राप्नोति स महद्भयम् ।।144।।

जो निरन्तर सोने वाला है, निरुत्साही है और श्री से रहित है, उसे महान् भय की प्राप्ति होती है ।।144।।

क्रव्यादा शकुना यत्र बहुशो विकृतस्वनाः ।
तत्रेन्द्रियार्थविगुणा[4] श्रिया हीनाश्च मानवाः ।।145।।

जहाँ मांसभक्षी पक्षी अत्यधिक विकृत स्वर वाले हों वहाँ मनुष्य इन्द्रियों के अर्थों को ग्रहण करने की शक्ति से हीन और लक्ष्मी से रहित होते हैं। अर्थात् वहाँ अशक्तता और निर्धनता निवास करती है ।।145।।

निपतन्ति द्रुमशिछन्नो [5]स्वप्नेष्वभयलक्षणम् ।
रत्नानि यस्य नश्यन्ति बहुशः प्रज्वलन्ति वा ।।146।।

1. सेवते मु० । 2. [illegible] मु० । 3. अलक्ष्मीपूर्णा न चिरात् मु० । 4. विगुणाः मु० । 5. स्वप्ने [illegible]लक्षणम् मु० ।

जो व्यक्ति स्वप्न में निर्भय होकर कटे हुए पेड़ को गिरते देखता है, उसके रत्न नष्ट हो जाते हैं अथवा बहुमूल्य पदार्थ अग्नि लगने से जल जाते हैं ॥146॥

क्षीयते वा म्रियते वा पंचमासात् परं नृपः।
गजस्यारोहणे यस्य यदा दन्तः प्रभिद्यते ॥147॥

जब हाथी पर सवारी करते समय, हाथी के दाँत टूट जाएँ तो सवारी करने वाला राजा पाँच महीने के उपरान्त क्षय या मरण को प्राप्त हो जाता है ॥147॥

दक्षिणे राजपीडा स्यात्सेनायास्तु वधं वदेत्।
मूलभंगस्तु यातारं करिकानं नृपं वदेत् ॥148॥

[1]मध्यमंसे गजाध्यक्षमग्रजे स पुरोहितम्।
बिडाल-नकुलोलूक-काक-कंकसमप्रभः ॥149॥

यदा भंगो भवत्येषां तदा ब्रूयादसत्फलम्।
शिरो नासाग्रकण्ठेन सानुस्वारं निशंसनैः ॥150॥

[2]भक्षितं संचितं यच्च न तद् ग्राह्यन्तु वाजिनाम्।
नाभ्यंगतो महोरस्कः कण्ठे वृत्तो [3]यदेरितः ॥151॥

[4]पार्श्वे तदा भयं ब्रूयात् प्रजानामशुभंकरम्।
अन्योन्यं समुदीक्षन्ते हेष्यस्थानगता हयाः ॥152॥

यदि दाहिना दाँत टूटे तो राजपीड़ा और सेना का वध तथा मूल दाँतों का भंग होना गमन करने वाले राजाओं के लिए भ्रष्टत्व और भय देने वाला है ॥148॥

मध्य में टूटने पर गजाध्यक्ष और पुरोहित को भय होता है।

बिडाल, नकुल, उल्लूक, काक और बगुला दन्त का भंग हो तो असत् फल होता है ॥149

घोड़ों के सिर, नासाग्र भाग और कंठ के द्वारा सानुस्वार शब्द होने से संचित भोजन भी ग्राह्य नहीं होता।

जब छाती तानकर घोड़ा नाभि से कण्ठ तक अकड़ता हुआ शब्द करे तब वह समीपस्थ प्रजा को अशुभकारी और भयप्रद होता है ॥15।

यदि घोड़ा हींसते हुए आपस में देखें तो प्रजा को भय होता है ॥152॥

1. मध्यमं गजाध्यक्षमग्रजे मु०। 2. भक्षार्थी मु०। 3. भूर्जितः। 4. स पार्श्वे दन्तानुरूपो ना गुल्मं हि… मु०।

शयनासने परीक्षा ग्राममारीं वदेत् ततः ।
सन्ध्यायां सुप्रदीप्तायां यदा सेनामुखा हयाः ॥153॥

यदि सन्ध्याकाल में घोड़े सेना के सम्मुख हींसते हों अथवा शयन और आसन की परीक्षा करके अशुभ होते हों तो ग्राममारी का निर्देश करना चाहिए ॥153॥

त्रासयन्तो विभेषन्तो घोरात् पादसमुद्धृताः ।
दिवसं यदि वा रात्रिं हेषन्ति सहसा हयाः ॥154॥

यदि घोड़े पैरों से मिट्टी उखाड़ते हुए डराते हों या स्वयं डरकर छिप रहे हों तो भय समझना चाहिए । दिन अथवा रात्रि में घोड़ों का अकस्मात् हींसना भी भय का निर्देशक है ॥154॥

सन्ध्यायां सुप्रदीप्तायां तदा विन्द्यात् पराजयम् ।
[1]उन्मुखा रुदन्तो वा दीनं दीनं समन्ततः ॥155॥

यदि सन्ध्याकाल में घोड़े ऊपर को मुँह किये हुए रोते हों या दीन होकर चारों ओर भ्रमण करते हों तो पराजय समझना चाहिए ॥155॥

[2]हया यत्र तदोत्पातं निर्दिशेद्राजमृत्यवे ।
विच्छिद्यमाना हेषन्ते यदा रूक्षस्वरं हयाः ॥156॥

जब घोड़े रूक्ष स्वर और टूटी-फूटी आवाज में हींसते हों तो वे अपने इस उत्पात द्वारा राजा की मृत्यु की सूचना देते हैं ॥156॥

[3]खरवद्भीमनादेन तदा विन्द्यात् पराजयम् ।
उत्तिष्ठन्ति निषीदन्ति विश्वसन्ति भ्रमन्ति च ॥157॥

जब घोड़े गधों के समान तीव्र स्वर में रेंकें और उठें-बैठें तथा भ्रमण करें तो पराजय समझना चाहिए ॥157॥

रोगार्त्ता इव हेषन्ते तदा विन्द्यात् पराजयम् ।
ऊर्ध्वमुखा विलोकन्ते विन्द्याज्जनपदे भयम् ॥158॥

यदि रोग से पीड़ित हुए के समान हींसते हों तो पराजय समझना चाहिए और ऊर्ध्वमुख रेंकें तो जनपद को भय होता है ॥158॥

शान्ता प्रहृष्टा धर्मार्त्ता विचरन्ति यदा हयाः ।
वाजिनां वीक्ष्यमाणास्ते न ते ग्राह्या विपश्चितैः ॥159॥

---

1. [illegible] मु. [illegible] प्रति में नहीं है, 2. 156 [illegible] मु. प्रति में [illegible] है । 3. यह श्लोक का पूर्वार्ध मु. [illegible] प्रति में नहीं है।

जब घोड़े शान्त, प्रसन्न और काम से पीड़ित होकर विचरण करें और स्त्रियों के द्वारा देखे जाते हों तो विद्वानों को उनका शुभाशुभत्व नहीं लेना चाहिए ॥159॥

मूत्रं पुरीषं बहुशो विलुप्ताङ्गा प्रकुर्वतः।
हेषन्ते दीननिद्रार्त्तास्तदा कुर्वन्ति ते जयम् ॥160॥

यदि घोड़े विलुप्तांग होकर अधिक मूत्र और लीद करें और निद्रा से पीड़ित होकर हींसें तो जय की सूचना देते हैं ॥160॥

स्तम्भयन्तोऽथ लांगूलं हेषन्तो दुर्मनो हयाः।
मुहुर्मुहुश्च जृम्भन्ते तदा शस्त्रभयं वदेत् ॥161॥

पूँछ को स्तम्भित करते हुए खिन्न होकर घोड़े हींसें और बार-बार जँभाई लें तो शस्त्रभय कहना चाहिए ॥161॥

यदा विरुद्धं हेषन्ते स्वल्पं विकृतिकारणम्।
तदोपसर्गो व्याधिर्वा सद्यो भवति रात्रिजः ॥162॥

यदि घोड़े विकृत कारणों के होने पर विपरीत हींसते हों तो रात्रि में उत्पन्न होने वाली व्याधि या उपसर्ग शीघ्र ही होते हैं ॥162॥

भूम्यां प्रसित्वा ग्रासं तु हेषन्ते प्राङ्मुखा यदा।
अश्वारोधाश्च बद्धाश्च तदा क्लिश्यति क्षुद्भयम् ॥163॥

पृथ्वी में से एकाध कौर घास खाकर यदि पूर्व की ओर मुखकर घोड़े हींसें तो क्षुधा के क्लेश और भय की सूचना देते हैं ॥163॥

शरीरं केसरं पुच्छं यदा ज्वलति वाजिनः।
परचक्रं प्रघातं च देशभंगं च निर्दिशेत् ॥164॥

यदि घोड़ों के शरीर, पूँछ और कमर जलने लगें तो परचक्रागमन का आगमन और देशभंग की सूचना समझनी चाहिए ॥164॥

यदा बाला प्रक्षरन्ते पुच्छं चटपटायते।
वाजिनः सस्फुलिंगा वा तदा विद्यान्महद्भयम् ॥165॥

यदि अकारण घोड़ों के बाल टूटकर गिरने लगें, पूँछ चट-चट करने लगे और उनके शरीर से स्फुलिंग निकलने लगें तो अत्यधिक भय समझना चाहिए ॥165॥

हेषन्ते तु तदा राज्ञः पूर्वाह्णे नाग-वाजिनः।
तदा सूर्यग्रहं विन्द्यादपराह्णे तु चन्द्रजम् ॥166॥

यदि दोपहर में पहले राजा के हाथी, घोड़े हींसने लगें तो सूर्यग्रह और दोपहर

के बाद हींसने लगें तो चन्द्रग्रह समझना चाहिए ॥166॥

शुष्कं काष्ठं तृणं वाऽपि यदा संदंशते हय:।
हेषन्ते सूर्यमुद्वीक्ष्य तदाऽग्निभयमादिशेत् ॥167॥

सूखे काठ, तिनके आदि खाते हुए घोड़े सूर्य की ओर मुँहकर हींसने लगें तो अग्निभय समझना चाहिए ॥167॥

यदा शेवालजले वाऽपि भग्नं कृत्वा मुखं हया:।
हेषन्ते विकृता यत्र तदाप्यग्निभयं भवेत् ॥168॥

जब घोड़े शेवाल युक्त जल में मुँह डुबाकर, हींसें तो उस समय भी अग्निभय समझना चाहिए ॥168॥

उल्कासमाना हेषन्ते संदृश्य दशनान् हया:।
संग्रामे विजयं क्षेमं भर्तु: पुष्टिं विनिर्दिशेत् ॥169॥

जब उल्का के समान दाँत निकालते हुए घोड़े हींसें तो स्वामी के लिए संग्राम में विजय, क्षेम और पुष्टि का निर्देश करते हैं ॥169॥

प्रसारयित्वा ग्रीवां च स्तम्भयित्वा च वाजिनाम्।
हेषन्ते विजयं ब्रूयात्संग्रामे नात्र संशय: ॥170॥

गर्दन को जरा-सा झुकाकर टेढ़ी करके स्थिर रूप से खड़े होकर जब घोड़े हींसें तो संग्राम में निस्सन्देह विजय की प्राप्ति होती है ॥170॥

श्रमणा ब्राह्मणा वृद्धा न पूज्यन्ते यथा पुरा।
सप्तमासात् परं यत्र भयमाख्यात्युपस्थितम् ॥171॥

जिस नगर में श्रमण, ब्राह्मण और वृद्धों की पूजा नहीं की जाती है उस नगर में सात महीने के उपरान्त भय उपस्थित होता है ॥171॥

अनाहतानि तूर्याणि नर्दन्ति विकृतं यदा।
षष्ठे मासे नृपो वध्य: भयानि च तदाऽऽदिशेत् ॥172॥

जब बाजे बिना बजाये ही विकृत घोर शब्द करें तो छठे महीने में राजा का वध होता है और वहाँ भय भी होता है ॥172॥

कृत्तिकासु यदोत्पातो दीप्तायां दिशि दृश्यते।
आग्नेयीं वा समाश्रित्य त्रिपक्षादग्नितो भयम् ॥173॥

यदि पूर्व दिशा में कृत्तिका नक्षत्र में उत्पात दिखलाई पड़े अथवा आग्नेय

कोण में उत्पात दिखलाई पड़े तो तीन पक्ष—डेढ़ महीने में अग्नि का भय होता है ॥173॥

रोहिण्यां तु यदा घोषो निर्वातो यदि दृश्यते।
सर्वा: प्रजा: प्रपीड्यन्ते षण्मासात्परतस्तदा ॥174॥

यदि रोहिणी नक्षत्र में बिना वायु के शब्द सुनाई पड़े तो इस उत्पात के छः महीने पश्चात् सारी प्रजा को पीड़ा होती है ॥174॥

उल्कापात: सनिर्घात: सवातो यदि दृश्यते।
रोहिण्यां पञ्चमासेन कुर्याद् घोरं महद्भयम् ॥175॥

यदि रोहिणी नक्षत्र में घर्षण और वायु सहित उल्कापात हो तो पाँच महीने में घोर भय होता है ॥175॥

एवं नक्षत्रशेषेषु यद्युत्पाता: पृथग्विधा:।
देवतार्जनलीनं च प्रसाध्यं भिक्षुणा सदा ॥176॥

इसी प्रकार अन्य नक्षत्रों में भिन्न-भिन्न प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो भिक्षुओं को देवपूजा द्वारा उस उत्पात के अनिष्ट फल को दूर करना चाहिए। अर्थात् उत्पात की शान्ति पूजा-पाठ द्वारा करनी चाहिए ॥176॥

वाहनं महिषीं पुत्रं बलं सेनापतिं पुरम्।
पुरोहितं नृपं वित्तं घ्नन्त्युत्पाता: समुच्छ्रिता: ॥177॥

उत्पन्न हुए विभिन्न प्रकार के उत्पात सवारी, सेना, रानी, पुत्र, सेनापति, पुरोहित, अमात्य, राजा और धन आदि का विनाश करते हैं ॥177॥

एषामन्यतरं हित्वा निर्वृतिं यान्ति ते सदा।
परं द्वादशरात्रेण सद्यो नाशयिता पिता ॥178॥

जो व्यक्ति इन उत्पातों में से किसी भी उत्पात की अवहेलना करते हैं, वे बारह रात्रियों में ही कष्ट को प्राप्त करते हैं तथा उनके कुटुम्ब में पिता या अन्य कोई मृत्यु को प्राप्त होता है ॥178॥

यत्रोत्पाता न दृश्यन्ते यथाकालमुपस्थिता:।
तेन सञ्चयदोषेण राजा देशश्च [1]नश्यति ॥179॥

जहाँ यथा समय उपस्थित हुए उत्पातों को नहीं देखा जाता है, वहाँ उत्पातों के द्वारा संचित दोष से राजा और देश दोनों का नाश होता है ॥179॥

---

1. नश्यत मु०।

देवान् प्रव्रजितान् विप्रांस्तस्माद्राजाऽभिपूजयेत् ।
तदा शाम्यति तत् पापं यथा साधुभिरीरितम् ॥180॥

उत्पात से उत्पन्न हुए दोष की शान्ति के लिए देव, दीक्षित मुनि और ब्राह्मण—व्रती व्यक्तियों की पूजा करनी चाहिए। इससे जिस पाप से उत्पात उत्पन्न होते हैं, वह मुनियों के द्वारा उपदिष्ट होकर शान्त हो जाता है ॥180॥

यत्र देशे समुत्पाता दृश्यन्ते भिक्षुभिः क्वचित् ।
ततो देशादतिक्रम्य व्रजेयुरन्यतस्तदा ॥181॥

मुनियों को जिस देश में कहीं भी उत्पात दिखलाई पड़े उस देश को छोड़कर अन्य देश में चला जाना चाहिए ॥181॥

सचित्ते [1]सुभिक्षे देशे निरुत्पाते प्रियातिथौ ।
विहरन्ति सुखं तत्र भिक्षवो धर्मचारिणः ॥182॥

धन-धान्य से परिपूर्ण, सुभिक्ष युक्त, निरुपद्रव और अतिथि-सत्कार करने वाले देश में धर्माचरण करने वाले साधु सुखपूर्वक विहार करते हैं ॥182॥

इति सकलमुनिजनानन्दमहामुनीश्वरभद्रबाहुविरचिते निमित्तशास्त्रे सकलशुभाऽशुभव्याख्यानविधानकथने चतुर्दशः परिच्छेदः समाप्तः ॥14॥

विवेचन—स्वभाव के विपरीत होना उत्पात है। ये उत्पात तीन प्रकार के होते हैं—दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। देव-प्रतिमाओं द्वारा जिन उत्पातों की सूचना मिलती है, वे दिव्य कहलाते हैं। नक्षत्रों का विकार, उल्का निर्घात, पवन, विद्युत्पात, गन्धर्वपुर एवं इन्द्रधनुषादि अन्तरिक्ष उत्पात हैं। पृथ्वी पर चल एवं स्थिर पदार्थों का विपरीत रूप में दिखलायी पड़ना भौम उत्पात है। आचार्य ऋषिपुत्र ने दिव्य उत्पातों का वर्णन करते हुए बतलाया है कि तीर्थंकर प्रतिमा का छत्र भंग होना, हाथ-पाँव, मस्तक, भामण्डल का भंग होना अशुभसूचक है। जिस देश या नगर में प्रतिमाजी स्थिर या चलित भंग हो जायें तो उस देश या नगर में अशुभ होता है। छत्र भंग होने से प्रशासक या अन्य किसी नेता की मृत्यु, रथ टूटने से राजा का मरण तथा जिस नगर में रथ टूटता है, उस नगर में छः महीने के पश्चात् अशुभ फल की प्राप्ति होती है। नगर में महामारी, चोरी, डकैती या अन्य अशुभ कार्य छः महीनों के भीतर होते हैं। भामण्डल के भंग होने से तीसरे या पाँचवें महीने में अशान्ति आती है। उस प्रदेश के शासक या शासन परिवार में किसी की मृत्यु होती है। नगर में धन-जन की हानि होती है। प्रतिमा

1. भिक्षे।

के हाथ भंग होने से तीसरे महीने में कष्ट और पाँव भंग होने से सातवें महीने में कष्ट होता है। हाथ और पाँव के भंग होने का फल नगर के साथ नगर के प्रशासक, मुखिया एवं पंचायत के प्रमुख को भी भोगना पड़ता है। प्रतिमा का अचानक भंग होना अत्यन्त अशुभ है। यदि रखी हुई प्रतिमा स्वयमेव ही मध्याह्न या प्रातःकाल में भंग हो जाये तो उस नगर में तीन महीने के उपरान्त महा रोग या संक्रामक रोग फैलते हैं। विशेष रूप से हैजा, प्लेग एवं इनफ्लुएंजा की उत्पत्ति होती है। पशुओं में भी रोग उत्पन्न होता है।

(यदि स्थिर प्रतिमा अपने स्थान से हटकर दूसरी जगह पहुँच जाय या चलती हुई मालूम पड़े तो तीसरे महीने अचानक विपत्ति आती है। उस नगर या प्रदेश के प्रमुख अधिकारी को मृत्यु तुल्य कष्ट भोगना पड़ता है। जनसाधारण को भी आधि-व्याधिजन्य कष्ट उठाना पड़ता है। यदि प्रतिमा सिंहासन से नीचे उतर आये अथवा सिंहासन से नीचे गिर जाये तो उस प्रदेश के प्रमुख की मृत्यु होती है। उस प्रदेश में अकाल, महामारी और वर्षाभाव रहता है। यदि उपर्युक्त उत्पात लगातार सात दिन या पन्द्रह दिन तक हों तो निश्चयतः प्रतिपादित फल की प्राप्ति होती है। यदि एकाध दिन उत्पात होकर शान्त हो गया तो पूर्ण फल प्राप्त नहीं होता है। यदि प्रतिमा जोर से निकालकर कई दिनों तक रोती हुई दिखलाई पड़े तो नगर में यह घटना घटती है, उस नगर में अत्यन्त उपद्रव होता है। प्रशासक और प्रजाजनों में झगड़ा होता है। धन-धान्य की क्षति होती है। चोर और डाकुओं का उपद्रव अधिक बढ़ता है। संग्राम, मारकाट एवं संघर्ष की स्थिति बढ़ती जाती है। प्रतिमा का रोना राजा, मन्त्री या किसी महान् नेता की मृत्यु का सूचक; हँसना पारस्परिक विद्वेष, संघर्ष एवं कलह का सूचक; चलना और काँपना बीमारी, संघर्ष, कलह, विवाद, आपसी फूट एवं गोलाकार चक्कर काटना भय, विद्वेष, सम्मान हानि तथा देश की धन-जन-हानि का सूचक है। प्रतिमा का हिलना तथा रंग बदलना अनिष्टसूचक एवं तीन महीनों में नाना प्रकार के कष्टों का सूचक अवगत करना चाहिए। प्रतिमा का पसीजना अग्निभय, चोरभय एवं महामारी का सूचक है। धुआँ सहित प्रतिमा से पसीना निकले तो जिस प्रदेश में यह घटना घटित होती है, उसके सौ कोस की दूरी तक चारों ओर धन-जन की क्षति होती है। अतिवृष्टि या अनावृष्टि के कारण जनता को महान् कष्ट होता है।)

तीर्थंकर की प्रतिमा से पसीना निकलना धार्मिक विद्वेष एवं संघर्ष की सूचना देता है। मुनि और श्रावक दोनों पर किसी प्रकार की विपत्ति आती है तथा दोनों को विधर्मियों द्वारा उपसर्ग सहन करना पड़ता है। अकाल और अवर्षण की स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है। यदि शिव की प्रतिमा से पसीना निकले तो ब्राह्मणों को कष्ट, कुबेर की प्रतिमा से पसीना निकले तो वैश्यों को कष्ट, कामदेव

की प्रतिमा से पसीना निकले तो आगम की हानि, कृष्ण की प्रतिमा से पसीना निकले तो सभी जातियों को कष्ट; सिद्ध और बौद्ध प्रतिमाओं से धुआँ सहित पसीना निकले तो उस प्रदेश के ऊपर महान् कष्ट, चण्डिका देवी की प्रतिमा से पसीना निकले तो स्त्रियों को कष्ट, वाराही देवी की प्रतिमा से पसीना निकले तो हाथियों का ध्वंस; नागिन देवी की प्रतिमा से धुआँ सहित पसीना निकले तो गर्भनाश; राम की प्रतिमा से पसीना निकले तो देश में महान् उपद्रव, लूट-पाट, धननाश; सीता या पार्वती की प्रतिमा से पसीना निकले तो नारी-समाज को महान् कष्ट एवं सूर्य की प्रतिमा से पसीना निकले तो संसार को अत्यधिक कष्ट और उपद्रव सहन करने पड़ते हैं। यदि तीर्थंकर की प्रतिमा भग्न हो और उसमें अग्नि की लपट या रक्त की धारा निकलती हुई दिखलायी पड़े तो संसार में मार-काट निश्चय होती है। आपस में मार-काट हुए बिना किसी को शान्ति नहीं मिलती है। किसी भी देव की प्रतिमा का भंग होना, फूटना या हँसना चलना आदि अशुभकारक है। उक्त क्रियाएँ एक सप्ताह तक लगातार होती हों तो निश्चय ही तीन महीने के भीतर अनिष्टकारक फल मिलता है। ग्रहों की प्रतिमाएँ, चौबीस शासनदेवों एवं शासनदेवियों की प्रतिमाएँ, क्षेत्रपाल और दिक्पालों की प्रतिमाएँ इनमें उक्त प्रकार की विकृति होने से व्याधि, धनहानि, मरण एवं अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। देवकुमार, देवकुमारी, देववनिता एवं देवदूतों के जो विकार उत्पन्न होते हैं, वे समाज में अनेक प्रकार की हानि पहुँचाते हैं। देवों के प्रसाद, भवन, चैत्यालय, वेदिका तोरण, केतु आदि के जलने या बिजली द्वारा अग्नि प्राप्त होने से उस देश में अत्यन्त अनिष्टकर क्रियाएँ होती हैं। उक्त क्रियाओं का फल छः महीने में प्राप्त होता है। भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासी देवों के प्रकृति विपर्यय से लोगों को नाना प्रकार के कष्टों का सामना करना पड़ता है।

आकाश में असमय में इन्द्रधनुष दिखलायी पड़े तो प्रजा को कष्ट, वर्षाभाव और धनहानि होती है। इन्द्रधनुष का वर्षा ऋतु में होना ही शुभसूचक माना जाता है, अन्य ऋतु में अशुभसूचक कहा गया है। आकाश से रुधिर, मांस, अस्थि और चर्बी की वर्षा होने से संग्राम, जनता को भय, महामारी एवं प्रशासकों में मतभेद होता है। धान्य, सुवर्ण, वल्कल, पुष्प और फल की वर्षा हो तो उस नगर का विनाश होता है, जिसमें यह घटना घटती है। जिस नगर में कोयले और धूलि की वर्षा होती है, उस नगर का सर्वनाश होता है। बिना बादल के आकाश से ओलों का गिरना, बिजली का तड़कना तथा बिना गर्जन के अकस्मात् बिजली का गिरना उस प्रदेश के लिए भयोत्पादक है तथा नाना प्रकार की हानियाँ होती हैं। किसी भी व्यक्ति को शान्ति नहीं मिल सकती है। निर्मल सूर्य में छाया दिखलायी न दे अथवा विकृत छाया दिखलायी दे तो देश में महाभय होता है। जब दिन या

रात में मेघहीन आकाश में पूर्व या पश्चिम दिशा में इन्द्रधनुष दिखलायी देता है, तब उस प्रदेश में घोर दुर्भिक्ष पड़ता है। जब आकाश में प्रतिध्वनि हो, तूर्य-तुरई की ध्वनि सुनाई दे एवं आकाश में मृदंग, झालर का शब्द सुनाई पड़े तो दो महीने तक महाध्वनि से प्रजा पीड़ित रहती है। आकाश में किसी भी प्रकार का अन्य उत्पात दिखलाई पड़े तो जनता को कष्ट, व्याधि, मृत्यु एवं संघर्षजन्य दुःख उठाना पड़ता है।

दिन में धूलि का बरसना, रात्रि के समय मेघविहीन आकाश में नक्षत्रों का नाश या दिन में नक्षत्रों का दर्शन होना संघर्ष, मरण, भय और धन-धान्य का विनाश सूचक है। आकाश का बिना बादलों के रंग-बिरंग होना, विकृत आकृति और संस्थान का होना भी अशुभसूचक है। जहाँ छः महीनों तक लगातार हरे महीने उल्का दिखलाई देती रहे, वहाँ मनुष्य का मरण होता है। सफेद और धूसर रंग की उल्काएँ पुण्यात्मा कहे जाने वाले व्यक्तियों को कष्ट पहुँचाती हैं। पंचरंगी उल्का महामारी और इधर-उधर टकराकर नष्ट होने वाली उल्का देश में उपद्रव उत्पन्न करती है। अन्तरिक्ष निमित्तों का विचार करते समय पूर्वोक्त विद्युत्पात, उल्कापात आदि का विचार अवश्य कर लेना चाहिए।

भूमि पर प्रकृति विपर्यय उत्पात दिखलाई पड़ें तो अनिष्ट समझना चाहिए। ये उत्पात जिस स्थान में दिखलाई देते हैं, अनिष्ट फल उसी जगह घटित होता है। अस्त्र-शस्त्रों का जलना, उनसे शब्द होना, जलते समय अग्नि से शब्द होना तथा ईंधन के बिना जलाये अग्नि का जल जाना अनिष्टसूचक हैं। इस प्रकार के उत्पात में किसी आत्मीय की मृत्यु होती है। असमय में वृक्षों में फल-फूल का आना, वृक्षों का हँसना, रोना, दूध निकलना आदि उत्पात धनक्षय, शिशुओं में रोग तथा आपस में झगड़ा होने की सूचना देते हैं। वृक्षों से मद्य निकले तो वाहनों का नाश, रुधिर निकलने से संग्राम, शहद निकलने से रोग, तेल निकलने से भय और दुर्गन्धित पदार्थ निकलने से पशुक्षय होता है। अंकुर सूख जाने से वीर्य और अन्न का नाश, रोगहीन वृक्ष अकारण सूख जायें तो सेना का विनाश और अन्नक्षय, आप ही वृक्ष खड़ा होकर उठ बैठे तो देव का भय, कुसमय में फल फूलों का आना प्रशासन और नेताओं का विनाश, वृक्षों से ज्वाला और धुआँ निकले तो मनुष्यों का क्षय होता है। वृक्षों से मनुष्य के जैसा शब्द निकलता हुआ सुनाई पड़े तो अत्यन्त अशुभकारी होता है। इससे मनुष्यों में अनेक प्रकार की बीमारियाँ फैलती हैं, जनता में अनेक प्रकार से अशान्ति आती है।

कमल आदि के एक नाल में दो या तीन फल की उत्पत्ति हो अथवा दो फूल या फल दिखायी पड़ें तो जिस जगह यह घटना घटित होती है, वहाँ के प्रशासक का मरण होता है। जिस किसान के खेत में यह निमित्त दिखलाई पड़ता है, उसकी भी मृत्यु होती है। जिस गाँव में यह उत्पात दिखलाई पड़ता है, उस गाँव में

धन-धान्य के विनाश के साथ अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। फल-फूलों में विकार का दिखलाई पड़ना, प्रकृति विरुद्ध फल-फूलों का दृष्टिगोचर होना ही उस स्थान की शान्ति को नष्ट करने वाला तथा आपस में संघर्ष उत्पन्न करने वाला है। शीत और ग्रीष्म में परिवर्तन हो जाने से अर्थात् शीत ऋतु में गर्मी और ग्रीष्म ऋतु में शीत पड़ने से अथवा सभी ऋतुओं में परस्पर परिवर्तन हो जाने से दैवभय, राजभय, रोगभय और नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। यदि नदियाँ नगर के निकटवर्ती स्थान को छोड़कर दूर हटकर बहने लगें तो उन नगरों की आबादी घट जाती है, वहाँ अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं। यदि नदियों का जल विकृत हो जाय, वह रुधिर, तैल, घी, शहद आदि की गन्ध और आकृति के समान बहता हुआ दिखलाई पड़े तो भय, अशान्ति और धनक्षय होता है। कुओं से धूम निकलता हुआ दिखलाई पड़े, कुओं का जल स्वयं ही खौलने लगे, रोने और गाने का शब्द जल से निकले तो महामारी फैलती है। जल का रूप, रस, गन्ध और स्पर्श में परिवर्तन हो जाय तो भी महामारी की सूचना समझनी चाहिए।

स्त्रियों का प्रसव विकार होना, उनके एक साथ तीन-चार बच्चों का पैदा होना, उत्पन्न हुए बच्चों की आकृति पशुओं और पक्षियों के समान हो तो जिस कुल में यह घटना घटित होती है, उस कुल का विनाश, उस गाँव या नगर में महामारी, अवर्षण और अशान्ति रहती है। इस प्रकार के उत्पात का फल छह महीने से लेकर एक वर्ष तक प्राप्त होता है। घोड़ी, ऊँटनी, भैंस, गाय और हथिनी एक साथ दो बच्चे पैदा करें तो उनकी मृत्यु हो जाती है तथा उस नगर में मार-काट होती है। एक जाति का पशु दूसरे जाति के पशु के साथ मैथुन करे तो अमंगल होता है। दो बैल परस्पर में स्तनपान करें तथा कुत्ता गाय के बछड़े का स्तनपान करे तो महान् अमंगल होता है। पशुओं के विपरीत आचरण से भी अनिष्ट की आशंका समझनी चाहिए। यदि दो स्त्री जाति के प्राणी आपस में मैथुन करें तो भय, स्तनपान अकारण करें तो हानि, दुर्भिक्ष एवं धन-विनाश होता है।

रथ, मोटर, बहली आदि की सवारी बिना चलाये चलने लगे और बिना किसी खराबी के चलाने पर भी न चले तथा सवारियाँ चलाने पर भूमि में गड़ जायँ तो अशुभ होता है। बिना बजाये तुरही का शब्द होने लगे और बजाने पर बिना किसी प्रकार की खराबी के तुरही शब्द न करे तो उसमें परचक्र का आगमन होता है अथवा शासक का परिवर्तन होता है। नेताओं में मतभेद होता है और वे आपस में झगड़ते हैं। यदि पवन स्वयं ही शंख-सांय की विकृत ध्वनि करता हुआ चले तथा पवन से घोर दुर्गन्ध आती हो तो भय होता है, प्रजा का विनाश होता है तथा दुर्भिक्ष भी होता है। घर के पालतू पक्षिगण वनों जायें और वनैले पक्षी निर्भय होकर पुर में प्रवेश करें, दिन में चरने वाले रात्रि में अथवा रात्रि के चरने वाले दिन में प्रवेश करें तथा दोनों सन्ध्याओं में मृग और पक्षी मण्डल बाँधकर एकत्र

हों तो भय, मरण, महामारी एवं धान्य का विनाश होता है। सूर्य की ओर मुँह कर गीदड़ रोयें, कबूतर या उल्लू दिन में राजभवन में प्रवेश करे, प्रदोष के समय मुर्गा शब्द करे, हेमन्त आदि ऋतुओं में कोयल बोले, आकाश में बाज आदि पक्षियों का प्रतिलोम मण्डल विचरण करे तो भयदायी होता है। घर, चैत्यालय और द्वार पर अकारण ही पक्षियों का झुण्ड गिरे तो उस घर या चैत्यालय का विनाश होता है। यदि कुत्ता हड्डी लेकर घर में प्रवेश करे तो रोग उत्पन्न होने की सूचना देता है। पशुओं की आवाज मनुष्यों के समान मालूम पड़ती हो तथा वे पशु मनुष्यों के समान आचरण भी करें तो उस स्थान पर घोर संकट उपस्थित होता है। रात में पश्चिम दिशा की ओर कुत्ता शब्द करते हों और उनके उत्तर में शृगाल शब्द करें अर्थात् पहले कुत्ता बोलें, पश्चात् शृगाल अनन्तर पुनः कुत्ता, तदनन्तर शृगाल इस प्रकार शब्द करें तो उस नगर का विनाश छः महीने के बाद होने लगता है और तीन वर्षों तक उस नगर पर आपत्ति आती रहती है। भूकम्प हुए बिना पृथ्वी फट जाय, बिना अग्नि के धुआँ दिखलाई पड़े और बालक गण मार-पीट का खेल खेलते हुए कहें—मार डालो, पीटो, इसका विनाश कर दो तो उस प्रदेश में भूकम्प होने की सूचना समझनी चाहिए। बिना बनाये किसी व्यक्ति के घर की दीवारों पर गेरू के लाल चिह्न या कोयले से काले चित्र बन जायें तो उस घर का पाँच महीने में विनाश हो जाता है। जिस घर में अधिक मकड़ियाँ जाला बनाती हैं उस घर में कलह होती है। गाँव या नगर के बाहर दिन में शृगाल और उल्लू शब्द करें तो उस गाँव के विनाश की सूचना समझनी चाहिए। वर्षा काल में पृथ्वी का काँपना, भूकम्प होना, बादलों की आकृति का बदल जाना, पर्वत और घरों का चलायमान होना, भयंकर शब्दों का चारों दिशाओं में सुनाई पड़ना, सूखे हुए वृक्षों में अंकुर का निकल आना, इन्द्रधनुष का काले रूप में दिखलाई पड़ना एवं श्यामवर्ण की विद्युत का गिरना भय, मृत्यु और अनावृष्टि का सूचक है। जब वर्षा-ऋतु में अधिक वर्षा होने पर भी पृथ्वी सूखी दिखलाई पड़े, तो उस वर्ष दुर्भिक्ष की स्थिति समझनी चाहिए। ग्रीष्मऋतु में आकाश में बादल दिखलाई पड़ें, बिजली कड़के और चारों ओर वर्षा ऋतु की बहार दिखलाई पड़े तो भय तथा महामारी होती है। वर्षा ऋतु में तेज हवा चले और त्रिकोण या चौकोर ओले गिरें तो उस वर्ष अकाल की आशंका समझनी चाहिए। यदि गाय, बकरी, घोड़ी, हथिनी और स्त्री के विपरीत गर्भ की स्थिति हो तथा विपरीत सन्तान प्रसव करे तो राजा और प्रजा दोनों के लिए अत्यन्त कष्ट होता है। ऋतुओं में अस्वाभाविक विकार दिखलाई पड़े तो जगत् में पीड़ा, भय, संघर्ष आदि होते हैं। यदि आकाश में धूलि, अग्नि और धुआँ की अधिकता दिखलाई पड़े तो दुर्भिक्ष, चोरों का उपद्रव एवं जनता में अशान्ति होती है।

रोग-सूचक-उत्पात—चन्द्रमा कृष्ण वर्ण का दिखलाई दे तथा तारागण

विभिन्न वर्ण की टूटती हुई मालूम पड़ें तथा सूर्य उदयकाल में कई दिनों तक लगातार काला और रोता हुआ दिखलाई पड़े तो दो महीने उपरान्त महामारी का प्रकोप होता है। बिल्ली तीन बार रोकर चुप हो जाय तथा नगर के भीतर आकर शृगाल— सियार तीन बार रोकर चुप हो जाय तो उस नगर में भयंकर हैजा फैलता है। उल्कापात हरे वर्ण का हो, चन्द्रमा भी हरे वर्ण का दिखलाई पड़े तो सामूहिक रूप में ज्वर का प्रकोप होता है। यदि सूखे वृक्ष अचानक हरे हो जाएँ तो उस नगर में सात महीने के भीतर महामारी फैलती है। चूहों का समूह सेना बनाकर नगर के बाहर जाता हुआ दिखलाई पड़े तो प्लेग का प्रकोप समझना चाहिए। पीपल वृक्ष और वट वृक्ष में असमय में पुष्प फल आवें तो नगर या गाँव में पाँच महीनों के भीतर संक्रामक रोग फैलता है, जिससे सभी प्राणियों को कष्ट होता है। गोधा मेढक और मोर रात्रि में भ्रमण करें तथा श्वेत काक एवं गृद्ध घरों में घुस आयें तो उस नगर या गाँव में तीन महीने के भीतर बीमारी फैलती है। काक मैथुन देखने से छः मास में मृत्यु होती है।

धन-धान्य नाशसूचक उत्पात—वर्षा ऋतु में लगातार सात दिनों तक जिस प्रदेश में ओले बरसते हैं, उस प्रदेश के धन-धान्य का नाश हो जाता है। रात या दिन उल्लू किसी के घर में प्रविष्ट होकर बोलने लगे तो उस व्यक्ति की सम्पत्ति छः महीने में विलीन हो जाती है। घर के द्वार पर स्थित वृक्ष रोने लगें तो उस घर की सम्पत्ति विलीन होती है, घर में रोग एवं कष्ट फैलते हैं। अचानक घर की छत के ऊपर स्थित होकर श्वेत काक पाँच बार जोर-जोर से काँव-काँव करे, पुनः चुप होकर तीन बार धीरे-धीरे काँव-काँव करे तो उस घर की सम्पत्ति एक वर्ष में विलीन हो जाती है। यदि यह घटना नगर के बाहर पश्चिमी द्वार पर घटित हो तो नगर की सम्पत्ति विलीन हो जाती है। नगर के मध्य में किसी व्यन्तर की बाधा या व्यन्तर का दर्शन लगातार कई दिनों तक हो तो भी नगर की श्री विलीन हो जाती है। यदि आकाश में दिन भर धूल बरसती रहे, तेज वायु चले और दिन भयंकर मालूम हो तो उस नगर की सम्पत्ति नष्ट होती है, जिस नगर में यह घटना घटती है। जंगल में गयी हुई गायें मध्याह्न में ही रंभाती हुई लौट आयें और वे अपने बछड़ों को दूध न पिलायें तो सम्पत्ति का विनाश समझना चाहिए। किसी भी नगर में कई दिनों तक संघर्ष होता रहे, वहाँ के निवासियों में मेल-मिलाप न हो तो पाँच महीनों में समस्त सम्पत्ति का विनाश हो जाता है। वरुण नक्षत्र का केतु दक्षिण में उदय हो तो भी सम्पत्ति का विनाश समझना चाहिए। यदि लगातार तीन दिनों तक प्रातः सन्ध्या काली, मध्याह्न सन्ध्या नीली और सायं सन्ध्या मिश्रित वर्ण की दिखलाई पड़े तो भय, आतंक के साथ द्रव्य विनाश की भी सूचना मिलती है। रात को निरभ्र आकाश में ताराओं का अभाव दिखलाई पड़े या ताराएँ टूटती हुई मालूम हों तो रोग और धननाश दोनों फल प्राप्त होते

है। यदि ताराओं का रंग भस्म के समान मालूम हो, दक्षिण दिशा रुदन करती हुई और उत्तर दिशा हँसती हुई-सी दिखलाई पड़े तो धन-धान्य का विनाश होता है। पशुओं की वाणी यदि मनुष्य के समान मालूम हो तो धन धान्य के विनाश के साथ संग्राम की सूचना भी मिलती है। कबूतर अपने पंखों को पटकता हुआ जिस घर में उल्टा गिरता है और अकारण ही मृत जैसा हो जाता है, उस घर की सम्पत्ति का विनाश हो जाता है। यदि गाँव या नगर के बीस-पच्चीस नंगे बच्चे धूलि में खेल रहे हों, और वे अकस्मात् 'नष्ट हो गया' 'नष्ट हो गया' इन शब्दों का व्यवहार करें तो उस नगर से सम्पत्ति रूठकर चली जाती है। रथ, मोटर, इक्का, रिक्शा, साइकिल आदि की सवारी पर चढ़ते ही कोई व्यक्ति गाली गिराते हुए दिखलाई पड़े तो भी धननाश होता है। दक्षिण दिशा की ओर से शृगाल का रोते हुए नगर में प्रवेश करना धनहानि का सूचक है।

वर्षाभाव सूचक उत्पात—ग्रीष्म ऋतु में आकाश में इन्द्रधनुष दिखलाई पड़े, माघ मास में गर्मी पड़े तो उस वर्ष वर्षा नहीं होती है। वर्षा ऋतु के आगमन पर कुहासा छा जाये तो उस वर्ष वर्षा का अभाव जानना चाहिए। आषाढ़ महीने के प्रारम्भ में इन्द्रधनुष का दिखलाई पड़ना भी वर्षाभाव सूचक है। सर्प को छोड़कर अन्य जाति के प्राणी सन्तान का भक्षण करें तो वर्षाभाव और घोर दुर्भिक्ष की सूचना समझनी चाहिए। यदि चूहे लड़ते हुए दिखलाई पड़ें, रात के समय श्वेत धनुष दिखलाई दे, सूर्य में छेद मालूम पड़े, चन्द्रमा टूटा हुआ-सा दिखलाई पड़े, धूलि में चिड़ियाँ स्नान करें और सूर्य के अस्त होते समय सूर्य के पास ही दूसरा उद्योतवाला सूर्य दिखाई दे तो वर्षाभाव होता है तथा प्रजा को कष्ट उठाना पड़ता है।

अग्निभय सूचक उत्पात—सूखे काठ, तिनके, घास आदि का भक्षण कर घोड़े सूर्य की ओर मुँह कर हींसने लगें तो तीन महीने में नगर में अग्नि का प्रकोप होता है। घोड़ों का जल में हींसना, गायों का अग्नि चाटना, या खाना, सूखे वृक्षों का स्वयं जल उठना, सूखा घास या लकड़ी में से स्वयं धुआँ निकलना, लड़कों का आग से खेल करना, या खेलते-खेलते बच्चे घर में आग ले आयें, पक्षी आकाश में उड़ते हुए अकस्मात् गिर जायें तो उस गाँव या नगर में पाँच दिन से लेकर तीन महीने तक अग्नि का प्रकोप होता है।

राजनीतिक उपद्रव सूचक—जिस स्थान पर मनुष्य गाना गा रहे हों, वहाँ गाना सुनने के लिए यदि घोड़ी, हथिनी, कुतियाँ एकत्र हों तो राजनीतिक उपद्रव होते हैं। जहाँ बच्चे खेलते-खेलते आपस में लड़ाई करें, क्रोध से झगड़ा आरम्भ करें वहाँ युद्ध अवश्य होता है तथा राजनीति के मुखियों में आपस में फूट पड़ जाने से देश की हानि भी होती है। बिना बैलों का हल यदि आप से आप खड़ा होकर नाचने लगे तो परचक्र—जिस पार्टी का शासन है, उससे विपरीत पार्टी का शासन होता

है। शासन प्राप्त पार्टी या दल को पराजित होना पड़ता है। शहर के मध्य में कुत्ते ऊँचे मुँह कर लगातार आठ दिन तक भूँकते दिखलाई पड़ें तो भी राजनीतिक झगड़े उत्पन्न होते हैं। जिस नगर या गाँव में गीदड़, कुत्ते और चूहा बिल्ली को मार लगायें, उस नगर या गाँव में राजनीति को लेकर उपद्रव होते हैं। उसमें अशान्ति इस घटना के बाद दस महीने तक रहती है। जिस नगर या गाँव में सूखा वृक्ष स्वयं ही उखड़ता हुआ दिखलाई पड़े, उस नगर या गाँव में पार्टीबन्दी होती है। नेताओं और मुखियों में परस्पर वैमनस्य हो जाता है, जिससे अत्यधिक हानि होती है। जनता में भी फूट हो जाने से राजनीति की स्थिति और भी विषम हो जाती है। जिस देश में बहुत मनुष्यों की आवाज सुनाई पड़े, पर बोलने वाला कोई नहीं दिखलाई दे उस देश या नगर में पाँच महीनों तक अशान्ति रहती है। रोग-बीमारी का प्रकोप भी बना रहता है। यदि सन्ध्या समय गीदड़, लोमड़ी किसी नगर या ग्राम के चारों ओर रुदन करें तो भी राजनीतिक झंझट रहता है।

वैयक्तिक हानि-लाभ सूचक उत्पात - यदि कोई व्यक्ति बाजों के न बजाने पर भी लगातार सात दिनों तक बाजों की ध्वनि सुने तो चार महीने में उसकी मृत्यु तथा धनहानि होती है। जो अपनी नाक के अग्रभाग पर मक्खी के न रहने पर भी मक्खी बैठी हुई देखता है, उसे व्यापार में चार महीने तक हानि होती है। यदि प्रातःकाल जागने पर हाथों की हथेलियों पर दृष्टि पड़ जाय तथा हाथ में कलश, ध्वजा और छत्र यों ही दिखलाई पड़ें तो उसे सात महीने तक धन का लाभ होता है तथा भावी उन्नति भी होती है। कहीं गन्ध के साधन न रहने पर भी सुगन्ध मालूम पड़े तो मित्रों से मिलाप, शान्ति एवं व्यापार में लाभ तथा सुख की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति स्थिर चीजों को चलायमान और चञ्चल वस्तुओं को स्थिर देखता है, उसे व्याधि, मरणभय एवं धननाश के कारण कष्ट होता है। प्रातःकाल यदि आकाश काला दिखलाई पड़े और सूर्य में अनेक प्रकार के दाग दिखलाई दें तो उस व्यक्ति को तीन महीने के भीतर रोग होता है।

सुख-दुःख की जानकारी के लिए अन्य फलादेश

नेत्रस्फुरण -- आँख फड़कने का विशेष फलादेश दाहिनी आँख का नीचे का कान के पास का हिस्सा फड़कने से हानि, नीचे का मध्य का हिस्सा फड़कने में भय और नाक के पास वाला नीचे का हिस्सा फड़कने से धनहानि, आत्मीय को कष्ट या मृत्यु, क्षय आदि फल होते हैं। इसी आँख का ऊपरी भाग अर्थात् बरौनी का कान के निकट वाला हिस्सा फड़कने से सुख, मध्य का भाग फड़कने से धनलाभ और ऊपर ही नाक के पास वाला भाग फड़कने से हानि होती है। बायीं आँख का नीचे वाला भाग नाक के पास का फड़कने से सुख, मध्य का हिस्सा फड़कने से भय और कान के पास वाला नीचे का हिस्सा फड़कने से सम्पत्ति-लाभ होता है। बरौनी

अंगस्फुरण फल—अंग फड़कने का फल

स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल
पलक स्फुरण	पृथ्वी लाभ	वक्ष:स्फुरण	विजय	कण्ठ स्फुरण	ऐश्वर्य लाभ
ललाट स्फुरण	स्थान लाभ	हृदय स्फुरण	वांछित सिद्धि	ग्रीवा स्फुरण	रिपु भय
कन्धा स्फुरण	भोग समृद्धि	कटि स्फुरण	प्रमोदवन	पृष्ठ स्फुरण	युद्ध पराजय
भ्रूमध्य स्फुरण	सुख प्राप्ति	कटिपार्श्व स्फु.	प्रीति	कपोल स्फुरण	वरांगना प्राप्ति
भ्रूयुग्म स्फुरण	महान् सुख	नाभि स्फुरण	स्त्रीनाश	मुख स्फुरण	मित्र प्राप्ति
कपाल स्फुरण	शुभ	आंत्रक स्फुरण	कोशवृद्धि	बाहु स्फुरण	मधुर भोजन
नेत्र स्फुरण	धन प्राप्ति	भग स्फुरण	रति प्राप्ति	बाहुमध्य स्फुरण	धनागम
नेत्रकोण स्फुरण	लक्ष्मी लाभ	कुक्षि स्फुरण	सुप्रीति लाभ	बस्तिदेश स्फुरण	अभ्युदय
नेत्रसमीप	प्रिय समागम	उदर स्फुरण	कोश प्राप्ति	ऊरु:स्फुरण	वस्त्र लाभ
नेत्रपथ स्फुरण	सफलता,	लिंग स्फुरण	स्त्रीलाभ	जानु स्फुरण	शत्रु वृद्धि
	राजसम्मान	गुदा स्फुरण	वाहन प्राप्ति	जंघा स्फुरण	स्वामि प्राप्ति
नेत्रपक्ष पलक	मुकदमों में	वृषण स्फुरण	पुत्र प्राप्ति	पादोपरि स्फुरण	स्थान-लाभ
स्फुरण	विजय	ओष्ठ स्फुरण	प्रियवस्तु लाभ	पादतल स्फुरण	नृपत्व
नेत्रकोपाङ्ग देश	कलत्र लाभ	हनु स्फुरण	भय	पाद स्फुरण	अलाभ
स्फुरण					
नासिका स्फुरण	प्रीति सुख				
हस्त स्फुरण	मद्य				
	द्रव्यलाभ				

पल्लीपतन और गिरगिट आरोहण फलबोधक चक्र

स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल
शिर	लाभ	ललाट	बन्धुदर्शन	भ्रूमध्य	राज्यसंबंध	उत्तरोष्ठ	धननाश	अधरोष्ठ	धनलब्धि
नासिका	व्याधि	दक्षिण क.	आयुवृद्धि	वामकर्ण	बहुलाभ	नेत्र २	धनप्राप्ति	द. भुज	बुद्धिनाश
वामभुजा	राजभय	कंठ	शत्रुनाश	स्तनद्वय	दुर्भाग्य	उदर	भूषणलाभ	पृष्ठदेश	बहुधन-
जानुद्वय	शुभागम	जंघा	शुभ	हस्तद्वय	वस्त्रलाभ	स्कन्ध	विजय		प्राप्ति
कटिभाग	सवारी	दक्षिण-	कष्ट, धन	वाममणि-		हृदय	धनलाभ	नासिका	मिष्ठान्न
	लाभ	मणिबंध	नाश	बंध	कीर्तिलाभ	वामपाद	नाश		भोजन
गुल्फ	बन्धन	केशान्त	मरण	दक्षिणपाद	गमन			मुख	स्त्रीनाश
								पादाग्र	मरण

का नाक के पास वाला भाग फड़कने से भय, मध्य का हिस्सा फड़कने से चोरी या धनहानि और कान के पास वाला हिस्सा फड़कने से कष्ट, मृत्यु अपनी या किसी आत्मीय की अथवा अन्य किसी भी प्रकार की अशुभ सूचना समझना चाहिए। साधारणतया स्त्री की बायीं आँख का फड़कना और पुरुष की दाहिनी आँख का फड़कना शुभ माना जाता है, पर विशेष जानने के लिए दोनों ही नेत्रों के पृथक्-पृथक् भागों के फड़कने का विचार करना चाहिए।

पैर, जंघा, घुटने, गुदा और कमर पर छिपकली गिरने से बुरा फल होता है, अन्यत्र प्राय: शुभ फल होता है। पुरुषों के बायें अंग का जो फल बतलाया गया है, उसे स्त्रियों के दाहिने भाग तथा पुरुषों के दाहिने अंग के फलादेश को स्त्रियों के बायें भाग का फल जानना चाहिए। छिपकली के गिरने से और गिरगिट के ऊपर चढ़ने से बराबर ही फल होता है। संक्षेप में बतलाया गया है कि—

यदि पतति च पल्ली दक्षिणांगे नराणां, स्वजनजनविरोधो वामभागे च लाभम्।
उदरशिरसि कण्ठे पृष्ठभागे च मृत्युं; करचरणहृदिस्थे सर्वसौख्यं मनुष्य:॥

अर्थात् दाहिने अंग पर पल्ली पतन हो तो आत्मीय लोगों में विरोध होता है और वाम अंग पर पल्ली के गिरने से लाभ होता है। पेट, सिर, कण्ठ, पीठ पर पल्ली के गिरने से मृत्यु तथा हाथ, पाँव और छाती पर गिरने से सब सुख प्राप्त होते हैं।

गणित द्वारा पल्ली पतन के प्रश्न का उत्तर

'तिथिप्रहरसंयुक्ता तारकावारमिश्रिता।
नवभिस्तु हरेद् भागं शेषं ज्ञेयं फलाफलम्॥
घातं नाशं तथा लाभं कल्याणं जयमंगले।
उत्साहहानी मृत्युञ्च छिक्का पल्ली च जाम्बुक:॥'

अर्थात् जिस दिन जिस प्रहर में पल्लीपतन हुआ हो—छिपकली गिरी हो उस दिन की तिथि शुक्ल प्रतिपदा से गिनकर लेना, प्रात:काल से प्रहर और अश्विनी से पतन के नक्षत्र तक लेना अर्थात् तिथि संख्या, नक्षत्र संख्या और प्रहर संख्या को योग कर देना, इस योग में नौ का भाग देने पर एक शेष में घात, दो में नाश, तीन में लाभ, चार में कल्याण, पाँच में जय, छ: में मंगल, सात में उत्साह, आठ में हानि और नौ शेष में मृत्यु फल कहना चाहिए। उदाहरण—रामलाल के ऊपर चैत्र कृष्ण द्वादशी को अनुराधा नक्षत्र में दिन में 10 बजे छिपकली गिरी है। इसका फल गणित द्वारा विचार करना है, अत: तिथि संख्या 27 (फाल्गुन शुक्ला 1 से चैत्र कृष्ण द्वादशी तक), नक्षत्र संख्या 17 (अश्विनी से अनुराधा तक), प्रहर संख्या 2 (प्रात:काल सूर्योदय से तीन-तीन घंटे का एक-एक

प्रहर लेना चाहिए) अतः 27 + 17 + 2 = 46 ÷ 9 = 5 ल० और शेष 1 आया। यहाँ उदाहरण में एक शेष रहा है, अतः इसका फल घात होता है। अर्थात् किसी दुर्घटना का शिकार यह व्यक्ति होगा।

पल्ली-पतन का फलादेश इस प्रकार का भी मिलता है कि प्रातःकाल से लेकर मध्याह्न काल तक पल्लीपतन होने से विशेष अनिष्ट, मध्याह्न से सायंकाल तक पल्लीपतन होने से साधारण अनिष्ट और सन्ध्याकाल के उपरान्त पल्ली-पतन होने से फलाभाव होता है। किसी-किसी का यह भी मत है कि तीनों कालों की सन्ध्याओं में पल्ली-पतन होने से अधिक अनिष्ट होता है। इसका फल किसी-न-किसी प्रकार की अशुभ घटना का घटित होना है। दिन में सोमवार को पल्ली-पतन होने से साधारण फल, मंगलवार को पल्ली-पतन का विशेष फल, बुधवार को पल्ली-पतन होने से शुभ फल की वृद्धि तथा अशुभ फल की हानि, गुरुवार को पल्ली-पतन होने से शुभ फल का अधिक प्रभाव तथा अशुभ फल साधारण, शुक्रवार को पल्ली-पतन होने से सामान्य फलादेश, शनिवार को पल्ली-पतन होने से अशुभ फल की वृद्धि और शुभ फल की हानि एवं रविवार को पल्ली-पतन होने से शुभ फल भी अशुभ फल के रूप में परिणत हो जाता है। पल्ली-पतन का अनिष्ट फल तभी विशेष होता है, जब शनि या रविवार को भरणी या आश्लेषा नक्षत्र में चतुर्थी या नवमी तिथि को सन्ध्याकाल में पल्ली—छिपकली गिरती है। इसका फल मृत्यु की सूचना या किसी आत्मीय की मृत्यु-सूचना अथवा किसी मुकद्दमे की पराजय की सूचना समझनी चाहिए।

पञ्चदशोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ग्रहचारं जिनोदितम्।
तत्रादितः प्रवक्ष्यामि शुक्रचारं निबोधत ॥1॥

अब जिनेन्द्र भगवान् के द्वारा प्रतिपादित ग्रहचार का निरूपण करता हूँ। इसमें सबसे पहले शुक्राचार का वर्णन किया जा रहा है ॥1॥

भूतं भव्यं भवद्‌वृष्टिमवृष्टिं भयमग्निजम्।
जयाऽजयोरुजं [1]चापि सर्वान् सृजति भार्गवः ॥2॥

भूत-भविष्य फल, वृष्टि, अवृष्टि, भय, अग्निप्रकोप, जय, पराजय, रोग, धन-सम्पत्ति आदि समस्त फल का शुक्र निर्देशक है ॥2॥

म्रियन्ते वा प्रजास्तत्र वसुधा [2]वा प्रकम्पते।
दिवि मध्ये यदा गच्छेदर्धरात्रेण भार्गवः ॥3॥

जब अर्धरात्रि के समय शुक्र आकाश में गमन करता है, तब प्रजा की मृत्यु होती है और पृथ्वी कम्पित होती है ॥3॥

दिवि मध्ये यदा दृश्येच्छुक्रः सूर्यपथास्थितः।
सर्वभूतभयं कुर्याद्विशेषाद्वर्णसंकरम् ॥4॥

सूर्य पथ में स्थित होकर सूर्य के साथ रहकर शुक्र यदि आकाश के मध्य में दिखलाई पड़े तो समस्त प्राणियों को भय करता है तथा विशेष रूप से वर्णसंकरों के लिए भयप्रद है ॥4॥

अकाले उदितः शुक्रः [3]प्रस्थितो वा यदा भवेत्।
तदा त्रिसांवत्सरिकं ग्रीष्मे वर्षेत्सरसु वा ॥5॥

यदि असमय में शुक्र उदित या अस्त हो तीन वर्षों तक ग्रीष्म और शरद् ऋतु में ईति – प्लेग या अन्य महामारी होती ॥5॥

गुरुभार्गवचन्द्राणां रश्मयस्तु यदा हताः।
एकाहमपि दीप्यन्ते तदा विन्द्याद्भयं खलु ॥6॥

यदि बृहस्पति, शुक्र और चन्द्रमा की किरणें घातित होकर एक दिन भी दीप्त हों तो अत्यन्त भय समझना चाहिए ॥6॥

भरण्यादीनि चत्वारि चतुर्नक्षत्रकाणि हि।
षडेव मण्डलानि स्युस्तेषां नामानि लक्षयेत् ॥7॥

भरणी नक्षत्र को आदि कर चार-चार नक्षत्रों के छः मण्डल होते हैं, जिनके नाम निम्न प्रकार अवगत करना चाहिए ॥7॥

सर्वभूतहितं रक्तं परुषं रोचनं तथा।
ऊर्ध्वं चण्डं च तीक्ष्णं च [4]निरुक्तानि निबोधत ॥8॥

---

1. अर्थाश्च मु०। 2. च० मु०। 3. निवृत्तो वा यदा यदा। त्रिसांवत्सरिकं ग्रीष्मं शारदं चाभिनिर्दिशेत् ॥ मु०। 4. निरुक्तानि लक्षयेत् मु०।

समस्त प्राणियों का कल्याण करने वाले रक्त, परुष, दीप्तिमान्, ऊर्ध्व, चण्ड और तीक्ष्ण ये छः मण्डल हैं। नाम के अनुसार उसका अर्थ अवगत करना चाहिए ॥8॥

[1]चतुष्कं च चतुष्कञ्च पञ्चकं त्रिकमेव च।
षञ्चकं षट्कविज्ञेयो भरण्यादौ तु भार्गवः ॥9॥

भरणी से चार नक्षत्र—भरणी, कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिरा का प्रथम मण्डल; आर्द्रा से चार नक्षत्र—आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा का द्वितीय मण्डल; मघा से पाँच नक्षत्र—मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त और चित्रा का तृतीय मण्डल; स्वाति से तीन नक्षत्र—स्वाति, विशाखा और अनुराधा का चतुर्थ मण्डल; ज्येष्ठा से पाँच नक्षत्र—ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा और श्रवण का पंचम मण्डल एवं धनिष्ठा से छः नक्षत्र—धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती का षष्ठ मण्डल होता है। इन मण्डलों के नाम क्रमशः रक्त, परुष, रोचन, ऊर्ध्व, चण्ड और तीक्ष्ण हैं ॥9॥

प्रथमं च द्वितीयं च मध्यमे शुक्रमण्डले।
तृतीयं पञ्चमं चैव मण्डले साधुनिन्दिते ॥10॥

शुक्र के प्रथम और द्वितीय मण्डल मध्यम हैं तथा तृतीय और पंचम साधुओं के द्वारा निन्दित हैं ॥10॥

चतुर्थं चैव षष्ठं च मण्डले प्रवरे स्मृते।
आद्ये द्वे मध्यमे विन्द्यान्निन्दिते त्रिकपञ्चमे ॥11॥

चतुर्थ और षष्ठ मण्डल उत्तम हैं। आदि के दो—प्रथम और द्वितीय मध्यम हैं तथा तृतीय और पंचम निन्दित हैं ॥11॥

श्रेष्ठे चतुर्थषष्ठे च मण्डले भार्गवस्य [2]हि।
शुक्लपक्षे [3]प्रशस्येत् सर्वत्वस्तमनोदये ॥12॥

शुक्ल पक्ष में अनुदित—अस्त शुक्र के चौथे और छठे मण्डल की प्रशंसा की गयी है ॥12॥

[4]अथ गोमूत्रगतिमान् भार्गवो नाभिवर्षति।
विकृतानि च वर्तन्ते सर्वमण्डलदुर्गतौ ॥13॥

यदि वक्रगति शुक्र हो तो वर्षा नहीं होती है। चौथे और षष्ठ के अतिरिक्त अन्य सभी मण्डलों में रहने वाला शुक्र विकृत—उत्पातकारक होता है ॥13॥

1. यह श्लोक मुद्रित प्रति में नहीं है। 2. तु मु०। 3. प्रशसन्ति मु०। 4. अथाभो वक्र० मु०।

मण्डल, आर्द्रा से आश्लेषा तक द्वितीय मण्डल और मघा से चित्रा नक्षत्र तक तृतीय मण्डल होता है। तृतीय मण्डल में शुक्र का उदय और अस्त हो तो वृक्षों का विनाश, शबर-शूद्र, पुण्ड्र, द्रविड, शूद्र, वनवासी, शूलिक का विनाश तथा इनको अपार कष्ट होता है। शुक्र का चौथा मण्डल स्वाति, विशाखा और अनुराधा इन नक्षत्रों में होता है। इस चतुर्थ मण्डल में शुक्र के गमन करने से ब्राह्मणादि वर्णों को विपुल धन लाभ, यश लाभ और धन-जन की प्राप्ति होती है। चौथे मण्डल में शुक्र का अस्त होना या उदय होना सभी प्राणियों के लिए सुखदायक है। यदि चौथे मण्डल में किसी क्रूर ग्रह द्वारा आक्रान्त हो तो इक्ष्वाकुवंशी, आवन्ती के नागरिक, शूरसेन देश के वासी लोगों को अपार कष्ट होता है। यदि इस मण्डल में ग्रहों का युद्ध हो, शुक्र क्रूर ग्रहों द्वारा परास्त हो जाय तो विश्व में भय और आतंक व्याप्त हो जाता है। अनेक प्रकार की महामारियाँ, जनता में क्षोभ, असन्तोष एवं अनेक प्रकार के संघर्ष होते हैं। ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा उत्तराषाढ़ा और श्रवण इन पाँच नक्षत्रों का पाँचवाँ मण्डल होता है। इस पंचम मण्डल में शुक्र के गमन करने से क्षुधा, चोर, रोग, आदि की बाधाएं होती हैं। यदि क्रूर ग्रहों द्वारा पंचम मण्डल आक्रान्त हो तो काश्मीर, अश्मक, मत्स्य, चारुदेवी और अवन्ती देश वाले व्यक्तियों के साथ आभीर जाति, द्रविड़, अम्बष्ठ, त्रिगर्त, सौराष्ट्र, सिन्धु और सौवीर देशवासियों का विनाश होता है। क्रूराक्रान्त या क्रूरग्रहाविष्ट शुक्र इस पंचम मण्डल में रहने से जनता में असन्तोष, घृणा, मात्सर्य और नाना प्रकार के कष्ट उत्पन्न करता है। धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती और अश्विनी इन छः नक्षत्रों का छठा मण्डल है। यदि क्रूर ग्रह इस मण्डल में निवास करता हो और उसके साथ शुक्र भी संगम करे तो प्रजा को अधिक कष्ट रहता है। छठे मण्डल में शुक्र का युद्ध यदि किसी शुभ ग्रह के साथ हो तो धन-धान्य की समृद्धि; क्रूर ग्रह के साथ हो तो धन-धान्य का अभाव तथा एक शुभ ग्रह और एक क्रूर ग्रह हो तो जनता को साधारणतया सुख प्राप्त होता है। वर्षा समयानुसार होती है, जिससे अच्छी फसल उत्पन्न होती है। शस्त्रघात और चोर-घात का कष्ट होता है। छठे मण्डल में शुक्र शुभ ग्रह का सहयोगी होकर अस्त हो तो प्रजा में शान्ति और सुख का संचार होता है।

इन छः मण्डलों में शुक्र-गमन का निरूपण किया गया है। स्वाति और ज्येष्ठा नक्षत्र वाले मण्डल पश्चिम दिशा में होने से शुभफल होता है। मघादि नक्षत्र वाला मण्डल पूर्व दिशा में हो तो अत्यन्त भय होता है। कृत्तिका नक्षत्र को भेद कर शुक्र गमन करे तो नदियों में बाढ़ आती है, जिससे नदीतटवासियों को महान् कष्ट होता है। रोहिणी नक्षत्र का शुक्र भेदन करे तो महामारी पड़ती है। मृग-शिरा नक्षत्र का भेदन करे तो जल या धान्य का नाश, आर्द्रा नक्षत्र का भेदन करने से कौशल और कलिंग का विनाश होता है, पर वृष्टि अत्यधिक होती है और

फसल भी उत्तम उत्पन्न होती है। पुनर्वसु नक्षत्र का शुक्र भेदन करे तो अश्मक और विदर्भ प्रदेश के रहने वालों को अनीति से कष्ट होता है, अवशेष प्रदेशों के निवासियों को कष्ट होता है। पुष्य नक्षत्र का भेदन करने से सुभिक्ष और जनता में सुख-शान्ति रहती है। आश्लेषा नक्षत्र में शुक्र का गमन हो तो सर्पभय, रोगों की उत्पत्ति एवं दैन्यभाव की वृद्धि होती है। मघा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र गमन करे तो सभी देशों में शान्ति और सुभिक्ष होते हैं। पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र का शुक्र भेदन कर आगे चले तो शबर और पुलिन्द जाति के लिए सुखकारक होता है तथा कुरुजांगल देश के निवासियों के लिए कष्टप्रद होता है। शुक्र का इस नक्षत्र को भेदन करना बंग, आसाम, बिहार, उत्तरप्रदेश के निवासियों के लिए शुभ है। शुक्र की उक्त स्थिति में धन-धान्य की समृद्धि होती है। यदि हस्त नक्षत्र का शुक्र भेदन करे तो कलाकारों को कष्ट होता है। चित्रा नक्षत्र का भेदन होने से जगत् में शान्ति, आर्थिक विकास एवं पशु-सम्पत्ति की वृद्धि होती है। इस नक्षत्र का शुक्र सहयोगी ग्रहों के साथ भेदन करता हुआ आगे गमन करे तो कलिंग, बंग और अंग प्रदेश में जनता को मधुर वस्तुओं का कष्ट होता है। जिन देशों में गन्ना की खेती अधिक होती है, उन देशों में गन्ना की फसल मारी जाती है। स्वाति नक्षत्र में शुक्र के आने से वर्षा अच्छी होती है। देश की स्थिति पर-राष्ट्रनीति की दृष्टि से अच्छी नहीं होती। विदेशों के साथ संघर्ष करना होता है तथा छोटी-छोटी बातों को लेकर आपस में मतभेद हो जाता है और सन्धि तथा मित्रता की बातें पिछड़ जाती हैं। व्यापारियों के लिए भी शुक्र की उक्त स्थिति अच्छी नहीं मानी जाती। लोहा, गुड़, अनाज, घी और मशाले के व्यापारियों को शुक्र की उक्त स्थिति में घाटा उठाना पड़ता है। तैल, तिलहन एवं सोना-चाँदी के व्यापारियों को अधिक लाभ होता है। विशाखा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र आगे की ओर बढ़े तो सुवृष्टि होती है, पर चोर-डाकुओं का प्रकोप दिनोंदिन बढ़ता जाता है। प्रजा में अशान्ति रहती है। यद्यपि धन-धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है, फिर भी नागरिकों की शान्ति भंग होने की आशंका बनी रह जाती है।

अनुराधा का भेदन कर शुक्र गमन करे तो क्षत्रियों को कष्ट, व्यापारियों को लाभ, कृषकों को साधारण कष्ट एवं कलाकारों को सम्मान की प्राप्ति होती है। ज्येष्ठा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र के गमन करने से सन्ताप, प्रशासकों में मतभेद, धन-धान्य की समृद्धि एवं आर्थिक विकास होता है। मूल नक्षत्र का भेदन कर शुक्र के गमन करने से वैद्यों को पीड़ा, डॉक्टरों को कष्ट एवं वैज्ञानिकों को अपने प्रयोगों में असफलता प्राप्त होती। पूर्वाषाढ़ा का भेदन कर शुक्र के गमन करने से जल-जन्तुओं को कष्ट, नाव और स्टीमरों के डूबने का भय, नदियों में बाढ़ एवं जन-साधारण में आतंक व्याप्त होता है। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र का भेदन करने से व्याधि, महामारी, दूषित ज्वर का प्रकोप, हैजा जैसी संक्रामक

व्याधियों का प्रसार, चेचक का प्रकोप एवं अन्य संक्रामक दूषित बीमारियों का प्रसार होता है। श्रवण नक्षत्र का भेदन कर शुक्र अपने मार्ग में गमन करे तो कर्ण सम्बन्धी रोगों का अधिक प्रसार और धनिष्ठा नक्षत्र का भेदन कर आगे चले तो आँख की बीमारियाँ अधिक होती हैं। शुक्र की उक्त प्रकार की स्थिति में साधारण जनता को भी कष्ट होता है। व्यापारी वर्ग और कृषक वर्ग को शान्ति और सन्तोष की प्राप्ति होती है। वर्षा समयानुसार होती जाती है, जिससे कृषक वर्ग को परम शान्ति मिलती है। राजनीतिक उथल-पुथल होती है, जिससे साधारण जनता में भी आतंक व्याप्त रहता है। शतभिषा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र गमन करे तो क्रूर कर्म करने वाले व्यक्तियों को कष्ट होता है। इस नक्षत्र का भेदन शुभ ग्रह के साथ होने से शुभ फल और क्रूर ग्रह के साथ होने से अशुभ फल होता है। पूर्वाभाद्रपद का भेदन करने से जुआ खेलने वालों को कष्ट, उत्तराभाद्रपद का भेदन करने से फल-पुष्पों की वृद्धि और रेवती का भेदन करने से सेना का विनाश होता है। अश्विनी नक्षत्र में भेदन करने से शुक्र क्रूर ग्रह के साथ संयोग करे तो जनता को कष्ट और शुभ ग्रह का संयोग करे तो लाभ, सुभिक्ष और आनन्द की प्राप्ति होती है। भरणी नक्षत्र का भेदन करने से जनता को साधारण कष्ट होता है।

कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी, अमावस्या, अष्टमी तिथि को शुक्र का उदय या अस्त हो तो पृथ्वी पर अत्यधिक जल की वर्षा होती है। अनाज की उत्पत्ति खूब होती है। यदि गुरु और शुक्र पूर्व-पश्चिम में परस्पर सातवीं राशि में स्थित हों तो रोग और भय से प्रजा पीड़ित रहती है, वृष्टि नहीं होती। गुरु, बुध, मंगल और शनि ये ग्रह यदि शुक्र के आगे के मार्ग में चलें तो वायु का प्रकोप, मनुष्यों में संघर्ष, अनीति और दुराचार की प्रवृत्ति, उल्कापात और विद्युत्पात से जनता में कष्ट तथा अनेक प्रकार के रोगों की वृद्धि होती है। यदि शनि शुक्र से आगे गमन करे तो जनता को कष्ट, वर्षाभाव और दुर्भिक्ष होता है। यदि मंगल शुक्र से आगे गमन करता हो तो भी जनता में विरोध, विवाद, शस्त्रभय, अग्निभय, चोरभय होने से नाना प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। जनता में सभी प्रकार की अशान्ति रहती है। शुक्र के आगे मार्ग में बृहस्पति गमन करता हो तो समस्त मधुर पदार्थ सस्ते होते हैं। शुक्र के उदय या अस्तकाल में शुक्र के आगे जब बुध रहता है तब वर्षा और रोग रहते हैं। पित्त से उत्पन्न रोग तथा कास-कामलादि रोग उत्पन्न होते हैं। संन्यासी, अग्निहोत्री, वैद्य, नृत्य से आजीविका करने वाले; अश्व, गौ, वाहन, पीले वर्ण के पदार्थ विनाश को प्राप्त होते हैं। जिस समय अग्नि के समान शुक्र का वर्ण हो तब अग्निभय, रक्तवर्ण हो तो शस्त्रकोप, कांचन के समान वर्ण हो तो गौरव वर्ण के व्यक्तियों को व्याधि उत्पन्न होती है। यदि शुक्र हरित और कपिल वर्ण हो तो दमा और खाँसी का रोग अधिक उत्पन्न होता है।

भस्म के समान रूक्ष वर्ण का शुक्र देश को सभी प्रकार की विपत्ति देने वाला होता है। स्वच्छ, स्निग्ध, मधुर और सुन्दर कान्तिवाला शुक्र सुभिक्ष, शान्ति, नीरोगता आदि फलों को देने वाला है। शुक्र का अस्त रविवार को हो तथा उदय शनिवार को हो तो देश में विनाश, संघर्ष, चेचक का विशेष प्रकोप, महामारी, धान्य का भाव मँहगा, जनता में क्षोभ, आतंक एवं घृत और गुड़ का भाव सस्ता होता है।

शुक्रवार को शुक्र अस्त होकर शनिवार को उदय को प्राप्त हो तो सुभिक्ष, शान्ति, आर्थिक विकास, पशु सम्पत्ति का विनाश, समय पर वर्षा, कला-कौशल की वृद्धि एवं चैत्र के महीने में बीमारी पड़ती है। श्रावण में मंगलवार को शुक्रास्त हो और इसी महीने में शनिवार को उदय हो तो जनता में परस्पर संघर्ष, नेताओं में मतभेद, फसल की क्षति, खून-खराबा, जहाँ-तहाँ उपद्रव एवं वर्षा भी साधारण होती है। भाद्रपद मास में गुरुवार को शुक्र अस्त हो और गुरुवार को ही शुक्र का उदय आश्विन मास में हो तो जनता में संक्रामक रोग फैलते हैं। आश्विन मास में शुक्र बुधवार को अस्त होकर सोमवार को उदय को प्राप्त हो तो सुभिक्ष, धन-धान्य की वृद्धि, जनता में साहस एवं कल-कारखानों की वृद्धि होती है। बिहार, बंगाल, आसाम, उत्कल आदि पूर्वीय प्रदेशों में वर्षा यथेष्ट होती है। दक्षिण भारत में फसल अच्छी नहीं होती, खेती में अनेक प्रकार के रोग लग जाते हैं, जिससे उत्तम फसल नहीं होती। कार्तिक मास में शुक्रास्त होकर पौष में उदय को प्राप्त हो तो जनता को साधारण कष्ट, माघ में कठोर जाड़ा तथा पाला पड़ने के कारण फसल नष्ट हो जाती है। मार्गशीर्ष में शुक्र का अस्त होना अशुभ सूचक है।

पौष मास में शुक्रास्त होना अच्छा होता है, धन-धान्य की समृद्धि होती है। माघ मास में शुक्र अस्त होकर फाल्गुन में उदय को प्राप्त हो तो फसल आगामी वर्ष अच्छी नहीं होती। फाल्गुन और चैत्र मास में शुक्र का अस्त होना मध्यम है। वैशाख में शुक्रास्त होकर आषाढ़ में उदय हो तो दुर्भिक्ष, महामारी एवं सारे देश में उथल-पुथल रहती है। राजनीतिक उलट-फेर भी होते रहते हैं। ज्येष्ठ और आषाढ़ के शुक्र का अस्त होना अनाज की कमी का सूचक है।

षोडशोऽध्यायः

अतः परं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभविचेष्टितम् ।
यच्छ्रुत्वाऽवहितः प्राज्ञो भवेन्नित्यमतन्द्रितः ॥1॥

अब शुक्रचार के पश्चात् शनि-चार के अन्तर्गत शनि की शुभाशुभ चेष्टाओं का वर्णन किया जाता है, जिसको सुनकर विद्वान् सुखी हो जाते हैं ॥1॥

प्रवासमुदयं वक्रं गतिं वर्णं फलं तथा ।
शनैश्चरस्य वक्ष्यामि [1]शुभाशुभविचेष्टितम् ॥2॥

पूर्वाचार्यों के मतानुसार शनि के अस्त, उदय, वक्र, गति और वर्ण के शुभाशुभ फल का वर्णन करता हूँ ॥2॥

प्रवासं दक्षिणे मार्गे मासिकं मध्यमे पुनः ।
दिवसाः पञ्चविंशतिस्त्रयोविंशतिरुत्तरे ॥3॥

दक्षिण मार्ग में शनि का अस्त एक महीने का उत्कृष्ट और मध्यम पच्चीस दिन का होता है और उत्तर में तेईस दिन का ॥3॥

चारं गतश्च यो भूयः सन्तिष्ठते महाग्रहः ।
[2]एकान्तरेण वक्रेण भौमवत् कुरुते फलम् ॥4॥

जब शनि पुनः चार—गमन करता हुआ स्थिर होता है और एकान्तर वक्र को प्राप्त करता है तो भौम—मंगल के समान फलादेश उत्पन्न होता है ॥4॥

संवत्सरमुपस्थाय नक्षत्रं विप्रमुञ्चति ।
सूर्यपुत्रस्ततश्चैव [3]द्योतमानः शनैश्चरः ॥5॥

शनि प्रजाहित की कामना से संवत्सर की स्थापना के लिए नक्षत्र का त्याग करता है ॥5॥

द्वे नक्षत्रे यदा सौरिर्वर्षेण चरते यदा ।
राज्ञामन्योऽन्यभेदश्च शस्त्रकोपश्च जायते ॥6॥

जब शनि एक वर्ष में दो नक्षत्र प्रमाण गमन करता है तो राजाओं में परस्पर मतभेद होता है और शस्त्रकोप होता है ॥6॥

दुर्गे भवति संवासो मर्यादा च विनश्यति ।
वृष्टिश्च विषमा ज्ञेया व्याधिकोपश्च जायते ॥7॥

उपर्युक्त प्रकार के शनि की स्थिति में शत्रु के भय और आतंक के कारण

---

1. यथावदनुपूर्वशः मु० । 2. एकान्तरेण मु० । 3. प्रजानां हितकाम्यया मु० ।

दुर्ग में निवास करना होता है। मर्यादा नष्ट हो जाती है। वर्षा विषमा—हीनाधिक होती है और रोगादि फैलते हैं ॥7॥

यदा तु त्रीणि चत्वारि नक्षत्राणि शनैश्चरः।
मन्दवृष्टिं च दुर्भिक्षं शस्त्रं व्याधिं च निर्दिशेत् ॥8॥

जब शनि एक वर्ष में तीन या चार नक्षत्र प्रमाण गमन करता है तो मन्दवृष्टि, दुर्भिक्ष, शस्त्रपीड़ा और रोगादि होते हैं ॥8॥

चत्वारि वा यदा गच्छेन्नक्षत्राणि महाद्युतिः।
तदा युगान्तं जानीयात् यान्ति मृत्युमुखं प्रजाः ॥9॥

यदि शनि एक वर्ष में चार नक्षत्रों का अतिक्रमण करे तो युगान्त समझना चाहिए तथा प्रजा मृत्यु के मुख में चली जाती है ॥9॥

उत्तरे पतितो मार्गे यद्येषो नीलतां व्रजेत्।
स्निग्धं तदा फलं ज्ञेयं नागरं जायते तदा ॥10॥

रतिप्रधाना मोदन्ति राजानस्तुष्टभूमयः।
क्ष्मां मेघवतीं विन्द्यात् सर्वबीजप्ररोहिणीम् ॥11॥

उत्तर मार्ग में गमन करता हुआ शनि नीलवर्ण और स्निग्ध हो तो उसका फल अच्छा होता है। सरागी व्यक्ति आमोद-प्रमोद करते हैं, राजा सन्तुष्ट होते हैं और पृथ्वी पर सभी प्रकार के बीजों को उत्पन्न करने वाली वर्षा होती है ॥10-11॥

मध्यमे तु यदा मार्गे कुर्यादस्तमनोदयौ।
मध्यमं वर्षणं सस्यं सुभिक्षं क्षेममेव च ॥12॥

यदि शनि मध्यम मार्ग में अस्त और उदय को प्राप्त हो तो मध्यम वर्षा, सुभिक्ष, धान्य की उत्पत्ति एवं कल्याण होता है ॥12॥

दक्षिणे तु यदा मार्गे यदि स नीलतां व्रजेत्।
नागरा यायिनश्चापि पीड्यन्ते च [1]भटागणाः ॥13॥

यदि दक्षिण मार्ग में गमन करता हुआ शनि नीलवर्ण को प्राप्त हो तो नागरिक और यायी अर्थात् आक्रमण करने वाले—दोनों ही योद्धागण पीड़ा को प्राप्त होते हैं ॥13॥

---

1. भटव्रजाः मु०।

गोपालं वर्जयेत् तत्र दुर्गाणि च समाश्रयेत्।
कारयेत् सर्वशस्त्राणि बीजानि च न वापयेत् ॥14॥

उक्त प्रकार की शनि की स्थिति में गोपाल — गोपुर, नगर को छोड़कर दुर्ग का आश्रय ग्रहण करना चाहिए, शस्त्रों की संभाल एवं नवीन शस्त्रों का निर्माण करना चाहिए और बीज बोने का कार्य नहीं करना चाहिए ॥14॥

प्रदक्षिणं तु ऋक्षस्य यस्य याति शनैश्चरः।
स च राजा विवर्धेत सुभिक्षं क्षेममेव च ॥15॥

शनि जिस नक्षत्र की प्रदक्षिणा करता है, उस नक्षत्र में जन्म लेने वाला राजा वृद्धिगत होता है। सुभिक्ष और कल्याण होता है ॥15॥

अपसव्यं नक्षत्रस्य यस्य याति शनैश्चरः।
स च राजा विपद्येत दुर्भिक्षं भयमेव च ॥16॥

शनि जिस नक्षत्र के अपसव्य —दाहिनी ओर गमन करता है, उस नक्षत्र में उत्पन्न हुआ राजा विपत्ति को प्राप्त होता है तथा दुर्भिक्ष और विनाश भी होता है ॥16॥

चन्द्रः सौरिं यदा प्राप्तः परिवेषेण [1]रुन्धति।
अवरोधं विजानीयान्नगरस्य महीपतेः ॥17॥

जब चन्द्रमा शनि को प्राप्त हो और परिवेष के द्वारा अवरुद्ध हो तो नगर और राजा का अवरोध होता है अर्थात् किसी अन्य राजा के द्वारा डेरा डाला जाता है ॥17॥

चन्द्रः शनैश्चरं प्राप्तो मण्डलं वाऽनुरोहति।
यवनां सराष्ट्रां [2]सौवीरां [3]वारुणां भजते दिशम् ॥18॥

चन्द्रमा शनि को प्राप्त होकर मण्डल पर आरोहण करे तो यवन, सौराष्ट्र, सौवीर उत्तर दिशा को प्राप्त होते हैं ॥18॥

आनर्त्ताः सौरसेनाश्च दशार्णा द्वारिकास्तथा।
आवन्त्या अपरान्ताश्च यायिनश्च तदा नृपाः ॥19॥

उपर्युक्त स्थिति में आनर्त्त, सौरसेन, दशार्ण, द्वारिका और अवन्ति के निवासी राजा यायी अर्थात् आक्रमण करने वाले होते हैं ॥19॥

---

1. रुद्ध्यते मु० । 2. सौरधां मु० । 3. दारुणां च भजेद्दिशाम् मु० ।

यदा वा युगपद् युक्त: सौरिमध्येन नागरं: ।
[1]तदा भेदं विजानीयान्नागराणां परस्परम् ॥20॥

महात्मानश्च ये सन्तो महायोगापरिग्रहा: ।
उपसर्गं च गच्छन्ति धन-धान्यं च वध्यते ॥21॥

जब चन्द्रमा और शनि दोनों एक साथ हों तो नागरिकों में परस्पर मतभेद होता है। जो महात्मा, मुनि और साधु अपरिग्रही विचरण करते हैं, वे उपसर्ग को प्राप्त होते हैं तथा धन-धान्य की हानि होती है ॥20-21॥

देशा महान्तो योधाश्च तथा नगरवासिन: ।
ते सर्वत्रोपतप्यन्ते वेधे सौरस्य तादृशे ॥22॥

शनि के उक्त प्रकार के वेध होने पर देश, बड़े-बड़े योधा तथा नगरनिवासी सर्वत्र सन्तप्त होते हैं ॥22॥

प्राच्यी सौम्या प्रतीची च वायव्या च दिशो यदा ।
वाहिनीं यो जयेत्तासु नृपो दैवहतस्तदा ॥23॥

पूर्व, उत्तर, पश्चिम और वायव्य दिशा की सेना को जो नृप जीतता है, वह भी भाग्य द्वारा आहत होता है ॥23॥

कृत्तिकासु च यद्यार्किर्विशाखासु बृहस्पति: ।
[2]समस्तं दारुणं विन्द्यात् [3]मेघश्चात्र प्रवर्षति ॥24॥

जब कृत्तिका नक्षत्र पर शनि और विशाखा पर बृहस्पति रहता है तो चारों ओर भीषण भय होता है और वहाँ वर्षा होती है ॥24॥

कीटा: पतंगा: शलभा वृश्चिका मूषका शुका:[4] ।
अग्निश्चौरा बलीयांसस्तस्मिन् वर्षे न संशय: ॥25॥

इस प्रकार की स्थिति वाले वर्ष में कीट, पतंग, शलभ, बिच्छू, चूहे, अग्नि, शुक और चोर निस्सन्देह बलवान होते हैं अर्थात् इनका प्रकोप बढ़ता है ॥25॥

श्वेते सुभिक्षं जानीयात् पाण्डु-लोहितके भयम् ।
पीतो जनयते व्याधिं शस्त्रकोपञ्च दारुणम् ॥26॥

शनि के श्वेत रंग का होने से सुभिक्ष, पाण्डु और लोहित रंग का होने पर भय एवं पीतवर्ण होने पर व्याधि और भयंकर शस्त्रकोप होता है ॥26॥

---

1. अन्योऽन्यभिद जानीयात् मु० । 2. समस्तान् मु० । 3. देव मु० । 4. स्तथा मु० ।

कृष्णे शुष्यन्ति सरितो वासवश्च न वर्षति ।
स्नेहवानत्र गृह्णाति रूक्षः शोषयते प्रजाः ॥27॥

शनि के कृष्णवर्ण होने पर नदियाँ सूख जाती हैं और वर्षा नहीं होती है। स्निग्ध होने पर प्रजा में सहयोग और रूक्ष होने पर प्रजा का शोषण होता है ॥27॥

सिंहलानां किरातानां मद्राणां मालवैः सह ।
द्रविडानां च भोजानां कोंकणानां तथैव च ॥28॥
[1]उत्कलानां पुलिन्दानां पल्हवानां शकैः सह ।
यवनानां [2]च पौराणां स्थावराणां तथैव च ॥29॥
[3]अंगानां च कुरूणां च दृश्यानां च शनैश्चरः ।
एषां विनाशं कुरुते यदि युध्येत संयुगे ॥30॥

यदि शनि का युद्ध हो तो सिंहल, किरात, मद्र, मालव, द्रविड़, भोज, कोंकण, उत्कल, पुलिन्द, पल्हव, शक, यवन, अंग, कुरु, दृश्यपुर के नागरिकों और राजाओं का विनाश करता है ॥28-30॥

यस्मिन् यस्मिस्तु नक्षत्रे कुर्यादस्तमनोदयौ ।
तस्मिन् देशान्तरं द्रव्यं [4]हन्यात् चाथ विनाशयेत् ॥31॥

जिस-जिस नक्षत्र पर शनि अस्त या उदय को प्राप्त होता है, उस-उस नक्षत्र वाले द्रव्य देश एवं देशवासियों का विनाश करता है ॥31॥

शनैश्चरं चारमिदं च भूयो यो वेत्ति विद्वान् निभृतो यथावत् ।
स पूजनीयो भुवि लब्धकीर्तिः सदा महात्मेव हि दिव्यचक्षुः ॥32॥

जो विद्वान् यथार्थ रूप से इस शनैश्चर चार (गति) को जानता है, वह अत्यन्त पूजनीय है, संसार में कीर्ति का धारी होता है और महान् दिव्यदृष्टि को प्राप्त कर सभी प्रकार के फलादेशों में पारंगत होता है ॥32॥

[6]इति सकलमुनिजनानन्दकन्दोदयमहामुनिश्रीभद्रबाहुविरचिते महानैमित्तिकशास्त्रे शनैश्चरचारः षोडशोऽध्यायः परिसमाप्तः ॥16॥

विवेचन—शनि के मेषराशि पर होने से धान्यनाश, तैलंग, द्राविड़ और बंग

1. मुत्कलानां मु० । 2. पुराणानां मु० । 3. अंगानां कुरूणां च दस्यूनां च, मु० । 4. हन्यात् चाभिनक्षत्रे मु० । 5. महाराज मु० । 6. इति सकलमुनिजनानन्दकन्दो इत्यादि मुद्रित प्रति में नहीं है ।

देश में विग्रह; पाताल, नागलोक, दिशा-विदिशा में विद्रोह, मनुष्यों में क्लेश, वैर, धन का नाश, अन्न की महँगाई, पशुओं का नाश, एवं जनता में भय-आतंक रहता है। मेषराशि का शनि आधि-व्याधि उत्पन्न करता है। पूर्वीय प्रदेशों में वर्षा अधिक और पश्चिम के देशों में वर्षा कम होती है। उत्तर दिशा में फसल अच्छी होती है। दक्षिण के प्रदेशों में आपसी विद्रोह होता है। वृष राशि पर शनि के होने से, घास, लोहा, लवण, तिल, गुड़ महँगे होते हैं तथा हाथी, घोड़ा, सोना, चाँदी सस्ते रहते हैं। पृथ्वी मण्डल पर शान्ति का साम्राज्य छाया रहता है। मिथुन राशि के शनि का फल सभी प्रकार के सुखों की प्राप्ति है। मिथुन के शनि में वर्षा अधिक होती है। कर्कराशि के शनि में रोग, तिरस्कार, धननाश, कार्य में हानि, मनुष्यों में विरोध, प्रशासकों में द्वन्द्व, पशुओं में महामारी एवं देश के पूर्वोत्तर भाग में वर्षा की भी कमी रहती है। सिंह राशि के शनि में चतुष्पद, हाथी घोड़े आदि का विनाश, युद्ध, दुर्भिक्ष, रोगों का आतंक, समुद्र के तटवर्ती प्रदेशों में क्लेश, म्लेच्छों में संघर्ष, प्रजा को सन्ताप, धान्य का अभाव एवं नाना प्रकार से जनता को अशान्ति रहती है। कन्या के शनि में काश्मीर देश का नाश, हाथी और घोड़ों में रोग, सोना-चाँदी-रत्न का भाव सस्ता, अन्न की अच्छी उपज एवं घृतादि पदार्थ भी प्रचुर परिमाण में उत्पन्न होते हैं। तुला के शनि में धान्य भाव तेज, पृथ्वी में व्याकुलता, पश्चिमीय देशों में क्लेश, मुनियों को शारीरिक कष्ट, नगर और ग्रामों में रोगोत्पत्ति, वनों का विनाश, अल्प वर्षा, पवन का प्रकोप, चोर-डाकुओं का अत्यधिक भय एवं धनाभाव होते हैं। तुला का शनि जनता को कष्ट उत्पन्न करता है, इसमें धान्य की उत्पत्ति अच्छी नहीं होती।

वृश्चिक राशि के शनि में राजकोप, पक्षियों में युद्ध, भूकम्प, मेघों का विनाश, मनुष्यों में कलह, कार्यों का विनाश, शत्रुओं को क्लेश एवं नाना प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। वृश्चिक के शनि में चेचक, हैजा और क्षय रोग का अधिक प्रचार होता है। कास-श्वास की बीमारी भी वृद्धिगत होती है। धनराशि के शनि में धन-धान्य की समृद्धि समयानुकूल वर्षा, प्रजा में शान्ति, धर्मवृद्धि, विद्या का प्रचार, कलाकारों का सम्मान, देश में कला-कौशल की उन्नति एवं जनता में प्रसन्नता का प्रचार होता है। प्रजा को सभी प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं, जनता में हर्ष और आनन्द की लहर व्याप्त रहती है। मकर के शनि में सोना, चाँदी, ताँबा, हाथी, घोड़ा, बैल, गुड़, कपास आदि पदार्थों का भाव महँगा होता है। खेती का भी विनाश होता है, जिससे अन्न की उपज भी अच्छी नहीं होती है। रोग के कारण प्रजा का विनाश होता है तथा जनता में एक प्रकार की अग्नि का भय व्याप्त रहता है, जिससे अशान्ति दिखलाई पड़ती है। कुम्भ राशि के शनि में धन-धान्य की उत्पत्ति खूब होती है। वर्षा प्रचुर परिमाण में और समयानुकूल होती है। विवाहादि उत्तम मांगलिक कार्य पृथ्वी पर होते रहते हैं, जिससे जनता

में हर्ष छाया रहता है। धर्म का प्रचार और प्रसार सर्वत्र होता है। सभी लोग सन्तुष्ट और प्रसन्न दिखलाई पड़ते हैं। मीन के शनि में खेती का अभाव, नाना प्रकार के भयानक रोगों की उत्पत्ति, वर्षा का अभाव, वृक्षों का भी अभाव, पवन का प्रचण्ड होना, तूफान और भूकम्पों का आना, भयंकर महामारियों का पड़ना, सब प्रकार से जनता का नाश और आतंकित होना एवं धन का नाश होना आदि फल घटित होते हैं।

सभी राशियों में तुला और मीन के शनि को अनिष्टकर माना गया है। मीन का शनि धन-जन की हानि करता है और फसल को चौपट करने वाला माना जाता है। यदि मीन के शनि के साथ कर्क राशि का मंगल हो तथा इन दोनों के पीछे सूर्य गमन कर रहा हो तो निश्चय ही भयंकर अकाल पड़ता है। इस अकाल में धन-जन की हानि होती है, देश में अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न हो जाने से भी जनता को कष्ट होता है। वस्तुएँ भी महंगी होती हैं। व्यापारी वर्ग को भी मीन के शनि में लाभ नहीं होता। व्यापारी वर्ग भी अनेक प्रकार से कष्ट उठाता है। अन्नाभाव के कारण जनता में त्राहि-त्राहि उत्पन्न हो जाती है।

शनि का उदय विचार—मेष में शनि उदय हो तो जलवृष्टि, मनुष्यों में सुख, प्रजा में शान्ति, धार्मिक विचार, समर्थता, उत्तम फसल, खनिज पदार्थों की उत्पत्ति अत्यधिक, सेवा की भावना, सहयोग और सहकारिता के आधार पर देश का विकास, विरोधियों की पराजय, एवं सर्वसाधारण में सुख उत्पन्न होता है। वृष राशि में शनि के उदय होने से तृण-काष्ठ का अभाव, घोड़ों में रोग, अन्य पशुओं में भी अनेक प्रकार के रोग एवं साधारण वर्षा होती है। मिथुन में उदय होने से प्रचुर परिमाण में वर्षा, उत्तम फसल, धान्य-माल सस्ता एवं प्रजा सुखी होती है।

कर्क राशि में शनि के उदय होने से वर्षा का अभाव, रसों की उत्पत्ति में कमी, धनों का अभाव, घी-दूध-चीनी की उत्पत्ति में कमी, अधर्म का विकास एवं प्रशासकों में पारस्परिक अशान्ति उत्पन्न होती है। कन्या में शनि का उदय हो तो धान्य नाश, अल्प वर्षा, व्यापार में लाभ और उत्तम वर्गों के व्यक्तियों को अनेक प्रकार का कष्ट होता है। तुला और वृश्चिक राशि में शनि का उदय हो तो महावृष्टि, धन का विनाश, चोरों का उपद्रव, उत्तम खेती, नदियों में बाढ़, नदी या समुद्र के तटवर्ती प्रदेशों के निवासियों को कष्ट एवं गेहूँ की फसल का अभाव या कमी रहती है। धनु राशि में शनि का उदय हो तो मनुष्यों में अस्वस्थता, रोग, स्त्री और बालकों में नाना प्रकार की बीमारी, धान्य का नाश और जनसाधारण में अनेक प्रकार के अन्धविश्वासों का विकास होने से सभी को कष्ट उठाना पड़ता है। मकर में शनि का उदय हो तो प्रशासकों में संघर्ष, राजनीतिक उलट-फेर, चौपायों को कष्ट, तृण की कमी, वर्षा साधारण रूप में होना एवं लोहे का भाव महँगा होता है। कुम्भ राशि में शनि का उदय हो तो

अच्छी वर्षा, साधारणतया धान्य की उत्पत्ति, व्यापार में लाभ, कृषक और व्यापारी वर्ग में सन्तोष रहता है। देश का आर्थिक विकास होता है। नयी-नयी योजनाएँ बनायी जाती हैं और सभी कार्यरूप में परिणत करायी जाती हैं। मीन राशि में शनि का उदय होना अल्प वर्षा कारक, अल्प धान्य की उत्पत्ति का सूचक एवं चोर, डाकुओं की वृद्धि की सूचना देता है। शनि का कर्क, तुला, मकर और मीन राशि में उदय होना अधिक खराब है। अन्य राशि में शनि के उदय होने से अन्न की उत्पत्ति अच्छी होती है। देश का व्यापार विकसित होता है और देश-वासियों को साधारण कष्ट के सिवा विशेष कष्ट नहीं होता है। रोग-महामारी का प्रसार होता है, जिससे सर्व साधारण को कष्ट होता है।

शनि अस्त का विचार—मेष में शनि अस्त हो तो धान्य का भाव तेज, वर्षा साधारण, जनता में असन्तोष, परस्पर फूट, मुकद्दमों की वृद्धि और व्यापार में लाभ होता है। वृष राशि में शनि अस्त हो तो पशुओं को कष्ट, देश के पशुधन का विनाश, पशुओं में अनेक प्रकार के रोग, मनुष्यों में संक्रामक रोगों की वृद्धि एवं धान्य की उत्पत्ति साधारण होती है। मिथुन राशि में शनि अस्त हो तो जनता को कष्ट, आपसी विद्वेष, धन-धान्य का विनाश, चैत्र के महीने में महामारी एवं प्रजा में अशान्ति रहती है। कर्क राशि में शनि अस्त हो तो कपास, सूत, गुड़, चाँदी, घी अत्यन्त महँगे, वर्षा की कमी, देश में अशान्ति तथा नाना प्रकार के धान्य की महँगाई और कलिंग, वंग, अंग, विदर्भ, विदेह, कामरूप, आसाम आदि प्रदेशों में वर्षा साधारण होती है। कन्या राशि में शनि के अस्त होने से अच्छी वर्षा, मध्यम फसल, अन्न का भाव महँगा, धातु का भाव भी महँगा और चीनी-गुड़ की उत्पत्ति मध्यम होती है। तुला राशि में शनि का उदय हो तो अच्छी वर्षा, उत्तम फसल, जनता में सन्तोष और सभी प्रदेशों के व्यक्ति सुखी होते हैं। व्यापक रूप से वर्षा होती है। वृश्चिक राशि में शनि के अस्त होने से अच्छी वर्षा, फसल में रोग, टिड्डी-शलभादि का विशेष प्रकोप, धन की वृद्धि, जनता में साधारणतया शान्ति और सुख होता है। धनु राशि में शनि के अस्त होने से स्त्री-बच्चों को कष्ट, उत्तम वर्षा, उत्तम फसल, उत्तम व्यापार और जनसाधारण में सब प्रकार से शान्ति व्याप्त रहती है। मकर राशि में शनि के अस्त होने से सुख, प्रचण्ड पवन, अच्छी वर्षा, अच्छी फसल, व्यापार में कमी, राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन एवं पशुधन की वृद्धि होती है। कुम्भ राशि में शनि के अस्त होने से शीत प्रकोप, पशुओं की हानि एवं मध्यम फसल होती है। मीन राशि में शनि के उत्पन्न होने से अधर्म का प्रचार, फसल का अभाव एवं प्रजा को कष्ट होता है।

नक्षत्रानुसार शनिफल—श्रवण, स्वाति, हस्त, आर्द्रा, भरणी और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में शनि स्थित हो तो पृथ्वी पर जल-वृष्टि होती है, सुभिक्ष,

समर्घता—वस्तुओं के भाव में समता और प्रजा का विकास होता है। उक्त नक्षत्रों का शनि मनोहर वर्ण का होने से और अधिक शान्ति देता है तथा पूर्वीय प्रदेशों के निवासियों को अर्थलाभ होता है। पश्चिम प्रदेशों के नागरिकों के लिए उक्त नक्षत्रों का शनि भयावह होता है। चोर, डाकुओं और गुण्डों का उपद्रव बढ़ जाता है। आश्लेषा, शतभिषा और ज्येष्ठा नक्षत्रों में स्थित शनि सुभिक्ष, सुमंगल और समयानुकूल वर्षा करता है। इन नक्षत्रों में शनि के स्थित रहने से वर्षा प्रचुर परिमाण में नहीं होती। समस्त देश में अल्प ही वृष्टि होती है। मूलनक्षत्र में शनि के विचरण करने से क्षुधाभय, शत्रुभय, अनावृष्टि, परस्पर संघर्ष, मतभेद, राजनीतिक उलट-फेर, नेताओं में झगड़ा, व्यापारी वर्ग को कष्ट एवं स्त्रियों को व्याधि होती है।

अश्विनी नक्षत्र में शनि के विचरण करने से अश्व, अश्वारोही, कवि, वैद्य और मन्त्रियों को हानि उठानी पड़ती है। उक्त नक्षत्र का शनि बंगाल में सुभिक्ष, शान्ति, धन-धान्य की वृद्धि, जनता में उत्साह, विद्या का प्रचार एवं व्यापार की उत्पत्ति, करने वाला है। आसाम और बिहार के लिए साधारणतः सुखदायी, अल्प वृष्टिकारक एवं नेताओं में मतभेद उत्पन्न करने वाला, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र के लिए सुभिक्षकारक, बाढ़ के कारण जनता को साधारण कष्ट, आर्थिक विकास एवं धान्य की उत्पत्ति का सूचक है। मद्रास, कोचीन, राजस्थान, हिमाचल, दिल्ली, पंजाब और विन्ध्य प्रदेश के लिए साधारण वृष्टिकारक, सुभिक्षोत्पादक और आर्थिक विकास करने वाला है। अवशेष प्रदेश के लिए सुखोत्पादक और सुभिक्षकारक है। अश्विनी नक्षत्र के शनि में इंग्लैण्ड, अमेरिका और रूस में आन्तरिक अशान्ति रहती है। जापान में अधिक भूकम्प आते हैं तथा अनाज की कमी रहती है। खाद्य पदार्थों का अभाव सुदूर पश्चिम के राष्ट्रों में रहता है। भरणी नक्षत्र का शनि विशेष रूप से जल-यात्रा करने वालों को हानि पहुँचाता है। नर्तक, गाने-बजाने वाले एवं छोटी-छोटी नावों द्वारा आजीविका करने वालों को कष्ट देता है। कृत्तिका नक्षत्र का शनि अग्नि से आजीविका करने वाले, क्षत्रिय, सैनिक और प्रशासक वर्ग के लिए अनिष्टकर होता है।

रोहिणी नक्षत्र में रहने वाला शनि उत्तरप्रदेश और पंजाब के व्यक्तियों को कष्ट देता है। पूर्व और दक्षिण के निवासियों के लिए सुख-शान्ति देता है। जनता में क्रान्ति उत्पन्न करता है। समस्त देश में नयी-नयी बातों की माँग की जाती है। शिक्षा और व्यवसाय के क्षेत्र में उन्नति होती है। मृगशिर नक्षत्र में शनि के विचरण करने से याजक, यजमान, धर्मात्मा और शान्तिप्रिय लोगों को कष्ट होता है। इस नक्षत्र पर शनि के रहने से रोगों की उत्पत्ति अधिक होती है तथा अग्निभय और शस्त्रभय बराबर बना रहता है। आर्द्रा नक्षत्र पर शनि के रहने से तेली, धोबी, रंगरेज और चोरों को अत्यन्त कष्ट होता है, देश के सभी भागों में

सुभिक्ष होता है। वर्षा उत्तम होती है, व्यापार भी बढ़ता है, विदेशों से सम्पर्क स्थापित होता है। पुनर्वसु नक्षत्र में शनि के रहने से पंजाब, सौराष्ट्र, सिन्धु और सौवीर देश में अत्यन्त पीड़ा होती है। इन प्रदेशों में वर्षा भी अल्प होती है तथा महामारी के कारण जनता को कष्ट होता है। पुष्य नक्षत्र में शनि के रहने से देश में सुकाल, उत्तम वर्षा, आपसी मतभेद, नेताओं में संघर्ष एवं निम्न श्रेणी के व्यक्तियों को कष्ट होता है। पूर्व प्रदेशों के लिए उक्त नक्षत्र का शनि शान्ति देने वाला, दक्षिण प्रदेशों में सुभिक्ष करने वाला, उत्तर प्रदेशों में धन-धान्य की वृद्धि करने वाला एवं पश्चिम प्रदेशों के व्यक्तियों के लिए अशान्तिकारक होता है। उक्त नक्षत्र का शनि सभी मुस्लिम राष्ट्रों में अशान्ति उत्पन्न करता है तथा अमेरिका में आन्तरिक कलह होता है। रूस की राजनीतिक स्थिति में भी परिवर्तन आता है। आश्लेषा नक्षत्र का शनि सर्पों को कष्ट देता है तथा सर्पों द्वारा आजीविका करने वालों को भी कष्ट ही देता है। इस नक्षत्र पर शनि के रहने से जापान, बर्मा, दक्षिण भारत और युगोस्लाविया में भूकम्प अधिक आते हैं। इन भूकम्पों द्वारा धन-जन की पर्याप्त हानि होती है। भारत के लिए उक्त नक्षत्र का शनि उत्तम नहीं है। देश में समयानुकूल वर्षा भी नहीं होती है, जिससे फसल उत्तम नहीं होती।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र का शनि गुड़, लवण, जल एवं फलों के लिए हानिकारक होता है। उक्त शनि से महाराष्ट्र, मद्रास, दक्षिणी भारत के प्रदेश और बम्बई क्षेत्र के लिए लाभ होता है। इन राज्यों का आर्थिक विकास होता है, कला-कौशल की वृद्धि होती है। हस्त नक्षत्र में शनि स्थित हो तो शिल्पियों को कष्ट होता है। कुटीर उद्योगों के विकास में उक्त नक्षत्र के शनि से अनेक प्रकार की बाधाएँ आती हैं। चित्रा नक्षत्र में शनि हो तो स्त्रियों, ललित कला के कलाकारों एवं अन्य कोमल प्रकृति वालों को कष्ट होता है। इस नक्षत्र में शनि के रहने से समस्त भारत में वर्षा अच्छी होती है, फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। दक्षिण के प्रदेशों में आपसी मतभेद होने से कुछ अशान्ति होती है। स्वाति नक्षत्र में शनि हो तो, नर्तक, सारथी, ड्राइवर, जहाज संचालक, दूत एवं स्टीमरों के चालकों को व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। देश में शान्ति और सुभिक्ष उत्पन्न होते हैं। विशाखा नक्षत्र का शनि रंगों के व्यापारियों के लिए उत्तम है। लोहा, अभ्रक तथा अन्य प्रकार के खनिज पदार्थों के व्यापारियों के लिए अच्छा होता है। अनुराधा नक्षत्र का शनि काश्मीर के लिए अरिष्टकारक और शेष भारत के लिए मध्यम है। इस नक्षत्र के शनि में खेती अच्छी होती है और वर्षा भी अच्छी ही होती है। इस नक्षत्र के शनि में बर्तन बनाने का कार्य करने वाले, कपड़े का कार्य करने वाले धन्धों में विघ्न उत्पन्न होता है। जूट और चाँदी के व्यापारियों के लिए यह बहुत अच्छा होता है। ज्येष्ठा नक्षत्र का शनि श्रेष्ठ वर्ग और पुरोहित वर्ग के लिए

उत्तम नहीं होता है। अवशेष सभी श्रेणी के व्यक्तियों के लिए उत्तम होता है। मूल नक्षत्र का शनि काशी, अयोध्या और आगरा में अशान्ति उत्पन्न करता है। यहाँ संघर्ष होते हैं तथा उक्त नगरों में अग्नि का भी भय रहता है। अवशेष सभी प्रदेशों के लिए उत्तम होता है। पूर्वाषाढ़ा में शनि के रहने से विहार, बंगाल, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, मध्यभारत के लिए भयकारक, अल्प वर्षा सूचक और व्यापार में हानि पहुँचाने वाला होता है। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में शनि विचरण करता हो तो यवन, शबर, भिल्ल आदि पहाड़ी जातियों की हानि करता है। इन जातियों में अनेक प्रकार के रोग फैल जाते हैं तथा आगरा में भी संघर्ष होता है। श्रवण नक्षत्र में विचरण करने से शनि राज्यपाल, राष्ट्रपति, मुख्यमन्त्री एवं प्रधानमन्त्री के लिए हानिकारक होता है। देश के अन्य वर्गों के व्यक्तियों के लिए कल्याण करने वाला होता है।

धनिष्ठा नक्षत्र में विचरण करने वाला शनि धनिकों, श्रीमन्तों और ऊँचे दर्जे के व्यापारियों के लिए हानि पहुँचाता है। इन लोगों को व्यापार में घाटा होता है। शतभिषा और पूर्वाभाद्रपद में शनि के रहने से पण्यजीवी व्यक्तियों को विघ्न होता है। उक्त नक्षत्र के शनि में बड़े-बड़े व्यापारियों को अच्छा लाभ होता है। उत्तराभाद्रपद में शनि के रहने से फसल का नाश, दुर्भिक्ष, जनता को कष्ट, शस्त्रभय, अग्निभय एवं देश के सभी प्रदेशों में अशान्ति होती है। रेवती नक्षत्र में शनि के विचरण करने से फसल का अभाव, अल्पवर्षा, रोगों की भरमार, जनता में विद्वेष-ईर्ष्या एवं नागरिकों में असहयोग की भावना उत्पन्न होती है। राजाओं में विरोध उत्पन्न होता है।

गुरु के विशाखा नक्षत्र में रहने पर शनि यदि कृत्तिका नक्षत्र में स्थित हो तो प्रजा को अत्यन्त पीड़ा दुर्भिक्ष और नागरिकों में भय पैदा होता है। अनेक वर्ण का शनि देश को कष्ट देता है, देश के विकास में विघ्न करता है। श्वेत वर्ण का शनि होने पर भारत के सभी प्रदेशों में शान्ति, धन-धान्य की वृद्धि एवं देश का सर्वांगीण विकास होता है।

सप्तदशोऽध्यायः

वर्णं गतिं च संस्थानं मार्गमस्तमनोदयौ।
[1]वक्रं फलं प्रवक्ष्यामि गौतमस्य निबोधत ॥1॥

बृहस्पति के वर्ण, गति, आकार, मार्गी, अस्त, उदय, वक्र आदि का फलादेश भगवान् गौतम स्वामी द्वारा प्रतिपादित आधार पर निरूपित किया जाता है ॥1॥

मेचकः कपिलः श्यामः पीतः [2]मण्डल-नीलवान्।
रक्तश्च धूम्रवर्णश्च न प्रशस्तोऽङ्गिरास्तदा ॥2॥

बृहस्पति का मेचक, कपिल—पिंगल, श्याम, पीत, नील, रक्त और धूम्र वर्ण का मण्डल शुभ नहीं है ॥2॥

मेचकश्चेन्मृतं सर्वं वसु पाण्डुर्विनाशयेत्।
पीतो व्याधिं भयं शिष्टे धूम्राभः [3]सृजते जलम् ॥3॥

यदि बृहस्पति का मण्डल मेचक वर्ण का हो तो मृत्यु, पाण्डु वर्ण का हो तो धन-नाश, पीतवर्ण का हो तो व्याधि और धूम्र वर्ण का होने पर जल-वृष्टि होती है ॥3॥

उपसर्पति मित्रादि पुरतः स्त्री प्रपद्यते।
त्रि-चतुर्भिश्च नक्षत्रैस्त्रिभिरस्तमनं व्रजेत् ॥4॥

जब बृहस्पति तीन-चार नक्षत्रों के बीच गमन करता है या तीन नक्षत्रों में अस्त को प्राप्त होता है तो स्त्री-पुत्र और मित्रादि की प्राप्ति होती है ॥4॥

कृत्तिकादि भगान्तश्च मार्गः स्यादुत्तरः स्मृतः ॥
अर्यमादिरपाप्यन्तो मध्यमो मार्ग उच्यते ॥5॥

कृत्तिका से पूर्वाफाल्गुनी तक— कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा और पूर्वाफाल्गुनी इन नौ नक्षत्रों में बृहस्पति का उत्तर मार्ग तथा उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़ा इन नौ नक्षत्रों में उसका मध्यम मार्ग होता है ॥5॥

विश्वादिश्रमणान्तश्च दक्षिणो मार्ग उच्यते।
एते बृहस्पतेर्मार्गा नव नक्षत्रजास्त्रयः ॥6॥

---

1. गौतमस्य प्रवक्ष्यामि यथावदनुपूर्वशः मु०। 2. पाण्डु स मु०। 3. धूम्राभश्च सृजेज्जलम् मु०।

उत्तराषाढ़ा से भरणी तक—उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी इन नौ नक्षत्रों में बृहस्पति का दक्षिण मार्ग होता है। इस प्रकार बृहस्पति के नौ-नौ नक्षत्रों के तीन मार्ग बतलाये गये हैं ॥6॥

मूलमुत्तरतो याति स्वातिं दक्षिणतो व्रजेत्।
नक्षत्राणि तु शेषाणि समन्ताद्दक्षिणोत्तरे ॥7॥

उत्तर से मूल को और दक्षिण से स्वाति नक्षत्र को प्राप्त करता है तथा दक्षिणोत्तर से शेष नक्षत्रों को प्राप्त करता है ॥7॥

मूलके तु यदा ह्रस्वो मूलं दक्षिणतो व्रजेत्।
दक्षिणतस्तदा विन्द्यादनयोर्दक्षिणे पथि ॥8॥

जब केतु लघु होकर दक्षिण से मूल नक्षत्र की ओर जाता है तो बृहस्पति और केतु दोनों ही दक्षिण मार्ग वाले कहे जाते हैं ॥8॥

अनावृष्टिहता देशा [1]बुभुक्षाज्वरनाशिताः।
चक्रारूढा प्रजास्तत्र बध्यन्ते जाति[2]तस्कराः ॥9॥

इन दोनों के दक्षिण मार्ग में रहने से अनावृष्टि—वर्षा का अभाव होता है, जिससे देश पीड़ित होते हैं। तेज ज्वर से अनेक व्यक्तियों की मृत्यु होती है प्रजा शासन में आरूढ़ रहती है और वर्णसंकरों का वध होता है ॥9॥

यदा चोत्तरतः स्वातिं दीप्तो [3]याति बृहस्पतिः।
उत्तरेण तदा विन्द्याद् दारुणं भयमादिशेत् ॥10॥

जब बृहस्पति दीप्त होकर उत्तर की ओर से स्वाति नक्षत्र को प्राप्त करता है तो उस समय उत्तर देश में दारुण भय होता है ॥10॥

लुप्यन्ते च क्रियाः सर्वा नक्षत्रे गुरुपीडिते।
दस्यवः प्रबला ज्ञेया न च बीजं प्ररोहति ॥11॥

गुरु के द्वारा नक्षत्र के पीड़ित होने पर सभी क्रियाओं का लोप होता है, चोरों की शक्ति बढ़ती है और बीज उत्पन्न नहीं होता है ॥11॥

दक्षिणेन तु वक्रेण पञ्चमे पञ्च मुच्यते।
उत्तरे पञ्चके पञ्च मार्गे चरति गौतमः ॥12॥

---

1. क्षुधाज्वरविनाशिताः मु०। 2. संकराः मु०। 3. यायाद् मु०।

बृहस्पति के दक्षिण के पाँच मार्गों में पञ्चम मार्ग वक्र गति द्वारा पूर्ण किया जाता है और उत्तर के पाँच मार्गों में पञ्चम मार्ग मार्गी गति द्वारा पूर्ण किया जाता है ॥12॥

ह्रस्वे भवति दुर्भिक्षं निष्प्रभे व्याधिजं भयम् ।
विवर्णे पापसंस्थाने मन्दपुष्प-फलं भवेत् ॥13॥

गुरु के ह्रस्व मार्ग में गमन करने पर दुर्भिक्ष, निष्प्रभ में गमन करने पर व्याधि और भय, तथा विवर्ण और पाप संस्थान मार्ग में गमन करने पर अल्प फल और पुष्प उत्पन्न होते हैं ॥13॥

प्रतिलोमोऽनुलोमो वा पञ्च संवत्सरो यदा ।
नक्षत्राण्युपसर्पेण तदा सृजति दुस्समाम् ॥14॥

बृहस्पति अपने पाँच संवत्सरों में नक्षत्रों का प्रतिलोम और अनुलोम रूप से गमन करता है तो दुष्काल की उत्पत्ति होती है अर्थात् प्रजा को कष्ट होता है ॥14॥

सस्य नाशो अनावृष्टि[1]र्मृत्युस्तीव्राश्च व्याधयः ।
शस्त्रकोपोऽग्नि मूर्च्छा च षड्विधं मूर्च्छने भयम् ॥15॥

बृहस्पति की उक्त प्रकार की स्थिति में धान्य नाश, अनावृष्टि, तीव्र क्रोध, रोग, शस्त्रकोप, अग्निकोप एवं मूर्च्छा आदि भय उत्पन्न होते हैं ॥15॥

सप्तार्धं यदि वाऽष्टार्धं षडर्धं निष्प्रभोदितः ।
पञ्चार्धं चाथवाऽर्धं च यदा संवत्सरं चरेत् ॥16॥

सङ्ग्रामा [2]रौरवास्तत्र निर्जलाश्च बलाहकाः ।
श्वेतास्थी पृथिवी [3]सर्वा भ्रान्ताक्षुस्नेहवार्यरिभः ॥17॥

जब बृहस्पति संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर और इद्वत्सर इन पाँच संवत्सरों में से संवत्सर नाम के वर्ष में विचरण कर रहा हो, तथा साढ़े तीन नक्षत्र, चार नक्षत्र, तीन नक्षत्र, ढाई नक्षत्र और आधे नक्षत्र पर निष्प्रभ उदित हो तो संग्राम, निरादर, मेघों का निर्जल होना, पृथ्वी का श्वेत हड्डियों से युक्त होना; क्षुधा, रोग और कुवायु तूफान के द्वारा त्रस्त होना आदि फल प्राप्त होते हैं ॥16-17॥

---

1. मृत्युः मु० । 2. निरुदाराश्च मेघाश्च श्वेतास्थी मु० । 3. भ्राम्यते क्षुधारोगैः कुवायुभिः, मु० ।

पुष्यो [1]यदि द्विनक्षत्रे सप्रभश्चरते सम: ।
षड् भयानि तदा हत्वा विपरीतं सुखं सृजेत् ॥18॥
नृपाश्च विषमच्छायाश्चतुर्षु वर्तते हितम् ।
सुखं प्रजा: प्रमोदन्ते स्वर्गवत् साधुवत्सला: ॥19॥

जब बृहस्पति पुष्यादि दो नक्षत्रों में गमन करता है, तब छ: प्रकार के भयों का विनाश कर सुख उत्पन्न करता है । राजा भी आपस में प्रेम-भाव से निवास करते हैं, प्रजा सुख और आनन्द प्राप्त करती है तथा पृथ्वी स्वर्ग के समान साधु-वत्सल हो जाती है ॥18-19॥

विशाखा कृत्तिका चैव मघा रेवतिरेव च ।
अश्विनी श्रवणश्चैव तथा भाद्रपदा भवेत् ॥20॥
बहूदकानि जानीयात् तिष्ययोगसमप्रभे ।
फाल्गुन्येव च चित्रा च वैश्वदेवश्च मध्यम: ॥21॥

जब बृहस्पति विशाखा, कृत्तिका, मघा, रेवती, अश्विनी, श्रवण, पूर्वाभाद्रपद इन नक्षत्रों में गमन करता है तो गुरु-पुष्य योग के समान ही अत्यधिक जल की वर्षा समझनी चाहिए । पूर्वाफाल्गुनी, चित्रा और उत्तराषाढ़ा इन नक्षत्रों में बृहस्पति के गमन करने पर मध्यम फल जानना चाहिए ॥20-21॥

ज्येष्ठा मूलं च सौम्यं च जघन्या सोमसम्पदा ।
कृत्तिका रोहिणी मूर्त्तिराश्लेषा हृदयं गुरु: ॥22॥
आप्यं ब्राह्मं च वैश्वं च नाभि: पुष्य-मघा स्मृता: ।
एतेषु च विरुद्धेषु ध्रुवस्य फलमादिशेत् ॥23॥

ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़ा नक्षत्रों में बृहस्पति गमन करे तो जघन्य सुख-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है । कृत्तिका तथा रोहिणी, मूर्ति और आश्लेषा, बृहस्पति का हृदय है । पूर्वषाढ़ा, अभिजित्, उत्तराषाढ़ा, पुष्य और मघा उसकी नाभि मानी गयी है । इन नक्षत्रों में तथा इनसे विपरीत नक्षत्रों में फल का निरूपण करना चाहिए ॥22-23॥

द्विनक्षत्रस्य चारस्य यत् पूर्वं परिकीर्तितम् ।
एवमेवं तु जानीयात् षड् भयानि समादिशेत् ॥24॥

---

1. यदा मु० ।

दो-दो नक्षत्रों का गमन जो पहले कहा गया है, उन्हीं के अनुसार छ: प्रकार के भयों का परिज्ञान करना चाहिए ।।24।।

इमानि यानि बीजानि विशेषेण विचक्षण: ।
व्याधयो मूर्तिघातेन हृद्रोगो हृदये [1]महत् ।।25।।

जो बीजभूत नक्षत्र हैं, उनके द्वारा मनीषियों को फलादेश ज्ञात करना चाहिए । यदि बृहस्पति के मूर्ति नक्षत्रों—कृत्तिका और रोहिणी —का घात हो तो व्याधियाँ—नाना प्रकार की बीमारियाँ और हृदय नक्षत्र का घात हो तो हृदय रोग उत्पन्न होते हैं ।।25।।

पुष्ये हते हतं पुष्पं फलानि कुसुमानि च ।
आग्नेया मूषका: सर्पा दाघश्च शलभा: शुका: ।।26।।
ईतयश्च महाधान्ये जाते न बहुधा स्मृता: ।
स्वचक्रमीतयश्चैव परचक्रं निरम्बु च ।।27।।

पुष्य नक्षत्र का घात होने पर पुष्प, फल और पल्लवों का विनाश, अग्नि, मूषक—चूहे, सर्प, जलन, शलभ (टिड्डी), शुक का उपद्रव, ईति—महामारी, धान्यघात, स्वशासन में भिन्नता, और परशासन में जलाभाव आदि फल घटित होते है ।।26-27।।

अत्यम्बु च विशाखायां सोमे संवत्सरे विदु: ।
शेषं संवत्सरे ज्ञेयं शारदं तत्र नेतरम् ।।28।।

अगहन या सौम्य नाम के संवत्सर में जब विशाखा नक्षत्र पर बृहस्पति गमन करता है, तो अत्यधिक जल की वर्षा होती है । शेष संवत्सरों में केवल पौष संवत्सर में ही अल्प जल की वर्षा समझनी चाहिए, अन्य वर्षों में वह भी नहीं ।।28।।

माघमल्पोदकं विन्द्यात् फाल्गुने दुर्भगा: स्त्रिय: ।
चैत्रं चित्रं विजानीयात् सस्यं तोयं सरीसृपा: ।।29।।

बृहस्पति जिस मास के जिस नक्षत्र में उदय हो, उस नक्षत्र के अनुसार ही महीने के नाम के समान वर्ष का भी नाम होता है । माघ नाम के वर्ष में अल्प वर्षा होती है, फाल्गुन नाम के वर्ष में स्त्रियों का दुर्भाग्य बढ़ता है । चैत्र नाम के वर्ष में धान्य, जल की वर्षा विचित्र रूप में होती है तथा सरीसृपों की वृद्धि होती है ।।29।।

---

1. हते मु० ।

वैशाखे नृपभेदश्च पूर्वतोयं विनिर्दिशेत् ।
ज्येष्ठा-मूले जलं पश्चाद् मित्र-भेदश्च जायते ।।30।।

वैशाख नामक वर्ष में राजाओं में मतभेद होता है और जल की वर्षा अच्छी होती है । ज्येष्ठ नामक वर्ष में—जो कि ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र के मासिक होने पर आता है, अच्छी वर्षा, मित्रों में मतभेद और सर्प का प्रकोप होता है ।।30।।

आषाढे तोयसंकीर्णं सरीसृपसमाकुलम् ।
श्रावणे दंष्ट्रिणश्चौरा व्यालाश्च प्रबलाः स्मृताः ।।31।।

आषाढ़ नामक वर्ष में जल की कमी होती है, पर कहीं-कहीं अच्छी वर्षा होती है और सरीसृपों की वृद्धि होती है । श्रावण नामक वर्ष में दांत वाले जन्तु, चोर, सर्प आदि प्रबल होते हैं ।।31।।

संवत्सरे भाद्रपदे शस्त्रकोपाग्निमूर्च्छनम् ।
सरीसृपाश्चाश्वयुजि बहुधा वा भयं विदुः ।।32।।

भाद्रपद नामक वर्ष में शस्त्रकोप, अग्निभय, मूर्च्छा आदि फल होते हैं और आश्विन नामक संवत्सर में सरीसृपों का अनेक प्रकार का भय होता है ।।32।।

(कार्तिक संवत्सर में शकट द्वारा आजीविका करने वाले, अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण एवं क्रय-विक्रय करने वालों को कष्ट होता है ।)

एते संवत्सराश्चोक्ताः पुष्यस्य परतोऽपि वा ।
[1]रोहिण्यार्द्रास्तथाश्लेषा हस्तः स्वातिः पुनर्वसुः ।।33।।

बृहस्पति के इन वर्षों का फल कहा गया है; रोहिणी के अभिघात से प्रजा सभी प्रकार से दुःखित होती है ।।33।।

अभिजिच्चानुराधा च मूलो वासववारुणाः ।
रेवती भरणी चैव विज्ञेयानि बृहस्पतेः ।।14।।

अभिजित्, अनुराधा, मूल, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती और भरणी ये नक्षत्र बृहस्पति के हैं अर्थात् इन नक्षत्रों में बृहस्पति के रहने से शुभ फल होता है ।।34।।

कृत्तिकायां गतो नित्यमारोहण-प्रमर्दने ।
रोहिण्यास्त्वभिघातेन प्रजाः सर्वाः सुदुःखिताः ।।35।।

कृत्तिका नक्षत्र में स्थित बृहस्पति जब आरोहण और प्रमर्दन करता है और रोहिणी में स्थित होकर अभिघात करता है तो प्रजा को अनेक प्रकार का कष्ट

---

1. रोहिण्यास्त्वभिघातेन प्रजाः सर्वाः सुदुःखिताः मु० ।

होता है ॥35॥

शस्त्रघातस्तथाऽऽर्द्रायामाश्लेषायां विषादभयम् ।
मन्दहस्तपुनर्वसोस्तोयं चौराश्च दारुणाः ॥36॥

आर्द्रा के घातित होने पर बृहस्पति शस्त्रघात, आश्लेषा में स्थित होने पर विषादभय तथा हस्त और पुनर्वसु में घातित होने पर मन्द वर्षा और भीषण चौर्य-भय उत्पन्न करता है ॥36॥

वायव्ये वायवो दृष्टा रोगदं वाजिनां भयम् ।
अनुराधानुघाते च [1]स्त्रीसिद्धिश्च प्रहीयते ॥37॥

स्वाति नक्षत्र में स्थित बृहस्पति के घातित होने पर वायव्य दिशा में रोग उत्पन्न करता है, घोड़ों को अनेक प्रकार का भय होता है, अनुराधा नक्षत्र के घातित होने पर स्त्री-प्रेम में कमी आती है ॥37॥

तथा मूलाभिघातेन दुष्यन्ते मण्डलानि च ।
वायव्यस्याभिघातेन पीड्यन्ते धनिनो नराः ॥38॥

मूल नक्षत्र के घातित होने पर मण्डल—प्रदेशों को कष्ट होता है, दोष लगता है और विशाखा नक्षत्र के अभिघातित होने पर धनिक व्यक्तियों को पीड़ा होती है ॥38॥

वारुणे जलजं तोयं फलं पुष्पं च शुष्यति ।
अकारान्नाविकास्तोयं पीडयेद्रेवती हता ॥39॥

शतभिषा के अभिघातित होने पर कमल, जल, फल, पुष्प इत्यादि सूख जाते हैं। उत्तरा भाद्रपद के अभिघातित होने पर नाविक और जल-जन्तुओं को पीड़ा तथा जल का अभाव और रेवती नक्षत्र के अभिघातित होने पर पीड़ा होती है ॥39॥

वामं करोति नक्षत्रं यस्य दीप्तो बृहस्पतिः ।
लब्ध्वाऽपि सोऽर्थं विपुलं न भुञ्जीत कदाचन ॥40॥

[2]हिनस्ति बीजं तोयञ्च मृत्युदा भरणी यथा ।
अपि हस्तगतं द्रव्यं सर्वथैव विनश्यति ॥41॥

दीप्त बृहस्पति जिस व्यक्ति के बायीं ओर नक्षत्र को अभिघातित करता है; वह व्यक्ति विपुल सम्पत्ति को प्राप्त करके भी उसका भोग नहीं कर सकता है,

---

1. मैत्री-मु० । 2. यह श्लोक मुद्रित प्रति में नहीं है ।

तथा बीज और जल का विनाश करता है और यम के समान मृत्युप्रद होता है। हाथ पर रखा हुआ धन भी विनाश को प्राप्त होता है ॥40-41॥

प्रदक्षिणं तु नक्षत्रं यस्य कुर्यात् बृहस्पतिः।
यायिनां विजयं विन्द्यात् नागराणां पराजयम् ॥42॥

बृहस्पति जिस व्यक्ति के दाहिनी ओर नक्षत्र को अभिघातित करता है, वह व्यक्ति यदि यायी हो तो विजय और नागरिक हो तो पराजय पाता है ॥42॥

प्रदक्षिणं तु कुर्वीत सोमं यदि बृहस्पतिः।
नागराणां जयं विन्द्याद् यायिनां च पराजयम् ॥43॥

यदि बृहस्पति चन्द्रमा की प्रदक्षिणा करे तो नागरिकों की विजय और यायियों की पराजय होती है ॥43॥

उपघातेन चक्रेण मध्यगन्ता बृहस्पतिः।
निहन्याद् यदि नक्षत्रं यस्य तस्य पराजयम् ॥44॥

उपघात चक्र के मध्य में स्थित होकर बृहस्पति जिस व्यक्ति के नक्षत्र का घात करता है, उसी का पराजय होता है ॥44॥

बृहस्पतेर्यदा चन्द्रो रूपं संछादयेत् भृशम्।
स्थावराणां वधं कुर्यात् पुररोधं च दारुणम् ॥45॥

जब बृहस्पति के रूप का चन्द्रमा आच्छादन करे तो स्थावरों का वध होता है और नगर का भयंकर अवरोध होता है, जिससे अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं ॥45॥

स्निग्धप्रसन्नो विमलोऽभिरूपो महाप्रमाणो द्युतिमान् स पीतः।
गुरुर्यदा चोत्तरमार्गचारी तदा प्रशस्तः [1]प्रतिबद्धहन्ता ॥46॥

यदि बृहस्पति स्निग्ध, प्रसन्न, निर्मल, सुन्दर, कान्तिमान, पीतवर्ण, पूर्ण आकृति वाला और युवावस्था वाला उत्तरमार्ग में विचरण करता है तो शुभ होता है और प्रतिपक्षियों का विनाश करता है ॥46॥

इति श्रीसकलमुनिजनानन्दमहामुनिभद्रबाहुविरचिते परमनैमित्तिकशास्त्रे बृहस्पतिचारः सप्तदशः परिसमाप्तः ॥17॥

1. प्रतिपक्ष- मु० ।

विवेचन— मास के अनुसार गुरु के राशि-परिवर्तन का फल --यदि कार्त्तिक मास में गुरु राशि परिवर्तन करे तो गायों को कष्ट, शस्त्र-अस्त्रों का अधिक निर्माण, अग्निभय, साधारण वर्षा, समर्घता, मालिकों को कष्ट, द्रविड़ देशवासियों को शान्ति, सौराष्ट्र के निवासियों को साधारण कष्ट, उत्तरप्रदेश वासियों को सुख एवं धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है। अगहन में गुरु के राशि परिवर्तन होने से अल्प वर्षा, कृषि की हानि, परस्पर में युद्ध, आन्तरिक संघर्ष, देश के विकास में अनेक रुकावटें एवं नाना प्रकार के संकट आते हैं। बिहार, बंगाल, आसाम आदि पूर्वीय प्रदेशों में वर्षा अच्छी होती है तथा इन प्रदेशों में कृषि भी अच्छी होती है। उत्तरप्रदेश, पंजाब और सिन्ध में वर्षा की कमी रहती है, फसल भी अच्छी नहीं होती है। इन प्रदेशों में अनेक प्रकार के संघर्ष होते हैं, जनता में अनेक प्रकार की पार्टियाँ तैयार होती हैं तथा इन प्रदेशों में महामारी भी फैलती है। चेचक का प्रकोप उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, और राजस्थान में होता है। पौष मास में बृहस्पति के राशि-परिवर्तन से सुभिक्ष, आवश्यकतानुसार अच्छी वर्षा, धर्म की वृद्धि, क्षेम, आरोग्य और सुख का विकास होता है। भारतवर्ष के सभी राज्यों के लिए यह बृहस्पति उत्तम माना जाता है। पहाड़ी प्रदेशों की उन्नति और अधिक रूप में होती है। माघ मास में गुरु के राशि-परिवर्तन से सभी प्राणियों को सुख-शांति, सुभिक्ष, आरोग्य और समयानुकूल यथेष्ट वर्षा एवं सभी प्रकार से कृषि का विकास होता है। ऊसर भूमि में भी अनाज उत्पन्न होता है। पशुओं का विकास और उन्नति होती है। फाल्गुन मास में गुरु के राशि-परिवर्तन होने से स्त्रियों को भय, विधवाओं की संख्या की वृद्धि, वर्षा का अभाव अथवा अल्प वर्षा, ईति-भीति, फसल की कमी एवं हैजे का प्रकोप व्यापक रूप से होता है। बंगाल, राजस्थान और गुजरात में अकाल की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। चैत्र में गुरु का राशि-परिवर्तन होने से नारियों को सन्तान-प्राप्ति, सुभिक्ष, उत्तम वर्षा, नाना व्याधियों की आशंका एवं संसार में राजनीतिक परिवर्तन होते हैं। जापान, जर्मन, अमेरिका, इंगलैण्ड, रूस, चीन, श्याम, बर्मा, आस्ट्रेलिया, मलाया आदि में मनमुटाव होता है। राष्ट्रों में भेदनीति कार्य करती है। गुटबन्दी का कार्य आरम्भ हो जाने से परिवर्तन के चिह्न स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगते हैं। वैशाख मास में गुरु का राशि-परिवर्तन होने से धर्म की वृद्धि, सुभिक्ष, अच्छी वर्षा, व्यापारिक उन्नति, देश का आर्थिक विकास, दुष्ट-गुण्डे-चोर आदि का दमन, सज्जनों को पुरस्कार एवं खाद्यान्न का भाव सस्ता होता है। घी, गुड़, चीनी आदि का भाव भी सस्ता रहता है। उक्त प्रकार के गुरु में फलों की फसल में कमी आती है। समयानुकूल यथेष्ट वर्षा होती है। जूट, तम्बाकू और लोहे का उत्पादन अधिक होता है। विदेशों से भारत का मैत्री सम्बन्ध बढ़ता है तथा सभी राष्ट्र मैत्री सम्बन्धों में आगे बढ़ना चाहते हैं। ज्येष्ठ मास में गुरु के राशि-परिवर्तन होने से धर्मात्माजनों को कष्ट,

धर्मस्थानों पर विपत्ति, सत्क्रिया का अभाव, वर्षा की कमी, धान्य की उत्पत्ति में कमी एवं प्रजा में अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। मध्य प्रदेश, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और पंजाब राज्य में सूखा पड़ता है, जिससे इन राज्यों की प्रजा को अधिक कष्ट उठाना पड़ता है। उक्त मास में गुरु का राशि-परिवर्तन कलाकारों के लिए मध्यम और योद्धाओं के लिए श्रेष्ठ होता है। आषाढ़ मास में बृहस्पति का राशि-परिवर्तन हो तो राज्य वालों को क्लेश, मुख्य मन्त्रियों को शारीरिक कष्ट, ईति-भीति, वर्षा का अवरोध, फसल की क्षति, नये प्रकार की क्रान्ति एवं पूर्वोत्तर प्रदेशों में उत्तम वर्षा होती है। दक्षिण के प्रदेशों में भी उत्तम वर्षा होती है। मलबार में फसल में कुछ कमी रह जाती है। गेहूँ, धान, जौ और मक्का की उपज सामान्यतया अच्छी होती है। श्रावण मास में गुरु का राशि-परिवर्तन होने से अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, देश का आर्थिक विकास, फल-फूलों की वृद्धि, नागरिकों में उत्तेजना, क्षेम और आरोग्य फैलता है। भाद्रपद और आश्विन मास में गुरु के राशि-परिवर्तन होने से क्षेम, श्री, आयु, आरोग्य एवं धन-धान्य की वृद्धि होती है। समयानुकूल अच्छी वर्षा होती है। जनता को आर्थिक लाभ होता है तथा सभी मिलकर देश के विकास में योगदान करते हैं।

द्वादश राशि स्थित गुरुफल—मेष राशि में बृहस्पति के होने से चैत्र संवत्सर कहलाता है। इसमें खूब वर्षा होती है, सुभिक्ष होता है। वस्त्र, गुड़, ताँबा, कपास, मूँगा आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। घोड़ों को पीड़ा, महामारी, ब्राह्मणों को कष्ट, तीन महीनों तक जनसाधारण को भी कष्ट होता है। भाद्रपद मास में गेहूँ, चावल, उड़द, घी, सस्ते होते हैं, दक्षिण और उत्तर में खण्डवृष्टि होती है। दक्षिणोत्तर प्रदेशों में दुर्भिक्ष, दो महीने के पश्चात् वर्षा होती है। कार्तिक और मार्गशीर्ष मास में कपास, अन्न, गुड़ महँगा होता है, घी का भाव सस्ता होता है, जूट, पाट का भाव महँगा होता है। पौष मास में रसों का भाव महँगा, अन्न का भाव सस्ता, गुड़-घी का भाव कुछ महँगा होता है। एक वर्ष में यदि बृहस्पति तीन राशियों का स्पर्श करे तो अत्यन्त अनिष्ट होता है।

वृष राशि में गुरु के होने से वैशाख में वर्ष माना जाता है। इस वर्ष में वर्षा अच्छी होती है, फसल भी उत्तम होती है। गेहूँ, चावल, मूँग, उड़द, तिल के व्यापार में अधिक लाभ होता है। श्रावण और ज्येष्ठ इन दो महीनों में सभी वस्तुएँ लाभप्रद होती हैं। इन दोनों महीनों में वस्तुएँ खरीदकर रखने से अधिक लाभ होता है। कार्तिक, माघ और वैशाख में घी का भाव तेज होता है। आषाढ़, श्रावण और आश्विन में अच्छी वर्षा होती है, भादों के महीने में वर्षा का अभाव रहता है। रोग उत्पत्ति इस वर्ष में अधिक होती है। पूर्व प्रदेशों में मलेरिया, चेचक, निमोनिया, हैजा आदि रोग सामूहिक रूप से फैलते हैं। पश्चिम के प्रदेशों में सूखा होने से बुखार का अधिक प्रसार होता है। आषाढ़ मास में बीजवाले अनाज महँगे

और अवशेष सभी अनाज सस्ते होते हैं। गुड़ का भाव फाल्गुन से महँगा होता है और अगले वर्ष तक चला जाता है। घी का भाव घटता-बढ़ता रहता है। चौपायों को कष्ट अधिक होता है। श्रावण और भाद्रपद दोनों महीनों में पशुओं में महामारी पड़ती है, जिससे मवेशियों का नाश होता है।

मिथुन राशि पर बृहस्पति के आने से ज्येष्ठ नामक संवत्सर होता है। इसमें बालकों और घोड़ों को रोग होता है, वायु-वर्षा होती है। पाप, अत्याचार और अनीति की वृद्धि होती है। चोरभय, शस्त्रभय एवं आतंक व्याप्त रहता है। सोना, चाँदी का बाजार एक वर्ष तक अस्थिर रहता है, व्यापारियों को इन दोनों के व्यापार में लाभ होता है। अनाज का भाव वर्ष के आरंभ में महँगा, पश्चात् सस्ता होता है। रूई, सोंठ, मिर्च, पीपल, सरसों का भाव कुछ तेज होता है। कर्क राशि पर गुरु के रहने से आषाढाख्य संवत्सर होता है। इस वर्ष में कार्तिक और फाल्गुन में सभी प्रकार के अनाज तेज होते हैं, अल्प वर्षा, दुर्भिक्ष, अशान्ति और रोग फैलते हैं। सोना, चाँदी, रेशम, ताँबा, मूँगा, मोती, माणिक्य, अन्न आदि का भाव कुछ तेज होता है; पर अनाज, गुड़ और घी का भाव अधिक तेज होता है। शीतकाल की संचित की गयी वस्तुओं को वर्षा काल में बेचने से अधिक लाभ होता है। सिंह राशि का बृहस्पति श्रावण संवत्सर होता है। इसमें वर्षा अच्छी होती है, फसल भी उत्तम होती है। घी, दूध और रसों की उत्पत्ति अत्यधिक होती है। फल-पुष्पों की उपज अच्छी होने से विश्व में शान्ति और सुख दिखलाई पड़ता है। धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है। नये नेताओं की उत्पत्ति होने से देश का नेतृत्व नये व्यक्तियों के हाथ में जाता है, जिससे देश की प्रगति ही होती है। व्यापारियों के लिए यह वर्ष उत्तम होता है। सभी वस्तुओं के व्यापार में लाभ होता है। सिंह के गुरु में होने पर चौपाये महँगे होते हैं। सोना, चाँदी, घी, तेल, गेहूँ, चावल भी महँगा ही रहता है। चातुर्मास में वर्षा अच्छी होती है। कार्तिक और पौष में अनाज महँगा होता है, अवशेष महीनों में अनाज का भाव सस्ता रहता है। सोना-चाँदी आदि धातुएँ कार्तिक से माघ तक महँगी रहती हैं, अवशेष महीनों में कुछ भाव नीचे गिर जाते हैं। यों सोने के व्यापारियों के लिए यह वर्ष बहुत अच्छा है। गुड़, चीनी के व्यापार में घाटा होता है। वैशाख मास से श्रावण मास तक गुड़ का भाव कुछ तेज रहता है, अवशेष महीनों में समर्घता रहती है। स्त्रियों के लिए यह बृहस्पति अच्छा नहीं है, स्त्रीधर्म सम्बन्धी अनेक बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं तथा कन्याओं को चेचक अधिक निकलती है। सर्वसाधारण में आनन्द, उत्साह और हर्ष की लहर दिखलाई पड़ती है।

कन्या राशि के गुरु में भाद्रसंवत्सर होता है। इसमें कार्तिक से वैशाख तक सुभिक्ष होता है। इस संवत्सर में संग्रह किया गया अनाज वैशाख में दूना लाभ देता है। वर्षा साधारण होती है और फसल भी साधारण ही रहती है। तुला राशि

के बृहस्पति में आश्विन वर्ष होता है। इसमें घी, तेल सस्ते होते हैं। मार्गशीर्ष और पौष में धान्य का संग्रह करना उचित है। मार्गशीर्ष से लेकर चैत्र तक पाँचों महीनों में लाभ होता है। विग्रह—लड़ाई और संघर्ष देश में होने का योग अवगत करना चाहिए। रस संग्रह करने वालों को अधिक लाभ होता है। वृश्चिक राशि का बृहस्पति होने पर कार्तिक संवत्सर होता है। इसमें खण्डवृष्टि, धान्य की फसल अल्प होती है। घरों में परस्पर वैमनस्य आठ महीनों तक होता है। भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक महीनों में महँगाई हो जाती है। सोना, चाँदी, काँसा, ताँबा, तिल, घी, श्रीफल, कपास, नमक, श्वेत वस्त्र महँगे बिकते हैं। देश के विभिन्न प्रदेशों में संघर्ष होते हैं, स्त्रियों को नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। धनु राशि के बृहस्पति में मार्गशीर्ष संवत्सर होता है। इसमें वर्षा अधिक होती है। सोना, चाँदी, अनाज, कपास, लोहा, काँसा आदि सभी पदार्थ सस्ते होते हैं। मार्गशीर्ष से ज्येष्ठ तक घी कुछ महँगा रहता है। चौपायों से अधिक लाभ होता है, इनका मूल्य अधिक बढ़ जाता है। मकर के गुरु में पौष संवत्सर होता है, इसमें वर्षाभाव और दुर्भिक्ष होता है। उत्तर और पश्चिम में खण्ड वृष्टि होती है तथा पूर्व और दक्षिण में दुर्भिक्ष। धान्य का भाव महँगा रहता है। कुम्भ के गुरु में माघ संवत्सर होता है। इसमें सुभिक्ष, पर्याप्त वर्षा, धार्मिक प्रचार, धातु और अनाज सस्ते होते हैं। माघ-फाल्गुन में पदार्थ सस्ते रहते हैं। वैशाख में वस्तुओं के भाव कुछ तेज हो जाते हैं। मीन के गुरु में फाल्गुन संवत्सर होता है। इसमें अनेक प्रकार के रोगों का प्रसार, साधारण वर्षा, सुभिक्ष, गेहूँ, चीनी, तिल, तैल और गुड़ का भाव तेज होता है। पौष मास में कष्ट होता है। फाल्गुन और चैत्र के महीने में बीमारियाँ फैलती हैं। दक्षिण भारत और राजस्थान के लिए यह वर्ष मध्यम है। पूर्व के लिए वर्ष उत्तम है, पश्चिम के प्रदेशों के लिए वर्ष साधारण है।

बृहस्पति के वक्री होने का विचार—मेष राशि का बृहस्पति वक्री होकर मीन राशि का हो जाय तो आषाढ़, श्रावण में गाय, महिष, गधे और ऊँट तेज हो जाते हैं। चन्दन, सुगन्धित तेल तथा अन्य सुगन्धित वस्तुएँ महँगी होती हैं। वृष राशि का गुरु पाँच महीने वक्री हो जाय तो गाय-बैल आदि चौपाये, बर्तन आदि तेज होते हैं। सभी प्रकार के धान्य का संग्रह करना उचित है। मवेशी में अधिक लाभ होता है। मिथुन राशि का गुरु वक्री हो तो आठ महीने तक चौपाये तेज रहते हैं। मार्गशीर्ष आदि महीनों में सुभिक्ष, सब लोग स्वस्थ लेकिन उत्तर प्रदेश और पंजाब में दुष्काल की स्थिति आती है। कर्क राशि का गुरु यदि वक्री हो तो घोर दुर्भिक्ष, गृहयुद्ध, जनता में संघर्ष, राज्यों की सीमा में परिवर्तन तथा घी, तैल, चीनी, कपास के व्यापार में लाभ एवं धान्य भाव भी महँगा होता है। सिंह राशि के गुरु के वक्री होने से सुभिक्ष, आरोग्य और सब लोगों में प्रसन्नता होती है। धान्य के संग्रहों में भी लाभ होता है। कन्या राशि के गुरु के वक्री होने से अल्प लाभ,

सुभिक्ष, अधिक वर्षा और प्रजा आमोद-प्रमोद में लीन रहती है। तुला राशि के गुरु के वक्री होने से बर्तन, सुगन्धित वस्तुएँ, कपास आदि पदार्थ महँगे होते हैं। वृश्चिक राशि का गुरु वक्री हो तो अन्न और धान्य का संग्रह करना उचित होता है। गेहूँ, चना आदि महँगे होते हैं। धनु राशि का गुरु वक्री हो तो सभी प्रकार के अनाज सस्ते होते हैं। मकर राशि के गुरु के वक्री होने से धान्य सस्ता होता है और आरोग्यता की वृद्धि होती है। यदि कुम्भ राशि का गुरु वक्री हो तो सुभिक्ष, कल्याण, उचित वर्षा एवं धान्य भाव सम रहता है। वर्षान्त में वस्तुओं के भाव कुछ महँगे होते हैं। मीन राशि का गुरु वक्री हो तो धनक्षय, चोरों से भय, प्रशासकों में अनबन, धान्य और रस पदार्थ महँगे होते हैं। लवण, कपास, घी और तेल में चौगुना लाभ होता है। मीन के गुरु का वक्री होना धातुओं के भावों में भी तेजी लाता है तथा सुवर्णादि सभी धातुएँ महँगी होती हैं।

गुरु का नक्षत्र भोग विचार—जब गुरु कृत्तिका, रोहिणी नक्षत्र में स्थित हो उस समय मध्यम वृष्टि और मध्यम धान्य उपजता है। मृगशिरा और आर्द्रा में गुरु के रहने से यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष और धन-धान्य की वृद्धि होती है। पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा में गुरु हो तो अनावृष्टि, घोरभय, दुर्भिक्ष, लूट-पाट, संघर्ष और अनेक प्रकार के रोग होते हैं। मघा और पूर्वाफाल्गुनी में गुरु के होने से सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य होते हैं। उत्तराफाल्गुनी और हस्त में गुरु स्थित हो तो वर्षा अच्छी, जनता को सुख एवं सर्वत्र क्षेम-आरोग्य व्याप्त रहता है। चित्रा और स्वाती नक्षत्र में गुरु हो तो श्रेष्ठ धान्य, उत्तम वर्षा तथा जनता में आमोद-प्रमोद होते हैं। विशाखा और अनुराधा में गुरु के होने से मध्यम वर्षा होती है और फसल भी मध्यम ही होती है। ज्येष्ठा और मूल में गुरु हो तो दो महीने के उपरान्त खण्डवृष्टि होती है। पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा में गुरु हो तो तीन महीनों तक लगातार अच्छी वर्षा, क्षेम, आरोग्य और पृथ्वी पर सुभिक्ष होता है। श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्र में गुरु हो तो सुभिक्ष के साथ धान्य महँगा होता है। पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद में गुरु का होना अनावृष्टि का सूचक है। रेवती, भरणी और अश्विनी नक्षत्र में गुरु के होने से सुभिक्ष, धान्य की अधिक उत्पत्ति एवं शान्ति रहती है। मृगशिरा से पाँच नक्षत्रों में गुरु शुभ होता है। गुरु तीव्र गति हो और शनि वक्री हो तो विश्व में हाहाकार होने लगता है।

गुरु के उदय का फलादेश—मेष राशि में गुरु का उदय हो तो दुर्भिक्ष, मरण, संकट, आकस्मिक दुर्घटनाएँ होती हैं। वृष में उदय होने से सुभिक्ष, मणि-रत्न महँगे होते हैं। मिथुन में उदय होने से वेश्याओं को कष्ट, कलाकार और व्यापारियों को भी पीड़ा होती है। कर्क में उदय होने से अल्पवृष्टि, मृत्यु एवं धान्य भाव तेज होता है। सिंह में उदय होने से समयानुकूल यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष एवं नदियों की बाढ़ से जन-साधारण में कष्ट होता है। कन्या राशि में गुरु के उदय होने से

बालकों को कष्ट, साधारण वर्षा और फसल भी अच्छी होती है। तुलाराशि में गुरु के उदय होने से काश्मीरी चन्दन, फल-पुष्प एवं सुगन्धित पदार्थ महँगे होते हैं। वृश्चिक राशि में गुरु के उदय होने से दुर्भिक्ष, धन-विनाश, पीड़ा, एव अल्प वर्षा होती है।

धनु राशि और मकर राशि में गुरु का उदय होने से रोग, उत्तम धान्य, अच्छी वर्षा एवं द्विजातियों को कष्ट होता है। कुम्भ राशि में गुरु के उदय होने से अतिवृष्टि, अनाज का भाव महँगा एवं मीन राशि में गुरु के उदय होने से युद्ध, संघर्ष और अशान्ति होती है। कार्तिक मास में गुरु के उदय होने से थोड़ी वर्षा, रोग, पीड़ा; मार्गशीर्ष में उदय होने से सुभिक्ष, उत्तम वर्षा; पौष में उदय होने से नीरोगता और धान्य की प्राप्ति; माघ-फाल्गुन में उदय होने से खण्डवृष्टि, चैत्र में उदय होने से विचित्र स्थिति, वैशाख-ज्येष्ठ में उदय होने से वर्षा का निरोध; आषाढ़ में उदय हो तो आपस में मतभेद, अन्न का भाव तेज; श्रावण में उदय हो तो आरोग्य, सुख-शान्ति, वर्षा; भाद्रपद मास में उदय होने से धान्यनाश एवं आश्विन में उदय होने से सभी प्रकार से सुख की प्राप्ति होती है।

गुरु के अस्त का विचार—मेष में गुरु अस्त हो तो थोड़ी वर्षा; बिहार, बंगाल, आसाम में सुभिक्ष; राजस्थान, पंजाब में दुष्काल; वृष में अस्त हो तो दुर्भिक्ष; दक्षिण भारत में अच्छी फसल, उत्तर भारत में खण्डवृष्टि; मिथुन में अस्त हो तो घृत, तेल, लवण आदि पदार्थ महँगे, महामारी के कारण सामूहिक मृत्यु, अल्प वृष्टि, कर्क में हो तो सुभिक्ष, कुशल, कल्याण, क्षेम; सिंह में अस्त हो तो युद्ध, संघर्ष, राजनीतिक उलट-फेर, धन का नाश; कन्या में अस्त हो तो क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य; तुला में पीड़ा, द्विजों को विशेष कष्ट, धान्य महँगा; वृश्चिक में अस्त हो तो नेत्ररोग, धनहानि, आरोग्य, शस्त्रभय; धनु राशि में अस्त हो तो भय, आतंक, रोगादि; मकर राशि में अस्त हो तो उड़द, तिल, मूँग आदि धान्य महँगे; कुम्भ में अस्त हो तो प्रजा को कष्ट, गर्भवती नारियों को रोग एवं मीन राशि में अस्त हो तो सुभिक्ष, साधारण वर्षा, धान्य भाव सस्ता होता है।

गुरु का क्रूर ग्रहों के साथ अस्त या उदय होना अशुभ होता है। शुभ ग्रहों के साथ अस्त या उदय होने से गुरु का शुभ फल प्राप्त होता है। गुरु के साथ शनि और मंगल के रहने से प्रायः सभी वस्तुओं की कमी होती है और भाव भी उनके महँगे होते हैं। जब गुरु के साथ शनि की दृष्टि गुरु पर रहती है, तब वर्षा कम होती है और फसल भी अल्प परिमाण में उपजती है।

अष्टादशोऽध्यायः

गतिं प्रवासमुदयं वर्णं ग्रहसमागमम् ।
बुधस्य सम्प्रवक्ष्यामि फलानि च निबोधत ॥1॥

बुध के प्रवास—अस्त, उदय, वर्ण, ग्रहयोग का वर्णन करता हूं, उनका फल निम्न प्रकार अवगत करना चाहिए ॥1॥

सौम्या विमिश्राः संक्षिप्तास्तीव्रा घोरास्तथैव च ।
दुर्गाविगतयो ज्ञेया बुधस्य च विचक्षणैः ॥2॥

सौम्या, विमिश्रा, संक्षिप्ता, तीव्रा, घोरा, दुर्गा और पापा ये सात प्रकार की बुध की गतियाँ विद्वानों ने बतलायी हैं ॥2॥

सौम्यां गतिं समुत्थाय [1]त्रिपक्षाद् दृश्यते बुधः ।
विमिश्रायां गतौ पक्षे संक्षिप्तायां षडूनके ॥3॥
तीक्ष्णायां दशरात्रेण घोरायां तु षडाह्निके ।
पापिकायां त्रिरात्रेण दुर्गायां सम्यगक्षये ॥4॥

सौम्या गति में बुध तीन पक्ष अर्थात् 45 दिन तक देखा जाता है । विमिश्रा गति में दो पक्ष अर्थात् तीस दिन, संक्षिप्ता गति में चौबीस दिन, तीक्ष्णा गति में दस रात, घोरा में छः दिन, पापा गति में तीन रात और दुर्गा में नौ दिन तक बुध दिखलाई पड़ता है । तात्पर्य यह है कि बुध की सौम्यगति 45 दिन, विमिश्रा 30 दिन, संक्षिप्ता 24 दिन, तीक्ष्णा या तीव्रा 10 दिन, घोरा 6 दिन, पापा 3 दिन और दुर्गा 9 दिन तक रहती है ॥3-4॥

सौम्याः विमिश्राः संक्षिप्ता बुधस्य गतयो हिताः ।
शेषाः पापाः समाख्याता विशेषेणोत्तरोत्तराः ॥5॥

बुध की सौम्या, विमिश्रा और संक्षिप्ता गतियाँ हितकारी हैं, शेष सभी गतियाँ पाप गति कहलाती हैं तथा विशेष रूप से उत्तर-उत्तर की गतियाँ पाप हैं ॥5॥

नक्षत्रं शक्रवाहेन जहाति समचारताम्[2] ।
एषोऽपि नियतश्चारो भयं कुर्यादतोऽन्यथा ॥6॥

यदि बुध समान रूप से गमन करता हुआ शक्र वाहन के द्वारा स्वाभाविक गति से नक्षत्र का त्याग करे तो यह बुध का नियतचार कहलाता है, इसके विपरीत गमन करने से भय होता है ॥6॥

---

1. त्रिपक्षं मु० । 2. समाचारता. मु० ।

नक्षत्राणि चरेत्पञ्च पुरस्तादुत्थितो बुधः ।
ततश्चास्तमितः षष्ठे सप्तमे दृश्यते परः ॥7॥

सम्मुख उदय होकर बुध पाँच नक्षत्र प्रमाण गमन करता है, छठे नक्षत्र पर अस्त होता है और सातवें पर पुनः दिखलाई पड़ता है ॥7॥

उदितः पृष्ठतः सौम्यश्चत्वारि चरति ध्रुवम् ।
पञ्चमेऽस्तमितः षष्ठे दृश्यते पूर्वतः पुनः ॥8॥

पृष्ठतः उदित होकर बुध चार नक्षत्र प्रमाण गमन करता है, पाँचवें नक्षत्र पर अस्त होता है और छठे पर पुनः दिखलाई पड़ता है ॥8॥

चत्वारि षट् तथाऽष्टौ च कुर्यादस्तमनोदयौ ।
सौम्यायां तु विमिश्रायां संक्षिप्तायां यथाक्रमम् ॥9॥

सौम्या, विमिश्रा और संक्षिप्ता गति में क्रमशः चार, छः और आठ नक्षत्रों पर अस्त और उदय को बुध प्राप्त होता है ॥9॥

[1]नक्षत्रमस्य चिह्नानि गतिभिस्त्रिभिर्यदा ।
पूर्वाभिः पूर्णसस्यानां तदा सम्पत्तिरुत्तमा ॥10॥

उक्त तीनों गतियों में जब बुध नक्षत्रों को पुनः ग्रहण करता है तो पूर्ण रूप से धान्य की उत्पत्ति होती है और उत्तम सम्पत्ति रहती है ॥10॥

बुधो यदोत्तरे मार्गे सुवर्णः पूजितस्तदा ।
मध्यमे मध्यमो ज्ञेया जघन्यो दक्षिणे पथि ॥11॥

पूर्वोत्तर मार्ग में बुध अच्छे वर्ण वालों द्वारा पूजित होता है अर्थात् उत्तम फलदायक होता है। मध्य में मध्यम और दक्षिण मार्ग में जघन्य माना जाता है ॥11॥

वसु कुर्यादतिस्थूलो ताम्रः शस्त्रप्रकोपनः ।
[2]अतश्चारुणवर्णश्च बुधः सर्वत्र पूजितः ॥12॥

अति स्थूल बुध धन की वृद्धि करता है, ताम्रवर्ण का बुध शस्त्र कोप करता है, सूक्ष्म और अरुण वर्ण का बुध सर्वत्र पूजित—उत्तम होता है ॥12॥

पृष्ठतः पुरलम्भाय पुरस्तादर्थवृद्धये ।
स्निग्धो रूक्षो बुधो ज्ञेयः सदा सर्वत्रगो बुधैः ॥13॥

बुध का पीछे रहना नगर-प्राप्ति के लिए, सामने रहना अर्थ-वृद्धि के लिए और स्निग्ध और रूक्ष बुध सदा सर्वत्र गमन करने वाला होता है ॥13॥

---

1. नक्षत्रमनुगुणानि । मु० । 2. अणुः मु० ।

गुरोः शुक्रस्य भौमस्य वीथीं विन्द्याद् यथा बुधः ।
दीप्तोऽतिरूक्षः सङ्ग्रामं तदा घोरं निवेदयेत् ॥14॥

जब बुध ग्रह गुरु, शुक्र और मंगल की वीथि को प्राप्त होता है तब अत्यन्त रूक्ष और दीप्त होता है, अतः घोर संग्राम होता है ॥14॥

भार्गवस्योत्तरां[1] वीथीं चन्द्रशृङ्गं च दक्षिणम् ।
बुधो यदा निहन्यात्तानुभयोर्दक्षिणापथे ॥15॥

राज्ञां चक्रधराणां च सेनानां शस्त्रजीविनाम् ।
पौर-[2]जनपदानां च क्रिया काचिन्न सिध्यति ॥16॥

यदि शुक्र उत्तरा-वीथि में हो और चन्द्रशृंग दक्षिण की ओर हो तथा उनको दक्षिण मार्ग में बुध घातित करे तो राजा, चक्रधर---शासक, सेना, शस्त्र से आजीविका करने वाले, पुरवासी और नागरिकों की कोई भी क्रिया सिद्ध नहीं होती है ॥15-16॥

[3]शुक्रस्य दक्षिणां वीथीं चन्द्रशृंगमधोत्तरम् ।
भिन्द्यात्लिखेत् तदा सौम्यस्ततो [4]राज्याग्निजं भयम् ॥17॥

शुक्र यदि दक्षिण वीथि में हो और चन्द्रशृंग नीचे की ओर उत्तर तरफ हो तथा बुध इनका भेदन कर स्पर्श करे तो उस समय राज्य और अग्नि का भय होता है ॥17॥

यदा बुधोऽरुणाभः [5]स्याद्दुर्भगो वा निरीक्ष्यते ।
तदा स स्थावरान् हन्ति ब्रह्म-क्षत्रं च पीडयेत् ॥18॥

जब बुध अरुण कान्ति वाला हो अथवा दुर्भग कुरूप दिखलाई पड़ता हो तो स्थावर—नागरिकों का विनाश करता है और ब्राह्मण और क्षत्रियों को पीड़ित करता है ॥18॥

चान्द्रस्य दक्षिणां वीथीं भित्त्वा तिष्ठेद् यो ग्रहः ।
रूक्षः स कालसंकाशस्तदा चित्रविनाशनम् ॥19॥

चित्रमूर्त्तिश्च चित्रांश्च शिल्पिनः कुशलांस्तथा ।
तेषां च बन्धनं कुर्यात् मरणाय समीहते ॥20॥

जब कोई ग्रह बुध की दक्षिण वीथि का भेदन करे तथा वह रूक्ष दिखलाई

---

1. भचोत्तरां मु० । 2. -जान० मु० । 3. शुक्रस्तु मु० । 4. रोगाग्निजं भयम् मु० । 5. स्यादुच्चगो वा मु० ।

पड़े तो शिल्पकला एवं चित्रकला का विनाश होता है। चित्र, मूर्ति, कुशल मूर्तिकार और चित्रकारों का बन्धन और विनाश होता है। अर्थात् उक्त प्रकार की स्थिति में ललित कलाओं और ललितकलाओं के निर्माताओं का विनाश एवं मरण होता है ॥19-20॥

भित्वा यदोत्तरां वीथीं दारुकाशोऽवलोकयेत्।
सोमस्य चोत्तरं शृंगं लिखेद् भद्रपदां वधेत् ॥21॥
शिल्पिनां दारुजीवीनां तदा षाण्मासिको [1]भयः।
अकर्मसिद्धिः कलहो मित्रभेदः पराजयः ॥22॥

यदि बुध उत्तरा वीथि का भेदन कर काष्ठ-तृण का अवलोकन करे एवं चन्द्रमा के उत्तर शृंग का स्पर्श करे तथा पूर्वा भाद्रपद का वेध करे तो काष्ठजीवी शिल्पियों को छः महीने में भय होता है। अकार्य की सिद्धि होती है। कलह, मित्रभेद और पराजय आदि फल घटित होते हैं ॥21-22॥

पीतो यदोत्तरां वीथीं गुरुं भित्वा प्रलीयते।
तदा चतुष्पदं गर्भं कोशधान्यं बुधो वधेत् ॥23॥
वैश्यश्च [2]शिल्पिनश्चापि गर्भं मासञ्च सारथिः।
सो नयेद्भजते मासं भद्रबाहुवचो यथा ॥24॥

पीत वर्ण का बुध उत्तरा वीथि में बृहस्पति का भेदन कर अस्त हो जाय तो चौपाये, गर्भ, खजाना, धान्य आदि का विनाश करता है। उक्त प्रकार की बुध की स्थिति से वैश्य और शिल्पियों को दारुण भय होता है। यह भय एक महीने तक रहता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥23-24॥

विभ्राजमानो रक्तो वा बुधो दृश्येत कश्चन।
नागराणां स्थिराणां च दीक्षितानां च तद्भयम् ॥25॥

यदि कभी शोभित होने वाला रक्त वर्ण का बुध दिखलाई पड़े तो नागरिक, स्थिर और दीक्षित—साधु-मुनियों को भय होता है ॥25॥

कृत्तिकास्वग्निदो रक्तो रोहिण्यां स क्षयंकरः।
सौम्ये रौद्रे तथाऽऽदित्ये पुष्ये सर्वे बुधः स्मृतः ॥26॥
पितृदैवं तथाऽऽश्लेषां कलुषो यदि [3]दृश्यते।
पितृंस्तान् विहंगांश्च सस्यं स भजते भयः ॥27॥

---

1. वधः मु०। 2. शिल्पिनां चापि भयं भवति दारुणम् मु०। 3. सेवते मु०।

कृत्तिका में लाल वर्ण का बुध हो तो अग्नि प्रकोप करने वाला, रोहिणी में हो तो क्षय करने वाला होता है। और यदि मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा इन नक्षत्रों में कलुषित बुध हो तो पितर और विहंगमों तथा धान्य को लाभ होता है ॥26-27॥

बुधो विवर्णो मध्येन विशाखां यदि गच्छति।
ब्रह्मक्षत्रविनाशाय यदा ज्ञेयो न संशयः ॥28॥

यदि विवर्ण बुध विशाखा के मध्य से गमन करे तो ब्राह्मण और क्षत्रियों का विनाश होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥28॥

मासोदितोऽनुराधायां यदा सौम्यो निषेवते।
[1]पशुधनचरान् धान्यं तदा पीडयते भृशम् ॥29॥

जब मासोदित बुध अनुराधा में रहता है तो पशुधन को अत्यधिक कष्ट देता है और धान्य की हानि होती है ॥29॥

श्रवणे राज्यविभ्रंशो ब्राह्मे ब्राह्मणपीडनम्।
धनिष्ठायां च वैवर्ण्यं धनं हन्ति धनेश्वरम् ॥30॥

विकृत वर्ण वाला बुध यदि श्रवण नक्षत्र में हो तो राज्य भ्रष्ट होता है, अभिजित् में हो तो ब्राह्मणों को पीड़ा होती है और धनिष्ठा में हो तो धनिकों का और धन का विनाशक होता है ॥30॥

उत्तराणि च पूर्वाणि याम्यायां [2]दिशि हिंसति।
धातुवादविदो हन्यात्तज्ज्ञांश्च परिपीडयेत् ॥31॥

यदि बुध दक्षिण मार्ग में तीनों उत्तरा—उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा और उत्तराभाद्रपद तथा तीनों पूर्वा—पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभाद्रपद का घात करे तो धातुवाद के ज्ञाताओं को पीड़ा होती है ॥31॥

ज्येष्ठायामनुपूर्वेण स्वातौ च यदि तिष्ठति।
बुधस्य चरितं घोरं [3]महादुःखदमुच्यते ॥32॥

यदि ज्येष्ठा और स्वाति में बुध रहे तो उसका यह घोर चरित अत्यन्त कष्ट देने वाला होता है ॥32॥

उत्तरे त्वनयोः सौम्यो यदा दृश्येत पृष्ठतः।
पितृदेवमनुप्राप्तस्तदा मासमुपग्रहः ॥33॥

---

1. मूकान्धबधिरांश्चैव मु०। 2. यदि मु०। 3. महाजनिक मु०।

जब सौम्य बुध उत्तर में इन दोनों नक्षत्रों में—ज्येष्ठा और स्वाति में पृष्ठतः—पीछे से दिखलाई पड़े तथा मघा को प्राप्त हो तो एक महीने के लिए उपग्रह अर्थात् कष्ट होता है ।।33।।

पुरस्तात् सह शुक्रेण यदि तिष्ठति सुप्रभः ।
बुधो [1]मध्यगतो चापि तदा मेघा बहूदकाः ।।34।।

सम्मुख शुक्र के साथ श्रेष्ठ कान्ति वाला बुध रहे तो उस समय अधिक जल की वर्षा होती है ।।34।।

दक्षिणेन तु पार्श्वेण यदा गच्छति दुष्प्रभः ।
तदा सृजति लोकस्य महाशोकं[2] महद्भयम् ।।35।।

यदि बुरी कान्ति वाला बुध दक्षिण की ओर से गमन करे तो लोक के लिए अत्यन्त भय और शोक उत्पन्न होता है ।।35।।

धनिष्ठायां जलं हन्ति वारुणे जलदं वधेत् ।
वर्णहीनो यदा याति बुधो दक्षिणतस्तदा ।।36।।

यदि वर्णहीन बुध दक्षिण की ओर से धनिष्ठा नक्षत्र में गमन करे तो जल का विनाश और पूर्वाषाढ़ा में गमन करे तो मेघ को रोकता है ।।36।।

तनुः समार्गो यदि सुप्रभोऽजितः समप्रसन्नो गतिमागतोन्नतिम् ।
यदा न रूक्षो न च दूरगो बुधस्तदा प्रजानां सुखमूर्जितं सृजेत् ।।37।।

ह्रस्व, मार्गी, सुकान्ति वाला, समाकार, प्रसन्न गति को प्राप्त बुध जब न रूक्ष होता है और न दूर रहता है, उस समय प्रजा को सुख-शान्ति देता है ।।37।।

इति नैर्ग्रन्थो भद्रबाहुके निमित्ते बुधचारो नाम अष्टादशोऽध्यायः ।।18।।

विवेचन—बुध का उदय होने से अन्न का भाव महँगा होता है । जब बुध उदित होता है उस समय अतिवृष्टि, अग्नि प्रकोप एवं तूफान आदि आते हैं । श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा, उत्तराषाढ़ा नक्षत्र को मर्दित करके बुध के विचरण करने से रोग, भय, अनावृष्टि होती है । आर्द्रा से लेकर मघा तक जिस किसी नक्षत्र में बुध रहता है, उसमें ही शस्त्रपात, भूख, भय, रोग, अनावृष्टि और सन्ताप से जनता को पीड़ित करता है । हस्त से लेकर ज्येष्ठा तक छः नक्षत्रों में बुध विचरण करे तो मवेशी को कष्ट, सुभिक्ष, पूर्ण वर्षा, तेल और तिलहन का भाव महँगा

1. विसृजति काले मु० । 2. शोकं महद्भयंकरः मु० ।

होता है। बंगाल, आसाम, बिहार, बम्बई, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, में सुभिक्ष, काश्मीर में अन्न कष्ट, राजस्थान में दुष्काल, वर्षा का अभाव एवं राजनीतिक उथल-पुथल समस्त देश में होती है। जापान में चावल की कमी हो जाती है। रूस और अमेरिका में खाद्यान्न की प्रचुरता रहने पर भी अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। उत्तर फाल्गुनी, कृत्तिका, उत्तराभाद्रपद और भरणी नक्षत्र में बुध का उदय हो या बुध विचरण कर रहा हो तो प्राणियों को अनेक प्रकार की सुख-सुविधाओं की प्राप्ति के साथ, धान्य भाव सस्ता, उचित परिमाण में वर्षा, सुभिक्ष, व्यापारियों को लाभ, चोरों का अधिक उपद्रव एवं विदेशों के साथ सहानुभूति-पूर्ण सम्पर्क स्थापित होता है। पंजाब, दिल्ली और राजस्थान राज्यों की सरकारों में परिवर्तन भी उक्त बुध की स्थिति में होता है। घी, गुड़, सुवर्ण, चाँदी तथा अन्य खनिज पदार्थों का मूल्य बढ़ जाता है। उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में बुध का विचरण करना देश के सभी वर्गों और हिस्सों के लिए सुभिक्षप्रद होता है। द्विजों को अनेक प्रकार के लाभ और सम्मान प्राप्त होते हैं। निम्न श्रेणी के व्यक्तियों को भी अधिकार मिलते हैं तथा सारी जनता सुख-शान्ति के साथ निवास करती है। यदि बुध अश्विनी, शतभिषा, मूल और रेवती नक्षत्र का भेदन करे तो जल-जन्तु, जल से आजीविका करने वाले, वैद्य-डॉक्टर एवं जल से उत्पन्न पदार्थों में नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं। पूर्वाषाढ़ा और पूर्वाभाद्रपद इन तीन नक्षत्रों में से किसी एक में शुक्र विचरण करे तो संसार को अन्न की कमी होती है। रोग, तस्कर, शस्त्र, अग्नि आदि का भय और आतंक व्याप्त रहता है। विज्ञान नये-नये पदार्थों की शोध और खोज करता है, जिससे अनेक प्रकार की नयी बातों पर प्रकाश पड़ता है। पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में बुध का उदय होने से अनेक राष्ट्रों में संघर्ष होता है तथा वैमनस्य उत्पन्न हो जाने से अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति परिवर्तित हो जाती है। उक्त नक्षत्र में बुध का उदय और विचरण करना दोनों ही राजस्थान, मध्य-भारत और सौराष्ट्र के लिए हानिकारक है। इन प्रदेशों में वृष्टि का अवरोध होता है। भाद्रपद और आश्विन मास में साधारण वर्षा होती है। कार्तिक मास के आरम्भ में गुजरात और बम्बई क्षेत्र में वर्षा अच्छी होती है। राजस्थान के मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन भी उक्त ग्रह स्थिति के कारण होता है।

पराशर के मतानुसार बुध का फलादेश—पराशर ने बुध की सात प्रकार की गतियाँ बतलाई हैं—प्राकृत, विमिश्र, संक्षिप्त, तीक्ष्ण, योगान्त, घोर और पाप। स्वाति, भरणी, रोहिणी और कृत्तिका नक्षत्र में बुध स्थित हो तो इस गति को प्राकृत कहते हैं। बुध की यह गति 40 दिन तक रहती है, इसमें आरोग्य, वृष्टि, धान्य की वृद्धि और मंगल होता है। प्राकृत गति भारत के पूर्व प्रदेशों के लिए उत्तम होती है। इस गति में गमन करने पर बुध बुद्धिजीवियों के लिए उत्तम होता है। कला-कौशल की भी वृद्धि होती है। देश में नवीन कल-कारखाने

स्थापित किये जाते हैं। अनाज अच्छा उत्पन्न होता है, वर्षा भी अच्छी होती है। कलिंग—उड़ीसा, विदेह – मिथिला, काशी, विदर्भ देश के निवासियों को सभी प्रकार के लाभ होते हैं। मरुभूमि --राजस्थान में सुभिक्ष रहता है, वर्षा भी अच्छी होती है। फसल उत्तम होने के साथ मवेशियों को कष्ट होता है। मथुरा और शूरसेन देशवासियों का आर्थिक विकास होता है। व्यापारी वर्ग को साधारण लाभ होता है। सोना और चाँदी के सट्टे में हानि उठानी पड़ती है। जूट का भाव बहुत ऊँचा चढ़ जाता है, जिससे व्यापारियों को हानि होती है।

मृगशिरा, आर्द्रा, मघा और आश्लेषा नक्षत्र में बुध के विचरण करने को मिश्रा गति कहते हैं। यह गति 30 दिनों तक रहती है। इस गति का फल मध्यम है। देश के सभी राज्यों और प्रदेशों में सामान्य वर्षा, उत्तम फसल, रस पदार्थों की कमी, धातुओं के मूल्य में वृद्धि एवं उच्च वर्ग के व्यक्तियों को सभी प्रकार से सुख प्राप्त होता है। बुध की मिश्रा गति मध्यप्रदेश एवं आसपास के निवासियों के लिए अधिक शुभ होती है। उक्त राज्यों में उत्तम वृष्टि होती है और फसल भी अच्छी ही होती है। पुष्य, पुनर्वसु, पूर्वा फाल्गुनी और उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में संक्षिप्त गति होती है। यह गति 22 दिनों तक रहती है। इस गति का फल भी मध्यम ही है पर विशेषता यह है कि इस गति के होने पर घी, तैल पदार्थों का भाव महँगा होता है। देश के दक्षिण भाग के निवासियों को साधारण कष्ट होता है। दक्षिण में अन्न की फसल अच्छी होती है। उत्तर में गुड़, चीनी और अन्य मधुर पदार्थों की उत्पत्ति अच्छी होती है। कोयला, लोहा, अभ्रक, ताँबा, सीसा भूमि से अधिक निकलता है। देश का आर्थिक विकास होता है। जिस दिन से बुध उक्त गति आरम्भ करता है, उसी दिन से लेकर जिस दिन यह गति समाप्त होती है, उस दिन तक देश में सुभिक्ष रहता है। देश के सभी राज्यों में अन्न और वस्त्र की कमी नहीं होती। आसाम में बाढ़ आ जाने से फसल नष्ट होती है। बिहार के वे प्रदेश भी कष्ट उठाते हैं, जो नदियों के तटवर्ती हैं। उत्तर प्रदेश में सब प्रकार से शान्ति व्याप्त रहती है। पूर्वा भाद्रपद, उत्तरा भाद्रपद, ज्येष्ठा, अश्विनी और रेवती नक्षत्र में बुध की गति तीक्ष्ण कहलाती है। यह गति 18 दिन की होती है। इस गति के होने से वर्षा का अभाव, दुष्काल, महामारी, अग्निप्रकोप और शस्त्रप्रकोप होता है। मूल, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में बुध के विचरण करने से बुध की योगान्तिका गति कहलाती है। यह गति 9 दिन तक रहती है। इस गति का फल अत्यन्त अनिष्टकर है। देश में रोग, शोक, झगड़े आदि के साथ वर्षा का भी अभाव रहता है। श्रावण मास में साधारण वर्षा होती है, इसके पश्चात् अन्य महीनों में वर्षा नहीं होती है। जब तक बुध इस गति में रहता है, तब तक अधिक लोगों की मृत्यु होती है। आकस्मिक दुर्घटनाएँ अधिक घटती हैं। श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र में शुक्र के रहने से उसकी

घोर गति कहलाती है। यह गति 15 दिन तक रहती है। जब बुध इस गति में गमन करता है, उस समय देश में अत्याचार, अनीति, चोरी आदि का व्यापक रूप में प्रचार होता है। उत्तर प्रदेश, पंजाब, बंगाल और दिल्ली राज्य के लिए यह गति अत्यधिक अनिष्ट करने वाली है। बुध के इस गति में विचरण करने से आर्थिक क्षति, किसी बड़े नेता की मृत्यु, देश में अर्थ-संकट, अन्नाभाव आदि फल घटित होते हैं। हस्त, अनुराधा या ज्येष्ठा नक्षत्र में बुध के विचरण करने से पापा गति होती है। इस गति के दिनों की संख्या 11 है। इस गति में बुध के रहने से अनेक प्रकार की हानियाँ उठानी पड़ती हैं। देश में राजनीतिक उलट-फेर होते हैं। बिहार, आसाम और मध्यप्रदेश के मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन होता है।

देवल के मत से फलादेश—देवल ने बुध की चार गतियाँ बतलाई हैं—ऋज्वी, वक्रा, अतिवक्रा और विकला। ये गतियाँ क्रमशः 30, 24, 12 और 6 दिन तक रहती हैं। ऋज्वी गति प्रजा के लिए हितकारी, वक्रा में शस्त्रभय, अतिवक्रा में धन का नाश, और विकला में भय तथा रोग होते हैं। पौष, आषाढ़, श्रावण, वैशाख और माघ में बुध दिखलाई दे तो संसार को भय, अनेक प्रकार के उत्पात एवं धन-जन की हानि होती है। यदि उक्त मासों में बुध अस्त हो तो शुभ होता है। आश्विन या कार्तिक मास में बुध दिखलाई दे तो शस्त्र, रोग, अग्नि, जल और क्षुधा का भय होता है। पश्चिम दिशा में बुध का उदय अधिक शुभ फल करता है तथा पूरे देश को शुभकारक होता है। स्वर्ण, हरित या सस्यक मणि के समान रंग वाला बुध निर्मल और स्वच्छ होकर उदित होता है, तो सभी राज्यों और देशों के लिए मंगल करने वाला होता है।

एकोनविंशतितमोऽध्यायः

चारं प्रवासं वर्णं च दीप्तिं [1]काष्ठांगतिं फलम्।
वक्रानुवक्रनामानि लोहितस्य निबोधत ॥1॥

मंगल के चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति, काष्ठ, गति, फल, वक्र और अनुवक्र आदि का विवेचन किया जाता है ॥1॥

---

1. काष्ठं गति मु०।

चारेण विंशतिं मासानष्टौ वक्रेण लोहितः।
चतुरस्तु प्रवासेन समाचारेण गच्छति ॥2॥

मंगल का चार बीस महीने, वक्र आठ महीने और प्रवास चार महीने का होना है ॥2॥

अनृजुः परुषः श्यामो ज्वलितो धूमवान् शिखी।
विवर्णो वामगो व्यस्तः क्रुद्धो ज्ञेयस्[1]तदाऽशुभः ॥3॥

वक्र, कठोर, श्याम, ज्वलित, धूमवान, विवर्ण, क्रुद्ध और बायीं ओर गमन करने वाला मंगल (सदा) अशुभ होता है ॥3॥

यदाऽष्टौ सप्त मासान् वा दीप्तः पुष्टः प्रजापतिः।
तदा सृजति कल्याणं शस्त्रमूर्च्छां तु निर्दिशेत् ॥4॥

यदि प्रजापति—मंगल आठ या सात महीने तक दीप्त और पुष्ट होकर निवास करे तो कल्याण होता है तथा शस्त्रमोह उत्पन्न होता है ॥4॥

मन्ददीप्तश्च दृश्येत् यदा भौमो चलेत्तदा।
तदा नानाविधं दुःखं प्रजानामहितं सृजेत् ॥5॥

जब मंगल मन्द और दीप्त दिखलाई पड़े, चंचल हो, उस समय प्रजा के लिए नाना प्रकार के दुःख और अहित करता है ॥5॥

ताम्रो दक्षिणकाष्ठस्थः प्रशस्तो दस्युनाशनः।
ताम्रो यदोत्तरे काष्ठे तस्य दस्योस्तदा हितम् ॥6॥

यदि ताम्र वर्ण का मंगल दक्षिण दिशा में हो तो शुभ होता है, और चोरों का नाश करनेवाला होता है। यदि ताम्र वर्ण का मंगल उत्तर दिशा में हो तो चोरों का हित करनेवाले होता है ॥6॥

रोहिणीं श्यात् परिक्रम्य लोहितो दक्षिणं व्रजेत्।
सुरासुराणां [2]जानानां सर्वेषामभयं वदेत् ॥7॥

यदि रोहिणी की परिक्रमा करके मंगल दक्षिण दिशा की ओर चला जाय तो देव-दानव, मनुष्य सभी को अभय की प्राप्ति होती है ॥7॥

क्षत्रियाणां विषादश्च दस्यूनां शस्त्रविभ्रमः।
गावो गोष्ठ-समुद्राश्च विनश्यन्ति विचेतसः ॥8॥

---

1. सदा मु० । 2. नभेजानां मु० । 3. मनुजानां मु० ।

यदि रोहिणी नक्षत्र पर मंगल की कुचेष्टा दिखलाई पड़े तो गाय, गोशाला और समुद्र का विनाश होता है ॥8॥

स्पृशेल्लिखेत् प्रमर्देद् वा रोहिणीं यदि लोहितः।
तिष्ठते दक्षिणो वाऽपि तदा शोक-भयंकरः ॥9॥

यदि मंगल रोहिणी नक्षत्र का स्पर्श करे, भेदन करे और प्रमर्दन करे अथवा दक्षिण में निवास करे तो भयंकर शोक की प्राप्ति होती है ॥9॥

सर्वद्वाराणि दृष्ट्वाऽसौ विलम्बं यदि गच्छति।
[1]सर्वलोकहितो ज्ञेयो दक्षिणोऽसृग् लोहितः ॥10॥

यदि दक्षिण मंगल सभी द्वारों को देखता हुआ विलम्ब से गमन करे तो समस्त लोक का हितकारी होता है ॥10॥

पञ्च वक्राणि भौमस्य तानि भेदेन द्वादश।
उष्णं शोषमुखं व्यालं लोहितं लोहमुद्गरम् ॥11॥

मंगल के पाँच वक्र होते हैं और भेद की अपेक्षा बारह वक्र कहे गये हैं। उष्ण, शोषमुख, व्याल, लोहित और लोहमुद्गर—ये पाँच प्रधान वक्र हैं ॥11॥

उदयात् सप्तमे ऋक्षे नवमे वाऽष्टमेऽपि वा।
यदा भौमो निवर्तेत तदुष्णं वक्रमुच्यते ॥12॥

जब मंगल का उदय सातवें, आठवें या नवें नक्षत्र पर हुआ हो और वह लौट कर गमन करने लगे तो उसे उष्ण वक्र कहते हैं ॥12॥

सुवृष्टिः प्रबला ज्ञेया विष-कीटाग्निमूर्च्छनम्।
ज्वरो जनक्षयो वाऽपि तज्जातानां च विनाशनम् ॥13॥

इस उष्ण वक्र में वर्षा अच्छी होती है। विष, कीट और अग्नि की वृद्धि होती है। ज्वर फैलता है। जनक्षय भी होता है तथा जनता को कष्ट होता है ॥13॥

एकादशे यदा भौमो द्वादशे दशमेऽपि वा।
निवर्तेत तदा वक्रं तच्छोषमुखमुच्यते ॥14॥

अपोऽन्तरिक्षान् पतितं दूषयति तदा रसान्।
ते सृजन्ति रसान् दुष्टान् नानाव्याधींस्तु भूतजान् ॥15॥

---

1. क ग मु०।

शुष्यन्ति वै तडागानि सरांसि सरितस्तथा।
बीजं न रोहते तत्र जलमध्येऽपि वापितम् ॥16॥

जब मंगल दशवें, ग्यारहवें और बारहवें नक्षत्र से लौटता है तो यह शोषमुख वक्र कहलाता है। इस प्रकार के वक्र में आकाश से जल की वर्षा होती है, रस दूषित हो जाते हैं तथा रसों के दूषित होने से प्राणियों को नाना प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। जल-वृष्टि भी उक्त प्रकार के वक्र में उत्तम नहीं होती है, जिससे तालाब सूख जाते हैं तथा जल में भी बोने पर बीज नहीं उगते हैं; अर्थात् फसल की कमी रहती है ॥14-16॥

त्रयोदशेऽपि नक्षत्रे यदि वाऽपि चतुर्दशे।
निवर्तेत यदा भौमस्तद् वक्रं व्यालमुच्यते ॥17॥

पतंगाः सविषाः कीटाः सर्पा जायन्ति तामसाः।
फलं न बध्यते पुष्पे बीजमुप्तं न रोहति ॥18॥

यदि मंगल चौदहवें अथवा तेरहवें नक्षत्र से लौट आये तो यह उसका व्यालवक्र कहलाता है। पतंग—टीड़ी, विषैले जन्तु, कीट, सर्प आदि तामस प्रकृति के जन्तु उत्पन्न होते हैं, पुष्प में फल नहीं लगता और बोया गया बीज अंकुरित नहीं होता है ॥17-18॥

यदा पञ्चदशे ऋक्षे षोडशे वा निवर्तते।
लोहितो लोहितं वक्रं कुरुते गुणजं तदा ॥19॥

देश-स्नेहाम्भसां लोपो राज्यभेदश्च जायते।
संग्रामाश्चात्र वर्तन्ते मांस-शोणित-कर्दमाः ॥20॥

जब मंगल पन्द्रहवें या सोलहवें नक्षत्र से लौटता है, तब यह लोहित वक्र कहा जाता है। यह गुण उत्पन्न करने वाला है। इस वक्र के फलस्वरूप देश, स्नेह, जल का लोप हो जाता है, राज्य में मतभेद उत्पन्न हो जाता है तथा युद्ध होते हैं, जिससे रक्त और मांस की कीचड़ हो जाती है ॥19-20॥

यदा सप्तदशे ऋक्षे पुनरष्टादशेऽपि वा।
प्रजापतिर्निवर्तेत तद् वक्रं लोहमुद्गरम् ॥21॥

निर्दया निरनुक्रोशा लोहमुद्गरसन्निभाः।
प्रणयन्ति नृपा दण्डं क्षीयन्ते येन तत्प्रजाः ॥22॥

जब मंगल सत्रहवें या अठारहवें नक्षत्र से लौटता है तो लोहमुद्गर वक्र कहलाता है। इस प्रकार के वक्र में जीवधारियों की प्रवृत्ति निर्दय और निरंकुश

हो जाती है तथा राजा लोग प्रजा को दण्डित करते हैं, जिससे प्रजा का क्षय होता है ॥21-22॥

धर्मार्थकामा हीयन्ते विलीयन्ते च दस्यवः ।
तोय-धान्यानि शुष्यन्ति रोगमारी बलीयसी ॥23॥

उक्त प्रकार के वक्र में धर्म, अर्थ और काम नष्ट हो जाते हैं और चोरों का लोप हो जाता है। जल और धान्य सूख जाते हैं तथा रोग और महामारी बढ़ती है ॥23॥

वक्रं कृत्वा यदा भौमो विलम्बेन गतिं प्रति ।
वक्रानुवक्रयोर्घोरं मरणाय समीहते[1] ॥24॥

यदि मंगल वक्र गति को प्राप्त कर विलम्बित गति हो तो यह वक्रानुवक्र कहलाता है। वक्र और अनुवक्र का फल मरणप्रद होता है ॥24॥

कृत्तिकादीनि सप्तेह वक्रेणागाकश्चरेत् ।
हत्वा वा दक्षिणस्तिष्ठेत् तत्र वक्ष्यामि यत् फलम् ॥25॥

यदि मंगल वक्र गति द्वारा कृत्तिकादि सात नक्षत्रों पर गमन करे अथवा घात कर दक्षिण की ओर स्थित रहे तो उसका फल निम्न प्रकार होता है ॥25॥

साल्वांश्च सारदण्डांश्च विप्रान् क्षत्रांश्च पीडयेत् ।
मेखलांश्चानयोर्घोरं [2]मरणाय समीहते ॥26॥

उक्त प्रकार का मंगल साल्वदेश, सारदण्ड, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीनों वर्णों को निस्सन्देह घोर कष्ट देता है ॥26॥

मघादीनि च सप्तैव यदा वक्रेण लोहितः ।
चरेद् विवर्णस्तिष्ठेद् वा तदा विन्द्यान्महद्भयम् ॥27॥

यदि मघादि सात नक्षत्रों में वक्र मंगल विचरण करे अथवा विकृत वर्ण होकर निवास करे तो महान् भय होता है ॥27॥

सौराष्ट्र-सिन्धु-सौवीरान् प्रासीलान् द्राविडांगनाम् ।
पाञ्चालान् सौरसेनान् वा बाह्लीकान् नकुलान् वधेत् ॥28॥

मेखलान् बाऽथवत्स्यांश्च पार्वतांश्च नृपैः सह ।
जिघांसति तदा भौमो ब्रह्म-क्षत्रं विरोधयेत् ॥29॥

---

1. गमाहीन मु० । 2. मन्दा पान्तिलिर्गंशयम् मु० ।

उक्त प्रकार के मंगल के फलस्वरूप सौराष्ट्र, सिन्धु, सौवीर, द्राविड़, पांचाल, सौरसेन, बाह्लीक, नकुल, मेखला, आवन्ति, पहाड़ीप्रदेशवासियों और राजाओं का विनाश होता है और ब्राह्मण-क्षत्रियों का विरोध होता है ।।28-29।।

मैत्रादीनि च सप्तैव यदा सेवेत लोहितः ।
वक्रेण [1]पापगत्या वा महतामनयं वदेत् ।।30।।

राजानश्च विरुध्यन्ते [2]चातुर्विश्यो विलुप्यते ।
कुरु-पाञ्चालदेशानां [3]मूर्च्छते तद् भयानि च ।।31।।

यदि मंगल अनुराधा आदि सात नक्षत्रों का भोग करे अथवा वक्रगति हो पापगति से विचरण करे तो अत्यन्त अनीति होती है । राजाओं में युद्ध होता है, चारों वर्ण लुप्त हो जाते हैं; कुरु-पंचाल देशों में भय और मूर्च्छा रहती है ।।30-31।।

धनिष्ठादीनि सप्तैव यदा वक्रेण लोहितः ।
सेवेत [4]ऋजुगत्या वा तदाऽपि स जुगुप्सितः ।।32।।

धनिनो जलविप्रांश्च[5] तथा चैव हयान् गजान् ।
उदीच्यान् नाविकांश्चापि पीडयेल्लोहितस्तदा ।।33।।

यदि मंगल वक्र गति से धनिष्ठा आदि सात नक्षत्रों का भोग करे अथवा ऋजुगति से गमन करे तो वह निन्दित होता है । धनिक, जलजन्तु, घोड़ा, हाथी, उत्तर के निवासी और नाविकों को पीड़ा देता है ।।32-33।।

भौमो वक्रेण युद्धे [6]वामवीथीं चरते हि [7]तः ।
तेषां भयं विजानीयाद् येषां ते प्रतिपुद्गलाः ।।34।।

जब मंगल वक्र होकर युद्ध में वाम वीथि में गमन करता है तो जनता के लिए भय होता है ।।34।।

क्रूरः क्रुद्धश्च ब्रह्मघ्नो यदि तिष्ठेद् ग्रहैः सह ।
परचक्रागमं विन्द्यात् तासु नक्षत्रवीथिषु ।।35।।

धान्यं तथा न विक्रेयं संश्रयेच्च बलीयसम् ।
चिनुयात्तुषधान्यानि दुर्गाणि च समाश्रयेत् ।।36।।

क्रूर, क्रुद्ध और ब्रह्मघाती होकर मंगल यदि अन्य ग्रहों के साथ उन नक्षत्र

1. [illegible] मु० । 2. चातुर्वर्ण्यं मु० । 3. मूर्च्छन्ति च मु० । 4. ऋजुगत्या [illegible] मु० । 5. [illegible] मु० । 6. [illegible] मु० । 7. [illegible] मु० ।

वीथियों में रहे तो परशासन का आगमन होता है। इस प्रकार की स्थिति में धान्य-अनाज नहीं बेचना चाहिए, बलवान् का आश्रय लेना तथा धान्य और भूसा का संग्रह करके दुर्ग का आश्रय लेना चाहिए ॥35-36॥

उत्तराफाल्गुनीं भौमो यदा लिखति वामतः ।
यदि वा दक्षिणं गच्छेत्[1] धान्यस्यार्घो महा भवेत् ॥37॥

जब मंगल उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र को वाम भाग से स्पर्श करता है अथवा दक्षिण की ओर गमन करता है तो धान्य—अनाज बहुत महँगा होता है ॥37॥

यदाऽनुराधां प्रविशेन्मध्ये न च लिखेत्तथा ।
मध्यमं तं विजानीयात् तदा भौमविपर्यये ॥38॥

यदि मंगल अनुराधा में मध्य से प्रवेश करे, स्पर्श न करे तो मध्यम होता है और विपर्यय प्रवेश करने पर विपरीत फल होता है ॥38॥

स्थूलः सुवर्णो द्युतिमांश्च पीतो रक्तः [1]सुमार्गो रिपुनाशनाय ।
[2]भौमः प्रसन्नः सुमनः प्रशस्तो भवेत् प्रजानां सुखदस्तदानीम् ॥39॥

स्थूल, सुवर्ण, कान्तिमान्, सुकर, पीत, रक्त, सुमार्गगामी, कान्त, प्रसन्न, समगामी, विलम्बी मंगल प्रजा को सुख-शान्ति और धन-धान्य देने वाला है ॥39॥

इति निर्ग्रन्थभद्रबाहुके निमित्ते अंगारकचारो नाम
एकोनविंशतितमोऽध्यायः ॥19॥

विवेचन—भौम का द्वादश राशियों में स्थित होने का फल—मेष राशि में मंगल स्थित हो तो सभी प्रकार के अनाज महँगे होते हैं। वर्षा अल्प होती है तथा धान्य की उत्पत्ति भी अल्प होती है। पूर्वीय प्रदेशों में वर्षा साधारणतया अच्छी होती है; उत्तरीय प्रदेशों में खण्डवृष्टि, पश्चिमीय प्रदेशों में वर्षा का अभाव या अत्यल्प तथा दक्षिणीय प्रदेशों में साधारण वृष्टि होती है। मेष राशि का मंगल जनता में भय और आतंक भी उत्पन्न करता है। वृष राशि में मंगल के स्थित होने से साधारण वृष्टि देश के सभी भागों में होती है। चना, चीनी और गुड़ का भाव कुछ महँगा होता है। महामारी के कारण मनुष्यों की मृत्यु होती है। बंगाल के लिए मंगल की उक्त स्थिति अधिक भयावह होती है। मंगल की उक्त स्थिति बर्मा, स्याम, चीन और जापान के लिए राजनीतिक दृष्टि से उथल-पुथल करने

1. सुमार्गश्च सुखी प्रजानाम् मु० । 2. क्वचित्. प्रसन्न समगो विलम्बी भौम प्रशस्तः सुखदः प्रजानाम् मु० ।

वाली होती है। नेताओं में मतभेद, फूट और कलह रहने से जनसाधारण को भी कष्ट होता है। बांग्लादेश के लिए वृष का मंगल अनिष्टप्रद होता है। खाद्यान्न का अभाव होने के साथ भयंकर बीमारियाँ भी उत्पन्न होती हैं। मिथुन राशि में मंगल के स्थित होने से अच्छी वर्षा होती है। देश के सभी राज्यों और प्रदेशों में सुभिक्ष, शान्ति, धर्माचरण, न्याय, नीति और सच्चाई का प्रसार होता है। अहिंसा और सत्य का व्यवहार बढ़ने से देश में शान्ति बढ़ती है। सभी प्रकार के अनाज समर्घ रहते हैं। सोना, चाँदी, लोहा, ताँबा, काँसा, पीतल आदि खनिज धातुओं के व्यापार में साधारण लाभ होता है। पंजाब में फसल बहुत अच्छी उपजती है। फल और तरकारियाँ भी अच्छी उपजती हैं। कर्क राशि में मंगल हो तो भी सुभिक्ष और उत्तम वर्षा होती है। उत्तर प्रदेश में काशी, कन्नौज, मथुरा में उत्तम फसल नहीं होती है, अवशेष स्थानों में उत्तम फसल उपजती है। सिंह राशि में मंगल के रहने से सभी प्रकार के धान्य महँगे होते हैं। वर्षा भी अच्छी नहीं होती। राजस्थान, गुजरात, मध्यभारत में साधारण वर्षा होती है। भाद्रपद मास में वर्षा का योग अत्यल्प रहता है। आश्विन मास वर्षा और फसल के लिए उत्तम माने जाते हैं। सिंह राशि के मंगल में क्रूर कार्य अधिक होते हैं, युद्ध और संघर्ष अधिक होते हैं। राजनीति में परिवर्तन होता है। साधारण जनता को भी कष्ट होता है। आजीविका साधनों में कमी आ जाती है। कन्या राशि के मंगल में खण्डवृष्टि, धान्य सस्ता, थोड़ी वर्षा, देश में उपद्रव, क्रूर कार्यों में प्रवृत्ति, अनीति और अत्याचार का व्यापक रूप से प्रचार होता है। बंगाल और पंजाब में नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं। महामारी का प्रकोप आसाम और बंगाल में होता है। उत्तरप्रदेश और मध्यप्रदेश के लिए कन्या राशि का मंगल अच्छा होता है। तुला राशि के मंगल में किसी बड़े नेता या व्यक्ति की मृत्यु, अस्त्र-शस्त्र की वृद्धि, मार्ग में भय, चोरों का विशेष उपद्रव, अराजकता, धान्य का भाव महँगा, रसों का भाव सस्ता और सोना-चाँदी का भाव कुछ महँगा होता है। व्यापारियों को हानि उठानी पड़ती है। वृश्चिक राशि के मंगल में साधारण वर्षा, मध्यम फसल, देश का आर्थिक विकास, ग्रामों में अनेक प्रकार की बीमारियों का प्रकोप, पहाड़ी प्रदेशों में दुष्काल, नदी के तटवर्ती प्रदेशों में सुभिक्ष, नेताओं में संगठन की भावना, विदेशों से व्यापारिक सम्बन्ध का विकास, राजनीति में उथल-पुथल एवं पूर्वीय देशों में महामारी फैलती है। धनु राशि के मंगल में समयानुकूल यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष, अनाज का भाव सस्ता, दुग्ध-घी आदि पदार्थों की कमी, चीनी-गुड़ आदि मिष्ट पदार्थों की बहुलता एवं दक्षिण के प्रदेशों में उत्पात होता है। मकर राशि के मंगल में धान्य पीड़ा, फसल में अनेक रोगों की उत्पत्ति, पशुओं को कष्ट, चारे का अभाव, व्यापारियों को अल्प लाभ, पश्चिम के व्यापारियों को हानि; गेहूँ, गुड़ और मसाले के मूल्य

में दुगुनी वृद्धि एवं उत्तर भारत के निवासियों को आर्थिक संकट का सामना करना पड़ता है। कुम्भ के मंगल में खण्डवृष्टि, मध्यम फसल, खनिज पदार्थों की उत्पत्ति अत्यल्प, देश का आर्थिक विकास, धार्मिक वातावरण की वृद्धि, जनता में सन्तोष और शान्ति रहती है। मीन राशि के मंगल में एक महीने तक समस्त भारत में सुख-शान्ति रहती है। जापान के लिए मीन राशि का मंगल अनिष्टप्रद है, वहाँ मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन, नागरिकों में असन्तोष, खाद्यान्नों की कमी एवं अर्थ-संकट भी उपस्थित होता है। जर्मन के लिए मीन राशि का मंगल शुभ होता है। रूस और अमेरिका में परस्पर महानुभाव इसी मंगल में होता है। मीन राशि का मंगल धान्यों की उत्पत्ति के लिए उत्तम होता है। खनिज पदार्थों की कमी इसी मंगल में होती है। कोयला का भाव ऊँचा उठ जाता है। पत्थर, सीमेण्ट, चूना आदि के मूल्य में भी वृद्धि होती है। मीन राशि का मंगल जनता के स्वास्थ्य के लिए उत्तम नहीं होता।

नक्षत्रों के अनुसार मंगल का फल— अश्विनी नक्षत्र में मंगल हो तो क्षति, पीड़ा, तृण और अनाज का भाव तेज होता है। समस्त भारत में एक महीने के लिए अशान्ति उत्पन्न हो जाती है। चौपायों में रोग उत्पन्न होता है। देश में हलचल होती रहती है। सभी लोगों को किसी-न-किसी प्रकार का कष्ट होता है। भरणी नक्षत्र में मंगल हो तो ब्राह्मणों को पीड़ा, गायों में अनेक प्रकार के कष्ट, नगरों में महामारी का प्रकोप, अन्न का भाव तेज और रस पदार्थों का भाव सस्ता होता है। मवेशी के मूल्य में वृद्धि हो जाती है तथा चारे के अभाव में मवेशी को कष्ट भी होता है। कृत्तिका नक्षत्र में मंगल के होने से तपस्वियों को पीड़ा, देश में उपद्रव, अराजकता, चोरियों की वृद्धि, अनैतिकता एवं भ्रष्टाचार का प्रसार होता है। रोहिणी नक्षत्र में मंगल के रहने से वृक्ष और मवेशी को कष्ट, कपास और सूत के व्यापार में लाभ, धान्य का भाव सस्ता होता है। मृगशिर नक्षत्र में मंगल हो तो कपास का नाश, शेष वस्तुओं की अच्छी उत्पत्ति होती है। इस नक्षत्र पर मंगल के रहने से देश का आर्थिक विकास होता है। उन्नति के लिए किये गये सभी प्रयास सफल होते हैं। तिल, तिलहन की कमी रहती है तथा भैंसों के लिए यह मंगल विनाशकारक है। आर्द्रा नक्षत्र में मंगल के रहने से जल की वर्षा, सुभिक्ष और धान्य का भाव सस्ता होता है। पुनर्वसु नक्षत्र में मंगल का रहना देश के लिए मध्यम फलदायक है। बुद्धिजीवियों के लिए यह मंगल उत्तम होता है। शारीरिक श्रम करनेवालों को मध्यम रहता है। सेना में प्रविष्ट हुए व्यक्तियों के लिए अनिष्टकर होता है। पुष्य नक्षत्र में स्थित मंगल से चोरभय, शस्त्रभय, अग्निभय, राज्य की शक्ति का ह्रास, रोगों का विकास, धान्य का अभाव, मधुर पदार्थों की कमी एवं चोर-गुण्डों का उत्पात अधिक होने लगता है। आश्लेषा नक्षत्र में मंगल के स्थित रहने से शस्त्रघात, धान्य का नाश, वर्षा का अभाव, विषैले जन्तुओं का

प्रकोप, नाना प्रकार की व्याधियों का विकास एवं हर तरह से जनता को कष्ट होता है। मघा में मंगल के रहने से तिल, उड़द, मूँग का विनाश, मवेशी को कष्ट, जनता में असन्तोष, रोग की वृद्धि, वर्षा की कमी, मोटे अनाजों की अच्छी उत्पत्ति तथा देश के पूर्वीय प्रदेशों में सुभिक्ष होता है। पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रों में मंगल के रहने से खण्डवृष्टि, प्रजा को पीड़ा, तेल, घी के मूल्यों में वृद्धि, थोड़ा जल एवं मवेशी के लिए कष्टप्रद होता है। हस्त नक्षत्र में तृणाभाव होने से चारे की कमी बराबर बनी रह जाती है, जिससे मवेशी को कष्ट होता है। चित्रा में मंगल हो तो रोग और पीड़ा, गेहूँ का भाव तेज; चना, जौ और ज्वार का भाव कुछ सस्ता होता है। धर्मात्मा व्यक्तियों को सम्मान और शक्ति की प्राप्ति होती है। विश्व में नाना प्रकार के संकट बढ़ते हैं। स्वाति नक्षत्र में मंगल के रहने से अनावृष्टि, विशाखा में कपास और गेहूँ की उत्पत्ति कम तथा इन वस्तुओं का भाव महँगा होता है। अनुराधा में सुभिक्ष और पशुओं को पीड़ा, ज्येष्ठा में मंगल हो तो थोड़ा जल और रोगों की वृद्धि; मूल नक्षत्र में मंगल हो तो ब्राह्मण और क्षत्रियों को पीड़ा, तृण और धान्य का भाव तेज, पूर्वाषाढ़ा या उत्तराषाढ़ा में मंगल हो तो अच्छी वर्षा, पृथ्वी धन-धान्य से परिपूर्ण, दूध की वृद्धि, मधुर पदार्थों की उन्नति; श्रवण में धान्य की साधारण उत्पत्ति, जल की वर्षा, उड़द, मूंग आदि दाल वाले अनाजों की कमी तथा इनके भाव में तेजी; धनिष्ठा में मंगल के होने से देश की खूब समृद्धि, सभी पदार्थों का भाव सस्ता, देश का आर्थिक विकास, धन-जन की वृद्धि, पूर्व और पश्चिम के सभी राज्यों में सुभिक्ष, उत्तर के राज्यों में एक महीने के लिए अर्थसंकट, दक्षिण में सुख-शान्ति, कला-कौशल का विकास, मवेशियों की वृद्धि और सभी प्रकार से जनता को सुख; शतभिषा में, मंगल के होने से कीट, पतंग, टीडी, मूषक आदि का अधिक प्रकोप, धान्य की अच्छी उत्पत्ति; पूर्वाभाद्रपद में मंगल के होने से तिल, वस्त्र, सुपारी और नारियल के भाव तेज होते हैं। दक्षिण भारत में अनाज का भाव महँगा होता है। उत्तराभाद्रपद में मंगल के होने से सुभिक्ष, वर्षा की कमी और नाना प्रकार के देशवासियों को कष्ट एवं रेवती नक्षत्र में मंगल के होने से धान्य की अच्छी उत्पत्ति, सुख, सुभिक्ष, यथेष्ट वर्षा, ऊन और कपास की अच्छी उपज होती है। रेवती नक्षत्र का मंगल काश्मीर, हिमाचल एवं अन्य पहाड़ी प्रदेशों के निवासियों के लिए उत्तम होता है।

मंगल का किसी भी राशि पर वक्री होना तथा शनि और मंगल का एक ही राशि पर वक्री होना अत्यन्त अशुभकारक होता है। जिस राशि पर उक्त ग्रह वक्री होते हैं उस राशि वाले पदार्थों का भाव महँगा होता है तथा उन वस्तुओं की कमी भी हो जाती है।

विंशतितमोऽध्यायः

राहुचारं प्रवक्ष्यामि क्षेमाय च सुखाय च।
द्वादशाङ्गविद्भिः प्रोक्तं निर्ग्रन्थैस्तत्त्ववेदिभिः ॥1॥

द्वादशांग के वेत्ता निर्ग्रन्थ मुनियों के द्वारा प्रतिपादित राहुचार को कल्याण और सुख के लिए निरूपण करता हूँ ॥1॥

श्वेतो रक्तश्च पीतश्च विवर्णः कृष्ण एव च।
ब्राह्मण-क्षत्र-वैश्यानां द्विजाति-शूद्रयोर्मतः ॥2॥

राहु का श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के लिए शुभाशुभ निरूपक माने गये हैं ॥2॥

षण्मासान् प्रकृतिर्ज्ञेया ग्रहणं वार्षिकं भयम्।
त्रयोदशानां मासानां पुररोधं समादिशेत् ॥3॥

चतुर्दशानां मासानां विन्द्याद् वाहनजं भयम्।
अथ पञ्चदशे मासे बालानां भयमादिशेत् ॥4॥

षोडशानां तु मासानां महामन्त्रिभयं वदेत्।
अष्टादशानां मासानां विन्द्याद् राज्ञस्ततो भयम् ॥5॥

एकोनविंशकं पर्वविंशं कृत्वा नृपं वधेत्।
अतः परं च यत् सर्वं विन्द्यात् तत्र कलिं भुवि ॥6॥

राहु की प्रकृति छः महीने तक, ग्रहण एक वर्ष तक भय उत्पन्न करता है। विकृत ग्रहण से तेरह महीने तक नगर का अवरोध होता है, चौदह महीने तक वाहन का भय और पन्द्रह महीने तक स्त्रियों को भय होता है। सोलह महीने तक महामन्त्रियों को भय, अठारह महीने तक राजाओं को भय होता है। उन्नीस महीने या बीस महीने तक राजाओं के वध की संभावना रहती है। इससे अधिक समय तक फल प्राप्त हो तो पृथ्वी पर कलियुग का ही प्रभाव जानना चाहिए ॥3-6॥

पञ्चसंवत्सरं घोरं चन्द्रस्य ग्रहणं परम्।
विग्रहं तु परं विन्द्यात् सूर्यद्वादशवार्षिकम् ॥7॥

चन्द्रग्रहण के पश्चात् पाँच वर्ष संकट के और सूर्यग्रहण के बाद बारह वर्ष संकट के होते हैं ॥7॥

यदा प्रतिपदि चन्द्रः प्रकृत्या विकृतो भवेत्।
अथ भिन्नो विवर्णो वा तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥8॥

जब प्रतिपदा तिथि को चन्द्रमा प्रकृति से विकृत हो और भिन्न वर्ण का हो तो ग्रहागम जानना चाहिए ॥8॥

लिखेद् रश्मिभिर्भूयो वा यदाऽऽच्छादयेत भास्कर:।
पूर्वकाले च सन्ध्यायां ज्ञेयो राहोस्तदाऽऽगम: ॥9॥

यदि सूर्य किरणों के द्वारा स्पर्श करे अथवा पूर्वकाल की सन्ध्या में सूर्य के द्वारा आच्छादन हो तो राहु का आगम समझना चाहिए ॥9॥

पशु-व्याल-पिशाचानां सर्वतोऽपरदक्षिणम्।
तुल्यान्यभ्राणि वातोल्के यदा राहोस्तदाऽऽगम: ॥10॥

राहु के आगमन होने पर पशु, सर्प, पिशाच आदि दक्षिण से चारों ओर दिखलाई पड़ते हैं तथा समान मेघ, वायु और उल्कापात भी होता है ॥10॥

सन्ध्यायां तु यदा शीतं अपरेसासनं तत:।
सूर्य: पाण्डुश्चला भूमिस्तदा ज्ञेयो ग्रहागम: ॥11॥

जब सन्ध्या में शीत हो, अन्य समय में उष्णता हो, सूर्य पाण्डुवर्ण हो, भूमि चल हो तो ग्रहागम समझना चाहिए ॥11॥

सरांसि सरितो वृक्षा वल्ल्यो गुल्म-लतावनम्।
[1]सौम्यभ्रांश्चवले वृक्षा राहोर्ज्ञेयस्तदाऽऽगम: ॥12॥

तालाब, नदी, वृक्ष, लता, वन, सौम्य कान्तिवाले हों और वृक्ष चंचल हों तो राहु का आगम समझना चाहिए ॥12॥

छादयेच्चन्द्र-सूर्यो च यदा मेघा सिताम्बरा[2]।
सन्ध्यायां च तदा ज्ञेयं राहोरागमनं ध्रुवम् ॥13॥

जब सन्ध्याकाल में आकाश में मेघ चन्द्र और सूर्य को आच्छादित कर दें, तब राहु का आगमन समझना चाहिए ॥13॥

एतान्येव तु लिङ्गानि भयं कुर्युरपर्वणि।
वर्षासु वर्षदानि स्युर्भद्रबाहुवचो यथा ॥14॥

उक्त चिह्न अपर्व—पूर्णिमा और अमावास्या से भिन्न काल में भय उत्पन्न करते हैं। वर्षा में ऋतु वर्षा करनेवाले होते हैं, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥14॥

1. सौम्याभ्राश्चवले मु०। 2. सिताम्बरे मु०।

शुक्लपक्षे द्वितीयायां सोमशृंगं [1]तदा प्रभम्।
स्फुटिताग्रं द्विधा वाऽपि बिम्बाद् राहोस्तदाऽऽगमम् ॥15॥

जब शुक्ल पक्ष की द्वितीया में चन्द्रशृंग प्रभावान् हो अथवा उस शृंग के टूटकर दो हिस्से दिखलाई पड़ते हों, तब राहु का आगमन समझना चाहिए ॥15॥

चन्द्रस्य चोत्तरा कोटी [2]द्वे शृंगे दृश्यते यदा।
धूम्रो विवर्णो ज्वलितस्तदा राहोर्ध्रुवागमः ॥16॥

जब चन्द्रमा की उत्तर कोटि में दो शृंग दिखलाई पड़ें और चन्द्र धूम्र, विकृत वर्ण और ज्वलित दिखलाई पड़े, उस समय निश्चय से राहु का आगम जानना चाहिए ॥16॥

उदयास्तमने भूयो यदा यश्चोदयो रवौ।
इन्दौ वा यदि दृश्येत तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥17॥

जब उदय या अस्तकाल में पुनः-पुनः सूर्य और चन्द्रमा दिखलाई पड़ें तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥17॥

कबन्धा-परिघा मेघा धूम्र-रक्तनभ-ध्वजाः।
उद्गच्छमाने दृश्यन्ते सूर्ये राहोस्तदाऽऽगमः ॥18॥

जब मेघ कबन्ध, परिघ के आकार के हों तथा सूर्य में ध्वजा, धूम्र और रक्त वर्ण की उच्छिद्यमान दिखलाई पड़े तब राहु का आगमन समझना चाहिए ॥18॥

[3]मार्गवान् महिषाकारः शकटस्थो यदा शशी।
उद्गच्छन् दृश्यतेऽष्टम्यां तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥19॥

जब अष्टमी को चन्द्रमा मार्गी, महिषाकार, रोहिणी नक्षत्र में फटा-टूटा-सा दिखलाई पड़े तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥19॥

सिंह-मेषोष्ट्र-संकाशः परिवेषो यदा शशी।
अष्टम्यां शुक्लपक्षस्य तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥20॥

जब शुक्ल पक्ष की अष्टमी को चन्द्रमा का परिवेष सिंह, मेष और ऊँट के समान मालूम पड़े, तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥20॥

श्वेतके सरसङ्काशे रक्त-पीतोऽष्टमो यदा।
यदा चन्द्रः प्रदृश्येत तदा ब्रूयाद् ग्रहागमः ॥21॥

---

1. यदा शुभम् मु०। 2. द्विशृंगं मु०। 3. कबन्धा मु०।

यदि अष्टमी में चन्द्रमा श्वेतवर्ण, केशररंग या रक्त-पीत दिखलाई पड़े तो ग्रहागम कहना चाहिए ॥21॥

उत्तरतो दिश: श्वेत: पूर्वतो रक्तकेसर: ।
दक्षिणतोऽथ पीताभ: प्रतीच्यां कृष्णकेसर: ॥22॥

तदा गच्छन् गृहीतोऽपि क्षिप्रं चन्द्र: प्रमुच्यते ।
[1]परिवेषो दिनं चन्द्रे विमर्दत विमुञ्चति ॥23॥

जब दिशा उत्तर में श्वेत, पूर्व में रक्त-केसर, दक्षिण में पीतवर्ण और पश्चिम में कृष्ण-नील हो तो राहु के द्वारा चन्द्र का ग्रहण किये जाने पर भी शीघ्र ही छोड़ दिया जाता है। चन्द्रमा में दिन का परिवेष होने पर राहु द्वारा विमर्दित होने पर भी चन्द्रमा शीघ्र ही छोड़ा जाता है ॥22-23॥

द्वितीयायां यदा चन्द्र: श्वेतवर्ण: प्रकाशते ।
उद्गच्छमान: सोमो वा तदा गृह्येत राहुणा ॥24॥

यदि चन्द्रमा द्वितीया में श्वेतवर्ण का शोभित हो अथवा उखड़ता हुआ चन्द्रमा हो तो वह राहु के द्वारा ग्रहण किया जाता है ॥24॥

तृतीयायां यदा सोमो विवर्णो दृश्यते यदि ।
पूर्वरात्रे तदा राहु: पौर्णमास्यामुपक्रमेत् ॥25॥

यदि तृतीया में चन्द्रमा विवर्ण—विकृतवर्ण दिखलाई पड़े तो पूर्णमासी की पूर्व रात्रि में राहु द्वारा ग्रस्त होता है अर्थात् ग्रहण होता है ॥25॥

अष्टम्यां तु यदा चन्द्रो दृश्यते रुधिरप्रभ: ।
पौर्णमास्यां तदा राहुरर्धरात्रमुपक्रमेत् ॥26॥

यदि अष्टमी को चन्द्रमा रुधिर के समान लाल प्रभा का दिखलाई पड़े तो पूर्णमासी की अर्धरात्रि में राहु द्वारा ग्रस्त होना है—ग्राह्य होता है ॥26॥

नवम्यां तु यदा चन्द्र: परिवेश्य तु सुप्रभ: ।
अर्धरात्रमुपक्रम्य तदा राहुरुपक्रमेत् ॥27॥

यदि नवमी तिथि को सुप्रभा वाले चन्द्रमा का परिवेष दिखलाई पड़े तो पूर्णमासी में अर्धरात्रि के अनन्तर राहु द्वारा चन्द्र ग्रस्त होता है अर्थात् अर्धरात्रि के पश्चात् ग्राह्य होता है ॥27॥

---

1. परिवेषो मु० ।

कृष्णप्रभो यदा सोमो दशम्यां परिविष्यते।
पश्चाद् रात्रं तदा राहुः सोमं गृह्णात्यसंशयः ॥28॥

यदि दशमी तिथि को कृष्णवर्ण की प्रभा वाले चन्द्रमा का परिवेष दिखलाई पड़े तो पूर्णमासी को चन्द्रमा राहु द्वारा निस्सन्देह आधीरात के पश्चात् ग्रहण किया जाता है ॥28॥

अष्टम्यां तु यदा सोमं श्वेताभ्रं परिवेषते।
तदा परिघं वै राहुर्विमुञ्चति न संशयः ॥29॥

अष्टमी तिथि को श्वेतवर्ण की आभा का चन्द्रमा का परिवेष दिखलाई पड़े तो राहु परिघ को छोड़ता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥29॥

कनकाभो यदाऽष्टम्यां परिवेषेण चन्द्रमाः।
अर्धग्रासं तदा कृत्वा राहुरुद्गिरते पुनः ॥30॥

यदि अष्टमी तिथि को स्वर्ण के समान कान्ति वाले चन्द्रमा का परिवेष दिखलाई पड़े तो पूर्णमासी को राहु उसका अर्धग्रास करके छोड़ देता है ॥30॥

परिवेषोदयोऽष्टम्यां चन्द्रमा रुधिरप्रभः।
सर्वग्रासं तदा कृत्वा [1]राहुस्तञ्च विमुञ्चति ॥31॥

अष्टमी तिथि को परिवेष में ही चन्द्रमा का उदय हो और चन्द्रमा रुधिर के समान कान्तिवाला हो तो राहु पूर्णमासी तिथि को चन्द्रमा का सर्वग्रास करके छोड़ता है ॥31॥

[2]कृष्णपीता यदा कोटिर्दक्षिणा स्याद्ग्रहः सितः।
पीतो यदाऽष्टम्यां कोटी तदा श्वेतं ग्रहं वदेत् ॥32॥

जब अष्टमी तिथि को चन्द्र की दक्षिणकोटि कृष्ण-पीत होती है तो ग्रहण श्वेत होता है तथा पीली कोटि—शृंग होने पर भी श्वेत ग्रहण होता है ॥32॥

दक्षिणा मेचकाभा तु कपोतग्रहमादिशेत्।
कपोतमेचकाभा तु कोटी ग्रहमुपानयेत् ॥33॥

यदि चन्द्रमा की दक्षिण कोटि—दक्षिण शृंग मेचक आभा वाला हो तो कपोत रंग का ग्रहण होता है और कपोत-मेचक आभा होने पर ग्रहण का भी वैसा रंग होता है ॥33॥

---

1. ...चन्द्र मु० । 2. ... मु० ।

[1]पीतोत्तरा यदा कोटिर्दक्षिणः रुधिरप्रभः ।
कपोतग्रहणं विन्द्यात् पूर्वं पश्चात् सितप्रभम् ॥34॥

यदि अष्टमी तिथि को चन्द्रमा की उत्तर की कोटि— किनारा लाल हो और दक्षिण का किनारा रुधिर जैसा हो तो कपोत रंग के ग्रहण की सूचना समझनी चाहिए तथा अन्त में श्वेत प्रभा समझनी चाहिए ॥34॥

पीतोत्तरा यदा कोटिर्दक्षिणा रुधिरप्रभा ।
कपोतग्रहणं विन्द्याद् ग्रहं पश्चात् सितप्रभम् ॥35॥

यदि चन्द्रमा का ऊपरी किनारा पीला और दक्षिणी रुधिर के समान कान्ति वाला हो तो कपोत रंग का ग्रहण समझना चाहिए तथा अन्तिम समय में श्वेत प्रभा समझनी चाहिए ॥35॥

यतोऽभ्रस्तनितं विन्द्यात् मारुतं करकाशनी ।
रुतं वा श्रूयते किञ्चित् तदा विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥36॥

जब बादल गर्जना करे, वायु, ओले और बिजली गिरे तथा किसी प्रकार का शब्द सुनाई पड़े तो ग्रहागम होता है ॥36॥

मन्दक्षीरा यदा वृक्षाः सर्वदिक् कलुषायते[2] ।
क्रीडते च [3]यदा बालस्ततो विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥37॥

जब वृक्ष अल्प क्षीर वाले हों, सभी दिशाएँ कलुषित दिखलाई पड़ें, और इस समय में बालक खेलते हों तो उस समय ग्रहागम जानना चाहिए। यहाँ सर्वत्र ग्रह से तात्पर्य 'ग्रहण' से है ॥37॥

ऊर्ध्वं प्रस्पन्दते चन्द्रश्चित्रः संपरिवेष्यते ।
कुरुते मण्डलं स्पष्टस्तदा विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥38॥

यदि चन्द्रमा ऊपर की ओर स्पन्दित होता हो, विचित्र प्रकार के परिवेष से वेष्टित, स्पष्ट मंडलाकार हो तो ग्रहण का आगमन समझना चाहिए ॥38॥

यतो विषयघातश्च[4] यतश्च पशु-पक्षिणः ।
तिष्ठन्ति मण्डलायन्ते ततो विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥39॥

यदि देश का आघात हो और पशु-पक्षी मण्डलाकार होकर स्थित हों तो ग्रहण का आगमन समझना चाहिए ॥39॥

1. रक्तोत्तरा सितकोटिर्दक्षिणा स्याद् रक्तप्रभा । कपोत ग्रहणं विन्द्यात् पूर्वं पश्चात् सितप्रभम् ॥ मु० । 2. कलुषाः भवेत् मु० । 3. यदा मु० । 4. [illegible] मु० ।

पाण्डुर्वा ह्यवलीढो वा चन्द्रमा यदि दृश्यते।
[1]व्याधितो हीनरश्मिश्च यदा तत्त्वे निवेशनम् ॥40॥

यदि चन्द्रमा पाण्डु या द्विगुणित निगला हुआ दिखलाई पड़े, व्यथित और हीन किरण मालूम पड़े तो चन्द्रग्रहण होता है ॥40॥

[2]ततः प्रबाध्यते वेधस्ततो विन्द्याद् ग्रहागमम्।
यतो वा मुच्यते वेधस्ततश्चन्द्रो विमुच्यते ॥41॥

जिस परिवेष से चन्द्रमा प्रवाहित हो, उससे ग्रहण होता है और जिससे चन्द्रमा छोड़ा जाय उससे चन्द्रमा मुक्त होता है ॥41॥

गृहीतो विध्यते चन्द्रो वेगमावेव विध्यते।
यदा तदा विजानीयात् षण्मासाद् ग्रहणं पुनः ॥42॥

अब चन्द्रग्रहण के समय चन्द्रमा अपना फटा-टूटा वेग प्रकट करे तो छः महीने पश्चात् पुनः चन्द्रग्रहण समझना चाहिए ॥42॥

[3]प्रत्युद्गच्छति आदित्यं यदा गृह्येत चन्द्रमाः।
भयं तदा विजानीयात् ब्राह्मणानां [4]विशेषतः ॥43॥

सूर्य की ओर जाते हुए चन्द्रमा का ग्रहण हो तो ब्राह्मणों के लिए विशेष भय समझना चाहिए ॥43॥

[5]प्रातरासेविते चन्द्रो दृश्यते कनकप्रभः।
भयं तदा विजानीयादमात्यानां विशेषतः ॥44॥

जब प्रातःकाल में चन्द्रमा स्वर्ण की आभा वाला मालूम हो तो भय होता है और विशेष रूप से अमात्यों के लिए भय—आतंक होता है ॥44॥

मध्याह्ने तु यदा चन्द्रो गृह्यते कनकप्रभः।
क्षत्रियाणां नृपाणां च तदा भयमुपस्थितम् ॥45॥

मध्याह्न में यदि चन्द्रमा कनकप्रभ मालूम हो तो क्षत्रिय और राजाओं के लिए भय होता है ॥45॥

[6]यदा मध्यनिशायां तु राहुणा गृह्यते शशी।
भयं तदा विजानीयात् वैश्यानां समुपस्थितम् ॥46॥

1. व्याधितो मु०। 2. यतो मु०। 3. प्रत्यग्गच्छन् मु०। 4. उपस्थितम् मु०। 5. प्रातराशे यदा सोमो गृह्यते राहुणाऽऽवृत मु०। 6. आवृते यदि मध्याह्ने मु०।

जब मध्य रात्रि में राहु चन्द्रमा को ग्रस्त करता है तब वैश्यों के लिए भय होता है ॥46॥

नीचावलम्बी सोमस्तु यदा गृह्येत राहुणा ।
सूर्प्पाकारं तदाऽऽनर्त्तं मरुकच्छं च पीडयेत् ॥47॥

नीच राशिस्थ चन्द्रमा—वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमा को जब राहु ग्रस्त करता है तो सूर्पाकार, आनर्त्त, मरु और कच्छ देशों को पीड़ित करता है ॥47॥

अल्पचन्द्रं च द्वीपाश्च म्लेच्छा: पूर्वापरा द्विजा: ।
दीक्षिता: क्षत्रियामात्या: शूद्रा: पीडामवाप्नुयु: ॥48॥

यदि अल्पचन्द्र का ग्रहण हो तो म्लेच्छ आदि द्वीप, पूर्व-पश्चिम निवासी द्विज, मुनि-साधु, क्षत्रिय, अमात्य और शूद्र पीड़ा को प्राप्त होते हैं ॥48॥

यतो राहुर्ग्रसेच्चन्द्रं ततो यात्रां निवेशयेत् ।
दूते निवर्तते यात्रा यतो तस्मात्तद् भयम् ॥49॥

जब राहु द्वारा चन्द्रग्रहण होता है तो यात्रा में रुकावट समझना चाहिए। चन्द्रग्रहण के दिन यात्रा करने वाला व्यक्ति यों ही वापस लौट आता है, अत: यात्रा में भय है ॥49॥

गृहणीयादेकमासेन चन्द्र-सूर्यौ यदा तदा ।
रुधिरवर्णसंसक्ता सङ्ग्रामे जायते मही ॥50॥

जब एक ही महीने में चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहण दोनों हों तो पृथ्वी पर युद्ध होता है और पृथ्वी रक्तरंजित हो जाती है ॥50॥

चौराश्च यायिनो म्लेच्छा घ्नन्ति साधूननायकान् ।
विरुध्यन्ते गणाश्चापि नृपाश्च विषये चरा: ॥51॥

उक्त दोनों ग्रहणों के होने पर वे चोर, यायी, म्लेच्छ, नेतृत्वविहीन साधुओं का घात करते हैं तथा देश-विशेष में दूत, राजा और गणों को रोक लिया जाता है ॥51॥

[1]यतोत्साहं तु हत्वा तु राजानं निष्क्रमते शशी ।
तदा क्षेमं सुभिक्षञ्च मन्दरोगांश्च निर्दिशेत् ॥52॥

चन्द्रमा पहले राहु को परास्त कर निकल आये तो क्षेम, सुभिक्ष तथा रोगों की मन्दता होती है ॥52॥

---

1. यह श्लोक मुद्रित प्रति में नहीं है ।

पूर्वं दिशि तु यदा हत्वा राहुः निष्क्रमते शशी।
रूक्षो वा हीनरश्मिर्वा पूर्वो राजा विनश्यति ॥53॥

जब राहु पूर्व दिशा में चन्द्रमा का भेदन कर निकले और चन्द्रमा रूक्ष तथा हीन किरण मालूम पड़े तो पूर्व देश के राजा का विनाश होता है ॥53॥

दक्षिणाभेदने गर्भे दाक्षिणात्यांश्च पीडयेत्।
उत्तराभेदने चैव नाविकांश्च जिघांसति ॥54॥

दक्षिण दिशा में गर्भ के भेदन होने से दाक्षिणात्य –दक्षिण निवासियों को कष्ट और उत्तर गर्भ का भेदन होने से नाविकों का घात होता है ॥54॥

निश्चलः सुप्रभः कान्तो यदा निर्याति चन्द्रमाः।
राज्ञां विजय-लाभाय तदा ज्ञेयः शिवशंकरः ॥55॥

निश्चल और सुन्दर कान्ति वाला चन्द्रमा जब राहुग्रहण से निकलता है तो राजाओं को जयलाभ और राष्ट्र में सर्वशान्ति होती है ॥55॥

एतान्येव तु लिंगानि चन्द्रे[1] ज्ञेयानि धीमता।
कृष्णपक्षे यदा चन्द्रः शुभो वा यदि वाऽशुभः ॥56॥

उपर्युक्त चिह्नों को चन्द्रमा में अवगत कर बुद्धिमान् व्यक्तियों को शुभाशुभ जानना चाहिए। जब चन्द्रमा कृष्ण पक्ष में शुभ या अशुभ होता है तो उसके अनुसार फल घटित होता है ॥56॥

उत्पाताश्च निमित्तानि शकुनं लक्षणानि च।
पर्वकाले यदा सन्ति तदा राहोर्ध्रुवागमः ॥57॥

जब पूर्व काल में उत्पात, निमित्त, शकुन और लक्षण घटित होते हैं, तब निश्चय से राहु का आगमन — राहु द्वारा ग्रहण होता है ॥57॥

रक्तो राहुः शशी सूर्यो हन्युः क्षत्रान् सितो द्विजान्।
पीतो वैश्यान् कृष्णः[2] शूद्रान् द्विवर्णास्तु जिघांसति ॥58॥

जब लाल रंग के राहु, सूर्य और चन्द्रमा हों तो क्षत्रियों का हनन, श्वेत वर्ण के होने पर द्विजों का हनन, पीत वर्ण के होने पर वैश्यों का हनन और कृष्ण वर्ण के होने पर शूद्र और वर्णसंकरों का हनन होता है ॥58॥

चन्द्रमाः पीडितो हन्ति नक्षत्रं यस्य यद्यतः।
रूक्षः पापनिमित्तश्च विकृतश्च विनिर्गतः ॥59॥

---

1. पूर्वे मु०। 2. श्यामः मु०।

रूक्ष, पाप निमित्तक, विकृत और पीड़ित चन्द्रमा निकल कर जिस नक्षत्र का घात करता है, उस नक्षत्र वालों का अशुभ होता है ॥59॥

प्रसन्नः साधुकान्तश्च दृश्यते सुप्रभः शशी।
यदा तदा नृपान् हन्ति प्रजां पीतः सुवर्चसा ॥60॥

जब ग्रहण से छूटा हुआ चद्रमा प्रसन्न, सुन्दर कान्ति और सुप्रभा वाला दिखलाई पड़े तो राजाओं का घात करता है। पीत और तेजस्वी दिखलाई पड़े तो प्रजा का घात करता है ॥60॥

राज्ञो राहुः प्रवासे यानि लिंगान्यस्य पर्वणि।
यदा गच्छेत् प्रशस्तो वा राजराष्ट्रविनाशनः ॥61॥

पर्व काल में—पूर्णिमा के अस्त होने पर राहु के जो चिह्न प्रकट हों, उनमें वह प्रशस्त दिखलाई पड़े तो राजा और राष्ट्र का विनाश होता है ॥61॥

यतो राहुप्रमथने ततो यात्रा न सिध्यति।
प्रशस्ताः शकुना यत्र सुनिमित्ता सुयोधितः[1] ॥62॥

शुभ शकुन और श्रेष्ठ निमित्तों के होने पर भी राहु के प्रमथन—अस्थिर अवस्था में रहने पर यात्रा सफल नहीं होती है ॥62॥

राहुश्च चन्द्रश्च तथैव सूर्यो यदा सवर्णा न परस्परघ्नाः।
काले च राहुर्भजते रवीन्दू तदा सुभिक्षं विजयश्च राज्ञः ॥63॥

राहु, सूर्य और चन्द्र जब सवर्ण हों और परस्पर घात न करें तथा समय पर सूर्य और चन्द्रमा का राहु योग करे तो राजाओं की विजय होती है और राष्ट्र में सुभिक्ष होता है ॥63॥

इति **नैर्ग्रन्थे** भद्रबाहुके निमित्ते संहिते राहुचारो **नाम विंशतितमोऽध्यायः** ॥20॥

विवेचन—**द्वादश राशियों के भ्रमणानुसार राहुफल**—जिस वर्ष राहु मीन राशि में रहता है, उस वर्ष बिजली का भय रहता है। सैकड़ों व्यक्तियों की मृत्यु बिजली के गिरने से होती है। अन्न की कमी रहने से प्रजा को कष्ट होता है। अन्न में दूना-तिगुना लाभ होता है। एक वर्ष तक दुर्भिक्ष रहता है, तेरहवें महीने में सुभिक्ष होता है। देश में गृहकलह तथा प्रत्येक परिवार में अशान्ति बनी रहती है। यह मीन राशि का राहु बंगाल, उड़ीसा, उत्तरी बिहार, आसाम को छोड़

1. सुयोजिता: मु०।

अवशेष सभी प्रदेशों के लिए दुर्भिक्षकारक होता है। अन्न की कमी अधिक रहती है, जिससे प्रजा को भुखमरी का कष्ट तो सहन करना ही पड़ता है साथ ही आपस में संघर्ष और लूट-पाट होने के कारण अशान्ति रहती है। मीन राशि के राहु के साथ शनि भी हो तो निश्चयतः भारत को दुर्भिक्ष का सामना करना पड़ता है। दाने-दाने के लिए मुहताज होना पड़ता है। जो अन्न का संग्रह करके रखते हैं, उन्हें भी कष्ट उठाना पड़ता है। कुम्भ राशि में राहु हो तो सन, सूत, कपास, जूट आदि के संचय में लाभ रहता है। राहु के साथ मंगल हो तो फिर जूट के व्यापार में तिगुना-चौगुना लाभ होता है। व्यापारिक सम्बन्ध भी सभी लोगों के बढ़ते जाते हैं। कपास, रूई, सूत, वस्त्र, जूट, सन, पाटादि से बनी वस्तुओं के मूल्य में महँगी आती है। कुम्भ राशि में राहु और मंगल के आरम्भ होते ही छः महीनों तक उक्त वस्तुओं का संग्रह करना चाहिए। सातवें महीने में बेच देने से लाभ रहता है।

कुम्भ राशि के राहु में वर्षा साधारण होती है, फसल भी मध्यम होती है तथा धान्य के व्यापार में भी लाभ होता है। खाद्यान्नों की कमी राजस्थान, बम्बई, गुजरात, मध्य प्रदेश एवं उड़ीसा में होती है। बंगाल में भी खाद्यान्नों की कमी आती है, पर दुष्काल की स्थिति नहीं आने पाती। पंजाब, बिहार और मध्य भारत में उत्तम फसल उपजती है। भारत में कुम्भ राशि का राहु खण्डवृष्टि भी करता है। शनि के साथ राहु कुम्भ राशि में स्थिति रहे तो प्रजा के लिए अत्यन्त-कष्ट कारक हो जाता है। दुर्भिक्ष के साथ खून-खराबियाँ भी कराता है। यह संघर्ष और युद्ध का कारण होता है। विदेशों से सम्पर्क भी बिगड़ जाता है, सन्धियों का महत्त्व समाप्त हो जाता है। जापान और बर्मा में खाद्यान्न की कमी नहीं रहती है। चीन के साथ उक्त राहु की स्थिति में भारत का मैत्री सम्बन्ध दृढ़ होता है। मकर राशि में राहु के रहने से सूत, कपास, रूई, वस्त्र, जूट, सन, पाट आदि का संग्रह तीन महीनों तक करना चाहिए। चौथे महीने में उक्त वस्तुओं के बेचने से तिगुना लाभ होता है। ऊनी, रेशमी और सूती वस्त्रों में पूरा लाभ होता है। मकर का राहु गुड़ में हानि कराता है तथा चीनी और चीनी से निर्मित वस्तुओं के व्यापार में भी पर्याप्त हानि होती है। खाद्यान्न की स्थिति कुछ सुधर जाती है, पर कुम्भ और मकर राशि के राहु में खाद्यान्नों की कमी रहती है। मकर राशि के राहु के साथ शनि, मंगल या सूर्य के रहने से वस्त्र, जूट और कपास या सूत में पंचगुना लाभ होता है। वर्षा भी साधारण ही हो पाती है, फसल साधारण रह जाती है, जिससे देश में अन्न का संकट बना रहता है। मध्यभारत और राजस्थान में अन्न की कमी रहती है, जिससे वहाँ के निवासियों के लिए कष्ट होता है। धनु राशि के राहु में मवेशी के व्यापार में अधिक लाभ होता है। घोड़ा, खच्चर, हाथी एवं सवारी के सामान — मोटर, साईकिल, रिक्शा आदि में भी अधिक लाभ होता है। जो व्यक्ति मवेशी का संचय तीन महीनों तक करके चौथे महीने में मवेशी को

बेचता है, उसे चौगुना तक लाभ होता है। मशीन के वे पार्ट्स जिनसे मशीन का सीधा सम्बन्ध रहता है, जिनके बिना मशीन का चलना कठिन ही नहीं, असंभव है, ऐसे पार्ट्स के व्यापार में लाभ होता है। जनसाधारण में ईर्ष्या, उद्वेग और वैमनस्य का प्रसार होता है।

वृश्चिक राशि में राहु मंगल के साथ स्थित हो तो जूट और वस्त्र के व्यवसाय में अधिक लाभ होता है। वृश्चिक राशि में राहु के आरम्भ होने के पाँच महीनों तक वस्तुओं का संग्रह करके छठे महीने में वस्तुओं के बेचने से दुगुना-तिगुना लाभ होता है। खाद्यान्नों का उत्पादन अच्छा होता है तथा वर्षा भी उत्तम होती है। आसाम, बंगाल, बिहार, पंजाब, पाकिस्तान, जापान, अमेरिका, चीन में उत्तम फसल उत्पन्न होती है। अनाज के व्यापार में साधारण लाभ होता है। नारियल, सुपाड़ी और आम, इमली आदि की फसल साधारण होती है। वस्त्र-व्यवसाय के लिए उक्त प्रकार का राहु अच्छा होता है। तुला राशि में राहु स्थित हो तो दुर्भिक्ष पड़ता है, खण्डवृष्टि होती है। अन्न, घी, तैल, गुड़, चीनी आदि समस्त खाद्य पदार्थों की कमी रहती है। मवेशी को भी कष्ट होता है तथा मवेशी का मूल्य घट जाता है। यदि तुला राशि में राहु उसी दिन आये, जिस दिन तुला की संक्रान्ति हुई हो, तो भयंकर दुष्काल पड़ता है। देश के सभी राज्यों और प्रदेशों में खाद्यान्नों की कमी पड़ जाती है। तुला राशि के राहु के साथ शनि, मंगल का रहना और अनिष्टकारक होता है। पंजाब, बंगाल और आसाम में अन्न की कमी रहती है, दुष्काल के कारण सहस्रों व्यक्ति भूख से छटपटा कर अपने प्राण गँवा बैठते हैं। कन्या राशि का राहु होने से विश्व में शान्ति होती है। अन्न और वस्त्र का अभाव दूर हो जाता है। लौंग, पीपल, इलायची और काली मिर्च के व्यवसाय में मनमाना लाभ होता है। जब कन्या राशि का राहु आरम्भ हो उस समय से लेकर पाँच महीनों तक उक्त पदार्थों का संग्रह करना चाहिए, पश्चात् छठे महीने में उन पदार्थों को बेच देने से अधिक लाभ होता है। चीनी, गुड़, घी और नमक के व्यवसाय में भी साधारण लाभ होता है। सोना, चाँदी के व्यापार में कन्या के राहु के छः महीने के पश्चात् लाभ होता है। जापान, जर्मनी, अमेरिका, इंग्लैण्ड, चीन, रूस, मिस्र, इटली आदि देशों में खाद्यान्नों की साधारण कमी होती है। वर्मा में भी अन्न की कमी हो जाती है। सिंह राशि का राहु होने से सुभिक्ष होता है। सोंठ, धनिया, हल्दी, काली मिर्च, सेंधा नमक, पीपल आदि वस्तुओं के व्यापार में लाभ होता है, अन्न के व्यवसाय में हानि होती है। गुड़, चीनी और घी के व्यवसाय में समर्घता रहती है। तेल का भाव तेज हो जाता है। सिंह का राहु राजनीतिक स्थिति को सुदृढ़ करता है। देश में नये भाव और नये विचारों की प्रगति होती है। कलाकारों को सम्मान प्राप्त होता है तथा कला का सर्वांगीण विकास होता है। साहित्य की उन्नति होती है। सभी देश शिक्षा और संस्कृति में

प्रगति करते हैं। कर्क राशि के राहु में सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा, गेहूँ, चना, जौ, ज्वार, बाजरा आदि पदार्थ सस्ते होते हैं तथा सुभिक्ष और सुवृष्टि होती है। जनता में सुख-शान्ति रहती है। यदि कर्क राशि के राहु के साथ गुरु हो तो राजनीतिक प्रगति होती है। देश का स्थान अन्य देशों के बीच श्रेष्ठ माना जाता है। पंजाब, बंगाल, बिहार महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, दिल्ली और हिमाचल प्रदेश के लिए यह राहु बहुत अच्छा है। इन स्थानों में वर्षा और फसल दोनों ही उत्तम होती हैं। आसाम में बाढ़ आने के कारण अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। जूट के व्यापार में साधारण लाभ होता है। जापान में फसल बहुत अच्छी होती है; किन्तु भूकम्प आने का भय सर्वदा बना रहता है। कर्क राशि का राहु चीन और रूस के लिए उत्तम नहीं है, अवशेष सभी राष्ट्रों के लिए उत्तम है। मिथुन राशि के राहु में भी सभी पदार्थ सस्ते होते हैं। अन्नादि पदार्थों की उत्पत्ति भी अच्छी होती है। तथा सभी देशों में सुकाल रहता है। वृष राशि के राहु में अन्न की कुछ कमी पड़ती है। घी, तेल, तिलहन, चन्दन, केशर, कस्तूरी, गेहूँ, जौ, चना, चावल, ज्वार, मक्का, बाजरा, उड़द, अरहर, मूँग, गुड़, चीनी आदि पदार्थों के संचय में लाभ होता है। मेष राशि के राहु में यदि एक ही मास में सूर्य और चन्द्रग्रहण हो तो निश्चयतः दुर्भिक्ष पड़ता है। बंगाल, बिहार, आसाम और उत्तर प्रदेश में उत्तम वर्षा होती है, दक्षिण भारत में मध्यम वर्षा तथा अवशेष प्रदेशों में वर्षा का अभाव या अल्प वर्षा होती है। यदि राहु के साथ शनि और मंगल हों तो वर्षा का अभाव रहता है। अनाज की उत्पत्ति भी साधारण ही होती है। देश में खाद्यान्न संकट होने से कुछ अशान्ति रहती है। निम्न श्रेणी के व्यक्तियों को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं।

राहु द्वारा होने वाले चन्द्रग्रहण का फल—मेष राशि में चन्द्र ग्रहण हो तो मनुष्यों को पीड़ा होती है। पहाड़ी प्रदेश, पंजाब, दिल्ली, दक्षिण भारत, महाराष्ट्र आन्ध्र, वर्मा आदि प्रदेशों के निवासियों को अनेक प्रकार की बीमारियों का सामना करना पड़ता है। मेष राशि के ग्रहण में शूद्र और वर्णसंकरों को अधिक कष्ट होता है। लाल रंग के पदार्थों में लाभ होता है। वृष राशि के ग्रहण में गाय, मवेशी, पथिक, श्रीमन्त, धनिक और श्रेष्ठ व्यक्तियों को कष्ट होता है। इस ग्रहण से फसल साधारण होती है, वर्षा भी मध्यम ही होती है। खनिज पदार्थ और मसालों की उत्पत्ति अधिक होती है। गायों की संख्या घटती है, जिससे घी, दूध की कमी होने लगती है। राजनीतिक दृष्टि से उथल-पुथल होती है। ग्रहण पड़ने के एक महीने के उपरान्त नेताओं में मनमुटाव आरम्भ होता है तथा सभी प्रदेशों के मन्त्रि मण्डलों में परिवर्तन होता है। मिथुन राशि पर चन्द्रग्रहण के साथ यदि सूर्य ग्रहण भी हो तो कलाकारों, शिल्पियों, वेश्याओं, ज्योतिषियों एवं इसी प्रकार के अन्य व्यवसायियों को शारीरिक कष्ट होता है। इटली, मिस्र, ईरान आदि देशों में,

विशेषतः मुस्लिम राष्ट्रों में अनेक प्रकार से अशान्ति रहती है। वहाँ अन्न और वस्त्र की कमी रहती है तथा गृह-कलह भी उत्पन्न होती है। उद्योग-धन्धों में रुकावट उत्पन्न होती है। वर्मा, चीन, जापान, जर्मन, अमेरिका, इंगलैण्ड और रूस में शान्ति रहती है। यद्यपि इन देशों में भी अर्थसंकट बढ़ता हुआ दिखलाई पड़ता है, फिर भी शान्ति रहती है। भारत के लिए भी उक्त राशि पर दोनों ग्रहणों का होना अहितकारक होता है। कर्क राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो गर्दभ और अहीरों को कष्ट होता है। कबाली, नागा तथा अन्य पहाड़ी जाति के व्यक्तियों के लिए भी पर्याप्त कष्ट होता है। नाना प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं तथा आर्थिक संकट भी उनके सामने प्रस्तुत रहता है। यदि इसी राशि पर सूर्यग्रहण भी हो तो क्षत्रियों को कष्ट होता है। सैनिक तथा अस्त्र से व्यवसाय करने वाले व्यक्तियों को पीड़ा होती है। चोर और डाकुओं के लिए अत्यन्त भय होता है। सिंह राशि के ग्रहण में वनवासी दुःखी होते हैं, राजा और साहूकारों का धन क्षय होता है। कृषकों को भी मानसिक चिन्ताएं रहती हैं। फसल अच्छी नहीं होती तथा फसल में नाना प्रकार के रोग लग जाते हैं। टिड्डी, मूसों का भय अधिक रहता है। कठोर कार्यों से आजीविका अर्जन करने वालों को लाभ होता है। व्यवसायियों को हानि उठानी पड़ती है। कन्या राशि के ग्रहण में शिल्पियों, कवियों, साहित्यकारों, गायकों एवं अन्य ललित कलाकारों को पर्याप्त कष्ट रहता है। आर्थिक संकट रहने से उक्त प्रकार के व्यवसायियों को कष्ट होता है। छोटे-छोटे दुकानदारों को भी अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। बंगाल, आसाम, बिहार, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बम्बई, दिल्ली, मद्रास और मध्य प्रदेश में फसल साधारण होती है। आसाम में अन्न की कमी रहती है तथा पंजाब में भी अन्न का भाव महँगा रहता है। यदि कन्या राशि पर चन्द्रग्रहण के साथ सूर्यग्रहण भी हो तो बर्मा, लंका, श्याम, चीन और जापान में भी अन्न की कमी पड़ जाती है। वस्त्र के व्यापार में अधिक लाभ होता है। जूट, सन, रेशम, कपास, रुई और पाट के भाव ग्रहणों के दो महीने के पश्चात् अधिक बढ़ जाते हैं। मिट्टी का तेल, पेट्रोल, कोयला आदि पदार्थों की कमी पड़ जाती है। यदि कन्या राशि के चन्द्र ग्रहण पर मंगल या शनि की दृष्टि हो तो अनाजों की और अधिक कमी पड़ जाती है। तुला राशि पर चन्द्र ग्रहण हो तो साधारण जनता में असन्तोष होता है। गेहूँ, गुड़, चीनी, घी और तेल का भाव तेज होता है। व्यापारियों के लिए यह ग्रहण अच्छा होता है, उन्हें व्यापार में अच्छा लाभ होता है। पंजाब, त्रावणकोर, कोचीन, मलाबार को छोड़ अवशेष भारत में अच्छी वर्षा होती है। इन प्रदेशों में फसल भी अच्छी नहीं होती है। पशुओं को कष्ट होता है तथा बिहार और उत्तर प्रदेश के निवासियों को अनेक प्रकार की बीमारियों का सामना करना पड़ता है। घी, गुड़, चीनी, काली मिर्च, पीपल, सोंठ, धनिया, हल्दी आदि पदार्थों का भाव भी महँगा होता है। लोहे के

व्यवसायियों को दूना लाभ होता है। सोना और चाँदी के व्यापार में साधारण लाभ होता है। तांबा और पीतल के भाव अधिक तेज होते हैं। अस्त्र-शस्त्र तथा मशीनों का मूल्य भी बढ़ता है। वृश्चिक राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो सभी वर्ण के व्यक्तियों को कष्ट होता है। पंजाब निवासियों को हैजा और चेचक का प्रकोप अधिक होता है। बंगाल, बिहार और आसाम में विषैले ज्वर के कारण सहस्रों व्यक्तियों की मृत्यु होती है। सोना, चाँदी, मोती, माणिक्य, हीरा, गोमेद, नीलम आदि रत्नों के सिवा साधारण पाषाण, सीमेण्ट और चूना के भाव भी तेज होते हैं। घी, गुड़ और चीनी का भाव सस्ता होता है। यदि वृश्चिक राशि पर चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहण दोनों हों तो वर्षा की कमी रहती है। फसल भी सम्यक् रूप से नहीं होती है, जिससे अन्न की कमी पड़ती है। धनु राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो वैद्य, डॉक्टर, व्यापारी, घोड़ों एवं यवनों को शारीरिक कष्ट होता है। धनु राशि के ग्रहण में देश में अर्थसंकट व्याप्त होता है, फसल उत्तम नहीं होती है। खनिज पदार्थ, वन और अन्न सभी की कमी रहती है। फल और तरकारियों की भी क्षति होती है। यदि इसी राशि पर सूर्यग्रहण हो और शनि से दृष्ट हो तो अटक से कटक तक तथा हिमालय से कन्याकुमारी तक के देशों में आर्थिक संकट रहता है। राजनीति में भी उथल-पुथल होती है। कई राज्यों के मन्त्रिमण्डलों में परिवर्तन होता है। मकर राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो नट, मन्त्रवादी, कवि, लेखक और छोटे-छोटे व्यापारियों को शारीरिक कष्ट होते हैं। कुम्भ राशि पर ग्रहण होने से अमीरों को कष्ट तथा पहाड़ी व्यक्तियों को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। आसाम में भूकम्प भी होता है। अग्निभय, शस्त्रभय और चोरभय समस्त देश को विपन्न रखता है। मीन राशि पर चन्द्रग्रहण होने से जलजन्तु, जल से आजीविका करने वाले, नाविक एवं अन्य इसी प्रकार के व्यक्तियों को पीड़ा होती है।

नक्षत्रानुसार चन्द्रग्रहण का फल—अश्विनी नक्षत्र में चन्द्रग्रहण हो तो दाल वाले अनाज मूँग, उड़द, चना, अरहर आदि महँगे, भरणी में ग्रहण हो तो श्वेतवस्त्रों के व्यवसाय में तीन मास में लाभ; कपास, रूई, सूत, जूट, आदि में चार महीनों में लाभ और कृत्तिका में हो तो सुवर्ण, चाँदी, प्रवाल, मुक्ता, माणिक्य में लाभ होता है। उक्त तिथियों के नक्षत्रों में ग्रहण होने से वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। खण्डवृष्टि के कारण किसी प्रदेश में वर्षा अच्छी और किसी में कम होती है। रोहिणी नक्षत्र में ग्रहण होने पर कपास, रूई, जूट और पाट के संग्रह में लाभ; मृगशिर नक्षत्र में ग्रहण हो तो लाख, रंग एवं क्षार पदार्थों में लाभ; आर्द्रा में ग्रहण हो तो घी, गुड़ और चीनी आदि पदार्थ महँगे; पुनर्वसु नक्षत्र में ग्रहण हो तो तेल, तिलहन, मूंगफली और चना में लाभ; पुष्य नक्षत्र में ग्रहण हो तो गेहूँ, चावल जौ और ज्वार आदि अनाजों में लाभ; मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी और हस्त, इन चार नक्षत्रों में ग्रहण हो तो चना, गेहूँ, गुड़ और जौ में लाभ; चित्रा में

ग्रहण होने से सभी प्रकार के धान्यों में लाभ, स्वाति में ग्रहण होने से तीसरे, पाँचवें और नौवें महीने में अन्न के व्यापार में लाभ; विशाखा नक्षत्र में ग्रहण होने से छठे महीने में कुलथी, काली मिर्च, चीनी, जीरा, धनिया आदि पदार्थों में लाभ; अनुराधा में नौवें महीने में बाजरा, सरसों आदि में लाभ, ज्येष्ठा नक्षत्र में ग्रहण होने से पाँचवें महीने में गुड़, चीनी मिश्री आदि पदार्थों में लाभ; मूल नक्षत्र में ग्रहण होने से चावलों में लाभ; पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र में ग्रहण होने से वस्त्र व्यवसाय में लाभ; उत्तराषाढ़ा नक्षत्र में ग्रहण होने से पाँचवें मास में नारियल, सुपाड़ी, काजू, किसमिस आदि फलों में लाभ; श्रवण नक्षत्र में ग्रहण होने से मवेशियों के व्यापार में लाभ; धनिष्ठा नक्षत्र में ग्रहण होने से उड़द, मूंग, मोठ आदि पदार्थों के व्यापार में लाभ; शतभिषा नक्षत्र में ग्रहण होने चना में लाभ, पूर्वाभाद्र पद में ग्रहण होने से पीड़ा, उत्तराभाद्रपद में ग्रहण होने से तीन महीनों में नमक, चीनी, गुड़ आदि पदार्थों के व्यापार में विशेष लाभ होता है।

विद्ध फल--राहु का शनि से विद्ध होना भय, रोग, मृत्यु, चिन्ता, अन्नाभाव एवं अशान्ति सूचक है। मंगल से विद्ध होने पर राहु जनक्रान्ति, राजनीति में उथल-पुथल एवं युद्ध होते हैं। बुध या शुक्र से विद्ध होने पर राहु जनता को सुख-शान्ति, आनन्द, आमोद-प्रमोद, अभय और आरोग्य प्रदान करता है। चन्द्रमा से राहु विद्ध होने पर जनता को महान् कष्ट होता है। प्रत्येक ग्रह का विद्ध रूप सप्त-शलाका या पंचशलाका चक्र से जानना चाहिए।

एकविंशतितमोऽध्यायः

कोणजान् पापसम्भूतान् केतून् वक्ष्यामि ज्योतिषा।
मृदवो दारुणाश्चैव तेषामासं निबोधत ॥1॥

पाप के कारण कोण में उत्पन्न हुए केतुओं का ज्योतिष के अनुसार वर्णन करूँगा। मृदु और दारुण होने के अनुसार उनका फल समझना चाहिए ॥1॥

एकादिषु शतान्तेषु वर्षेषु च विशेषतः।
केतवः सम्भवन्त्येवं विषमाः पूर्वपापजाः ॥2॥

एकादि सौ वर्षों में पूर्व पाप के उदय से विषम केतु उत्पन्न होते हैं। इन

विषम केतुओं का फल विषम ही होता है ॥ 2 ॥

पूर्वलिङ्गानि केतूनामुत्पाताः सदृशाः पुनः।
ग्रहा[1] अस्तमनाश्चापि दृश्यन्ते चापि लक्षयेत् ॥3॥

केतुओं के पूर्व चिह्न उत्पात के समान ही हैं, अतः ग्रहों के अस्तोदय को देख कर और लक्ष्यकर फल कहना चाहिए ॥ 3 ॥

शतानि चैव केतूनां प्रवक्ष्यामि पृथक् पृथक्।
उत्पाता यादृशा उक्ता ग्रहास्तमनान्यपि ॥4॥

सैकड़ों केतुओं का वर्णन पृथक्-पृथक् किया जायगा। ग्रहों के अस्तोदय तथा जिस प्रकार के उत्पात कहे गये हैं, उनका वर्णन भी वैसा ही किया जाएगा ॥ 4 ॥

अन्यस्मिन् केतुभवने यदा केतुश्च दृश्यते।
तदा जनपदव्यूहः प्रोक्तान् देशान् स हिंसति ॥5॥

यदि अन्य केतुभवन में केतु दिखलाई पड़े तो जनता प्रतिपादित देशों का घात करती है ॥ 5 ॥

एवं दक्षिणतो विन्द्यात् पश्चिमोत्तरेण च।
[2]कृत्तिकादियमान्तेषु नक्षत्रेषु यथाक्रमम् ॥6॥

इस प्रकार कृत्तिका नक्षत्र से भरणी तक दक्षिण, पश्चिम और उत्तर इन दिशाओं में नक्षत्रों में क्रमशः समझ लेना चाहिए ॥ 6 ॥

धूम्रः क्षुद्रश्च यो ज्ञेयः केतुरंगारकोऽग्निपः।
प्राणसंत्रासकरागो स प्राणी संशयो तथा ॥7॥

केतु, अंगारक और राहु धूम्र वर्ण और क्षुद्र दिखलाई पड़ें तो प्राणों का संकट और अनेक प्रकार के संशय उत्पन्न होते हैं ॥ 7 ॥

त्रिशिरस्के द्विजभयम् अरुणे युद्धमुच्यते।
अरश्मिके नृपापायो विरुध्यन्ते परस्परम् ॥8॥

यदि तीन सिर वाला केतु दिखलाई पड़े तो द्विजों को भय; अरुण केतु दिखलाई पड़े तो युद्ध और किरण रहित केतु दिखलाई पड़े तो राजा और प्रजा में परस्पर विरोध पैदा करता है ॥8॥

विकृते[3] विकृतं सर्वं क्षीणे सर्वपराजयः।
शृंगे शृंगिवधः पापः कबन्धे जनमृत्युदः ॥9॥

1. ग्रहास्तमनानाश्च मु० । 2. कृत्तिकादियं - मु० । 3. विकृते विकृतं सर्वं क्षीणे सर्वं पराजयम् मु० ।

रोगं सस्यविनाशञ्च[1] दुस्कालो[2] मृत्युविद्रवः।
मासं लोहितकं ज्ञेयं फलमेवं च पञ्चधा ॥10॥

विश्लिल—यदि विकृत केतु दिखलाई पड़े तो प्रजा में फूट और क्षीण केतु दिखलाई पड़े तो पराजय, संपूर्ण शृंगाकार दिखलाई पड़े तो सींगवाले पशुओं का वध और कबन्ध – धड़-आकार दिखलाई पड़े तो मनुष्यों की मृत्यु होती है। इस प्रकार के केतु में रोग उत्पन्न होते हैं, धान्य –फसल का विनाश होता है, अकाल पड़ता है, मृत्यु-उपद्रव होते हैं एवं पृथ्वी मांस और खून से भर जाती है, इस प्रकार पाँच प्रकार का फल होता है ॥9-10॥

मानुषः पशु-पक्षीणां समयस्तापसक्षये।
विषाणी दंष्ट्रिघाताय सस्यघाताय शंकरः ॥11॥

उपर्युक्त प्रकार का केतु पशु-पक्षियों के लिए मनुष्यों के समान दुःखोत्पादक, तपस्वियों को क्षय करने के लिए समय के समान, दंष्ट्री – दाँत से काटने वाले व्याघ्रादि के लिए विषयुक्त सर्पादि के समान और फसल का विनाश करने के लिए रुद्र के समान है ॥11॥

अंगारकोऽग्निसंकाशो धूमकेतुस्तु धूमवान्।
[3]नीलसंस्थानसंस्थानो वैडूर्यसदृशप्रभः ॥12॥

अग्नि के तुल्य केतु अंगारक, धूम्रवर्ण का केतु धूमकेतु और वैडूर्यमणि के समान नीलवर्ण का केतु नीलसंस्थान है ॥12॥

कनकाभा शिखा यस्य स केतुः कनकः स्मृतः।
यस्योर्ध्वगा शिखा शुक्ला स केतुः श्वेत[4] उच्यते ॥13॥

जिस केतु की शिखा कनक के समान कान्ति वाली है वह केतु कनकप्रभ और जिस केतु के ऊपर की शिखा शुक्ल है वह केतु श्वेत कहा जाता है ॥13॥

त्रिवर्णश्चन्द्रवद् वृत्तः समसर्पवदंकुरः[5]।
त्रिभिः शिरोभिः शिशिरो गुल्मकेतुः स[6] उच्यते ॥14॥

तीनवर्ण वाला एवं चन्द्रमा के समान गोलकेतु समसर्पवदंकुर नाम का होता है, तीन सिर वाला केतु शिशिर कहलाता है और गुल्म के समान केतु गुल्मकेतु कहलाता है ॥14॥

---

1. विनाशश्च मु०। 2. दुष्काली मु०। 3. नीलो—मु०। 4. शुक्ल मु०। 5. समसर्प वदंकुर मु०। 6. -केतुश्च गुल्मवत् मु०।

विक्रान्तस्य शिखे दीप्ते ऊर्ध्वगे च प्रकीर्त्तिते।
ऊर्ध्वमुण्डा शिखा यस्य स खिली केतुरुच्यते ॥15॥

जिस केतुकी शिखा दीप्त हो वह विक्रान्त संज्ञक, जिसकी शिखा ऊपर हो वह ऊर्ध्वमुण्डा शिखा वाला केतु खिली कहा जाता है ॥15॥

शिखे विषाणवद् यस्य स विषाणी प्रकीर्त्तितः।
व्युच्छिद्यमानो भीतेन रूक्षा च क्षिलिका शिखा ॥16॥

जिसकी शिखा विषाण के समान हो वह विषाणी तथा भय से रूक्ष और फैली हुई शिखा वाला केतु व्युच्छिद्यमान कहा जाता है ॥16॥

शिखाश्चतस्रो ग्रीवार्धं कबन्धस्य विधीयते।
एकरश्मिः प्रदीप्तस्तु स केतुर्दीप्त उच्यते ॥17॥

जिसकी आधी गर्दन हो और शिखा चारों ओर व्याप्त हो वह कबन्ध नाम का केतु और एक किरण वाला प्रदीप्त केतु दीप्त कहा जाता है ॥17॥

शिखा मण्डलवद् यस्य स केतुर्मण्डली स्मृतः।
मयूरपक्षी विज्ञेयो हसनः प्रभयाऽल्पया ॥18॥

जिस केतुकी शिखा मण्डल के समान हो वह मण्डली और अल्प कान्ति से प्रकाशित होने वाला केतु मयूरपक्षी कहा जाता है ॥18॥

श्वेतः सुभिक्षदो ज्ञेयः सौम्यः शुक्लः शुभार्थिषु।
कृष्णादिषु च वर्णेषु चातुर्वर्ण्यं विभावयेत् ॥19॥

श्वेतवर्ण का केतु सुभिक्ष करने वाला; सुन्दर और शुक्लवर्ण का केतु शुभ फल देने वाला और कृष्ण, पीत, रक्त और शुक्लवर्ण के केतु में चारों वर्णों का शुभाशुभ जानना चाहिए ॥19॥

केतोः समुत्थितः केतुरन्यो यदि च दृश्यते।
क्षुच्छस्त्र-रोग-विघ्नस्था प्रजा गच्छति संक्षयम् ॥20॥

केतु में से उत्पन्न अन्य केतु दिखलाई पड़े तो क्षुधा, शस्त्र, रोग, विघ्न आदि से पीड़ित प्रजा क्षय को प्राप्त होती है ॥20॥

एते च केतवः सर्वे धूमकेतुसमं फलम्।
विचार्यं वीथिभिश्चापि प्रभाभिश्च विशेषतः ॥21॥

उपर्युक्त सभी केतु धूमकेतु के समान फल देने वाले हैं तथापि इनका विशेष

विचार वीथि, प्रभा और वर्ण आदि के अनुसार करना चाहिए ॥21॥

यां दिशं केतवोऽर्चिभिर्धूमयन्ति दहन्ति च ।
तां दिशं पीडयन्त्येते क्षुधाद्यैः पीडनैर्भृशम् ॥22॥

जिस दिशा को केतु अग्निमयी किरणों के द्वारा धूमित करते हैं और जलाते हैं, वह दिशा क्षुधा, रोगादि के द्वारा अत्यन्त पीड़ित होती है ॥22॥

नक्षत्रं यदि वा केतुर्ग्रहं वाऽप्यथ धूमयेत् ।
ततः शस्त्रोपजीवीनां[1] स्थावरं हिंसते ग्रहः ॥23॥

यदि केतु किसी नक्षत्र या ग्रह को अभिधूमित करे तो शस्त्र से आजीविका करने वाले एवं स्थावरों की हिंसा होती है ॥23॥

स्थावरे धूमिते तज्ज्ञा यायिनो यान्निधूपने[2] ।
[3]शबरान् भिल्लजातीनां पारसीकांस्तथैव च ॥24॥

स्थावर और यायियों के धूमित होने पर शबर, भिल्ल और पारसियों को पीड़ित होना पड़ता है ॥24॥

शुक्रं दीप्त्या यदि हन्याद्धूमकेतुरुपागतः ।
तदा सस्यं नृपान् नागान् दैत्यान् शूरांश्च पीडयेत् ॥25॥

यदि धूमकेतु अपनी दीप्ति से शुक्र को घातित करे तो धान्य, राजा, नाग, दैत्य और शूरवीरों को पीड़ा होती है ॥25॥

शुकानां शकुनानां च वृक्षाणां चिरजीविनाम् ।
शकुनि-ग्रहपीडायां फलमेतत् समादिशेत् ॥26॥

शकुनि-ग्रह की पीड़ा में शुक, पक्षी चिर और वृक्षों का पीड़ा कारक फल कहना चाहिए ॥26॥

शिशुमारं यदा केतुरुपागत्य प्रधूमयेत् ।
तदा जलचरं तोयं वृद्धवृक्षांश्च हिंसति ॥27॥

जब केतु शिशुमार—सूंस नामक जलजन्तु को धूमित करता है तब जलचर, जल और वृद्ध वृक्षों का घात होता है ॥27॥

सप्तर्षीणामन्यतमं यदा केतुः प्रधूमयेत् ।
तदा सर्वभयं विन्द्यात् ब्राह्मणानां न संशयः ॥28॥

---

1. जीवांश्च स्थावरांश्च स हिंसति, मु० । 2. यायिनस्तथा मु० । 3. प्रत्यन्तवासिनस्तान् क्रोशान् सर्वशः प्रपीडिता, मु० ।

यदि केतु सप्त ऋषियों में से किसी एक को प्रधूमित करे तो ब्राह्मणों को सभी प्रकार का भय निस्सन्देह होता है ॥28॥

बृहस्पतिं यदा हन्याद् धूमकेतुरथार्चिभिः ।
वेदविद्याविदो वृद्धान् नृपांस्तज्ज्ञांश्च हिंसति ॥29॥

जब धूम्रकेतु अपनी तेजस्वी किरणों द्वारा बृहस्पति का घात करता है, तब वेदविद्या के पारंगत वृद्ध विद्वान् और राजाओं का विनाश होता है ॥29॥

एवं शेषान् ग्रहान् केतुर्यदा हन्यात् स्वरश्मिभिः ।
ग्रहयुद्धे यदा[1] प्रोक्तं फलं तत्तु समादिशेत् ॥30॥

इस प्रकार अन्य शेष ग्रहों को अपनी किरणों द्वारा केतु घातित करे तो जो फल गृहयुद्ध का बतलाया गया है, वही कहना चाहिए ॥30॥

नक्षत्रे पूर्वदिग्भागे यदा केतुः प्रदृश्यते ।
तदा देशान् दिशामुग्रां भञ्जन्ते पापदा नृपाः ॥31॥

यदि पूर्व दिग्भागवाले नक्षत्र में केतु का उदय दिखलायी पड़े तो पापी राजा देश, दिशा और ग्राम का विनाश करता है ॥31॥

बंगानंगान् कलिंगांश्च मगधान् काशनन्दनान् ।
पट्टचावांश्च कौशाम्बीं धेणुसारं सदाहवम् ॥32॥
तोसलिंगान् सुलान् नेद्रान् माकन्दामलदांस्तथा ।
कुनटान् सिथलान् महिषान् माहेन्द्रं पूर्वदक्षिणः ॥33॥
वेणान् विदर्भमालांश्च अश्मकांश्चैव छर्वणान् ।
द्रविडान् वैदिकान् दार्द्रेकलांश्च दक्षिणापथे ॥34॥
कोंकणान् दण्डकान् भोजान् गोमान् [2]सूर्पारकाञ्चनम् ।
किष्किन्धान् वनवासांश्च लंकां हन्यात् स नैरुतः ॥35॥

वंग, अंग, कलिंग, मगध, काश, नन्द, पट्ट, कौशाम्बी, धेणुसार, तोस, लिंग, सुल, नेद्र, माकन्द, मालद, कुनट, सिथल, महिष, माहेन्द्र, वेण, विदर्भ, माल और दक्षिणापथ के अश्मक, छर्वण, द्रविड़, वैदिक, दार्द्रेकल, कोंकण, दंडक, भोज, गोमा, सूर्पारि, कंचन, किष्किन्धा, वनवास और लंका इन देशों का विनाश उपर्युक्त प्रकार का केतु करता है ॥32-35॥

---

1. तदा मु० । 2. सूर्पारिकांचनम् मु० ।

अंगान् सौराष्ट्रान्[1] समुद्रान् भरुकच्छादसेरकान्।
शूद्रान् हृषिजलरुहान् केतुर्हन्याद्विपथग: ॥36॥

यदि विपथग –कुमार्ग स्थित केतु हो तो अंग, सौराष्ट्र, समुद्र, भरुकच्छ, असेरक, शूद्र, हृषिकेश आदि देशों का विनाश करता है ॥36॥

काम्बोजान् रामगान्धारान् आभीरान् यवरच्छकान्।
चैत्रसौन्धेयकान् सिन्धुनहामन्त्ययुधायुज: ॥37॥
बाह्लीकान् चीनविषयान् पर्वतांश्चाप्यदुस्वरान्।
सौधेयं कुरुवैदेहान् केतुर्हन्याद्यदुत्तरान् ॥38॥

केतु उत्तर दिशा में स्थित काम्बोज, रामगान्धार, आभीर, यवरच्छक, चैत्र-सौन्धेय, सिन्धु, बाह्लीक, चीनविषय, पहाड़ी प्रदेश, सौन्धेय, कुरु, विदेह आदि देशों का नाश करता है ॥37-38॥

चर्म्मसुवर्णकलिंगान् किरातान् वर्बरान् द्विजान्।
वैदिस्तमिपुलिन्दांश्च हन्ति स्वात्यां[2] समुच्छ्रितः ॥39॥

स्वाती नक्षत्र में उदित केतु चर्मकार, स्वर्णकार, कलिंग देशवासी, किरात, बर्बर जातियाँ, द्विज, वैदिक, भील, पुलिन्द आदि जातियों का वध होता है ॥39॥

सदृशा: केतवो हन्युस्तासु मध्ये वधं वदेत्।
व्याधिं शस्त्रं क्षुधां मृत्युं परचक्रं च निर्दिशेत् ॥40॥

सदृश केतु नाश करते हैं तथा व्याधि, शस्त्र, क्षुधा, मृत्यु और परशासन की सूचना देते हैं ॥40॥

न काले नियता[3] केतु: न नक्षत्रादिकस्तथा।
आकस्मिको भवत्येव कदाचिदुदितो ग्रह: ॥41॥

केतु के उदयास्त का समय निश्चित नहीं है और नक्षत्र, दिशा आदि भी अनिश्चित ही हैं। अकस्मात् कदाचित् ग्रह का उदय हो जाता है ॥41॥

षट्त्रिंशत् तस्य वर्षाणि प्रवास: परम: स्मृत:।
मध्यम: सप्तविंशं तु जघन्यस्तु त्रयोदश ॥42॥

केतु का 36 वर्ष का उत्कृष्ट प्रवास, 27 वर्ष का मध्यम प्रवास और तेरह वर्ष का जघन्य प्रवास होता है ॥42॥

---

1. मुराष्ट्रान् मु०। 2. स्वात्यां मु०। 3. वेग मु०।

एते प्रयाणा[1] दृश्यन्ते येऽन्ये तीव्रभयादृते ।
प्रवासं शुक्रवच्चास्य विन्द्यादुत्पातिकं महत् ॥43॥

उक्त प्रयाण या भय के अतिरिक्त अन्य प्रयाण केतु के दिखलायी पड़ते हैं। शुक्र के समान केतु का प्रवास भी अत्यन्त उत्पात कारक होता है ॥43॥

धूमध्वजो धूमशिखो धूमार्चिर्धूमतारकः ।
विकेशी विशिखश्चैव मयूरो विद्धमस्तकः ॥44॥

महाकेतुश्च श्वेतश्च केतुमान् केतुवाहनः ।
उल्काशिखश्च आज्वल्यः प्रज्वाली चाम्बरीषकः[2] ॥45॥

हेन्द्रस्वरो हेन्द्रकेतुः शुक्लवासोऽन्यदन्तकः ।
विद्युत्समो विद्युल्लतो विद्युद्विद्युत्स्फुलिंगकः ॥46॥

चिक्षणो ह्यरुणो गुल्मः कबन्धो ज्वलितांकुरः ।
तालीशः कनकश्चैव विक्रान्तो मांसरोहितः ॥47॥

वैवस्वतो धूममाली महार्चिश्च विधूमितः ।
दारुणाः केतवो ह्येते भयमिच्छन्ति दारुणम् ॥48॥

धूमध्वज, धूमशिख, धूमार्चि, धूमतारक, विकेशी, विशिख, मयूर, विद्धमस्तक, महाकेतु, श्वेत, केतुमान, केतुवाहन, उल्काशिख, आज्वल्य, प्रज्वाली, अम्बरीषक, हेन्द्रस्वर, हेन्द्रकेतु, शुक्लवास, अन्यदन्तक, विद्युत्सम, विद्युल्लत, विद्युत्, विद्युत्स्फुलिंगक, चिक्षण, अरुण, गुल्म, कबन्ध, ज्वलितांकुर, तालीश, कनक, विक्रान्त, मांसरोहित, वैवस्वत, धूममाली, महार्चि, विधूमित और दारुण ये केतु दारुण भय उत्पन्न करने वाले हैं ॥44-48॥

जलदो जलकेतुश्च जलरेणुसमप्रभः ।
रूक्षो वा जलवान् शीघ्रं विप्राणां भयमादिशेत् ॥49॥

जलद, जलकेतु, जलरेणु, रूक्ष, जलवान् केतु शीघ्र ही ब्राह्मणों को भय का निर्देश करता है ॥49॥

शिखी शिखण्डी विमलो विनाशी धूमशासनः ।
विशिखानः शतार्चिश्च शालकेतुरलक्तकः ॥50॥
घृतो[3] घृतार्चिश्च्यवनश्चित्रपुष्पोविदूषणः ।
विलम्बी विषमोऽग्निश्च वातकी हसनः शिखी ॥51॥

1. प्रयोगा मु० । 2. आम्बरीषक मु० । 3. धृतो मु० ।

कुटिल: कड्वखिलंग: कुचित्रगोऽथ निश्चयो।
नामानि लिखितानि[1] च येषां नोक्तं तु लक्षणम् ॥52॥

शिखी, शिखण्डी, विमल, विनाशी, धूमशासन, विशिखान, शतार्चि, शालकेतु अलक्तक, घृत, घृतार्चि, च्यवन, चित्रपुष्प, विदूषण, विलम्बी, विषम, अग्नि, वातकी हसन, शिखी, कुटिल, कड्वखिलंग, कुचित्रग इत्यादि केतुओं के नाम लिखे गये हैं, जिनके लक्षण का निरूपण नहीं किया गया है ॥50-52॥

येऽन्तरिक्षे जले भूमौ गोपुरेऽट्टालके गृहे।
वस्त्राभरण-शस्त्रेषु ते उत्पाता न केतव: ॥53॥

जो केतु आकाश, जल, भूमि, गोपुर, अट्टारी, घर, वस्त्र, आभरण और शस्त्र में दिखलायी पड़ते हैं, वे उत्पात नहीं करते ॥53॥

दीक्षितान् [2]अर्हद्देवांश्च आचार्यांश्च तथा गुरून्।
पूजयेच्छान्तिपुष्ट्यर्थं पापकेतुसमुत्थिते ॥54॥

पाप केतुओं की शान्ति के लिए मुनि—आचार्य, गुरु, दीक्षित साधु और तीर्थंकरों की पूजा करनी चाहिए ॥54॥

पौरा जानपदा राजा श्रेणीनां[3] प्रवरा: नरा:।
[4]पूजयेत् सर्वदानेन पापकेतु: समुत्थिते ॥55॥

पुरवासी, नागरिक, राजा, ब्राह्मण, श्रेष्ठ व्यापारी आदि व्यक्तियों को दान-पूजा का कार्य अवश्य करना चाहिए। अशुभ केतु दान-पूजा द्वारा प्रीति को प्राप्त होता है ॥55॥

यथा हि बलवान् राजा सामन्तै: सारपूजित:।
नात्यर्थं बाधते तत्तु तथा केतु: सुपूजित: ॥56॥

जिस प्रकार बलवान् राजा सामन्तों के द्वारा सेवित होने पर शान्त रहता है किसी भी प्रकार की बाधा नहीं पहुँचाता, उसी प्रकार दुष्ट केतु भी जिस पाप के उदय से कष्ट पहुँचाता है, उस पाप की शान्ति भगवान् की पूजा से हो जाती है, वह पाप कष्ट नहीं पहुँचाता है ॥56॥

सर्पदष्टो[5] यथा मन्त्रैरगदैश्च चिकित्स्यते।
केतुदष्टस्तथा लोकैर्दान[6]जापैश्चिकित्स्यते ॥57॥

---

1. रुचितंश्च मु०। 2. पितृदेवांश्च विप्रान् भूपान् वनीपकान् मु०। 3. विप्राश्च वणिजो नरा:। 4. दान-पूजां प्रकुर्वन्तु केतो: प्रीतिकरोऽन्यत: मु०। 5. सर्पो दष्टो यदा मु०। 6. जपै मु०।

जिस प्रकार सर्प के द्वारा काटा गया व्यक्ति मन्त्र और औषधि से स्वास्थ्य लाभ करता है, उसकी चिकित्सा मन्त्र और औषधि है, उसी प्रकार दुष्ट केतु की चिकित्सा दान-पूजा है । तात्पर्य यह है कि अशुभ केतु पापोदय से प्रकट होता है, पाप शान्त होने पर अशुभ केतु स्वयमेव शान्त हो जाता है । गृहस्थ के लिए पाप शान्ति का उपाय जप-तप के अलावा दान-पूजन ही है ॥57॥

यः केतुचारमखिलं[1] यथावत् पठेत्[2] बुधः श्रमणः शनैश्च ।
स केतुदग्धांस्त्यजते हि देशान् प्राप्नोति पूजां च नरेन्द्रमूलात्॥58॥

जो बुद्धिमान् श्रमण—मुनि समस्त केतुचार को यथावत् अध्ययन करता है वह केतु के द्वारा पीड़ित प्रदेशों का त्यागकर अन्यत्र गमन करता है, और राजाओं से पूजा प्रतिष्ठा प्राप्त करता है ॥58॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते एकविंशतितमोऽध्यायः ॥21॥

विवेचन—केतुओं के भेद और स्वरूप—केतु मूलतः तीन प्रकार के हैं—दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम । ध्वज, शस्त्र, गृह, वृक्ष, अश्व और हस्ती आदि में जो केतुरूप दर्शन होता है, वह अन्तरिक्ष केतु; नक्षत्रों में जो दिखलायी देता है उसे दिव्यकेतु हैं और इन दोनों के अतिरिक्त अन्य रूप भौमकेतु है । केतुओं की कुल संख्या एक हजार या एक सौ एक है । केतु का फलादेश, उसके उदय, अस्त, अवस्थान, स्पर्श और धूम्रता आदि के द्वारा अवगत किया जाता है । केतु जितने दिन तक दिखलायी देता है, उतने मास तक उसके फल का परिपाक होता है । जो केतु निर्मल, चिकना, सरल, रुचिर और शुक्लवर्ण होकर उदित होता है, वह सुभिक्ष और सुखदायक होता है । इसके विपरीत रूपवाले केतु शुभदायक नहीं होते, परन्तु उनका नाम धूमकेतु होता है । विशेषतः इन्द्रधनुष के समान अनेक रंगवाले अथवा दो या तीन चोटी वाले केतु अत्यन्त अशुभकारक होते हैं । हार, मणि या सुवर्ण के समान रूप धारण करने वाले और चोटीदार केतु यदि पूर्व या पश्चिम में दिखलायी दें तो सूर्य से उत्पन्न कहलाते हैं और इनकी संख्या पच्चीस है । तोता, अग्नि, दुपहरिया का फूल, लाख या रक्त के समान जो केतु अग्निकोण में दिखलायी दें, तो वे अग्नि से उत्पन्न हुए माने जाते हैं और इनकी संख्या पच्चीस है । पच्चीस केतु टेढ़ी चोटी वाले, रूखे और कृष्णवर्ण होकर दक्षिण में दिखलाई पड़ते हैं, ये यम से उत्पन्न हुए माने गये हैं । इनके उदय होने से मारी पड़ती है । दर्पण के समान गोल आकार वाले, शिखा रहित, किरण युक्त और सजल तैल के समान कान्ति वाले जो बाईस केतु ईशान दिशा में दिखलायी पड़ते हैं, वे पृथ्वी

1. लिखितं मु० । 2. पठन् गुणुतः मु० ।

से उत्पन्न हुए हैं। इनके उदय से दुर्भिक्ष और भय होता है। चन्द्रकिरण, चाँदी, हिम, कुमुद या कुन्दपुष्प के समान जो तीन केतु हैं, ये चन्द्रमा के पुत्र हैं और उत्तर दिशा में दिखलाई देते हैं। इनके उदय होने से सुभिक्ष होता है। ब्रह्मदण्ड नामक युगान्तकारी एक केतु ब्रह्मा से उत्पन्न हुआ है। यह तीन चोटी वाला और तीन रंग का है, इसके उदय होने की दिशा का कोई नियम नहीं है। इस प्रकार कुल एक सौ एक केतु का वर्णन किया गया है। अवशेष 899 केतुओं का वर्णन निम्न प्रकार है—

शुक्रतनय नामक जो चौरासी केतु हैं, वे उत्तर और ईशान दिशा में दिखलायी पड़ते हैं, ये बृहत्—शुक्लवर्ण, तारकाकार, चिकने और तीव्र फल युक्त होते हैं। शनि के पुत्र साठ केतु हैं, ये कान्तिमान्, दो शिखा वाले और कनक संज्ञक हैं, इनके उदय होने से अतिकष्ट होता है। चोटीहीन, चिकने, शुक्लवर्ण, एक तारे के समान दक्षिण दिशा के आश्रित पैंसठ विकच नामक केतु, बृहस्पति के पुत्र हैं। इनका उदय होने से पृथ्वी के लोग पापी हो जाते हैं। जो केतु साफ दिखलायी नहीं देते, सूक्ष्म, दीर्घ, शुक्लवर्ण, अनिश्चित दिशावाले तस्कर संज्ञक हैं। ये बुध के पुत्र कहलाते हैं। इनकी संख्या 51 है और ये पाप फल वाले हैं। रक्त या अग्नि के समान जिनका रंग है, जिनकी तीन शिखाएँ हैं, तारे के समान हैं, इनकी गिनती साठ है। ये उत्तर दिशा में स्थित हैं तथा कौंकुम नामक मंगल के पुत्र हैं, ये सभी पाप फल देने वाले हैं। तामसकीलक नामक तैंतीस केतु, जो राहु के पुत्र हैं तथा चन्द्रसूर्य गत होकर दिखलायी देते हैं। इनका फल अत्यन्त शुभ होता है। जिनका शरीर ज्वाला की माला से युक्त हो रहा है, ऐसे एक सौ बीस केतु अग्नि विश्वरूप होते हैं। इनका फल बनते हुए कार्यों को बिगाड़ना, कष्ट पहुँचाना आदि है। श्यामवर्ण, चमर के समान व्याप्त शिखा वाले और पवन से उत्पन्न केतुओं की संख्या सतहत्तर है। इनके उदय होने से भय, आतंक और पाप का प्रसार होता है। तारापुंज के समान आकार वाले प्रजापति युक्त आठ केतु हैं, इनका नाम गणक है। इनके उदय होने से क्रान्ति का प्रसार होता है। विश्व में एक नया परिवर्तन दिखलायी पड़ता है। चौकोर आकार वाले ब्रह्म सन्तान नामक जो केतु हैं, उनकी संख्या दो सौ चार है। इन केतुओं का फल वर्षाभाव और अन्नाभाव उत्पन्न करना है। लता के गुच्छे के समान जिनका आकार है, ऐसे बत्तीस कंक नामक जो केतु हैं, वे वरुण के पुत्र हैं। इनके उदय होने से जलाभाव, जलजन्तुओं को कष्ट एवं जल से आजीविका करने वाले कष्ट प्राप्त करते हैं। कबन्ध के समान आकार वाले छियानवे कबन्ध नामक केतु हैं, जो कालपुत्र कहे गये हैं। ये अत्यन्त भयंकर दुःखदायी और कुरूप हैं। बड़े-बड़े एक तारेदार जो केतु हैं, वे विदिश समुत्पन्न हैं। इनका उदय भी कष्टकर होता है। मथुरा, सूरसेन और विदर्भ नगरी के लिए उक्त केतु अशुभकारक होता है।

केतुओं की संख्या का योग निम्न प्रकार है—

25+25+25+22+3+1=101; 84+60+65+51+60+33+120+77+8+204+32+96+9=899; इस प्रकार कुल 899 +101=1000

जो केतु पश्चिम दिशा में उदय होते हैं, उत्तर दिशा में फैलते हैं, बड़े-बड़े स्निग्धमूर्ति हैं उनको वसाकेतु कहते हैं, इनके उदय होने से मारी पड़ती है और सुभिक्ष होता है। सूक्ष्म, या चिकने वर्ण के केतु उत्तर दिशा से आरम्भ होकर पश्चिम तक फैलते हैं, उनके उदय से क्षुधाभय, उलट-फुलट और मारी फैलती है। अमावस्या के दिन आकाश के पूर्वार्द्ध में सहस्ररश्मि केतु दिखलायी देता है, उसका नाम कपाल केतु है। इसके उदय होने से क्षुधा, मारी, अनावृष्टि और रोगभय होता है। आकाश के पूर्व दक्षिण भाग में शूल के अग्रभाग के समान कपिश, रूक्ष, ताम्रवर्ण की किरणों से युक्त जो केतु आकाश के तीन भाग तक गमन करता है, उसको रौद्र केतु कहते हैं, इसका फल कपाल केतु के समान है। जो धूमकेतु पश्चिम दिशा में उदय होता है, दक्षिण की ओर एक अंगुल ऊँची शिखा करके युक्त होता है और उत्तर दिशा की तरफ क्रमानुसार बढ़ता है, उसको चलकेतु कहते हैं। यह चलकेतु क्रमशः दीर्घ होकर यदि उत्तर ध्रुव, सप्तर्षि मंडल या अभिजित् नक्षत्र को स्पर्श करता हुआ आकाश के एक भाग में आकर दक्षिण दिशा में अस्त हो जाय, तो प्रयाग से लेकर अवन्ती तक के प्रदेश में दुर्भिक्ष, रोग एवं नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं। मध्यरात्रि में आकाश के पूर्वभाग में दक्षिण के आगे जो केतु दिखलायी दे, उसको धूमकेतु कहते हैं। जिस केतु का आकार गाड़ी के जुए के समान है, वह युग परिवर्तन के समय सात दिन तक दिखलायी पड़ता है। धूमकेतु यदि अधिक दिनों तक दिखलायी दे तो दश वर्ष तक शस्त्र-प्रकोप लगातार बना रहता है और नाना प्रकार के संताप प्रजा को देता रहता है। श्वेत नामक केतु यदि जटा के समान आकार वाला, रूखा, कपिशवर्ण और आकाश के तीन भाग तक जाकर लौट आवे तो प्रजा का नाश होता है। जो केतु धूम्रवर्ण की चोटी से युक्त होकर कृत्तिका नक्षत्र को स्पर्श करे, उसको रश्मि-केतु कहते हैं। इसका फल श्वेत नामक केतु के समान है। ध्रुव नामक एक प्रकार का केतु है इसका आकार, वर्ण, प्रमाण स्थिर नहीं है। यह दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम तीन प्रकार का होता है। यह स्निग्ध और अनियत फल देता है। जिस केतु की कान्ति कुमुद के समान हो, चोटी पूर्व की ओर फैल रही हो, उसे कुमुद केतु कहते हैं। यह बराबर दस वर्ष तक सुभिक्ष देने वाला है। जो केतु सूक्ष्म तारे के समान आकार वाला हो और पश्चिम दिशा में तीन घंटे तक लगातार दिखलायी दे उसका नाम मणिकेतु है। स्तन पर दबाव देने से जिस प्रकार दूध की धारा निकलती है, उसी प्रकार जिसकी किरणें छिटकती हैं, यह केतु उसी प्रकार

का है। इस केतु के उदय से साढ़े चार मास तक सुभिक्ष होता है तथा छोटे-बड़े सभी प्राणियों को कष्ट होता है। जिस केतु की अन्य दिशाओं में ऊँची शिखा हो तथा पिछले भाग में चिकना हो, वह जलकेतु कहलाता है। इसके उदय होने से नौ महीने तक शान्ति और सुभिक्ष रहता है। सिंह की पूंछ के समान दक्षिणावर्त शिखा-वाला, स्निग्ध, सूक्ष्मतारा युक्त पूर्व दिशा में रात में दिखलायी देने वाला भवकेतु है। यह भवकेतु जितने मुहूर्त तक दिखलायी देता है, उतने मास तक सुभिक्ष होता है। यदि रूक्ष होता है, तब मरणान्त कराने वाला माना जाता है। फुब्बारे के समान किरण वाला, मृणाल के समान गौरवर्ण केतु पश्चिम दिशा में रात भर दिखलायी दे तो सात वर्ष तक हर्ष सहित सुभिक्ष होता है। जो केतु आधी रात के समय तक शिखारसव्य, अरुण की-सी कान्तिवाला, चिकना दिखलायी देता है, उसे आवर्त कहते हैं। यह केतु जितने क्षण तक दिखलायी देता है उतने मास तक सुभिक्ष रहता है। जो धूम्र या ताम्रवर्ण की शिखा वाला भयंकर है और आकाश के तीन भाग तक को आक्रमण करता हुआ शूल के अग्र भाग के समान आकार वाला होकर सन्ध्याकाल में पश्चिम की ओर दिखलायी दे उसे संवर्त केतु कहते हैं। यह केतु जितने मुहूर्त तक दिखलायी देता है, उतने वर्ष तक शस्त्राघात से जनता को कष्ट होता है। इस केतु के उदय काल में जिसका जन्म-नक्षत्र आक्रान्त रहता है, उसे भी कष्ट होता है। जिस-जिस नक्षत्र को केतु आधूमित करे या स्पर्श करे, उस-उस नक्षत्र वाले देश और व्यक्तियों को पीड़ा होती है। यदि केतु की शिखा उल्का से भेदित हो तो शुभफल, सुवृष्टि एवं सुभिक्ष होता है।

केतुओं का विशेष फल

जलकेतु पश्चिमाग्र शिखा वाला होता है। स्निग्ध केतु के अस्त होने में जब नौ महीने समय शेष रह जाता है, तब यह पश्चिम में उदय होता है। यह नौ महीने तक सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य करता है तथा अन्य ग्रहों के सब दोषों को नष्ट करता है।

ऊर्मिशीतकेतु—जलकेतु के कमान्ति गति में आगे 18 वर्ष और 14 वर्ष के अन्तर पर ये केतु उदय होते हैं। ऊर्मि, शंख, हिम, रक्त, कुक्षि, काम, विसर्पण और शीत ये आठ अमृत से पैदा हुए सहज केतु हैं। इनके उदय होने से सुभिक्ष और क्षेम होता है।

भटकेतु और भवकेतु--ऊर्मि आदि शीत पर्यन्त के आठ केतुओं के चार के समाप्त हो जाने पर तारा के रूप एक रात में भटकेतु दिखायी देता है। यह भटकेतु पूर्व दिशा में दाहिनी ओर घूमी हुई बन्दर की पूंछ की तरह शिखा वाला, स्निग्ध और कृत्तिका के गुच्छे की तरह मुख्य तारा के प्रमाण का होता है। यह जितने मुहूर्त तक स्निग्ध दीखता रहता है उतने महीनों तक सुभिक्ष करता है। रूक्ष होगा

तो प्राणों का अन्त करने वाला और रोग पैदा करने वाला होगा।

औद्दालक केतु, श्वेत केतु, ककेतु—औद्दालक और श्वेत केतु इन दोनों का अग्रभाग दक्षिण की ओर होता है और अर्द्धरात्रि में इनका उदय होता है। ककेतु प्राची-प्रतीची दिशा में एक साथ युगाकार से उदय होता है। औद्दालक और श्वेतकेतु सात रात तक स्निग्ध दिखायी देते हैं। ककेतु कभी अधिक भी दिखता रहता है। वे दोनों स्निग्ध होने पर 10 वर्ष तक शुभ फल देते हैं और रूक्ष होने पर शस्त्र आदि से दुःख देते हैं। उद्दालक केतु एक सौ दस वर्ष तक प्रवास में रहकर भटकेतु की गति के अन्त में पूर्व दिशा में दिखायी देता है।

पद्मकेतु—श्वेत केतु के फल के अन्त में श्वेत पद्मकेतु का उदय होता है। पश्चिम में एक रात दिखायी देने पर यह सात वर्ष तक आनन्द देता रहता है।

काश्यप श्वेत केतु—काश्यप श्वेतकेतु तो रूक्ष, श्याव और जटा जैसी आकृति का होता है। यह आकाश के तीन भाग को आक्रमण करके बायीं ओर लौट जाता है। यह उन्नाश शिखी 115 वर्ष तक प्रवासित रहकर सहज पद्मकेतु की गति के अन्त में दिखायी देता है। यह जितने महीने दिखायी दे उतने ही वर्ष सुभिक्ष करता है। किन्तु मध्य देश के आर्यों का और औदीच्यों का नाश करता है।

आवर्त्त केतु– श्वेतकेतु के समाप्त होने पर पश्चिम में अर्द्धरात्रि के समय शंख की आभावाला आवर्त्तकेतु उदित होता है। यह केतु जितने मुहूर्त तक दिखायी दे, उतने ही महीने सुभिक्ष करता है। यह सदा संसार में यज्ञोत्सव करता है।

रश्मि केतु—काश्यप श्वेतकेतु के समान यह रश्मि केतु फल देता है। यह कुछ धूम्रवर्ण की शिखा के साथ कृत्तिका के पीछे दिखायी देता है। विभावसु से पैदा हुआ यह रश्मि केतु सौ वर्ष प्रोषित रहकर आवर्त केतु की गति के अन्त में कृत्तिका नक्षत्र के समीप दिखायी देता है।

वसाकेतु, अस्थिकेतु, शस्त्रकेतु वसाकेतु स्निग्ध, सुभिक्ष और महामारीप्रद होता है। यह 130 वर्ष प्रवासित रहकर उत्तर की ओर लम्बा होता हुआ उदित होता है। वसाकेतु के समान अस्थिकेतु रूक्ष हो तो क्षुद्भयावह होती है (भुखमरी पड़ती है)। पश्चिम में वसाकेतु की समानता का दीखा हुआ शस्त्रकेतु महामारी करता है।

कुमुदकेतु— कुमुद की आभावाला, पूर्व की तरफ शिखा वाला, स्निग्ध और दुग्ध की तरह स्वच्छ कुमुदकेतु पश्चिम में वसाकेतु की गति के अन्त में दिखायी देता है। एक ही रात में दिखायी दिया हुआ यह सुभिक्ष और दस वर्ष तक सुहृद्भाव पैदा करता है, किन्तु पाश्चात्य देशों में कुछ रोग उत्पन्न करता है।

कपाल किरण कपाल केतु प्राची दिशा में अमावस्या के दिन उदय हुआ आकाश के मध्य में धूम्र किरणों की शिखावाला होकर रोग, वृष्टि, भूख और

मृत्यु को देता है। यह 125 वर्ष प्रवास में रहकर अमृतोत्पन्न कुमुद केतु के अन्त में तीन पक्ष से अधिक उदय में रहता है। जितने दिन तक यह दीखता रहता है उतने ही महीनों तक इसका फल मिलता है। जितने मास और वर्ष तक दीखता है, उससे तीन पक्ष अधिक फल रहता है।

मणिकेतु – यह मणिकेतु दूध की धारा के समान स्निग्ध शिखावाला श्वेत रंग का होता है। यह रात्रि भर एक प्रहर तक सूक्ष्म तारा के रूप में दिखायी देता है। कपाल केतु की गति के अन्त में यह मणिकेतु पश्चिम दिशा में उदित होता है और उस दिन से साढ़े चार महीने तक सुभिक्ष करता है।

कलिकिरण रौद्र केतु –(किरण)—कलिकिरण रौद्रकेतु वैश्वानर वीथी के पूर्व की ओर उदित होकर 30 अंश ऊपर चढ़कर फिर अस्त हो जाता है। यह 300 वर्ष 9 महीने तक प्रवास में रहकर अमृतोत्पन्न मणिकेतु की गति के अन्त में उदित होता है। इसकी शिखा तीक्ष्ण, रूखी, धूमिल, तांबे की तरह लाल, शूल की आकृति वाली और दक्षिण की ओर झुकी हुई होती है। इसका फल तेरहवें महीने होता है। जितने महीने यह दिखायी देता है उतने ही वर्ष तक इसका भय समझना चाहिए। उतने वर्षों तक भूख, अनावृष्टि, महामारी आदि रोगों से प्रजा को दुःख होता है।

संवर्तकेतु—यह संवर्त्तकेतु 1008 वर्ष तक प्रवास में रहकर पश्चिम में सायंकाल के समय आकाश के तीन अंशों का आक्रमण करके दिखायी देता है। धूम्र वर्ण के शूल की-सी कान्ति वाला, रूखी शिखावाला यह भी रात्रि में जितने मुहूर्त तक दिखायी दे उतने ही वर्ष तक अनिष्ट करता है। इसके उदय होने से अवृष्टि, दुर्भिक्ष, रोग, शस्त्रों का कोप होता है और राजा लोग स्वचक्र और पर-चक्र से दुःखी होते हैं। यह संवर्त केतु जिस नक्षत्र में उदित होता है और जिस नक्षत्र में अस्त होता है तथा जिसे छोड़ता है अथवा जिसे स्पर्श करता है उसके आश्रित देशों का नाश हो जाता है।

ध्रुवकेतु—यह ध्रुवकेतु अनियत गति और वर्ण का होता है। सभी दिशाओं में जहाँ-तहाँ नाना आकृति का दीख पड़ता है। द्यु, अन्तरिक्ष या भूमि पर स्निग्ध दिखायी दे तो शुभ और गृहस्थों के गृहांगण में तथा राजाओं के, सेना के किसी भाग में दिखायी देने से विनाशकारी होता है।

अमृतकेतु –जल, भट, पद्म, आवर्त्त, कुमुद, मणि और संवर्त्त—ये सात केतु प्रकृति से ही अमृतोत्पन्न माने जाते हैं।

दुष्टकेतु फल — जो दुष्ट केतु हैं वे क्रम से अश्विनी आदि 27 नक्षत्रों में गये हुए देशों के नरेशों का नाश करते हैं। विवरण अगले पृष्ठ पर देखें।

27 नक्षत्रों के अनुसार दुष्ट केतुओं का घातक फल

नक्षत्र	देश	नक्षत्र	देश
अश्विनी	अश्मक देश घातक	स्वाती	कम्बोज (कश्मीर) का घातक
भरणी	किरात—भीलों का घातक	विशाखा	अवध का घातक
कृत्तिका	उड़ीसा प्रदेश का घातक	अनुराधा	पुण्ड्र (मिथिला का क्षेत्र) का घातक
रोहिणी	शूरसेन का घातक	ज्येष्ठा	कान्यकुब्ज (कन्नौज) का घातक
मृगशिर	उशीनर (गन्धार) का घातक	मूल	मद्रक तथा आन्ध्र का घातक
आर्द्रा	जलजा जीव (तिरहुत प्रान्त) घातक	पूर्वाषाढ	काशी का घातक
पुनर्वसु	अश्मक का घातक	उत्तराषाढ	अर्जुनायक, यौधेय, शिवि एवं चेदि घातक
पुष्य	मगध ,, ,,	श्रवण	कैकेय (सतलज के पीछे और व्यास के आगे का प्रान्त) का घातक
आश्लेषा	असिक ,, ,,	धनिष्ठा	पंचनद (पंजाब) ,,
मघा	अंग (वैद्यनाथ से भुवनेश्वर तक) का घातक	शतभिषा	सिंहल (सीलोन) ,,
पूर्वाफाल्गुनी	पाण्ड्य (दिल्ली प्रदेश) का घातक	पूर्वा भा०	वंग (बंगाल प्रान्त) ,,
उत्तरा फा०	अवन्ति (उज्जैन प्रान्त) ,,	उत्तरा भा०	नैमिष ,,
हस्त	दण्डक (नासिक पंचवटी) ,,	रेवती	किरात (भूटान और आसाम के क्षेत्र का घातक
चित्रा	कुरुक्षेत्र का घातक		

जितने दिनों तक ये दीखते हैं, उतने ही महीनों तक और जितने महीनों तक दीखें उतने ही वर्षों तक इनका फल मिलता है। जब ये दीखें तो उसके तीन पक्ष आगे फल देते हैं। जिन केतुओं की शिखा उल्का से ताडित हो रही हो वे केतु हूण, अफगान, चीन और चोल से अन्यत्र देशों में श्रेयस्कर होते हैं। जो केतु शुक्ल, स्निग्धतनु, ह्रस्व, प्रसन्न, थोड़े समय ही दीखने वाला सीधा हो और जिसके उदित होने से वृष्टि हुई हो वह शुभ फलदायी होता है।

चार प्रकार के भूकम्प ऐन्द्र, वारुण, वायव्य और आग्नेय होते हैं, इनका कारण भी राहु और केतु का विशेष योग ही है। जब राहु से सातवें मंगल, मंगल से पाँचवें बुध और बुध से चौथे चन्द्रमा होता है, उस समय भूकम्प होता है।

स्वाती, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, मृगशिरा, अश्विनी, पुनर्वसु—इन नक्षत्रों में अग्नि केतु या संवर्त केतु दिखलायी पड़े तो भूकम्प होता है। पुष्य, कृत्तिका, विशाखा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, पूर्वाफाल्गुनी और मघा इन नक्षत्रों का आग्नेय मण्डल कहलाता है। जब कीलक या आग्नेय केतु इस मण्डल में दिखलायी देते हैं तो भूकम्प होने का योग आता है। [illegible], [illegible], [illegible], औद्दालक, पद्म और रविरश्मि केतु जब प्रकाशमान होकर किसी भी मध्यरात्रि में उदित होते हैं, तो उसके तीन सप्ताह में भयंकर भूकम्प पूर्व के देशों में तथा हल्का भूकम्प पश्चिम के देशों में आता है। यमकेतु और कपालकेतु यदि प्रतिपदा तिथि को रात्रि के प्रथम प्रहर में दिखलायी पड़े तो भी भूकम्प आता है। भूकम्पों के प्रधान निमित्त केतुओं का उदय है। यों तो ग्रहयोग से गणित द्वारा भूकम्प का समय निकाला जाता है, किन्तु सर्वसाधारण जब भी केतुओं के उदय के निरीक्षण मात्र से, आकाशदर्शन से ही, भूकम्प का परिज्ञान कर सकता है।

द्वाविंशतितमोऽध्यायः

सर्वग्रहेश्वरः सूर्यः प्रवासमुदयं प्रति ।
तस्य चारं प्रवक्ष्यामि तन्निबोधत तत्त्वतः ॥1॥

सभी ग्रहों का स्वामी सूर्य है। उसके प्रवास, उदय और चार का वर्णन करता हूँ, इन्हें यथार्थ समझना चाहिए ॥1॥

सुरश्मो रजतप्रख्य: स्फटिकाभो महाद्युति: ।
उदये दृश्यते सूर्य: सुभिक्षं नृपतेर्हितम् ॥2॥

यदि अच्छी किरणों वाला, रजत के समान कान्तिवाला, स्फटिक के समान निर्मल, महान् कान्तिवाला सूर्य उदय में दिखलाई पड़े तो राजा का कल्याण और सुभिक्ष होता है ॥2॥

रक्त: शस्त्रप्रकोपाय भयाय च महार्घद: ।
नृपाणामहितश्चापि स्थावराणां च कीर्त्तित: ॥3॥

लाल वर्ण का सूर्य शस्त्रकोप करता है, भय उत्पन्न करता है, वस्तुओं की महँगाई कराता है और स्थावर—तद्देश निवासी राजाओं का अहित करने वाला होता है ॥3॥

पीतो लोहितरश्मिश्च व्याधि-मृत्युकरो रवि: ।
विरश्मिर्धूमकृष्णाभ: क्षुधार्त्तसृष्टिरोगद: ॥4॥

पीत और लोहित—पीली और लाल किरणवाला सूर्य व्याधि और मृत्यु करने वाला होता है। धूम और कृष्ण वर्ण वाला सूर्य क्षुधा-पीड़ा—भुखमरी और रोग उत्पन्न करने वाला होता है। (यहाँ सूर्य के उक्त प्रकार के वर्णों का प्रातःकाल सूर्योदय समय में ही निरीक्षण करना चाहिए, उसी का उपर्युक्त फल बताया गया है) ॥4॥

कबन्धेनाऽऽवृत: सूर्यो यदि दृश्येत प्राग् दिशि ।
वंगानंगान् कलिंगांश्च काशी-कर्णाट-मेखलान् ॥5॥

मागधान् कटकालांश्च कालवक्रोष्ट्रकर्णिकान् ।
माहेन्द्रसंवृत्तोवान्ध्रास्तदा[1] हन्याच्च भास्कर: ॥6॥

यदि उदयकाल में पूर्व दिशा में कबन्ध—धड़ से ढका हुआ सूर्य दिखलायी पड़े तो बंग, अंग, कलिंग, काशी, कर्नाटक, मेखल, मगध, कटक, कालवक्रोष्ट्र, कर्णिक, माहेन्द्र, आन्ध्र आदि देशों का घात करता है ॥5-6॥

कबन्धो वामपीतो वा दक्षिणेन यदा रवि: ।
चविलान् मलयानुड्रान् स्त्रीराज्यं वनवासिकान् ॥7॥

किष्किन्धाश्च कुनाटांश्च ताम्रकर्णास्तथैव च ।
स वक्र-चक्र-क्रूरांश्च कुणपांश्च स हिंसति ॥8॥

---

1. महेन्द्रमथितानुड्रां मु० ।

जब सूर्य से दक्षिण या बायीं ओर पीतवर्ण का कबन्ध दिखलायी पड़े तो द्रविड़ मलय, उड्र, स्त्रीराज्य और वनवासी, किष्किन्धा, कुनाट, ताम्रकर्ण, वक्र-चक्र, क्रूर और कुणपों का घात करता है ॥7-8॥

अपरेण च कबन्धस्तु दृश्यते द्युतितो यदा ।
युगन्धरायणं मरुत्-सौराष्ट्रान् कच्छगैरिजान् ॥9॥
कोंकणानपरान्तांश्च भोजांश्च कालजीविन: ।
अपरांस्तांश्च सर्वान् वै निहन्यात् तादृशो रवि: ॥10॥

यदि पश्चिम की ओर द्युतिमान् कबन्ध दिखलायी पड़े तो युगन्धरायण, मरुत्, सौराष्ट्र, कच्छ, गैरिक, कोंकण, अपरान्त राष्ट्र, भोज, कालजीवी इत्यादि राष्ट्रों का घात करता है ॥9-10॥

उत्तरे उदयोऽर्कस्य कबन्धसदृशस्तदा ।
[1]क्षुद्रकामालवाह्लीकान् सिन्धु-सौवीरदर्दुरान् ॥11॥
काश्मीरान् दरदांश्चैव पह्लवान् मागधांस्तथा ।
साकेतान् कोशलान् काञ्चीमहिच्छत्रं च हिंसति ॥12॥

यदि कबन्ध के समान उत्तर में सूर्य का उदय हो तो वह क्षुद्रक, मालव, सिन्धु, सौवीर, दर्दुर, काश्मीर, दरद, पह्लव, मगध, साकेत, कोशल, काञ्ची और अहिच्छत्र का घात करता है ॥11-12॥

कबन्धमुदये भानोर्यदा मध्ये प्रदृश्यते ।
मध्यमा मध्यसाराश्च पीड्यन्ते मध्यदेशजा: ॥13॥

यदि सूर्य के मध्य में कबन्ध का उदय दिखलायी पड़े तो मध्य देश में उत्पन्न व्यक्तियों का घात होता है ॥13॥

नक्षत्रमादित्यवर्णो यस्य दृश्येत भास्कर: ।
तस्य पीडा भवेत् पुंस: प्रयत्नेन शिव: स्मृत: ॥14॥

जिस व्यक्ति के नक्षत्र पर रक्तवर्ण सूर्य दिखलायी पड़ता है, उस व्यक्ति को पीड़ा होती है और बड़े यत्न के पश्चात् कल्याण होता है ॥14॥

स्थालीपिठरसंस्थाने सुभिक्षं वित्तदं[2] नृणाम्[3] ।
वित्तलाभस्तु राज्यस्य मृत्यु: पिठरसंस्थिते ॥15॥

---

1. क्षुद्रकान् मालवान् हूणान् सिन्धु-सौवीर-दर्दुरान् मु० । 2. सुदृश्यं मु० । 3. नृणां मु०

यदि थाली-पिठर —गोल थाली और मूढ़े के आकार में सूर्य उदयकाल में दिखलायी पड़े तो मनुष्यों को सुभिक्ष और धन-लाभ करानेवाला है। राज्य के लिए भी धनलाभ करानेवाला होता है। पीढ़ा के समान सूर्य दिखलायी पड़े तो मृत्युप्रद होता है ॥15॥

सुवर्णवर्णो वर्ष वा मासं वा रजतप्रभ।
शस्त्रं शोणितवत् सूर्यो दाघो वैश्वानरप्रभे ॥16॥

स्वर्ण के समान रंग का सूर्य उदयकाल में दिखलायी पड़े या रजत के समान वर्ण का सूर्य दिखलायी पड़े तो वर्ष या मास सुखमय व्यतीत होते हैं। रक्त वर्ण के समान सूर्य दिखलायी पड़े तो शस्त्र पीड़ा और अग्नि के समान दिखलायी पड़े तो दग्ध करनेवाला होता है ॥16॥

शृंगी राज्ञां विजयदः कोश-वाहनवृद्धये।
चित्रः सस्यविनाशाय भयाय च रविः स्मृतः ॥17॥

शृंगी वर्ण का रवि राजाओं के लिए विजय देने वाला, कोश और वाहन की वृद्धि करने वाला होता है। चित्रवर्ण का रवि धान्य का विनाश करता है और भयोत्पादक होता है ॥17॥

अस्तंगते यदा सूर्ये चिरं रक्ता वसुन्धरा।
सर्वलोकभयं विन्द्यात् तदा वृद्धानुशासने ॥18॥

जब सूर्य के अस्त होने पर पृथ्वी बहुत समय तक रक्तवर्ण की दिखलायी पड़े तो सर्वलोक को भय होता है ॥18॥

उदयास्तमने ध्वस्ते[1] यदा वै कुरुते रविः।
महाभयं तदानीके सुभिक्षं क्षेममेव च ॥19॥

उदय और अस्तकाल को जब सूर्य ध्वस्त करे तो सेना में महान् भय होता है तथा सुभिक्ष और कल्याण होता है ॥19॥

एतान्येव तु लिंगानि पर्वण्यां चन्द्र-सूर्ययोः।
तदा राहुरिति ज्ञेयो विकारश्च न विद्यते ॥20॥

यदि चन्द्रमा और सूर्य के पर्वकाल—पूर्णमासी या अमावस्या में उक्त चिह्न दिखलायी पड़े तो राहु समझना चाहिए, इसमें विकार नहीं होता है ॥20॥

---

1. ध्वस्तौ मु०।

शेषमौत्पातिकं प्रोक्तं विधानं भास्करं प्रति।
ग्रहयुद्धे [1]प्रवक्ष्यामि सर्वगत्या च साधयेत् ॥21॥

अवशेष सूर्य का औत्पातिक विधान समझना चाहिए। ग्रहयुद्ध का वर्णन करूँगा, उसकी सिद्धि गति आदि से कर लेनी चाहिए ॥21॥

इति भद्रबाहुविरचिते निमित्तशास्त्रे आदित्याचारो नाम द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥22॥

विवेचन—पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा और मघा ये 14 नक्षत्र 'चन्द्र नक्षत्र' एवं पूर्वाभाद्रपद, शतभिषा, मृगशिरा, रोहिणी, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल ये 13 नक्षत्र 'सूर्य नक्षत्र' कहलाते हैं। यदि सूर्य नक्षत्रों में चन्द्रमा और चन्द्रनक्षत्रों में सूर्य हो तो वर्षा होती है। चन्द्र नक्षत्रों में यदि सूर्य और चन्द्रमा दोनों हों तो अल्पवृष्टि होती है, किन्तु यदि सूर्य नक्षत्र पर सूर्य-चन्द्रमा दोनों हों तो वृष्टि नहीं होती। सूर्य नक्षत्र पर सूर्य के आने से वायु चलती है, जिससे वायु-दोष के कारण वर्षा नहीं होती। चन्द्रमा चन्द्र नक्षत्रों पर रहे तो केवल बादल आच्छादित रहते हैं, वर्षा नहीं होती। कर्क संक्रान्ति के दिन रविवार होने से 10 विश्वा, सोमवार होने से 20 विश्वा, मंगलवार होने से 8 विश्वा, बुधवार होने से 12 विश्वा, गुरुवार होने से 18 विश्वा, शुक्रवार होने से भी 18 विश्वा और शनिवार होने से 5 विश्वा वर्षा होती है। कर्क संक्रान्ति के दिन शनि, रवि, बुध और मंगलवार होने से अधिक वृष्टि नहीं होती, शेष वारों में सुवृष्टि होती है। चन्द्रमा के जलराशि पर स्थित होने पर सूर्य कर्क राशि में आये तो अच्छी वर्षा होती है। मेष, वृष, मिथुन और मीन राशि पर चन्द्रमा के रहते हुए यदि सूर्य कर्क राशि में प्रविष्ट हो तो 100 आढक वर्षा होती है। कर्क संक्रान्ति के समय धनुष और सिंह राशि पर चन्द्रमा के होने से 50 आढक वर्षा होती है। मकर और कन्या राशि पर चन्द्रमा के रहने से 25 आढक वर्षा एवं तुला, वृश्चिक, कुम्भ और कर्कराशि पर चन्द्रमा के होने से साढ़े 12 आढक प्रमाण वर्षा होती है। कर्कराशि में प्रविष्ट होते हुए सूर्य को यदि बृहस्पति पूर्ण दृष्टि से देखे अथवा तीन चरण दृष्टि से देखे तो अच्छी वर्षा होती है। श्रावण के महीने में यदि कर्क संक्रान्ति के समय मेघ खूब छाये हों तो सात महीने तक सुभिक्ष होता है और अच्छी वर्षा होती है। मंगल के दिन सूर्य की कर्क संक्रान्ति और शनिवार को मकर संक्रान्ति

1. च वक्ष्यामि मु० ।

और शनिवार को मकर संक्रान्ति का होना शुभ नहीं है। स्वाति, ज्येष्ठा, भरणी, आर्द्रा, आश्लेषा इन नक्षत्रों के पन्द्रहवें मुहूर्त में मकर राशि या सूर्य के प्रविष्ट होने से अशुभ फल होता है। पुनर्वसु, विशाखा, रोहिणी और तीनों उत्तरा नक्षत्रों के चौथे या पाँचवें मुहूर्त में सूर्य प्रवेश करे तो शुभ फल होता है। सूर्य की संक्रान्ति के दिन से ग्यारहवें, पच्चीसवें, चौथे या अठारहवें दिन अमावस्या का होना सुभिक्ष सूचक है। यदि पहली संक्रान्ति का नक्षत्र दूसरी संक्रान्ति में आवे तो शुभ फल होता है, किन्तु उस नक्षत्र से दूसरे, तीसरे, चौथे और पाँचवें नक्षत्र शुभ नहीं होते।

सूर्य की संक्रान्तियों के अनुसार फलादेश मेष की संक्रान्ति के दिन तुला राशि का चन्द्रमा हो तो छः महीने में धान्य की अधिकता करता है। सभी प्रदेशों में सुभिक्ष होता है। बंगाल और पंजाब में चावल, गेहूँ की उपज अधिक होती है। देश के अन्य सभी भागों में भी मोटे धान्यों की उत्पत्ति अधिक होती है। मेष संक्रान्ति प्रातःकाल होने पर शुभ, मध्याह्न में होने से निकृष्ट और सन्ध्याकाल में होने से अतिनिकृष्ट फल होता है। मेष संक्रान्ति रात्रि में प्रविष्ट हो तो साधारणतः अशुभ फल होता है। यदि संक्रान्ति काल में अश्विनी नक्षत्र क्रूर ग्रहों द्वारा विद्ध हो तो अशुभ फल होता है। राष्ट्र में अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। वर्षा की भी कमी रहती है। मेष संक्रान्ति, कर्क संक्रान्ति और मकर संक्रान्ति का फल एक वर्ष तक रहता है। यदि ये तीनों संक्रान्तियाँ अशुभ वार, अशुभ घटियों में आती हैं, तो देश में नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं। शनिवार को मेष संक्रान्ति पड़ने से जगत् में अशान्ति रहती है। चीन और रूस में अन्न आदि पदार्थों की बहुलता होती है। पर आन्तरिक अशान्ति इन राष्ट्रों में भी बनी रहती है।

वृष की संक्रान्ति में वृश्चिक राशि चन्द्रमा के रहने से चार महीने तक अन्न लाभ होता है। सुभिक्ष और शान्ति रहती है। खाद्यान्नों की बहुलता सभी देशों और राष्ट्रों में रहती है। काशी, कन्नौज और विदर्भ में राजनीतिक संघर्ष होता है। वृष की संक्रान्ति बुधवार को होने से घी के व्यापार में लाभ होता है। शुक्रवार को वृष की संक्रान्ति हो तो रसपदार्थों की महँगी होती है। शनिवार को इस संक्रान्ति के होने से अन्न का भाव तेज होता है। मिथुन की संक्रान्ति को धनु का चन्द्रमा हो तो तिल, तैल, अन्न संग्रह करने से चौथे महीने में लाभ होता है। यदि चन्द्रमा क्रूर ग्रह सहित हो तो लाभ के स्थान में हानि होती है। कर्क की संक्रान्ति में मकर का चन्द्रमा हो तो दुर्भिक्ष होता है। इस योग के चार महीने के उपरान्त धनिक भी निर्धन हो जाता है। सभी की आर्थिक स्थिति बिगड़ती जाती है। देश के कोने-कोने में अन्न की आवश्यकता प्रतीत होती है। जिन राज्यों, प्रदेशों और देशों में अच्छा अनाज उपजता है, उनमें भी अन्न की कमी हो जाने से अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। कन्या की संक्रान्ति होने पर मीन

के चन्द्रमा में छत्रभंग होता है। उत्तर प्रदेश, बंगाल, बिहार और दिल्ली राज्य में अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। बम्बई और मद्रास में अनेक प्रकार की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। तुला की संक्रान्ति में मेष का चन्द्रमा हो तो पाँच महीने में व्यापार में लाभ होता है। अन्न की उपज साधारण होती है। जूट, सूत, कपास और सन की फसल साधारण होती है। अतः इन वस्तुओं के व्यापार में अधिक लाभ होता है। वृश्चिक की संक्रान्ति में वृषराशि का चन्द्रमा हो तो तिल, तेल तथा अन्न का संग्रह करना उचित है। इन वस्तुओं के व्यापार में अधिक लाभ होता है। धनु की संक्रान्ति और मिथुन के चन्द्रमा में पाँच महीने तक अन्न में लाभ होता है। मकर की संक्रान्ति में कर्क का चन्द्रमा हो तो कुलटाओं का विनाश होता है। कपास, घी, सूत में पाँचवें मास में भी लाभ होता है। कुम्भ की संक्रान्ति में सिंह का चन्द्रमा हो तो चौथे महीने में अन्न लाभ होता है। मीन की संक्रान्ति में कन्या का चन्द्रमा होने पर प्रत्येक प्रकार के अनाज में लाभ होता है। अनाज की कमी भी साधारणतः दिखलायी पड़ती है, किन्तु उस कमी को किसी प्रकार पूरा किया जा सकता है। जिस वार की संक्रान्ति हो, यदि उसी वार में अमावस्या भी पड़ती हो तो यह खर्पर योग कहलाता है। यह योग सभी प्रकार के धान्यों को नष्ट करनेवाला है। यदि प्रथम संक्रान्ति को शनिवार हो, दूसरी को रविवार, तीसरी को सोमवार, चौथी को मंगलवार, पाँचवीं को बुध, छठी को गुरुवार, सातवीं को शुक्रवार, आठवीं को शनिवार, नौवीं को रविवार, दसवीं को सोमवार, ग्यारहवीं को मंगलवार और बारहवीं संक्रान्ति को बुधवार हो तो खर्पर योग होता है। इस योग के होने से भी धन-धान्य और जीव-जन्तुओं का विनाश होता है। यदि कार्तिक में वृश्चिक की संक्रान्ति रविवारी हो तो श्वेत रंग के पदार्थ महँगे, म्लेच्छों में रोग-विपत्ति एवं व्यापारी वर्ग के व्यक्तियों को भी कष्ट होता है। चैत्र मास में मेष की संक्रान्ति मंगल या शनिवार की हो तो अन्न का भाव तेज, गेहूँ, चने, जौ आदि समस्त धान्यों का भाव तेज होता है। सूर्य का क्रूर ग्रहों के साथ रहना, या क्रूर ग्रहों से विद्ध रहना अथवा क्रूर ग्रहों के साथ सूर्य का वेध होना, वर्षा, फसल, धान्योत्पत्ति आदि के लिए अशुभ है। सूर्य यदि मृदु संज्ञक नक्षत्रों का भोग कर रहा हो, उस समय किसी शुभ ग्रह की दृष्टि सूर्य पर हो तो, इस प्रकार की संक्रान्ति जगत् में उथल-पुथल करती है। सुभिक्ष और वर्षा के लिए यह योग उत्तम है। यद्यपि संक्रान्ति मात्र के विचार से उत्तम फल नहीं घटता है, अतः ग्रहों का सभी दृष्टियों से विचार करना आवश्यक है।

त्रयोविंशतितमोऽध्यायः

मासे-मासे समुत्थानं चन्द्रं[1] यो[2] पश्येत् बुद्धिमान् ।
वर्ण-संस्थानं रात्रौ तु ततो ब्रूयात् शुभाशुभम् ॥1॥

जो बुद्धिमान् व्यक्ति रात्रि में प्रत्येक महीने में चन्द्रमा के वर्ण, संस्थान, प्रमाण आदि का दर्शन करता है, उसके लिए शुभाशुभ का निरूपण करता हूँ ॥1॥

स्निग्धः श्वेतो विशालश्च पवित्रश्चन्द्रः शस्यते ।
किञ्चिदुत्तरशृङ्गश्च दस्यून् हन्यात् प्रदक्षिणम् ॥2॥

स्निग्ध, श्वेतवर्ण, विशालाकार और पवित्र चन्द्रमा प्रशंसित—अच्छा माना जाता है । यदि चन्द्रमा का शृंग—किनारा कुछ उत्तर की ओर उठा हुआ हो तो दस्युओं का घात करता है ॥2॥

अश्मकान् भरतानुड्रान् काशि-कलिंगमालवान् ।
दक्षिणद्वीपवासांश्च हन्यादुत्तरशृङ्गवान् ॥3॥

उत्तर शृंगवाला चन्द्रमा अश्मक, भरत, उड्र, काशी, कलिंग, मालव और दक्षिणद्वीपवासियों का घात करता है ॥3॥

क्षत्रियान् यवनान् बाह्लीन् हिमवच्छृङ्गमाश्रितान् ।
युगन्धर-कुरून् हन्याद् ब्राह्मणान् दक्षिणोन्नतः ॥4॥

दक्षिणोन्नतशृंग चन्द्र क्षत्रिय, यवन, बाह्लीक, हिमाचल के निवासी, युगन्धर और कुरु निवासियों तथा ब्राह्मणों का घात करता है ॥4॥

भस्माभो निःप्रभो रूक्षः श्वेतशृङ्गोऽतिसंस्थितः ।
चन्द्रमा न प्रशस्येत सर्ववर्णभयंकरः ॥5॥

भस्म के समान आभा वाला, निष्प्रभ, रूक्ष, श्वेत और अतिउन्नत शृंगवाला चन्द्रमा प्रशंस्य नहीं है; क्योंकि यह सभी वर्ण वालों को भय उत्पन्न करता है ॥5॥

शबरान् दण्डकानुड्रान् मद्रांश्च द्रविडांस्तथा ।
शूद्रान् महासनान् वृत्यान् समस्तान् सिन्धुसागरान् ॥6॥
आनर्तान्मलकीरांश्च कोंकणान् प्रलयम्बिनः ।
[2]रोमवृत्तान् पुलिन्द्रांश्च मारुश्वभ्रं च कच्छजान् ॥7॥

---

1. पश्यति मु० । 2. गमा मु० ।

प्रायेण हिंसते देशानेतान् स्थूलस्तु चन्द्रमाः ।
समे शृंगे च विद्वेष्टी तथा यात्रां न योजयेत् ॥8॥

स्थूल चन्द्रमा शबर, दण्डक, उड्र, मन्द्र, द्रविड, शूद्र, महासन, मृत्य, सभी समुद्र, आनर्त, मलकीर, कोंकण, प्रलयम्बित, रोमवृत्त, पुलिन्द, मरुभूमि और कच्छ आदि देशों का घात करता है । यदि चन्द्रमा का समान शृंग हो तो यात्रा नहीं करनी चाहिए ॥6-8॥

चतुर्थी पञ्चमी षष्ठी विवर्णो विकृतः शशी ।
यदा मध्येन वा याति पार्थिवं हन्ति मालवम् ॥9॥

जब चतुर्थी, पञ्चमी और षष्ठी तिथि को चन्द्रमा विकृत, बदरंग दिखलाई पड़े अथवा वह मध्य से गमन करता हो तो मालव नृप का विनाश करता है ॥9॥

काञ्चीं किरातान् द्रमिलान् शाक्यान् लुब्धांस्तु सप्तमी ।
कुमारं युवराजञ्च चन्द्रो हन्यात् तथाऽष्टमी ॥10॥

सप्तमी और अष्टमी का विकृत चन्द्रमा कांची, किरात, द्रमिल, शाक्य, लुब्धक एवं कुमार और युवराजों का विनाश करता है ॥10॥

नवमी मन्त्रिणश्चौरान् अध्वगान् वरसन्निभान् ।
दशमी स्थविरान् हन्यात् तथा वै पार्थिवान् प्रियान् ॥11॥

नवमी का विकृत चन्द्रमा मन्त्री, चोर, पथिक और अन्य श्रेष्ठ लोगों का तथा दशमी का विकृत चन्द्र स्थविर राजा और उनके प्रियों का विनाश करता है ॥11॥

एकादशी भयं कुर्यात् ग्रामीणांश्च तथा गवाम् ।
द्वादशी राजपुरुषांश्च वस्त्रं सस्यं च पीडयेत् ॥12॥

एकादशी का विकृत चन्द्रमा ग्रामीण और गायों को भय करता है तथा द्वादशी का चन्द्रमा राजपुरुष—राजकर्मचारी, वस्त्र और अनाज का घात करता है ॥12॥

त्रयोदशी-चतुर्दश्योर्भयं शस्त्रं च मूर्च्छति ।
संग्रामः संभ्रमश्चैव जायते वर्णसंकरः ॥13॥

त्रयोदशी और चतुर्दशी का विकृत चन्द्रमा भयोत्पादक, शस्त्रकोप और मूर्च्छा करता है । संग्राम—युद्ध और आकुलता व्याप्त होती है और वर्णसंकर पैदा होते हैं ॥13॥

नृपा भृत्यैर्विरुध्यन्ते राष्ट्रं चौरैर्विलुप्यते ।
पूर्णिमायां हते चन्द्रे ऋक्षे वा विकृतप्रभे ॥14॥

पूर्णिमा में चन्द्रमा द्वारा घात नक्षत्र पर चन्द्रमा के स्थित होने पर अथवा विकृत प्रभा वाले चन्द्रमा के होने पर राजा और सेवकों में विरोध होता है तथा चोरों के द्वारा राष्ट्र लूटा जाता है ॥14॥

ह्रस्वो रूक्षश्च चन्द्रश्च श्यामश्चापि भयावहः ।
स्निग्धः शुक्लो महान्[1] श्रीमांश्चन्द्रो नक्षत्रवृद्धये ॥15॥

ह्रस्व, रूक्ष और काला चन्द्र भयोत्पादक है तथा स्निग्ध, शुक्ल और सुन्दर चन्द्र सुखोत्पादक तथा समृद्धिकारक होता है ॥15॥

श्वेतः पीतश्च रक्तश्च कृष्णश्चापि यथाक्रमम् ।
सुवर्णसुखदश्चन्द्रो विपरीतो भयावहः ॥16॥

श्वेत, पीत, रक्त और कृष्ण ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिए सुखद यथाक्रम होता है और सुवर्ण—सुन्दर चन्द्र सभी के लिए सुखप्रद है । इसके विपरीत चन्द्र भयावह होता है ॥16॥

चन्द्रे प्रतिपदि योऽन्यो ग्रहः प्रविशतेऽशुभः ।
संग्रामो जायते तत्र सप्तराष्ट्रविनाशनः ॥17॥

यदि प्रतिपदा तिथि को चन्द्रमा में अन्य अशुभ ग्रह प्रविष्ट हो तो भयंकर संग्राम होता है तथा सात राष्ट्रों का विनाश होता है ॥17॥

द्वितीयायां तृतीयायां गर्भनाशाय कल्पते ।
चतुर्थ्यां च सुघाती च मन्दवृष्टिञ्च निर्दिशेत् ॥18॥

यदि द्वितीया, तृतीया तिथि को चन्द्रमा में अन्य अशुभ ग्रह प्रविष्ट हो तो गर्भनाश करने वाला होता है । चतुर्थी तिथि में प्रवेश करे तो घात और मन्दवृष्टि करने वाला होता है ॥18॥

पञ्चम्यां ब्राह्मणान्[2] सिद्धान् दीक्षितांश्चापि पीडयेत् ।
यवनाय धर्मभ्रष्टाय षष्ठ्यां पीडां व्रजन्त्यतः ॥19॥

पञ्चमी तिथि में चन्द्रमा में कोई अशुभ ग्रह प्रवेश करे तो ब्राह्मण, सिद्ध और दीक्षितों को पीड़ा तथा षष्ठी तिथि में कोई अशुभ ग्रह प्रवेश करे तो धर्म-रहित, यवन आदि को कष्ट होता है ॥19॥

---

1. महाँश्चापि मु० । 2. ब्राह्मणा मु० ।

[1]महाजनाश्च पीड्यन्ते क्षिप्रमेक्षुरकास्तथा ।
ईतयश्चापि जायन्ते सप्तम्यां सोमपीडने ॥20॥

सप्तमी तिथि को चन्द्रमा के घातित होने पर महाधनिक, नाई, धोबी, कृषक आदि को पीड़ा होती है और ईतियाँ—बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं ॥20॥

विवर्णपरुषश्चन्द्रः स्त्रीणां राजा निषेवते ।
कपिलोऽपि दक्षिणे मार्गे विन्द्यादग्निभयं तथा[2] ॥21॥

किसी अन्य अशुभ ग्रह द्वारा विवर्ण और परुष, स्त्रियों—रोहिणी आदि का राजा पति—चन्द्रमा सेवन किया जाय तथा कपिल—पिंगलवर्ण का चन्द्रमा दक्षिण मार्ग में भी दिखलायी पड़े तो अग्निभय होता है ॥21॥

सन्ध्यायां कृत्तिकां ज्येष्ठां रोहिणीं पितृदेवताम् ।
चित्रां विशाखां मैत्रं च चरेद् दक्षिणतः शशी ॥22॥

सन्ध्या में कृत्तिका, ज्येष्ठा, रोहिणी, मघा, चित्रा, विशाखा और अनुराधा का चन्द्रमा दक्षिण मार्ग से विचरण करता है ॥22॥

सर्वभूतभयं विन्द्यात् तथा[3] घोरं तु मासिकम् ।
सस्यं वर्षं वर्धयते चन्द्रस्तद्वद् विपर्ययात् ॥23॥

चन्द्रमा के विपर्यय होने पर समस्त प्राणियों को भय होता है तथा धान्य और वर्षा की वृद्धि होती है ॥23॥

रेवती-पुष्ययोः सोमः श्रीमानुत्तरगो यदा ।
महावर्षाणि कल्पन्ते तदा कृतयुगे यथा ॥24॥

जब चन्द्रमा रेवती और पुष्य नक्षत्र में उत्तर दिशा में गमन करता है, उस समय कृतयुग के समान महावर्षा होती है ॥24॥

गोवीथीमजवीथीं वा वैश्वानरपथं तथा ।
विवर्णः सेवते चन्द्रस् [1]तदाऽल्पमुदकं भवेत् ॥25॥

जब विवर्ण चन्द्रमा गोवीथि, अजवीथि या वैश्वानर पथ में गमन करता है, तब अल्प जल-वृष्टि होती है ॥25॥

गजवीथ्यां नागवीथ्यां सुभिक्षं क्षेममेव च ।
सुप्रभे प्रकृतिस्थे च महावर्षं च निर्दिशेत् ॥26॥

---

1. महाधनाश्च मु० । 2. तदा मु० । 3. तथा भ० । 4. भवः मु० ।

जब सुप्रभ प्रकृतिस्थ चन्द्रमा गजवीथि, नागवीथि में गमन करता है, तब सुभिक्ष, कल्याण और महावर्षा होती है ॥26॥

वैश्वानरपथं प्राप्ते चतुरङ्गस्तु दृश्यते।
सोमो विनाशकृल्लोके तदा वाऽग्निभयङ्करः ॥27॥

जब चतुरंग चन्द्रमा वैश्वानर पथ में गमन करता हुआ दिखलायी पड़ता है तब लोक का विनाश होता है अथवा भयंकर अग्नि का प्रकोप होता है ॥27॥

अजवीथीमागते चन्द्रे क्षुत्तृषाग्निभयं नृणाम्।
विवर्णो हीनरश्मिर्वा भद्रबाहुवचो यथा ॥28॥

विवर्ण या हीन रश्मिवाला चन्द्रमा अजवीथि में गमन करता हुआ दिखलायी पड़े तो मनुष्यों को क्षुधा, तृषा और अग्नि का भय रहता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥28॥

गोवीथ्यां नागवीथ्यां च चतुर्थ्यां दृश्यते शशी।
रोगशस्त्राणि वैराणि वर्षस्य च विवर्धयेत् ॥29॥

जब चन्द्रमा चतुर्थी तिथि में गोवीथि या नागवीथि में गमन करता हुआ दिखलायी पड़े तब उस वर्ष रोग, शस्त्र और शत्रुता वृद्धिगत होती है ॥29॥

ऐरावणे चतुष्पथस्थो महावर्षं स उच्यते।
चन्द्रः प्रकृतिसम्पन्नः सुरश्मिः श्रीरिवोज्ज्वलः ॥30॥

यदि चन्द्रमा प्रकृति सम्पन्न, सुन्दर किरण वाला, सुन्दर श्री के समान उज्ज्वल चतुष्पथ ऐरावत मार्ग में दिखलाई पड़े तो वह महावर्ष होता है ॥30॥

श्यामच्छिद्रश्च पक्षादौ यदा दृश्यते यः सितः।
चन्द्रमा रौरवं[1] घोरं नृपाणां कुरुते तदा ॥31॥

जब चन्द्रमा काला और छिद्र युक्त प्रथम पक्ष—कृष्ण पक्ष में दिखलायी पड़े तो उस समय मनुष्यों में घोर संघर्ष होता है ॥31॥

धनुषा यदि तुल्यः स्यात् पक्षादौ दृश्यते शशी।
ब्रूयात् पराजयं पृष्ठे युद्धं[2] चैव विनिर्दिशेत् ॥32॥

यदि प्रथम पक्ष में चन्द्रमा धनुष के तुल्य दिखलायी पड़े तो पराजय होती है और पीछे युद्ध होता है ॥32॥

1. रौरव मु०। 2. पश्चात् मु०।

वैश्वानरपथेऽष्टम्यां तिर्यक्स्थो वा भयं वदेत्[1]।
परस्परं विरुध्यन्ते नृपाः प्रायः सुवर्चसः ॥33॥

यदि अष्टमी तिथि को वैश्वानर मार्ग में तिर्यक् चन्द्रमा हो तो शक्तिशाली, तेजस्वी राजाओं में युद्ध होता है ॥33॥

दक्षिणं मार्गमाश्रित्य वध्यन्ते प्रवरा नराः।
चन्द्रस्तूत्तरमार्गस्थः क्षेम-सौभिक्षकारकः ॥34॥

यदि चन्द्रमा दक्षिण मार्ग में हो तो बड़े-बड़े व्यक्तियों का वध होता है, और उत्तर मार्ग में स्थित रहने वाला चन्द्रमा क्षेम और सुभिक्ष करने वाला होता है ॥34॥

चन्द्रसूर्यौ विशृङ्गौ तु मध्यच्छिद्रौ हतप्रभौ।
युगान्तमिव कुर्वन्तौ तदा यात्रा न सिद्ध्यति[2] ॥35॥

चन्द्रमा और सूर्य विगत शृंग, मध्य छिद्र, कान्ति रहित हों तो युगान्त—प्रलय के समान—कार्य करते हैं, उस समय यात्रा अच्छी नहीं मानी जाती है ॥35॥

[3]यदैकनक्षत्र-गतौ कुर्यात् तद्वर्णसंकरम्।
विनाशं तत्र जानीयाद् विपरीते जयं वदेत् ॥36॥

एक नक्षत्र पर स्थित होकर जहाँ सूर्य और चन्द्र वर्णसंकर—वर्णमिश्रण करें, वहाँ विनाश समझना चाहिए। विपरीत होने पर जय होती है ॥36॥

बहुवोदयको वाऽथ तत्तो भयप्रदो भवेत्।
मन्दघाते फलं मन्दं मध्यमं मध्यमेन तु ॥37॥

शीघ्र उदय को प्राप्त होने वाला चन्द्रमा भयप्रद होता है। मन्दघात होने पर मन्दफल और मध्यम में मध्यमफल होता है ॥37॥

चन्द्रमाः सर्वघातेन राष्ट्रराज्य[4]भयंकरः।
तथापि नागरान् हन्यात् यदा ग्रहसमागमे ॥38॥

सर्वघात के द्वारा चन्द्रमा सम्पूर्ण राष्ट्र और राज्यों के लिए भयंकर होता है। जब चन्द्रमा अन्य ग्रह के साथ समागम करता है तो नागरिकों का विनाश करता है ॥38॥

नागराणां तदा भेदो विज्ञयस्तु पराजयः।
यायिनामपि विज्ञेयं यदा युद्धं परस्परम् ॥39॥

1. भवेत् मु० । 2. शस्यते मु० । 3. यदा मु० । 4. राष्ट्रजाश्च मु० ।

जब चन्द्रमा का अन्य किसी ग्रह के साथ युद्ध होता है, तब नागरिकों में परस्पर फूट रहती है और यायियों—आक्रमिकों की पराजय होती है ॥39॥

भार्गवः[1] गुरवः प्राप्तो पुष्यभिश्चित्रया सह ।
शक्रस्य चापरूपं च [2]ब्राह्मणसदृशं फलम् ॥40॥

यदि इन्द्रधनुष के समान सुन्दर चन्द्रमा पुष्य और चित्रा नक्षत्र के साथ शुक्र और गुरु—बृहस्पति को प्राप्त करे तो ब्राह्मण सदृश फल होता है ॥40॥

क्षत्रियाश्च भुवि ख्याताः कौशाम्बी दैवतान्यपि[3] ।
पीड्यन्ते तद्भक्ताश्च सङ्ग्रामाश्च गुरोर्वधः ॥41॥

उक्त प्रकार की चन्द्रमा की स्थिति में भूमि में प्रसिद्ध कौशाम्बी आदि क्षत्रिय तथा उनके भक्त पीड़ित होते हैं और युद्ध होते हैं जिससे गुरुजनों की हिंसा होती है ॥41॥

पशवः पक्षिणो वैद्या महिषाः शबराः शकाः ।
सिंहला द्रामिलाः काचा अम्बुकाः पह्लवा नृपाः ॥42॥
पुलिन्द्राः कोंकणा भोजाः कुरवो दस्यवः क्षमाः ।
शनैश्चरस्य घातेन पीड्यन्ते यवनैः सह ॥43॥

चन्द्रमा के द्वारा शनि के घातित होने से पशु, पक्षी, वैद्य, महिष—भैंस, शबर, शक, सिंहल, द्रामिल, काच, अम्बुक, पह्लव नृप, पुलिन्द्र, कोंकण, भोज, कुरु दस्यु, क्षमा आदि प्रदेशवासी यवनों के साथ पीड़ित होते हैं ॥42-43॥

यस्य यस्य च नक्षत्रमेकशो द्वन्द्वशोऽपि वा ।
ग्रहा वामं प्रकुर्वन्ति तं तं हिंसन्ति सर्वशः ॥44॥

जिस-जिस नक्षत्र को अकेला ग्रह या दो-दो ग्रह वाम—बायीं ओर करें, उस-उस नक्षत्र का घात सभी ओर से करते हैं ॥44॥

जन्मनक्षत्रघातेऽथ राज्ञो यात्रा न सिद्ध्यति ।
नागरेण हतश्चाल्पः स्वपक्षाय न यो भवेत् ॥45॥

यदि कोई राजा जन्मनक्षत्र के घातित होने पर यात्रा करे तो उसकी यात्रा सफल नहीं होती है। जो नगरवासी स्वपक्ष में नहीं होते हैं, उनके द्वारा अल्पघात होता है ॥45॥

---

1. भार्गवा मु० । 2. ब्राह्मणी गुरुवद्गुणाय मु० । 3. देवता अपि मु० ।

राजा [1]चावनिजा गर्भा नागरा दारुजीविनः ।
गोपा गोजीविनश्चापि धनुस्सङ्ग्रामजीविनः ॥46॥
तिलाः कुलत्था माषाश्च माषा मुद्गाश्चतुष्पदाः ।
पीड्यन्ते बुधघातेन स्थावरं यच्च किञ्चन ॥47॥

चन्द्रमा के द्वारा बुध के घातित होने से राजा, खान से आजीविका करने वाले, नागरिक, काष्ठ से आजीविका करने वाले, गोप, गायों से आजीविका करने वाले, धनुष और सेना से आजीविका करने वाले, तिल, कुलथी, उड़द, मूंग, चतुष्पद और स्थावर पीड़ित होते हैं ॥46-47॥

कनकं मणयो रत्नं शकाश्च यवनास्तथा ।
गुर्जरा[2] पह्लवा मुख्याः क्षत्रिया मन्त्रिणो बलम् ॥48॥
स्थावरस्य वनीकाकुनये सिंहला नृपाः ।
वणिजां वनशल्यं च पीड्यन्ते सूर्यघातने ॥49॥

सूर्य के घात से कनक—सोना, मणि, रत्न, शक, यवन, गुहार, पह्लव आदि मुख्य क्षत्रिय, मन्त्री, सेना, स्थावरों के अन्तर्गत सिंहल, वणिज और वनशाखा वाले पीड़ित होते हैं ॥48-49॥

पौरेयाः शूरसेनाश्च शका बाह्लीकदेशजाः ।
मत्स्याः कच्छाश्च वत्स्याश्च सौवीरा गन्धिजास्तथा[3] ॥50॥
पीड्यन्ते केतुघातेन ये च सत्त्वास्तथाश्रयाः ।
निर्घाता पापवर्षं वा विज्ञेयं बहुशस्तथा ॥51॥

केतु घात द्वारा पुरवासी, शूरसेन, शक, बाह्लीक, मत्स्य, कच्छ, वत्स्य, सौवीर गन्धिज आदि देश वाले पीड़ित होते हैं तथा यह अनेक प्रकार से संघर्षमय पाप वर्ष रहता है ॥50-51॥

पाण्ड्याः केरलाश्चोलाः सिंहलाः सात्त्विकास्तथा ।
[4]कुनपास्ते तथावर्श्च मूलका वनवासकाः ॥52॥
किष्किन्धाश्च कुनाटाश्च प्रत्यग्राश्च वनेचराः ।
रक्तपुष्पफलाश्चैव रोहिण्यां सूर्य-चन्द्रयोः ॥53॥

पाण्ड्य, केरल, चोल, सिंहल, सात्त्विक, कुनप, विदर्भ, वनवासी, किष्किन्धा, कुनाट, वनेचर, रक्तपुष्प और फल आदि विकृत सूर्य और चन्द्र के संयुक्त होने से

1. वा नावनिजा मु० । 2. गुहारा मु० । 3. सौविकास्तथा मु० । 4. कुनदास्ते मु० ।

पीड़ित होते हैं ॥52-53॥

एवं च जायते सर्वं करोति विकृतिं यदा।
तदा प्रजा विनश्यन्ति दुर्भिक्षेण भयेन च ॥54॥

इस प्रकार चन्द्रमा के विकृत होने से दुर्भिक्ष और भय द्वारा प्रजा का विनाश होता है ॥54॥

अर्धमासं यदा चन्द्र[1] ग्रहा यान्ति विदक्षिणम्।
तदा चन्द्रो जयं कुर्यान्नागरस्य महीपतेः ॥55॥

जब चन्द्रमा आधे महीने—पन्द्रह दिन का हो और उस समय अन्य ग्रह दक्षिण की ओर गमन करें तो चन्द्रमा नागरिक और राजा को विजय देता है ॥55॥

हीयमानं यदा चन्द्रं ग्रहाः कुर्वन्ति वामतः।
तदा विजयमाख्यान्ति नागरस्य महीपतेः ॥56॥

जब चन्द्रमा क्षीण हो रहा हो - कृष्ण पक्ष में ग्रह चन्द्रमा को बायीं ओर करते हों तो नागरिक और राजा की विजय होती है ॥56॥

गति-मार्गाकृति-वर्णमण्डलान्यपि वीथयः।
चारं नक्षत्रचारांश्च ग्रहाणां शुक्रवद् विदुः ॥57॥

ग्रहों की गति, मार्ग, आकृति, वर्ण, मण्डल, वीथि, चार और नक्षत्र चार आदि शुक्र के समान समझना चाहिए ॥57॥

चन्द्रस्य चारं चरतोऽन्तरिक्षे सुचारदुश्चारसमं प्रचारम्।
चर्याधुतः खेचरसुप्रणीतं यो वेद भिक्षुः स चरेन्नृपाणाम् ॥58॥

चन्द्रमा के आकाश में विचरण करने पर सुचार और दुश्चार दोनों होते हैं। जो भिक्षु प्रसन्नतायुक्त चन्द्रमा की चर्या को जानता है, वह भिक्षु राजाओं के मध्य में विहार करता है ॥58॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते चन्द्रचार संज्ञो नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥23॥

विवेचन—ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के दाहिने भाग में चन्द्रमा हो तो बीज, जल और धन की हानि होती है। अग्निभय विशेष उत्पन्न होता है। जब विशाखा और अनुराधा नक्षत्र के दायें भाग में चन्द्रमा रहता

1. चन्द्र मु०।

है तब पाप चन्द्रमा कहलाता है। पाप चन्द्रमा जगत् में भय उत्पन्न करता है, परन्तु विशाखा, अनुराधा और मघा नक्षत्र के मध्य भाग में चन्द्रमा के रहने से शुभ फल होता है। रेवती से लेकर मृगशिरा तक छः नक्षत्र अनागत होकर मिलते हैं, आर्द्रा से लेकर अनुराधा तक बारह नक्षत्र मध्य भाग में चन्द्रमा के साथ मिलते हैं तथा ज्येष्ठा से लेकर उत्तराभाद्रपद तक नौ नक्षत्र अतिक्रान्त होकर चन्द्रमा के साथ मिलते हैं। यदि चन्द्रमा का शृंग कुछ ऊँचा होकर नाव के समान विशालता को प्राप्त करे तो नाविकों को कष्ट होता है। आधे उठे हुए चन्द्रमा शृंग को लांगल कहते हैं, उससे हलजीवी मनुष्यों को पीड़ा होती है। प्रबन्धकों, शासकों और नेताओं में परस्पर मैत्री सम्बन्ध बढ़ता है तथा देश में सुभिक्ष होता है। चन्द्रमा का दक्षिण शृंग आधा उठा हुआ हो तो उसे दुष्ट लांगल शृंग कहते हैं, इसका फल पाण्ड्य, केरल, चोल आदि राज्यों में पारस्परिक अनैक्य होता है। इस प्रकार के शृंग के दर्शन से वर्षा ऋतु में जलाभाव होता है तथा ग्रीष्म ऋतु में सन्ताप होता है।

यदि समान भाव से चन्द्रमा का उदय हो तो पहले दिन की तरह सर्वत्र सुभिक्ष, आनन्द, आमोद-प्रमोद, वर्षा, हर्ष आदि होते हैं। दण्ड के समान चन्द्रमा के उदय होने पर गाय, बैलों को पीड़ा होती है और राजा लोग उग्र दण्डधारी होते हैं। यदि धनुष के आकार का चन्द्रमा उदय हो तो युद्ध होता है, परन्तु जिस ओर उस धनुष की मौर्वी रहती है, उस देश की जय होती है। यदि पदशृंग दक्षिण और उत्तर में फैला हुआ हो तो भूकम्प, महामारी आदि फल उत्पन्न होते हैं। कृषि के लिए उक्त प्रकार का चन्द्रमा अच्छा नहीं माना गया है। जिस चन्द्रमा का शृंग नीचे को मुख किये हुए हो उसे आवर्तित शृंग कहते हैं, इससे मवेशी को कष्ट होता है। घास की उत्पत्ति कम होती है तथा हरे चारे का भी अभाव रहता है। यदि चन्द्रमण्डल के चारों ओर अखण्डित गोलाकार रेखा दिखलायी दे तो 'कुण्ड' नामक शृंग होता है। इस प्रकार के शृंग से देश में अशान्ति फैलती है तथा नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं। यदि चन्द्रमा का शृंग उत्तर दिशा की ओर कुछ ऊँचा हो तो धान्य की वृद्धि होती है, वर्षा भी उत्तम होती है। दक्षिण की ओर शृंग के कुछ ऊँचे रहने से वर्षा का अभाव, धान्य की कमी एवं नाना तरह की बीमारियाँ फैलती हैं।

एक शृंग वाला, नीचे की ओर मुख वाला, शृंगहीन अथवा सम्पूर्ण नये प्रकार का चन्द्रमा देखने से देखने वालों में से किसी की मृत्यु होती है। वैयक्तिक दृष्टि से भी उक्त प्रकार के चन्द्रशृंगों का देखना अनिष्टकार माना जाता है। यदि आकार से छोटा चन्द्रमा दिखलाई पड़े तो दुर्भिक्ष, मृत्यु, रोग आदि अनिष्ट फल घटते हैं तथा बड़ा चन्द्रमा दिखलाई पड़े तो सुभिक्ष होता है। मध्यम आकार के चन्द्रमा के उदय होने से प्राणियों को क्षुधा की वेदना सहन करनी पड़ती है। राजाओं,

प्रशासकों एवं अन्य अधिकारियों में अनेक प्रकार के उपद्रव होने से संघर्ष होता रहता है। देश में अशान्ति होती है तथा नये-नये प्रकार के झगड़े उत्पन्न होते हैं। चन्द्रमा की आकृति विशाल हो तो धनिकों के यहाँ लक्ष्मी की वृद्धि, स्थूल हो तो सुभिक्ष, रमणीय हो तो उत्तम धान्य उपजते हैं। यदि चन्द्रमा के शृंग को मंगल ग्रह ताडित करता हो तो कुत्सित राजनीतिज्ञों का विनाश, यथेष्ट वर्षा, पर फसल की उत्पत्ति का अभाव और यदि ग्रह के द्वारा चन्द्रशृंग आहत हो तो शस्त्रभय और क्षुधा का भय होता है। बुध द्वारा चन्द्रमा के शृंग को आहत होने पर अनावृष्टि, दुर्भिक्ष एवं अनेक प्रकार के संकट आते हैं। शुक्र द्वारा चन्द्रशृंग का भेदन होने से छोटे दर्जे के शासन अधिकारियों में वैमनस्य, भ्रष्टाचार और अनीति का सामना करना पड़ता है। जब गुरु द्वारा चन्द्रशृंग छिन्न होता है, तब किसी महान् नेता की मृत्यु या विश्व के किसी बड़े राजनीतिज्ञ की मृत्यु होती है।

कृष्ण पक्ष में चन्द्रशृंग का ग्रहों द्वारा पीडन हो तो मगध, यवन, पुलिन्द, नेपाल, मरु, कच्छ, सूरत, मद्रास, पंजाब, काश्मीर, कुलूत, पुरुषानन्द और उशीनर प्रदेश में सात महीनों तक रोग व्याप्त रहता है। शुक्ल पक्ष में ग्रहों द्वारा चन्द्रशृंग का छिन्न होना अधिक अशुभ नहीं होता है।

यदि बुध द्वारा चन्द्रमा का भेदन होता हो तो मगध, मथुरा और वेणा नदी के किनारे बसे हुए देशों को पीड़ा होती है। केतु द्वारा चन्द्रमा पीड़ित होता हो तो अमंगल, व्याधि, दुर्भिक्ष और शस्त्र से आजीविका करनेवालों का विनाश होता है। चोरों को अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। राहु या केतु से ग्रस्त चन्द्रमा के ऊपर उल्का गिरे तो अशान्ति रहती है। यदि भस्मतुल्य रूखा, अरुणवर्ण, किरणहीन, श्यामवर्ण, कम्पायमान चन्द्रमा दिखलाई दे तो क्षुधा, संग्राम, रोगोत्पत्ति, चोरभय और शस्त्रभय आदि होते हैं। कुमुद, मृणाल और हार के समान शुभ्रवर्ण होकर चन्द्रमा नियमानुसार प्रतिदिन घटता-बढ़ता है तो सुभिक्ष, शान्ति और सुवृष्टि होती है। प्रजा आनन्द के साथ रहती है तथा सन्तापों का विनाश होकर पूर्णतया शान्ति छा जाती है।

द्वादश राशियों के अनुसार चन्द्रफल—मेष राशि में चन्द्रमा के रहने से सभी धान्य महँगे; वृष में चन्द्रमा के होने से चना तेज, मनुष्यों की मृत्यु और चोरभय; मिथुन में चन्द्रमा के रहने से बीज बोने में सफलता, उत्तम धान्य की उत्पत्ति; कर्क में चन्द्रमा के रहने से वर्षा; सिंह में रहने से धान्य का भाव महँगा; कन्या में रहने से खण्डवृष्टि, सभी धान्य सस्ते; तुला में चन्द्रमा के रहने से थोड़ी वर्षा, देशभंग और मार्गभय; वृश्चिक में चन्द्रमा के रहने से मध्यम वर्षा, ग्रामनाश, उपद्रव, उत्तम धान्य की उत्पत्ति; धनु राशि में चन्द्रमा के रहने से उत्तम वर्षा, सुभिक्ष और शान्ति; मकर राशि में चन्द्रमा के रहने से धान्यनाश, फसल में नाना प्रकार के रोग, मूसे-टिड्डी आदि का भय; कुम्भ राशि में चन्द्रमा के रहने से अल्प

वर्षा, धान्य का भाव तेज, प्रजा में भय एवं मीन राशि में चन्द्रमा के रहने से सुख-सम्पत्ति और सभी प्रकार के अनाज सस्ते होते हैं। वैशाख या ज्येष्ठ में चन्द्रमा का उदय उत्तर की ओर हो तो सभी प्रकार के धान्य सस्ते होते हैं। मेघ का उदय एवं वर्षण उत्तम होता है।

ज्येष्ठ मास की शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को सूर्यास्त के समय ही चन्द्रमा दिखलाई पड़े तो वर्ष पर्यन्त सुभिक्ष रहता है। चन्द्रमा का शृंग उत्तर की ओर हो तो सुभिक्ष और दक्षिण की ओर होने से दुर्भिक्ष तथा मध्य का रहने से मध्यम फल देनेवाला होता है। कृत्तिका, अनुराधा, ज्येष्ठा, चित्रा, रोहिणी, मघा, मृगशिर, मूल, पूर्वाषाढ़ा, विशाखा ये नक्षत्र चन्द्रमा के उत्तर मार्ग वाले कहलाते हैं। जब चन्द्रमा अपने उत्तर मार्ग में गमन करता है तो सुभिक्ष, सुवर्षा, शान्ति, प्रेम, और सौन्दर्य का प्रसार होता है। जनता में धर्माचरण का भी प्रसार होता है। दक्षिण मार्ग में चन्द्रमा का विचरण करना अशुभ माना जाता है। शुक्ल पक्ष की द्वितीया के दिन मेष राशि में चन्द्रमा का उदय हो तो ग्रीष्म में धान्य भाव तेज होता है।

वृष में उदय होने से उड़द, तिल, मूंग, अगुरु आदि का भाव तेज होता है। मिथुन में कपास, सूत, जूट आदि का भाव महँगा होता है। कर्क राशि के होने से अनावृष्टि, तथा कहीं-कहीं खण्डवृष्टि; सिंह राशि में चन्द्रमा के उदय होने से धान्य भाव तेज होता है। सोना-चाँदी आदि का भाव भी महँगा होता है। कन्या में चन्द्रमा का उदय होने से पशुओं का विनाश, राजनीतिक पार्टियों में मतभेद, संघर्ष होता है। तुला राशि के चन्द्रमा में उदय होने से व्याधि, व्यापारियों में विरोध वृश्चिक राशि के चन्द्रमा में धान्य की उत्पत्ति, धनु और मकर में चन्द्रमा का उदय होने से दाल वाले अनाज का भाव महँगा कुम्भ राशि में चन्द्रमा का उदय होने से तिल, तेल, तिलहन, उड़द, मूंग, मटर आदि पदार्थों का भाव तेज और मीन राशि में चन्द्रमा के उदय होने से सुभिक्ष, आरोग्य, क्षेम और समृद्धि होती है।

उदय काल में प्रकाशमान, उज्ज्वल चन्द्रमा दर्शक और राष्ट्र की शक्ति का विकास करता है। यदि उदयकाल में चन्द्रमा रक्तवर्ण का मन्द प्रकाश युक्त मालूम पड़े तो धन-धान्य का अभाव होता है।

चतुर्विंशतितमोऽध्यायः

अथातः संप्रवक्ष्यामि ग्रहयुद्धं यथा तथा।
जन्तूनां जायते[1] येन [2]तूर्णं जय-पराजयौ ॥1॥

अब ग्रहयुद्ध का वर्णन करता हूँ। इसके द्वारा प्राणियों की जय-पराजय का ज्ञान होता है ॥1॥

गुरुः सौरश्च नक्षत्रं बुधार्कश्चैव नागराः।
केतुरंगारकः सोमो राहुः शुक्रश्च यायिनः ॥2॥

गुरु, शनि, बुध और सूर्य नागर संज्ञक एवं केतु, अंगारक, चन्द्र, राहु और शुक्र यायी संज्ञक हैं ॥2॥

श्वेतः पाण्डुश्च पीतश्च कपिलः पद्मलोहितः।
वर्णास्तु नागरा ज्ञेया ग्रहयुद्धे विपश्चितैः ॥3॥

ग्रहयुद्ध में श्वेत, पाण्डु, पीत, कपिल, लोहितवर्ण मनीषियों द्वारा नागरिक संज्ञक जानना चाहिए ॥3॥

कृष्णो नीलश्च श्यामश्च कपोतो भस्मसन्निभः।
वर्णास्तु यायिनो[3] ज्ञेया ग्रहयुद्धे[4] विपश्चितैः ॥4॥

कृष्ण, नील, श्याम, कपोत और भस्म के समान वर्ण ग्रहयुद्ध में विद्वानों द्वारा यायी कहे गये हैं ॥4॥

उल्का ताराऽशनिश्चैव[5] विद्युतोऽभ्राणि मारुतः।
विमिश्रको[6] गणो ज्ञेयो वधायैव[7] शुभाशुभे ॥5॥

ग्रहयुद्ध द्वारा शुभाशुभ अवगत करने में उल्का, तारा, अशनि, धिष्ण्य, विद्युत्, अभ्र और मारुत को मिश्रगणक जानना चाहिए। उल्का, तारा, अशनि, विद्युत्, अभ्र तथा मारुत ये विमिश्र संज्ञक हैं और युद्ध के शुभाशुभ फल में ये वधकारक होते हैं ॥5॥

नागरस्यापि[8] यः शीघ्रः [9]स यायीत्यभिधीयते।
मन्दगो यायिनोऽधस्तान्नागरः संयुगे भवेत् ॥6॥

नगर में जो शीघ्रगामी है, उसे यायी कहते हैं, इस प्रकार यायी की अपेक्षा युद्ध में मन्द-गति होने से नागर नीच कोटि का कहलाता है ॥6॥

---

1. ज्ञायते मु०। 2. जयस्तूर्णं पराजयः मु०। 3. याजिना मु०। 4. स्वर मु०। 5. ० धिष्ण्यं मु०। 6. समसिका गणो मु०। 7. वधस्यापि मु०। 8. नातुरेऽस्य पि यः मु०। 9. संयायीत्य० मु०।

नागरे तु हते विन्द्यान्नागराणां महद्भयम् ।
एवं यायिवधे ज्ञेयं यायिनां तन्महद्भयम् ॥7॥

नगर संज्ञक ग्रहों के युद्ध होने या घातित होने से नागरिकों को महान् भय होता है एवं यायी ग्रहों के युद्ध होने पर यायियों—आक्रमकों के लिए महान् भय होता है ॥7॥

ह्रस्वो विवर्णो रूक्षश्च श्यामः कान्तोऽपसव्यगः ।
विरश्मिश्चाप्यरश्मिश्च हतो ज्ञेयो ग्रहो युधि ॥8॥

युद्ध में विकृत रश्मि या अल्प रश्मि वाला ग्रह ह्रस्व, विवर्ण, रूक्ष, श्याम, कान्त, अपसव्य दिशा में रहने पर हत - घातित माना जाता है; अर्थात् पराजय और हानि करने वाला होता है ॥8॥

स्थूलः स्निग्धः सुवर्णश्च सुरश्मिश्च प्रदक्षिणः ।
उपरिष्टात् प्रकृतिमान् ग्रहो जयति तादृशः ॥9॥

स्थूल, स्निग्ध, सुन्दर, अच्छी रश्मियों वाला, प्रदक्षिण, ऊपर रहने वाला और कान्तिमान् ग्रह जय को प्राप्त होता है ॥9॥

उल्कादयो [1]हतान् हन्युर्नागरान् संयुगे ग्रहान् ।
नागराणां तदा विन्द्याद्भयं घोरमुपस्थितम् ॥10॥

जब युद्ध में नागर ग्रह उल्कादि के द्वारा घातित हों तो नागरिकों को अत्यन्त भय होता है ॥10॥

यायिनो वामतो हन्युर्ग्रहयुद्धे विमिश्रकाः ।
पीड्यन्ते भौमपीडायां भयं सर्वत्र संयुगे ॥11॥

युद्ध में यदि विमिश्रक—उल्का, तारा, अशनि आदि के द्वारा यायी संज्ञक ग्रह बायीं ओर से पीड़ित किये जायें तो भौम पीड़ा द्वारा पीड़ित होते हैं ॥11॥

सौम्यजातं तथा विप्राः सोम नक्षत्र-राशयः ।
उदीच्याः पार्वतेयाश्च पाञ्चलाद्यास्तथैव च ॥12॥

पीड्यन्ते सोमघातेन नभो धूमाकुलं भवेत् ।
तन्नामधेयास्तद्भक्ताः सर्वे पीड्यन्ते तान्समान् ॥13॥

यदि चन्द्रमा के द्वारा ग्रह पीड़ित हों और आकाश धूम से व्याप्त हो तो

---

1. हता मु० ।

चन्द्रनामधारी, चन्द्रभक्त तथा इन्हीं के समान अन्य व्यक्ति पीड़ित भी होते हैं तथा ब्राह्मण, चन्द्रनक्षत्र और चन्द्र राशि वाले, उदीच्य और पांचाल भी पीड़ित होते हैं ॥12-13॥

बर्बराश्च किराताश्च पुलिन्दा द्रमिलास्तथा।
मालवा मलया वंगाः कलिंगाः पार्वतास्तथा॥14॥

[1]सूर्यकाश्च सुराः क्षुद्राः पिशाचा वनवासिनः।
तन्नामधेयास्तद्भक्ताः पीड्यन्ते राहुघातने॥15॥

राहु के घात में बर्बर, किरात, पुलिन्द, द्रमिल, मालव, मलय, बंग, कलिंग, पार्वत, सूर्यक, देव, क्षुद्र, पिशाच, वनवासी, राहु नामधारी और राहु भक्त व्यक्ति पीड़ित होते हैं ॥14-15॥

यायिनः ख्यातयशः शल्वः सोरठाः द्रविडास्तथा।
अंगा वंगाः कलिंगाश्च सौरसेनाश्च क्षत्रियाः॥16॥

वीराश्चोग्राश्च भोजाश्च यज्ञे चन्द्रश्च साधवः।
पीड्यन्ते शुक्रघातेन संग्रामश्चाकुलो भवेत्॥17॥

शुक्र घात—युद्ध में यायी, यशस्वी, शाल्व, द्रविड, अंग, बंग, कलिंग, सौर-सेन क्षत्रिय, वीर, उग्र, भोज, साधु, चन्द्रवंशी पीड़ित होते हैं तथा युद्ध और व्याकुलता व्याप्त होती है ॥16-17॥

श्वेतः श्वेतं ग्रहं यत्र हन्यात् सुवर्चसा[3] यदा।
नागराणां[4] मिथो भेदो विप्राणां[5] तु भयं भवेत्॥18॥

जब श्वेत ग्रह श्वेत ग्रह को अपनी शक्ति द्वारा घातित करे तब नागरिकों में परस्पर भेद एवं ब्राह्मणों को भय होता है ॥18॥

लोहितो लोहितं हन्याद् यदा ग्रहसमागमे।
नागराणां[6] मिथो भेदः क्षत्रियाणां[7] भयं भवेत्॥19॥

ग्रहयुद्ध में यदि लोहितग्रह लोहित ग्रह का घात करे तो नागरिकों में परस्पर भेद एवं क्षत्रियों को भय होता है ॥19॥

पीतः पीतं यदा हन्याद् ग्रहं ग्रहसमागमे।
वैश्यानां नागराणां च मिथो भेदं तदाऽऽदिशेत्॥20॥

1. सूर्यकश्च मु०। 2. मालवा द्रमिलास्तथा मु०। 3. सुवर्चसा मु०। 4. ब्राह्मणानां मु०। 5. नागराणां तु निर्दिशेत् मु०। 6. क्षत्रियाणां मु०। 7. नागराणां तु निर्दिशेत् मु०।

ग्रहयुद्ध में यदि पीतवर्ण का ग्रह पीतवर्ण के ग्रह का घात करे तो वैश्य और नागरिकों में आपस में मतभेद होता है ॥20॥

कृष्णः कृष्णं यदा हन्यात् ग्रहं ग्रहसमागमे ।
शूद्राणां नागराणाञ्च[1] मिथो भेदं तदादिशेत् ॥21॥

ग्रहयुद्ध में कृष्णवर्ण का ग्रह कृष्णवर्ण के ग्रह का घात करे तो शूद्र और नागरिकों में परस्पर मतभेद होता है ॥21॥

श्वेतो नीलश्च पीतश्च कपिलः पद्मलोहितः ।
विपद्यते यदा वर्णो नागराणां तदा भयम् ॥22॥

श्वेत, नील, पीत, कपिल और पद्म-लोहित वर्ण के ग्रह जब युद्ध करते हैं तो नागरिकों को भय होता है ॥22॥

श्वेतो वाऽत्र यदा पाण्डुग्रहं सम्पद्यते स्वयम् ।
यायिनां विजयं ब्रूयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥23॥

श्वेत वर्ण का ग्रह जब पाण्डुवर्ण के ग्रह के साथ युद्ध करता है, तब यायियों की विजय होती है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥23॥

कृष्णो नीलस्तथा श्यामः कापोतो भस्मसन्निभः ।
विपद्यते यदा वर्णो न तदा यायिनां भयम् ॥24॥

कृष्ण, नील, श्याम, कापोत और भस्म के तुल्य आभा वाला ग्रह जब युद्ध करता है तब यायियों को भय नहीं होता है ॥24॥

एवं शिष्टेषु वर्णेषु नागरेषु विचारतः ।
उत्तरमुत्तरा वर्णा यायिनामपि निर्दिशेत् ॥25॥

अवशिष्ट वर्ण के नागरिक ग्रहों में विचार करने से उत्तर वर्ण के ग्रह यायियों की उत्तम विजय प्रकट करते हैं ॥25॥

रक्तो वा यदि वा नीलो ग्रहः सम्पद्यते स्वयम् ।
नागराणां तदा विन्द्यात् जयं वर्णमुपस्थितम् ॥26॥

रक्त या नील ग्रह जब स्वयं विपत्ति को प्राप्त हो—युद्ध करे तो नागरिकों की विजय होती है ॥26॥

1. अनयं घोरं यायिनां संग्राममादिशेत् मु० ।

नीलाद्यास्तु यदा[1] वर्णा उत्तरा उत्तरं पुन: ।
नागराणां विजानीयात् निर्ग्रन्थे ग्रहसंयुगे ॥27॥
ग्रहो ग्रहं यदा हन्यात् प्रविशेद् वा भयं तदा ।
दक्षिण: सर्वभूतानामुत्तरोऽण्डजपक्षिणाम् ॥28॥

ग्रहयुद्ध में यदि नीलादि वर्ण वाले ग्रह उत्तर दिशा में युद्ध करें तो नागरिकों का अहित होता है, ऐसा निर्ग्रन्थ आचार्यों का वचन है। यदि दक्षिण से ग्रह ग्रह का घात करे अथवा ग्रह ग्रह में प्रवेश करे तो समस्त प्राणी, अण्डज और पक्षियों को अहितकर होता है ॥27-28॥

ग्रहौ गुरु-बुधौ विन्द्यादुत्तरद्वारमाश्रितौ ।
शुक्र-सूर्यौ तथा पूर्वां राहु-भौमौ च दक्षिणाम् ॥29॥
अपरां चन्द्र-सूर्यौ तु मध्ये केतुमसंशयम् ।
क्षेमंकरो ध्रुवाणां च यायिनां च भयंकर: ॥30॥

उत्तर द्वार में स्थित होकर गुरु और बुध युद्ध करें, पूर्व में स्थित होकर शुक्र और सूर्य, दक्षिण में स्थित होकर राहु और मंगल, पश्चिम में चन्द्र और सूर्य एवं मध्य में केतु युद्ध करे तो निवासियों के लिए कल्याणप्रद और यायियों के लिए भयंकर होता है ॥29-30॥

अहश्च पूर्वसन्ध्या च स्थावरप्रतिपुद्गला: ।
रात्रिश्चापरसन्ध्या च यायिनां प्रतिपुद्गला: ॥31॥

दिन और पूर्व सन्ध्या स्थावरों---निवासियों के लिए प्रतिपुद्गल तथा रात्रि और अपर सन्ध्या यायियों के लिए प्रतिपुद्गल हैं ॥31॥

रोहिणीं च ग्रहो हन्यात् द्वौ वाऽथ बहवोऽपि वा ।
अपग्रहं तदा विन्द्याद् भयं वाऽपि न संशय: ॥32॥

यदि रोहिणी नक्षत्र को एक ग्रह, दो ग्रह या बहुत ग्रह हनन करें— घात करें तो अपग्रह होता है और भय एवं आतंक भी व्याप्त रहता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥32॥

शुक्र: शंखनिकाश: स्यादीषत्पीतो बृहस्पति: ।
प्रवालसदृशो भौमो बुधस्त्वरुणसन्निभ: ॥33॥

---

1. ये वर्णा मु० ।

शनैश्चरश्च नीलाभ: सोम: पाण्डुर उच्यते।
बहुवर्णो रवि: केतू राहुर्नक्षत्र एव च ॥34॥

शुक्र शंख वर्ण के समान, बृहस्पति कुछ पीला, मंगल प्रवाल के समान और बुध तरुण के समान, शनैश्चर नील, चन्द्रमा पाण्डु, रवि-केतू अनेक वर्ण एवं राहु नक्षत्र के समान वर्ण वाला होता है ॥33-34॥

उदकस्य प्रभु: शुक्र: सस्यस्य च बृहस्पति:।
लोहित: सुख-दु:खस्य केतु: पुष्प-फलस्य च ॥35॥
बुधस्तु बल-वित्तानां सर्वस्य च रवि: स्मृत:।
उदकानां[1] च वल्लीनां शशांक: प्रभुरुच्यते ॥36॥

जल का स्वामी शुक्र, धान्य का स्वामी बृहस्पति, सुख-दुःख का स्वामी मंगल, फल-पुष्प का स्वामी केतु, बल-धन का स्वामी बुध, सभी वस्तुओं का स्वामी सूर्य एवं लताओं और वृक्षों का स्वामी चन्द्रमा है ॥35-36॥

धान्यस्यार्थं तु नक्षत्रं तथाऽऽर: शनि: सर्वश:।
प्रभुर्वा[2] सुख-दु:खस्य सर्वं ह्येते त्रिदण्डवत् ॥37॥

धान्य के लिए जो नक्षत्र होता है, उसका सभी तरह से स्वामी राहु है, और सुख-दुःख का स्वामी शनि है। ये ग्रह त्रिदण्डवत् होते हैं ॥37॥

वर्णानां संकरो विन्द्याद् द्विजातीनां भयंकरम्।
स्वपक्षे परपक्षे च चातुर्वर्ण्यं विभावयेत्[3] ॥38॥

जब ग्रहों का युद्ध होता है तो वर्णों का सम्मिश्रण, द्विजातियों को भय तथा स्वपक्ष और परपक्ष में चातुर्वर्ण्य दिखलायी पड़ता है ॥38॥

वात: श्लेष्मा गुरुर्ज्ञेयश्चन्द्र: शुक्रस्तथैव च।
[4]वातिकौ केतु-सौरी तु पैत्तिको भौम उच्यते ॥39॥

चन्द्र, शुक्र और गुरु वात और कफ प्रकृति वाले हैं, केतु और शनि भी वात प्रकृति वाले हैं तथा मंगल पित्त प्रकृति वाला है ॥39॥

पित्तश्लेष्मान्तिक: सूर्यो नक्षत्रं देवता भवेत्।
राहुस्तु भौमे विज्ञेयौ प्रकृतौ च शुभाशुभौ ॥40॥

सूर्य पित्त श्लेष्मा—पित्त-कफ प्रकृति वाला है। यह नक्षत्रों का देवता होता है। राहु और मंगल शुभाशुभ प्रकृति वाले हैं ॥40॥

---

1. दोषाग्नीनां मु०। 2. शनिश्च मु०। 3. विभावयेत् मु०। 4. वातिकौ बुध - मु०।

आर्यस्तमादितं पुष्यो धनिष्ठा पौष्णवी च भृत्[1]।
केतु-सूर्यौ तु वैशाखौ राहुर्वरुणसम्भव: ॥41॥

उत्तरा फाल्गुनी, पुनर्वसु, पुष्य, धनिष्ठा, हस्त ये चन्द्रादि ग्रहों के नक्षत्र हैं, केतु और सूर्य के विशाखा नक्षत्र और राहु का शतभिषा नक्षत्र है ॥41॥

शुक्र: सोमश्च स्त्रीसंज्ञौ शेषास्तु पुरुषा ग्रहा:।
नक्षत्राणि विजानीयान्नामभिर्दैवतैस्तथा ॥42॥

शुक्र और चन्द्रमा स्त्री संज्ञक हैं, शेष ग्रह पुरुष संज्ञक हैं। नक्षत्रों का लिंग उनके स्वामियों के लिंग के अनुसार अवगत करना चाहिए ॥42॥

ग्रहयुद्धमिदं सर्वं[2] य: सम्यगवधारयेत्।
स विजानाति निर्ग्रन्थो लोकस्य तु शुभाशुभम् ॥43॥

जो निर्ग्रन्थ भलीभाँति पूर्ण ग्रहयुद्ध को जानता है, वह लोक के शुभाशुभत्व को जानता है ॥43॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते ग्रहयुद्धो नाम चतुर्विंशतितमोऽध्याय: ॥24॥

विवेचन—ग्रहयुद्ध के चार भेद हैं—भेद, उल्लेख, अंशुमर्दन और अपसव्य। भेदयुद्ध में वर्षा का नाश, सुहृद् और कुलीनों में भेद होता है। उल्लेख युद्ध में शस्त्रभय, मन्त्रिविरोध और दुर्भिक्ष होता है। अंशुमर्दन युद्ध में राजाओं में युद्ध, शस्त्र, रोग, भूख से पीड़ा और अवमर्दन होता है तथा अपसव्य युद्ध में राजा गण युद्ध करते हैं। सूर्य दोपहर में आक्रन्द होता है, पूर्वाह्न में पौर ग्रह तथा अपराह्न में यायी ग्रह आक्रन्द संज्ञक होते हैं। बुध, गुरु और शनि ये सदा पौर हैं। चन्द्रमा नित्य आक्रन्द है। केतु, मंगल, राहु और शुक्र यायी हैं। इन ग्रहों के हत होने से आक्रन्द, यायी और पौर क्रमानुसार नाश को प्राप्त होते हैं, जयी होने पर स्ववर्ग को जय प्राप्त होती है। पौरग्रह से पौरग्रह के टकराने पर पुरवासी गण और पौर राजाओं का नाश होता है। इस प्रकार यायी और आक्रन्द ग्रह या पौर और यायी ग्रह परस्पर हत होने पर अपने-अपने अधिकारियों को कष्ट कर देते हैं। जो ग्रह दक्षिण दिशा में रूखा, कम्पायमान, टेढ़ा, क्षुद्र और किसी ग्रह से ढँका हुआ, विकराल, प्रभाहीन और विवर्ण दिखलायी पड़ता है, वह पराजित कहलाता है। इससे विपरीत लक्षण वाला ग्रह जयी कहलाता है। वर्षा काल में सूर्य के आगे मंगल के रहने से अनावृष्टि, शुक्र के आगे रहने से वर्षा, गुरु के आगे रहने से गर्मी और बुध के आगे रहने से वायु चलती है। सूर्य-मंगल, शनि-मंगल और गुरु-मंगल

---

1. च भृत् मु०। 2. कृत्स्नं मु०।

के संयोग से अवर्षा होती है। बुध-शुक्र और गुरु-बुध का योग अवश्य वर्षा करता है। क्रूर ग्रहों से अदृष्ट और अयुत बुध और शुक्र एक राशि में स्थित हों और यदि उन्हें बृहस्पति भी देखता हो तो वे अधिक महावृष्टि के देने वाले होते हैं। क्रूर ग्रहों से अदृष्ट और अयुत (भिन्न) बुध और बृहस्पति एक राशि में स्थित हों और यदि शुक्र उन्हें देखता हो तो वे अधिक अच्छी वर्षा करते हैं। क्रूर ग्रहों से अदृष्ट और अयुत (भिन्न) गुरु और शुक्र एकत्र स्थित हों और यदि बुध उन्हें देखता हो तो वे उत्तम वर्षा करते हैं। शुक्र और चन्द्रमा या मंगल और चन्द्रमा यदि एक राशि पर स्थित हों तो सर्वत्र वर्षा होती है और फसल भी उत्तम होती है। सूर्य के सहित बृहस्पति यदि एक राशि पर स्थित हो तो जब तक वह अस्त न हो जाय, तब तक वर्षा का योग समझना चाहिए। शनि और मंगल का एक राशि पर होना महावृष्टि का कारण होता है। इस योग के होने से दो महीने तक वर्षा होती है, पश्चात् वर्षा में रुकावट उत्पन्न होती है। सौम्य ग्रहों से अदृष्ट और अयुत शनि और मंगल यदि एक स्थान पर स्थित हों तो वायु का प्रकोप और अग्नि का भय होता है।

एक राशि या एक ही नक्षत्र पर राहु और मंगल आ जायें तो दोनों वर्षा का नाश करते हैं। गुरु और शुक्र यदि एकत्र स्थित हों तो असमय में वर्षा होती है। सूर्य से आगे शुक्र या बुध जायें तो वर्षा काल में निरन्तर वर्षा होती रहती है। मंगल के आगे सूर्य की गति हो तो वह वर्षा को नहीं रोकता है। किन्तु सूर्य के आगे मंगल हो तो वर्षा को तत्काल रोक देता है। बृहस्पति के आगे शुक्र हो तो वह अवश्य वृष्टि करता है; किन्तु शुक्र के आगे बृहस्पति हो तो वर्षा का अवरोध होता है। बुध के आगे शुक्र के होने से महावृष्टि और शुक्र के आगे बुध के होने पर अल्प वृष्टि होती है। यदि दोनों के मध्य में सूर्य या अन्य ग्रह आ जायें तो वर्षा नहीं होती। अनिश्चित मार्ग में गमन करता हुआ बुध यदि शुक्र को छोड़ दे तो सात दिन या पाँच दिन तक लगातार वर्षा होती है। उदय या अस्त होता हुआ बुध यदि शुक्र से आगे रहे तो शीघ्र ही वर्षा पैदा करता है। जल नाड़ियों में आने पर यह अधिक फल देता है। बुध, बृहस्पति और शुक्र ये तीनों ग्रह एक ही राशि पर स्थित हों और क्रूर ग्रहों से अदृष्ट और अयुत हों तो इन्हें महावृष्टि करने वाले समझने चाहिए। शनि, मंगल और शुक्र तीनों एक राशि पर स्थित हों और गुरु इन्हें देखता हो तो निस्सन्देह वर्षा होती है। सूर्य, शुक्र और बुध इनके एक राशि पर होने से अल्पवृष्टि होती है। सूर्य, शुक्र और बृहस्पति के एक राशि पर रहने से अतिवृष्टि होती है। शनि, शुक्र और मंगल के एकत्र होते हुए गुरु से देखे जाने पर साधारण वर्षा होती है। शनि, राहु और मंगल ये तीनों एक राशि पर स्थित हों तो ओले के साथ वर्षा होती है। सभी ग्रह एक ही राशि पर आ जायें तो दुर्भिक्ष, अवर्षा और रोग द्वारा कष्ट होता है। शुक्र, मंगल, शनि और बृहस्पति ये ग्रह

एक स्थान पर स्थित हों, तो वर्षा रोक देते हैं। उक्त ग्रह स्थिति में देश में अन्न का भी अभाव हो जाता है। धान्य भाव महँगा बिकता है। रूई, कपास, जूट, सन आदि का भाव भी तेज होता है। बिहार में भूकम्प होने की स्थिति आती है। जापान और बर्मा में भूकम्प होते हैं। मंगल, बुध, गुरु और शुक्र के एक स्थान पर स्थित होने से रजो वृष्टि होती है। दुर्भिक्ष; अन्न, घी, गुड़, चीनी, सोना, चाँदी, माणिक्य, मूँगा आदि पदार्थों का भाव भी तेज ही होता है। नगर और गाँवों में अशान्ति दिखलायी पड़ती है। बिहार, आसाम, उड़ीसा, बांगलादेश, प० बंगाल आदि पूर्वी क्षेत्रों में साधारण वर्षा और साधारण ही फसल होती है। पंजाब, दिल्ली, अजमेर, राजस्थान और हिमालय प्रदेश की सरकारों के मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन होता है। इटली ईरान, अरब, मिस्र इत्यादि मुस्लिम राष्ट्रों में भी खाद्यान्न की कमी होती है। उक्त राष्ट्रों की राजनीतिक और आर्थिक स्थिति बिगड़ती जाती है। मंगल, शुक्र, शनि और राहु ये ग्रह यदि एक राशि पर आ जायें तो मेघ कभी वर्षा नहीं करते; दुर्भिक्ष होता है, धान्य और शस्य दोनों ही प्रकार के अनाजों की कमी होती है तथा इनके संग्रह से अनेक प्रकार का लाभ होता है। मंगल, बृहस्पति, शुक्र और शनि ये ग्रह एक साथ बैठे हों तो वर्षा का अभाव होता है। इन ग्रहों के युद्ध में व्यापारियों को भी कष्ट होता है। कागज, कपड़ा, रेशम, चीनी के व्यापार में घाटा होता है। मोटे अनाजों के भाव बहुत ऊँचे बढ़ते हैं, जिससे खरीदने वालों की संख्या घट जाती है; फिर भी देश में शान्ति रहती है। सूर्य, गुरु, शनि, शुक्र और राहु इन ग्रहों के एक साथ रहने से मेघ वर्षा नहीं करते हैं और सब धान्यों का भाव महँगा रहता है। चार या पाँच ग्रहों के एक साथ रहने से अधिक जल की वर्षा या मही रुधिर प्लावित हो जाती है। बुध, गुरु, शुक्र, सूर्य और चन्द्रमा इन ग्रहों के एक स्थान पर होने से नैर्ऋत्य दिशा में जनता का विनाश होता है। दुर्भिक्ष, अन्न और मवेशी का अभाव होता है। उक्त ग्रह स्थिति बर्मा, लंका, दक्षिण भारत, मद्रास, महाराष्ट्र इन प्रदेशों के लिए अत्यन्त अशुभकारक है। उक्त प्रदेशों में अन्न का अभाव बड़े उग्र और व्यापक रूप में होता है।

पूर्वीय प्रदेशों—बिहार, बंगाल, आसाम में वर्षा की कमी तो नहीं रहती किन्तु फसल अच्छी नहीं होती है। उक्त प्रदेशों में राजनीतिक उलट-फेर भी होते हैं। हैजा, प्लेग जैसी संक्रामक बीमारियाँ फैलती हैं। घरेलू युद्ध देश के प्रत्येक भाग में आरम्भ हो जाते हैं। पंजाब की स्थिति बिगड़ जाती है, जिससे वहाँ शान्ति स्थापित होने में कठिनाई रहती है। विदेशों के साथ भारत का सम्पर्क बढ़ता है। नये-नये व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं। देश के व्यापारियों की स्थिति अच्छी नहीं रहती है। छोटे-छोटे दुकानदारों को लाभ होता है। बड़े-बड़े व्यापारियों की स्थिति बहुत खराब हो जाती है। खनिज पदार्थों की उत्पत्ति बढ़ती है। कला-कौशल का विकास होता है। देश के कलाकारों को सम्मान प्राप्त होता है। साहित्य

की उन्नति होती है। नवीन साहित्य के सृजन के लिए यह उत्तम अवसर है। यदि परम्परानुसार ग्रहों के आगे सौम्य ग्रह स्थित हो तो वर्षा अच्छी होती है, साथ ही देश का आर्थिक विकास होता है और देश के नये मन्त्रिमण्डल का निर्वाचन भी होता है। धारा सभाओं और विधान सभा के सदस्यों में मतभेद होता है। विश्व में नवीन वस्तुओं का अन्वेषण होता है, जिससे देश की सांस्कृतिक परम्परा का पूरा विकास होता है। नृत्य, गान और इसी प्रकार के अन्य कलाकारों को साधारण सम्मान प्राप्त होता है। यदि शुक्र, शनि, मंगल और बुध ये ग्रह बृहस्पति से युत या दृष्ट हों तो सुभिक्ष होता है, वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। दक्षिण भारत में फसल उत्तम उपजती है। सुपाड़ी, नारियल, चावल, एवं गुड़ का भाव तेज होता है। जब क्रूर ग्रह आपस में युद्ध करते हैं तो जन-साधारण में भय, आतंक और हिंसा का प्रभाव अंकित हो जाता है। शुभ ग्रहों का युद्ध शुभ फल देता है।

पंचविंशतितमोऽध्यायः

नक्षत्रं ग्रहसम्पत्त्या कृत्स्नत्स्यार्घं शुभाशुभम्।
तस्मात् कुर्यात् सदोत्थाय नक्षत्रग्रहदर्शनम् ॥1॥

समस्त तेजी-मन्दी नक्षत्र और ग्रहों के शुभाशुभ पर निर्भर करती है, अतः सर्वदा प्रातः उठकर नक्षत्रों और ग्रहों का दर्शन करना चाहिए ॥1॥

सर्वे यदुत्तरे काष्ठे ग्रहाः स्युः स्निग्धवर्चसः।
तदा वस्त्रं च न ग्राह्यं सुसमासाम्यमर्घताम् ॥2॥

यदि स्निग्ध, तेजस्वी ग्रह उत्तर दिशा में हों तो वस्त्र नहीं लेना चाहिए; क्योंकि वस्त्रों के मूल्य में समता रहती है; मूल्य में घटा-बढ़ी नहीं होती ॥2॥

क्षीरं क्षौद्रं यवाः कंगुरुदाराः सस्यमेव च।
दौर्भाग्यं चाधिगच्छन्ति नेवान्निचया यद्बुधः ॥3॥

दूध, मधु, जौ, कंगुर, धान्य आदि पदार्थ बुध की स्थिति के अनुसार तेज और

मन्द होते हैं। अर्थात् उक्त पदार्थों की स्थिति बुध पर आश्रित है ।।3।।

षष्टिकानां विरागाणां द्रव्याणां[1] पाण्डुरस्य[2] च ।
सन-कोद्रव-कंगूनां नीलाभानां शनैश्चरः ।।4।।

साठिका चावल, श्वेतरंग से भिन्न अन्य रंग के पदार्थ, सन, कोद्रव, कंगून और समस्त नील पदार्थ शनैश्चर के प्रतिपुद्गल हैं ।।4।।

यव-गोधूम-व्रीहीणां शुक्लधान्य-मसूरयोः ।
शूलीनां चैव द्रव्याणां शुक्रस्य प्रतिपुद्गलाः ।।5।।

जौ, गेहूँ, चावल, श्वेत रंग के अनाज, मसूर, गूलर आदि पदार्थ शुक्र के प्रतिपुद्गल है ।।5।।

मधु-सर्पिः-तिलानाञ्च[3] क्षीराणां च तथैव च ।
कुसुम्भस्यातसीनां च गर्भाणां च बुधः स्मृतः ।।6।।

मधु, घी, तिल, दूध, पुष्प, केसर, तीसी, गर्भ आदि बुध के प्रतिपुद्गल हैं ।।6।।

कोशधान्य सर्षपाश्च पीतं रक्तं तथाग्निजम्[4] ।
अंगारकं विजानीयात् सर्वेषां प्रतिपुद्गलाः ।।7।।

कोश, धान्य, सर्षप, पीत-रक्त वर्ण के पदार्थ, अग्नि से उत्पन्न पदार्थ मंगल के प्रतिपुद्गल हैं ।।7।।

महाधान्यस्य महतामिक्षूणां शर-वंशयोः ।
गुरूणां मन्दपीतानामथो ज्ञेयो बृहस्पतिः ।।8।।

मोटे धान्य, इक्षु, वंश तथा बड़े-बड़े मन्द पीले पदार्थ बृहस्पति के प्रतिपुद्गल हैं ।।8।।

मुक्तामणि-जलेशानां सूर-सौवीर-सोमिनाम् ।
शृंगिणामुदकानां च सौम्यस्य प्रतिपुद्गलाः ।।9।।

मुक्ता-मणि, जल में उत्पन्न पदार्थ, सोमलता, बेर या अन्य खट्टे पदार्थ, कांजी, शृंगी पदार्थ और समस्त जलीय पदार्थ चन्द्रमा के प्रतिपुद्गल हैं ।।9।।

उद्भिजानां च जन्तूनां कन्द-मूल-फलस्य च ।
उष्णवीर्यविपाकस्य रवेस्तु प्रतिपुद्गलाः ।।10।।

---

1. द्रव्यस्य च मु० । 2. प्रणय मु० । 3. शृगालानां मु० । 4. -तथाग्निजम् मु० ।

पृथ्वी के उत्पन्न हुए पदार्थ, कन्दमूल, फल और उष्ण पदार्थ सूर्य के प्रति पुद्गल हैं। यहाँ प्रतिपुद्गल शब्द का अर्थ उस ग्रह की स्थिति द्वारा उक्त पदार्थों की तेजी-मन्दी जानने का रूप है ॥10॥

नक्षत्रं भार्गवः सोमः शोभेते सर्वशो यथा।
यथा द्वारं तथा विन्द्यात् सर्वयस्तु यथाविधि ॥11॥

किसी भी नक्षत्र में शुक्र और चन्द्र सर्वांग रूप से शोभित हों तो उस नक्षत्र के द्वार, दिशा और स्वरूप आदि के द्वारा वस्तुओं की तेजी-मन्दी कही जाती है ॥11॥

विवर्णा यदि सेवन्ते ग्रहा वै राहुणा समम्।
दक्षिणां दक्षिणे मार्गे वैश्वानरपथं प्रति ॥12॥

गिरिनिम्ने च निम्नेषु नदी-पल्वलवारिषु।
एतेषु वापयेद् बीजं स्थलवर्ज्जं यथा भवेत् ॥13॥

मल्लजा मालवे देशे[1] सौराष्ट्रे सिन्धुसागरे।
एतेष्वपि तथा मन्दं[2] प्रियमन्यत् प्रसूयते ॥14॥

यदि भरणी नक्षत्र में राहु के साथ अन्य ग्रह विकृत वर्ण के होकर स्थित हों तथा दक्षिण मार्ग में वैश्वानर पथ के प्रति गमनशील हों तो स्थल—चौरस भूमि को छोड़कर पर्वत की ऊँची-नीची तलहटी, नदियों के तट एवं पोखरों में बीज बोना चाहिए। काली मिरच मालव देश, गुजरात, समुद्र के तटवर्ती प्रदेशों में मन्दी होती है, इसके अतिरिक्त अन्य वस्तुएँ महँगी होती हैं ॥12-14॥

कृत्तिका-रोहिणीयुक्ता बुध-चन्द्र-शनैश्चराः।
यदा सेवन्ते सहितास्तदा विन्द्यादिदं फलम् ॥15॥

आज्यविकं गुडं तैलं कार्पासो मधु-सर्पिषी।
सुवर्ण-रजते मुद्गाः शालयस्तिलमेव च ॥16॥

स्निग्धे याम्योत्तरे मार्गे पञ्चद्रोणेन शालयः।
दशाढकं पश्चिमे[3] स्यात् दक्षिणे तु षडाढकम् ॥17॥

जब बुध, चन्द्र और शनैश्चर ये तीनों एक साथ कृत्तिका विद्ध रोहिणी का भोग करें तब घृत, गुड़, तैल, कपास, मधु, स्वर्ण, चाँदी, मूँग, शाली चावल, तिल आदि पदार्थ महँगे होते हैं। यदि उक्त ग्रह स्निग्ध दक्षिणोत्तर मार्ग में गमन करते

1. मल्लजा मलयेषु राष्ट्राणां मु०। 2. मुख्य मु०। 3. पश्चिमे मु०।

हों तो धान्य का भाव पाँच द्रोण प्रमाण होता है। पश्चिम में दश आढक और दक्षिण में छ: आढक प्रमाण होता है ॥15-17॥

उत्तरेण तु रोहिण्यां चतुष्कं कुम्भमुच्यते।
दशकं प्रसंगतो विन्द्यात् दक्षिणेन चतुर्दशम् ॥18॥

यदि उत्तर में रोहिणी हो तो चतुष्क कुम्भ कहा जाता है। इससे दश आढक और दक्षिण में होने से चौदह आढक प्रमाण शाली का भाव कहा गया है ॥18॥

नक्षत्रस्य यदा गच्छेद् दक्षिणं शुक्र-चन्द्रमा:।
सुवर्णं रजतं रत्नं कल्याणं प्रियतां मिथ:[1] ॥19॥

जब शुक्र और चन्द्रमा कृत्तिका विद्ध रोहिणी नक्षत्र के दक्षिण में जायें तब स्वर्ण, चाँदी, रत्न और धान्य महँगे होते हैं ॥19॥

धान्यं यत्र प्रियं विन्द्याद्गावो नात्यर्थदोहिन:॥
उत्तरेण यदा यान्ति नैतानि चिनुयात् तदा ॥20॥

जब उक्त ग्रह कृत्तिका विद्ध रोहिणी नक्षत्र के उत्तर में जायें तो धान्य महँगा होता है, गायें दोहने के लिए प्राप्त नहीं होती हैं अर्थात् महँगी हो जाती हैं ॥20॥

उत्तरेण तु पुष्यस्य यदा पुष्यति[2] चन्द्रमा:।
भौमस्य दक्षिणे पार्श्वे मघासु यदि तिष्ठति ॥21॥

मालदा मालं वैदेहा यौधेया: संज्ञनायका:।
सुवर्णं रजतं वस्त्रं मणिर्मुक्ता तथा प्रियम् ॥22॥

जब चन्द्रमा उत्तर में पुष्य नक्षत्र का भोग करता है तथा मघा में रहकर मंगल का दक्षिण में भोग करता है, तब काली मिर्च, नमक, सोना, चाँदी, वस्त्र, मणि, मुक्ता एवं मशाले के पदार्थ महँगे होते हैं ॥21-22॥

चन्द्र: शुक्रो गुरुर्भौमो[3] मघानां यदि दक्षिणे।
वस्त्रं च द्रोणमेघं च निर्दिशेन्नात्र संशय: ॥23॥

चन्द्र, शुक्र, गुरु और मंगल यदि मघा के दक्षिण में हों तो वस्त्र महँगे होते हैं और मेघ द्रोण प्रमाण वर्षा करते हैं, इसमें सन्देह नहीं है ॥23॥

आरुहेद् बालिखिद्वापि[4] चन्द्रश्चैव यथोत्तरम्।
ग्रहैर्युक्तस्तु (वर्धति) तदा कुम्भं तु पञ्चकम् ॥24॥

1. मिथ: । 2. पुष्यति मु० । 3. [illegible] मु० । 4. [illegible] वार्षी [illegible] चन्द्र [illegible] मु० ।

यदि ग्रहयुक्त चन्द्रमा उत्तर दिशा में आरोहण करे या उत्तर का स्पर्श करे तो पाँच कुम्भ प्रमाण जल की वर्षा होती है अर्थात् खूब जल बरसता है ॥24॥

राहुः केतुः शशी शुक्रो भौमश्चोत्तरतो यदा।
सेवन्ते चोत्तरं द्वारं यान्त्यस्तं वा कदाचन ॥25॥

निवृत्तिं चापि कुर्वन्ति भयं देशेषु[1] सर्वशः।
बहुतोयान् समान् विन्द्यात् महाशालींश्च वापयेत् ॥26॥

कार्पासास्तिल-माषाश्च सर्पिश्चात्र प्रियं तथा।
आशु धान्यानि[2] वर्धन्ते योगक्षेमं च हीयते ॥27॥

जब राहु, केतु, चन्द्रमा, शुक्र और मंगल उत्तर से उत्तर द्वार का सेवन करें अथवा अस्त को प्राप्त हों अथवा वक्री हों तो सभी देशों में भय होता है। अधिक जल की वर्षा होती है और चावल भी खूब बोया जाता है। कपास, तिल, उड़द, घी महँगा होता है। वर्षा की अधिकता के कारण बावड़ी—तालाबों का जल शीघ्र ही बढ़ता है, जिससे योग-क्षेम—गुजर-बसर में कमी आती है ॥25-27॥

चन्द्रस्य दक्षिणे पार्श्वे भार्गवो वा विशेषतः।
उत्तरांस्तारकान् प्राप्य तदा विन्द्यादिदं फलम् ॥28॥

महाधान्यानि पुष्पाणि हीयन्ते चामरस्तदा[3]।
कार्पास-तिल-माषाश्च सर्पिश्चैवार्घते तथा ॥29॥

यदि शुक्र चन्द्रमा के दक्षिण भाग में हो अथवा विशेष रूप से उत्तर के नक्षत्रों को प्राप्त हुआ हो तो महाधान्य—गेहूँ, जौ, धान, चना आदि और पुष्पों—केसर, लवंगआदि की कमी होती है अर्थात् उक्त पदार्थ महँगे होते हैं। कपास, तिल, उड़द और घी की वृद्धि होती है, अतः ये पदार्थ सस्ते होते हैं ॥28-29॥

चित्राया दक्षिणं पार्श्वे शिखरी नाम तारका।
तयेन्दुर्यदि दृश्येत तदा बीजं न वापयेत् ॥30॥

चित्रा नक्षत्र के दक्षिण पार्श्व में शिखरी नाम की तारिका है। यदि चन्द्रमा का उदय इस तारिका में दिखलाई पड़े तो बीज नहीं बोना चाहिए ॥30॥

गवाश्वेन हिरण्येन सुवर्ण-मणि-मौक्तिकैः।
महिष्यजादिभिर्वस्त्रैर्धान्यं क्रीत्वा निवापयेत् ॥31॥

चन्द्रमा की उक्त स्थिति में गाय, अश्व, चाँदी, सोना, मणि, मुक्ता, महिष—

1. देवेषु मु०। 2. धान्यानि मु०। 3. चामरस्तथा मु०।

भैंस, अजा—बकरी और वस्त्र आदि से धान्य खरीद कर भी बेचना नहीं चाहिए। तात्पर्य यह है कि चन्द्रमा की उपर्युक्त स्थिति में अन्न उत्पन्न नहीं होता है; अतः सभी वस्तुओं से अनाज खरीद कर उसका संकलन करना चाहिए ॥31॥

चित्रायां तु यदा [1]शुक्रश्चन्द्रो भवति दक्षिणः।
षड्गुणं जायते धान्यं योगक्षेमं च जायते ॥32॥

जब चित्रा नक्षत्र में दक्षिण की ओर शुक्र युक्त चन्द्रमा हो तो छः गुना अनाज उत्पन्न होता है और योगक्षेम—गुजर-बसर अच्छी तरह से होती है ॥32॥

इन्द्राग्निदेवसंयुक्ता यदि सर्वे ग्रहाः कृशाः।
अभ्यन्तरेण मार्गस्थास्तारका यास्तु वाद्यतः[2] ॥33॥

कंगु-दार-तिला मुद्गाश्चणकाः षष्टिकाः शुकाः।
चित्रायोगं न सर्पेत चन्द्रमा उत्तरो भवेत् ॥34॥

संग्राह्यं च तदा धान्यं योगक्षेमं न[3] जायते।
अल्पसारा भवन्त्येते चित्रा वर्षा[4] न संशय ॥35॥

यदि सभी कमजोर ग्रह विशाखा नक्षत्र में युक्त होकर अभ्यन्तर मार्ग से बादल की ओर की ताराओं में स्थित हों और चन्द्रमा उत्तर होकर चित्रा में स्थित हो, तो कंगु, तिल, मूंग, चना, साठी का चावल आदि धान्यों का संग्रह करना चाहिए। उक्त प्रकार के योग में योगक्षेम में—भोजन-छाजन में भी कमी रहती है। वर्षा अल्प होती है, इसमें सन्देह नहीं है ॥33-35॥

विशाखामध्यगः शुक्रस्तोयदो धान्यवर्धनः।
समर्घं यदि विज्ञेयं दशद्रोणकयं वदेत् ॥36॥

यदि विशाखा नक्षत्र के मध्य में शुक्र का अस्त हो तो धान्य की उपज अच्छी होती है, अनाज का भाव सम रहता है। दश द्रोण प्रमाण खरीदा जाता है ॥36॥

यायिनौ चन्द्र-शुक्रौ तु दक्षिणामुत्तरो तदा।
तारा-विशाखयोर्घातस्तदाऽर्घन्ति चतुष्पदाः ॥37॥

जब यायी चन्द्र और शुक्र दक्षिण और उत्तर में हों और विशाखा की ताराओं का घात हुआ हो तो चौपायों की वृद्धि होती है ॥37॥

दक्षिणेनानुराधायां यदा च व्रजते शशी।
अप्रभश्च प्रहीणश्च वस्त्रं द्रोणाय कल्पयेत् ॥38॥

---

1. युक्तः मु०। 2. वाह्यतः मु०। 3. च मु०। 4. वर्गा मु०।

निष्प्रभ और हीन चन्द्रमा दक्षिण मार्ग से अनुराधा में गमन करता है तो वस्त्र महँगे होते हैं ॥38॥

ज्येष्ठा-मूलौ यदा चन्द्रो दक्षिणं व्रजतेऽप्रभः।
तदा सस्यं च वस्त्रं च अर्थश्चापि[1] विनश्यति ॥39॥

प्रजानामनयो घोरस्तदा जायन्ति[2] तामस।
अन्नाभावस्य वस्त्रस्य तेन क्षीयन्ति तां प्रजाम् ॥40॥

जब प्रभा रहित चन्द्रमा दक्षिण में ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र में आता है, तब धान्य, वस्त्र और अर्थ का विनाश होता है। उक्त प्रकार की चन्द्रमा की स्थिति में प्रजा में अन्न और वस्त्र के लिए हाहाकार हो जाता है तथा वस्त्र खरीदने में प्रजा की हानि भी होती है ॥39-40॥

मूलं मन्देव सेवन्ते यदा दक्षिणतः शशी।
प्रजातिः सर्वधान्यानां आढका नु तदा भवेत् ॥41॥

जब चन्द्रमा दक्षिण से मन्द होता हुआ मूल नक्षत्र का सेवन करता है तब सभी प्रकार के धान्यों की उपज खूब होती है और वर्षा आढक प्रमाण होती है ॥41॥

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रा[3] पुष्या-श्लेषा-पुनर्वसून्।
व्रजति दक्षिणश्चन्द्रो दशप्रस्थं तदा भवेत् ॥42॥

जब दक्षिण चन्द्रमा कृत्तिका, रोहिणी, पुष्य, आश्लेषा, पुनर्वसु में गमन करता है, तब दश प्रस्थ प्रमाण धान्य की अधिक बिक्री होती है अर्थात् फसल भी उत्तम होती है ॥42॥

मघां विशाखां च ज्येष्ठाऽनुराधे मूलमेव च।
दक्षिणे व्रजते शुक्रश्चन्द्रे तदाऽऽढकमेव च ॥43॥

शुक्र और चन्द्र के दक्षिण में मघा, विशाखा, ज्येष्ठा, अनुराधा और मूल में गमन करने पर आढ़क प्रमाण धान्य की बिक्री होती है अर्थात् फसल कम होती है ॥43॥

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रां विशाखां च मघां यदा।
दक्षिणेन ग्रहा यान्ति चन्द्रस्त्वाढकविक्रयः ॥44॥

जब ग्रह दक्षिण से कृत्तिका, रोहिणी, चित्रा, विशाखा और मघा नक्षत्र में

1. शर्करार्थ मु०। 2. जायति मु०। 3. चैव मु०।

गमन करते हैं तो आढ़क प्रमाण वस्तुओं की बिक्री होती है ॥44॥

गुरुः शुक्रश्च भौमश्च दक्षिणाः सहिता यदा ।
प्रस्थत्रयं[1] तदा वस्त्रैर्यान्ति मृत्युमुखं प्रजाः ॥45॥

जब गुरु, शुक्र और मंगल दक्षिण में स्थित हों तब धान्य की बिक्री तीन प्रस्थ की होती है और वस्त्र के लिए प्रजा मृत्यु के मुख में जाती है अर्थात् अन्न और वस्त्र का अभाव होता है ॥45॥

उत्तरं भजते मार्गं शुक्रपृष्ठं तु चन्द्रमाः ।
महाधान्यानि वर्धन्ते कृष्णधान्यानि दक्षिणे ॥46॥

जब शुक्र उत्तर मार्ग में आगे हो और चन्द्रमा के पीछे हो तब महाधान्यों की वृद्धि होती है । यदि यही स्थिति दक्षिण मार्ग में हो तो काले रंग के धान्य वृद्धिगत होते हैं ॥46॥

दक्षिणं चन्द्रशृंगं च यदा वृद्धतरं भवेत् ।
महाधान्यं तदा वृद्धिं कृष्णधान्यमथोत्तरम् ॥47॥

यदि चन्द्रमा का शृंग दक्षिण की ओर बढ़ता दिखलायी पड़े तो महाधान्य गेहूँ, चना, जौ, चावल आदि की वृद्धि होती है तथा उत्तर शृंग की वृद्धि होने पर काले रंग के धान्य बढ़ते हैं ॥47॥

कृत्तिकानां मघानां च रोहिणीनां विशाखयोः ।
उत्तरेण महाधान्यं कृष्ण[2]धान्यञ्च दक्षिणे ॥48॥

कृत्तिका, मघा, रोहिणी और विशाखा के उत्तर होने से महाधान्य और दक्षिण होने से कृष्ण धान्य की वृद्धि होती है ॥48॥

यस्य देशस्य नक्षत्रं न पीडयते यदा यदा ।
तं देशं भिक्षवः स्फीताः संश्रयेयुस्तदा तदा ॥49॥

जिन-जिन देशों के नक्षत्र ग्रहों के द्वारा जब-जब पीड़ित --घातित न हों तब-तब भिक्षुओं को उन देशों में प्रसन्न चित्त होकर जाना चाहिए और वहाँ शान्ति-पूर्वक विहार करना चाहिए ॥ 49॥

धान्यं वस्त्रमिति ज्ञेयं तस्यार्थं च शुभाशुभम् ।
ग्रहनक्षत्रान् सम्प्रत्य कथितं भद्रबाहुना ॥50॥

1. प्रस्थकथं तदा वस्त्रैर्यान्ति मु० । 2. धान्यं तु मु० ।

ग्रह और नक्षत्रों के शुभाशुभ योग से धान्य और वस्त्रों के भावों की तेजी-मन्दी को भद्रबाहु स्वामी ने कहा है ॥50॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्ते संग्रहयोगार्घकाण्डो नाम पंचविंशतितमोऽध्यायः ॥25॥

विवेचन—तेजी-मन्दी जानने के अनेक नियम हैं। ग्रहों की स्थिति, उनका मार्गी होना या वक्री होना तथा उनकी ध्रुवाओं पर से तेजी-मन्दी का ज्ञान करना, आदि प्रक्रियाएँ प्रचलित हैं। इस संहिताग्रन्थ में ग्रहों की स्थिति पर से वस्तुओं की तेजी-मन्दी का साधारण विचार किया गया है। बारह महीनों की तिथि, वार, नक्षत्र के सम्बन्ध से भी तेजी-मन्दी का विचार 'वर्ष प्रबोध' नामक ग्रन्थ में विस्तार से किया गया है। यहाँ संक्षेप में कुछ प्रमुख योगों का निरूपण किया जायगा।

द्वादश पूर्णमासियों का विचार—चैत्र की पूर्णमासी को निर्मल आकाश हो तो किसी भी वस्तु से लाभ की सम्भावना नहीं रहती है। यदि इस दिन ग्रहण, भूकम्प, विद्युत्पात, उल्कापात, केतूदय और वृष्टि हो तो धान्य का संग्रह करना चाहिए। गेहूँ, जौ, चना, उड़द, मूँग, सोना, चाँदी आदि पदार्थों में इस पूर्णिमा के सातवें महीने के उपरान्त लाभ होता है। वैशाखी पूर्णिमा को आकाश के स्वच्छ रहने पर सभी वस्तुएँ तीन महीनों तक सस्ती होती हैं। गेहूँ, चना, वस्त्र, सोना आदि का भाव प्रायः सम रहता है। बाजार में अधिक घटा-बढ़ी नहीं होती। यदि इस पूर्णिमा को चन्द्र परिवेष, उल्कापात, विद्युत्पात, भूकम्प, वृष्टि, केतूदय या अन्य किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो धान्य के साथ कपास, वस्त्र, रूई आदि पदार्थ तेज होते हैं। जूट का भाव भी ऊँचा उठता है। गेहूँ, मूँग, उड़द, चना का संग्रह भाद्रपद मास में ही लाभ देता है। सभी प्रकार के अन्नों का संग्रह लाभ देता है। चावल, जौ, अरहर, कांगुनी, कोदो, मक्का आदि अनाजों में दुगुना लाभ होता है। सोने, चाँदी, माणिक्य, मोती इन पदार्थों का मूल्य कुछ नीचे गिर जाता है। वैशाखी पूर्णिमा की मध्यरात्रि में जोर से बिजली चमके और थोड़ी-सी वर्षा होकर बन्द हो जाय तो आगामी माघ मास में गुड़ के व्यापार में अच्छा लाभ होता है। अनाज के संग्रह में भी लाभ होता है। इस पूर्णिमा के प्रातःकाल सूर्योदय के समय बादल दिखलायी पड़ें तथा आकाश में अन्धकार दिखलायी पड़े तो अगहन महीने में घी और अनाज में अच्छा लाभ होता है। यों तो सभी महीनों में उक्त पदार्थों में लाभ होता है, किन्तु घी, अनाज और गुड़-चीनी में अच्छा लाभ होता है। वैशाखी पूर्णिमा को स्वाति नक्षत्र का चतुर्थ चरण हो तथा शनिवार या रविवार हो तो उस वर्ष व्यापारियों को लाभ के साथ हानि भी होती है। बाजार में अनेक प्रकार की घटा-बढ़ी चलती है। ज्येष्ठ

पूर्णिमा को आकाश स्वच्छ हो, बादलों का अभाव रहे, निर्मल चाँदनी वर्तमान रहे तो सुभिक्ष होता है, साथ ही अनाज में साधारण लाभ होता है। बाजार सन्तुलित रहता है, न अधिक ऊँचा ही जाता है और न नीचा ही। जो व्यक्ति ज्येष्ठ पूर्णिमा की उक्त स्थिति में धान्य, गुड़ का संग्रह करता है, वह भाद्रपद और आश्विन में लाभ उठाता है। गेहूँ, चना, जौ, तिलहन में पौष के महीने में अधिक लाभ होता है। यदि इस पूर्णिमा को दिन में मेघ, वर्षा हो और रात में आकाश स्वच्छ रहे तो व्यापारियों को साधारण लाभ होता है तथा मार्गशीर्ष, माघ और फाल्गुन में वस्तुओं में हानि होने की सम्भावना है। रात में इस तिथि को बिजली गिरे, उल्कापात हो, भूकम्प हो, चन्द्र का परिवेष दिखलाई पड़े, इन्द्रधनुष लाल या काले रंग का दिखलाई पड़े तो अनाज का संग्रह करना चाहिए। इस प्रकार की स्थिति में अनाज में कई गुना लाभ होता है। सोना, चाँदी के मूल्य में साधारण तेजी आती है। ज्येष्ठी पूर्णिमा को मध्य रात्रि में चन्द्र परिवेष उदास-सा दिखलाई पड़े और स्यार रह-रहकर बोलें तो अन्नसंग्रह की सूचना समझना चाहिए। चारे का भाव भी तेज हो जाता है और प्रत्येक वस्तु में लाभ होता है। घी का भाव कुछ सस्ता होता है तथा तेल की कीमत भी सस्ती होती है। अगहन और पौष मास में सभी पदार्थों में लाभ होता है। फाल्गुन का महीना भी लाभ के लिए उत्तम है। यदि ज्येष्ठी पूर्णिमा को चन्द्रोदय या चन्द्रास्त के समय उल्कापात हो और आकाश में अनेक रंग-बिरंगी ताराएँ चमकती हुई भूमि पर गिरें तो सभी प्रकार के अनाजों में तीन महीने के उपरान्त लाभ होता है। ताँबा, पीतल, काँसा आदि धातुओं में और मसाले में कुछ घाटा भी होता है।

आषाढ़ी पूर्णिमा को आकाश निर्मल और उज्ज्वल चाँदनी दिखलायी पड़े तो सभी प्रकार के अनाज पाँच महीने के भीतर तेज होते हैं। कार्तिक महीने में ही अनाज में लाभ होना प्रारम्भ हो जाता है। सोने का भाव माघ के महीने में महँगा होता है। सट्टे के व्यापारियों को साधारण लाभ होता है। सूत, कपड़ा और जूट के व्यापार में लाभ होता है; किन्तु इन वस्तुओं का व्यापार अस्थिर रहता है, जिससे हानि होने की भी सम्भावना रहती है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमा को मध्य रात्रि के पश्चात् आकाश लगातार निर्मल रहे तथा मध्य रात्रि के पहले आकाश मेघाच्छन्न रहे तो चैती फसल के अनाज में लाभ होता है। अगहनी और भदई फसल के अनाज में लाभ नहीं होता। साधारणतया वस्तुओं के भाव ऊँचे आते हैं। घी, गुड़, तेल, चाँदी, बारदाना, गुवार, मटर आदि वस्तुओं का रुख भी तेजी की ओर रहता है। शेयर के बाजार में भी हीनाधिक—घटा-बढ़ी होती है। लोहा, रबर एवं उन पदार्थों से बनी वस्तुओं के व्यापार में लाभ होने की सम्भावना अधिक रहती है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमा को दिन भर वर्षा हो और रात में चाँदनी न निकले, बूँदा-बूँदी होती हो तो अनाज में लाभ होने की सम्भावना नहीं

है। केवल सोना, चाँदी और गुड़ के व्यापार में अच्छा लाभ होता है। गुड़, चीनी में कई गुना लाभ होता है। यदि इसी पूर्णिमा को बुध वक्री हुआ हो तो छः महीने तक सभी पदार्थों में तेजी रहती है। जो पदार्थ विदेशों से आते हैं, उनका भाव अधिक तेज होता है। स्थानीय उत्पन्न पदार्थों का भाव अधिक तेज होता है। श्रावणी पूर्णिमा को आकाश निर्मल हो तो सभी वस्तुओं में अच्छा लाभ होता है। यदि इस दिन स्वच्छ चाँदनी आकाश में व्याप्त दिखलाई पड़े तो नाना प्रकार के रोग फैलते हैं तथा लाल रंग की सभी वस्तुओं में तेजी आती है। गेहूँ और चावल की कमी रहती है। जिस स्थान पर श्रावणी के दिन चन्द्रमा स्वच्छ तथा काले छेदवाला दिखलाई पड़े, उस स्थान में दुर्भिक्ष के साथ खाद्यान्न की बड़ी भारी कमी हो जाती है, जिससे सभी व्यक्तियों को कष्ट होता है। लोहा, चाँदी, नीलम आदि बहुमूल्य पदार्थों का भाव भी तेज होता है। भाद्रपद मास की पूर्णिमा निर्मल होने पर धान्य का संग्रह नहीं करना चाहिए। यदि यह पूर्णिमा चन्द्रोदय से लेकर चन्द्रास्त तक निर्मल रहे तो धान्य में लाभ नहीं होता है तथा खाद्यान्नों की कमी भी नहीं रहती है। सोना, चाँदी, शेयर, चीनी, गुड़, घी, किराना, वस्त्र, जूट, कपास आदि पदार्थ समर्घ रहते हैं। इन पदार्थों के भावों में अधिक ऊँच-नीच नहीं होती है। घटा-बढ़ी का कारण शनि, शुक्र और मंगल हैं। यदि इस पूर्णिमा के नक्षत्र को इन तीनों ग्रहों द्वारा वेधा जाता हो, या दो ग्रहों द्वारा वेधा जाता हो तो सभी पदार्थ महँगे होते हैं। और तो और मिट्टी का भाव भी महँगा होता है। जिन पदार्थों की उत्पत्ति मशीनों के द्वारा होती है, उन पदार्थों में कार्तिक मास में महँगाई होना आरम्भ होता है। आश्विन पूर्णिमा के दिन आकाश स्वच्छ, निर्मल हो तो धान्य का संग्रह करना अनुचित है; क्योंकि वस्तुओं में लाभ होने की सम्भावना ही नहीं होती है। आकाश में मेघ आच्छादित हों तो अवश्य संग्रह करना चाहिए; क्योंकि इस खरीद में चैत्र के महीने में लाभ होता है।

कार्तिक पूर्णिमा को मेघाच्छन्न होने पर अनाज में लाभ होता है। चीनी, गुड़ और घी में हानि होती है। यदि यह पूर्णिमा निर्मल हो तो सामान्य तथा सभी वस्तुओं का भाव स्थिर रहता है। व्यापारियों को न अधिक लाभ ही होता है और न अधिक घाटा ही। मार्गशीर्ष और पौष की पूर्णिमा का फलादेश भी उपर्युक्त कार्तिक पूर्णिमा के तुल्य है। माघी पूर्णिमा को बादल हों तो धान्य खरीदने से सातवें महीने में लाभ होता है और फाल्गुनी पूर्णिमा को बादल हों, उल्कापात या विद्युत्पात हो तो धान्य में सातवें महीने में अच्छा लाभ होता है। घी, चीनी, गुड़, कपास, रुई, जूट, सन और पाट के व्यापार में लाभ होता है। माघी और फाल्गुनी इन दोनों पूर्णिमाओं के स्वच्छ होने पर सोने के व्यापार में लाभ होता है।

भौम ग्रह की स्थिति के अनुसार तेजी-मन्दी का विचार—जब मंगल मार्गी होता है, तब रुई मन्दी होती है। मेष राशि का मंगल मार्गी हो तो मवेशी सस्ते होते हैं। वृष का मंगल मार्गी हो तो रुई तेज होकर मन्दी होती है तथा चाँदी में घटा-बढ़ी होती है। मिथुन और कर्क राशि के मार्गी मंगल का फल तेजी-मन्दी के लिए नहीं है। सिंह का मंगल मार्गी होने पर एक मास तक अलसी और गेहूँ में तेजी रहती है। कन्या का मंगल मार्गी हो तो रुई, अलसी, गेहूँ, तेल, तिलहन आदि पदार्थ तेज होकर मन्दे होते हैं। तुला का मंगल मार्गी होने पर गुजरात और कच्छ में धान्य भाव को महँगा करता है; वृश्चिक का मंगल मार्गी होने पर चौपायों में लाभ करता है। धनु का मंगल मार्गी होने पर धान्य सस्ता करता है। मकर का मंगल मार्गी हो तो पंजाब तथा बंगाल में धान्य का भाव तेज होता है। कुम्भ का मंगल मार्गी होने पर सभी प्रकार के धान्य सस्ते होते हैं और मीन के मंगल में भी धान्य का भाव सस्ता ही रहता है। मेष और वृश्चिक के बीच राशियों में मंगल के रहने पर दो मास तक धान्य भाव तेज रहता है। जिस महीने में सभी ग्रह वक्री हो जायें, उस मास में अधिक महँगाई होती है। मीन में मंगल के वक्री होने पर धान्य और घी तेज; कुम्भ में वक्री होने पर धान्य सस्ते और घी, तेल आदि तेज; मकर में मंगल के वक्री होने से लोहा, मशीनरी, विद्युद्यन्त्र, गेहूँ, अलसी आदि पदार्थ तेज होते हैं। कर्क राशि में मंगल के वक्री होने से गेहूँ और अलसी में घटा-बढ़ी होती रहती है। जिस राशि में मंगल वक्री होता है, उस राशि के धान्यादि अवश्य तेज होते हैं। माघ अथवा फाल्गुन में कृष्ण पक्ष की 1, 2, 3 तिथि को मंगल के वक्री होने पर अन्न का संग्रह करना चाहिए। इस संग्रह में 15 दिनों के बाद ही चौगुना लाभ हो जाता है। जिस मास में पूर्णिमा के दिन वर्षा होती है, उस मास में गेहूँ, घी और धान्य तेज होते हैं।

बुध ग्रह की स्थिति से तेजी-मन्दी विचार—मेष राशि में बुध के रहने से सोना महँगा होता है। 17 दिन में गाय, बैल आदि पशुओं की हानि होती है। मोती, जवाहरात भी तेज होते हैं। वृष राशि के बुध में सभी वस्तुओं में साधारण घटा-बढ़ी; मिथुन राशि के बुध में सभी प्रकार के अनाज सस्ते; कर्क के बुध में अफीम का भाव तेज होता है। सिंह राशि के बुध में धान्य का भाव सम रहता है, खट्टे पदार्थ, देवदारु तेज होते हैं और 18 दिन में सूत, वस्त्र, रेशम के रूमाल, साधारण लकड़ी का भाव तेज होता है। कन्या राशि में बुध के रहने से छः महीने तक सोना, चाँदी तेज होते हैं, पश्चात् मन्दे हो जाते हैं। तुला राशि के बुध में धान्य महँगे, वृश्चिक राशि के बुध में चौपाये और अफीम महँगी, धनु के बुध में अफीम महँगी, मकर के बुध में समभाव, कुम्भ के बुध में धान्य में घटा-बढ़ी और मीन के बुध में रुई, अलसी मेथी, लौंग भी तेज होती है। फाल्गुन और आषाढ़ महीनों में बुध का उदय होने से धान्य, घी और लाल पदार्थ महँगे होते हैं। पूर्व में

बुधोदय होने पर 25 दिन के बाद रूई में 10 प्रतिशत तेजी आती है और पश्चिम में बुधोदय होने पर रूई, कपास, सूत आदि में सस्ती आती है। मार्गशीर्ष में बुधोदय हो तो रूई तेज होती है। पूर्व दिशा में बुध का अस्त होने से 33 दिनों में धान्य, घृतादि मन्दे होते हैं किन्तु रूई में 15 प्रतिशत की तेजी आती है। पश्चिम में बुध के अस्त होने से 15 दिन में रूई 10 प्रतिशत तक सस्ती होती है। मेष राशि से लेकर सिंह राशि तक बुध के मार्गी होने से कपड़ा, चावल, हाथी, घोड़ा आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। कन्या और तुला में बुध के मार्गी होने से चन्दन, गुड़, घृत, चीनी, अलसी आदि पदार्थ महँगे होते हैं। वृश्चिक में बुध के मार्गी होने से एरण्ड, बिनौला और मूँगफली तेज हो जायगी। कुम्भ और मीन में बुध के मार्गी होने से सोना, सुपारी, सरसों, सोंठ, लाख, कपड़ा, गुड़, खाँड़, तेल और मूँगफली आदि पदार्थ तेज होते हैं।

गुरु की स्थिति का फलादेश—वृष राशि में गुरु के रहने से घी और धान्य का भाव अत्यन्त तेज होता है। मिथुन राशि में गुरु के रहने से रूई, तांबा, चाँदी, नारियल, तेल, घृत, अफीम पदार्थ पहले तेज, पश्चात् मन्दे होते हैं। कर्क राशि में गुरु के रहने से सभी पदार्थ महँगे होते हैं। सिंह में बृहस्पति के रहने से गेहूँ, घी तेज और कन्या में रहने से ज्वार, मूँग, मोठ, चावल, घृत, तैल, सिंघाड़ा छः महीने के बाद तेज, रूई तीन-चार महीने में तेज तथा चाँदी मन्दी होती है। वृश्चिक राशि के गुरु में सभी वस्तुएँ तेज होती हैं। धनु राशि के गुरु में गेहूँ, चावल, जौ आदि अन्न महँगे; तैल, गुड़, मद्य सस्ते होते हैं। मकर राशि में गुरु के रहने से तीन महीने महँगी पश्चात् मन्दी आती है। मीन राशि के गुरु में सभी वस्तुएँ तेज होती हैं। गुरु के अस्त होने के 31 दिन बाद रूई में 10-20 रुपये की मन्दी आती है। फाल्गुन मास में गुरु अस्त हो तो धान्य तेज और रूई में 10-20 रुपये की मन्दी आती है। गुरु के वक्री होने पर सुभिक्ष, धान्य भाव सस्ता, धातु, रूई, केसर, कपूर आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। गुरु के मार्गी होने से चाँदी, सरसों, रूई, चावल, घी में निरन्तर घटा-बढ़ी होती रहती है।

शुक्र की स्थिति का फलादेश—मेष के शुक्र में सभी धान्य महँगे, वृष के शुक्र में अनाज महँगा, रूई मन्दी और अफीम तेज; मिथुन के शुक्र में रूई मन्दी, अफीम तेज; कर्क के शुक्र में सभी वस्तुएँ महँगी, रूई का भाव विशेष तेज; सिंह के शुक्र में लाल रंग के पदार्थ महँगे, कन्या में सभी धान्य महँगे, तुला के शुक्र में अफीम तेज; वृश्चिक के शुक्र में अनाज सस्ता; धनु के शुक्र में धान्य महँगे, मकर के शुक्र में 20 दिन में सभी अन्न महँगे, कुम्भ एवं मीन के शुक्र में अनाज सस्ते होते हैं। सिंह का शुक्र, तुला का मंगल, कर्क का गुरु जब आता है, अब अन्न महँगा होता है।

शुक्र-उदय के दिन नक्षत्रानुसार फल

अश्विनी में शुक्र के उदय होने पर जौ, तिल, उड़द का भाव तेज होता है। भरणी में शुक्र का उदय होने से तृण, धान्य, तिल, उड़द, चावल, गेहूँ का भाव तेज होता है। कृत्तिका में शुक्र उदय होने से सभी प्रकार के अन्न सस्ते होते हैं। रोहिणी में समर्घता, मृगशिरा में धान्य महँगे, आर्द्रा में अल्पवृष्टि होने से महँगाई, पुनर्वसु में अन्न का भाव महँगा, पुष्य में धान्य भाव अत्यन्त महँगा तथा आश्लेषा से अनुराधा नक्षत्र तक शुक्र के उदय होने से तृण, अन्न, काष्ठ, चतुष्पाद आदि सभी पदार्थ महँगे होते हैं।

शुक्र और शनि जब दोनों एक राशि पर अस्त हों तो सब अनाज तेज होते हैं। शुक्र वक्री हो तो सभी अनाज मन्दे तथा, घृत, तैल तेज होते हैं। शुक्र के मार्गी होने पर 5 दिनों के उपरान्त सोना, चाँदी, मोती, जवाहरात आदि महँगे होते हैं।

शनि का फलादेश—शनि के उदय के तीन दिन बाद रूई तेज होती है। मूँग मशाले, चावल, गेहूँ के भावों में घटा-बढ़ी होती रहती है। अश्विनी और भरणी नक्षत्र में शनि वक्री हो तो एक वर्ष तक घोड़ा, धान्य और चौपायों का मूल्य बढ़ जाता है। मघा पर वक्री होकर आश्लेषा पर जब गुरु आता है तो गेहूँ, घृत, शाल, प्रवाल तेज होते हैं। ज्येष्ठा पर वक्री होकर अनुराधा पर शनि आता है तो सभी वस्तुएँ तेज होती हैं। उत्तराषाढ़ा पर वक्री होकर पूर्वाषाढ़ा पर आता है तो सभी वस्तुओं में अत्यधिक घटा-बढ़ी होती है। गुरु और शनि दोनों एक साथ वक्री हों और शनि 10/11 राशि का हो तो गेहूँ, तिल, तैल आदि पदार्थ 9 महीने तक तेज होते हैं। शनि के वक्री होने के तीन महीने उपरान्त गेहूँ, चावल, मूँग, ज्वार, धान्य, खजूर, जायफल, घी, हल्दी, नील, धनिया, जीरा, मेंथी, अफीम, घोड़ा आदि पदार्थ तेज और सोना, चाँदी, मणि, माणिक्य आदि पदार्थ मन्दे एवं नारियल, सुपाड़ी, लवंग, तिल, तैल आदि पदार्थों में घटा-बढ़ी होती रहती है। शनि मार्गी हो तो दो माह में तैल, हींग, मिर्च मशाले को तेज और अफीम, रूई, सूत, वस्त्र आदि पदार्थों को मन्दा करता है। यदि शनि कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा नक्षत्र में वक्री हो तो सभी वस्तुएँ महँगी होती हैं।

तेजी-मन्दी के लिए उपयोगी पंचवार का फल—जिस महीने में पाँच रविवार हों उस महीने में राजभय, महामारी, सोना आदि पदार्थों में तेजी होती है। किसी भी महीने में पाँच सोमवार होने से सम्पूर्ण पदार्थ मन्दे, घृत-तैल-धान्य के भाव मन्दे रहते हैं। पाँच मंगलवार होने से अग्नि-भय, वर्षा का निरोध, अफीम मन्दी तथा धान्यभाव घटता-बढ़ता रहता है। पाँच बुधवार होने से घी, गुड़, खाँड़ आदि रस तेज होते हैं; रूई, चाँदी घट-बढ़कर अन्त में तेज होती है। पाँच गुरुवार होने से सोना, पीतल, सूत, कपड़ा, चावल, चीनी आदि पदार्थ मन्दे होते हैं। पाँच

शुक्रवार होने से प्रजा की वृद्धि, धान्य मन्दा, लोग सुखी तथा अन्य भोग्य पदार्थ सस्ते होते हैं, पाँच शनिवार होने से उपद्रव, अग्निभय, नशीले पदार्थों में मन्दी, धान्यभाव अस्थिर और तेल महँगा होता है। लोहे का भाव पाँच शनिवार होने से महँगा तथा अस्त्र-शस्त्र, मशीन के कल-पुर्जों का भाव पाँच मंगल और पाँच गुरु होने से महँगा होता है।

संक्रान्ति के वारों का फल—रविवार को संक्रान्ति का प्रवेश हो तो राज-विग्रह, अनाज महँगा तेल, घी, तिल आदि पदार्थों का संग्रह करने से लाभ होता है। सोमवार को संक्रान्ति का प्रवेश हो तो अनाज महँगा, प्रजा को सुख; घृत, तेल, गुड़, चीनी आदि के संग्रह में तीसरे महीने लाभ होता है। मंगलवार को संक्रान्ति प्रवेश करे तो घी, तेल, धान्य आदि पदार्थ तेज होते हैं। लाल वस्तुओं में अधिक तेजी आदि आती है तथा सभी वस्तुओं के संग्रह में दूसरे महीने में लाभ होता है। बुधवार को संक्रान्ति का प्रवेश होने पर श्वेत वस्त्र, श्वेत रंग के अन्य पदार्थ महँगे तथा नील, लाल और श्याम रंग के पदार्थ दूसरे महीने में लाभप्रद होते हैं। गुरुवार को संक्रान्ति का प्रवेश हो तो प्रजा सुखी, धान्य सस्ते; गुड़, खाँड़ आदि मधुर पदार्थों में दो महीने के उपरान्त लाभ होता है। शुक्रवार को संक्रान्ति प्रविष्ट हो तो सभी वस्तुएँ सस्ती, लोग सुखी-सम्पन्न, अन्न की अत्यधिक उत्पत्ति, पीली वस्तुएँ, श्वेत वस्त्र तेज होते हैं और तेल, गुड़ के संग्रह में चौथे मास में लाभ होता है। शनिवार को संक्रान्ति के प्रविष्ट होने से धान्य तेज, प्रजा दुखी राजविरोध, पशुओं को पीड़ा, अन्न नाश तथा अन्न का भाव भी तेज होता है।

जिस वार के दिन संक्रान्ति का प्रवेश हो, उसी वार को उस मास में अमावस्या हो, तो खर्प्पर योग होता है। यह जीवों का और धान्य का नाश करने वाला होता है। इस योग में अनाजों में घटा-बढ़ी चलती रहती है।

पहली संक्रान्ति शनिवार को प्रविष्ट हुई हो, इससे आगे वाली दूसरी संक्रान्ति रविवार को प्रविष्ट हुई हो और तीसरी आगे वाली मंगलवार को प्रविष्ट हो तो खर्पर योग होता है। यह योग अत्यन्त कष्ट देने वाला है।

मकर संक्रान्ति का फल—पौष महीने में मकर संक्रान्ति रविवार को प्रविष्ट हो तो धान्य का मूल्य दुगुना होता है। शनिवार को हो तो तिगुना, मंगल के दिन प्रविष्ट हो तो चौगुना धान्य का मूल्य होता है। बुध और शुक्रवार को प्रविष्ट होने से समान भाव और गुरु तथा सोमवार को हो तो आधा भाव होता है।

शनि, रवि और मंगल के दिन मकर संक्रान्ति का प्रवेश हो तो अनाज का भाव तेज होता है। यदि मेष और कर्क संक्रान्ति का रवि, मंगल और शनिवार को प्रवेश हो तो अनाज महँगा, ईति-भीति आदि का आतंक रहता है। कार्तिक तथा मार्गशीर्ष की संक्रान्ति के दिन जलवृष्टि हो तो पौष में अनाज सस्ता होता

है तथा फसल मध्यम होती है। कर्क अथवा मकर संक्रान्ति शनि, रवि या मंगल वार की हो तो भूकम्प का योग होता है। प्रथम संक्रान्ति प्रवेश के नक्षत्र में दूसरी संक्रान्ति प्रवेश का नक्षत्र दूसरा या तीसरा हो तो अनाज सस्ता होता है। चौथे या पाँचवें पर प्रवेश हो तो धान्य तेज एवं छठे नक्षत्र में प्रवेश हो तो दुष्काल होता है।

संक्रान्ति से गणित द्वारा तेजी-मन्दी का परिज्ञान—संक्रान्ति का जिस दिन प्रवेश हो उस दिन जो नक्षत्र हो उसकी संख्या में तिथि और वार की संख्या जो उस दिन की हो, उसे मिला देना चाहिए। इसमें जिस अनाज की तेजी-मन्दी जानना हो उसके नाम के अक्षरों की संख्या मिला देना। जो योगफल हो उसमें तीन का भाग देने से एक शेष बचे तो वह अनाज उस संक्रान्ति के मास में मन्दा बिकेगा, दो शेष बचे तो समान भाव रहेगा और शून्य शेष बचे तो वह अनाज महँगा होगा।

संक्रान्ति जिस प्रहर में जैसी हो, उसके अनुसार सुख-दुख, लाभालाभ आदि की जानकारी निम्न चक्र द्वारा करनी चाहिए।

वारानुसार संक्रान्ति फलावबोधक चक्र

वार	नक्षत्र	नाम	फल	काल	फल	दिशा
रवि	उग्र	घोरा	शूद्रोंको सुख	पूर्वाह्ण	विप्रोंको सुख	पूर्व
सोम	क्षिप्र	ध्वांक्षी	वैश्योंको सुख	मध्याह्न	वैश्योंको सुख	दक्षिण कोण
मंगल	चर	महोदरी	चोरोंको सुख	अपराह्ण	शूद्रोंको सुख	पश्चिम कोण
बुध	मैत्र	मंदाकिनी	राजाओंको सुख	प्रदोष	पिशाचोंको सुख	दक्षिण
गुरु	ध्रुव	नन्दा	ब्राह्मणोंको सुख	अर्द्धरात्रि	राक्षसोंको सुख	उत्तर कोण
शुक्र	मिश्र	मिश्रा	पशुओंको सुख	अपररात्रि	नटादिकों सुख	पूर्व कोण
शनि	दारुण	राक्षसी	चाण्डालोंको सुख	[illegible]काल	पशुपालकोंको सुख	उत्तर

ध्रुव-चर-उग्र-मिश्र-लघु-मृदु-तीक्ष्ण संज्ञक नक्षत्र—उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी ध्रुव संज्ञक; स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा चर या चल संज्ञक; विशाखा और कृत्तिका मिश्र संज्ञक; हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित् क्षिप्र या लघु संज्ञक; मृगशिर, रेवती, चित्रा और अनुराधा मृदु या मैत्र संज्ञक एवं मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा और आश्लेषा तीक्ष्ण या दारुण संज्ञक है।

अधोमुख संज्ञक—मूल, आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा पूर्वाभाद्रपद, भरणी और मघा अधोमुख संज्ञक हैं।

ऊर्ध्वमुख संज्ञक—आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा ऊर्ध्वमुख संज्ञक हैं।

तिर्यङ्मुख संज्ञक—अनुराधा, हस्त, स्वाति, पुनर्वसु, ज्येष्ठा और अश्विनी तिर्यङ्मुख संज्ञक हैं।

दग्धसंज्ञक नक्षत्र—रविवार को भरणी, सोमवार को चित्रा, मंगलवार को उत्तराषाढ़ा, बुधवार को धनिष्ठा, बृहस्पतिवार को उत्तराफाल्गुनी, शुक्रवार को ज्येष्ठा और शनिवार को रेवती दग्धसंज्ञक हैं।

मास शून्य नक्षत्र— चैत में रोहिणी और अश्विनी, वैशाख में चित्रा और स्वाति, ज्येष्ठ में उत्तराषाढ़ा और पुष्य, आषाढ़ में पूर्वाफाल्गुनी और धनिष्ठा, श्रावण में उत्तराषाढ़ा और श्रवण, भाद्रपद में शतभिषा और रेवती, आश्विन में पूर्वाभाद्रपद, कार्तिक में कृत्तिका और मघा, मार्गशीर्ष में चित्रा और विशाखा, पौष में आर्द्रा, अश्विनी और हस्त, माघ में श्रवण और मूल एवं फाल्गुन में भरणी और ज्येष्ठा शून्य नक्षत्र हैं।

संक्रान्ति प्रवेश के दिन नक्षत्र का स्वभाव और संज्ञा अवगत करके वस्तु की तेजी-मन्दी जाननी चाहिए। यदि संक्रान्ति का प्रवेश तीक्ष्ण, दग्ध या उग्र संज्ञक नक्षत्र में होता है, तो सभी वस्तुओं की तेजी समझनी चाहिए। मृदु और ध्रुव संज्ञक नक्षत्रों में संक्रान्ति का प्रवेश होने से समान भाव रहता है। दारुण संज्ञक नक्षत्र में संक्रान्ति का प्रवेश होने से खाद्यान्नों का अभाव रहता है, सभी अन्य उपभोग की वस्तुएँ भी उपलब्ध नहीं हो पाती।

संक्रान्ति जिस वाहन पर रहती है, जो वस्तु धारण करती है, जिस वस्तु का भक्षण करती है, उस वस्तु की कमी होती है तथा वह वस्तु महँगी भी होती है। अतः संक्रान्ति के वाहनचक्र से भी वस्तुओं की तेजी-मन्दी जानी जा सकेगी।

रवि नक्षत्र फल—अश्विनी में सूर्य के रहने से सभी अनाज, सभी रस, वस्त्र, अलसी, एरण्ड, तिल, मेथी, लालचन्दन, इलायची, लौंग, सुपारी, नारियल, कपूर, हींग, हिंगलु आदि तेज होते हैं। भरणी में सूर्य के रहने से चावल, जौ, चना, मोठ, अरहर, अलसी, गुड़, घी, अफीम, मंग आदि पदार्थ तेज होते हैं। कृत्तिका में श्वेत पुष्प, जौ, चावल, गेहूँ, मूँग, मोठ, राई और सरसों तेज होते हैं। रोहिणी में चावल आदि सभी धान्य, अलसी, सरसों, राई, तेल, दाख, गुड़, खाँड, सुपारी, रुई, सूत-जूट आदि पदार्थ तेज होते हैं। मृगशिरा में सूर्य के रहने से जलोत्पन्न पदार्थ नारियल, सर्वफल, रुई, सूत, रेशम, वस्त्र, कपूर, चन्दन, चना आदि पदार्थ तेज होते हैं। आर्द्रा में रवि के रहने से घी, गुड़, चीनी, चावल, चन्दन, लाल नमक, कपास, रुई, हल्दी, सोंठ, लोहा, चाँदी आदि पदार्थ तेज होते हैं। पुनर्वसु नक्षत्र में रहने से उड़द, मूँग, मोठ, चावल, मसूर, नमक, सज्जी, लाख, नील, तिल, एरण्ड, मांजुफल, केशर, कपूर, देवदारु, लौंग, नारियल, श्वेत वस्तु आदि पदार्थ महँगे होते हैं। पुष्य नक्षत्र में रवि के रहने से तिल, तैल, मद्य, गुड़, ज्वार, गुग्गुल, सुपाड़ी, सोंठ, मोम, हींग, हल्दी, जूट, ऊनी वस्त्र, शीशा, चाँदी आदि वस्तुएँ तेज होती हैं।

संक्रान्तिवाहनफलबोधक चक्र

करण	बव	बालव	कौलव	तैतिल	गर	वणिज	विष्टि	शकुनि	चतुष्पद	नाग	किंस्तुघ्न
स्थिति	बैठी	बैठी	खड़ी	सोती	बैठी	खड़ी	बैठी	सोती	खड़ी	सोती	खड़ी
फल	मध्यम	मध्यम	महर्घ	समर्घ	मध्यम	महर्घ	महर्घ	महर्घ	समर्घ	समर्घ	महर्घ
वाहन	सिंह	व्याघ्र	वराह	गर्दभ	हस्ती	महिषी	घोड़ा	कुत्ता	मेढ़ा	बैल	कुक्कुट
उपवाहन	गज	अश्व	बैल	मेंढा	गर्दभ	ऊँट	सिंह	शार्दूल	महिष	व्याघ्र	वानर
फल	भय	भय	पीड़ा	सुभिक्ष	लक्ष्मी	क्लेश	स्थैर्य	सुभिक्ष	क्लेश	स्थैर्य	मृत्यु
वस्त्र	श्वेत	पीत	हरित	पाण्डु	रक्त	श्याम	काला	चित्र	कम्बल	नग्न	घनवर्ण
आयुध	भुशुंडी	गदा	खड्ग	दण्ड	धनुष	तोमर	कुन्त	पाश	अंकुश	तलवार	बाण
पात्र	सुवर्ण	रूपा	ताम्र	कांस्य	लोह	ठीकर	पत्र	वस्त्र	कर	भूमि	काष्ठ
भक्ष्य	अन्न	पायस	भक्ष्य	पक्वान्न	पय	दधि	चित्रान्न	गुड़	मधुर	घृत	शर्करा
लेपन	कस्तूरी	कुंकुम	चन्दन	माटी	गोरोचन	अंविला	हल्दी	सुरमा	सिन्दूर	अगर	कपूर
वर्ण	देव	भूत	सर्प	पशु	मृग	विप्र	क्षत्री	वैश्य	शूद्र	मिश्र	अंत्यज
पुष्प	पुन्नाग	जाती	वकुल	केतकी	बेल	अर्क	कमल	दूर्वा	मल्लिका	पाटल	जपा
भूषण	नूपुर	कंकण	मोती	मूँगा	मुकुट	मणि	गुंजा	कौड़ी	कालक	पुखाग	सुवर्ण
कंचुकी	विचित्र	पर्ण	हरित	भूर्जपत्र	पीत	श्वेत	नील	कृष्ण	अञ्जन	वल्कल	पाण्डुर
वय	बाला	कुमारी	गतालका	युवा	प्रौढ़ा	प्रगल्भा	वृद्धा	वन्ध्या	अतिवन्ध्या	पुत्रवती	मैन्या

शकाब्द पर से चैत्रादि मासों में समस्त वस्तुओं की तेजी-मन्दी अवगत करने के लिए ध्रुवांक

मास १२	चैत्र	वैशाख	ज्येष्ठ	आषाढ़	श्रावण	भा. प.	आश्वि.	कार्तिक	मा. शी.	पौष	माघ	फाल्गु.
यव-जौ	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
चना	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
गेहूँ	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
चावल	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
तिल	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
चाँदी	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
गुड़	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
घी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
नमक	१	०	२	१	०	०	०	२	१	१	२	१
उड़द	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
अरहर	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
मूँग	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
रूई	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
रेंडी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
सूत	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
वस्त्र	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
कम्बल	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
पाट	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
सुपारी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
तांबा	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
तेल	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
फिटकिरी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
हींग	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
हल्दी	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
लौंग	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
जीरा	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
अजवायन	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
कपूर	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
कस्तूरी	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
धनिया	१	१	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१

आश्लेषा में रवि के रहने से अलसी, तिल, तैल, गुड़, शेमर, नील और अफीम महँगे होते हैं। मघा में रवि के रहने से ज्वार, एरण्ड बीज, दाख, मिरच, तैल और अफीम महँगे होते हैं। पूर्वा फाल्गुनी में रहने से सोना, चाँदी, लोहा, घृत, तैल, सरसों, एरण्ड, मुगाड़ी, नील, बांस, अफीम, जूट आदि तेज होते हैं। उत्तरा फाल्गुनी में रवि के रहने से ज्वार, जौ, गुड़, चीनी, जूट, कपास, हल्दी, हरड़, हींग, क्षार और कत्था आदि तेज होते हैं। हस्त में रवि के रहने से कपड़ा, गेहूँ, सरसों आदि तेज होते हैं। चित्रा में रहने से गेहूं, चना, कपास, अरहर, सूत, केशर, लाल कपड़ा तेज होते हैं। स्वाति में रहने से धातु, गुड़, खाँड़, तेल, हिंगुर, कपूर, लाख, हल्दी, रूई, जूट आदि तेज होते हैं। अनुराधा और विशाखा में रहने से चाँदी, चावल, सूत, अफीम आदि महँगे होते हैं। ज्येष्ठा और मूल में रहने से चावल, सरसों, वस्त्र, अफीम आदि पदार्थ तेज होते हैं। पूर्वाषाढ़ा में रहने से तिल, तैल, गुड़, गुग्गुल, हल्दी, कपूर, ऊनी वस्त्र, जूट, चाँदी आदि पदार्थ तेज होते हैं। उत्तराषाढ़ा और श्रवण में रवि के होने से उड़द, मूँग, जूट, सूत, गुड़, कपास, चावल, चाँदी, बाँस, सरसों आदि पदार्थ तेज होते हैं। धनिष्ठा में रहने से मूँग, मसूर और नील तेज होते हैं। शतभिषा में रवि के रहने से सरसों, चना, जूट, कपड़ा, तैल, नील, हींग, जायफल, दाख, छुहारा, सोंठ आदि तेज होते हैं। पूर्वा भाद्रपद में सूर्य के रहने से सोना, चाँदी, गेहूँ, चना, उड़द, घी, रूई, रेशम, गुग्गुल, पीपरा मूल आदि पदार्थ तेज होते हैं। उत्तराभाद्रपद में रवि के होने से सभी रस, धान्य और तेल एवं रेवती में रहने से मोती, रत्न, फल-फूल, नमक, सुगन्धित पदार्थ, अरहर, मूँग, उड़द, चावल, लहसुन, लाख, रूई, सज्जी आदि पदार्थ तेज होते हैं।

उक्त चक्र द्वारा तेजी-मन्दी निकालने की विधि

शाकः खगाब्धिभूपोन(1649)शालिवाहनभूपतेः।
अनेन युक्तो ध्रुवांकश्चैत्रादि प्रतिमास ॥
रामैरक्षैः हृते शेषे फलं चन्द्रेण मध्यमम्।
नेत्रेण रसहानिश्च शून्येनार्घं स्मृतं बुधैः ॥

अर्थात् शक वर्ष की संख्या में से 1649 घटा कर, शेष जिस मास में जिस पदार्थ का भाव जानना हो उसके ध्रुवांक जोड़कर योगफल में 3 का भाग देने से एक शेष समता, दो शेष मन्दा और शून्य शेष, में तेजी कहना चाहिए। विक्रम संवत् में से 135 घटाने पर शक संवत् हो जाता है। उदाहरण—विक्रम संवत् 2013 के ज्येष्ठ मास में चावल की तेजी-मन्दी जाननी है। अतः सर्वप्रथम विक्रम संवत् बनाया—2013-135=1878 शक संवत्। सूत्र-नियम के अनुसार 1878--1649=229 और ज्येष्ठ मास में चावल का ध्रुवांक 1 है, इसे जोड़ा

तो = 229 + 1 = 230; इसमें 3 से भाग दिया = 230 ÷ 3 = 76; शेष 2 रहा। अतः चावल का भाव मन्दा आया। इसी प्रकार समझ लेना चाहिए।

दैनिक तेजी-मन्दी जानने का नियम—जिस देश में, जिस वस्तु की, जिस दिन तेजी-मन्दी जाननी हो उस देश, वस्तु, वार, नक्षत्र, मास, राशि इन सबके ध्रुवांकों को जोड़कर 9 का भाग देने से शेष के अनुसार तेजी-मन्दी का ज्ञान 'तेजी-मन्दी के चक्र' के अनुसार देखनी चाहिए।

देश तथा नगरों की ध्रुवा—बिहार 166, बंगाल 247, आसाम 791, मध्य-प्रदेश 108, उत्तर प्रदेश 890, बम्बई 198, पंजाब 419, रंगून 167, नेपाल 154, चीन 642, अजमेर 167, हरिद्वार 272, बीकानेर 213, सूरत 128, अमेरिका 322, योरोप 976।

मास ध्रुवा—चैत्र 61, वैशाख 63, ज्येष्ठ 65, आषाढ़ 67, श्रावण 69, भाद्रपद 71, आश्विन 73, कार्तिक 51, मार्गशीर्ष 53, पौष 55, माघ 57, फाल्गुन 59।

सूर्य राशि ध्रुवा—मेष 520, वृष 762, मिथुन 510, कर्क 218, सिंह 830, कन्या 260, तुला 503, वृश्चिक 711, धनु 524, मकर 554, कुम्भ 270, मीन 586।

तिथि ध्रुवा—प्रतिपदा 610, द्वितीया 710, तृतीया 481, चतुर्थी 357, पंचमी 634, षष्ठी 304, सप्तमी 812, अष्टमी 111, नवमी 565, दशमी 305, एकादशी 233, द्वादशी 261, त्रयोदशी 524, चतुर्दशी 552, पूर्णिमा 630, अमावस्या 166।

वार ध्रुवा—रविवार 137, सोमवार 94, मंगल 809, बुध 702, गुरु 713, शुक्र 808, शनि 85।

संसार का कुल ध्रुवा—2085।

नक्षत्र ध्रुवा—अश्विनी 176, भरणी 783, कृत्तिका 370, रोहिणी 775, मृगशिरा 682, आर्द्रा 146, पुनर्वसु 540, पुष्य 634, आश्लेषा 170, मघा 73, पूर्वाफाल्गुनी 85, उत्तराफाल्गुनी 148, हस्त 810, चित्रा 305, स्वाती 861, विशाखा 734, अनुराधा 712, ज्येष्ठा 716, मूल 743, पूर्वाषाढ़ा 614, उत्तराषाढ़ा 623, अभिजित् 683, श्रवण 657, धनिष्ठा 500, शतभिषा 564, पूर्वाभाद्रपद 336, उत्तराभाद्रपद 183, रेवती 720।

पदार्थों की ध्रुवा—सोना 253, चांदी 760, तांबा 563, पीतल 258, लोहा 915, कांसा 249, पत्थर 163, मोती 142, रुई 717, कपड़ा 127, पाट 476, सुर्ती 103, तम्बाकू 240, सुपाड़ी 252, बाहु 88, मिरच 268, घी 464, दूध 75, गुड़ 256, चीनी 328, ऊन 112, लाख 811, धान 712, गेहूं 232, तेल 801, चावल 774, मूंग 801, तीसी 386, सरसों

858, अरहर 333, नमक 317, जीरा, 156, अफीम 263, सोडा 156, गाय 132, बैल 162, भैंस 612, भेड़ 618, हाथी 830, घोड़ा 835।

तेजी-मन्दी जानने का चक्र—सूर्य 1 तेज, चन्द्र 2 अतिमन्द, भौम 3 तेज, राहु 4 अति तेज, बृहस्पति 5 मन्द, शनि 6 तेज, राहु 7 सम, केतु 8 तेज, शुक्र 0 तेज।

उदाहरण—बम्बई में चैत्र सुदि सप्तमी रविवार को गेहूँ का भाव जानना है। अतः सभी ध्रुवाओं का जोड़ किया। बम्बई की ध्रुवा 198, सूर्य मेष राशि का होने से 520, मास ध्रुवा 61, वार ध्रुवा 137, तिथि ध्रुवा 812, इस दिन कृत्तिका नक्षत्र ध्रुवा 370, गेहूँ ध्रुवा 232 इन सबका योग किया। 198+520+61+137+812+370+232=2330। इसमें 9 का भाग दिया=2330÷9=258 लब्धि, 8 शेष। तेजी-मन्दी जानने के चक्र में देखने से 8 शेष में केतु तेज करने वाला हुआ अर्थात् तेजी होगी।

दैनिक तेजी-मन्दी निकालने की अन्य रीति

वस्तु विशोपक धातु—सोना 96, चाँदी 71, पीतल 59, मूंगा 51, लोहा 54, सीसा 90, काँसा 127, मोती 95, रांगा 67, ताँबा 10, कुंकुम 25।

अनाज और किराना—कर्पूर 102, हर्रे 73; जीरा 70, चीनी 102, मिश्री 103, ज्वार 100, घी 50, तेल 10, नमक 59, हींग 62, सुपारी 204, अरहर 72, मिर्च 83, सूत 94, सरसों 808, कपड़ा 100, चपड़ा 87, मूंग 15, सोंठ 100, गुड़ 40, बिनौला 88, मंजीठ 144, नारियल 78, छुहारा 144, चावल 17, जौ 57, साठी 165, गेहूं 14, उड़द 80, तिल 53, चना 56, कपास 127, अफीम 192, रुई 77।

पशु—घोड़ा 770, हाथी 64, भैंस 92, गाय 77, बैल 87, बकरी 60, साँड़ 94, भेड़ 85।

नक्षत्र विशोपक—अश्विनी 10, भरणी 10, कृत्तिका 96, रोहिणी 20, मृगशिरा 56, आर्द्रा 86, पुनर्वसु 21, पुष्य 64, आश्लेषा 135, मघा 150, पूर्वाफाल्गुनी 220, उ० फा० 72, हस्त 334, चित्रा 21, स्वाति 210, विशाखा 320, अनुराधा 493, ज्येष्ठा 559, मूल 552, पू० षा० 142, उ० षा० 420, श्रवण 450, धनिष्ठा 736, शतभिषा 576, पूर्वाभाद्रपद 775, उत्तरा भाद्रपद 126, रेवती 256।

संक्रान्ति राशि विशोपक—मेष 37, वृष 84, मिथुन 86, कर्क 109, सिंह 125, कन्या 102, तुला 104, वृश्चिक 144, धनु 144, मकर 198, कुम्भ 190, मीन 180।

तिथि विशोपक—प्रतिपदा 18, द्वितीया 20, तृतीया 22, चतुर्थी 24, पंचमी 26, षष्ठी 25, सप्तमी 23, अष्टमी 21, नवमी 19, दशमी 17, एकादशी 15, द्वादशी 13, त्रयोदशी 11, चतुर्दशी 9, अमावस्या 9, पूर्णिमा 16।

वार—रविवार 40, सोम 50, मंगल 50, बुध 72, गुरु 65, शुक्र 24, शनि 14।

तेजी-मन्दी निकालने की विधि— जिस मास की या जिस दिन की तेजी-मन्दी निकालनी हो, उस महीने की संक्रान्ति का विशोपक ध्रुवा, तिथि, वार और नक्षत्र के विशोपक ध्रुवाओं को जोड़ 3 का भाग देने से एक शेष रहने से मन्दी, दो शेष में समान और शून्य शेष में तेजी होती है।

तेजी-मन्दी निकालने का अन्य नियम— गेहूँ की अधिकारिणी राशि कुम्भ, सोना की मेष, मोती की मीन, चीनी की कुम्भ, चावल की मेष, ज्वार की वृश्चिक, रूई की मिथुन और चाँदी की कर्क है। जिस वस्तु की अधिकारिणी राशि से चन्द्रमा चौथा, आठवाँ तथा बारहवाँ हो तो वह वस्तु तेज होती है, अन्य राशि पड़ने से सस्ती होती है।

सूर्य, मंगल, शनि, राहु, केतु ये क्रूर ग्रह हैं। ये क्रूर ग्रह जिस वस्तु की अधिकारिणी राशि से पहले, दूसरे, चौथे पांचवें, सातवें, आठवें, नौवें, और बारहवें जा रहे हों, वह वस्तु तेज होती है। जितने क्रूर ग्रह उपर्युक्त स्थानों में जाते हैं, उतनी ही वस्तु अधिक तेज होती है।

षड्विंशतितमोऽध्यायः

नमस्कृत्य महावीरं सुरासुर[1]जनैर्नतम्।
स्वप्नाध्यायं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभसमीरितम्॥1॥

देव और दानवों के द्वारा नमस्कार किये गये भगवान् महावीर स्वामी को नमस्कार कर शुभाशुभ से युक्त स्वप्नाध्याय का वर्णन करता हूँ॥1॥

1. नमस्कृतम् मु०।

स्वप्नमाला दिवास्वप्नोऽनष्टचिन्ता मयःफलम्।
प्रकृता-कृतस्वप्नैश्च नैते ग्राह्या निमित्ततः ॥2॥

स्वप्नमाला, दिवास्वप्न, चिन्ताओं से उत्पन्न, रोग से उत्पन्न और प्रकृति के विकार से उत्पन्न स्वप्नफल के लिए नहीं ग्रहण करना चाहिए ॥2॥

कर्मजा द्विविधा यत्र शुभाश्चात्राशुभास्तथा।
त्रिविधाः संग्रहाः स्वप्नाः कर्मजाः पूर्वसञ्चिताः ॥3॥

कर्मोदय से उत्पन्न स्वप्न दो प्रकार के होते हैं—शुभ और अशुभ तथा पूर्व संचित कर्मोदय से उत्पन्न स्वप्न तीन प्रकार के होते हैं ॥3॥

भवान्तरेषु चाभ्यस्ता भावाः सफल-निष्फलाः।
तान् प्रवक्ष्यामि तत्त्वेन शुभाशुभफलानिमान् ॥4॥

जो सफल या निष्फल भाव भवान्तरों में अभ्यस्त है, उनके शुभाशुभ फलदायक भावों को यथार्थ रूप से निरूपण करता हूँ ॥4॥

जलं जलरुहं धान्यं सदलाम्भोजभाजनम्।
मणि-मुक्ता-प्रवालांश्च स्वप्ने पश्यन्ति श्लेष्मिकाः ॥5॥

जल, जल से उत्पन्न पदार्थ, धान्य, पत्र सहित कमल, मणि, मोती, प्रवाल आदि को स्वप्न में कफ प्रकृति वाला व्यक्ति देखता है ॥5॥

रक्त-पीतानि द्रव्याणि यानि पुष्टान्यग्निसम्भवान्।
तस्योपकरणं विन्द्यात् स्वप्ने पश्यन्ति पैत्तिकाः ॥6॥

रक्त-पीत पदार्थ, अग्नि संस्कार से उत्पन्न पदार्थ, स्वर्ण के आभूषण-उपकरण आदि को पित्त प्रकृति वाला व्यक्ति स्वप्न में देखता है ॥6॥

च्यवनं प्लवनं यानं पर्वताग्रं द्रुमं गृहम्।
आरोहन्ति नराः स्वप्ने वातिकाः पक्षगामिनः ॥7॥

वायु प्रकृति वाला व्यक्ति गिरना, तैरना, सवारी पर चढ़ना, पर्वत के ऊपर चढ़ना, वृक्ष और प्रासाद पर चढ़ना आदि वस्तुओं को स्वप्न में देखता है ॥7॥

सिंह-व्याघ्र-गजैर्युक्तो गो-वृषाश्वैर्नरैर्युतः।
रथमारुह्य यो याति पृथिव्यां स नृपो भवेत् ॥8॥

जो सिंह, व्याघ्र, गज, गाय, बैल, घोड़ा और मनुष्यों से युक्त होकर रथ पर चढ़कर गमन करते हुए स्वप्न में देखता है वह राजा होता है ॥8॥

प्रासादं कुञ्जरवरानारुह्य सागरं विशेत् ।
तथैव च विकर्षेत[1] तस्य नीचो नृपो भवेत् ॥9॥

श्रेष्ठ हाथी पर चढ़कर जो महल या समुद्र में प्रवेश करता है या स्वप्न में देखता है वह नीच नृप होता है ॥9॥

पुष्करिण्यां तु यस्तीरे भुञ्जीत शालिभोजनम् ।
श्वेतं गजं समारूढः स राजा अचिराद् भवेत् ॥10॥

जो स्वप्न में श्वेत हाथी पर चढ़कर नदी या नदी के तटपर भात का भोजन करता हुआ देखता है, वह शीघ्र ही राजा होता है ॥10॥

सुवर्ण-रूप्यभाण्डे वा यः पूर्वनवरा स्नुयात् ।
प्रासादे वाऽथ भूमौ वा याने वा राज्यमाप्नुयात् ॥11॥

जो व्यक्ति स्वप्न में प्रासाद, भूमि या सवारी पर आरूढ़ हो सोने या चाँदी के बर्तनों में स्नान, भोजन-पान आदि की क्रियाएँ करता हुआ देखे उसे राज्य की प्राप्ति होती है ॥11॥

[2]श्लेष्ममूत्रपुरीषाणि यः स्वप्ने च विकृष्यति ।
राज्यं राज्यफलं वाऽपि सोऽचिरात् प्राप्नुयान्नरः ॥12॥

जो राजा स्वप्न में श्वेत वर्ण के मल, मूत्र आदि को इधर-उधर खींचता है, वह राज्य और राज्य फल को शीघ्र ही प्राप्त करता है ॥12॥

यत्र वा तत्र वा स्थित्वा जिह्वायां लिखते नखः ।
दीर्घया रक्तया स्थित्वा स नीचोऽपि नृपो भवेत् ॥13॥

जो व्यक्ति स्वप्न में जहाँ-तहाँ स्थित होकर जिह्वा – जीभ को नख से खुरचता हुआ देखे अथवा रक्त की – लाल वर्ण की दीर्घा—झील में स्थित होता हुआ देखे तो वह व्यक्ति नीच होने पर भी राजा होता है ॥13॥

भूमिं ससागरजलां सशैल-वन-काननाम् ।
बाहुभ्यामुद्धरेद्यस्तु स राज्यं प्राप्नुयान्नरः ॥14॥

जो व्यक्ति स्वप्न में वन-पर्वत-अरण्य युक्त पृथ्वी सहित समुद्र के जल को भुजाओं द्वारा पार करता हुआ देखता है, वह राज्य प्राप्त करता है ॥14॥

आदित्यं वाऽथ चन्द्रं वा यः स्वप्ने स्पृशते नरः ।
श्मशानमध्ये निर्भीकः परं हत्वा चमूपतिम् ॥15॥

---

1. विकर्षेत मु० । 2. श्वेते पर्वते प्रवेश मु० ।

सौभाग्यमर्थं लभते लिंगच्छेदात् स्त्रियं नरः ।
भगच्छेदे तथा नारी पुरुषं प्राप्नुयात् फलम् ॥16॥

जो व्यक्ति स्वप्न में सूर्य या चन्द्रमा का स्पर्श करता हुआ देखता है अथवा शत्रु सेनापति को मारकर श्मशान भूमि में निर्भीक घूमता हुआ देखता है वह व्यक्ति सौभाग्य और धन प्राप्त करता है। लिंगच्छेद होना देखने से पुरुष को स्त्री की प्राप्ति तथा भगच्छेद होना देखने से स्त्री को पुरुष की प्राप्ति होती है ॥15-16॥

शिरो वा छिद्यते यस्तु सोऽसिना छिद्यतेऽपि वा ।
सहस्रलाभं जानीयाद् भोगांश्च विपुलान् नृपः ॥17॥

जो राजा स्वप्न में शिर कटा हुआ देखता है अथवा तलवार के द्वारा छेदित होता हुआ देखता है, वह सहस्रों का लाभ तथा प्रचुर भोग प्राप्त करता है ॥17॥

धनुरारोहते यस्तु विस्फारण-समार्जने ।
अर्थलाभं विजानीयात् जयं युधि रिपोर्वधम् ॥18॥

जो राजा स्वप्न में धनुष पर बाण चढ़ना, धनुष का स्फालन करना, प्रत्यंचा को समेटना आदि देखता है, वह अर्थलाभ करता है, युद्ध में जय और शत्रु का वध होता है ॥18॥

द्विपारूढं हस्तिनारूढः शुक्लो [1]वाससलंकृतः ।
यः स्वप्ने जायते भीतः समृद्धिं लभते सतीम् ॥19॥

जो स्वप्न में शुक्ल वस्त्र और श्रेष्ठ आभूषणों से अलंकृत होकर हाथी पर चढ़ा हुआ भीत—भयभीत देखता है, वह समृद्धि को प्राप्त होता है ॥19॥

देवान् साधु-द्विजान् प्रेतान् स्वप्ने पश्यन्ति [2]तुष्टिभिः ।
[3]सर्वे ते सुखमिच्छन्ति विपरीते विपर्ययः ॥20॥

जो स्वप्न में सन्तोष के साथ देव, साधु, ब्राह्मणों को और प्रेतों को देखते हैं, वे सब सुख चाहते हैं—सुख प्राप्त करते हैं और विपरीत देखने पर विपरीत फल होता है अर्थात् स्वप्न में उक्त देव-साधु आदि का कोधित होना देखने से उल्टा फल होता है ॥20॥

गृहद्वारं विवर्णमभिज्ञाद्वा यो गृहं नरः ।
व्यसनान्मुच्यते शीघ्रं स्वप्नं दृष्ट्वा हि तादृशम् ॥21॥

जो व्यक्ति स्वप्न में गृहद्वार या गृह को विवर्ण देखे या पहिचाने वह शीघ्र

1. समलंकृत मु० । 2. तुष्टिभिः मु० । 3. शोभिता मु० ।

ही विपत्ति से छुटकारा प्राप्त करता है ॥21॥

प्रपानं यः पिबेत् पानं बद्धो वा योऽभिमुच्यते ।
विप्रस्य सोमपानाय शिष्याणामर्थवृद्धये ॥22॥

यदि स्वप्न में शर्बत या जल को पीता हुआ देखे अथवा किसी बँधे हुए व्यक्ति को छोड़ता हुआ देखे तो इस स्वप्न का फल ब्राह्मण के लिए सोमपान और शिष्यों के लिए धनवृद्धिकर होता है ॥22॥

निम्नं कूपजलं छिद्रान् यो भीतः स्थलमारुहेत् ।
स्वप्ने स वर्धते सस्य-धन-धान्येन मेधसा ॥23॥

जो व्यक्ति स्वप्न में नीचे कुएँ के जल को, छिद्र को और भयभीत होकर स्थल पर चढ़ता हुआ देखता है वह धन-धान्य और बुद्धि के द्वारा वृद्धि को प्राप्त होता है ॥23॥

श्मशाने शुष्कदारुं वा वल्लिं शुष्कद्रुमं तथा ।
[1]यूपं च मारुहेश्चऽस्तु स्वप्ने व्यसनमाप्नुयात् ॥24॥

जो व्यक्ति स्वप्न में श्मशान में सूखे वृक्ष, लता एवं सूखी लकड़ी को देखता है अथवा यज्ञ के खूंटे पर जो आग को चढ़ता हुआ देखता है, वह विपत्ति को प्राप्त होता है ॥24॥

त्रपु-सीसायसं रज्जुं नाणकं मक्षिका [2]मधुः ।
यस्मिन् स्वप्ने प्रयच्छन्ति [3]मरणं तस्य ध्रुवं भवेत् ॥25॥

जो व्यक्ति स्वप्न में सीसा, रांगा, जस्ता, पीतल, रज्जु, सिक्का तथा मधु का दान करता हुआ देखता है, उसका मरण निश्चय होता है ॥25॥

अकालजं फलं पुष्पं काले वा पक्व [4]गर्भितम् ।
यस्मै स्वप्ने प्रदीयेते [5]तादृशायासलक्षणम् ॥26॥

जिस स्वप्न में असमय के फल-फूल या समय पर होने वाले निन्दित फल-फूलों को जिसको देते हुए देखा जाय वह स्वप्न आयास लक्षण माना जाता है ॥26॥

अलक्तकं वाऽथ रोगो वा 'निपातं यस्य वेश्मनि ।
गृहदाघमवाप्नोति चौरैर्वा शस्त्रघातनम् ॥27॥

---

1. [illegible] मु० । 2. [illegible] मु० । 3. मरणमेव ध्रुवं मु० । 4. [illegible] मु० । 5. [illegible]तादृशस्यायासलक्षणम् मु० ।

स्वप्न में जिस घर में लाक्षारस या सोम अथवा वायु का अभाव देखा जाय उस घर में या तो आग लगती है या चोरों द्वारा शस्त्रघात होता है ॥27॥

अगम्यागमनं चैव सौभाग्यस्याभिवृद्धये।
अलं कृत्वा [1]रसं पीत्वा यस्य वस्त्रयाश्च यद्भवेत् ॥28॥

जो स्वप्न में अलंकार करके, रस पीकर अगम्या गमन—जो स्त्री पूज्य है उसके साथ रमण करना—देखता है, उसके सौभाग्य की वृद्धि होती है ॥28॥

[2]शून्यं चतुष्पथं स्वप्ने यो भयं विश्य बुध्यते।
[3]पुत्रं न लभते भार्या सुरूपं सुपरिच्छदम् ॥29॥

स्वप्न में जो व्यक्ति निर्जन चौराहे मार्ग में प्रविष्ट होना देखे, पश्चात् जाग्रत हो जाय तो उसकी स्त्री को सुन्दर, गुणयुक्त पुत्र की प्राप्ति नहीं होती है ॥29॥

वीणां विषं च वल्लकीं स्वप्ने गृह्य विबुध्यते।
कन्यां तु लभते भार्या कुलरूपविभूषिताम् ॥30॥

स्वप्न में वीणा, वल्लकी और विष को ग्रहण करे, पश्चात् जाग्रत हो जाय तो उसकी स्त्री को सुन्दर रूप गुण युक्त कन्या की प्राप्ति होती है ॥30॥

विषेण म्रियते यस्तु विषं वाऽपि पिबेन्नरः।
[4]स युक्तो धन-धान्येन बध्यते न चिराद्धि सः ॥31॥

जो व्यक्ति स्वप्न में विष भक्षण द्वारा मृत्यु को प्राप्त हो अथवा विष भक्षण करना देखे वह धन-धान्य से युक्त होता है तथा चिरकाल तक—अधिक समय तक वह किसी प्रकार के बन्धन में बँधा नहीं रहता है ॥31॥

[5]उपाचरन्नासवाद्ये [6]मूर्ति मत्वाप्यकिञ्चनः।
ब्रूयाद् वै सद्वचः किञ्चिन्नासत्यं वृद्धये हितम् ॥32॥

यदि स्वप्न में कोई व्यक्ति आसव और मूत्र का पान करता हुआ देखे अथवा अकिञ्चन—निस्सहाय होकर अपने को मरता हुआ देखे तो इस अशुभ स्वप्न की शान्ति के लिए सत्य वचन बोलना चाहिए, क्योंकि थोड़ा भी असत्य भाषण विकास के लिए हितकारी नहीं होता ॥32॥

[7]प्रेतयुक्तं समारूढो दंष्ट्रियुक्तं च यो रथम्।
दक्षिणाभिमुखो याति म्रियते सोऽचिरान्नरः ॥33॥

---

1. मद्यं मु.। 2. शनि। 3. [illegible] मु.। 4. [illegible]। 5. [illegible] मु.। 6. मूत्रं मु.। 7. [illegible] मु.।

जो स्वप्न में प्रेतयुक्त, गर्दभयुक्त रथ में आरूढ़ दक्षिण दिशा की ओर जाता हुआ देखता है, वह मनुष्य शीघ्र ही मरण को प्राप्त हो जाता है ॥33॥

वराहयुक्ता या नारी ग्रीवाबद्धं प्रकर्षति।
सा तस्याः पश्चिमा रात्री [1]मृत्युः भवति पर्वते ॥34॥

यदि रात्रि के उत्तरार्ध में स्वप्न में कोई शूकर युक्त नारी किसी की बँधी हुई गर्दन को खींचे तो उसकी किसी पहाड़ पर मृत्यु होती है ॥34॥

खर-शूकरयुक्तेन खरोष्ट्रेण वृकेण वा।
रथेन दक्षिणां याति दिशं स म्रियते नरः ॥35॥

स्वप्न में कोई व्यक्ति खर—गर्दभ, शूकर, ऊँट, भेड़िया सहित रथ से दक्षिण दिशा को जाय तो शीघ्र उस व्यक्ति का मरण होता है ॥35॥

कृष्णवासा [2]यदा भूत्वा प्रवासं नावगच्छति।
मार्गे सभयमाप्नोति [3]याति दक्षिणगो वधम् ॥36॥

स्वप्न में यदि कृष्णवास होने पर भी प्रवास को प्राप्त न हो तो मार्ग में भय प्राप्त होता है तथा दक्षिण दिशा की ओर गमन दिखलाई पड़े तो मृत्यु भी हो जाती है ॥36॥

यूपमेकखरं शूलं यः स्वप्नेष्वभिरोहति।
सा तस्य पश्चिमा रात्री यदि साधु न पश्यति ॥37॥

जो व्यक्ति रात्रि के पिछले भाग में स्वप्न में यज्ञ स्तम्भ, गर्दभ, शूल पर आरोहित होता देखता है वह कल्याण नहीं देख पाता है ॥37॥

दुर्वासः कृष्णभस्मश्च वापतैलविपक्षितम्।
सा तस्य पश्चिमा रात्री यदि साधु न पश्यति ॥38॥

यदि कोई व्यक्ति रात्रि के पिछले प्रहर में स्वप्न में दुर्वासा, कृष्ण भस्म, तैल पान करना आदि देखे तो उसका कल्याण नहीं होता है ॥38॥

अभक्ष्यभक्षणं चैव पूजितानां च दर्शनम्।
कालपुष्पफलं चैव लभ्यतेऽर्थस्य सिद्धये ॥39॥

स्वप्न में अभक्ष्य-भक्षण करना, पूज्य व्यक्तियों का दर्शन करना, सामयिक पुष्प और फलों का दर्शन करना अर्थ प्राप्ति के लिए होता है ॥39॥

---

1. ... मृ. । 2. ... । 3. मार्गे मृ. ।

[1]नागाग्रे वेश्मनः सालो यः स्वप्ने [2]चरते नरः।
सोऽचिराद् वमते लक्ष्मीं क्लेशं चाप्नोति दारुणम् ॥40॥

जो व्यक्ति श्रेष्ठ महल के परकोटे पर चढ़ता हुआ देखे वह श्रेष्ठ लक्ष्मी का त्याग करता है, भयंकर कष्ट उठाता है ॥40॥

दर्शनं ग्रहणं भग्नं शयनासनमेव च ।
प्रशस्तमाममांसं च स्वप्ने वृद्धिकरं हितम् ॥41॥

स्वप्न में कच्चा मांस का दर्शन, ग्रहण, भग्न तथा शयन, आसन करना हितकर और प्रशस्त माना गया है ॥41॥

पक्वमांसस्य घासाय भक्षणं ग्रहणं तथा।
स्वप्ने व्याधिभयं विन्द्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥42॥

स्वप्न में पक्व मांस का दर्शन, ग्रहण और भक्षण व्याधि, भय और कष्टोत्पादक माना गया है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥42॥

छर्दने मरणं विन्द्यादर्थनाशो विरेचने।
छत्रो यानाद्धधान्यानां ग्रहणे मार्गमादिशेत् ॥43॥

स्वप्न में वमन करना देखने से मरण, विरेचन—दस्त लगना देखने से धन नाश, यान आदि के छत्र को ग्रहण करने से धन-धान्य का अभाव होता है ॥43॥

मधुरे निवेशस्वप्ने दिवा च यस्य वेश्मनि।
तस्यार्थनाशं नियतं मृतिं वाऽभिनिर्दिशेत् ॥44॥

दिन के स्वप्न में जिसके घर में प्रवेश करता हुआ देखे, उसका धन नाश निश्चित होता है अथवा वह मृत्यु का निर्देश करता है ॥44॥

यः स्वप्ने गायते हसते नृत्यते पठते नरः।
गायने रोदनं विन्द्यात् [3]नर्तने वध-बन्धनम् ॥45॥

जो व्यक्ति स्वप्न में गाना, हँसना, नाचना और पढ़ना देखता है उसे गाना देखने में रोना पड़ता है और नाचना देखने से वध-बन्धन होता है ॥45॥

हसने शोचनं ब्रूयात् कलहं पठने तथा।
बन्धने स्थानमेव स्यात् [4]मुक्तो देशान्तरं [5]व्रजेत् ॥46॥

1. [illegible] ([illegible]) मु० । 2. [illegible] मु० । 3. [illegible] मु० 4. मुक्ता मु० । 5. [illegible] मु० ।

हँसना देखने से शोक, पढ़ना देखने से कलह, बन्धन देखने से स्थान प्राप्ति और छूटना देखने से देशान्तर गमन होता है ॥46॥

सरांसि सरितो वृक्षान् पर्वतान् कलशान् गृहान्।
शोकार्त्तः पश्यति स्वप्ने [1]तस्य शोकोऽभिवर्धते ॥47॥

जो व्यक्ति स्वप्न में तालाब, नदी, वृक्ष पर्वत, कलश और गृहों को शोकार्त्त देखता है उसका शोक बढ़ता है ॥47॥

[2]मरुस्थलीं तथा भ्रष्टं कान्तारं वृक्षवर्जितम्।
सरितो नीरहीनाश्च शोकार्तस्य शुभावहाः ॥48॥

शोकग्रस्त व्यक्ति यदि स्वप्न में मरुस्थल, वृक्षरहित वन एवं जलरहित नदी को देखता है तो उसके लिए ये स्वप्न शुभ फलप्रद होते हैं ॥48॥

आसनं शयनं यानं गृहं वस्त्रं च भूषणम्।
स्वप्ने [3]कस्मै प्रदीयन्ते सुखिनः श्रियमाप्नुयात् ॥49॥

स्वप्न में जो कोई किसी को आसन, शय्या, सवारी, घर, वस्त्र, आभूषण दान करता हुआ देखता है, वह सुखी होता है तथा लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ॥49॥

अलंकृतानां द्रव्याणां वाजि-वारणयोस्तथा।
वृषभस्य च शुक्लस्य दर्शने प्राप्नुयाद् यशः ॥50॥

अलंकृत पदार्थ, श्वेत हाथी, घोड़े, बैल आदि का स्वप्न में दर्शन करने से यश की प्राप्ति होती है ॥50॥

पताकामसियष्टिं वा शुक्ति[4]-मुक्तान् सकाञ्चनान्।
दीपिकां लभते स्वप्ने योऽपि स लभते धनम् ॥51॥

पताका, तलवार, लाठी, अथवा, सीप, मोती, सोना; दीपक आदि को जो भी स्वप्न में प्राप्त करना देखता है, वह धन प्राप्त करता है ॥51॥

मूत्रं वा कुरुते स्वप्ने पुरीषं वा सलोहितम्।
प्रतिबुध्येत्तथा यश्च लभते सोऽर्थनाशनम् ॥52॥

जो स्वप्न में पेशाब या खून सहित टट्टी करना देखता है, और स्वप्न देखने के बाद ही जग जाता है, वह धननाश को प्राप्त होता है ॥52॥

---

1. [illegible] । 2. [illegible] श्लोक नहीं है। 3. [illegible] मु० ।
4. शोभा मु० । मुक्तान् मु० ।

अहिर्वा वृश्चिकः कीटो यं स्वप्ने दशते नरम्।
प्राप्नुयात् सोऽर्थवान् यः स यदि भीतो न शोचति ॥53॥

जो व्यक्ति स्वप्न में साँप, बिच्छू या अन्य कीड़ों द्वारा काटे जाने पर भयभीत नहीं होता और शोक नहीं करता हुआ देखता है, वह धन प्राप्त करता है ॥53॥

पुरीषं [1]छर्दनं यस्तु भक्षयेन्न च [2]शंकयेत्।
मूत्रं रेतश्च रक्तं च स शोकात् परिमुच्यते ॥54॥

जो व्यक्ति स्वप्न में बिना घृणा के टट्टी, वमन, मूत्र, वीर्य, रक्त आदि का भक्षण करता हुआ देखता है, वह शोक से छूट जाता है ॥54॥

कालेयं चन्दनं रोध्रं घर्षणे च प्रशस्यते।
अत्र लेपानि पिष्टानि तान्येव धनवृद्धये ॥55॥

जो व्यक्ति स्वप्न में कालागुरु, चन्दन, रोध्र--तगर को घिसने से सुगन्धि के कारण प्रशंसा करता है तथा उनका लेप करता और पीसना देखता है, उसके धन की वृद्धि होती है ॥55॥

रक्तानां करवीराणामुत्पलानामुपानयेत्।
लम्भो वा दर्शने स्वप्ने प्रयाणो वा विधीयते ॥56॥

स्वप्न में रक्तकमल और नीलकमलों का दर्शन, ग्रहण और त्रोटन—तोड़ना देखने से प्रयाण होता है ॥56॥

कृष्णं वासो हयं कृष्णं योऽभिरूढः प्रयाति च।
दक्षिणां दिशमुद्विग्नः [3]सोऽभि[4]प्रेतो यतस्ततः ॥57॥

जो व्यक्ति स्वप्न में काले वस्त्र धारण कर काले घोड़े पर सवार होकर खिन्न हो दक्षिण दिशा की ओर गमन करता है, वह निश्चय से मृत्यु को प्राप्त होता है ॥57॥

आसनं शाल्मलीं वापि कदलीं [5]पालिभद्रिकाम्।
पुष्पितां यः समारूढः सवित्तमधि रोहति ॥58॥

जो व्यक्ति स्वप्न में पुष्पित शाल्मली, कदली और देवदारु या नीम के वृक्ष पर बैठना या चढ़ना देखता है, उसे सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥58॥

1. छर्दितं मु० । 2. [illegible] मु० । 3. [illegible] मु० । 4. [illegible] मु० । 5. पारिभद्रकम् मु० ।

रुद्राक्षी विकृता काली नारी स्वप्ने च कर्षति।
उत्तरां दक्षिणां दिशं मृत्युः शीघ्रं समीहते ॥59॥

भयंकर, विकृत रूपवाली, काली स्त्री यदि स्वप्न में उत्तर या दक्षिण दिशा की ओर खींचे तो शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होता है ॥59॥

जटी मुण्डी विरूपाक्षां मलिनां मलिनवाससाम्।
स्वप्ने यः पश्यति ग्लानिं समूहे भयमादिशेत् ॥60॥

जटाधारी, सिरमुण्डित, विरूपाकृति वाली, मलिन एवं मलिन वस्त्र वाली स्त्री को स्वप्न में ग्लानिपूर्वक देखना सामूहिक भय का सूचक है ॥60॥

[1]तापसं पुण्डरीकं वा [2]भिक्षुं विकलमेव च।
दृष्ट्वा स्वप्ने विबुध्येत ग्लानिं तस्य समादिशेत् ॥61॥

तपस्वी पुण्डरीक तथा विकल भिक्षु को स्वप्न में देखकर जो जाग जाता है, उसे ग्लानि फल की प्राप्ति होती है ॥61॥

स्थले वाऽपि विकीर्येत जले वा नाशमाप्नुयात्।
यस्य स्वप्ने नरस्यास्य तस्य विद्यान्महद् भयम् ॥62॥

जो व्यक्ति भूमि पर विकीर्ण—फैल जाना और जल में नाश को प्राप्त हो जाना देखता है, उस व्यक्ति को महान् भय होता है ॥62॥

वल्ली-गुल्मसमो वृक्षो वल्मीको यस्य जायते।
शरीरे तस्य विज्ञेयं [3]तदंगस्य विनाशनम् ॥63॥

जो व्यक्ति स्वप्न में अपने शरीर पर लता, गुल्म, वृक्ष, वाल्मीक -बाँबी आदि का होना देखता है उसके शरीर का विनाश होता है ॥63॥

मालो वा वेणुगुल्मो वा खर्जूरो हरितो द्रुमः।
मस्तके जायते स्वप्ने तस्य साप्ताहिकः स्मृतः ॥64॥

स्वप्न में जो व्यक्ति अपने मस्तक पर माला, बाँस, गुल्म, खजूर अथवा हरे वृक्षों को उपजते देखता है, उसकी एक सप्ताह में मृत्यु होती है ॥64॥

हृदये यस्य जायन्ते तद्रोगेण विनश्यति।
अनंगजायमानेषु तदंगस्य विनिर्दिशेत् ॥65॥

यदि हृदय में उक्त वृक्षादिकों का उत्पन्न होना स्वप्न में देखे तो हृदय रोग से

1. उत्तमं मु०। 2. भक्ष्यं कामलमेव च मु०। 3. नरस्य विचलनम् मु०।

उसका विनाश होता है। जिस अंग में उक्त वृक्षादिकों का उत्पन्न होना स्वप्न में दिखलाई पड़ता है, उसी अंग की बीमारी द्वारा विनष्टि होती है ॥65॥

रक्तमाला तथा माला रक्तं वा सूत्रमेव च।
यस्मिन्नेवावबन्ध्येत् तदंगेन [1]विविलश्यति ॥66॥

स्वप्न में लाल माला या लाल सूत्र के द्वारा जो अंग बाँधा जाय, उसी अंग में क्लेश होता है ॥66॥

ग्राहो नरं नगं कश्चित् यदा स्वप्ने च कर्षति।
बद्धस्य मोक्षमाचष्टे मुक्तिं बद्धस्य निर्दिशेत् ॥67॥

जब स्वप्न में कोई मकर या घड़ियाल मनुष्य को खींचता हुआ-सा दिखलाई पड़े तो, जो व्यक्ति बद्ध है—कारागार आदि में बद्ध है या मुकदमे में फँसा है, उसकी मुक्ति होती है- छूट जाता है ॥67॥

पीतं पुष्पं फलं यस्मै रक्तं वा सम्प्रदीयते।
कृताकृतसुवर्णं वा तस्य [2]लाभो न संशयः ॥68॥

स्वप्न में यदि किसी व्यक्ति को पीले या लाल फल-फूलों का देना दिखलाई पड़े तो उसे सोना, चाँदी का लाभ निःसन्देह होता है ॥68॥

श्वेतमांसासनं यानं सितमाल्यस्य धारणम्।
श्वेतानां वाऽपि द्रव्याणां स्वप्ने दर्शनमुत्तमम् ॥69॥

श्वेत मांस, श्वेत आसन, श्वेत सवारी, श्वेत माला का धारण करना तथा अन्य श्वेत द्रव्यों का दर्शन स्वप्न में शुभ होता है ॥69॥

बलीवर्दयुतं यानं योऽभिरूढः प्रधावति।
प्राचीं दिशमुदीचीं वा सोऽर्थलाभमवाप्नुयात् ॥70॥

जो व्यक्ति स्वप्न में श्रेष्ठ बैलों के रथ पर चढ़कर पूर्व या उत्तर की ओर गमन करता हुआ देखता है, वह धन प्राप्त करता है ॥70॥

नग-वेश्म-पुराणं तु दीप्तानां तु शिरस्थितः।
यः स्वप्ने मानवः सोऽपि महीं भोक्तुं[3] निरामयः ॥71॥

जो व्यक्ति स्वप्न में सिर पर पर्वत, घर, पुराण तथा दीप्तिमान् पदार्थों को देखता है, वह स्वस्थ होकर पृथ्वी का उपभोग करता है ॥71॥

1. विक्लिश्यति मु. । 2. लाभस्तु लभ्यते मु. । 3. निरामयः मु. ।

मृण्मयं नागमारूढ: सागरे प्लवते हित: ।
तथैव च विबुध्येत सोऽचिराद् वसुधाधिप: ।।72।।

जो स्वप्न में मृत्तिका के हाथी पर सवार होकर सुख से समुद्र को पार करता हुआ देखे तथा उसी स्थिति में जाग जाय तो वह शीघ्र ही पृथ्वी का स्वामी होता है ।।72।।

पाण्डुराणि च वेश्मानि पुष्प-शाखा-फलान्वितान् ।
यो वृक्षान् [1]पश्यति स्वप्ने सफलं चेष्टते तदा ।।73।।

जो व्यक्ति स्वप्न में श्वेत भवनों को तथा पुष्प, फल और शाखाओं से युक्त वृक्षों को देखता है, तो उसकी चेष्टाएं सफल होती हैं ।।73।।

वासोभिर्हरितै: शुक्लैर्वेष्टित: प्रतिबुध्यते ।
दह्यते योऽग्निना वाऽपि बध्यमानो विमुच्यते ।।74।।

जो स्वप्न में शुक्ल और हरे वृक्षों से वेष्टित होकर अपने को देखता है, तथा उसी समय जाग जाता है अथवा अग्नि द्वारा जलता हुआ अपने को देखता है, वह बध्यमान होते हुए भी छोड़ दिया जाता है ।।74।।

दुग्ध-तैल-घृतानां वा क्षीरस्य च विशेषत: ।
प्रशस्तं दर्शनं स्वप्ने भोजनं न प्रशस्यते ।।75।।

स्वप्न में दूध, तेल, घी का दर्शन शुभ है, भोजन नहीं । विशेष रूप से दूध का दर्शन शुभ माना गया है ।।75।।

अंग प्रत्यंगयुक्तस्य शरीरस्य विवर्धनम् ।
प्रशस्तं दर्शनं स्वप्ने नख-रोमविवर्धनम् ।।76।।

स्वप्न में शरीर के अंग-प्रत्यंग का बढ़ना तथा नख और रोम का बढ़ना शुभ माना गया है ।।76।।

उत्संग: पूर्यते स्वप्ने यस्य धान्यैरनिन्दितै: ।
फल-पुष्पैश्च सम्प्राप्त: प्राप्नोति महतीं श्रियम् ।।77।।

स्वप्न में जिस व्यक्ति की गोद सुन्दर धान्य, फल, पुष्प से भर दी जाय, वह बहुत धन प्राप्त करता है ।।77।।

1. पश्यति मु० ।

[1]कन्या वाऽऽर्यापि वा कन्या रूपमेव विभूषिता।
प्रकृष्टा दृश्यते स्वप्ने लभते योषित: श्रियम् ॥78॥

यदि स्वप्न में सुन्दर रूपयुक्त कन्या या आर्या दिखलाई पड़े तो सुन्दर स्त्री की प्राप्ति होती है ॥78॥

प्रक्षिप्यति य: शस्त्रै: पृथिवीं पर्वतान् प्रति।
शुभमारोहते यस्य सोऽभिषेकमवाप्नुयात् ॥79॥

जो व्यक्ति स्वप्न में शस्त्रों द्वारा शत्रुओं को परास्त कर पृथ्वी और पर्वतों को अपने अधीन कर लेना देखता है अथवा जो शुभ पर्वतों पर अपने को आरोहण करता हुआ देखता है, वह राज्याभिषेक को प्राप्त होता है ॥79॥

नारी पुंस्त्वं नर: स्त्रीत्वं लभते स्वप्नदर्शने।
बध्येते तावुभौ शीघ्रं कुटुम्बपरिवृद्धये ॥80॥

यदि स्वप्न में स्त्री अपने को पुरुष होना और पुरुष स्त्री होना देखे तो वे शीघ्र कुटुम्ब के बन्धन में बँधते हैं ॥80॥

राजा राजसुतश्चौरो यो सह्याधन-धान्यत:।
स्वप्ने संजायते कश्चित् स राज्ञामभिवृद्धये ॥81॥

यदि स्वप्न में कोई धन-धान्य से युक्त हो राजा, राजपुत्र या चोर होना अपने को देखे वह राजाओं की अभिवृद्धि को पाता है ॥81॥

रुधिराभिषिक्तां कृत्वा य: स्वप्ने परिणीयते।
धन्य-धान्य-श्रिया युक्तो न चिरात् जायते नर: ॥82॥

जो व्यक्ति स्वप्न में रुधिर से अभिषिक्त होकर विवाह करता हुआ देखता है, वह व्यक्ति चिरकाल तक धन-धान्य सम्पदा से युक्त नहीं होता ॥82॥

शस्त्रेण छिद्यते जिह्वा स्वप्ने यस्य कथञ्चन।
क्षत्रियो राज्यमाप्नोति शेषा वृद्धिमवाप्नुयु: ॥83॥

यदि स्वप्न में जिह्वा को शस्त्र से छेदन करना हुआ दिखलाई पड़े तो क्षत्रियों को राज्य की प्राप्ति और अन्य वर्ण वालों का अभ्युदय होता है ॥83॥

देव-साधु-द्विजातीनां पूजनं शान्तये हितम्।
पापस्वप्नेषु कार्यस्य शोधनं चोपवासनम् ॥84॥

1. कुमार्या मु०।

पाप-स्वप्नों की शान्ति के लिए देव, साधुजन बन्धु और द्विजातियों का पूजन और सत्कर्म तथा उपवास करना चाहिए ॥84॥

एते स्वप्ना यथोद्दिष्टा: प्रायश: फलदा नृणाम् ।
प्रकृत्या कृपया चैव शेषा: साध्या निमित्तत: ॥85॥

उपर्युक्त यथा अनुसार प्रतिपादित स्वप्न मनुष्यों को प्राय: फल देने वाले हैं, अवशेष स्वप्नों को निमित्त और स्वभावानुसार समझ लेना चाहिए ॥85॥

स्वप्नाध्यायममुं मुख्यं योऽधीयेत शुचि: स्वयम् ।
स पूज्यो लभते राज्ञो नानापुण्यश्च साधव: ॥86॥

जो पवित्रात्मा स्वयं इस स्वप्नाध्याय का अध्ययन करता है, वह राजाओं के द्वारा पूज्य होता है तथा पुण्य प्राप्त करता है ॥86॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते स्वप्नाध्याय: षड्विंशोऽध्याय: समाप्त: ॥26॥

विवेचन—स्वप्नशास्त्र में प्रधानतया निम्नलिखित सात प्रकार के स्वप्न बताये गये हैं :

दृष्ट—जो कुछ जागृत अवस्था में देखा हो उसी को स्वप्नावस्था में देखा जाय ।

श्रुत—सोने के पहले कभी किसी से सुना हो उसी को स्वप्नावस्था में देखे ।

अनुभूत—जो जागृत अवस्था में किसी भाँति अनुभव किया हो, उसी को स्वप्न में देखे ।

प्रार्थित—जिसकी जागृतावस्था में प्रार्थना—इच्छा की हो उसी को स्वप्न में देखे ।

कल्पित—जिसकी जागृतावस्था में कभी भी कल्पना की गयी हो उसी को स्वप्न में देखे ।

भाविक—जो कभी न तो देखा गया हो और न सुना गया हो, पर जो भविष्य में घटित होने वाला हो उसे स्वप्न में देखा जाय ।

दोषज—वात, पित्त और कफ के विकृत हो जाने से जो स्वप्न देखा जाय ।

इन सात प्रकार के स्वप्नों में से पहले पाँच प्रकार के स्वप्न प्राय: निष्फल होते हैं, वस्तुत: भाविक स्वप्न का फल ही सत्य होता है ।

रात्रि के प्रहर के अनुसार स्वप्न का फल—रात्रि के पहले प्रहर में देखे गये स्वप्न एक वर्ष में, दूसरे प्रहर में देखे गये स्वप्न आठ महीने में (चन्द्रसेन मुनि

के मत से 7 महीने में), तीसरे प्रहर में देखे गये स्वप्न तीन महीने में, चौथे प्रहर में देखे गये स्वप्न एक महीने में (वराहमिहिर के मत से 16 दिन में), ब्राह्म मुहूर्त (उषाकाल) में देखे गये स्वप्न दस दिन में और प्रातःकाल सूर्योदय से कुछ पूर्व देखे गये स्वप्न अतिशीघ्र फल देते हैं। अब जैनाजैन ज्योतिषशास्त्र के आधार पर कुछ स्वप्नों का फल उद्धृत किया जाता है—

अगुरु—जैनाचार्य भद्रबाहु के मत से— काले रंग का अगुरु देखने से निःसन्देह अर्थ लाभ होता है। जैनाचार्य सेन मुनि के मत से, सुख मिलता है। वराहमिहिर के मत से, धनलाभ के साथ स्त्रीलाभ भी होता है। बृहस्पति के मत से—इष्ट मित्रों के दर्शन और आचार्य मयूख एवं दैवज्ञवर्य गणपति के मत से अर्थलाभ के लिए विदेश-गमन होता है।

अग्नि—जैनाचार्य चन्द्रसेन मुनि के मत से धूमयुक्त अग्नि देखने से उत्तम कान्ति, वराहमिहिर और मार्कण्डेय के मत से प्रज्वलित अग्नि देखने से कार्यसिद्धि, दैवज्ञ गणपति के मत से अग्निभक्षण करना देखने से भूमिलाभ के साथ स्त्री रत्न की प्राप्ति और बृहस्पति के मत से जाज्वल्यमान अग्नि देखने से कल्याण होता है।

अग्नि-दग्ध—जो मनुष्य आसन, शय्या, यान और वाहन पर स्वयं स्थित हो कर अपने शरीर को अग्नि दग्ध होते हुए देखे तो, मतान्तर से अन्य को जलता हुआ देखे और तत्क्षण जाग उठे, तो उसे धन-धान्य की प्राप्ति होती है। अग्नि में जल कर मृत्यु देखने से रोगी पुरुष की मृत्यु और स्वस्थ पुरुष बीमार पड़ता है। गृह अथवा दूसरी वस्तु को जलते हुए देखना शुभ है। वराहमिहिर के मत से अग्नि-लाभ भी शुभ है।

अन्न—अन्न देखने से अर्थ-लाभ और सन्तान की प्राप्ति होती है। आचार्य चन्द्रसेन के मत से श्वेत अन्न देखने से इष्ट मित्रों की प्राप्ति, लाल अन्न देखने से रोग, पीला अनाज देखने से हर्ष और कृष्ण अन्न देखने से मृत्यु होती है।

अलंकार—अलंकार देखना शुभ है, परन्तु पहनना कष्टप्रद होता है।

अस्त्र—अस्त्र देखना शुभ फलप्रद, अस्त्र द्वारा शरीर में साधारण चोट लगना तथा अस्त्र लेकर दूसरे का सामना करना विजयप्रद होता है।

अनुलेपन—श्वेत रंग की वस्तुओं का अनुलेपन शुभ फल देने वाला होता है। वराहमिहिर के मत से लाल रंग के गन्ध, चन्दन तथा पुष्पमाला आदि के द्वारा अपने को शोभायमान देखे तो शीघ्र मृत्यु होती है।

अन्धकार—अन्धकारमय स्थानों में अर्थात् वन, भूमि, गुफा, सुरंग आदि स्थानों में प्रवेश होते हुए देखना रोगसूचक है।

आकाश—भद्रबाहु के मत से निर्मल आकाश देखना शुभ फलप्रद, लाल वर्ण की आभा वाला आकाश देखना कष्टप्रद और नील वर्ण का आकाश देखना

मनोरथ सिद्ध करने वाला होता है।

आरोहण—बैल, गाय, हाथी, मन्दिर, वृक्ष, प्रासाद और पर्वत पर स्वयं आरोहण करते हुए देखना या दूसरे को आरोहित देखना अर्थ-लाभ सूचक है।

कपास—कपास देखने से स्वस्थ व्यक्ति रुग्ण होता है और रोगी की मृत्यु होती है। दूसरे को देते हुए कपास देखना शुभप्रद है।

कबन्ध—नाचते हुए क्षीण कबन्ध देखने से आधि, व्याधि और धन का नाश होता है। वराहमिहिर के मत से मृत्यु होती है।

कलश—कलश देखने से धन, आरोग्य और पुत्र की प्राप्ति होती है। कलशी देखने से गृह में कन्या उत्पन्न होती है।

कलह—कलह एवं लड़ाई-झगड़े देखने से स्वस्थ व्यक्ति रुग्ण होता है और रोगी की मृत्यु होती है।

काक—स्वप्न में काक, गिद्ध, उल्लू और कुक्कुर जिसे चारों ओर से घेर कर त्रास उत्पन्न करें तो मृत्यु और अन्य को त्रास उत्पन्न करते हुए देखे तो अन्य की मृत्यु होती है।

कुमारी—कुमारी कन्या को देखने से अर्थलाभ एवं सन्तान की प्राप्ति होती है। वराहमिहिर के मत से कुमारी कन्या के साथ आलिंगन करना देखने से कष्ट एवं धनक्षय होता है।

कूप—गन्दे जल या पंक वाले कूप के अन्दर गिरना या डूबना देखने से स्वस्थ व्यक्ति रोगी और रोगी की मृत्यु होती है। तालाब या नदी में प्रवेश करना देखने से रोगी को मरण तुल्य कष्ट होता है।

क्षौर—नाई के द्वारा स्वयं अपनी या दूसरे की हजामत करना देखने से कष्ट के साथ-साथ धन और पुत्र का नाश होता है। गणपति दैवज्ञ के मत से माता-पिता की मृत्यु, मार्कण्डेय के मत से भार्यामरण के साथ माता-पिता की मृत्यु और बृहस्पति के मत से पुत्र मरण होता है।

खेल—अत्यन्त आनन्द के साथ खेल खेलते हुए देखना दुःस्वप्न है। इसका फल बृहस्पति के मत से रोना, शोक करना एवं पश्चात्ताप करना, ब्रह्मवैवर्त पुराण के मत से—धन-नाश, ज्येष्ठ पुत्र या कन्या का मरण और भार्या को कष्ट होता है। नारद के मत से सन्तान-नाश और पाराशर के मत से—धन-क्षय के साथ अपकीर्ति होती है।

गमन—दक्षिण दिशा की ओर गमन करना देखने से धन-नाश के साथ कष्ट, पश्चिम दिशा की ओर गमन करना देखने से अपमान, उत्तर दिशा की ओर गमन करना देखने से स्वास्थ्य-लाभ और पूर्व दिशा की ओर गमन करना देखने से धन-प्राप्ति होती है।

गर्त्त—ऊँचे स्थान से अन्धकारमय गर्त में गिर जाना देखने से रोगी की

मृत्यु और स्वस्थ पुरुष रुग्ण होता है। यदि स्वप्न में गर्त्त में गिर जाय और उठने का प्रयत्न करने पर भी बाहर न आ सके तो उसकी दस दिन के भीतर मृत्यु होती है।

गाड़ी— गाय या बैलों के द्वारा खींची जाने वाली गाड़ी पर बैठे हुए देखने से पृथ्वी के नीचे से चिर संचित धन की प्राप्ति होती है। वराहमिहिर के मत से—पीताम्बर धारण किये स्त्री को एक ही स्थान पर कई दिनों तक देखने से उस स्थान पर धन मिलता है। बृहस्पति के मत से स्वप्न में दाहिने हाथ में साँप को काटता हुआ देखने से लक्ष रुपये की प्राप्ति अति शीघ्र होती है।

गाना—स्वयं को गाता हुआ देखने से कष्ट होता है। भद्रबाहु स्वामी के मत से स्वयं या दूसरे को मधुर गाना गाते हुए देखने से मुकदमा में विजय, व्यापार में लाभ और यश-प्राप्ति, बृहस्पति के मत से अर्थ-लाभ के साथ भयानक रोगों का शिकार और नारद के मत से सन्तान-कष्ट और अर्थ-लाभ एवं मार्कण्डेय के मत से अपार कष्ट होता है।

गाय—दुहने वाले के साथ गाय को देखने से कीर्ति और पुण्य लाभ होता है। गणपति दैवज्ञ के मत से—जल पीती गाय देखने से लक्ष्मी के तुल्य गुण वाली कन्या का जन्म और वराहमिहिर के मत से—स्वप्न में गाय का दर्शन मात्र ही सन्तानोत्पादक है।

गिरना—स्वप्न में लड़खड़ाते हुए गिरना देखने से दुःख, चिन्ता एवं मृत्यु होती है।

गृह—गृह में प्रवेश करना, ऊपर चढ़ना एवं किसी से प्राप्त करना देखने से भूमि-लाभ और धन-धान्य की प्राप्ति एवं गृह का गिरना देखने से मृत्यु होती है।

घास—कच्चा घास, शस्य (धान), कच्चे गेहूँ एवं चने के पौधे देखने से भार्या को गर्भ रहता है। परन्तु इनके काटने या खाने से गर्भपात होता है।

घृत—घृत देखने से मन्दाग्नि, अन्य से लेना देखने से यश-प्राप्ति, घृत-पान करना देखने से प्रमेह और शरीर में लगाना देखने से मानसिक चिन्ताओं के साथ शारीरिक कष्ट होता है।

घोटक—घोड़ा देखने से अर्थ-लाभ, घोड़ा पर चढ़ना देखने से कुटुम्ब-वृद्धि और घोड़ी का प्रसव करना देखने से सन्तान-लाभ होता है।

चक्षु—स्वप्न में अकस्मात् चक्षुद्वय का नष्ट होना देखने से मृत्यु और आँख का फूट जाना देखने से कुटुम्ब में किसी की मृत्यु होती है।

चादर—स्वप्न में शरीर की चादर, चोंगा या कमीज आदि को श्वेत और लाल रंग की देखने से सन्तान-हानि होती है।

चिता—अपने को चिता पर आरूढ़ देखने से बीमार व्यक्ति की मृत्यु होती है और स्वस्थ व्यक्ति बीमार होता है।

जल--स्वप्न में निर्मल जल देखने से कल्याण, जल द्वारा अभिषेक देखने से भूमि की प्राप्ति, जल में डूबकर निमग्न होना देखने से मृत्यु, जल को तैरकर पार करना देखने से सुख और जल पीना देखने से कष्ट होता है।

जूता--स्वप्न में जूता देखने से विदेश-यात्रा, जूता प्राप्त कर उपभोग करना देखने से ज्वर, एवं जूता से मार-पीट करना देखने से छः महीने में मृत्यु होती है।

तिल-तेल—तिल तेल और खली की प्राप्ति होना देखने से कष्ट, पीना और भक्षण करना देखने से मृत्यु, मालिश करना देखने से मृत्यु तुल्य कष्ट होता है।

दधि--स्वप्न में दही देखने से प्रीति, भक्षण करना देखने से यश-प्राप्ति, भात के साथ भक्षण करना देखने से सन्तान-लाभ और दूसरों को देना-लेना देखने से अर्थलाभ होता है।

दाँत--दाँत कमजोर हो गये हैं और गिरने के लिए तैयार हैं, या गिर रहे हैं ऐसा देखने से धन का नाश और शारीरिक कष्ट होता है। वराहमिहिर के मत से स्वप्न में नख, दाँत और केशों का गिरना देखना मृत्युसूचक है।

दीपक--स्वप्न में दीपक जलता हुआ देखने से अर्थलाभ, अकस्मात् निर्वाण प्राप्त हुआ देखने से मृत्यु और ऊर्ध्व लौ देखने से यश-प्राप्ति होती है।

देव-प्रतिमा—स्वप्न में इष्ट देव का दर्शन पूजन और आह्वान करना देखने से विपुल धन की प्राप्ति के साथ परम्परा से मोक्ष मिलता है। स्वप्न में प्रतिमा का कम्पित होना, गिरना, हिलना, चलना, नाचना और गाते हुए देखने से आधि-व्याधि और मृत्यु होती है।

नग्न--स्वप्न में नग्न होकर मस्तक पर लाल रंग की पुष्पमाला धारण करना देखने से मृत्यु होती है।

नृत्य--स्वप्न में स्वयं का नृत्य करना देखने से रोग और दूसरों को नृत्य करता हुआ देखने से अपमान होता है। वराहमिहिर के मत में—नृत्य का किसी भी रूप में देखना अशुभसूचक है।

पक्वान्न--स्वप्न में पक्वान्न कहीं से प्राप्त कर भक्षण करता हुआ देखे तो रोगी की मृत्यु होती है। और स्वस्थ व्यक्ति बीमार होता है। स्वप्न में पूरी, कचौरी, मालपुआ और मिष्टान्न खाना देखने से शीघ्र मृत्यु होती है।

फल--स्वप्न में फल देखने से धन की प्राप्ति, फल खाना देखने से रोग एवं सन्तान-नाश, और फल का अपहरण करना देखने से चोरी एवं मृत्यु आदि अनिष्ट फलों की प्राप्ति होती है।

फूल--स्वप्न में श्वेत पुष्पों का प्राप्त होना देखने से धन-लाभ, रक्तवर्ण के पुष्पों का प्राप्त होना देखने से रोग, पीतवर्ण के पुष्पों का प्राप्त होना देखने से यश एवं धन-लाभ, हरितवर्ण के पुष्पों का प्राप्त होना देखने से दुष्ट-मित्रों का मिलना और कृष्ण वर्ण के पुष्प देखने से मृत्यु होती है।

भूकम्प—भूकम्प होना देखने से रोगी की मृत्यु और स्वस्थ व्यक्ति रुग्ण होता है। चन्द्रसेन मुनि के मत से, स्वप्न में भूकम्प देखने से राजा का मरण होता है। भद्रबाहु स्वामी के मत से, स्वप्न में भूकम्प होना देखने से राज्य विनाश के साथ-साथ देश में बड़ा भारी उपद्रव होता है।

मल-मूत्र— स्वप्न में मल-मूत्र का शरीर में लग जाना देखने से धनप्राप्ति; भक्षण करना देखने से सुख और स्पर्श करना देखने से सम्मान मिलता है।

मृत्यु—स्वप्न में किसी की मृत्यु देखने से शुभ होता है और जिसकी मृत्यु देखते हैं वह दीर्घजीवी होता है। परन्तु अन्य दुःखद घटनाएँ सुनने को मिलती हैं।

यव—स्वप्न में जौ देखने से घर में पूजा, होम और अन्य मांगलिक कार्य होते हैं।

युद्ध—स्वप्न में युद्ध विजय देखने से शुभ, पराजय देखने से अशुभ और युद्ध सम्बन्धी वस्तुओं को देखने से चिन्ता होती है।

रुधिर—स्वप्न में शरीर में से रुधिर निकलना देखने से धन-धान्य की प्राप्ति; रुधिर से अभिषेक करता हुआ देखने से सुख; स्नान देखने से अर्थ-लाभ और रुधिर पान करना देखने से विद्या-लाभ एवं अर्थलाभ होता है।

लता—स्वप्न में कण्टकवाली लता देखने से गुल्म रोग; साधारण फल-फूल सहित लता देखने से नृपदर्शन और लता के क्रीड़ा करने से रोग होता है।

लोहा—स्वप्न में लोहा देखने से अनिष्ट और लोहा या लोहे से निर्मित वस्तुओं के प्राप्त करने से आधि-व्याधि और मृत्यु होती है।

वमन—स्वप्न में वमन और दस्त होना देखने से रोगी की मृत्यु; मल-मूत्र और सोना-चाँदी का वमन करना देखने से निकट मृत्यु; रुधिर वमन करना देखने से छः मास आयु शेष और दुग्ध वमन करना देखने से पुत्र-प्राप्ति होती है।

विवाह—स्वप्न में अन्य के विवाह या विवाहोत्सव में योग देना देखने से पीड़ा, दुःख या किसी आत्मीय जन की मृत्यु और अपना विवाह देखने से मृत्यु या मृत्यु-तुल्य पीड़ा होती है।

वीणा—स्वप्न में अपने द्वारा वीणा बजाना देखने से पुत्र-प्राप्ति; दूसरों के द्वारा वीणा बजाना देखने से मृत्यु या मृत्यु तुल्य पीड़ा होती है।

शृंग—स्वप्न में शृंग और नखवाले पशुओं को मारने के लिए दौड़ना देखने से राज्य भय और मारते हुए देखने से रोगी होता है।

स्त्री—स्वप्न में श्वेत वस्त्र परिहिता, हाथों में श्वेत पुष्प या माला धारण करने वाली एवं सुन्दर आभूषणों से सुशोभित स्त्री के देखने तथा आलिंगन करने से धन प्राप्ति; रोग मुक्ति होती है। परस्त्रियों का लाभ होना अथवा आलिंगन करना देखने से शुभ फल होता है। पीतवस्त्र परिहिता, पीत पुष्प या पीत माला धारण करने वाली स्त्री को स्वप्न में देखने से कल्याण; समवस्त्र परिहिता, मुक्त-

केशी और कृष्ण वर्ण के दाँत वाली स्त्री का दर्शन या आलिंगन करना देखने से छः मास के भीतर मृत्यु और कृष्ण वर्ण वाली पापिनी आचारविहीना लम्बकेशी लम्बे स्तन वाली और मैले वस्त्र परिहिता स्त्री का दर्शन और आलिंगन करना देखने से शीघ्र मृत्यु होती है।

तिथियों के अनुसार स्वप्न का फल—

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा—इस तिथि में स्वप्न देखने पर विलम्ब से फल मिलता है।

शुक्लपक्ष की द्वितीया—इस तिथि में स्वप्न देखने पर विपरीत फल होता है। अपने लिए देखने से दूसरों को और दूसरों के लिए देखने से अपने को फल मिलता है।

शुक्लपक्ष की तृतीया—इस तिथि में भी स्वप्न देखने से विपरीत फल मिलता है। पर फल की प्राप्ति विलम्ब से होती है।

शुक्ल पक्ष की चतुर्थी और पंचमी—इन तिथियों में स्वप्न देखने से दो महीने से लेकर दो वर्ष तक के भीतर फल मिलता है।

शुक्लपक्ष की षष्ठी, सप्तमी, अष्टमी, नवमी और दशमी—इन तिथियों में स्वप्न देखने से शीघ्र फल की प्राप्ति होती है तथा स्वप्न सत्य निकलता है।

शुक्लपक्ष की एकादशी और द्वादशी—इन तिथियों में स्वप्न देखने से विलम्ब से फल होता है।

शुक्लपक्ष की त्रयोदशी और चतुर्दशी—इन तिथियों में स्वप्न देखने से स्वप्न का फल नहीं मिलता है तथा स्वप्न मिथ्या होते हैं।

पूर्णिमा—इस तिथि के स्वप्न का फल अवश्य मिलता है।

कृष्णपक्ष की प्रतिपदा—इस तिथि के स्वप्न का फल नहीं होता है।

कृष्णपक्ष की द्वितीया—इस तिथि के स्वप्न का फल विलम्ब से मिलता है। मतान्तर से, इसका स्वप्न सार्थक होता है।

कृष्णपक्ष की तृतीया और चतुर्थी—इन तिथियों के स्वप्न मिथ्या होते हैं।

कृष्णपक्ष की पंचमी और षष्ठी—इन तिथियों के स्वप्न दो महीने बाद और तीन वर्ष के भीतर फल देने वाले होते हैं।

कृष्णपक्ष की सप्तमी—इस तिथि का स्वप्न अवश्य शीघ्र ही फल देता है।

कृष्णपक्ष की अष्टमी और नवमी—इन तिथियों के स्वप्न विपरीत फल देने वाले होते हैं।

कृष्णपक्ष की दशमी, एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी—इन तिथियों के स्वप्न मिथ्या होते हैं।

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी—इस तिथि का स्वप्न सत्य होता है तथा शीघ्र ही फल देता है।

अमावस्या—इस तिथि का स्वप्न मिथ्या होता है।

धनप्राप्ति सूचक फल—स्वप्न में हाथी, घोड़ा, बैल, सिंह के ऊपर बैठकर गमन करता हुआ देखे तो शीघ्र धन मिलता है। पहाड़, नगर, ग्राम, नदी और समुद्र के देखने से भी अतुल लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। तलवार, धनुष और बन्दूक आदि से शत्रुओं को ध्वंस करता हुआ देखने से अपार धन मिलता है। स्वप्न में हाथी, घोड़ा, बैल, पहाड़, वृक्ष और गृह इन पर आरोहण करता हुआ देखने से भूमि के नीचे से धन मिलता है। स्वप्न में नख और रोम से रहित शरीर के देखने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। स्वप्न में दही, छत्र, फूल, चमर, अन्न, वस्त्र, दीपक, ताम्बूल, सूर्य, चन्द्रमा, पुष्प, कमल, चन्दन, देव-पूजा, वीणा और अस्त्र देखने से शीघ्र ही अर्थ-लाभ होता है। यदि स्वप्न में चिड़ियों के पर पकड़ कर उड़ता हुआ देखे तथा आकाशमार्ग में देवताओं की दुन्दुभि की आवाज सुने तो पृथ्वी के नीचे से शीघ्र धन मिलता है।

सन्तानोत्पादक स्वप्न—स्वप्न में वृषभ, कलश, माला, गन्ध, चन्दन, श्वेत पुष्प, आम, अमरूद, केला, सन्तरा, नीबू और नारियल इनकी प्राप्ति होने से तथा देवमूर्ति, हाथी, सत्पुरुष, सिद्ध, गन्धर्व, गुरु, स्वर्ण, रत्न, जौ, गेहूँ, सरसों, कन्या, रक्तपान करना, अपनी मृत्यु देखना, केला, कल्पवृक्ष, तीर्थ, तोरण, भूषण, राजमार्ग, और मट्ठा देखने से शीघ्र ही सन्तान की प्राप्ति होती है। किन्तु फल और पुष्पों का भक्षण करना देखने से सन्तान मरण अथवा गर्भपात होता है।

मरण सूचक स्वप्न—स्वप्न में तेल मले हुए, नग्न होकर भैंस, गधे, ऊँट, कृष्ण बैल और काले घोड़े पर चढ़कर दक्षिण दिशा की ओर गमन करना देखने से; रसोईगृह में, लाल पुष्पों से परिपूर्ण वन में और सूतिका गृह में अंग-भंग पुरुष का प्रवेश करना देखने से; झूलना, गाना, खेलना, फोड़ना, हँसना, नदी के जल में नीचे चले जाना तथा सूर्य, चन्द्रमा, ध्वजा और ताराओं का गिरना देखने से; भस्म, घी, लोह, लाख, गीदड़, मुर्गा, बिलाव, गोह, न्योला, बिच्छू, मक्खी, सर्प और विवाह आदि उत्सव देखने से एवं स्वप्न में दाढ़ी, मूँछ और सिर के बाल मुँड़वाना देखने से मृत्यु होती है।

पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार स्वप्नों के फल—यों तो पाश्चात्य विद्वानों ने अधिकांश रूप से स्वप्नों को निस्सार बताया है, पर कुछ ऐसे भी दार्शनिक हैं जो स्वप्नों को सार्थक बतलाते हैं। उनका मत है कि स्वप्न में हमारी कई अतृप्त इच्छाएँ भी चरितार्थ होती हैं। जैसे हमारे मन में कहीं भ्रमण करने की इच्छा होने पर स्वप्न में यह देखना कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि हम कहीं भ्रमण कर रहे हैं। सम्भव है कि जिस इच्छा ने हमें भ्रमण का स्वप्न दिखाया है वही कालान्तर में हमें भ्रमण कराये। इसलिए स्वप्न में भावी घटनाओं का आभास मिलना साधारण बात है। कुछ विद्वानों ने इस थ्योरी का नाम सम्भाव्य गणित रक्खा

है । इस सिद्धान्त के अनुसार स्वप्न में देखी गई कुछ अतृप्त इच्छाएँ सत्य रूप में चरितार्थ होती हैं; क्योंकि बहुत समय से कई इच्छाएँ अज्ञात होने के कारण स्वप्न में प्रकाशित रहती हैं और ये ही इच्छाएँ किसी कारण से मन में उदित होकर हमारे तदनुरूप कार्य करा सकती हैं। मानव अपनी इच्छाओं के बल से ही सांसारिक क्षेत्र में उन्नति या अवनति करता है, उसके जीवन में उत्पन्न इच्छाओं में कुछ इच्छाएँ अप्रस्फुटित अवस्था में ही विलीन हो जाती हैं, लेकिन कुछ इच्छाएँ परिपक्वावस्था तक चलती रहती हैं। इन इच्छाओं में इतनी विशेषता होती है कि ये बिना तृप्त हुए लुप्त नहीं हो सकतीं । सम्भाव्य गणित के सिद्धान्तानुसार जब स्वप्न में परिपक्वावस्था वाली अतृप्त इच्छाएँ प्रतीकाधार को लिये हुए देखी जाती हैं, उस समय स्वप्न का भावी फल सत्य निकलता है । अबाधभावानुषंग से हमारे मन के अनेक गुप्त भाव प्रतीकों से ही प्रकट हो जाते हैं, मन की स्वाभाविक धारा स्वप्न में प्रवाहित होती है, जिससे स्वप्न में मन की अनेक चिन्ताएँ गुँथी हुई प्रतीत होती हैं । स्वप्न के साथ संश्लिष्ट मन की जिन चिन्ताओं और गुप्त भावों का प्रतीकों से आभास मिलता है, वही स्वप्न का अव्यक्त अंश भावी फल के रूप में प्रकट होता है । अस्तु, उपलब्ध सामग्री के आधार पर कुछ स्वप्नों के फल नीचे दिये जाते हैं।

अस्वस्थ—अपने सिवाय अन्य किसी को अस्वस्थ देखने से कष्ट होता है और स्वयं अपने को अस्वस्थ देखने से प्रसन्नता होती है। जी० एच० मिलर के मत से, स्वप्न में स्वयं अपने को अस्वस्थ देखने से कुटुम्बियों के साथ मेलमिलाप बढ़ता है एवं एक मास के बाद स्वप्नद्रष्टा को कुछ शारीरिक कष्ट भी होता है तथा अन्य को अस्वस्थ देखने से द्रष्टा शीघ्र रोगी होता है। डॉक्टर सी० जे० ह्विटबे के मतानुसार, अपने को अस्वस्थ देखने से सुख-शान्ति और दूसरे को अस्वस्थ देखने से विपत्ति होती है । सुकरात के सिद्धान्तानुसार, अपने और दूसरे को अस्वस्थ देखना रोगसूचक है । बिबलोनियन और पृथगवोगियन के सिद्धान्तानुसार, अपने को अस्वस्थ देखना नीरोग सूचक और दूसरे को अस्वस्थ देखना पुत्र-मित्रादि के रोग को प्रकट करने वाला होता है।

आवाज—स्वप्न में किसी विचित्र आवाज को स्वयं सुनने से अशुभ सन्देश सुनने को मिलता है। यदि स्वप्न की आवाज सुनकर निद्रा भंग हो जाती है तो सारे कार्यों में परिवर्तन होने की सम्भावना होती है। अन्य किसी की आवाज सुनते हुए देखने से पुत्र और स्त्री को कष्ट होता है तथा अपने अति निकट कुटुम्बियों की आवाज सुनते हुए देखने से किसी आत्मीय की मृत्यु प्रकट होती है। डॉ० जी० एच० मिलर के मत से आवाज सुनना भ्रम का द्योतक है।

ऊपर—यदि स्वप्न में कोई चीज अपने ऊपर लटकती हुई दिखाई पड़े और उसके गिरने का सन्देह हो तो शत्रुओं के द्वारा धोखा होता है। ऊपर गिर जाने

से धन-नाश होता है, यदि ऊपर न गिरकर पास में गिरती है तो धन-हानि के साथ स्त्री-पुत्र एवं अन्य कुटुम्बियों को कष्ट होता है। जी० एच० मिलर के मत से, किसी भी वस्तु का ऊपर गिरना धननाश कारक है। डॉ० सी० जे० व्हिटले के मत से किसी वस्तु के ऊपर गिरने से तथा गिरकर चोट लगने से मृत्यु तुल्य कष्ट होता है।

कटार—स्वप्न में कटार के देखने से कष्ट और कटार चलाते हुए देखने से धनहानि तथा निकट कुटुम्बी के दर्शन, मिष्ट भोजन एवं पत्नी से प्रेम होता है। किसी-किसी के मत से अपने में स्वयं कटार भोंकते हुए देखने से किसी के रोगी होने के समाचार सुनाई पड़ते हैं।

कनेर—स्वप्न में कनेर के फूल वृक्ष का दर्शन करने से मान-प्रतिष्ठा मिलती है। कनेर के वृक्ष से फूल और पत्तों को गिरना देखने से किसी निकट आत्मीय की मृत्यु होती है। कनेर का फल भक्षण करना रोगसूचक है, तथा एक सप्ताह के भीतर अत्यन्त अशान्ति देने वाला होता है। कनेर के वृक्ष के नीचे बैठकर पुस्तक पढ़ता हुआ अपने को देखने से दो वर्ष के बाद साहित्यिक क्षेत्र में यश की प्राप्ति होती है, एवं नये-नये प्रयोग का आविष्कर्ता होता है।

किला—किले की रक्षा के लिए लड़ाई करते हुए देखने से मानहानि एवं चिन्ताएँ; किले में भ्रमण करने से शारीरिक कष्ट; किले के दरवाजे पर पहरा लगाने से प्रेमिका से मिलन एवं मित्रों की प्राप्ति और किले के देखने मात्र से परदेशी बन्धु से मिलन होता है तथा सुन्दर स्वादिष्ट मांस भक्षण को मिलता है।

केला—स्वप्न में केला का दर्शन शुभफल दायक होता है और केले का भक्षण अनिष्ट फल देने वाला होता है। किसी के हाथ से जबरदस्ती केला लेकर खाने से मृत्यु और केले के पत्तों पर स्वादिष्ट भोजन करने से आदर एवं केले के खम्भे लगाने से घर में मांगलिक कार्य होते हैं।

केश—किसी सुन्दरी के केशपाश का स्वप्न में चुम्बन करने से प्रेमिका-मिलन और केश के दर्शन से मुकदमे में पराजय एवं दैनिक कार्यों में असफलता मिलती है।

खल—स्वप्न में किसी दुष्ट के दर्शन करने से मित्रों से अनबन और लड़ाई करने से मित्रों से प्रेम होता है। खल के साथ मित्रता करने से नाना भय और चिन्ताएँ उत्पन्न होती हैं। खल के साथ भोजन-पान करने से शारीरिक कष्ट, बातचीत करने से रोग और उसके हाथ से दूध लेने से सैकड़ों रुपयों की प्राप्ति होती है। किसी-किसी के मत से खल का दर्शन शुभ माना गया है।

खेल—स्वप्न में खेलते हुए देखने से स्वास्थ्य वृद्धि और दूसरों को खेलते हुए देखने से ख्याति-लाभ होता है। खेल में अपने को पराजित देखने से कार्य साफल्य और जय देखने से कार्य-हानि होती है। खेल का मैदान देखने से युद्ध में भाग

लेने का संकेत होता है। खिलाड़ियों का आपस में मल्लयुद्ध करते हुए देखना बड़े भारी रोग का सूचक है।

गाय—यदि स्वप्न में कोई गाय दुहने की इन्तजारी में बैठी हुई दिखाई पड़े तो सभी इच्छाओं की पूर्ति होती है। गाय का दर्शन, जी० एच० मिलर के मत से, प्रेमिका-मिलन सूचक बताया गया है। चारा खाते हुए गाय को देखने से अन्न प्राप्ति; बछड़े को पिलाते हुए देखने से पुत्रप्राप्ति; गोबर करते हुए गाय को देखने से धनप्राप्ति और पागुर करते हुए देखने से कार्य में सफलता मिलती है।

घड़ी—स्वप्न में घड़ी देखने से शत्रुभय होता है। घड़ी के घण्टों की आवाज सुनने से दुःखद संवाद सुनते हैं, या किसी मित्र की मृत्यु का समाचार सुनाई पड़ता है। किसी के हाथ से घड़ी गिरते हुए देखने से मृत्युतुल्य कष्ट होता है। अपने हाथ की घड़ी का गिरना देखने से छः महीने के भीतर मृत्यु होती है।

चाय—स्वप्न में चाय का पीना देखने से शारीरिक कष्ट; प्रेमिका वियोग एवं व्यापार में हानि होती है। मतान्तर से चाय पीना शुभकारक भी है।

जन्म—यदि स्वप्न में कोई स्त्री बच्चे का जन्म देखे तो उसकी किसी सखी, सहेली को पुत्र-प्राप्ति होती है तथा उसे उपहार मिलते हैं। यदि पुरुष यही स्वप्न देखे तो यश-प्राप्ति होती है।

झाड़ू—यदि स्वप्न में नया झाड़ू दिखाई पड़े तो शीघ्र ही भाग्योदय होता है। पुराने झाड़ू का दर्शन करने से सट्टे में धन-हानि होती है। यदि स्त्री इसी स्वप्न को देखे तो उसे भविष्य में नाना कष्टों का सामना करना पड़ता है।

मृत्यु—मृत्यु देखने से किसी आत्मीय की मृत्यु होती है; किन्तु जिस व्यक्ति की मृत्यु देखी गयी है, उसका कल्याण होता है। मृत्यु का दृश्य देखना, मरते हुए व्यक्ति को छटपटाहट देखना अशुभसूचक है। किसी सवारी से नीचे उतरते ही मृत्यु देखना राजनीति में पराजय का सूचक है। सवारी के ऊपर चढ़कर ऊँचा उठना तथा किसी पहाड़ पर ऊँचा चढ़ना शुभफल सूचक होता है।

युद्ध—स्वप्न में युद्ध का दृश्य देखना, युद्ध में भयभीत होना, मारकाट में भाग लेना तथा अपने को युद्ध में मृत देखना जीवन में पराजय का सूचक है। इस प्रकार का स्वप्न देखने से सभी क्षेत्रों में असफलता मिलती है। जो व्यक्ति युद्ध में अपनी मृत्यु देखता है, उसे कष्ट सहन करने पड़ते हैं तथा वह प्रेम में असफल होता है। जिससे वह प्रेम करता है, उसकी ओर से ठुकराया जाता है। युद्ध में विजय देखना सफल प्रेम का सूचक है। जिस प्रेमिका या प्रेमी को व्यक्ति चाहता है वह सरलतापूर्वक प्राप्त हो जाता है। नग्न होकर युद्ध करते हुए देखने से युद्ध में सफलता मिलती है तथा अनेक स्थानों पर भोजन करने का निमंत्रण मिलता है। यदि कोई व्यक्ति किसी सवारी पर आरूढ़ होकर रणभूमि में जाता

हुआ दृष्टिगोचर हो तो इस प्रकार के स्वप्न के देखने से जीवन में अनेक तरह की सफलता मिलती है।

सप्तविंशतितमोऽध्यायः

यदा स्थितौ जीवबुधौ समूर्यौ राशिस्थितानाञ्च तथानुवर्तिनौ।
नृनागवङ्गावरसंगरस्तदा भवन्ति वाताः समुपस्थितास्ताः ॥1॥

जब बृहस्पति और बुध सूर्य के साथ स्थित होकर स्वराशियों में स्थित ग्रहों के अनुवर्ती हों और मनुष्य, सर्प तथा अन्य छोटे जन्तु युद्ध करते दिखलायी पड़ें तब भयंकर तूफान आता है ॥1॥

न मित्रभावे सुहृदो समेता न चाल्पतरमम्बु ददाति वासवः।
भिनत्ति वज्रेण तदा शिरांसि महीभृतां चाप्यपवर्षणं च ॥2॥

यदि शुभ ग्रह मित्रभाव में स्थित न हों तो वर्षा का अभाव रहता है तथा इन्द्र पर्वतों के मस्तक को वज्र से चूर करता है—पर्वतों पर विद्युत्पात होता है और अवर्षण रहता है ॥2॥

सोमग्रहे निवृत्तेषु पक्षान्ते चेद् भवेद्ग्रहः।
तत्रानयः प्रजानां च दम्पत्योर्वैरमादिशेत् ॥3॥

चन्द्रमा की निवृत्ति होने पर पक्षान्त में यदि कोई अशुभ ग्रह हो तो प्रजा में अनीति—अन्याय और दम्पति वैर होता है ॥3॥

कृत्तिकायां दहत्यग्नौ रोहिण्यामर्थसम्पदः।
दंशन्ति मूषिकाः सौम्ये चार्द्रायां प्राणसंशयः ॥4॥

कृत्तिका नक्षत्र में नवीन वस्त्र या नवीन वस्तु धारण करने से अग्नि जलाती है, रोहिणी में धन-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है, मृगशिर में मूषक काटते हैं और आर्द्रा में प्राणों का संशय उत्पन्न हो जाता है ॥4॥

धान्यं पुनर्वसौ वस्त्रं पुष्य: सर्वार्थसाधक:।
आश्लेषासु भवेद्रोग: श्मशानं स्यान्मघासु च ॥5॥

पुनर्वसु में नवीन वस्त्र या नवीन वस्तु धारण करने से धान्य की प्राप्ति होती है, पुष्य नक्षत्र में धारण करने से सभी अभिलाषाओं की पूर्ति होती है, आश्लेषा में रोग होता है और मघा नक्षत्र में श्मशान —मरण प्राप्त होता है ॥5॥

पूर्वाफाल्गुनी शुभदा [1]राज्यदोत्तरफाल्गुनी।
वस्त्रदा संस्मृता लोके तूत्तरभाद्रपदा शुभा ॥6॥

पूर्वा फाल्गुनी में नवीन वस्त्र धारण करने से शुभ होता है, उत्तरा फाल्गुनी में राज्य की प्राप्ति होती है, और उत्तराभाद्रपद शुभ और वस्त्र देने वाली कही गयी है ॥6॥

हस्ते च ध्रुवकर्माणि चित्रास्वाभरणं शुभम्।
मिष्टान्नं लभ्यते स्वातौ विशाखा प्रियदर्शिका ॥7॥

हस्त नक्षत्र में ध्रुव कार्य—स्थिर कार्य करना शुभ होता है, चित्रा नक्षत्र में आभरण धारण करना शुभ होता है, स्वाति नक्षत्र में वस्त्र, आभरण धारण करने से मिष्टान्न की प्राप्ति होती है और विशाखा नक्षत्र में धारण करने से प्रिय का दर्शन होता है ॥7॥

अनुराधा वस्त्रदात्री ज्येष्ठा वस्त्रविनाशिनी।
मरणाय तथैवोक्ता हानिकारणलक्षणा ॥8॥

नये वस्त्राभरण धारण करने वालों को अनुराधा नक्षत्र वस्त्र देने वाला, ज्येष्ठा वस्त्र का विनाश करने वाला, मरण देने वाला और हानि करने वाला होता है ॥8॥

मूलेन क्लिश्यते वस्त्रं [2]पूर्वायां रोगसम्भव:।
उत्तरा वस्त्रदा ख्याता श्रवणो नेत्ररोगद: ॥9॥

मूल नक्षत्र में वस्त्र धारण करने वाले को क्लेश, पूर्वाषाढ़ा में रोग, उत्तरा भाद्रपद में वस्त्र-प्राप्ति और श्रवण नक्षत्र में नवीन वस्त्राभरण धारण करने से नेत्र रोग होता है ॥9॥

धनिष्ठा धनलाभाय शतभिषा विषाद्भयम्।
पूर्वभाद्रपदात्तोयमुत्तरा बहुवस्त्रदा ॥10॥

1. राजश्चोत्तर। 2. पूर्वायां।

धनिष्ठा नक्षत्र में नवीन वस्त्राभरण धारण करने से धनलाभ, शतभिषा में धारण करने से विष का भय तथा पूर्वाभाद्रपद में और उत्तराभाद्रपद नक्षत्रों में धारण करने से बहुत वस्त्रों की प्राप्ति होती है ॥10॥

रेवती लोहिताय स्याद् बहुवस्त्रा तथाऽश्विनी।
भरणी यमलोकार्थमेवमेव तु कष्टदा ॥11॥

रेवती नक्षत्र में नवीन वस्त्राभरण धारण करने से लोहित-जंग लगना, अश्विनी में धारण करने से बहुत से वस्त्रों की प्राप्ति होना और भरणी नक्षत्र में नवीन वस्त्राभरण धारण करने से मरण या तत्तुल्य कष्ट होता है ॥11॥

शुभग्रहाः फलं दद्युः पञ्चाशद्दिवसेषु तु।
षष्ठ्यहःस्वथवा सर्वे पापा नवदिनान्तरम् ॥12॥

शुभग्रह पचास या साठ दिनों के उपरान्त तथा पापग्रह नौ दिनों के उपरान्त फल देते हैं ॥12॥

शुभाशुभे वीक्ष्यतु यो ग्रहाणां गृही सुवस्त्रव्यवहारकारी।
समोदयेऽवाप्य समस्तभोगं निरस्तरोगो व्यसनैर्विमुक्तः ॥13॥

जो गृहस्थ ग्रहों के शुभाशुभत्व को देखकर वस्त्रों का व्यवहार करता है, वह समस्त भोगों को प्राप्त कर आनन्दित होता है तथा रोग और व्यसनों से छुटकारा प्राप्त करता है ॥13॥

इति श्रीभद्रबाहुविरचिते महानिमित्तशास्त्रे सप्तविंशतितमो वस्त्रव्यवहारनिमित्तकोऽध्यायः ॥27॥

॥ निमित्तं परिसमाप्तम् ॥

विवेचन — ग्रह और नक्षत्र शुभाशुभ, क्रूर-सौम्य आदि अनेक प्रकार के होते हैं। शुभ ग्रह और शुभ नक्षत्रों का फल शुभ और अशुभ ग्रह और अशुभ नक्षत्रों का फल अशुभ मिलता है। इस अध्याय में साधारणतया नवीन वस्त्राभरणादि धारण करने के लिए कौन कौन नक्षत्र शुभ हैं और कौन अशुभ हैं, इसका निरूपण किया गया है। नक्षत्रों में विशेष बातों का आगे अन्य ग्रन्थों में इनकी विशेषताओं का निरूपण किया जायेगा।

शान्ति, गृह, वाटिका विधायक नक्षत्र

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम् ।
तत्र स्थिरं बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये ॥

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी ये चार नक्षत्र और रविवार, इनकी ध्रुव और स्थिर संज्ञा है। इनमें स्थिर कार्य करना, बीज बोना, घर बनवाना, शान्ति कार्य करना, गाँव के समीप बगीचा लगाना आदि कार्यों के साथ मृदु कार्य करना भी शुभ होता है।

हाथी-घोड़े की सवारी विधायक नक्षत्र

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चरं चलम् ।
तस्मिन् गजादिमारोहो वाटिकागमनादिकम् ॥

स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा ये पाँच नक्षत्र और सोमवार इनकी चर और चल संज्ञा है। इनमें हाथी-घोड़े आदि पर चढ़ना, बगीचे आदि में जाना, यात्रा करना आदि शुभ होता है।

विषशस्त्रादि विधायक नक्षत्र

पूर्वात्रयं याम्यमघे उग्रं क्रूरं कुजस्तथा ।
तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ।
विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्रं साधारणं स्मृतम् ।
तत्राग्निकार्यं मिश्रं च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ॥

पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, मघा ये पाँच नक्षत्र और मंगल दिन की क्रूर और उग्र संज्ञा है। इनमें मारण, अग्नि-कार्य, धूर्ततापूर्ण कार्य, विष-कार्य, शस्त्र-शस्त्र निर्माण एवं उनके व्यवहार करने का कार्य सिद्ध होता है।

विशाखा, कृत्तिका ये दो नक्षत्र और बुध दिन इनकी मिश्र और साधारण संज्ञा है। इसमें अग्निहोत्र, साधारण कार्य, वृषोत्सर्ग आदि कार्य सिद्ध होते हैं।

आभूषणादि विधायक नक्षत्र

हस्ताश्विपुष्याभिजितः क्षिप्रं लघुगुरुस्तदा ।
तस्मिन्पण्यरतिज्ञानभूषाशिल्पकलादिकम् ॥

हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित् ये चार नक्षत्र और बृहस्पति दिन, इनकी क्षिप्र और लघु और गुरु संज्ञा है। इनमें बाजार का कार्य, स्त्री-सम्भोग, शास्त्रादि का ज्ञान, आभूषणों का बनवाना और पहिनना, शिल्पकार्य, गाना-बजाना आदि कार्य सफल होते हैं।

मित्रकार्यादि विधायक नक्षत्र

मृगान्त्यचित्रामित्रर्क्षं मृदुमैत्रं भृगुस्तथा।
तत्र गीताम्बरक्रीडामित्रकार्यं विभूषणम्॥

मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा ये चार नक्षत्र और शुक्रवार इनकी मृदु और मैत्र संज्ञा है। इनमें गाना, वस्त्र पहनना, स्त्री के साथ रति करना, मित्र का कार्य और आभूषण पहनना शुभ होता है।

पशुओं को शिक्षित करना तथा दारु-तीक्ष्ण कार्य विधायक नक्षत्र

मूलेन्द्रार्द्राहिभं सौरिस्तीक्ष्णं दारुसंज्ञकम्।
तत्राभिचारघातोग्रभेदाः पशुदमादिकम्॥

मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा ये चार नक्षत्र और शनि तीक्ष्ण और दारुसंज्ञक हैं। इनमें भयानक कार्य करना, मारना पीटना, हाथी-घोड़े आदि को सिखलाना ये कार्य सिद्ध होते हैं।

ग्रहों का स्वरूप

ग्रहों का स्वरूप जान लेना भी आवश्यक है।

सूर्य—यह पूर्व दिशा का स्वामी, पुरुष ग्रह, सम वर्ण, पित्त प्रकृति और पाप ग्रह है। यह सिंह राशि का स्वामी है। सूर्य आत्मा, स्वभाव, आरोग्यता, राज्य और देवालय का सूचक है। पिता के सम्बन्ध में सूर्य से विचार किया जाता है। नेत्र, कलेजा, मेरुदण्ड और स्नायु आदि अवयवों पर इसका विशेष प्रभाव पड़ता है। यह लग्न से सप्तम स्थान में बली माना गया है। मकर से छः राशि पर्यन्त चेष्टाबली है। इससे आधिभौतिक रोग, सिरदर्द, ज्वर, क्षय, महाज्वर, अतिसार, मन्दाग्नि, नेत्रविकार, मानसिक रोग, उदासीनता, खेद, अपमान एवं कलह आदि का विचार किया जाता है।

चन्द्रमा- पश्चिमोत्तर दिशा का स्वामी, स्त्री, श्वेतवर्ण और जलग्रह है। यह कर्क राशि का स्वामी है। वातश्लेष्मा इसकी धातु है। माता-पिता, चित्तवृत्ति, शारीरिक पुष्टि, राजानुग्रह, सम्पत्ति और चतुर्थ स्थान का कारक है। चतुर्थ स्थान में चन्द्रमा बली और मकर से छः राशियों में इसका चेष्टाबल है। कृष्ण पक्ष की षष्ठी से शुक्ल पक्ष की दशमी तक क्षीण चन्द्रमा रहने के कारण पापग्रह और शुक्ल पक्ष की दशमी से कृष्ण पक्ष की पंचमी तक पूर्ण ज्योति रहने से शुभग्रह और बली माना गया है। इससे पाण्डुरोग, जलज तथा कफज रोग, मूत्रकृच्छ्र, स्त्रीजन्य रोग, मानसिक रोग, उदर और मस्तिष्क सम्बन्धी रोगों का विचार किया जाता है।

मंगल—दक्षिण दिशा का स्वामी, पुरुष जाति, पित्तप्रकृति, रक्तवर्ण और

अग्नि तत्त्व है। यह स्वभावतः पाप ग्रह है, धैर्य तथा पराक्रम का स्वामी है। यह मेष और वृश्चिक राशियों का स्वामी है। यह तीसरे और छठे स्थान में बली और द्वितीय स्थान में निष्फल होता है।

बुध—उत्तर दिशा का स्वामी, नपुंसक, त्रिदोष प्रकृति, श्यामवर्ण और पृथ्वी तत्त्व है। यह पापग्रह सू०, मं०, रा०, के०, श० के साथ रहने से अशुभ और चन्द्रमा, गुरु और शुक्र के साथ रहने से शुभ फलदायक होता है। इससे वाणी का विचार किया जाता है। मिथुन और कन्या राशि का स्वामी है।

गुरु—पूर्वोत्तर दिशा का स्वामी, पुरुष जाति, पीतवर्ण और आकाश तत्त्व है। यह चर्बी और कफ की वृद्धि करने वाला है। यह धनु और मीन का स्वामी है।

शुक्र—दक्षिण-पूर्व का स्वामी, स्त्री, श्याम-गौर वर्ण एवं कार्य कुशल है। छठे स्थान में यह निष्फल और सातवें में अनिष्टकर होता है। यह जलग्रह है, इसलिए कफ, वीर्य आदि धातुओं का कारक माना गया है। वृष और तुला राशि का स्वामी है।

शनि—पश्चिम दिशा का स्वामी, नपुंसक, वातश्लेष्मिक, कृष्णवर्ण और वायुतत्त्व है। यह सप्तम स्थान में बली, वक्री या चन्द्रमा के साथ रहने से चेष्टाबली होता है। यह मकर और कुम्भ राशियों का अधिपति है।

राहु—दक्षिण दिशा का स्वामी, कृष्णवर्ण और क्रूर ग्रह है। जिस स्थान पर यह रहता है, उस स्थान की उन्नति को रोकता है।

केतु—कृष्ण वर्ण और क्रूर ग्रह है।

जिस देश या राज्य में क्रूर-ग्रहों का प्रभाव रहता है या क्रूर ग्रह वक्री, मार्गी होते हैं, उस देश या राज्य में दुष्काल, अवर्षा तथा नाना प्रकार के अन्य उपद्रव होते हैं। शुभग्रहों के उदय और प्रभाव से राज्य या देश में शान्ति रहती है। नवीन वस्त्रों का बुध, गुरु और शुक्र को, द्वितीया, पंचमी, सप्तमी, एकादशी, त्रयोदशी और पूर्णिमा तिथि को तथा अश्विनी, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तरा तीनों, स्वाति, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा और रेवती नक्षत्र में व्यवहार करना चाहिए। नवीन वस्त्र सर्वदा पूर्वाह्न में धारण करना चाहिए।

परिशिष्टाध्याय:

अथ वक्ष्यामि केषाञ्चिन्निमित्तानां प्ररूपणम् ।
कालज्ञानादिभेदेन यदुक्तं पूर्वसूरिभिः ॥1॥

अब मैं कतिपय निमित्तों का स्वरूप कथन करता हूँ। इन निमित्तों का प्रतिपादन पूर्वाचार्यों ने कालज्ञान आदि के निमित्तों द्वारा किया है ॥1॥

श्रीमद्वीरजिनं नत्वा भारतीञ्च पुलिन्दिनीम् ।
स्मृत्वा निमित्तानि वक्ष्ये स्वात्मनः कार्यसिद्धये ॥2॥

भगवान महावीर और जिनवाणी को नमस्कार कर तथा निमित्तों की अधिकारिणी पुलिन्दिनी देवी का स्मरण कर स्वात्मा के कार्य की सिद्धि के लिए -- समाधिमरण प्राप्ति के लिए मैं निमित्तों का वर्णन करता हूँ ॥2॥

भौमान्तरिक्षादिभेदा अष्टौ तस्य बुधैर्मताः ।
ते सर्वेऽप्यत्र विज्ञेयाः प्रज्ञावद्भिर्विशेषतः ॥3॥

भौम, अन्तरिक्ष आदि के भेद से आठ प्रकार के निमित्त विद्वानों ने बतलाये हैं। इन सभी प्रकार के निमित्तों का उपयोग आयुज्ञान के लिए करना चाहिए ॥3॥

व्याधेः कोट्यः पञ्च भवन्त्यष्टाधिकषष्टिलक्षाणि ।
नवनवति-सहस्राणि पञ्चशती चतुरशीत्यधिकाः ॥4॥

रोगों की संख्या पाँच करोड़ अड़सठ लाख निन्यानवे हजार पाँच सौ चौरासी बताई गई है ॥4॥

एतत्संख्यान् महारोगान् पश्यन्नपि न पश्यति ।
इन्द्रियैर्मोहितो मूढः परलोकपराङ्मुखः ॥5॥

इन्द्रियासक्त, परलोक की चिन्ता से रहित व्यक्ति उपर्युक्त संख्यक रोगों को देखते हुए भी नहीं देखता है अर्थात् विषयासक्त प्राणी संसार के विषयों में इतना रत रहता है जिससे वह उपर्युक्त रोगों की परवाह नहीं करता ॥5॥

नरत्वे दुर्लभे प्राप्ते जिनधर्मे महोन्नते ।
द्विधा सल्लेखनां कर्तुं कोऽपि भव्यः प्रवर्तते ॥6॥

दुर्लभ मनुष्य पर्याय के प्राप्त होने पर भी आत्मा का उन्नतिकारक जैनधर्म बड़े सौभाग्य से प्राप्त होता है। इस महान धर्म के प्राप्त होने पर भी कोई एकाध भव्य ही दोनों प्रकार की सल्लेखनाएँ करने के लिए प्रवृत्त होते हैं ॥6॥

कृशत्वं नीयते कायः कषायोऽप्यतिसूक्ष्मताम् ।
उपवासादिभिः पूर्वो ज्ञानध्यानादिभिः परः ॥7॥

उपवास इत्यादि के द्वारा शरीर और कषायों को कृश कर आत्मशोधन में लगना सल्लेखना है, इस क्रिया को करने वाला व्यक्ति ज्ञान, ध्यान में संलग्न रहता है ॥7॥

शास्त्राभ्यासं सदा कृत्वा सङ्ग्रामे यस्तु मुह्यति ।
द्विपोस्तस्य कृतस्नानो मुनेर्व्यर्थं तथा व्रतम् ॥8॥

शास्त्र-स्वाध्याय करने पर भी जिसकी बुद्धि इन्द्रियों में आसक्त रहती है उस मुनि के व्रत हाथी के स्नान की तरह व्यर्थ हैं अर्थात् जिस प्रकार हाथी स्नान करने के अनन्तर पुन: धूलि अपने शरीर पर बिखेर लेता है, उसी प्रकार जो मुनि या आत्मसाधक शास्त्राभ्यास करने पर भी सल्लेखना नहीं धारण करता है और इन्द्रियों में आसक्त रहता है उसके व्रत व्यर्थ हैं; अत: जीवन का वास्तविक उद्देश्य सल्लेखना धारण करना है ॥8॥

विरत: कोऽपि संसारी संसारभयभीरुक: ।
विन्ध्यादिमान्यरिष्टानि भाष्यभावान्यनुक्रमात् ॥9॥

जो कोई संसार से विरत तथा संसार भय से युक्त व्यक्ति आत्म-कल्याण करना चाहता है उसके लिए शरीर में उत्पन्न होने वाले नाना प्रकार के अरिष्टों का मैं निरूपण करता हूँ ॥9॥

पूर्वाचार्यैस्तथा प्रोक्तं दुर्गाद्यैलादिभि: यथा ।
गृहीत्वा तदभिप्रायं तथारिष्टं वदाम्यहम् ॥10॥

दुर्गाचार्य, एलाचार्य आदि पूर्वाचार्यों के कथन अभिप्राय को लेकर ही मैं अरिष्टों का कथन करता हूँ ॥10॥

पिण्डस्थञ्च पदस्थञ्च रूपस्थञ्च त्रिभेदत: ।
आसन्नमरणे प्राप्ते जायतेऽरिष्टसन्तति: ॥11॥

जिस व्यक्ति का शीघ्र ही मरण होने वाला है उसके शरीर में पिण्डस्थ, पदस्थ और रूपस्थ ये तीन प्रकार के अरिष्ट उत्पन्न होते हैं ॥11॥

विकृतिर्दृश्यते कायेऽरिष्टं पिण्डस्थमुच्यते ।
अनेकधा तत्पिण्डस्थं ज्ञातव्यं शास्त्रवेदिभि: ॥12॥

शरीर में अप्राकृतिक रूप से अनेक प्रकार की विकृति होने को शास्त्र के जानने वालों ने पिण्डस्थ अरिष्ट कहा है ॥12॥

सुकुमारं करयुगलं कृष्णं कठिनमवेद्यदायस्य ।
न स्फुटन्ति वाङ्गुलयस्तस्यारिष्टं विजानीहि ॥13॥

यदि किसी के दोनों सुकुमार हाथ अकारण ही कठोर और कृष्ण हो जायें तथा अंगुलियाँ सीधी न हों तो उसे अरिष्ट समझना चाहिए अर्थात् उक्त लक्षण वाले व्यक्ति का मरण सात दिन में ही होता है ॥13॥

स्तब्धं लोचनयोर्युग्मं विवर्णः काष्ठवत्तनुः ।
प्रस्वेदो यस्य भालस्थः विकृतं वदनं तथा ॥14॥

जिसके दोनों नेत्र स्तब्ध अर्थात् विकृत हो जायें तथा शरीर विकृत वर्ण और काठ के समान कठोर हो जाय और मस्तक पर अधिक पसीना आये तथा मुख विकृत हो जाय तो अरिष्ट समझना चाहिए अर्थात् सात दिनों में मृत्यु होती है ॥14॥

निर्निमित्तो मुखे हासश्चक्षुर्भ्यां जलबिन्दवः ।
अहोरात्रं स्रवन्त्येव नखरोमाणि यान्ति च ॥15॥

बिना किसी कारण के अधिक हँसी आवे, आँखों में आँसू व्याप्त रहें और नख तथा रोम के छिद्रों में पसीना निकलता हो तो सात दिन में मृत्यु समझनी चाहिए ॥15॥

सुकृष्णा दशना यस्य न घोषाकर्णनं पुनः ।
एतैश्चिह्नैस्तु प्रत्येकं तस्यायुर्दिनसप्तकम् ॥16॥

जिसके दाँत काले हो जायें तथा कर्णछिद्रों को बन्द करने पर भीतर में होने वाली आवाज सुनाई न पड़े तो सात दिन की आयु समझनी चाहिए ॥16॥

निर्गच्छंस्तुट्यते वायुस्तस्य पक्षैकजीवनम् ।
नेत्रयोर्मीलनाज्ज्योतिरदृष्टौ दिनसप्तकम् ॥17॥

यदि शरीर से निकलती हुई वायु बीच में टूट-सी जाय तो पन्द्रह दिन की आयु शेष समझनी चाहिए अथवा बाहर निकलने में श्वास तेज हो तो पन्द्रह दिन की आयु समझनी चाहिए। दोनों नेत्रों के अग्रभाग को थोड़ा-सा बन्द करने पर उनमें से जो ज्योति निकलती है यदि वह ज्योति निकलती हुई दिखलाई न पड़े तो सात दिन की आयु समझनी चाहिए ॥17॥

भ्रूमध्ये नासिका जिह्वादर्शने च यथाक्रमम् ।
नवत्र्येकदिनान्येव सरोगी जीवति ध्रुवम् ॥18॥

यदि भौंह के मध्य भाग को न देख सके तो नौ दिन, नासिका न दिखलाई पड़े तो तीन दिन और जिह्वा न दिखलाई पड़े तो एक दिन की आयु होती है, अर्थात् उस रोगी की पूर्वोक्त दिनों में मृत्यु हो जाती है ॥18॥

पाणिपादोपरि क्षिप्तं तोयं शीघ्रं विशुष्यति।
दिनत्रयं च तस्यायुः कथितं पूर्वसूरिभिः ॥19॥

हाथ-पैरों पर डाला गया जल यदि शीघ्र ही सूख जाय तो उसकी तीन दिन की आयु समझनी चाहिए, ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है ॥19॥

निर्विश्रामो मुखाच्छ्वासो मुखाद्रक्तं पतेत्सदा।
यद्दृष्टिः स्तब्धा निष्पन्दा वर्णचैतन्यहीनता ॥20॥

जिसके मुख से अधिक श्वास निकलती हो, मुख से रक्त गिरता हो, दृष्टि स्तब्ध और निस्पन्द हो तथा मुख विवर्ण और चैतन्यहीन दिखलाई पड़े तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिए ॥20॥

स्थिरा ग्रीवा न यस्यास्ति सोच्छ्वासो हृदि रुध्यते।
नासावदनगुह्येभ्यः शीतलः पवनो वहेत् ॥21॥

जिसकी गर्दन स्थिर न रहे, टेढ़ी हो जाय या श्वास हृदय में रुक जाय तथा मुख, नाक और गुप्तेन्द्रिय से शीतल वायु निकलने लगे तो शीघ्र मरण होता है ॥21॥

न जानाति निजं कार्यं पाणिपादौ च पीडितौ।
प्रत्येकमभिरत्वरिष्टैस्तस्य मृत्युर्भवेल्लघुः ॥22॥

हाथ, पैर आदि के पीड़ित करने पर भी जिसे पीड़ा का अनुभव न हो उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥22॥

स्थूलो याति कृशत्वं कृशोऽप्यकस्माच्च जायते स्थूलः।
स्थगत्यपतिर्यस्य कायः कृतशीर्षहस्तो निरन्तरं शेते ॥23॥

अकस्मात् स्थूल शरीर का कृश हो जाना तथा कृश शरीर का स्थूल हो जाना और शरीर का काँपने लगना एवं अपने सिर पर हाथ रखकर निरन्तर सोना एक मास की आयु का द्योतक है ॥23॥

ग्रीवोपरि करयुग्मं यच्छत्यङ्गुलीभिर्दृढबन्धं च।
क्रमेणोद्यमहीनस्तस्यायुर्मासपर्यन्तम् ॥24॥

गाढ़ बन्धन करने के लिए जिसकी अँगुलियाँ गले में डाली जायँ पर अँगुलियों से दृढ़ बन्धन न हो सके तथा धीरे-धीरे जिसकी कार्य-क्षमता घटती जाये तो ऐसे व्यक्ति की आयु एक महीना अवशेष रहती है ॥24॥

अधरनखदशनरसनाः कृष्णा भवन्ति विना निमित्तेन।
षड्रसभेदमवेत्ताः तस्यायुर्मासपरिमाणम् ॥25॥

बिना किसी निमित्त के ओंठ, नख, दन्त और जिह्वा यदि काली हो जाय तथा षड् रस का अनुभव न हो तो उसकी आयु एक महीना शेष होती है ॥25॥

ललाटे तिलकं यस्य विद्यमानं न दृश्यते।
जिह्वा यस्यातिकृष्णत्वं मासमेकं स जीवति ॥26॥

जिसके मस्तक पर लगा हुआ तिलक किसी को दिखलाई न पड़े तथा जिह्वा अत्यन्त काली हो जाय तो उसकी आयु एक महीने की होती है ॥26॥

धृतिमदनविनाशो निद्रानाशोऽपि यस्य जायेत।
भवति निरन्तरं निद्रा मासचतुष्कन्तु तस्यायु: ॥27॥

धैर्य, कामशक्ति और निद्रा के नाश होने से चार महीने की आयु शेष समझनी चाहिए। अधिक निद्रा का आना, दिन-रात सोते रहना भी चार मास की आयु का सूचक है ॥27॥

इत्यवोचमरिष्टानि पिण्डस्थानि समासत:।
इत: परं प्रवक्ष्यामि पदार्थस्थान्यनुक्रमात् ॥28॥

इस प्रकार पिण्डस्थ अरिष्टों का वर्णन किया। अब पदार्थ अरिष्टों का वर्णन करता हूँ ॥28॥

चन्द्रसूर्यप्रदीपादीन् विपरीतेन पश्यति।
पदार्थस्थमरिष्टं तत्कथयन्ति मनीषिण: ॥29॥

चन्द्रमा, सूर्य, दीपक या अन्य किसी वस्तु का विपरीत रूप से देखना पदस्थ या पदार्थ स्थित अरिष्ट विद्वानों ने कहा है ॥29॥

स्नात्वा देहमलंकृत्य गन्धमाल्यादिभूषणै:।
शुभ्रैस्ततो जिनं पूज्य चेदं मन्त्रं पठेत् सुधी: ॥30॥

ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं कमले-कमले-विमलेविमले उदरदवदेवी इटि मिटि पुलिन्दिनी स्वाहा।

एकविंशतिवेलाभि: पठित्वा मन्त्रमुत्तमम्।
गुरूपदेशमाश्रित्य ततोऽरिष्टं निरीक्षयेत् ॥31॥

पदस्थ अरिष्ट को जानने की विधि का निरूपण करते हुए बताया गया है कि स्नान कर, श्वेत वस्त्र धारण कर, सुगन्धित द्रव्य तथा आभूषणों से अपने को सजाकर एवं जिनेन्द्र भगवान की पूजा कर "ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं कमले-कमले विमले-विमले उदरदव देवि इटि मिटि पुलिन्दिनी स्वाहा" इस मंत्र का इक्कीस बार उच्चारण कर, गुरु-उपदेश के अनुसार अरिष्टों का निरीक्षण करें ॥30-31॥

चन्द्रभास्करयोर्बिम्बं नानारूपेण पश्यति।
सच्छिद्रं यदि वा खण्डं तस्यायुर्वर्षमात्रत: ॥32॥

जो कोई संसार में चन्द्रमा और सूर्य को नाना रूपों में तथा छिद्रों से परिपूर्ण देखता है उसकी आयु एक वर्ष की होती है ॥32॥

दीपशिखां बहुरूपां हिमदवदग्धां यथा दिशा सर्वागम्।
य: पश्यति रोगस्थो लघुमरणं तस्य निर्दिष्टम् ॥33॥

जो रोगी व्यक्ति दीपक के प्रकाश की लौ को अनेक रूप में देखता है तथा दिशाओं को अग्नि या शीत से जलते हुए देखे तो उसकी मृत्यु निकट समय में होती है ॥33॥

बहुच्छिद्रान्वितं बिम्बं सूर्यचन्द्रमसोर्भुवि।
पतन्निरीक्ष्यते यस्तु तस्यायुर्दशवासरम् ॥34॥

जो रोगी पृथ्वी पर सूर्य और चन्द्रमा के बिम्ब को अनेक छिद्रों से युक्त भूमि पर गिरते हुए देखता है उसकी आयु दस दिन की होती है ॥34॥

चतुर्दिक्षु रवीन्दूनां पश्येद् बिम्बं चतुष्टयम्।
छिद्रं वा तद्दिनान्येव चत्वारश्च मुहूर्त्तका: ॥35॥

जो सूर्य या चन्द्रमा के चारों बिम्बों को चारों दिशाओं में देखे वह चार घटिका अर्थात् एक घण्टा छत्तीस मिनट जीवित रहता है ॥35॥

तयोर्बिम्बं यदा नीलं पश्येदायुश्चतुर्दिनम्।
तयोश्छिद्रे विशन्तं भ्रमरोच्चयं.......... ॥36॥

यदि रोगी सूर्य और चन्द्रमा के बिम्ब को नील वर्ण का देखता है तो उसकी आयु चार दिन की होती है। सछिद्र सूर्यबिम्ब और चन्द्रबिम्ब में भौंरों के समूह को प्रवेश करते हुए देखने से भी चार दिन की आयु होती है ॥36॥

प्रज्वलद्वासधूमं वा मुञ्चद्वा रुधिरं जलम्।
य: पश्येद् बिम्बमाकाशे तस्यायु: स्याद्दिनानि षट् ॥37॥

जो कोई रोगी सूर्य और चन्द्र बिम्ब में से धुआँ निकलता हुआ देखे, सूर्य और चन्द्रबिम्ब जलते हुए देखे अथवा सूर्य चन्द्र बिम्ब में से रुधिर निकलते हुए देखे तो वह छह दिन जीवित रहता है ॥37॥

बाणैर्भिन्नमिवालीढं बिम्बं कज्जलरेखया।
यो वा पश्यति खण्डानि षण्मासं तस्य जीवितम् ॥38॥

जो रोगी सूर्य और चन्द्र-बिम्ब को बाणों से छिन्न-भिन्न या दोनों के बिम्ब के मध्य काली रेखा देखता है अथवा दोनों के बिम्ब के टुकड़े होते हुए देखता है, उसकी आयु छह महीने की होती है ॥38॥

रात्रौ दिनं दिने रात्रिं यः पश्येदातुरस्तथा ।
शीतलां वा शिखां दीपे शीघ्रं मृत्युं समादिशेत् ॥39॥

जो रोगी रात्रि में दिन का अनुभव करता है और दिन में रात्रि का तथा दीपक की लौ को शीतल अनुभव करता है, उस रोगी की शीघ्र मृत्यु होती है ॥39॥

तन्दुलैर्म्रियते यस्याञ्जलिस्तेषां भक्तं च पच्यते ।
जहीत्यधिकं तदा चूर्णं भक्तं स्याल्लघुमृत्यवः ॥40॥

एक अञ्जलि चावल लेकर भात बनाया जाय, यदि पक जाने के अनन्तर भात उस अञ्जलि परिमाण से अधिक या कम हो तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिए ॥40॥

अभिमन्त्र्यस्तत्र तनुः तच्चरणैर्मापयेच्च सन्ध्यायाम् ।
अपि ते पुनः प्रभाते सूत्रे न्यूने हि मासमायुष्कम् ॥41॥

"ॐ ह्रीं णमो अरिहन्ताणं कमले-कमले विमले-विमले उदरदेवि इटि मिटि पुलिन्दिनी स्वाहा" इस मन्त्र से सूत को मन्त्रित कर उससे सायंकाल में रोगी के सिर से लेकर पैर तक नापा जाय और प्रातःकाल पुनः उसी सूत से सिर से पैर तक नापा जाय यदि प्रातःकाल नापने पर सूत छोटा हो तो वह व्यक्ति अधिक से अधिक एक मास जीवित रहता है ॥41॥

श्वेताः कृष्णाः पीताः रक्ताश्च येन दृश्यन्ते दन्ताः ।
स्वस्य परस्य च मुकुरे लघुमृत्युस्तस्य निर्दिष्टः ॥42॥

यदि कोई व्यक्ति दर्पण में अपने या अन्य व्यक्ति के दाँतों को काला, सफेद, लाल या पीले रंग का देखे तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिए ॥42॥

द्वितीयायाः शशिबिम्बं पश्येत् त्रिशृंगपरिहीनम् ।
उपरि सधूमच्छायं खण्डं वा तस्य गतमायुः ॥43॥

शुक्ल पक्ष की द्वितीया को यदि कोई चन्द्रमा के बिम्ब को तीन कोण के या बिना कोण के देखे या खण्डित रूप में देखे तो उस व्यक्ति का शीघ्र मरण होता है ॥43॥

अथवा मृगांकहीनं मलिनं चन्द्रञ्च पुरुषसादृश्यम् ।
प्राणी पश्यति नूनं मासादूर्ध्वं भवान्तरं याति ॥44॥

यदि कोई चन्द्रमा को मृगचिह्न से रहित धूमिल, और पुरुषाकार में देखे तो वह एक माग जीवित रहता है ॥44॥

इति प्रोक्तं पदार्थस्थमरिष्टं शास्त्रदृष्टित: ।
इत: परं प्रवक्ष्यामि रूपस्थञ्च यथागमम् ॥45॥

इस प्रकार पदार्थ अरिष्टों का शास्त्रानुसार निरूपण किया, अब रूपस्थ अरिष्टों का आगमानुसार निरूपण करता हूँ ॥45॥

स्वरूपं दृश्यते यत्र रूपस्थं तन्निरूप्यते ।
बहुभेदं भवेत्तत्र क्रमेणैव निगद्यते ॥46॥

जहाँ रूप दिखलाया जाय वहाँ रूपस्थ अरिष्ट कहा जाता है। यह रूपस्थ अरिष्ट अनेक प्रकार का होता है। इसका अब क्रमश: कथन किया जायेगा ॥46॥

छायापुरुषं स्वप्नं प्रत्यक्षंतथा च लिङ्गनिर्दिष्टम् ।
प्रश्नगतं प्रभणन्ति तद्रूपस्थं निमित्तज्ञा: ॥47॥

छायापुरुष, स्वप्नदर्शन, प्रत्यक्ष, अनुमानजन्य और प्रश्न द्वार निरूपित को अरिष्टवेत्ताओं ने रूपस्थ अरिष्ट कहा है ॥47॥

प्रक्षालितनिजदेह: सितवस्त्राद्यैर्विभूषित: ।
सम्यक् स्वछायामेकान्ते पश्यतु मन्त्रेण मन्त्रित्वा ॥48॥

ॐ ह्रीं रक्ते रक्ते रक्तप्रिये सिंहमस्तकसमारूढे कूष्माण्डिनी देवि ! मम शरीरे अवतर अवतर छायां सत्यां कुरु कुरु ह्रीं स्वाहा ।

इति मन्त्रितसर्वांगो मन्त्री पश्येन्नरस्य वरछायाम् ।
शुभदिवसे परिहीने जलधरपवनेन परिहीने ॥49॥
समशुभतलेऽस्मिन् तोयतुषांगारचर्मपरिहीने ।
इतरच्छायारहिते त्रिकरणशुद्ध्या प्रपश्यन्तु ॥50॥

स्नान कर, श्वेत और स्वच्छ वस्त्रों में सुसज्जित हो एकान्त में "ॐ ह्रीं रक्ते रक्ते रक्तप्रिये सिंहमस्तकसमारूढे कूष्माण्डिनी देवि ! मम शरीरे अवतर अवतर छायां सत्यां कुरु कुरु ह्रीं स्वाहा" इस मन्त्र से शरीर को मन्त्रित कर शुभ वारों में —अर्थात् सोम, बुध, गुरु और शुक्रवार के पूर्वाह्न में वायु और मेघरहित आकाश के होने पर मन-वचन और काय की शुद्धता के साथ समतल और जल, भूसा,

कोयला, चमड़ा या अन्य किसी प्रकार की छाया से रहित भू-पृष्ठ पर छाया का दर्शन करें ॥48-50॥

न पश्यति आतुरश्छायां निजां तत्रैव संस्थित: ।
दशदिनान्तरं याति धर्मराजस्य मन्दिरम् ॥51॥

जो रोगी उक्त प्रकार के भू-पृष्ठ पर स्थित हो अपनी छाया को न देखे निश्चय से वह दश दिन में मरण को प्राप्त हो जाता है ॥51॥

अधोमुखीं निजच्छायां छायायुग्मञ्च पश्यति ।
दिनद्वयञ्च तस्यायुर्भाषितं मुनिपुंगवै: ॥52॥

जो रोगी व्यक्ति अपनी छाया को अधोमुखी रूप में देखे तथा छाया को दो हिस्सों में विभक्त देखे उसकी दो दिन में मृत्यु हो जाती है, ऐसा श्रेष्ठ मुनियों ने कहा है ॥52॥

मन्त्री न पश्यति छायामातुरस्य निमित्तिकाम् ।
सम्यक् निरीक्ष्यमाणोऽपि दिनमेकं स जीवति ॥53॥

यदि रोगी व्यक्ति उपर्युक्त मन्त्र का जापकर छाया पर दृष्टि रखते हुए भी उसे न देख सके, उसका जीवन एक दिन का समझना चाहिए ॥53॥

वृषभकरिमहिषरासभमेषाश्वादिकविविधरूपाकारै: ।
पश्येत् स्वच्छायां लघु चेत् मरणं तस्य सम्भवति ॥54॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को बैल, हाथी, महिष, गधा, मेढ़ा और घोड़ा इत्यादि अनेक रूपों में देखता है तो उसका तत्काल मरण जानना चाहिए ॥54॥

छायाबिम्बं ज्वलत्प्रान्तं सधूमं वीक्ष्यते निजम् ।
नीयमानं नरै: कृष्णैस्तस्य मृत्युर्लघु मत: ॥55॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को अग्नि से प्रज्वलित, धूम से आच्छादित और कृष्ण वर्ण के व्यक्तियों के द्वारा ले जाते हुए देखता है उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥55॥

नीलां पीतां तथा कृष्णां छायां रक्तां च पश्यति ।
त्रिचतु:पञ्चषड्रात्रं क्रमेणैव स जीवति ॥56॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को नीली, पीली, काली और लाल देखता है वह क्रमश: तीन, चार, पाँच और छह दिन रात तक जीवित रहता है ॥56॥

मुद्गरसब्बलछुरिकानाराचखड्गादिशस्त्रघातेन ।
चूर्णीकृतनिजबिम्बं पश्यति दिनसप्तकं चायुः ।।57।।

जो व्यक्ति अपनी छाया को मुद्गर, छुरी, बर्छी, भाला, बाण आदि से टुकड़े किये जाते हुए देखता है उसकी आयु सात दिन की होती है ।।57।।

निजच्छाया तथा प्रोक्ता परच्छायापि तादृशी ।
विशेषोऽत्रोच्यते कश्चिच्छो दृष्टः शास्त्रवेदिभिः ।।58।।

इस प्रकार निजच्छाया दर्शन और उसके फलाफल का वर्णन किया है। परच्छाया दर्शन का फल भी निजच्छाया दर्शन के समान ही समझना चाहिए। किन्तु शास्त्रों के मर्मज्ञों ने जो प्रधान विशेषताएँ बतलायी हैं उनका वर्णन किया जाता है ।।58।।

रूपी तरुणः पुरुषो न्यूनाधिकमानवर्जितो नूनम् ।
प्रक्षालितसर्वांगो विलिप्यते स्वेन गन्धेन ।।59।।

एक अत्यन्त सुन्दर युवक को जो न नाटा हो न लम्बा हो, स्नान कराके उज्ज्वल सुगन्धित गन्ध लेपन से युक्त करें ।।59।।

अभिमन्त्र्य तस्य कायं पश्चादुक्ते महीतले विमले ।
छायां पश्यतु स नरो धृत्वा तं रोगिणं हृदये ।।60।।

उस उत्तम पुरुष के शरीर को पूर्वोक्त—"ॐ ह्रीं रक्ते रक्तप्रिये सिंहमस्तकसमारूढे कूष्माण्डिनीदेवि अस्य शरीरे अवतर अवतर छायासत्यां कुरु कुरु ह्रीं स्वाहा" मन्त्र से मन्त्रित कर स्वच्छ भूमि पर स्थित हो उस व्यक्ति से रोगी का ध्यान कराते हुए छाया का दर्शन करे ।।60।।

या वक्रा प्राङ्मुखीच्छायाऽद्धा वाधोमुखवर्तिनी ।
दृश्यते रोगिणो यस्य स जीवति दिनद्वयम् ।।61।।

जिस रोगी का ध्यान कर छाया का दर्शन किया जाय, यदि छाया टेढ़ी, अधोमुखी, पराङ्मुखी दिखाई पड़े तो वह रोगी दो दिन जीवित रहता है ।।61।।

हसन्ती कथयेन्मासं रुदन्ती च दिनद्वयम् ।
धावन्ती त्रिदिन छाया पादैका च चतुर्दिनम् ।।26।।

हँसती हुई छाया देखने से एक महीने की आयु, रोती हुई छाया देखने से दो दिन की आयु, दौड़ती हुई छाया देखने से तीन दिन की आयु और एक पैर की छाया देखने से चार दिन की आयु समझनी चाहिए ।।62।।

वर्षद्वयं तु हस्तैका कर्णहीनैकवत्सरम् ।
केशहीनैकषण्मासं जानुहीना दिनैककम् ॥63॥

एक हाथ से हीन छाया दिखलायी पड़ने पर दो वर्ष की आयु, एक कान से रहित छाया दिखलायी पड़ने पर एक वर्ष की आयु, केश से रहित छाया दिखलायी पड़ने पर छह महीना और जानु से रहित दिखलायी पड़ने पर एक दिन की आयु होती है ॥63॥

बाहुसितासमायुक्तं कटिहीना दिनद्वयम् ।
दिनार्धं शिरसा हीना सा षण्मासमनासिका ॥64॥

श्वेत बाहु से युक्त तथा कमर से रहित छाया दिखलाई पड़े तो दो दिन की आयु होती है। सिर से रहित छाया दिखलाई पड़े तो आधे दिन की आयु एवं नासिका रहित छाया दिखलाई पड़े तो छह महीने की आयु होती है ॥64॥

हस्तपादाग्रहीना वा त्रिपक्षं सार्द्धमासकम् ।
अग्निस्फुलिंगान् मुञ्चन्ती लघुमृत्युं समादिशेत् ॥65॥

हाथ और पाँव से रहित छाया दिखलाई पड़े तो तीन पक्ष या डेढ़ महीने की आयु समझनी चाहिए। यदि छाया अग्नि स्फुलिंगों को उगलती हुई दिखलाई पड़े तो शीघ्र मृत्यु समझनी चाहिए ॥65॥

रक्तं मज्जाञ्च मुञ्चन्ती पूतितैलं तथा जलम् ।
एकद्वित्रिदिनान्येव दिनार्द्धं दिनपञ्चकम् ॥66॥

रक्त, चर्बी, पीप जल और तैल को उगलती हुई छाया दिखलाई पड़े तो क्रमशः एक, दो, तीन, डेढ़ दिन और पाँच दिन की आयु समझनी चाहिए ॥66॥

परछायाविशेषोऽयं निर्दिष्टः पूर्वसूरिभिः ।
निजच्छायाफलं चोक्तं सर्वं बोद्धव्यमत्र च ॥67॥

उक्ता निजपरच्छाया शास्त्रदृष्ट्या समासतः ।
इतः परं ब्रुवे छायापुरुषं लोकसम्मतम् ॥68॥

पूर्वाचार्यों ने परछाया के सम्बन्ध में ये विशेष बातें बतलायी हैं। अवशेष अन्य बातों को निजच्छाया के समान समझ लेना चाहिए। संक्षेप में शास्त्रानुसार निज-पर छाया का यह वर्णन किया गया है। इसके अनन्तर लोकसम्मत छायापुरुष का वर्णन करते हैं ॥67-68॥

मदमदनविकृतिहीनः पूर्वविधानेन वीक्षयते।
सम्यक् मन्त्री स्वपरच्छायां छायापुरुषः कथ्यते सद्भिः ॥69॥

वह मन्त्रित व्यक्ति निश्चय से छायापुरुष है जो अभिमान, विषय-वासना और छल-कपट से रहित होकर पूर्वोक्त कूष्माण्डिनी देवी के मन्त्र के जाप द्वारा पवित्र होकर अपनी छाया को देखता है ॥69॥

समभूमितले स्थित्वा समचरणयुगप्रलम्बभुजयुगलः।
बाधारहिते धर्मे विवर्जिते क्षुद्रजन्तुगणैः ॥70॥

जो समतल—बराबर चौरस भूमि में खड़ा होकर पैरों को समानान्तर करके हाथों को लटकाकर, बाधा रहित और छोटे जीवों से रहित (सूर्य की धूप में छाया का दर्शन करता है) वह छायापुरुष कहलाता है ॥70॥

नाशाग्रे स्तनमध्ये गुह्ये चरणान्तदेशे।
गगनतलेऽपि छायापुरुषो दृश्यते निमित्तज्ञैः ॥71॥

निमित्तज्ञों ने उसे छायापुरुष कहा है जिसका सम्बन्ध नाक के अग्रभाग से, दोनों स्तनों के मध्य भाग से, गुप्तांगों से, पैर के कोने से, आकाश से अथवा ललाट से हो ॥71॥

विशेष—छाया पुरुष की व्युत्पत्ति कोश में 'छायायां पुरुषः दृष्टः पुरुषाकृतिविशेषः' की गयी है अर्थात् आकाश में अपनी छाया की भाँति दिखाई देने वाला पुरुष छायापुरुष कहलाता है। तन्त्र में बताया गया है—पार्वती जी ने शिवजी से भावी घटनाओं को अवगत करने के लिए उपाय पूछा, उसी के उत्तर में शिव ने छायापुरुष के स्वरूप का वर्णन किया है। बताया गया है कि मनुष्य शुद्धचित्त होकर अपनी छाया आकाश में देख सकता है। उसके दर्शन से पापों का नाश और छह मास के भीतर होने वाली घटनाओं का ज्ञान किया जा सकता है। पार्वती ने पुनः पूछा—मनुष्य कैसे अपनी भूमि की छाया को आकाश में देख सकता है? और कैसे छह माह आगे की बात मालूम हो सकती है? महादेवजी ने बताया कि आकाश के मेघशून्य और निर्मल होने पर निश्चल चित्त से अपनी छाया की ओर मुँह कर खड़ा हो गुरु के उपदेशानुसार अपनी छाया में कण्ठ देखकर निर्निमेष नयनों से सम्मुखस्थ गगनतल को देखने पर स्फटिक मणिवत् स्वच्छ पुरुष खड़ा दिखलाई देता है। इस छायापुरुष के दर्शन विशुद्ध चरित्र वाले व्यक्तियों को पुण्योदय के होने पर ही होते हैं। अतः गुरु के वचनों का विश्वास कर उनकी सेवा-शुश्रूषा द्वारा छायापुरुष सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त कर उसका दर्शन करना चाहिए। छाया-

पुरुष के देखने से छह मास तक मृत्यु नहीं होती, लेकिन छायापुरुष के मस्तक शून्य देखने से छह मास के भीतर ही मृत्यु अवश्यम्भावी है ॥71॥

छायाबिम्बं स्फुटं पश्येद्यावत्तावत् स जीवति।
व्याधिविघ्नादिभिस्त्यक्तः सर्वसौख्याधिष्ठितः ॥72॥

छायापुरुष को स्पष्ट रूप से देखने पर व्यक्ति दीर्घजीवी होता है तथा व्याधि विघ्न इत्यादि से रहित हो सुखी रूप में निवास करता है ॥72॥

आकाशे विमले छायापुरुषं हीनमस्तकम्।
यस्यार्थं वीक्ष्यते मन्त्री षण्मासं सोऽपि जीवति ॥73॥

मन्त्रित व्यक्ति यदि निर्मल आकाश में छायापुरुष को बिना मस्तक के देखे तो जिस रोगी के लिए छायापुरुष का दर्शन किया जा रहा है वह छह मास जीवित रहता है ॥73॥

पादहीने नरे दृष्टे जीवितं वत्सरत्रयम्।
जंघाहीने समायुक्तं जानुहीने च वत्सरम् ॥74॥

मन्त्रित पुरुष को छायापुरुष बिना पैर के दिखलाई पड़े तो जिसके लिए देखा जा रहा है वह व्यक्ति तीन वर्ष तक जीवित रहता है, जंघाहीन और घुटनहीन छायापुरुष दिखलाई पड़े तो एक वर्ष तक जीवित रहता है ॥74॥

उरोहीने तथाष्टादशमासा अपि जीवति।
पञ्चदश कटिहीनेऽष्टौ मासान् हृदयं बिना ॥75॥

यदि छायापुरुष हृदय रहित दिखलाई पड़े तो आठ महीने की आयु, वक्षस्थल रहित दिखलाई पड़े तो अठारह महीने की आयु और कटिहीन दिखलाई पड़े तो पन्द्रह महीने की आयु समझनी चाहिए ॥75॥

षड्दिनं गुह्यहीनेऽपि करहीने चतुर्दिनम्।
बाहुहीने त्वहर्युग्मं स्कन्धहीने दिनैककम् ॥76॥

यदि छाया पुरुष गुप्तांगों से रहित दिखलाई पड़े तो छह दिन की आयु, हाथ से रहित दिखलाई पड़े तो चार दिन की आयु, बाहुहीन दिखलाई पड़े तो दो दिन की आयु और स्कन्धहीन दिखलाई पड़े तो एक दिन की आयु समझनी चाहिए ॥76॥

यो नरोऽत्रैव सम्पूर्णः सांगोपांगविलोक्यते।
स जीवति चिरं कालं न कर्तव्योऽत्र संशयः ॥77॥

जो मनुष्य सम्पूर्ण अंगोपांगों से सहित छाया पुरुष का दर्शन करता है वह चिरकाल तक जीवित रहता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥77॥

आस्तां तु जीवितं मरणं लाभालाभं शुभाशुभम् ।
यच्चिन्तितमनेकार्थं छायामात्रेण वीक्ष्यते ॥78॥

जीवन, मरण, लाभ, अलाभ, शुभ, अशुभ इत्यादि अनेक बातें छाया पुरुष के दर्शन से जानी जा सकती हैं ॥78॥

स्वप्नफलं पूर्वगतं त्वध्याये चाधुना पर: ।
निमित्तं शेषमपि तत्र प्रकथ्यते सूत्रत: क्रमश: ॥79॥

यद्यपि स्वप्नफल का निरूपण पूर्व अध्याय में हो चुका है फिर भी सूत्र क्रमानुसार फल ज्ञात करने के लिए स्वप्न का निरूपण किया जा रहा है ॥79॥

दशपञ्चवर्षैस्तथा पञ्चदशदिनै: क्रमश: ।
रजनीनां प्रतियामं स्वप्न: फलत्येवायुष: प्रश्ने ॥80॥

आयु के विचार-क्रम में रात्रि के विभिन्न प्रहरों में देखे गये स्वप्नों का फल क्रमश: दस वर्ष, पाँच वर्ष, पाँच दिन तथा दस दिन में प्राप्त होता है ॥80॥

शेषप्रश्नविशेषे द्वादशषट्त्र्येकमासकैरेव ।
स्वप्न: क्रमेण फलति प्रतियामं शर्वरी दृष्ट: ॥81॥

आयु के अतिरिक्त शेष प्रकार के प्रश्नों का फल रात्रि के विभिन्न प्रहरों के अनुसार क्रमश: बारह, छह, तीन और एक महीने में प्राप्त होता है ॥81॥

करचरणजानुमस्तकजंघांसोदरविभंगिते दृष्टे ।
जिनबिम्बस्य च स्वप्ने तस्य फलं कथ्यते क्रमश: ॥82॥

हाथ, पैर घुटने, मस्तक, जंघा, कन्धा तथा उदर के स्वप्न में भंगित होने का फल तथा स्वप्न में जिन बिम्ब के दर्शन का फल क्रमश: वर्णन करेंगे ॥82॥

करभंगे चतुर्मासै: त्रिमासै: पदभंगत: ।
जानुभंगे तु वर्षेण मस्तके दिनपञ्चभि: ॥83॥

स्वप्न में करभंग (हाथ का टूटना) देखने से चार महीने में मृत्यु, पदभंग देखने से तीन महीने में, जानुभंग देखने से एक वर्ष में और मस्तक भंग देखने से पाँच दिन में मृत्यु होती है ॥83॥

वर्षयुग्मेन जंघायामंसहीने द्विपक्षत: ।
ब्रूयात् प्राज्ञ: फलं मन्त्री पक्षेणोदरभंगत: ॥84॥

स्वप्न में समस्त जंघा का टूटना देखने से दो वर्ष में मृत्यु, और कन्धे का भंग होना देखने से दो पक्ष में मृत्यु एवं उदर भंग देखने से एक पक्ष में मृत्यु होती है। स्वप्नदर्शक मन्त्र का प्रयोग कर तथा स्वच्छ और शुद्धतापूर्वक जब रात्रि में शयन करता है तभी स्वप्न का उक्त फल घटित होता है ॥84॥

छत्रस्य परिवारस्य भंगे दृष्टे निमित्तवित्।
नृपस्य परिवारस्य ध्रुवं मृत्युं समादिशेत् ॥85॥

स्वप्न में राजा के छत्र का भंग देखने से राजा के परिवार के किसी व्यक्ति की मृत्यु होती है ॥85॥

विलयं याति यः स्वप्ने भक्ष्यते गृध्रवायसैः।
अथ करोति यश्छर्दिं मासयुग्मं स जीवति ॥86॥

जो व्यक्ति स्वप्न में अपना विलयन तथा गृद्ध और कौओं द्वारा अपना मांस भक्षण देखता है एवं चर्बी का वमन करते हुए देखता है उसकी दो महीने की आयु होती है ॥86॥

महिषोष्ट्रखरारूढो नीयते दक्षिणां दिशम्।
घृततैलादिभिर्लिप्तो मासमेकं स जीवति ॥87॥

स्वप्न में घृत और तेल से स्नान व्यक्ति महिष (भैंसा), ऊँट और गधे के ऊपर सवार हो दक्षिण दिशा की ओर जाता हुआ दिखलाई पड़े तो एक महीने की आयु समझनी चाहिए ॥87॥

ग्रहणं रविचन्द्राणां नाशं वा पतनं भुवि।
रात्रौ पश्यति यः स्वप्ने त्रिपक्षं तस्य जीवनम् ॥88॥

यदि रात्रि के समय स्वप्न में सूर्य, चन्द्र आदि ग्रहों का विनाश अथवा पृथ्वी पर पतन दिखलाई पड़े, तो तीन पक्ष की आयु समझनी चाहिए ॥88॥

गृहादाकृष्य नीयेत कृष्णैर्मर्त्यैर्भयप्रदैः।
काष्ठायां यमराजस्य शीघ्रं तस्य भवान्तरम् ॥89॥

यदि स्वप्न में कृष्ण वर्ण के भयंकर व्यक्ति घर से खींचकर दक्षिण दिशा की ओर ले जाते हुए दिखलाई पड़ें तो शीघ्र ही मरण होता ॥89॥

भिद्यते यस्तु शस्त्रेण स्वयं क्रुद्ध्यति कोपतः।
अथवा हन्ति तान् स्वप्ने तस्यायुर्दिनविंशतिः ॥90॥

जो स्वप्न में अपने को किसी शस्त्र से कटा हुआ देखता है अथवा अन्य द्वारा

अपनी मृत्यु के दर्शन करता है अथवा अस्त्रों को ही तोड़ देता है उसकी मृत्यु बीस दिन में ही हो जाती है ॥90॥

यो नृत्यन् नीयते बद्ध्वा रक्तपुष्पैरलङ्कृतः ।
सन्निवेशं कृतान्तस्य मासादूर्ध्वं स नश्यति ॥91॥

जो स्वप्न में मृतक के समान लाल फूलों से सजाया हुआ नृत्य करते हुए दक्षिण दिशा की ओर अपने को बाँधकर ले जाते हुए देखता है वह एक मास से कुछ अधिक जीवित रहता है ॥91॥

तैलपूरितगर्तायां रक्तकीकसपूरिभिः ।
स्वं मग्नं वीक्ष्यते स्वप्ने मासार्द्धं म्रियते स वै ॥92॥

जो स्वप्न में रुधिर, चर्बी, पीप (पीब), चमड़ा, घी और तेल से भरे गड्ढे में गिरकर डूबता हुआ देखता है उसकी निश्चित 15 दिनों में मृत्यु हो जाती है ॥92॥

बन्धनेऽथ वरस्थाने मोक्षे प्रयाणके ध्रुवम् ।
सौरभेये सिते दृष्टे यशोलाभं निरन्तरम् ॥93॥

स्वप्न में श्वेत गाय बँधी हुई, तथा खूँटे से खुली हुई एवं चलती हुई दिखलाई पड़े तो हमेशा यश प्राप्ति होती है ॥93॥

नदीवृक्षसरोभूभृत् गृहकुम्भान् मनोहरान् ।
स्वप्ने पश्यति शोकार्त्तः सोऽपि शोकेन मुच्यते ॥94॥

स्वप्न में नदी, वृक्ष, तालाब, पर्वत, घर तथा सुन्दर मनोहर कलश दिखलाई पड़े तो दुःखी व्यक्ति भी दुःख से मुक्त हो जाता है ॥94॥

शयनाशनजं पानं गृहं वस्त्रं सभूषणम् ।
सालंकारं द्विपं वाहं पश्यन् शर्मकदम्बभाक् ॥95॥

जो स्वप्न में सोना, भोजन-पान, घर, वस्त्र-भूषण, अलंकार, हाथी तथा अन्य वाहन आदि का दर्शन करता है उसे सभी प्रकार के सुख उपलब्ध होते हैं ॥95॥

पताकामसियष्टिं च पुष्पमालां सशक्तिकाम् ।
काञ्चनं दीपसंयुक्तं लब्ध्वा बुद्धो धनं भजेत् ॥96॥

यदि स्वप्न में पताका, तलवार, भाला, पुष्पमाला आदि को स्वर्णदीपक के द्वारा देखता हुआ दिखलाई पड़े तो धन की प्राप्ति होती है ॥96॥

वृश्चिकं दन्दशूकं वा कीटकं वा भयप्रदम् ।
निर्भयं लभते यस्तु धनलाभो भविष्यति ॥97॥

जो स्वप्न में बिच्छू, साँप तथा अन्य भयकारक जन्तुओं से निर्भय अवस्था को प्राप्त होते हुए देखे उसे धनलाभ होता है ॥97॥

पुरीषं छर्दितं मूत्रं रक्तं रेतो वसान्वितम् ।
भक्षयेत् घृणया हीनस्तस्य शोकविमोचनम् ॥98॥

जो स्वप्न में टट्टी, वमन, मूत्र, रक्त, वीर्य, चर्बी इत्यादिक घृणित वस्तुओं को घृणा रहित भक्षण करते हुए देखे उसका शोक नष्ट होता है ॥98॥

वृषकुञ्जरप्रासादक्षीरवृक्षशिलोच्चये ।
अश्वारोहणं शुभस्थाने दृष्टमुन्नतिकारणम् ॥99॥

जो स्वप्न में बैल, हाथी, महल, पीपल, बड़, पर्वत एवं घोड़े के ऊपर चढ़ता हुआ देखे उसकी उन्नति होती है ॥99॥

नृपकुञ्जरगोवाहधनलक्ष्मीमनोभुवः ।
भूषितानामलंकारैर्दर्शनं सिद्धिकारणम् ॥100॥

जो स्वप्न में राजा, हाथी, गाय, सवारी, धन, लक्ष्मी, कामदेव तथा अलंकार और आभूषणों से युक्त पुरुष का दर्शन करता है उसकी भाग्य की वृद्धि होती है ॥100॥

पयोधिं तरति स्वप्ने भुङ्क्ते प्रासादमस्तके ।
दैवतः लभते मन्त्रं तस्य वैश्वर्यमद्भुतम् ॥101॥

जो स्वप्न में अपने को समुद्र पार करते हुए, महल के ऊपर भोजन करते हुए तथा किसी अभीष्ट देवता से मन्त्र प्राप्त करते हुए देखता है, उसे अद्भुत ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है ॥101॥

शुभ्रालंकारवस्त्राढ्या प्रमदा च प्रियदर्शना ।
श्लिष्यति यं नरं स्वप्ने तस्य सम्पत्समागमः ॥102॥

जिसे स्वप्न में स्वच्छ वस्त्रों और अलंकारों से युक्त सुन्दर स्त्री आलिंगन करती हुई दिखलाई पड़े, उसे सम्पत्ति प्राप्ति होती है ॥102॥

सूर्यचन्द्रमसौ पश्येदुदयाचलमस्तके ।
स लात्यभ्युदयं मर्त्यो दुःखं तस्य च नश्यति ॥103॥

जो स्वप्न में उदयाचल पर सूर्य और चन्द्रमा को उदित होते हुए देखे उस

मनुष्य को धन की प्राप्ति होती है तथा उसका दुःख नष्ट हो जाता है ॥103॥

बन्धनं बाहुपाशेन निगडैः पादबन्धनम् ।
स्वस्य पश्यति यः स्वप्ने लाति मान्यं सुपुत्रकम् ॥104॥

जो स्वप्न में अपने हाथ और पाँव को बँधा हुआ देखता है उसे पुत्र की प्राप्ति होती है ॥104॥

दृश्यते श्वेतसर्पेण दक्षिणांगं पुमान् भुवि ।
महान् लाभो भवेत्तस्य बुद्ध्यते यदि शीघ्रतः ॥105॥

जो व्यक्ति स्वप्न में अपनी दाहिनी ओर श्वेत साँप को देखता है और स्वप्न दर्शन के पश्चात् तत्काल उठ जाता है, उसे अत्यन्त लाभ होता है ॥105॥

अगम्यागमनं पश्येदपेयं पानकं नरः ।
विद्यार्थकामलाभस्तु जायते तस्य निश्चितम् ॥106॥

जो व्यक्ति स्वप्न में अगम्या स्त्री के साथ समागम करते हुए देखता है तथा अपेय वस्तुओं को पीते हुए देखता है, उसे विद्या, विषयसुख और अर्थलाभ होता है ॥106॥

सफेनं पिबति क्षीरं रौप्यभाजनसंस्थितम् ।
धनधान्यादिसम्पत्तिर्विद्यालाभस्तु तस्य वै ॥107॥

जो व्यक्ति स्वप्न में चाँदी के बर्तन में स्थित फेन सहित दूध को पीते हुए देखता है, उसे निश्चय से धन-धान्य आदि सम्पत्ति की प्राप्ति तथा विद्या का लाभ होता है ॥107॥

घटिताघटितं हेमं पीतं पुष्पं फलं तथा ।
तस्मै दत्ते जनः कोऽपि लाभस्तस्य सुवर्णजः ॥108॥

जो व्यक्ति स्वप्न में स्वर्ण अथवा स्वर्ण के आभूषण तथा पीत पुष्प या फल को अन्य किसी व्यक्ति द्वारा ग्रहण करते हुए देखता है, उसे स्वर्ण की, स्वर्णाभूषणों की प्राप्ति होती है ॥108॥

शुभं वृषभवाहानां कृष्णानामपि दर्शनम् ।
शेषाणां कृष्णद्रव्याणामालोको निन्दितो बुधैः ॥109॥

स्वप्न में कृष्ण वर्ण के बैल, हाथी आदि वाहनों का दर्शन शुभकारक होता है तथा अन्य कृष्ण वर्ण की वस्तुओं का दर्शन विद्वानों द्वारा निन्दित कहा गया है ॥109॥

दध्नेष्टसज्जनप्रेम गोधूमे: सौख्यसंगम: ।
जिनपूजा यवैर्दृष्ट: सिद्धार्थैर्लभते शुभम् ॥110॥

स्वप्न में दही के दर्शन से सज्जन-प्रेम की प्राप्ति, गेहूँ के दर्शन से सुख की प्राप्ति, जौ के दर्शन से जिन-पूजा की प्राप्ति एवं पीली सरसों के देखने से शुभ फल की प्राप्ति होती है ॥110॥

शयनासनयानानां स्वांगवाहनवेश्मनाम् ।
दाहं दृष्ट्वा ततो बुद्धो लभते कामितां श्रियम् ॥111॥

स्वप्न में शयन, आसन, सवारी स्वांगवाहन और मकान का जलना देखने के उपरान्त शीघ्र ही जाग जाने से अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति होती है ॥111॥

निजान्त्रैर्वेष्टयेद् ग्रामं स भवेत् मण्डलाधिप: ।
नगरं वेष्टयेद्यस्तु स पुन: पृथिवीपति: ॥112॥

जो स्वप्न में अपने शरीर की नसों से ग्राम को वेष्टित करते हुए देखे वह मण्डलाधिप तथा जो नगर को वेष्टित करते हुए देखे वह पृथ्वीपति— राजा होता है ॥112॥

सरोमध्ये स्थित: पात्रे पायसं यो हि भक्ष्यति ।
आसनस्थस्तु निश्चिन्त: स महाभूमिपो भवेत् ॥113॥

जो स्वप्न में तालाब में स्थित हो, बर्तन में रखी हुई खीर को निश्चिन्त होकर खाते हुए देखता है, वह चक्रवर्ती राजा होता है ॥113॥

देवेष्टा पितरो गात्रो लिंगिनो मुखस्थस्त्रिय: ।
वरं ददति यं स्वप्ने स तथैव भविष्यति ॥114॥

स्वप्न में देवपूजिका, पितर— व्यन्तर आदि की भक्ता, या देव का आलिंगन करने वाली नारियाँ जिस प्रकार का वरदान देती हुई दिखलाई पड़ें, उसी प्रकार का फल समझना चाहिए ॥114॥

सितं छत्रं सितं वस्त्रं सितं कर्पूरचन्दनम् ।
लभते पश्यति स्वप्ने तस्य श्री: सर्वतोमुखी ॥115॥

जो स्वप्न में श्वेत छत्र, श्वेत वस्त्र श्वेत चन्दन एवं कपूर आदि वस्तुओं को प्राप्त करते हुए देखता है, उसे सभी प्रकार के अभ्युदय प्राप्त होते हैं ॥115॥

पतन्ति दशना यस्य निजकेशाश्चमस्तकात् ।
स्वधनमित्रयोर्नाशो बाधा भवति शरीरके ॥116॥

जो स्वप्न में अपने दाँतों को गिरते हुए तथा अपने सिर से बालों को गिरते या उखड़ते हुए देखता है, उसके धन और बान्धव नाश को प्राप्त होते हैं और शारीरिक कष्ट भी उसे होता है ॥116॥

दंष्ट्री शृंगी वराहो वा वानरो मृगनायकः।
अभिद्रवन्ति यं स्वप्ने भवेत्तस्य महद्भयम् ॥117॥

जो स्वप्न में अपने पीछे दाँत वाले और सींग वाले शूकर, बन्दर एवं सिंह आदि प्राणियों को दौड़ते हुए देखता है, उसे महान् भय प्राप्त होता है ॥117॥

घृततैलादिभिः स्वांगे वाभ्यंगं निशि पश्यति।
सततो बुद्ध्यते स्वप्ने व्याधिस्तस्य प्रजायते ॥118॥

जो स्वप्न में अपने शरीर में घी या तेल की मालिश करते हुए देखता है तथा स्वप्न दर्शन के पश्चात् उसकी निद्रा खुल जाती है, उसे रोगोत्पत्ति होती है ॥118॥

रक्तवस्त्राद्यलंकारैर्भूषिता प्रमदा निशि।
यमालिंगति सस्नेहा विपत्तस्य महत्यपि ॥119॥

जो स्वप्न में रात्रि के समय लाल वर्ण के वस्त्रालंकारों से युक्त नारी का सस्नेह आलिंगन करते हुए देखता है, उसे महती विपत्ति का सामना करना पड़ता है ॥119॥

पीतवर्णप्रसूनैर्वालङ्कृता पीतवाससा।
स्वप्ने गृहति यं नारी रोगस्तस्य भविष्यति ॥120॥

जो स्वप्न में पीत वर्ण के पुष्पों द्वारा अलंकृत तथा पीत वर्ण के वस्त्रों से सज्जित नारी द्वारा अपने को छिपाया हुआ देखे वह शीघ्र ही रोगी होता है ॥120॥

पुरीषं लोहितं स्वप्ने मूत्रं वा कुरुते तथा।
तदा जागर्ति यो मर्त्यो द्रव्यं तस्य विनश्यति ॥121॥

जो स्वप्न में लाल वर्ण की टट्टी करते हुए या लाल वर्ण का मूत्र करते हुए देखे तथा स्वप्न दर्शन के पश्चात् जाग जाय तो उसका धन नाश होता है ॥121॥

विष्ठां लोमानि रौद्रं वा कुंकुमं रक्तचन्दनम्।
दृष्ट्वा यो बुद्ध्यते सुप्तो यस्तस्यार्थो विलीयते ॥122॥

जो स्वप्न में विष्टा—टट्टी, रोम, अग्नि, कुंकुम—रोरी एवं लालचन्दन

दिखलाई पड़े और स्वप्न दर्शन के अनन्तर निद्रा टूट जाय, उसके धन का विनाश होता है ॥122॥

रक्तानां करवीराणामुत्पन्नानामुपानहम् ।
लाभे वा दर्शनं स्वप्ने प्रयातस्य विनिर्दिशेत् ॥123॥

यदि स्वप्न में लाल-लाल तलवार धारण किये हुए वीरपुरुषों के जूते का दर्शन या लाभ हो तो यात्रा की सफलता समझनी चाहिए ॥123॥

कृष्णवाहाधिरूढो यः कृष्णवासो विभूषितः ।
उद्विग्नश्च दिशो याति दक्षिणां मृत एव सः ॥124॥

स्वप्न में कृष्ण सवारी पर आरूढ़, कृष्ण वस्त्रों से विभूषित एवं उद्विग्न होता हुआ दक्षिण दिशा की ओर जाते हुए देखे तो मृत्यु समझनी चाहिए ॥124॥

कृष्णा च विकृता नारी रौद्राक्षी च भयप्रदा ।
कर्षति दक्षिणाशायां यं ज्ञेयो मृत एव सः ॥125॥

स्वप्न में जिस व्यक्ति को काली कलूटी विकृत वर्ण की भयानक नारी दक्षिण दिशा की ओर खींचती हुई दिखलायी पड़े उसकी निश्चित रूप से मृत्यु समझनी चाहिए ॥125॥

मुण्डितं जटिलं रूक्षं मलिनं नीलवाससम् ।
रुष्टं पश्यति यः स्वप्ने भयं तस्य प्रजायते ॥126॥

जो स्वप्न में मुण्डित, जटिल, रूक्ष, मलिन और नील वस्त्र धारण किये हुए रुष्ट रूप में अपने को देखता है उसे भय की प्राप्ति होती है ॥126॥

दुर्गन्धं पाण्डुरं भीमं तापसं व्याधिविकृतिम् ।
पश्यति स्वप्ने (···) ग्लानिं तस्य निरूपयेत् ॥127॥

स्वप्न में जो दुर्गन्धयुक्त, पीले एवं भयंकर व्याधियुक्त तपस्वी को देखता है उसे ग्लानि होती है ॥127॥

वृक्षं वल्लीं चक्षुपगुल्मं वल्मीकिं निजांकगाम् ।
दृष्ट्वा जागर्ति यः स्वप्ने ज्ञेयस्तस्य धनक्षयः ॥128॥

जो स्वप्न में वृक्ष, लता, छोटे-छोटे गुल्म या वल्मीकि—बाँबी को अपनी गोदी में देखता है और स्वप्न दर्शन के पश्चात् जाग जाता है उसके धन का विनाश होता है ॥128॥

खर्जूरोऽग्यनलो वेणुगुल्मो वाप्यहितो द्रुमः।
मस्तके तस्य जायेत गत एव स निश्चितम् ॥129॥

स्वप्न में जिसके मस्तक पर खजूर, अग्नि संयुक्त बाँस लता एवं वृक्ष पैदा हुए दिखलायी पड़ें उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥129॥

हृदये वा समुत्पन्नात् हृद्रोगेण स नश्यति।
शेषांगेषु प्ररूढास्ते तत्तदंगविनाशकाः ॥130॥

जो स्वप्न में वक्षस्थल पर उपर्युक्त खजूर, बाँस आदि को उत्पन्न हुआ देखता है उसकी हृदयरोग से मृत्यु होती है तथा शरीर के शेषांगों में से जिस अंग पर उक्त पदार्थों को उत्पन्न होते हुए देखता है उस-उस अंग का विनाश होता है ॥130॥

रक्तसूत्ररसूत्रैर्वा रक्तपुष्पैर्विशेषतः।
यदंगं वेष्ट्यते स्वप्ने तदेवांगं विनश्यति ॥131॥

जो स्वप्न में अपने जिस अंग को लालसूत्र, लालपुष्प, या रक्त लता-तन्तुओं से वेष्टित देखता है उसके उस अंग का विनाश होता है ॥131॥

द्विपो ग्राहो मनुष्यो वा स्वप्ने कर्षति यं नरम्।
मोक्षं बद्धस्य बन्धे वा मुक्ति च समादिशेत् ॥132॥

स्वप्न में जिस मनुष्य को जो हाथी, मगर या मनुष्य द्वारा खींचते हुए देखता है उसकी कारागार से मुक्ति होती है ॥132॥

मधु छत्रं विशेत् स्वप्ने दिवा वा यस्य वेश्मनि।
अर्थनाशो भवेत्तस्य मरणं वा विनिर्दिशेत् ॥133॥

स्वप्न में जिसके घर में दिन में मधु-मक्खी का छत्ता प्रवेश होते हुए दिखलाई पड़े, उसका धन-नाश अथवा मरण होता है ॥133॥

विरेचनेऽर्थनाशः स्यात् छर्दने मरणं ध्रुवम्।
वाहे पादपछत्राणां गृहाणां ध्वंसमादिशेत् ॥134॥

जो स्वप्न में विरेचन अर्थात् दस्त लगते हुए देखता है उसके धन का नाश होता है। वमन करते हुए देखने से मरण होता है। वृक्ष की चोटी पर चढ़ते हुए देखने से घर का नाश होता है ॥134॥

स्नाने रोदनं विद्यात् नर्तने वधबन्धनम्।
हसने शोकसन्तापं गमने कलहं तथा ॥135॥

स्वप्न में भी गाना गाते हुए देखने से रोना, नाचना देखने से वधबन्धन, हँसना देखने से शोक-सन्ताप एवं गमन देखने से कलह आदि फल प्राप्त होते हैं ॥135॥

सर्वेषां शुक्लवस्त्राणां स्वप्ने दर्शनमुत्तमम् ।
भस्मास्थितक्रकार्पासदर्शनं न शुभप्रदम् ॥136॥

स्वप्न में शुक्ल—श्वेत वस्त्र का देखना उत्तम फलदायक है किन्तु भस्म, हड्डी, मट्ठा और कपास का देखना अशुभ होता है ॥136॥

शुक्लमाल्यां शुक्लालङ्कारादीनां धारणं शुभम् ।
रक्तपीतादिवस्त्राणां धारणं न शुभं मतम् ॥137॥

स्वप्न में शुक्ल माल्य और अलंकार आदि का धारण करना शुभ है। रक्त-पीत एवं नीलादि वस्त्रों का धारण करना शुभ नहीं है ॥137॥

मन्त्रदः पापदूरस्थो वातादिदोषजस्तथा ।
दृष्टः श्रुतोऽनुभूतश्च चिन्तोत्पन्नः स्वभावजः ॥138॥
पुण्यं पापं भवेद्दैवं मन्त्रज्ञो वरदो मतः ।
तस्मात्तौ सत्यभूतौ च शेषाः षट् निष्फलाः स्मृताः ॥139॥

स्वप्न आठ प्रकार के होते हैं—पाप रहित मंत्र-साधना द्वारा सम्पन्न मंत्रज स्वप्न, वातादि दोषों से उत्पन्न दोषज, दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, चिन्तोत्पन्न, स्वभावज, पुण्य-पाप के आधार दैव। इन आठ प्रकार के स्वप्नों में मंत्रज और दैव स्वप्न सत्य होते हैं। शेष छह प्रकार के स्वप्न प्रायः निष्फल होते हैं ॥138-139॥

मलमूत्रादिबाधोत्थ आधि-व्याधिसमुद्भवः ।
मालात्स्वभावदिवास्वप्नः पूर्वदृष्टश्च निष्फलः ॥140॥

मल-मूत्र आदि की बाधा से उत्पन्न होने वाले स्वप्न, आधि-व्याधि अर्थात् रोगादि से उत्पन्न स्वप्न, आलस्य इत्यादि से उत्पन्न स्वप्न, दिवा एवं स्वप्न जाग्रत अवस्था में देखे गये पदार्थों के संस्कार से उत्पन्न स्वप्न प्रायः निष्फल होते हैं ॥140॥

शुभः प्रागशुभः पश्चादशुभः प्राक् शुभस्ततः ।
पाश्चात्यः फलदः स्वप्नः पूर्वदृष्टश्च निष्फलः ॥141॥

यदि स्वप्न पूर्व में शुभ पश्चात् अशुभ होते हैं, अथवा पूर्व में अशुभ और बाद में शुभ होते हैं तो बाद पश्चाद अवस्था में देखा गया स्वप्न फलदायक तथा पूर्ववर्ती

अवस्था का स्वप्न निष्फल होता है ।।141।।

प्रस्वपेदशुभे स्वप्ने पूर्वदृष्टश्च निष्फल: ।
शुभे जाते पुन: स्वप्ने सफल: स तु तुष्टिकृत् ।।142।।

अशुभ स्वप्न के आने पर व्यक्ति स्वप्न के पश्चात् जगकर पुन: सो जाय तो अशुभ स्वप्न का फल नष्ट हो जाता है । यदि अशुभ स्वप्न के अनन्तर पुन: शुभ स्वप्न दिखलायी पड़े तो अशुभ फल नष्ट होकर शुभ फल की प्राप्ति होती है ।।142।।

प्रस्वपेदशुभे स्वप्ने जप्त्वा पञ्चनमस्क्रियाम् ।
दृष्टे स्वप्ने शुभेनैव दु:स्वप्ने शान्तिमाचरेत् ।।143।।

अशुभ स्वप्न के दिखलायी पड़ने पर जगकर णमोकार मंत्र का पाठ करना चाहिए । यदि अशुभ स्वप्न के पश्चात् शुभ स्वप्न आवे तो दुष्ट स्वप्न की शान्ति का उपाय करने की आवश्यकता नहीं ।।143।।

स्वं प्रकाश्य गुरोरग्रे सुधी: स्वप्नं शुभाशुभम् ।
परेषामशुभं स्वप्नं पुरो नैव प्रकाशयेत् ।।144।।

बुद्धिमान् व्यक्ति को अपने गुरु के समक्ष शुभ और अशुभ स्वप्नों का कथन करना चाहिए, किन्तु अशुभ स्वप्न को गुरु के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति के समक्ष कभी भी नहीं प्रकाशित करना चाहिए ।।144।।

निमित्तं स्वप्नजं चोक्त्वा पूर्वशास्त्रानुसारत: ।
लिङ्गेन तं ब्रुवे इष्टं निर्दिष्टं च यथागमम् ।।145।।

पूर्व शास्त्रों के अनुसार स्वप्न निमित्त का वर्णन किया गया है अब लिंग के अनुसार इसके इष्टानिष्ट का आगमानुकूल वर्णन करते हैं ।।145।।

शरीरं प्रथमं लिङ्गं द्वितीयं जलमध्यगम् ।
यथोक्तं गौतमेनैव तथैवं प्रोच्यते मया ।।146।।

प्रथम लिंग शरीर है और द्वितीय लिंग जलमध्यग है, इसका जिस प्रकार से पहले गौतम स्वामी ने वर्णन किया है वैसा ही मैं वर्णन करता हूँ ।।146।।

स्नातं लिप्तं सुगन्धेन वरमन्त्रेण मन्त्रितम् ।
अष्टोत्तरशतेनापि यन्त्री पश्येत्तदङ्गकम् ।।147।।

ॐ ह्रीं ला: ह्व: प: लक्ष्मी भवी कुरु कुरु स्वाहा ।

स्नान कर सुगन्धित लेप लगाकर 108 बार इस मंत्र से मंत्रित होकर स्वप्न

का दर्शन करे। इस प्रकार स्वप्न का देखना ही मंगल कहलाता है। "ॐ ह्रीं लाः ह्वः पः लक्ष्मीं श्रवीं कुरु कुरु स्वाहा" इस मंत्र का 108 बार जाप करना चाहिए ॥147॥

सर्वांगेषु यदा तस्य लीयते मक्षिकागणः।
षण्मासं जीवितं तस्य कथितं ज्ञानदृष्टिभिः ॥148॥

जिस व्यक्ति के समस्त शरीर पर अकारण ही अधिक मक्खियाँ लगती हों उसकी आयु ज्ञानियों ने छह महीने बतलायी है। यहाँ से प्रत्यक्ष अरिष्टों का वर्णन आचार्य करते हैं ॥148॥

दिग्भागं हरितं पश्येत् पीतरूपेण शुभ्रकम्।
गन्धं किञ्चिन्न यो वेत्ति मृत्युस्तस्य विनिश्चितम् ॥149॥

जिसको अकारण ही दिशायें हरी, पीली और शुभ्र रूप में दिखलायी पड़ें तथा गन्ध का ज्ञान भी जिसे न हो उसकी मृत्यु निश्चित है ॥149॥

शशिसूर्यौ गतौ यस्य मुखश्वासोऽपि शीतलौ।
मरणं तस्य निर्दिष्टं शीघ्रलोऽरिष्टवेदिभिः ॥150॥

जिसे सूर्य और चन्द्रमा दिखलायी न पड़ें तथा जिसके मुख से श्वास अधिक और तेजी से निकलता हो उसका शीघ्र मरण विद्वानों ने कहा है ॥150॥

जिह्वा मलं न मुञ्चति न वेत्ति रसना रसम्।
निरीक्षते न रूपञ्च सप्तदिनं स जीवति ॥151॥

जिसकी जिह्वा पर सर्वदा अधिक मैल रहता हो तथा जिसे किसी भी रस का स्वाद न आता हो और न वस्तुओं के रूप को देख पाता हो उसकी आयु सात दिन की होती है ॥151॥

वह्निचन्द्रौ न पश्येच्च शुभ्रं वदति कृष्णकम्।
तुङ्गच्छायां न जानाति मृत्युस्तस्य समागतः ॥152॥

जिसे अग्नि और चन्द्रमा दिखलायी न पड़ते हों और काली वस्तु श्वेत मालूम पड़ती हो, उन्नत छाया परिज्ञात न हो उसकी आसन्न मृत्यु रहती है ॥152॥

मन्त्रित्वा स्वमुखं योगी जानुदघ्ने जले स्थितः।
न पश्येत् स्वमुखच्छायां षण्मासं तस्य जीवितम् ॥153॥

जो योगी मंत्रित होकर घुटने पर्यन्त जल में खड़ा हो अपने मुख की छाया—प्रतिबिम्ब न देख सके उसकी आयु छह महीने की होती है ॥153॥

ॐ ह्रीं लाः ह्वः पः लक्ष्मीं गर्व्वीं कुरु कुरु स्वाहा।

भृतं मन्त्रिततैलेन मार्जितं ताम्रभाजनम् ।
पिहितं शुक्लवस्त्रेण सन्ध्यायां स्थापयेत् सुधीः ॥154॥

तस्योपरि पुनर्दत्वा नूतनां कुण्डिकां ततः ।
जातिपुष्पैर्जपेदेवं स्वष्टाधिकशतं ततः ॥155॥

क्षीरान्नभोजनं कृत्वा भूमौ सुप्येत मन्त्रिणा ।
प्रातः पश्येत्स तत्रैव तैलमध्ये निजं मुखम् ॥156॥

निजास्यं चेन्न पश्येच्च षण्मासं च जीवति ।
इत्येवं च समासेन द्विधा लिंगं प्रभाषितम् ॥157॥

अब आचार्य तेल में मुखदर्शन की विधि द्वारा आयु का निश्चय करने की प्रक्रिया बतलाते हैं कि "ॐ ह्रीं लाः ह्वः पः लक्ष्मीं गर्व्वीं कुरु कुरु स्वाहा" इस मंत्र द्वारा मंत्रित तेल से भरे हुए एक सुन्दर साफ या स्वच्छ तांबे के बर्तन को सन्ध्या समय शुक्ल वस्त्र से ढककर रखे, पुनः उस पर एक नवीन कुण्डिका स्थापित कर उपर्युक्त मंत्र का जुही के पुष्पों से 108 बार जाप करे, तत्पश्चात् खीर का भोजन कर मंत्रित व्यक्ति भूमि पर शयन करे और प्रातःकाल उठकर उस तेल में अपने मुख को देखे। यदि अपना मुख इस तेल में न दिखलाई पड़े तो छह मास की आयु समझनी चाहिए। इस प्रकार संक्षेप में आचार्य ने दोनों प्रकार के लिंगों का वर्णन किया है ॥154-157॥

शब्दनिमित्तं पूर्वं स्नात्वा निमित्ततः शुक्लवासा विशुद्धधीः ।
अम्बिकाप्रतिमां शुद्धां स्नापयित्वा रसादिकैः ॥158॥

अर्चित्वा चन्दनैः पुष्पैः श्वेतवस्त्रसुवेष्टिताम् ।
प्रक्षिप्य वामकक्षायां गृहीत्वा पुरुषस्ततः ॥159॥

शब्द निमित्त का वर्णन करते हुए आचार्यों ने बतलाया है कि शब्द दो प्रकार के होते हैं—दैवी और प्राकृतिक। यहाँ दैवी शब्द का कथन किया जा रहा है। स्नानकर स्वच्छ और शुभ्र वस्त्र धारण करे। अनन्तर अम्बिका की मूर्ति का जल, दुग्धादि से अभिषेक कर श्वेत वस्त्रों से उसे आच्छादित करे। पश्चात् चन्दन, पुष्प, नैवेद्य आदि से उसकी पूजा करे। अनन्तर बायें हाथ के नीचे रखकर (शब्द सुनने के लिए निम्न विधि का प्रयोग करे) ॥158-159॥

निशायाः प्रथमे यामे प्रभाते यदि वा व्रजेत् ।
इमं मन्त्रं पठन् व्यक्तं श्रोतुं शब्दं शुभाशुभम् ॥160॥

ॐ ह्रीं अम्बे कूष्माण्डिनी (नि) ब्राह्मणि वद वद वागीश्वरी (रि) स्वाहा।

पुरवीथ्यां व्रजन् शब्दमाद्यं श्रुत्वा शुभाशुभम्।
स्मरन् व्यावर्तते तस्मादागत्य प्रविचारयेत् ॥161॥

रात्रि में प्रथम प्रहर में या प्रातःकाल में "ॐ ह्रीं अम्बे कूष्माण्डिनि ब्राह्मणि देवि वद वद वागीश्वरि स्वाहा" इस मंत्र का जापकर शुभाशुभ शब्द सुनने के निमित्त नगर में भ्रमण करे। इस प्रकार नगर की सड़कों और गलियों में भ्रमण करते समय जो भी शुभ या अशुभ शब्द पहले सुनाई पड़े, उसे सुनकर वापस लौट आवे और उसी शब्द के अनुसार शुभाशुभ फल अवगत करे। अर्थात् अशुभ शब्द सुनने से मृत्यु, वेदना, पीड़ा आदि फल तथा शुभ शब्द सुनने से नीरोगता, स्वास्थ्य-लाभ एवं कार्य-सिद्धि आदि शुभ फल प्राप्त होते हैं ॥160-161॥

अर्हदादिस्तवो राजा सिद्धिर्बुद्धिस्तु मंगलम्।
वृद्धिश्री जयऋद्धिश्च धनधान्यादिसम्पदः ॥162॥
जन्मोत्सवप्रतिष्ठाद्याः देवेष्ट्यादिशुभक्रियाः।
द्रव्यादिनामश्रवणाः शुभाः शब्दाः प्रकीर्तिताः ॥163॥

नगर में भ्रमण करते समय प्रथम शब्द अर्हन्त भगवान् का नाम, उनका स्तवन, राजा, सिद्धि, बुद्धि, वृद्धि, जय, चन्द्रमा, श्री ऋद्धि, धन-धान्य, सम्पत्ति, जन्मोत्सव, प्रतिष्ठोत्सव, देवपूजन, द्रव्यादिका नाम आदि शब्दों का सुनना शुभ बतलाया गया है ॥162-163॥

अम्बिकाशब्दनिमित्तं छत्रमालाध्वजागन्धपूर्णकुम्भादिसंयुतः।
वृषाश्च गृहिणः पुंसः सपुत्राः भूषितास्त्रियः ॥164॥

अम्बिका देवी, छत्र, माला, ध्वज, गन्ध युक्त कलश, बैल, गृहस्थ, पुत्र सहित अलंकृत स्त्री आदि का दर्शन सभी कार्यों में शुभ होता है। शब्द प्रकरण होने से उक्त वस्तुओं के नामों का श्रवण भी शुभ माना जाता है ॥163-164॥

इत्यादिदर्शनं श्रेष्ठं सर्वकार्येषु सिद्धिदम्।
छत्रादिपातभंगादि दर्शनं शोभनं न हि ॥165॥

किसी भी कार्य के आरम्भ में छत्रभंग, छत्रपात आदि का दर्शन और शब्द-श्रवण अशुभ समझा जाता है। अर्थात् उक्त वस्तुओं के दर्शन या उक्त वस्तुओं के नामों को सुनने से कार्यसिद्धि में नाना प्रकार की बाधाएं आती हैं ॥165॥

विशेष—वसन्तराज शकुन में शुभ-शकुनों का वर्णन करते हुए बताया है कि दधि, घृत, दूर्वा, तण्डुल-चावल, जल पूर्ण कुम्भ, श्वेत सर्षप, चन्दन, दर्पण, शंख,

मत्स्य, मृत्तिका, गोरोचन, गोधूलि, देवमूर्ति, फल, पुष्प, अंजन, अलंकार, ताम्बूल, भात, आसन, मद्य, ध्वज, छत्र, माला, व्यंजन, वस्त्र, पद्म - कमल, भृंगार, प्रज्वलित अग्नि, हाथी, बकरी, कुश, चामर, रत्न, सुवर्ण, रूप्य, ताम्र, औषधि, पल्लव, एवं हरित वृक्ष का दर्शन किसी भी कार्य के आरम्भ में सिद्धिदायक बताया गया है।

अंगार, भस्म, काष्ठ, रज्जु—रस्सी, कीचड़, कार्पास—कपास, दाल या फलों के छिलके, अस्थि, मूत्र, मल, मलिन व्यक्ति, अपांग या विकृत व्यक्ति, लोहा, काले वर्ण का अनाज, पत्थर, केश, साँप, तेल, गुड़, चमड़ा, खाली घड़ा, लवण, तक्र, शृंखला, रजस्वला स्त्री, विधवा स्त्री एवं दीना, मलिन-वदन, मुक्तकेशा स्त्री का दर्शन किसी भी कार्य में अशुभ होता है।

नष्टो भग्नश्च शोकस्थ: पतितो लुञ्चितो गत: ।
शान्तित: पातितो बद्धो भीतो दष्टश्च चूर्णित: ॥166॥
चोरो बद्धो हृत: काल: प्रदग्ध: खण्डितो मृत: ।
उद्वासित: पुनर्ग्राम इत्याद्या: दु:खदा: स्मृता: ॥167॥

नष्ट, भग्न, दुःखी, मुण्डित शिर, गिरता-पड़ता, बद्ध, भयभीत, काटा हुआ, चोर, रस्सी या शृंखला से जकड़ा, वेदनाग्रस्त, जला हुआ, खण्डित, मुर्दा, गाँव से निष्कासित होने के पश्चात् पुन: गाँव में निवास करने वाला इत्यादि प्रकार के व्यक्तियों का दर्शन दुःखप्रद होता है ॥166-167॥

इत्येवं निमित्तकं सर्वं कार्यं निवेदनम् ।
मन्त्रोऽयं जपित: सिद्ध्येद्वीरस्य प्रतिमाग्रत: ॥168॥

इस प्रकार कार्यसिद्धि के लिए निमित्तों का परिज्ञान करना चाहिए। निम्न मन्त्र की भगवान् महावीर की प्रतिमा के सम्मुख साधना करनी चाहिए। मन्त्र-जाप करने से ही सिद्ध हो जाता है ॥168॥

अष्टोत्तरशतैर्पुष्पै: मालतीनां मनोहरै: ।
ॐ ह्रीं णमो अरिहन्ताणं ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा ।
मन्त्रेणानेन हस्तस्य दक्षिणस्य च तर्जनी ।
अष्टाधिकशतं वारमभिमन्त्र्य मषीकृतम् ॥169॥

भगवान् महावीर स्वामी की प्रतिमा के समक्ष उत्तम मालती के पुष्पों से 'ॐ ह्रीं अर्हं णमो अरिहन्ताणं ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा' इस मन्त्र का 108 बार जाप करने से मन्त्र सिद्ध हो जायगा। पश्चात् मन्त्रसाधक अपने दाहिने हाथ की तर्जनी

को एक सौ आठ बार मन्त्रित कर रोगी की आँखों पर रखे ॥169॥

तदनन्तरं स्थापयेद्भूमौ रविबिम्बं सुवर्तुलम् ।
रोगी पश्यति चेद्बिम्बमायुःषण्मासमध्यगम् ॥170॥

उपर्युक्त क्रिया के अनन्तर रोगी को भूमि की ओर देखने को कहे। यदि रोगी भूमि पर सूर्य के गोलाकार बिम्ब का दर्शन करे तो छः महीने की आयु समझनी चाहिए ॥170॥

इत्यंगुलिप्रश्ननिमित्तं शतवारं सुधीमन्त्र्यपावनम् ।
कांस्यभाजने तेन प्रक्षाल्य हस्तयुगलं रोगिणः पुनः ॥171॥

एकवर्णाजहिक्षीराष्टाधिकैः शतबिन्दुभिः ।
प्रक्षाल्य दीयते लेपो गोमूत्रक्षीरयोः क्रमात् ॥172॥

प्रक्षालितकरयुगलश्चिन्तय दिनमासक्रमशः ।
पञ्चदशवामहस्ते पञ्चदशतिथिश्च दक्षिणे पाणौ ॥173॥

इस प्रकार अंगुली प्रश्न का वर्णन किया। अब अलक्त और गोरोचन प्रश्न-विधि का निरूपण करते हैं। विद्वान् व्यक्ति "ॐ ह्रीं अर्हं णमो अरिहन्ताणं ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा" मन्त्र का जाप कर किसी काँसे के बर्तन में अलक्त—लाक्षा को भरकर मन्त्रित करे। अनन्तर रोगी के हाथ, पैर आदि अंगों को धोकर शुद्ध करे। पश्चात् गोमूत्र और सुगन्धित जल से रोगी के हाथों का प्रक्षालन करे। अनन्तर दिन, महीना और वर्ष का निश्चय करे। पन्द्रह की संख्या की बाँये हाथ में और पन्द्रह की संख्या की दाहिने हाथ में कल्पना करे ॥171-173॥

शुक्लं पक्षं वामे दक्षिणहस्ते च चिन्तयेत् कृष्णम् ।
प्रतिपत्प्रमुखास्तिथय उभकरयोः पर्वरेखासु ॥174॥

बाँये हाथ में शुक्लपक्ष की और दाहिने हाथ में कृष्णपक्ष की कल्पना करे। प्रतिपदादि तिथियों की दोनों हाथ की पर्वरेखाओं—गाँठ स्थानों पर कल्पना करे ॥174॥

एकद्वित्रिचतुःसंख्यमरिष्टं तत्र चिन्तयेत् ।

यदि उक्त क्रिया के अनन्तर पर्वरेखाओं में एक, दो, तीन और चार संख्या में कृष्णरेखाएँ दिखलायी पड़ें तो अरिष्ट समझना चाहिए।

हस्तयुगलं तथोद्वर्त्य प्रातः गोरोचनरसैः ॥175॥

अभिमन्त्रितशतवारं पश्येच्च करयुगलम् ।
करे करपर्वणि यावन्मात्राश्च बिन्दवः कृष्णाः ॥176॥

दिनानि तावन्मात्राणि मासान् वा वत्सराणि वा।
स्वस्थितो जीवति प्राणी वीक्षितं ज्ञानदृष्टिभिः ॥177॥

प्रातःकाल लाक्षा प्रश्न के समान स्नानादि क्रियाओं से निवृत्त होकर उपर्युक्त मन्त्र से मन्त्रित हो सौ बार मन्त्रित गोरोचन से हाथों का प्रक्षालन कर दोनों हाथों का दर्शन करे। उक्त क्रिया करने वाला रोगी व्यक्ति उतने ही दिन, मास और वर्ष तक जीवित रहता है, जितने कृष्णबिन्दु उसके हाथ के पर्वों में लगे रहते हैं, इस प्रकार का कथन ज्ञानियों का है ॥174 1/2-177॥

विशेष—अलक्त प्रश्न की विधि यह है कि किसी चौरस भूमि को एक वर्ण की गाय के गोबर से लीपकर उस स्थान पर 'ॐ ह्रीं अर्हं णमो अरिहन्ताणं ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा' इस मन्त्र को 108 बार जपना चाहिए। फिर काँसे के बर्तन में अलक्त को भरकर सौ बार मन्त्र से मन्त्रित कर उक्त भूमि पर उस बर्तन को रख देना चाहिए, पश्चात् रोगी के हाथों को गोमूत्र और दूध से धोकर दोनों हाथों पर मन्त्र पढ़ते हुए दिन, मास और वर्ष की कल्पना करनी चाहिए। अनन्तर पुनः सौ बार उक्त मन्त्र को पढ़कर उक्त अलक्त से रोगी के हाथ धोने चाहिए। इस क्रिया के पश्चात् रोगी के हाथ धोना चाहिए। उसके हाथों के सन्धि स्थानों में जितने बिन्दु काले रंग के दिखलायी पड़ें, उतने ही दिन, मास और वर्ष की आयु समझनी चाहिए।

गोरोचन प्रश्न की विधि यह है कि अलक्त प्रश्न के समान एक वर्ण की गाय के गोबर से भूमि को लीपकर उपर्युक्त मन्त्र से 108 बार मन्त्रित कर काँसे के बर्तन में गोरोचन को सौ बार मन्त्र से मन्त्रित करना चाहिए। पश्चात् रोगी के हाथ गोमूत्र और दूध से धोकर मन्त्र पढ़ते हुए हाथों पर वर्ष, मास और दिन की कल्पना करनी चाहिए। पुनः सौ बार मन्त्रित गोरोचन से रोगी के हाथ धुलाकर उन हाथों से रोगी के मरण-समय की परीक्षा करनी चाहिए। रोगी के सन्धि स्थानों में जितने काले रंग के बिन्दु दिखलायी पड़ें, उतने ही संख्यक दिन, मास और वर्ष में उसकी मृत्यु समझनी चाहिए।

रोचनाकुंकुमैर्लाक्षानामिकारक्तसंयुता।
षोडशाक्षरं लिखेत्पद्मं तद्बहिश्चैव तत्समम् ॥178॥

षोडशाक्षरतो बाह्ये मूलबीजं दले दले।
प्रथमे च दले वर्षान्मासांश्चैव बहिर्दले ॥179॥

दिवसान् षोडशैरेव साध्यनामसुकर्णिके।
सप्ताहं पूजयेच्चक्रं तदा तं च निरीक्षयेत् ॥180॥

लाक्षा, कुंकुम, गोरोचना इत्यादि विधियों से आयु की परीक्षा करने के उपरान्त चक्र द्वारा आयु परीक्षा की विधि का निरूपण करते हैं।

सोलह दल का एक कमल भीतर रेखा, इस कमल के बाहर भी सोलह दल का एक दूसरा कमल बनाना चाहिए। बाह्य कमल के पत्तों पर अ आ आदि मूल स्वरों की स्थापना करनी चाहिए। भीतर वाले कमल के पत्तों पर वर्षों की तथा बाहर वाले कमल के पत्तों पर महीनों की स्थापना करनी चाहिए। कर्णिकाओं में दिवसों की स्थापना करनी चाहिए। इस प्रकार निर्मित चक्र की एक सप्ताह तक पूजा करनी चाहिए, पश्चात् उसका निरीक्षण कर शुभाशुभ फल की जानकारी प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए ॥178-180॥

यद्दले चाक्षरं लुप्तं तद्दिने म्रियते ध्रुवम् ।
वर्षं मासं दिनं पश्येत् स्वस्य नाम परस्य वा ॥181॥

निरीक्षण करने पर जिस तिथि, मास या वर्ष की स्थापना वाले दल का स्वर लुप्त हो, उसी तिथि, मास और वर्ष में अपनी या अन्य व्यक्ति की जिसके लिए परीक्षा की जा रही है, मृत्यु समझनी चाहिए ॥181॥

यदा वर्णं न लुप्तं स्यात्तदा मृत्युर्न विद्यते ।
वर्षं द्वादशपर्यन्तं कालज्ञानं विनोदितम् ॥182॥

यदि कोई भी स्वर लुप्त न हो तो जिसके सम्बन्ध में विचार किया जा रहा है, उसकी मृत्यु नहीं होती। इस चक्र द्वारा बारह वर्ष की आयु का ही ज्ञान किया जाता है ॥182॥

प्रभूतवस्त्रदाश्विन्यां भरण्यामर्थापहारिणी ।
प्रदह्यत्याग्निदैवते प्राजेश्वरेऽर्थसिद्धये ॥183॥

अश्विनी नक्षत्र में नवीन वस्त्र धारण करने से बहुत वस्त्र मिलते हैं, भरणी में नवीन वस्त्र धारण करने से अर्थ की हानि होती है, कृत्तिका में नवीन वस्त्र धारण करने से वस्त्र दग्ध होता है, रोहिणी में नवीन वस्त्र धारण करने से धन प्राप्ति होती है ॥183॥

मृगे तु मूषकाद्भयं व्यसुत्वमेव शांकरे ।
पुनर्वसौ शुभप्राप्तिस्तदग्रभे धनैर्युतिः ॥184॥

मृगशिरा में नवीन वस्त्र धारण करने से वस्त्रों को चूहों के काटने का भय, आर्द्रा में नवीन वस्त्र धारण करने से मृत्यु, पुनर्वसु में वस्त्र धारण करने से शुभ की प्राप्ति और पुष्य में वस्त्र धारण करने से धनलाभ होता है ॥184॥

भुजंगमे विलुप्यते मघासु मृत्युमादिशेत्।
भगाह्वये नृपाद्भयं धनागमाय चोत्तरा ॥185॥

आश्लेषा में पहनने से वस्त्र का नष्ट हो जाना, मघा नक्षत्र में मृत्यु, पूर्वाफाल्गुनी में राजा से भय एवं उत्तराफाल्गुनी में वस्त्र धारण करने से धन की प्राप्ति होती है ॥185॥

करेण धर्मसिद्धय: शुभागमस्तु चित्रया।
शुभं च भोज्यमानिले द्विदैवते जनप्रिय: ॥186॥

हस्त नक्षत्र में वस्त्र धारण करने से कार्यसिद्धि होती है, चित्रा में शुभ की प्राप्ति, स्वाति में उत्तम भोजन का मिलना एवं विशाखा में जनप्रिय होता है ॥186॥

सुहृद्युतिश्च मित्रभे पुरन्दरेऽम्बरक्षय:।
जलाप्लुतिश्च नैर्ऋते रुजो जलाधिदैवते ॥187॥

अनुराधा में वस्त्र धारण करने से मित्र समागम, ज्येष्ठा में वस्त्र का क्षय, मूल में नवीन वस्त्र धारण करने से जल में डूबना और पूर्वाषाढ़ा में रोग होता है ॥187॥

मिष्टमन्नमथ विश्वदैवते
वैष्णवे भवति नेत्ररोगता।
धान्यलब्धिमपि वासवे विदु-
र्वारुणे विषकृतं महद्भयम् ॥88॥

उत्तराषाढ़ा में मिष्टान्न की प्राप्ति, श्रवण में नवीन वस्त्र धारण करने से नेत्ररोग, धनिष्ठा में नवीन वस्त्र धारण करने से अन्नलाभ एवं शतभिषा में विष का बहुत भय होता है ॥88॥

भद्रपदासु भयं सलिलोत्थं
तत्परतश्च भवेत्सुतलब्धि:।
रत्नयुतिं कथयन्ति च पौष्णे
योऽभि नवाम्बरमिच्छति भोक्तुम् ॥189॥

पूर्वाभाद्रपदा में जलभय, उत्तराभाद्रपदा में पुत्रलाभ और रेवती नक्षत्र में नवीन वस्त्र धारण करने से रत्न लाभ होता है ॥189॥

वस्त्रस्य कोणे निवसन्ति देवा
नराश्च पाशान्तदशान्तमध्ये ।
शेषास्त्रयश्चात्र निशाचरांशा-
स्तथैव शयनासनपादुकासु ॥190॥

नवीन वस्त्र धारण करते समय उसके शुभाशुभत्व का विचार निम्न प्रकार से करना चाहिए। नये वस्त्र के नौ भाग करके विचार करना चाहिए। वस्त्र के कोणों के चार भागों में देवता, पाशान्त के दो भागों में मनुष्य और मध्य के तीन भागों में राक्षस निवास करते हैं। इसी प्रकार शय्या, आसन और खड़ाऊँ के नौ भाग करके फल का विचार करना चाहिए ॥190॥

लिप्ते मषी कर्दमगोमयाद्यै-
श्छिन्ने प्रदग्धे स्फुटिते च विन्द्यात् ।
पुष्टे नवेऽल्पाल्पतरं च भुङ्क्ते
पापे शुभं वाधिकमुत्तरीये ॥191॥

यदि धारण करते ही नये वस्त्र में स्याही, गोबर, कीचड़ आदि लग जाय, फट जाय, जल जाय तो अशुभ फल होता है। यह फल उत्तरीय वस्त्र में विशेष रूप से घटित होता है ॥191॥

रुग्राक्षसांशेष्वथ वापि मृत्युः
पुंजन्मतेजश्च मनुष्यभागे ।
भागेऽमराणामथ भोगवृद्धिः
प्रान्तेषु सर्वत्र वदन्त्यनिष्टम् ॥192॥

राक्षसों के भागों में वस्त्र में छेद हों तो वस्त्र के स्वामी को रोग या मृत्यु हो, मनुष्य भागों में छेद हों तो पुत्रजन्म और कान्ति-लाभ, देवताओं के भागों में छेद आदि हों तो भोगों में वृद्धि एवं सभी भागों में छेद हों तो अनिष्ट फल होता है। समस्त नवीन वस्त्र में छिद्र होना अशुभ है ॥192॥

कंकप्लवोलूककपोतकाक-
क्रव्यादगोमायुखरोष्ट्रसर्पाः ।
छेदाकृतिर्दैवतभागगापि
पुंसां भयं मृत्युसमं करोति ॥193॥

कंक पक्षी, मेढक, उल्लू, कपोत, मांसभक्षी गृध्रादि, जम्बुक, गधा, ऊँट और सर्प के आकार का छेद देवताओं के भाग में भी हो तो भी मृत्यु के समान व्यक्तियों

को पीड़ा कारक एवं भयप्रद होता है। वस्त्र के छिद्र के आकार पर ही फल निर्भर करता है ॥193॥

छत्रध्वजस्वस्तिकवर्धमान-
श्रीवृक्षकुम्भाम्बुजतोरणाद्या: ।
छेदाकृतिर्नैऋतभागगापि,
पुंसां विधत्ते न चिरेण लक्ष्मीम् ॥194॥

छत्र, ध्वज, स्वस्तिक, वर्धमान—मिट्टी का सकोरा, बेल, कलश, कमल, तोरणादि के आकार का छिद्र राक्षस भाग में हो तो मनुष्यों को लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। अन्य भागों में होंगे पर तो अत्यन्त शुभफल प्राप्त होता है ॥194॥

भोक्तुं नवाम्बरं शस्तमृक्षेऽपि गुणवर्जिते ।
विवाहे राजसम्माने प्रतिष्ठा-मुनिदर्शने ॥195॥

विवाह में, राज्योत्सव में या राजसम्मान के समय, प्रतिष्ठोत्सव में, मुनियों के दर्शन के समय निन्द्य नक्षत्र में भी वस्त्र धारण करना शुभ है ॥195॥

इति वस्त्रविच्छेदननिमित्तम् ।

इति श्रीभद्रबाहुसंहितायां निमित्तनामाध्यायो त्रिंशत्तमोऽध्याय: 30 सम्पूर्ण: ॥

श्लोकानामकाराद्यनुक्रमः

अ

अंग-प्रत्यंगयुक्तस्य 442
अंगानां च कुरूणां च 310
अंगान् सौराष्ट्रान् 370
अंगारकान् नरान् 164
अंगारकोऽग्निसंकाशो 366
अकालजलं फलंपुष्पं 434
अकाले उदितः शुक्रः 264
अगम्यागमनं चैव 435
अगम्यागमनं गच्छेत् 478
अग्निरग्निप्रभा 23
अग्रतस्तु सनागाणां 187
अग्रतो या पतेदुल्का 30
अचिरेणैव कालेन 192
अजवीथीमनुप्राप्तः 296, 297
अजवीथीमागते चन्द्रे 391
अजवीथी विशाखा च 270
अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि 292
अतः परं प्रवक्ष्यामि 94
अतीतं वर्तमानं च 181
अतोऽस्य येऽन्यथाभावा 299
अत्यम्बु च विशाखायां 321
अथ गोमूत्रवतिमान् 265
अथ चन्द्राद् विनिष्क्रम्य 66
अथ यद्युभयां सेनां 29
अथ वक्ष्यामि केषांचित् 461
अथवा मृगांकहीनं 468
अथ रश्मिगतोऽस्निग्धा 64
अथ सूर्याद् विनिष्क्रम्य 66
अथातः संप्रवक्ष्यामि 44, 63, 84, 94, 104, 121, 141, 162, 175, 222, 263, 399
अद्वारं द्वारकरणं 243
अधरनखदशनरसना 464
अधोमुखी निजच्छायां 469
अनन्तरां दिशं दीप्ता 24
अनार्याः कच्छ-यौधेयाः 269
अनावृष्टिभयं घोरं 97
अनावृष्टिभयं रोगं 88
अनावृष्टिहता देशा 318
अनुगच्छन्ति याश्चोल्का 24
अनुराधा नक्षत्रदाशी 456
अनुराधास्थितो शुक्रो 283
अनुलोमो यदाऽनीके 113
अनुलोमो यदा स्निग्धः 113
अनुलोमो विजयं ब्रूते 290
अनृजुः परुषः श्यामो 340
अनेकवर्णनक्षत्र- 21
अनेकवर्णसंस्थानं 145
अन्तःपुरविनाशाय 200

अन्तःपुरेषु द्वारेषु	242
अन्तवच्चादवन्तश्च	268
अन्धकारसमुत्पन्ना	167
अन्यस्मिन् केतुभवने	365
अपग्रहं विजानीयात्	128
अपरस्तु तथा [illegible]	109
अपरां चन्द्रसूर्यौ तु	403
अपरेण च कवन्धस्तु	382
अपरेण तु या विद्युत्	64
अपरोत्तरा तु या विद्युत्	64
अपसव्यं नक्षत्रस्य	308
अपि लक्षणवान् मुख्यः	179
अपोन्तरिक्षात् पतितं	340
अप्रशस्तो यदा वायु-	114
अप्सरसां च सत्त्वानां	74
अप्सरसां तु सदृशाः	166
अभक्ष्यभक्षणं चैव	436
अभिजिच्चानुराधा च	322
अभिजिच्छ्रवणं चापि	273
अभिजित्स्थः कुरून्	284
अभिजिद् द्वे तथाषाढे	270
अभिद्रवन्ति घोषेण	77
अभिद्रवन्ति यां सेनां	289
अभिमन्त्रितशतवारं	489
अभिमन्त्र्य तस्य कार्यं	470
अभिमन्त्र्यस्तत्र तनुः	467
अभीक्ष्णं चापि सुप्तस्य	246
अभ्युत्थितायां च सेनायां	198
अभ्युन्नतो यदा श्वेतो	46
अभ्रवृक्षं समुच्छाय	76
अभ्रशक्तिर्यतो गच्छेत्	78
अभ्राणां यानि रूपाणि	86, 98
अभ्राणां लक्षणं कृत्स्नं	73
अभ्रेषु च विवर्णेषु	194
अमनोज्ञैः फलैः पुष्पैः	203
अम्बरेषूदकं विन्द्यात्	146
अम्बिकाशब्दनिमित्तं	487
अम्ला सलवणाः स्निग्धा	227
अरण्यानि तु सर्वाणि	146
अर्चिता गन्धैः पुष्पैः	486
अर्द्धचन्द्र निकाशस्तु	49
अर्द्धवृत्ता प्रभावन्ति	199
अर्धभागं यदा चन्द्रे	395
अर्हत्सु वरुणे रुद्रे	236
अर्हदादिस्तवो राजा	487
अलकारोपघाताय	279
अलंकृतानां द्रव्याणां	438
अलवतकं बाथ रोगो वा	434
अल्पचन्द्रं च द्वीपाश्च	356
अल्पेनापि तु कालेन	179
अवृष्टिश्च भयं घोरं	277
अशनिश्चक्रसंस्थाना	17
अश्मकान् भरतानुड्रान्	387
अश्रुपूर्णमुखादीनां	197
अश्वपण्योपजीविनो	287
अष्टम्यां तु यदा चन्द्रो	352
अष्टम्यां तु यदा सोमं	353
अष्टादशसु मासेषु	223
अष्टोत्तरशतैः पुष्पैः	488
असमव्यं विशीर्णं तु	144
असारवृक्षभूयिष्ठे	203
असिशक्तितोमराणां	76
अस्तंगतं यदा सूर्ये	383
अस्तं यातमथादित्यं	28
अस्तमायाति दीप्ता	142
अस्तिकाय विनीताय	175
अस्थिमांसैः पशूनां च	241
अहं कुल नृपं कूरं	175

अहश्च पूर्वसन्ध्या च 403
अहिच्छत्रं च कण्ठं च 266
अहिर्वा वृश्चिकः कीटो 439
अंशुमाली यदा तु 48

आ

आकाशे विमले छाया- 473
आग्नेयी अग्निमाख्याति 86
आजाविकं गुडं तैलं 410
आढकानि तु द्वात्रिंशद् 126
आढकानि धनिष्ठायां 123
आढकान्येक नवति- 125
आढकान्येकपंचाशत् 125
आढकान्येकविंशच्च 125
आदानाच्चैव पाताच्च 105
आदित्यं परिवेषस्तु 46
आदित्यं वाथ चन्द्रं वा 432
आदित्ये विचरेद् रोगं 274
आनर्त्तान् मलकीरांश्च 387
आनर्त्ता शौरसेनाश्च 308
आपो होतुः पतेद् 185
आप्यं ब्राह्मं च शैवं च 320
आरण्या ग्राममायान्ति 223
आरुहेद् वा निम्बेद्राणि 411
आरोग्यं जीवितं लाभं 181
आर्द्रां हत्वा निवर्तेत 279
आर्द्राश्लेषासु ज्येष्ठासु 165
आर्यस्तमादितं पुष्यां 405
आषाढा श्रवण चैव 277
आषाढी पूर्णिमायां तु 105, 106, 107, 108, 109
आषाढे तोयसंकीर्णं 322
आषाढे शुक्लपूर्वासु 122
आसनं शयनं यानं 438
आसनं शाल्मलीं वापि 439
आस्तां तु जीवितं मरणं 474
आस्तिकाय विनीताय 137
आहारस्थितयः सर्वे 111

इ

इतरेतरयोगास्तु 229
इतरेतरयोगेन 578
इति प्रोक्तं पदार्थस्तम्- 468
इति अन्वितसर्वांगो 468
इत्यंगुलिप्रश्ननिमित्तं 489
इत्यवोचमरिष्टानि 465
इत्यादिदर्शनं श्रेष्ठं 487
इत्येतावत्समासेन 17
इत्येवं निमित्तकं सर्वं 488
इन्द्रस्य प्रतिमायां तु 234
इन्द्राणि देवसंयुक्ता 413
इन्द्राण्यां समुत्पातः 235
इन्द्रायुधं निशिश्वेतं 232
इन्द्रायुधसवर्णं च 143
इन्द्रायुधसवर्णस्तु 112
इमं यथाविधं कृत्स्नां 206
इमानि यानि बीजानि 321

ई

ईतयश्च महाधान्ये 321
ईति व्याधिभयं चौरान् 274
ईशाने वर्षणं ज्ञेयं 115

उ

उच्छ्रितं चापि वैशाखात् 165
उत्तरं भजते मार्गं 415
उत्तरतो दिशः श्वेतः 352
उत्तरां तु यदा सेवेत 286
उत्तराणि च पूर्वाणि 335
उत्तराभ्यामाषाढाभ्याम् 122
उत्तरायां तु फाल्गुन्यां 127
उत्तरे उदयोऽर्कस्य 382

उत्तरेण तु पुष्यस्य	411
उत्तरेण तु रोहिण्यां	411
उत्तरेणोत्तरं विद्यात्	274
उत्तरे त्वनयो: सौम्यो	335
उत्पद्यन्ते च राजान:	124
उत्पाता विकृताश्चापि	194
उत्पाता विविधा ये तु	240
उत्पाताश्च निमित्तानि	357
उत्पाताश्चापि जायन्ते	195
उत्संग: पूर्यते स्वप्ने	442
उदकस्य प्रभु: शुक्र:	404
उदयात् सप्तमे ऋक्षे	341
उदयास्तमने भूयो	351
उदयास्तमने दृश्यते	383
उदयास्तमनेऽर्कस्य	86
उदये च प्रवासे च	287
उदये भास्करस्योल्का	28
उदीच्यां ब्राह्मणान् हन्ति	24
उदीच्यान्यथ पूर्वाणि	73
उद्गच्छत् सोममर्कं	27
उद्गच्छमान: सविता	237
उद्गच्छमाने चादित्ये	85
उद्गच्छेत् सोममर्कं	28
उद्भिज्जानां च जन्तूनां	409
उद्विजन्ति च राजानो	107
उपशान्ति चक्रेण	324
उपसर्पति मित्रादि	317
उपाचरन्नासवाज्ये	435
उपोहीने तथाष्टादश	473
उलूका वा बिडाला वा	196
उल्का ताराऽशनिश्चैव	399
उल्कादयो हतान् हन्यु-	400
उल्कानां पुलिन्दानां	310
उल्कानां प्रभवं रूपं	16
उल्का नीचै: समा स्निग्धा	23
उल्कापात सनिर्घात्	251
उल्कापातोऽथ निर्घाता:	184
उल्का रूक्षेण वर्णेन	29
उल्कावत् साधनं चात्रे	130
उल्कावत साधनं ज्ञेयं	51, 67, 99
उल्कावत् साधनं दिक्षु	146
उल्कावत् साधनं सर्वं	89
उल्काव्यूहध्वनीकेषु	29
उल्काऽशनिश्च धिष्ण्यं	21
उल्काऽशनिश्च विद्युच्च	22
उल्का समाना दृश्यन्ते	250
उल्का समासतो व्यासात्	3
उल्कास्ता न प्रशस्यन्ते	25
उल्कास्तु बहव: पीता:	29
उल्कास्तु लोहिता: सूक्ष्मा	29
ऊ	
ऊर्ध्वं प्रस्पन्दन्ते चन्द्र	354
ऊर्ध्वं वृषो यदा नर्दंत	245
ऊर्ध्वंस्थितं नृणां पाप	245
ऋ	
ऋक्षवानरसंस्थाना:	22
ए	
एकद्वित्रिचतु: संख्य-	489
एकपादस्त्रिपादो	197
एकवर्णाजिह्व क्षीर-	489
एकविंशं यदा गत्वा	292
एकविंशति यदा गत्वा	294
एकविंशति वेलाभि:	465
एकादशी भयं कुर्यात्	388
एकादशे यदा भौमो	341
एकादिषु शतान्तेषु	364
एकोनविंशकं पर्व	351

एकोनविंशतिर्विन्द्यात् 124
एकोनत्रिंशत्... 29
एकोनानि तु पंचाशत् 341
एतत्संख्यान् महारोगान् 461
एतद् व्यासेन कथितं 130
एतानि त्रीणि वक्राणि 293
एतानि पंच वक्राणि 294
एतान्येव तु लिंगानि 350, 357, 383
एतावद्गुणकगुलकानां 33
एतासां नामनिर्वर्त 63
एते च त्रिदश: सर्वे 367
एते प्रयाणा दृश्यन्ते 371
एते प्रवासा: शुक्रस्य 298
एतेषां तु यदा शुक्रो 271
एतेषामेव मध्येन 271, 272, 273, 276
एतेषामेव यदा शुक्रो 272
एते संवत्सराश्चोक्ता: 322
एते स्वप्ना यथोद्दिष्टा: 444
एवं च जायते सर्व 395
एवं दक्षिणतो विन्द्यात् 365
एवं देशे च जातौ च 237
एवं नक्षत्र शेषेषु 251
एवं नक्षत्रसंयुक्ता 25, 97
एवं विज्ञाय धातानां 111
एवं शिष्टेषु वर्णेषु 402
एवं शेषान् ग्रहान् 369
एवं शेषेषु वर्णेषु 239
एवं समस्तकारार्येषु 86
एवं हयवृषाश्चापि 183
एवमस्तमनं काले 8..
एवमेतत्फलं कुर्यात् 287
एवमेवं विजानीयात् 299
एवमेव यदा शुक्रो 274
एषां यदा दक्षिणतो 273
एषामन्यतरं हित्वा 251
एषैवास्तमतं उल्का 28

ऐ

ऐरावण पथं प्राप्त: 296, 298
ऐरावण पथं विन्द्यात् 270, 234, 235, 289
ऐरावणे चतुष्पथो 391

क

कंकलवौलूक कपोत 493
कंगुदारतिलामुद्गा 413
कटुकण्टकिनो रूक्षा: 227
कनकं मणयो रत्नं 394
कनकाभा शिखा यस्य 366
कनकाभो यदाऽष्टम्यां 353
कन्याऽप्यपि या कन्या 443
कपिलं यस्य धातायं 143
कपिले रक्त पीते वा 196
कबन्धमुदये भानो- 482
कबन्धा परिघा मेघा 351
कबन्धेनावृत: सूर्य: 481
कबन्धो वामपीतो वा 481
करंकशोणितं मांसं 240
करचरणजानुमस्तक 474
करभगे चतुर्मासै: 474
करेण धर्मसिद्धय: 492
कर्मजा द्विविधा 431
कषायमधुरास्तिक्ता 277
काका गृध्रा: शृगालाश्च 196
काञ्ची त्रिगर्तान् द्रमिलान् 388
कामजस्य यदा मासौ 231
काम्बोजान् रामगान्धारान् 370
कार्तिकं चाश्वपौषं 165
कार्पासास्तिलमाषाश्च 412

कार्याणि धर्मतः कुर्वन्ति 205
कालेयं चन्दनं रोध्रं 439
काशांश्च रेवतीहस्ते 281
काश्मीरान् दरदांश्च 382
काश्मीरा बर्बरा पौण्ड्रा 270
किष्किन्धाश्च कुनाटाश्च 381
कीटदष्टस्य वृक्षस्य 228
कीटाः पतङ्गाः शलभा- 309
कुब्जस्तु तदा नर्दत् 183
कुटिलः कटुरश्चिलग 370
कृत्तिका रोहिणी चित्रा 276, 414
कृत्तिकादि भगान्तश्च 317
कृत्तिकादीनि सप्तेह 343
कृत्तिकानां मघानां च 415
कृत्तिकायां गतो नित्यं 322
कृत्तिकायां दहत्यग्नी 455
कृत्तिकायां यदा शुक्रः 278
कृत्तिका रोहिणी चार्द्रा- 272
कृत्तिकारोहिणीयुक्ता 410
कृत्तिकासु च यद्याकि- 309
कृत्तिकास्तु यदोत्पातो 250
कृत्तिकास्वभिनदो रक्तो 334
कृशत्वं नीयते कायः 461
कृष्णं वासो हयं कृष्ण- 439
कृष्णः कृष्णं यदा हन्यात् 401
कृष्णनागा यदा भूत्वा 436
कृष्णपीता यदा कोटि- 353
कृष्णप्रभो यदा सोमो 353
कृष्णवाहाधिरूढो यः 481
कृष्णा च विकृता नारी 481
कृष्णानि पीत-ताम्राणि 74
कृष्णा नीला च रूक्षाश्च 24
कृष्णा रूक्षा गुरुपण्डा- 167
कृष्णे नीले ध्रुवं वर्षं 45
कृष्णे शुष्यन्ति सरितो 310
कृष्णो नीलश्च श्यामश्च 399
कृष्णो नीलस्तथा श्यामः 402
कृष्णो नीलाश्च रक्ताश्च 166
कृष्णो वा विकृतो रूक्षो 184
केतोः समुत्थितः केतु- 367
कोंकणानपरान्तांश्च 382
कोंकणान् दण्डकान् भोजान् 369
कोणजान् पापसम्भूतान् 364
कोद्रवाणां बीजानां 272
कोविदार समाकीर्णे 203
कोशधान्यं सर्पाश्च 409
कौण्डजा पुष्पादाश्च 267
क्रव्यादाः पक्षिणो यत्र 189
क्रव्यादाः शकुना यत्र 246
क्रूरं नदन्ति विषम 201
क्रूरः क्रुद्धश्च ब्रह्मघ्न- 344
क्रूरग्रहयुतश्च चन्द्रो 238
क्रौंचस्वरेण स्निग्धेन 198
क्वचिन्निष्पद्यते सस्यं 108
क्षत्रस्य परिवारस्य 475
क्षत्रियाणां विषादश्च 340
क्षत्रियान् यवनान् बाह्लीन् 387
क्षत्रियाः पुष्पितेऽश्वत्थे 232
क्षत्रियाश्च भुविख्याताः 393
क्षारं वा कटुकं वाऽथ 98
क्षिप्रगानि विलोमानि 78
क्षिप्रमोदं च वस्त्रं च 293
क्षीयते वा म्रियते वा 247
क्षीर शंखनिभश्चन्द्रो 45
क्षीरान्नभोजनं कृत्वा 486
क्षीरो क्षौद्रं यवा कंगु- 408
क्षुधामरणरोगेभ्य- 269
क्षेपाण्यत्र प्ररोहन्ति 123

क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं 107, 123, 124

ख

खण्डं विशीर्णं सच्छिद्रं 143
खरवद्भीमनादेन 248
खर-शूकरयुक्तेन 436
खर्जूरो ऽथ नलो वेणु- 482
खारी द्रोणशिखा ज्ञेया 271
खारीस्तु वारिणो विन्द्यात् 123

ग

गजवीथीमनुप्राप्त: 297, 298
गजवीथ्यां नागवीथ्यां 390
गति प्रवासमुदयं 331
गतिमार्गाकृतिवर्ण- 395
गन्धर्वनगरं क्षिप्रं 144
गन्धर्वनगरं गर्भान् 3
गन्धर्वनगरं स्वामि 143
गन्धर्वनगरं स्निग्धं 143
गर्भाधानादयो मासा- 164
गर्भा यत्र न दृश्यन्ते 168
गर्भास्तु त्रिविधा ज्ञेया 164
गवाक्षेण हिरण्येन 412
गिरि निम्ने च निम्नेषु 410
गुरुणा प्रहतं मार्गं 242
गुरुभार्गवचन्द्राणां 264
गुरुः शुक्रश्च भौमश्च 415
गुरुः सौरश्च नक्षत्रं 399
गुरोः शुक्रस्य भौमस्य 333
गृहद्वारं विवर्णत- 431
गृहयुद्धमिदं सर्वं 405
गृहाणां चरितं चक्र- 164
गृहादाकृष्य नीयन् 475
गृहांश्च वनखण्डांश्च 293
गृहीतो विध्यतं चन्द्रो 355
गृहणीयादेकभागेन 356
गोनागवाजिनां 201
गोपालं वर्जयेत् तत्र 308
गोवीथीमजवीथीं वा 390
गोवीथी रेवती चैव 270
गोवीथीं समनुप्राप्त: 296, 297
गोवीथ्यां नागवीथ्यां 391
ग्रहणं रविचन्द्राणां 475
ग्रहनक्षत्रचन्द्राणां 48
ग्रहनक्षत्रतिथयो 175
ग्रहानादित्यचन्द्रौ 25
ग्रहा: परस्परं यत्र 339
ग्रहो ग्रहं यदा हन्यात् 403
ग्रहौ गुरुबुधौ विन्द्यात् 403
ग्रामाणां नगराणां च 294
ग्राम्या वा यदि वाऽरण्या 197
ग्राह्यो नरं नगं कश्चित् 441
ग्रीवोपरकरबन्धयो 464

घ

घटितावटितं द्रव्यं 478
घनतीक्ष्णादिभिर्वाणै 480
घृतो घृताचिश्च्यवन- 381

च

चतुरंगबलोपेत- 180
चतुरंगाभिवृतो युद्ध 180
चतुरस्रो यदा चापि 49
चतुर्थं चैव षष्ठं च 265
चतुर्थी पंचमी षष्ठि 387
चतुर्थे मण्डले शुक्रो 268
चतुर्थे विचरन् शुक्रो 275
चतुर्दशानां भागानां 349
चतुर्दिक्षु यदा पृतना 30
चतुर्दिक्षु रवीन्दूनां 466
चतुर्भागफला तारा 17

चतुर्विंशत्ग्रहाणि 288
चतुर्विधोऽयं विष्कम्भः 177
चतुष्कं च चतुष्कं च 65
चतुष्पदानां पक्षिणां 75
चतुष्पदानां मनुजा- 197
चतुष्पदानां सर्वेषां 231
चतुष्पष्टिमाढकानि 122, 124, 126
चत्वारिंशच्च द्वे चापि 126
चत्वारिंशत् पंचाशत् 289
चत्वारि वा यदा गच्छेत् 307
चत्वारि षट् तथाष्टौ 332
चन्द्रभास्करयोर्बिम्बं 466
चन्द्रमा पीडितो हन्ति 357
चन्द्रमा सर्वघातेन 292
चन्द्रः शनैश्चरं प्राप्तो 308
चन्द्रः शुक्रो गुरु भौमो 411
चन्द्रसूर्य प्रदीपादीन् 465
चन्द्रसूर्यौ विशृंगौ तु 392
चन्द्रः सौरिं यदा प्राप्तः 308
चन्द्रस्य चारं चरतो 395
चन्द्रस्य चोत्तरा कोटी 351
चन्द्रस्य दक्षिणे पार्श्वे 412
चन्द्रस्य परिवेशस्तु 46
चन्द्रस्य वरुणस्यापि 237
चन्द्रे प्रतिपदि योग्यो 389
चर्मगुवर्णकलिंगान् 370
चान्द्रस्य दक्षिणो वीथीं 333
चारं गतो या भूयः 306
चारं प्रवासं वर्णं च 339
चिकित्सानिपुणः कार्यः 177
चिक्षिणो ह्यग्रणी गुल्मः 371
चित्रमूर्तिश्च निश्चांश्च 333
चित्रमूलाश्च त्रिपुरां 282
चित्रस्थः पीडयेन गर्भं 282
चित्रामेव विशाखा च 277
चित्रायां तु यदा शुक्र- 413
चित्रायां दक्षिणे पार्श्वे 412
चित्राश्चर्यमुलिंगानि 229
चिरस्थायीनि तोयानि 230
चिह्नं कुर्यात् क्वचित् 193
चैत्यवृक्षा रसान् यद्वत् 225
चोरो बद्धो हतः कालः 488
चौराश्च मायिनो म्लेच्छाः 356
च्यवनं प्लवनं यानं 431

छ

छत्रध्वजस्वस्तिक- 493
छर्दनं मरणं विन्द्यात् 437
छादयेच्चन्द्रसूर्यौ 350
छायापुरुषं स्वप्नं 468
छायाबिम्बं ज्वलत् प्रान्तं 469
छायाबिम्बं स्फुटं पश्येत् 473
छायालक्षणपुष्टश्च 177
छिन्ना भिन्ना प्रदृश्येत् 186

ज

जटी मुण्डी विरूपाक्षं 440
जन्मनक्षत्रघातेऽथ 393
जन्मोत्सव प्रतिष्ठाद्याः 487
जरद्गवपथं प्राप्तः 297
जरद्गवपथ प्राप्तः 296
जलं जलरुहं धान्यं 431
जलजानि तु सेवन्ते 273
जलदो जलकेतुश्च 371
जानीयादनुराधायां 129
जामदग्न्ये यदा राम 236
जायते चक्षुषो व्याधिः 193
जिह्वामलं न मुञ्चन्ति 485
जुह्वतो दक्षिणं देशं 186
जुह्वत्यनुपसर्पण स्थानं 186

ज्ञानविज्ञानयुक्तोऽपि 179
ज्येष्ठानुराधयोश्चैव 288
ज्येष्ठामूलं च सौम्यं च 320
ज्येष्ठामूलममावस्यां 163
ज्येष्ठामूलौ यदा चन्द्रो 414
ज्येष्ठायामनुपूर्वेण 335
ज्येष्ठायामार्द्रकाणि 129
ज्येष्ठास्थः पीडयेत् 283
ज्येष्ठे मूलमतिक्रम्य 122
ज्योतिषं केवलं कालं 4
ज्वलन्ति यस्य शस्त्राणि 195

ड

डिम्भरूपा नृपतये 30

त

तज्जातप्रतिरूपेण 270
ततः पंचदशाक्षाणि 291
ततः प्रवक्ष्यते वेश- 355
ततः प्रोवाच भगवान् 16
ततः श्मशानभूतास्थि 295
तत्र तारा तथा धिष्ण्यं 17
तत्रासीनं महात्मानं 2
तत्रास्ति सेनजिद् राजा 1
तथा मूलाभिघातेन 323
तथैवोर्ध्वमधो वाऽपि 65
तदा गच्छन् गृहीतोऽपि 352
तदा ग्रामं नगरं धान्यं 293
तदा निम्नानि यातानि 122
तदाऽन्योन्यं तु राजानो 294
तनुः समार्गो यदि 336
तन्दुलैर्मिश्रते यस्यां 467
तपोबिम्बं यदा नीलं 466
तर्जन्यां स्थापयेद् भूमौ 489
तस्मात् स्वर्गास्पदं 182
तस्माद् देशं च कालं 181
तस्माद्राजा निमित्तज्ञं 180
तस्य व्याधिभयं चापि 192
तस्यैव तु यदा धूमो 200
तस्योपरि पुनर्दत्वा 486
तापसं पुण्डरीकं वा 440
ताम्रो दक्षिणकाष्ठस्थ 340
तारणां च प्रमाणं च 16
तिथिश्च करणं चैव 32
तिथीनां करणानां च 115
तिथौ मुहूर्तकरणे 97
तिर्यक्षु यानि गच्छन्ति 76
तिलाः कुलत्था माषाश्च 394
तिष्यो ज्येष्ठा तथाऽश्लेषा 271
तीक्ष्णायां दशरात्रेण 331
तृतीयायां यदा सोमो 352
तृतीये चिरगो व्याधि 275
तृतीये मण्डले शुक्रो 267
तेन सञ्जनितं गर्भं 105
तैलपूरितगर्तायां 476
तैलिका सारिकाश्चान्तं 279
तोयावहानि सर्वाणि 229
तोसलिगान् सुतान् 369
त्रपुसीमायतं रज्जुं 434
त्रयोदशी-चतुर्दश्यो- 388
त्रयोदशोऽपि नक्षत्रे 342
त्रासयन्तो विनिघ्नन्तो 248
त्रिकोटि यदि दृश्येत् 49
त्रिमण्डलपरिक्षिप्तो 87
त्रिवर्णश्चन्द्रवत् वृत्तः 366
त्रिंशति यदा गत्वा 293
त्रिशिरस्के द्विजगणं 365
त्रीणि यास्याबद्ध्यन्ते 50
त्रैमासिकः प्रवासः स्यात् 288

द

दंष्ट्री शृंगी वराहो वा 479
दक्षिणं चन्द्रशृंगं च 415
दक्षिणं मार्गमाश्रित्य 392
दक्षिण: क्षेमकृज्ज्ञेयो 283
दक्षिणस्तु मृगान् हन्ति 282
दक्षिण: स्थविरान् हन्ति 286
दक्षिणस्यां दिशि यदा 105
दक्षिणान्तरतो दृष्ट: 245
दक्षिणा भवेत् गर्भा 357
दक्षिणा मेचकाभा तु 353
दक्षिणे चन्द्रशृंगे च 238
दक्षिणे तु यदा मार्गे 307
दक्षिणे धनिनो हन्ति 285
दक्षिणेन तु पार्श्वेण 336
दक्षिणेन तु वक्रेण 318
दक्षिणेन यदा गच्छेत् 279
दक्षिणेन यदा शुक्रो 272
दक्षिणेनानुराधायां 413
दक्षिणे नीचकर्माणि 285
दक्षिणे राजपीडा स्यात् 247
दक्षिणे श्रवणं गच्छेत् 285
दक्षिणे स्थविरान् हन्ति 284
दधि क्षीरं घृतं तोयं 225
दध्नेष्टसज्जनप्रेम 479
दर्शनं ग्रहणं भग्नं 437
दशपञ्चवर्षैस्तथा 474
दशाहं द्वादशाहं वा 113
दिग्भागं हरितं पश्येत् 485
दिनानि तावन्मात्राणि 490
दिवसान् षोडशैरेव 490
दिवसार्धं यदा याति 106
दिवाकरं बहुविध: 47
दिवा समुत्थितो गर्भो 163
दिवा हस्ते तु रेवत्यां 191
दिवि मध्ये यदा दृश्येत् 264
दीक्षितानर्हद्देवांश्च 372
दीपशिखां बहुरूपां 466
दीप्यन्ते यत्र शस्त्राणि 225
दुग्धतैलघृतानां च 442
दुर्गन्धं पाण्डुरं भीमं 481
दुर्गे भवति संवासो 306
दुर्भिक्षं चाप्यवृष्टिं च 110
दुर्वर्णाश्च दुर्गन्धा- 204
दुर्वासा कृष्णभस्मश्च 436
दूतोपजीविनो वैद्यान् 286
दूरं प्रवासिका यान्ति 129
दृश्यते श्वेतसर्पेण 478
देवतं तु यदा बाह्यं 188
देवताऽतिथिभृत्येभ्यो 195
देवतान् दीक्षितान् वृद्धान् 194
देवतान् पूजयेत् वृद्धान् 205
देव-साधु-द्विजातीनां 443
देवान् प्रव्रजितान् 252
देवान् साधु-द्विजान् प्रेतान् 433
देवेष्टा पितरो गावो 479
देवो वा यत्र नो वर्षेत् 194
देशस्नेहाम्भसां लोपो 342
देशा महान्तो योधाश्च 309
दैवज्ञा भिक्षव: प्राज्ञा 243
द्योतयन्ती दिशा सर्वा- 88
द्वात्रिंशदाढकानि स्यु- 128, 130
द्वादशांगस्य वेत्तारं 2
द्वादशाहं च त्रिशाहं 292
द्वादशैकोनविंशद्वा 291
द्वारं शस्त्रगृहं वेश्म 241
द्वाविंशति यदा गत्वा 293
द्वाशीति चतुरासीति 291

द्विगाढं हस्तिनारूढः 433
द्विगुणं धान्यमर्घेण 269
द्वितीयमण्डले शुक्रो 266, 275
द्वितीयायां तृतीयायां 389
द्वितीयायां यदा चन्द्र- 352
द्वितीयायाः शशिबिम्ब 467
द्विनक्षत्रस्य चारस्थ 320
द्विपदश्चतुष्पदो 193
द्विपदाश्चतुष्पदाः 88, 195
द्विपो ग्रहो मनुष्यो वा 482
द्विमासिकास्तदा 125
द्वे नक्षत्रे यदा सौरिः 306

ध

धनधान्यं न विक्रेयं 106
धनिनो जल-विप्राश्च 344
धनिष्ठादीनि सप्तैव 344
धनिष्ठाधनलाभाय 436
धनिष्ठायां जलं हन्ति 336
धनिष्ठास्थो धनं हन्ति 285
धनुरारोहते यस्तु 433
धनुषां कवचानां च 76
धन्वन्तरे समुत्पातो 236
धनुषा यदि तुल्यः 391
धर्मकार्याणि वर्तन्ते 122
धर्मार्थकामा लुप्यन्ते 277, 295
धर्मार्थकामा हीयन्ते 343
धर्मोत्सवान् विवाहांश्च 205
धान्यं तदा न विक्रेयं 344
धान्यं पुनर्वसौ वस्त्रे 456
धान्यं यत्र प्रियं विन्द्यात् 411
धान्यं नश्यमिति ज्ञेयं 415
धान्यस्यार्थं तु नक्षत्रं 404
धारितं याचितं गर्भं 105
धार्मिकाः शूरसेनाश्च 266
धूमं रजः पिशाचांश्च 164
धूमः कुणिपगन्धो 185
धूमकेतुं च सोमं च 50
धूमकेतुहतं मार्गं 242
धूमज्वाला रजो भस्म 241
धूमध्वजो धूमशिखो 371
धूम्रश्चतुर्दश यो ज्ञेयः 365
धूम्रवर्णा बहुच्छिद्रा 88
धृतिमदनविनाशो 465
ध्वजानां च पताकानां 75

न

न कालं नियता केतु 370
नक्षत्रं ग्रहसम्पन्नं 408
नक्षत्रं यदि वा केतु 368
नक्षत्रं यस्य यत्पुंसः 21
नक्षत्रं शकवाहेन 331
नक्षत्रमादित्यवर्णो 382
नक्षत्रस्य चिह्नानि 332
नक्षत्रस्य यदा गच्छेत 411
नक्षत्राणि चरेत्पंच 332
नक्षत्राणि मुहूर्ताश्च 163
नक्षत्राणि विमुञ्चन्त्यः 26
नक्षत्रे पूर्वदिग्भागे 369
नक्षत्रे भार्गवः सोमः 410
नक्षत्रेषु तिथौ चापि 167
नगरेषूपसृष्टेषु 27
नगरेष्वपुराणं तु 441
नग्नं प्रव्रजितं दृष्ट्वा 188
न चरन्ति यदा ग्रासं 197
न जानाति निजं कार्यं 464
नदीवृक्षसरोभूभृत् 476
न पश्यति स्वकार्याणि 246
न पश्यन्ति आतुरच्छायां 469
नभस्तृतीयभागं च 291

नमस्कृत्य जिनं वीरं 1
नमस्कृत्य महावीरं 430
न मित्रचित्तो भूतेषु 246
न प्रियभावे सुहृदो 455
नरत्वे दुर्लभे प्राप्ते 461
नरा यत्र विपद्यन्ते 202
नवतिशतकानि स्यु- 124
नवमी मन्त्रिणश्चौरान् 388
नवम्यां तु यदा चन्द्रः 352
नव वस्त्रं प्रसंगेन 246
न वेदा नापि चांगानि 181
नष्टो भग्नः शोकस्थः 488
नागरस्यापि यः शीघ्र- 399
नागराणां तदा भेदो 392
नागरे तु हते विन्द्यात् 400
नागवीथिमनुप्राप्तः 297, 298
नागवीथीति विज्ञेया 270
नागाग्रे वेश्मनः शालो 437
नानारूपप्रहरणैः 76
नानारूपो यदा 49
नानावर्णैः समाच्छन्ना 226
नानावृक्षसमाकीर्णो 1
नारी पुरुषत्वं नरः स्त्रीत्वं 443
नाशाग्रे स्तनमध्ये 472
निम्नगाश्च विनश्यन्ति 274
निजछाया तथा प्रोक्ता 470
निर्ग्रन्थैर्वेष्टयेद् ग्रामं 479
निजास्यं येन पश्येच्च 486
नित्योद्विग्नो नृपहितो 178
नितान्तं दृष्टिच्छिन्नो 246
नितम्बमलो यदि 201
निमित्तं स्वप्नजं चोक्त्वा 484
निमित्तादनुपूर्वाच्च 32
निमित्ते लक्षयेदेतां 177
निम्नं कूपजलं विद्वान् 434
निम्नेषु वापयेद् बीजं 128
निरिन्धनो यदा चाग्नि- 225
निर्गच्छंस्तुद्यते वायु- 463
निर्ग्रन्था यत्र गर्भाश्च 168
निर्घाते कम्पते भूमौ 231
निर्दया निरनुक्रोशा- 342
निर्निमित्तोमुखे हास 4 3
निर्विश्रामो मुखात् श्वासो 464
निवर्तते यदि छाया 243
निविष्टो यदि सेनाग्निः 194
निवृत्ति चापि कुर्वन्ति 412
निशायाः प्रथमे यामे 486
निश्चयास्तदा विपद्यन्ते 273
निश्चलः सुप्रभः कान्तो 357
निष्कुट्यन्ति पार्श्वा 197
निष्पत्तिः सर्वधान्यानां 273
निष्पद्यते च शस्यानि 272
नीचावलम्बी सोमस्तु 356
नीचैर्निविष्टभूपस्य 204
नीलवर्णैस्तथाश्रेणीन् 226
नीला पीता तथा कृष्णा 469
नीला ताम्रा च गौरा 67
नीलाग्रास्तु यदा वर्णा 403
नृपा भृत्यैर्विरुद्ध्यन्ते 389
नृपाश्च विषमच्छाया 320
नैमित्तः साधुरूपाग्नो 177

प

पक्वमांसस्य घाताय 437
पक्षिणः पशवो मर्त्या 224
पक्षिणश्च यदा मत्ता 223
पक्षिणश्चापि क्रव्यादा- 97
पक्षिणां द्विपदानां च 74
पश्चमश्वयुजे चापि 126

पञ्चप्रकारा विज्ञेया:	44
पञ्चमे विचरन् शुक्रो	275
पञ्चम्यां ब्राह्मणान् सिद्धान्	389
पञ्चयोजनिका सन्ध्या	89
पञ्चवक्राणि भौमस्य	341
पञ्चविंशतिरात्रेण	236
पञ्चसंवत्सरं घोरं	349
पञ्चाशिति विजानीयात्	127
पतंगा: सविषा: कीटा:	342
पतन्ति दशना यस्य	479
पताकामसियष्टिं	438
पतेन्निम्ने यथाप्यम्भो	183
पयोधिं तरति स्वप्ने	477
परचक्रं नृपभयं	228
परच्छायाविशेषोऽयं	471
परस्य विषयं लब्ध्वा	204
परिघाऽर्गला कपाटं	242
परिवर्तेद् यदा वात	190
परिवेषोदयोऽष्टम्यां	353
परिवेषा विरुद्धेषु	48
पशव: पक्षिणो वैश्या:	393
पशुव्याघ्रपिशाचानां	350
पांशुवातं रजो धूपं	292
पांशुवृष्टिस्तथोल्का	244
पाञ्चाला: कुरवश्चैव	207
पाणिपादौ हृदिच्छिन्नं	464
पाण्डुराणि च वस्त्राणि	442
पाण्डुर्वा श्यावलोहो वा	355
पाण्ड्यकेरलचोलाश्च	278
पाण्ड्या: केरलचोला:	394
पादं पादेन गुल्फानि	199
पादहीनं नरं दृष्ट्वा	473
पादै: पादान् विकर्षन्ति	202
पापघाते तु वातानां	110
पापमुत्पातिकं दृष्ट्वा	2
पापा: घोरफलं दद्यु:	17
पापामूल्कासु यश्चस्तु	31
पार्थिवानां हितार्थाय	2
पार्श्वे तदा भयं ब्रूयात्	247
पाशवज्रासिसदृशा:	22
पिण्डस्थं च पदस्थं च	462
पितामहर्षय: सर्वे	233
पितृदैवं तथाऽश्लेषां	334
पित्तश्लेष्मान्तिक: सूर्यो	404
पिशाचा यत्र दृश्यन्ते	240
पीडितोऽपचयं कुर्यात्	188
पीड्यन्ते केतुघातेन	394
पीड्यन्ते पूर्ववत् सर्वे	266
पीड्यन्ते भयनाथ	267
पीड्यन्ते सोमघातेन	400
पीतं गन्धर्वनगरं	142
पीतं पुष्पं फलं यस्मै	441
पीत: पीतं यदा हन्यात्	401
पीतपुष्पनिभो यस्तु	94
पीतवर्णप्रसूनैर्वा	480
पीतोत्तरा यदा कोटि-	354
पीतो यदोत्तरां वीथीं	334
पीतो लोहितरश्मिश्च	481
पुच्छेन पृष्ठतो देशं	22
पुण्य पापं भवेद्दैवं	483
पुण्यशीलो जयी राजा	268
पुनर्वसु यदा रोहेत्	279
पुनर्वसुमाषाढां	276
पुरन्ध्रीभ्यां व्रजन् भद्र-	487
पुरस्तात् सह शुक्रेण	336
पुरीषं छर्दनं यस्य	439
पुरीषं छर्दितं मूत्रं	477
पुरीषं लोहितं स्वप्ने	480

पुलिन्द्रा कोंकणा भोजा:	393	प्रकृतेर्यो विपर्यास:	222
पुष्करिण्यां तु यस्तीरे	432	प्रक्षालितकरयुगल-	489
पुष्पं पुष्पे निबध्येत्	2:0	प्रक्षालितनिजदेह:	468
पुष्पाणि पीतरक्तानि	202	प्रक्षिप्यति य शस्त्रै:	443
पुष्यं प्राप्तो द्विजान्	286	प्रजानामनयोर्घोर-	414
पुष्येण मंत्रयोगस	191	प्रजापत्यमाषाढां	277
पुष्ये हते हत पुष्पं	321	प्रज्वलद्वासधूमं वा	466
पुष्यो यदि द्विनक्षत्रे	320	प्रतिलोमोऽनुलोमो-	319
पूजित: सानुरागेण	188	प्रतिलोमो यदाऽनीके	113
पूर्वं दिशि तु यदा हत्वा	357	प्रतिसूर्यमिमस्तश्च	87
पूर्वत: क्षीरकलिंगान्	266	प्रत्युद्गच्छति आदित्यं	355
पूर्वत: समचारेण	291	प्रत्युपे पूर्वत: शुक्र:	277
पूर्वरात्रपरिश्रेपा-	87	प्रथमं च द्वितीयं च	265
पूर्वलिंगानि केतूनां	365	प्रथमं मण्डले शुक्रो	266, 275
पूर्ववातं यदा हन्यात्	109	प्रदक्षिणं तु ऋक्षस्य	308
पूर्ववातो यदा तूर्णं	111	प्रदक्षिणं तु कुर्वीत्	324
पूर्वसन्ध्यां नागराणां	50	प्रदक्षिणं तु नक्षत्रं	324
पूर्वसन्ध्यां यदा वायु	115	प्रदक्षिणं प्रयातस्य	287
पूर्वसन्ध्यासमुत्पन्न:	163	प्रदक्षिणं यदा याति	278
पूर्वसूरे यदा घोरं	142	प्रदक्षिणं यदा वान्ति	110
पूर्वाचार्यैस्तथा प्रोक्त	462	प्रदक्षिणे प्रयाणे तु	280
पूर्वाफाल्गुनी भवेत्	281	प्रद्युम्ने वायव उत्पातो	234
पूर्वा फाल्गुनी शुभदा	456	प्रधानं य पिबेत् पानं	434
पूर्वाभाद्रपदायां तु	123	प्रभूतवस्त्रदा श्विनी	49
पूर्वामुदीचीमैशानीं	165	प्रयाणे निपतत्युल्का	186
पूर्वार्द्धदिवसे ज्ञेयौ	106	प्रयाणे पुरुषा वापि	190
पूर्वेण विजयक्षाक्षि	292	प्रयातं पार्थिवं यत्र	98
पूर्वोदये फलं यत्तु	299	प्रयातास्तु सेनाया-	189
पूर्वोवात: स्मृत:	109	प्रयातो यदि वा राजा	189
पृष्ठत: पुरतश्चाग	332	प्रवरं पातयेद् भृत्य	190
पृष्ठतो वर्धन: श्रेष्ठ	96	प्रवान्ति सर्वतो वाता-	111
पौरा नागरा राजा	372	प्रवासे दक्षिणे मार्गे	306
पौरेया पुरुषमात्र	394	प्रवासमुदय वक्रं	306
प्रकृतेर्यो विपर्यासो	16	प्रवासा: पंचशुक्रस्य	288

प्रशस्तु यदा वात 114
प्रसन्नाः साधुकान्तश्च 358
प्रसारयित्वा ग्रीवां 250
प्रस्वपेदशुभे स्वप्ने 484
प्रहेषन्ते प्रयातेषु 198
प्राकारपरिखाणां च 111
प्राकाराट्टालिका 49
प्रायेण हिंसते देशान् 388
प्रासादं कुंजरवरान् 432
प्रेतयुक्तं समारूढो 435

फ

फलं वा यदि वा पुष्पं 192
फले फलं यदा किंचित् 240
फल्गुन्यश्च भरण्यां च 217
फाल्गुनीषु च पूर्वासु 127

ब

बंगानंगान् कलिंगांश्च 369
बन्धनं बाहुपाशेन 478
बन्धनेऽथ वरस्थाने 476
बर्बराश्च किराताश्च 401
बलक्षोभो भवेच्छ्यामे 290
बलाबलं च सर्वेषां 4
बलीवर्दयुतं यानं 441
बहुच्छिद्रान्वितं बिम्बं 466
बहिरंगाश्च जायन्ते 183
बहुजा दीना शीलाश्च 127
बहु बोदशको ऽथ 392
बहूदकानि जानीयात् 320
बहूदका सस्यवती 109
बालाऽश्ववृक्षमरणं 76
बाहुसितासमायुक्तं 471
बाह्लीकान् चीनविषयान् 370
बुधो यदोत्तरे मार्गे 332
बुधो विवर्णो मध्येन 335
बुधस्तु बलवित्तानां 404
बृषवीथिमनु प्राप्तः 296, 297
बृहस्पति यदा कुर्यात् 369
बृहस्पतेर्यदा चन्द्रो 324
ब्राह्मी सौम्या प्रतीची च 309

भ

भक्षितं संचितं यच्च 247
भग्नं दग्धं च स्फुटं 189
भज्यते नश्यते तत् 233
भद्रकाली विधुर्वन्ति 235
भद्रपदासु भयं सलिल 492
भयान्तिकं नागराणां 286
भरण्यादीनि चत्वारि 264
भवद्भिर्यदहं पृष्टो 16
भवने यदि श्रूयन्ते 230
भवान्तरेषु चाभ्यस्ता 431
भवेन्नामुभयं मरणं 124
भस्मपांशुरजस्कीर्णा 108
भस्माभो निःप्रभो रूक्षः 387
भार्गवः गुरुवः प्राप्तो 393
भार्गवस्योत्तरां वीथीं 333
भास्करं तु यदा रूक्षः 46
भित्वा यदोत्तरां वीथीं 334
भिद्यन्ते यस्तु शस्त्रेण 475
भिनत्ति सोमं मध्येन 238
भीमास्त्रशिक्षादिभवा 461
भुजंगमे विलुप्यन्ते 492
भूतं द्रव्यं भवद् वृष्टि 264
भूतेषु यः समुत्पातः 236
भूपकुंजरगोवाह- 477
भूमि समागमजानां 432
भूमिर्यत्र नभो याति 241
भूम्यां प्रसिन्वा यामं 249
भूतं मन्त्रितलैलेन 486

भृत्यकरान् यवनांश्च 287
भृत्यामात्या स्त्रिय: 181
भेरीशंखमृदंगाश्च 194
भेषाजमहिषाकारा: 22
भोक्तुं नवाम्बरं शस्त- 493
भोजनेषु भयं विन्द्यात् 233
भोजान् कलिंगानुंगांश्च 266
भौतिकानां शरीराणां 16
भौमान्तरिक्षादिभेदा 369
भौमेनापि हतं मार्गं 242
भौमो वक्रेण युद्धे 344
भ्रूमध्यं नासिका जिह्वा- 463

म

मक्षिका वा पतंगो वा 185
मघां विशाखां च ज्येष्ठा 414
मघादीनि च सर्वैव 343
मघानां दक्षिणं पार्श्वं 280
मघानामुत्तरं पार्श्वं 281
मघायां च विशाखायां 276
मघासु खारी विज्ञेया 127
मत्ता यत्र विपद्यन्ते 203
मत्स्यभागीरथीनां 280
मदमदनविकृतिहीन: 472
मद्यानि रुधिराऽस्थीनि 224
मधुकुम्भं विशेत् स्वप्ने 482
मधुरा: क्षीरवृक्षाश्च 227
मधुरे निवेशस्वप्ने 437
मधुसर्पिस्तिलानां च 409
मध्यदेशे तु दुर्भिक्षं 283
मध्यमं क्वचिदुत्कृष्टं 108
मध्यमंमे गजाध्यक्ष- 247
मध्यमे तु यदा मार्गे 307
मध्यमे मध्यमं वर्षं 67
मध्याह्ने तु यदा चन्द्र 355
मध्याह्ने चार्धरात्रे 112
मध्येन प्रज्वलन् गच्छन् 283
मन्त्रज्ञ: पापदूरस्थो 483
मन्त्रित्वा स्वमुखं रोगी 485
मन्त्री न पश्यति छायाम् 469
मन्त्रेणानेन हस्तस्य 488
मन्दक्षीरा यदा वृक्षा: 354
मन्ददीप्तश्च दृश्येत् 340
मन्दवृष्टिमनावृष्टिं 167
मन्दोदा प्रथमे मासे 168
मरुस्थलीं तथा भ्रष्टं 438
मर्दनारोहणे हन्ति 286
मलमूत्रादिबाधोत्थ 483
मलिनानि विवर्णानि 77
मल्लजा मालवे देशे 410
महतोऽपि समुद्भूतान् 115
महाकेतुश्च श्वेतश्च 371
महाजनाश्च पीड्यन्ते 390
महात्मानश्च ये सन्तो 309
महाधान्यस्य महतां 409
महाधान्यानि पुण्याणि 412
महान्तश्चतुरस्राश्च 227
महापिपीलिकाराशि: 232
महापिपीलिकावृन्दं 231
महामात्याश्च पीड्यन्ते 125
महावृक्षो यदा शाखां 244
महिषोष्ट्रखरारूढो 475
मागधान् कटकालांश्च 481
मागधेषु पुरं ख्यातं 1
माघजात् श्रवणे विन्द्यात् 167
माघमल्पोदकं विन्द्यात् 321
मानुष: पशुपक्षीणां 366
मानोन्मानप्रभायुक्तो 177
मारुत: तत्प्रभवा गर्भा 166

मारुतो दक्षिणे वापि	187
मार्गमेकं समाश्रित्य	170
मार्गवान् महिषाकारः	351
मार्गशीर्षे तु गर्भा	167
मालदा मालं वैदेहा	411
मालो वा वेणुगुल्मो वा	440
मासे मासे समुत्थान	387
मासोदितोऽनुराधायां	335
मित्राणि स्वजनाः पुत्रा	295
मिष्टमन्यमथ विश्व	492
मुण्डितं जटिलं रूक्षं	481
मुक्तामणिजलेशानां	409
मुद्गर-सबल-छुरिका	470
मुहूर्ते शकुने वापि	77
मुहुर्मुहुर्यदा राजा	189
मूत्रं पुरीषं बहुशो	249
मूलं मन्देव सेवन्ते	414
मूलं वा कुरुते स्वप्ने	438
मूलमुत्तरतो याति	318
मूलादिदक्षिणो मार्गः	288
मूलेन क्लिश्यते चक्रं	456
मूलेन खारी विज्ञेया	129
मूषको नकुलस्थाने	185
मूषके तु यदा ह्रस्वो	318
मृगवीथि पुनः प्राप्तः	296
मृगवीथिमनुप्राप्तः	297
मृण्मयं नागमारूढः	442
मृगे तु मूषकाद्भयं	491
मेखलान् वाप्यवन्याश्च	343
मेघशंखस्वराभाग्नु	176
मेघशब्देन महता	96
मेघा यत्राभिवर्षन्ति	96
मेघा यदाऽभिवर्षन्ति	96
मेघा सविद्युतश्चैव	98
मेचकः कपिलः श्यामः	317
मेचकश्चेनमूर्तं सर्वं	217
मेषाजमहिषाकाराः	22
मैत्रादीनि च सप्तैव	344
मैथुनेन विपर्यासं	197
य	
यः केतुचारमखिलं	373
यजनोच्छेदनं यस्य	243
यतः खण्डस्तु दृश्येत्	47
यतः सेनाभिपतेत् तस्य	30
यतोत्साहं नु हत्वा	356
यतोऽस्तमितं विन्द्यात्	354
यतो राहुर्ग्रसेच्चन्द्रं	356
यतो राहुप्रमथनं	358
यतो विपर्यासश्च	354
यत्किंचित् परिहीनं	204
यत्र देशे समुत्पाता	252
यत्रोत्पाताः न दृश्यन्ते	251
यत्रोदितश्च विचरेत्	274
यत्र वा तत्र वा स्थित्वा	532
यथान्तरिक्षात् पतितं	182
यथा गृहं तथा ऋक्षं	27
यथाज्ञानप्रकृष्टेण	204
यथान्धः पथिको भ्रष्टः	180
यथाऽभिवृष्याः स्निग्धा	31
यथा मार्गं यथा वृद्धि	31
यथा वक्रो रथो गन्ता	180
यथावदनुपूर्वेण	22
यथा वृद्धो नरो कश्चित्	228
यथास्थितं शुभं मेघं	95
यथा हि बलवान् राजा	372
यथोचितानि सर्वाणि	205
यदा गन्धर्वनगरं	143, 144
यदा गृहमवच्छाद्य	50

यदाग्निवर्णो रवि- 299
यदा चन्द्रे वरुणे 323
यदा च पृष्ठतः शुक्रः 278
यदा चान्ये ग्रहा यान्ति 268
यदा चान्ये तिरोहन्ति 266
यदा चान्येऽभिगच्छन्ति 269, 270
यदाञ्जननिभो मेघः 94
यदा चाभ्रधनैर्मिश्रं 145
यदा चोत्तरतः स्वाति 318
यदा तमसि सम्पन्नः 180
यदा तु ग्रहनक्षत्रे 50
यदा तु तत्परां सेनां 187
यदा तु त्रीणि चत्वारि 307
यदा तु धान्यसंधानां 78
यदा तु पंचमे शुक्रः 268
यदा तु मण्डले षष्ठे 269, 275
यदा तु बालाश्चत्वारो 110
यदा तु सोममुदितं 46
यदाऽति क्रमते चारम् 294
यदाऽति मुच्यते शीघ्रं 47
यदात्युष्णं भवेच्छीते 223
यदा त्रिवर्गपर्यन्तं 47
यदा द्वारेण नगरं 242
यदा धुनन्ति सीदन्ति 202
यदानुराधायां प्रविशेत् 345
यदान्नं पादवारि वा 201
यदा पंचदेशे ऋक्षे 342
यदा प्रतिपदि चन्द्रः 349
यदाप्युवतो माघ 191
यदा बालाः प्ररक्षन्ते 249
यदा बुधोऽरुणाभः 333
यदा बृहस्पतिः शुक्रं 239
यदा प्रदक्षिणं गच्छेत् 284
यदा भंगो भवत्येषां 247
यदा भाद्रपदां सेवेत् 286
यदा भूधरशृंगाणि 231
यदाऽभ्रवर्जितो याति 113
यदाऽभ्रशवितं दृश्येत् 48
यदा मधुरशब्देन 198
यदा मध्यनिशायां तु 355
यदा मुंचन्ति शुण्डाभि 202
यदा राजा निवेशेत 203
यदा राज्ञः प्रयाणे 75
यदा राज्ञः प्रयातस्य 112, 190, 199
यदा वर्णं न लुप्तं स्यात् 491
यदा वाऽन्येति रोहन्ति 267
यदाऽऽरुहेत् प्रमर्देत 284
यदार्चप्रतिमायां तु 235
यदा वान्ये तिरोहन्ति 267
यदा वा युगपद् युक्तः 309
यदा विरुद्धं दृश्यन्ते 249
यदा शैवालजले वापि 250
यदा श्वेताऽभ्रवृक्षस्य 66
यदाऽष्टौ सप्तमासान् 340
यदा सपरिघा सन्ध्या 114
यदा सप्तदश ऋक्षे 342
यदा स्थितौ जीवबुधौ 455
यदि धूमाभिभूता स्यात् 184
यदि राहुमपि प्राप्तं 50
यदि वैश्रवणे कश्चित् 233
यदि होता तु सेनायाः 185
यदि होतुः पथे शीघ्रं 184
यदोत्पातोऽयमेक- 233
यद्दैवनक्षत्रगतो कुर्यात् 392
यद्दले चाक्षरं लुप्तं 491
यद्देवाऽसुरयुद्धे 179
यद्यग्रतस्तु प्रयातेन 195
यद्याज्यभाजने केशा 185

यद्युत्तरासु तिष्ठेत्	284
यद्युत्पातः श्रिया कश्चित्	235
यद्युत्पाताः प्रदृश्यन्ते	235
यद्युत्पातो भवन्त्येवं	234
यः प्रकृतेर्विपर्यासः	16
यवगोधूमशालीहाया-	409
यस्तु लक्षणसम्पन्नो	179
यस्माद्देवगुरौ गुरौ	176
यस्मिन् यस्मिंस्तु नक्षत्रे	310
यस्य देशस्य नक्षत्रं	290, 415
यस्य यस्य च नक्षत्रं	293
यस्य वा सम्प्रयातस्य	156
यस्यापि जन्मनक्षत्रं	31
यस्याः प्रयाणे सेनायाः-	187
यः स्वप्ने गायते हसते	437
यां दिशं केतवोऽर्चिभि-	368
या चादित्यात् पतेदुल्का	24
या तु पूर्वोत्तरा विद्युत्	65
यामाग्निस्थितोपकरणं	192
यानानि वृक्ष-वेश्मानि	230
यानि रूपाणि दृश्यन्ते	168
यायिनः ख्यातयाः सस्यः	401
यायिनो यायतो हन्यु-	400
यायिनौ चन्द्र-शुक्रौ तौ	413
या वक्रा प्राङ्मुखी छाया	470
यावच्छायाकृति रवे-	176
युगान्त इति विख्यातः	25
युद्धप्रियेषु हृष्टेषु	196
युद्धानि कलहा बाधा	244
यूपाकारं धूमं यः	436
ये कश्चिद् चित्रनीलाभि	158
ये तु पुष्पेण दृश्यन्ते	165
येऽन्तरिक्षे जले भूमौ	372
ये विदिक्षु विनिघ्नाश्च	228
येषां निदर्शने किंचित्	192
येषां वर्णेन संयुक्ता	21
येषां सेनासु निपतते	29
यो नरोऽत्रैव सम्पूर्णं	473
यो नृत्यन् गीयते बद्ध्वा	476

र

रक्तं गन्धर्वनगरं	142, 146
रक्तपीतानि द्रव्याणि	431
रक्तं गजं च मुंचन्ती	471
रक्तपाणा तथा माला	441
रक्तवर्णो यदा मेघ-	95
रक्तवस्त्राद्यलंकारैः	480
रक्तः शास्त्रप्रकोपश्च	381
रक्तमूत्रपुरीषैर्वा	482
रक्तानां करवीराणां	439, 481
रक्ता पीता नभस्-	25
रक्ता रक्तेषु चाश्रेषु	66
रक्तैः पांशुः सधूमं	96
रक्ते पुत्रभयं विन्द्यात्	226
रक्तो वा यथाम्बु-	47
रक्ता वा यदि वा नीलो	402
रक्तो राहुः शशि सूर्यौ	357
रतिप्रधाना मोदन्ति	307
रथायुधानामश्वानां	75
रश्मिवती मेदिनी भाति	64
रसाः पांचाल-बाह्लीकाः	269
रसाश्च विरसा यत्र	244
रागद्वेषौ च मोहं च	182
राजदीपा निपतनं	243
राजवंशं न वोच्छिन्द्यात्	205
राजा चाश्विनजा गर्भा	394
राजानश्च विरुध्यन्ते	344
राजा तत्प्रतिरूपैस्तु	97

राजा परिजनो वापि 184
राजाभिः पूजिताः सर्वे 2
राजा राजसुतश्चौरो 443
राजोपकरणे भग्ने 232
राज्ञां चक्रधराणां च 333
राज्ञा बहुश्रुतेनापि 175
राज्ञो यदि प्रयातस्य 195
राज्ञो राहुः [illegible] [illegible]
रात्रौ तु सम्प्रवक्ष्यामि 44
रात्रौ दिनं दिने रात्रिं 467
राहु केतु-शशी शुक्रो 412
राहुचारं प्रवक्ष्यामि 349
राहुणा गृह्यते चन्द्रो 238
राहुणा संवृतं चन्द्र- 97
राहुश्च चन्द्रश्च तथैव 358
रुद्राक्षसांशिष्वथ 493
रुद्राक्षी विकृता काली 440
रुद्रे च वरुणे कश्चिद् 234
रुधिराभिषिक्तां कृत्वा 443
रुधिरोदकवर्णानि 77
रूक्षाः खण्डाश्च वामाश्च 44
रूक्षा वाताश्च प्रकुर्वन्ति 97
रूक्षा विवर्णा विकृता 233
रूपी तरुणः पुरुषो 470
रूप्यपारावताभश्च 45
रेवती-पुष्ययोः सोमः 390
रेवती मोहताय स्याद् 457
रोगं शस्य विनाशं च 366
रोगार्ता इव दृश्यन्ते 248
रोचनाकुंकुमैर्मिश्रा- 490
रोहिणीं च ग्रहो हन्यात् 403
रोहिणीं शकटं शुक्रो 278
रोहिणी स्यात् परिक्रम्य 340
रोहिण्यां तु यदा भौमो 251

ल

ललाटे तिलकं यस्य 465
लिखेत् सोमः शृंगेण 239
लिखेद् रश्मिभिर्भूयो 350
लिप्ते मषी कर्दमगो- 493
लुप्यन्ते च क्रिया सर्वा 318
लोहितो लोहितं हन्यात् 401

व

वंगा उत्कल-चाण्डालाः 280
वक्रं कृत्वा यदा भौमो 343
वक्रं याते द्वादशाहं 291
वक्राण्युक्तानि सर्वाणि 295
वत्सा विदेह-जिह्माश्च 279
वधः सेनापतेश्चापि 241
वराहयुक्ता या नारी 436
वर्णं गतिं च संस्थानं 317
वर्णानां संकरो विन्द्यात् 404
वर्द्धमानध्वजाकाराः 26
वर्धन्ते चापि जीर्यन्ते 230
वर्षं भयं तथा क्षेमं 104
वर्षद्वयं तु हस्तेका 471
वर्षयुग्मेन जंघायां 474
वल्मीकस्याशु जनने 231
वल्लीगुल्मसमो वृक्षो 440
वशीकृतेषु मध्येषु 204
वसु कुर्यादतिस्थूलो 332
वसुधा वारि वा यस्य 192
वस्त्रस्य कोणे निवसन्ति 492
वह्निरंगाश्च जायन्ते 183
वह्निचन्द्रौ न पश्यन्ति 485
वाजिवारणयानां 232
वाटधानाः कुनाटाश्च 267
वाणैर्भिन्नमिवालीढं 466

वाणिजश्चैव कालज्ञः	267
वातः श्लेष्मा गुरुश्चैव	404
वाताक्षिरोगो-माञ्जिष्ठे	290
वातिकं चाथ स्वप्नांश्च	3
वातेऽग्नौ वासुभद्रे च	236
वादित्रशब्दाः श्रूयन्ते	229
वापि-कूप-तडागाश्च	166
वाप्यानि सर्वबीजानि	105
वामं न करोति नक्षत्रं	323
वामभूमिजले चारं	284
वामशृंगं यदा वा स्यात्	245
वामार्धशायिनश्चैव	201
वामो वदेद् यदा खारी	288
वायमानेऽनिले पूर्वे	115
वायव्यं वैष्णवं पुष्यं	27
वायव्यामथ वारुण्यां	166
वायव्ये वायवो दृष्टा	323
वायुवेगसमां विन्द्यात्	294
वारुणे जलजं तोयं	323
वासुदेवं यद्युत्पातं	234
वासोभिर्हरितैः शुक्लै-	442
वाहकस्य वधं विन्द्यात्	200
वाहनं महिषीपुत्रं	251
विंशका त्रिंशका खारी	289
विंशतियोजनानि स्युः	88
विंशत्यशीतिकां खारीं	289
विंशति तु यदा गत्वा	294
विकीर्यमाणा कपिला	21
विकृताकृति संस्थाना	241
विकृतिर्दृश्यते कार्ये	462
विकृते विकृतं सर्वं	365
विकृतैः पाणिपादाद्यैः	224
विश्रान्तस्य शिखं दीप्तं	367
विच्छिन्नविषमृणालं	289
विदिक्षु चापि सर्वासु	145
विद्युतं तु यदा विद्युत्	67
विद्रवन्ति च राष्ट्राणि	108
विपरीतं यदा कुर्यात्	190
विपरीता यदा छाया	244
विभ्राजमानो रक्तो वा	334
विरतः कोऽपि संसारी	462
विरागान्यनुलोमानि	78
विरेचने अर्थलाभः	482
विलम्बेन यदा तिष्ठेत्	281
विलयं याति यः स्वप्ने	475
विलोमेषु च वातेषु	196
विलीयन्ते च राष्ट्रा-	295
विवदत्सु च लिंगेषु	245
विवर्णपरुषश्चन्द्रः	390
विवर्णा यदि सेवन्ते	410
विशाखा कृत्तिका चैव	320
विशाखा मध्यगः शुक्र-	413
विशाखायां समारूढो	282
विशाखा रोहिणी भानु-	191
विशाखासु विजानीयात्	128
विशेषतामपसव्यं	144
विश्वाविसमयान्तश्च	317
विषेण म्रियते यस्तु	435
विष्टां लोभानि रौद्रं वा	480
विस्तीर्णं द्वादशांगं तु	3
विस्वरं रवमाणाश्च	77
विस्वरं रवमानस्तु	226
विहारानुत्सवांश्चापि	191
वीणां विम्बं च वल्लकीं	435
वीथ्यन्तरेषु या विद्युत	67
वीरस्थाने श्मशाने च	255
वीराश्चोग्राश्च भोजाश्च	401

वृक्षं वल्लीं च्छुपगुल्मं 481
वृद्धा द्रुमा स्रवन्ति 228
वृद्धान् साधून् समागम्य 175
वृश्चिकं दन्दशूकं वा 477
वृषकुंजरप्रासाद- 477
वृषभ-करि-महिष- 462
वृषवीथिमनुप्राप्तः 296, 297
वेणान् विदर्भमालांश्च 369
वैजयन्तो विवर्णास्तु 188
वैवस्वतो धूममाली 369
वैश्यश्च शिल्पिनश्चापि 334
वैश्वानरपथं प्राप्तः 296, 297
वैश्वानरपथं प्राप्ते 391
वैश्वानरपथे विद्युत् 66
वैश्वानरपथेऽष्टम्यां 392
वैश्वानरपथो नामा 271
व्याधयः प्रबला यत्र 246
व्याधयश्च प्रयातानां 193
व्याधिश्चेतिश्च दुर्भिक्ष 276
व्याधेः कोटयः पंच 461
व्याला सरीसृपाश्चैव 125

श

शकुनैः कारणैश्चापि 74
शक्तिलांगूलसंस्थाना- 22
शतानि चैव केतूनां 365
शनैश्चरं चारमिदं 310
शनैश्चरगता एव 176
शनैश्चरो यदा सौम्य- 238
शनैश्चरश्च नीलाभः 404
शबरान् दण्डकानुड्रान् 387
शबरान् प्रतिलिंभानि 281
शब्दनिमित्तं पूर्वं 486
शब्दान् मुंचन्ति दीप्तासु 25
शब्देन महता भूमि 240
शम्बरान् पुलिंदकांश्च 280
शयनासनजं पानं 476
शयनाशनयानानां 479
शयनासने परीक्षा 248
शय्यासनं यानयुग्मं 181
शरीरं केसरं पुच्छं 249
शरीरं प्रथमं लिंगं 484
शलाकिनः शिलाकुतान् 285
शशिसूर्यौ गतौ यस्य 485
शस्त्रं रक्तं भयं पीतं 245
शस्त्रकोपात् प्रधावन्ते 230
शस्त्रघातास्तथाग्नि 323
शस्त्रेण छिद्यते जिह्वा 443
शान्ताग्रहृष्टा धर्मार्ता 248
शारदो नाभिवर्षन्ति 65
शास्त्राभ्यासं सदा कृत्वा 462
शिशुमारो यदा केतु 368
शिखामण्डलवत् यस्य 367
शिखी शिखण्डी विमलो 371
शिरस्थास्ये च दृश्यन्ते 199
शिरो वा छिद्यते यस्तु 433
शिखं विषाणवद् यस्य 367
शिल्पिना दारुजीवानां 334
शिशिरे चापि वर्षन्ति 65
शिष्टं सुभिक्षं विज्ञेयं 166
शीतवातश्च विद्युच्च 164
शुकानां शकुनानां च 368
शुक्रं दीप्त्या यदि हन्यात् 368
शुक्रः शंखनिकाशः स्याद् 403
शुक्रः सोमश्च स्त्रीसंज्ञः 405
शुक्रस्य दक्षिणां वीथीं 333
शुक्रोदये ग्रहो याति 290
शुक्लो नीलश्च कृष्णश्च 298
शुक्लं पक्षं वामे दक्षिण- 489

शुक्लं प्रतिपदि चन्द्रे 244
शुक्लपक्षे द्वितीयायां 351
शुक्लमाल्यां शुक्लालंकार- 483
शुक्लवर्णो यदा मेघ: 95
शुक्लवस्त्रो द्विजान् 225
शुक्ला रक्ता च पीता 23
शुभं वृषेभयाह्वानां 478
शुभग्रहा: फलं दद्यु: 457
शुभ: प्रागशुभा पश्चाद् 483
शुभाशुभं विजानीयात् 146
शुभाशुभं समुद्भूतं 2
शुभाशुभं वीक्ष्यतु यो 457
शुभ्रालंकारवस्त्राढ्या 477
शुष्कं काष्ठं तृणं वापि 250
शुष्कं प्रदह्यते यदा 185
शुष्यन्ति वै तडागानि 342
शुष्यन्ते तोयधान्यानि 271
शून्यं चतुष्पथं स्वप्ने 435
शृंगी राज्ञां विजयद: 383
शेरते दक्षिणे पार्श्वे 200
शेषप्रश्नविशेषे द्वा- 474
शेषमौल्यादिक प्रोक्तं 384
शीर्षशस्यसमन्वित: 177
श्मशानास्थिरज:- 203
श्मशाने शुष्कं दारुं 434
श्यामच्छिद्रश्च पक्षादौ 391
श्यामलोहितवर्णा 323
श्रमणा ब्राह्मणा वृद्धा: 250
श्रवणेन वारि विज्ञेयं 123
श्रवणे राजविभ्रंशो 335
श्रावका: स्थिरसंकल्पा 2
श्रावणे प्रथमे पक्षे 126
श्रीमद्वीरजिनं नत्वा 461
श्रेष्ठे चतुर्थ-षष्ठे च 285
श्वपदपिपीलिकावृन्दं 232
श्लेष्ममूत्रपुरीषाणि 432
श्वेतं गन्धर्वनगरं 142
श्वेतकेशरसंकाशो 351
श्वेत: पाण्डुश्च पीतश्च 399
श्वेत: पीतश्च रक्तश्च 389
श्वेतमांसाशनं यानं 441
श्वेत: श्वेतं ग्रहं यत्र 401
श्वेत: सुभिक्षदो ज्ञेय: 367
श्वेतस्य कृष्णं दृश्येत् 200
श्वेता: कृष्णा: पीता: 467
श्वेते सुभिक्षं जानीयात् 309
श्वेतो ग्रहो यदा पीतो 239
श्वेतो नीलश्च पीतश्च 402
श्वेतो वाऽथ यदा पाण्डु 402
श्वेतो रक्तश्च पीतश्च 349
श्वेतो रसो द्विजान् 228

ष

षट्त्रिंशत् तस्य वर्षाणि 370
षड्दिनं गुह्यहीनेऽपि 473
षण्मासं द्विगुणं चापि 224
षण्मासा प्रकृतिर्ज्ञेया 349
षष्ठिकानां विरागाणां 409
षोडशाक्षरतो बाह्ये 490
षोडशानां तु मासानां 349

स

संख्यानमुपसेवानो 278
संग्रहे चापि नक्षत्रे 77
संध्याया रौद्र्यास्तत्र 319
संग्रामाश्चापि जायन्ते 145
संग्रामाश्चानुवर्धन्ते 128
संग्राह्यं च तदा धान्यं 413

संघशास्त्रानुपश्येत् 29
संवत्समुपस्थाप्य 309
संवत्सरे भाद्रपदे 322
सचित्ते सुभिक्षे देशे 252
सदृशा: केतवो हन्यु- 370
सधूम्रा या सनिर्घाता 25
सध्वजं सपताकं वा 144, 145
सन्ध्यानां रोहिणी पौष्यं 27
सन्ध्यायां कृत्तिका ज्येष्ठां 390
सन्ध्यायां तु यदा शीतं 350
सन्ध्यायामेकरश्मिस्तु 87
सन्ध्यायां यानि रूपाणि 168
सन्ध्यायां सुप्रदीप्तायां 248
सन्ध्योत्तरा जयं राज्ञ: 85
सन्नाहिको यदा युक्ता 198
सफेनं पिबति क्षीरं 478
समन्ततो यदा वान्ति 110
समन्ताद् बध्यते यस्तु 49
समभूमितले स्थित्वा 472
समभूमितलेऽस्मिन् 468
सप्तति चाथ चाशीति 289
सप्तमे सप्तमे मासे 163
सप्तरात्रं दिनार्धं च 111
सप्तर्षीणामन्यतमं 368
सप्तार्धं यदि वाष्टार्धं 319
सप्ताहमष्टरात्रं वा 223
सभाभ्यां यदि शृंगाभ्यां 244
सरस्तडागप्रतिमा 88
सरांसि सरितो वृक्षान् 438
सरीसृपा जलचरा- 225
सरोमध्ये स्थित: पात्रे 479
सर्पदष्टो यथा मन्त्रै 370
सर्पणे हसने चापि 224
सर्पिस्तैलनिकाशस्तु 34
सर्वं निष्पद्यते धान्यं 272
सर्वकालं प्रवक्ष्यामि 111
सर्वग्रहेश्वर: सूर्य: 380
सर्वत्रैव प्रयाणेन 98
सर्वथा बलवान् वायु 113
सर्वद्वाराणि दृष्ट्वाऽसौ 341
सर्वधान्यानि जायन्ते 123
सर्वभूतभयं विन्द्यात् 390
सर्वभूतहितं रक्तं 264
सर्वलक्षणसम्पन्ना 115
सर्वश्वेतं तदा धान्यं 268
सर्वांगेषु तदा तस्य 485
सर्वाण्यपि निमित्तानि 182
सर्वार्थेषु प्रमत्तश्च 188
सर्वानितान् यथोद्दिष्टान् 4
सर्वास्वापि यदा दिक्षु 143
सर्वे वदुत्तरे काष्ठे 408
सर्वेषामेव सत्त्वानां 3
सर्वेषां शकुनानां च 192
सर्वेषां शुभ्रवस्त्राणां 483
सशनैश्चारं यो वेत्ति 299
सविद्युत्सरजो वायु 113
सस्यघातं विजानीयात् 127
सस्यनाशोऽनावृष्टि: 319
सस्यानि फलवन्ति 127
साल्वांश्च मारदण्डाश्च 343
सिंहमेषोष्ट्रसंकाश: 351
सिंहलानां किरातानां 310
सिंहव्याघ्रगजैर्युक्तो 431
सिंहव्याघ्रवराहोष्ट्र 22
सिंहा शृगाल-मार्जारा- 97
सिंहासनरथाकारा 26
सितं छत्रं सितं वस्त्रं 479
सितकुसुमनिभस्तु 292

सुकुमारं करयुगलं 462
सुकृष्णा दशना यस्य 463
सुखग्राह्यं लघुग्रन्थं 3
सुगन्धगन्धा ये मेघा 95
सुगन्धेषु प्रशान्तेषु 115
सुनिमित्तेन संयुक्त- 183
सुभिक्षं क्षेममारोग्यं 125
सुरश्मी रजतप्रख्य: 381
सुलसायां यदोत्पात: 236
सुवर्णरूप्यभाण्डे 432
सुवर्णवर्णो वर्ष वा 383
सुवृष्टि: प्रबला ज्ञेया 341
सुसंस्थाना: सुवर्णाश्च 167
सुहृद्युतिश्च मित्रभं 492
सूर्यकाश्च सुराऽशुद्रा: 401
सूर्यचन्द्रमसौ पश्येद् 477
सेनां यान्ति प्रयातां 186
सेनाग्रे हूयमानस्य 184
सेनापतिवधं विन्द्यात् 200
सेनामभिमुखी भूत्वा 28
सेनायास्तु प्रयाताया 193
सेनायास्तु समुद्योगे 27
सोमगृहे निवृत्तेषु 455
सोमो राहुश्च शुक्रश्च 26
सौदामिनी च पूर्वा च 63
सौभाग्यमर्थं लभते 433
सौम्यं बाह्यं नरेन्द्रस्य 198
सौम्यजातं तथा विप्रा: 400
सौम्यां गतिं समुत्थाय 331
सौम्या विमिश्रा संक्षिप्ता 331
सौरसेनांश्च मत्स्यांश्च 285
सौराष्ट्र-सिन्धु-सौवीरान् 343
सौरिण तु हतं मार्गं 242
सौसुप्यते यदा नाग: 201
स्कन्धावारनिवेशेषु 175
स्तब्धं लोचनयोर्युग्मं 463
स्तम्भयन्तोऽथ लांगूलं 249
स्त्रीराज्यं ताम्रकर्णाश्च 268
स्थले वापि विकीर्येत् 440
स्थलेष्वपि च यद्बीजं 109
स्थालीपिठरसंस्थाने 382
स्थावरस्य वनीका 394
स्थावराणां जयं विन्द्यात् 78
स्थावरे धूमिते तज्ज्ञा 368
स्थिरा ग्रीवा न यस्य 464
स्थिराणां कम्पसरणे 224
स्थूलसुवर्णो द्युतिमांश्च 345
स्थूल: स्निग्ध: सुवर्णश्च 400
स्थूलो याति कृशत्वं 464
स्नातं लिप्तं सुगन्धेन 404
स्नात्वा देहमलंकृत्य 465
स्निग्ध: प्रसन्नो विमले 324
स्निग्धवर्णमती सन्ध्या 87
स्निग्धवर्णाश्च ये मेघा- 95
स्निग्ध: श्वेतो विशालश्च 387
स्निग्धान्यभ्राणि यावन्ति 73
स्निग्धा: सर्वेषु वर्णेषु 95
स्निग्धास्निग्धेषु चाभ्रेषु 64
स्निग्धे याम्योत्तरे मार्गे 410
स्निग्धोऽल्पघोषो धूमो 184
स्नेहवत्योऽन्यगामिन्यो 23
स्पृशेल्लिखेत् प्रमर्देद् 341
स्फीताश्च रामदेशाश्च 268
स्वं प्रकाश्य गुरोरग्रे 484
स्वगाने रोदनं विद्यात् 482
स्वतो गृहमन्यं प्रवेशं 239
स्वप्नफलं पूर्वगतं 474
स्वप्नमाला दिवास्वप्नो 431

स्वर्गप्रीतिफलं प्राहुः 182
स्वप्नाध्यायममुं मुख्य- 444
स्वर्गेण तादृशा प्रीतिः 182
स्वरूपं दृश्यते यत्र 468
स्वातौ च दशार्णाश्चंचति 282
स्वातौ च मैश्वदेवे च 165

ह

हन्ति मूलफलं मूले 283
हन्यादश्विनीप्राप्तः 287
हन्युर्मध्येन या उल्का 26
हया तत्र तदोत्पातं 248
हयानां ज्वलिते चाग्निः 199
हरिता मधुवर्णाश्च 65
हरिते सर्वसस्यानां 46
हरितो नीलपर्यन्तः 47
हसने रोदने नृत्ये 229
हसने शोचनं ब्रूयात् 437
हसन्ति कथयेन्मासं 470
हसन्ति यत्र निर्जीवाः 243
हस्तपादाग्रहीना वा 471
हस्ते च ध्रुवकर्माणि 456
हस्त्यश्वरथपादातं 175
हिम्नो निवर्णः विग्मो 178
हित्वा पूर्वं तु दिवसं 106
हिनस्ति बीजं तोयं च 323
हीनांगा जटिला बद्धा 187
हीनि चारे जनपदान् 276
हीने मुहूर्ते नक्षत्रे 191
हीयमानं यदा चन्द्र 395
हृदये यस्य जायन्ते 440
हृदये वा समुत्पन्नात् 482
हेन्द्रस्वगो हेन्द्रकेतुः 371
हेमन्ते शिशिरे रक्तः 236, 298
हेमवर्णः सुतोयाय 237
हेमन्ते तु यदा राज 249
हेमन्त्यभीक्ष्णमथवा 202
हेमभानस्य दीप्तासु 199
ह्रस्वाश्च तरवो येऽन्ये 227
ह्रस्वे भवति दुर्भिक्षं 319
ह्रस्वो रूक्षश्च चन्द्रश्च 389
ह्रस्वो विवर्णो रूक्षश्च 400

□